गणितानुयोग

[जैनागमों में वर्णित भूगोल-खगोल का संकलन और वर्गीकरण]

संकलनकर्त्ता :

मुनि कन्हैयालाल 'कमल'

अनुवादक :

डा० मोहनलाल महता, एम. ए., पी-एच. डी.

सम्पादक :

पं० शोभाचन्द्र भारिल्ल

आगम-अनुयोग प्रकाशन, सांडेराव [राजस्थान]

GANITĀNUYOGA

[Selection and classification of Geographical and Astronomical data from Jaina Sutras]

Compiled by

Muni Kanhaiyalal 'Kamala'

Translated by

Dr. Mohanlal Mehta, *M. A., Ph. D.*

Edited by

Pt. Shobhachandra Bharilla

Agama-Anuyoga Publication, Sanderao (Rajasthan)

न नायपुत्ता परमत्थि नाणी

श्रमण भगवान महावीर की
निर्वाण-सार्द्ध द्विसहस्राब्दी
के उपलक्ष में

जयइ जगजीवजोणी-वियाणओ जगगुरू जगाणंदो,
जगणाहो जगबंधू, जयइ जगप्पियामहो भगवं ।।१
जयइ सुआण पभवो, तित्थयराणं अपच्छिमो जयइ ।
जयइ गुरू लोगाणं, जयइ महप्पा महावीरो ।।२

सुदंसणस्सेव जसो गिरिस्स, पवुच्चइ महतो पव्वयस्स ।
एतोवमे समणे नायपुत्ते, जाइजसो दंसण-णाणसीले ॥

• • • •

गिरीवरे वा निसहाऽऽययाणं, रुयए व सेट्ठे वलयायताणं ।
तओवमे से जगभूइपण्णे, मुणीण मज्झे तमुदाहु पण्णे ॥

• • • •

रुक्खेसु णाए जह सामली वा, जस्सि रइं वेययति सुवण्णा ।
वणेसु वा णंदणमाहु सेट्ठं, णाणेण सीलेण य भूइपण्णे ॥

• • • •

जहा सयंभू उदहीण सेट्ठे, णागेसु वा धरणिंदमाहु सेट्ठे ।
खोओदए वा रसवेजयंते, तवोवहाणे मुणिवेजयंते ॥

• • • •

हत्थीसु एरावणमाहु णाए, सीहो मिगाण सलिलाण गंगा ।
पक्खीसु वा गरुले वेणुदेवो, निव्वाणवादीणिह णायपुत्ते ॥

समप्पणं

णियनामेणं जेणं, महप्पणा पुज्जसामि-दासेणं,
सक्खं जयइ पयडिओ, दंसणरयणं अणेगन्तो ॥१॥
जिणसुयणिम्मलसोओ, सुरक्खिओ जेण सूरिपवरेणं,
लिहिऊणं सुत्ताणि य, अणेगवारं अणेगाणि ॥२॥
तस्स महेसिवरस्स हि, सिस्स-पसिस्सक्कमेणऽणुग्गहिओ ।
गणितानुयोगसत्थं, अप्पेइ सभत्तिं—

—मुणी 'कमलो' ॥३॥

प्रकाशकीय निवेदन

समस्त जैनागमो मे से चरणानुयोग आदि चारो अनुयोगो का चार विभागों मे सकलन एव उनका विषयानुक्रम से वर्गीकरण करने का प्रयास, आगम-साहित्य के इतिहास मे एक नूतन, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और उपयोगी प्रयास है। यह प्रयास जितना महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है, उतना ही जटिल, श्रमसाध्य और सूक्ष्म अध्ययन की अपेक्षा रखने वाला है। हर्ष है कि पण्डितरत्न **मुनि श्री कन्हैयालालजी म० सा० 'कमल'** ने इस गुरुतर कार्य को अपने हाथ मे लिया और लगातार कई वर्षों तक सलग्न रहकर इसका अधिकाश सम्पन्न किया। मुनिश्री के इस पुण्य-प्रयास को देखकर हमारे मन मे यह सकल्प जागृत हुआ कि मुनिश्री के तत्त्वावधान मे ही चारो अनुयोगो का प्रकाशन हो।

सर्वप्रथम चरणानुयोग का मुद्रण देहली मे प्रारम्भ हुआ। २५ फॉर्म मुद्रित भी हुए। किन्तु पू० प्रवर्त्तक मरुधरकेसरी प० र० श्री मिश्रीमलजी म० सा० के स्नेहपूर्ण आग्रह से, उनकी दीक्षा-अर्धशताब्दी के अवसर पर होने वाले अभिनन्दन-समारोह मे सम्मिलित होने के लिए मुनिश्री को देहली छोडकर सोजत आना पडा। साडेराव-वर्षावास के पश्चात् श्रीविद्याकुमारजी की भागवती दीक्षा का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। तब तक गर्मियो के दिन आ जाने से और स्वास्थ्य अनुकूल न होने से आपका तत्काल पुन दिल्ली जाना न हो सका। फलस्वरूप चरणानुयोग का कार्य अधूरा ही रह गया है। उसे अब यथासम्भव शीघ्र पूर्ण करना है।

इस बीच गणितानुयोग की सामग्री तैयार हो जाने के कारण राजस्थान के प्रमुख प्रेस 'वैदिक यन्त्रालय' मे उसके मुद्रण का कार्य आरम्भ करा दिया गया। मुनिश्री का स्वास्थ्य ठीक नही था, किन्तु प० श्रीशोभाचन्द्रजी सा० भारिल्ल का उदार सहयोग इस अवधि मे सम्पादनकार्य मे लिया गया। इससे कार्य यथासमय सम्पन्न हो सका। इसका अनुवाद डॉ श्री मोहनलालजी मेहता एम ए, पी-एच. डी. ने किया है।

प० र० मुनिश्री, डॉ० महता और श्री भारिल्लजी के परिश्रम से गणितानुयोग का यह प्रकाशन इस रूप मे सम्भव हो सका है। इसके लिए हम इनके कृतज्ञ हैं।

अजमेर निवासी सेवाभावी श्री रूपराजजी सा. कोठारी, श्री हसराज बच्छराजजी कोठारी (गोटे वाले) आदि महानुभावो ने मुद्रणकार्य मे सहयोग देकर हमारे उत्तरदायित्व को हल्का कर दिया। इसके लिए हम उनके अतीव आभारी हैं।

नियत अवधि मे मुद्रणकार्य सम्पन्न कर देने के लिए वैदिक यन्त्रालय के अधिकारी और कार्यकर्त्ता भी कम धन्यवाद के पात्र नही हैं।

निवेदक

—मंत्री, आगम-अनुयोग प्रकाशन,

सांडेराव (राजस्थान)

श्रावणकृष्णा १, वी स. २४९५

संकेतसूची

अ०	— अध्ययन
अनु०	— अनुयोगद्वार
आ०	— आचारांग
उ०	— उद्देशक
उत्तर०	— उत्तराध्ययन
गा०	— गाथा
चन्द्र०	— चन्द्रप्रज्ञप्ति
जम्बू०	— जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति
जीवा०	— जीवाभिगमसूत्र
जीवा० प्र०	— जीवाभिगमसूत्र प्रतिपत्ति
ठा०	— ठाणांग—स्थानांगसूत्र
ठाणा०	— ,, ,,
पण्ण०	— पण्णवणा
पन्न०	— ,,
पृ०	— पृष्ठ
प्र०	— प्रश्न
प्रज्ञा०	— प्रज्ञापनासूत्र
भग०	— भगवतीसूत्र
भा०	— भाग
वक्ष०	— वक्षस्कार
विया०	— वियाहपण्णत्ति (भगवतीसूत्र)
श०	— शतक
श्रु०	— श्रुतस्कन्ध
[illegible]	— समवाय
[illegible]	— समवायांगसूत्र
[illegible]	— सूत्र
[illegible]	— सूत्रकृतांगसूत्र
[illegible]	— सूर्यप्रज्ञप्ति

प्राक्कथन

अनुयोग–वर्गीकरण

विगत दो-चार दशको मे प्राच्यविद्या प्रेमियो ने प्राकृत–भाषा का महत्त्व समझा है। और कतिपय विश्व-विद्यालयो मे प्राकृत अध्ययन-केन्द्र स्थापित किये हैं, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटियो से महत्त्वपूर्ण प्राचीन-ग्रन्थ आधुनिक शैली के सम्पादित होकर प्रकाशित हुए हैं। कुछ प्रकाशन-सस्थान शोध पूर्ण एव समीक्षात्मक जैनागमो के प्रकाशन कर रहे हैं। किन्तु शोध निबन्धो के आधुनिक लेखक विषय प्रतिपादन के लिए सदर्भ ग्रन्थो के रूप मे यदि समस्त जैनागमो को देखना चाहे, तो उन्हे आगमो के ये सस्करण देखकर निराशा ही होती है। क्योंकि स्वर्गीय पूज्य श्री अमोलक ऋषिजी महाराज सपादित (मूल एवं हिन्दी अनुवाद सहित) बत्तीस शास्त्रो के तथा श्री पुष्फ भिक्खु सपादित (केवल मूलपाठ सुत्तागमे) बत्तीस शास्त्रो के अतिरिक्त समग्र आगमो का मुद्रण अद्यावधि नही हुआ है। ये आगम भी भारत के समस्त उच्चतम विद्यालयो या विश्वविद्यालयो के पुस्तकालयो में उपलब्ध नही हैं। दो-दो, चार-चार आगम अनेक प्रकाशन सस्थाओ ने प्रकाशित किये हैं। उनका भी प्रचार सीमित ही है। अत वे सर्वत्र सुलभ नही हैं। आधुनिक शैली से सम्पादित कुछ आगम मूल मात्र के और कुछ सानुवाद के प्रकाशित हो रहे हैं। परन्तु सम्पूर्ण आगमो के प्रकाशित होने मे न जाने कितने युग बीतेंगे !

जैन पुस्तकालयो की व्यवस्था भी सर्वत्र समीचीन न होने से शोध-निबन्ध लेखको को यथेष्ट लाभ नही मिल पाता। यदि साहसी शोध-निबन्ध लेखक किसी प्रकार सभी जैनागमो का सग्रह कर भी लें तो उनमे से अभीष्ट विषय का परिपूर्ण शोध कर सकना उनके लिए कितना कठिन होता है इसका अनुभव तो शोध निबन्ध लेखको को ही हो सकता है। एक विषय के पाठो को एकत्रित करने मे कितने समय व श्रम की अपेक्षा होती है, यह भी एक असाधारण तथ्य है।

जैनागम सम्बन्धित शोध-निबन्ध के लेखक को प्रौढ आगम-अभ्यासी निर्देशक का मिलना भी उतना ही कठिन है जितना आधुनिक शैली के सपादित समस्त आगमों का मिलना। इन सब समस्याओ मे उलझकर अनेक शोध-निबन्ध लेखक विषय परिवर्तन का सकल्प कर लेते थे या विषय का यथेष्ट प्रतिपादन न कर पाते थे, इसलिए शोध कार्य अधूरा रह जाता था।

इत्यादि अनेक अनुपेक्षणीय तथ्यो से प्रेरित होकर मैने जैनागमो के समस्त विषयो का वर्गीकरण करके उसे चार अनुयोगो मे विभक्त करने का सकल्प किया है। यद्यपि अनुयोग वर्गीकरण का कार्य समूह साध्य एवं श्रम साध्य था, साथ ही अद्यावधि उपलब्ध समस्त आगमो के प्रकाशन तथा अनेक सदर्भ ग्रथ अपेक्षित थे, किन्तु ये सब सुलभ नही हुए। और न इस महान कार्य मे मुझे किसी बहुश्रुत का उदार सहयोग या निरन्तर निर्देशन ही प्राप्त हुआ। फिर भी जितना कार्य किया है उसे क्रमश: प्रस्तुत करते रहने का संकल्प है।

इन अनुयोग–विभागो के स्वाध्याय का सुफल यह होगा कि प्राचीन चिन्तन का किस प्रकार क्रमिक विकास हुआ है ? कौन सा पाठ आगम सकलन काल के पश्चात् परिवर्धित या प्रक्षिप्त किया गया है ? आगमो के लिपिबद्ध होने के पश्चात कौन सा आगम अगविच्छिन्न हुआ और कौन सा नया अग आगम स्थानापन्न हुआ है ? किस आगम पाठ की कहा पूर्ति हुई है ? कौन सा आगम पाठ परमत की मान्यता का है और कौन सा स्वमत की मान्यता का है ? कौन सा परमत का पाठ भ्रान्ति से स्वमत का मान लिया गया है ? इत्यादि उपलब्धिया शोध निबन्ध लेखको के लिए यदि उपयोगी हुईं तो यह श्रम सफल होगा।

वर्गीकरण का यह कार्य स्वर्गीय गुरुदेव के जीवन काल मे प्रारभ किया था। परन्तु कार्य काल मे कई वाधायें आई, जिनसे तथा सेवाकार्य मे सलग्न रहने के कारण कार्य स्थगित भी करना पडा। सन् १९६३ मे मेरे आराध्य गुरुदेव का स्वर्गवास हो गया, पश्चात् सन् १९६५ मे देहली मे जैनागम निर्देशिका और समवायाग का प्रकाशन परिपूर्ण होने पर तथा स्थानाग के पृष्ठ छपने पर और चरणानुयोग के केवल २५० पृष्ठ छपने पर प्रकाशन कार्य स्थगित कर राजस्थान मे आना पडा। पुन सन् १९६९ मे अजमेर मे गणितानुयोग का प्रकाशन कार्य प्रारभ हुआ। अस्वस्थ शरीर एव यथेष्ट सामग्री के अभाव मे भी यह गणितानुयोग पाठको के समक्ष समुपस्थित किया गया है। आशा है श्रुत सेवी सज्जन इसे अपना कर अपना अभिमत व्यक्त करेंगे।

गणितानुयोग का संकलन

जैनागमो मे जहा-तहा उपलब्ध भूगोल-खगोल सम्बन्धित समस्त कथनो को इसमे सकलित किया गया है। इसमे सर्व प्रथम अलोक का वर्णन है, पश्चात्-अलोक के मध्यस्थित लोक का वर्णन है। अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक—ये लोक के ही तीन विभाग हैं। इनका क्रमश इस गणितानुयोग मे सकलन है। ग्रथ के प्रारम्भ मे प्रस्तावना और अन्त मे कतिपय परिशिष्ट हैं।

[१] भूगोल-खगोल सम्बन्धी आगम-पाठ जो भाव एव भाषा मे साम्य रखते हैं, उनमे से एक आगम का पाठ मूल सकलन मे सकलित किया गया है, शेष आगमों के समग्र पाठो का स्थल निर्देश मूल सकलन मे अकित किया गया है।

[२] जैनागमो मे भूगोल-खगोल सबधी कुछ पाठ ऐसे हैं जिनमे एक वस्तु के अल्पसख्यक और बहु-सख्यक प्रकार मिलते हैं। उनमे से बहु सख्या वाला एक पाठ मूल सकलन मे लिया है और अल्प सख्या वाले सभी पाठो के स्थल निर्देश-उसी पाठ के नीचे या टिप्पण मे दिये हैं। उदाहरण के लिये देखिए पृष्ठ ९ "लोकस्थिति" शीर्षक।

[३] सकलित आगम पाठो पर जहा १, २ आदि अक दिये हैं वे सब टिप्पण के अक हैं। जितने अश पर अक हैं उतने ही अश से सम्बन्धित अन्य आगम पाठ का स्थल निर्देश टिप्पण मे दिया है।

[४] प्रस्तुत सकलन मे प्रत्येक विषय का वर्गीकरण किया गया है और एक विषय के वर्गीकरण मे सम्बन्धित विषय के सभी पाठ एक साथ सकलित किए गए हैं। विषय प्रतिपादन मे भी पूर्वापर का क्रम बना रहे—इस ओर अधिक ध्यान दिया गया है।

[५] प्राकृत मूल पाठो के मुद्रण मे "मूल सुत्ताणि" की शैली ही अपनायी गई है। क्योंकि इस प्रकार मुद्रित प्राकृत पाठ का भाव सस्कृत या हिन्दी के अभ्यासी सरलता पूर्वक समझ सकते हैं।

[६] हिन्दी अनुवाद डॉ मोहन लाल महता ने किया है जो इस समय पार्श्वनाथ विद्याश्रम मे शोध-सस्थान के अध्यक्ष हैं। अनुवाद की भाषा सरल है अत सामान्य हिन्दी का ज्ञान रखने वाले पाठको को भी समझने मे कोई कठिनाई नही होगी। मूल पाठ का केवल शब्दानुलक्षी अनुवाद किया गया है। इसलिए कही-कही गणित का विषय स्पष्ट नही हो पाया है। अत जिज्ञासु पाठक एतद् विषयक किसी गणित विशेषज्ञ से या किसी ग्रन्थ से विषय को समझने का प्रयत्न करेंगे तो आशा है कि गणित के तथ्य समझ मे आ सकेंगे।

[७] जैनागमो से सम्बन्धित विषयो पर शोध-निबन्ध लिखने वाले या सामान्य जिज्ञासु सुविधा पूर्वक अभीष्ट विषय की उपलब्धि कर सकें, इसके लिए प्रस्तुत सकलन मे सभी शीर्षक हिन्दी मे दिये गए है ।

[८] प्रस्तुत सकलन मे चन्द्र-प्रज्ञप्ति के सूत्राक स्थल निर्देशन मे दिये हैं किन्तु वे सब सूर्य-प्रज्ञप्ति के ही सूत्राक है[1] ऐसा समझे, क्योकि चद्र-प्रज्ञप्ति की पूर्ण प्रति व टीका प्रयत्न करने पर भी हमे प्राप्त नही हो सकी अत ऐसा किया गया है ।

[९] गणितानुयोग के सकलन एव सपादन मे जो त्रुटिया रही है, उनका परिमार्जन जानते हुए भी नही किया जा सका, इसके लिये हम अन्य किसी को दोषी नही ठहराते । यदि द्वितीय सस्करण होने का सुअवसर प्राप्त होगा तो अवश्य सशोधन किया जाएगा । जो त्रुटिया है वे केवल आगमो के स्थल निर्देशन मे बरती गई असमानरूपता सबन्धी है । मूल सकलन मे भी यदि भूगोल-खगोल सबन्धी कतिपय पाठ छूट गए हो तो हमारे पूज्य बहुश्रुत एव स्वाध्याय-शील सद्गृहस्थ अपना कर्तव्य समझ कर हमें अवश्य सूचित करेंगे—ऐसी आशा है ।

अनुयोग-व्याख्या पद्धति

जिस प्रकार नगर की चारो दिशाओ मे चार द्वार हो तो उसमे प्रवेश करना सबके लिए सरल है, उसी प्रकार १. उपक्रम, २. निक्षेप, ३ अनुगम और ४. नय—इन चार अनुयोग द्वारो से आगम रूप नगर मे प्रवेश करना सबके लिये सरल होता है । अर्थात् इन चार अनुयोग द्वारो का आधार लेकर जो आगम पद्धति की व्याख्या करते हैं उन सबके लिये आगम ज्ञान प्राप्त करना अति सरल है ।

जैनागमो की यह अनुयोग व्याख्या पद्धति अति चिरतन काल से उपयोगी रही है । जैनागमों की उपलब्ध टीकाओ के टीकाकारो ने भी इसी अनुयोग व्याख्या पद्धति का अपनी टीकाओ मे प्रयोग किया है ।

नदी-सूत्र निर्दिष्ट श्रुतज्ञान के विवरण मे अग प्रविष्ट, अग-बाह्य, कालिक और उत्कालिक आदि सभी आगमो की व्याख्या करने के लिए इन चार अनुयोग द्वारो का ही प्रयोग करने की सूचना दी गई हैं। और इसी आधार पर अंगबाह्य, उत्कालिक आवश्यक की विस्तृत व्याख्या अनुयोग द्वार-सूत्र मे इन चार अनुयोग द्वारो द्वारा ही की गई है ।

---

१ (क) चद्र प्रज्ञप्ति वर्तमान मे अनुपलब्ध है । यह आगम-साहित्य के इतिहासज्ञों का अभिमत है ।

अनुयोग-विभाजन

चार अनुयोगो के नाम —

१—चरणानुयोग, २—धर्मकथानुयोग, ३—गणितानुयोग ४—द्रव्यानुयोग ।

उपलब्ध अग-उपाग आदि आगमो मे इन चार अनुयोगो के नाम क्रमश कही नही मिलते हैं ।

१—**द्रव्यानुयोग का नाम**—स्थानाग के दशम स्थान मे मिलता है[1] ।

२—**चरणानुयोग का नाम**—उत्तराध्ययन के अध्ययन के आधार पर नामकरण हुआ है ।

३—**धर्मकथानुयोग का नाम**—ज्ञाताधर्म कथा के आधार पर नामकरण हुआ है ।

४—**गणितानुयोग का नाम**—चद्र-सूर्य-प्रज्ञप्ति आदि के आधार पर नामकरण हुआ है[2] ।

आगमोत्तर कालीन ग्रन्थ मे तथा जैनागमो की उपलब्ध टीका, निर्युक्ति तथा भाष्य आदि मे चारो अनुयोगों के नाम और अनुयोगो के अनुसार आगमो का विभाजन मिलता है ।

जैनागमो मे वर्णित विविध विषय भगवान महावीर से लेकर श्री आर्य वज्र पर्यन्त अनुयोगो मे विभक्त नही हुऐ थे । क्योकि प्रत्येक पद में चारो अनुयोगो का तथा सातो नयो का चिन्तन किया जाता था इसलिए विभाजन की कोई उपादेयता ही नही थी, किन्तु ह्रास काल के प्रभाव से जब महान् मेघावियो को भी एक पद मे चारो अनुयोगो तथा सातो नयो का चिन्तन पहेली प्रतीत होने लगा तो श्री आर्य रक्षित ने आगमो मे प्रतिपादित समस्त विषयो (पदो) को चार अनुयोगो मे विभक्त कर दिया था ।

इस अनुयोग विभाजन की क्या रूप रेखा थी ? विषय सकलन किस क्रम से किया गया था ? और इस अनुयोग विभाजन की परपरा कब विनष्ट हुई ? इत्यादि ऐतिहासिक तथ्यो के अन्वेषण का उपक्रम अब तक किसी ने किया या नही ? यह मेरे जानने मे नही आया है ।

नन्दी-सूत्र की स्थविरावली मे अनेक अनुयोगधर आचार्यों का उल्लेख है । ये आचार्य चार अनुयोग-द्वार वाली अनुयोग-व्याख्या पद्धति के धारक थे या द्रव्यानुयोग आदि चार अनुयोगो के धारक थे ? इस सबध मे अभी तक ऐतिहासिक तथ्यो का अन्वेषण होना आवश्यक है ।

१—करणानुयोग का नाम—द्रव्यानुयोग के एक भेद के रूप मे मिलता है । देखिए—स्थानाग अ० १० सूत्र ।

२—यह केवल हमारी कल्पना है ।

लोक-विज्ञान और आत्म-साधना

लोक-विज्ञान दो प्रकार का है :—लोक स्वरूप विज्ञान और लोक स्वभाव विज्ञान ।

लोक का आकार आयाम-विष्कम्भ, मध्यभाग, समभाग, विशालता-विभाग, लोकस्थिति आदि का विशिष्ट-ज्ञान, लोक स्वरूप विज्ञान है ।

प्राचीन और अर्वाचीन भूगोल-खगोल साहित्य के स्वाध्याय से लोक स्वरूप का विज्ञान होता है ।

प्राणियो की उत्पत्ति, स्थिति, विनाश, जन्म-मरण, सुख-दुख, पुण्य-पाप, स्वार्थपरता, छल-छिद्र, घृणा, जुगुप्सा, राग द्वेष, ईर्ष्या आदि का ज्ञान लोक स्वभाव विज्ञान है ।

आगमो के स्वाध्याय से लोक स्वभाव का विज्ञान होता है । यद्यपि लोक स्वरूप विज्ञान और लोक स्वभाव विज्ञान ये दोनो भिन्न-भिन्न हैं, तथापि इन दोनो का परस्पर आधार-आधेय भाव का सबध है । क्योकि लोक स्वरूप का विज्ञान होने पर ही लोक स्वभाव का विज्ञान हो सकता है । इसी कार्य कारण-भाव का द्योतक धर्म-ध्यान का एक प्रकार सस्थान–विचय है ।

आचार्य उमा स्वाति ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है कि लोक के (सस्थान) स्वरूप का विचार करने मे मनोयोग लगाना सस्थान विचय धर्मध्यान है ।[1]

इसी प्रकार लोकानुप्रेक्षा[2] का भी यही भाव है । दशवैकालिक-सूत्र के अ० ४ मे मोक्ष-साधना का क्रम-बताते हुए कहा गया है कि जब आत्मा को परिपूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है तो वह (सर्वज्ञ) लोकालोक को जान लेता है ।

जैन-दर्शन का एक प्रमुख सिद्धान्त कर्मवाद है । और कर्मबध से विरत होकर कर्म मुक्त होना ही आत्म-साधना है । बन्ध ससार है और बन्धमुक्ति मोक्ष है—ये दोनो इसी लोक मे है । शुभाशुभ कर्मो का बन्ध, फलभोग और मुक्ति का चिन्तन-मनन ही लोक-स्वभाव का चिन्तन-मनन है, किन्तु शुभाशुभ कर्मो का बध, फलभोग और उनकी मुक्ति इस लोक मे होते है ।

[क] शुभाशुभ कर्मो का बन्ध तीनो लोक मे होता है, किन्तु फलभोग भिन्न लोक मे होता है ।
[ख] अशुभ कर्मो का फलभोग प्राय अधोलोक मे होता है ।
[ग] शुभ कर्मो का फलभोग प्राय मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक मे होता है ।
[घ] आत्मायें कर्म मुक्त होती हैं मध्यलोक मे और स्थित होती हैं लोक के अग्रभाग पर ।

इन उक्त फलितार्थों की दृष्टि मे लोक स्वभाव के चिन्तन-मनन की जितनी उपादेयता आत्म साधना मे है उतनी ही या उससे कही अधिक लोक स्वरूप के चिन्तन-मनन की है । क्योकि लोक स्वरूप-विज्ञान की पृष्ठ भूमि पर ही लोक स्वभाव-विज्ञान-भवन का निर्माण सभव है । अत लोक स्वरूप-विज्ञान आत्म-साधना का एक अभिन्न अग है । यदि आत्म साधक तीन लोक के स्वरूप का ज्ञाता होगा तो वह लोक स्वभाव का चिन्तन-मनन भी सहज भाव से कर सकेगा ।

---

१. त्रिभुवन सस्थान स्वरूप विचयाय स्मृति
समन्वाहारो संस्थान विचयो निगद्यते ।
तत्त्वार्थ वृत्ति अ० ९, सू० ३६, पृ० ३–९ ।

२. अधस्तादुपरि तिर्यक् च सर्वत्रा काशोऽनन्तोवर्तते
तस्यानन्ता काशस्यो लोकाकाशा पर सन्नस्यातिशयेन
मध्य प्रदेशे लोको वर्तते तस्य लोकस्य स्वभाव
सस्थाना धनु चिन्तन कुर्वतो भव्य जीवस्य
तत्त्वज्ञानस्य विशुद्धिर्भवतोति लोकानुप्रेक्षा ।
तत्त्वार्थवृत्ति अ० ९, सू० ७, पृ० २८८ ।

गणितानुयोग का प्रकाशन और आधुनिक भूगोल खगोल

लगभक २५०० वर्ष पूर्व द्वादशाङ्गी का सूत्र रूप मे गौतमादि गणधरो ने ग्रन्थन किया था। अतः उस समय के इतर दार्शनिको की भूगोल–खगोल सम्बन्धी मान्यताओ का निराकरण करके जो परपरागत (पूर्व तीर्थंकरो से प्रचलित) मान्यताऐं थी, उनका ही सकलन द्वादशाङ्गी में किया गया था।

मध्यकालीन आचार्यो ने द्वादशाङ्गी मे के कतिपय सक्षिप्त कथनो को अनिवर्धित कर तथा मध्यकालीन इतर दार्शनिको की भूगोल–खगोल सबधी मान्यताओ का क्रमश निराकरण करके उपाङ्गादि आगमो मे स्वसम्मत मान्यताओ का प्रतिपादन किया था।

गणितानुयोग के प्रस्तुत सकलन में अग उपाग आदि आगमो के भूगोल-खगोल सबधी समस्त पाठो का सग्रह किया गया है। इस प्रकाशन का एक मात्र उद्देश्य यही है कि जैनागम–साहित्य में उपलब्ध भूगोल–खगोल सबधी समस्त कथनो के सकलन को शोध-निबन्ध लेखको के हितार्थ सदर्भ-ग्रन्थ के रूप में प्रस्तुत करना।

यद्यपि कतिपय अहम्मन्य विचारक यह कहते हैं कि इस भौतिक युग मे विज्ञान का विकास जब चरम सीमा पर पहुँच रहा है तब गणितानुयोग के प्रकाशन की क्या उपादेयता है? उनकी दृष्टि मे यह प्रकाशन व्यर्थ है, किंतु चिन्तनशील साहित्य-सेवियो की यह आम धारणा है कि प्राचीन विज्ञान ही आधुनिक विज्ञान के विकास की मूल भूमिका है। अत. इस धारणा के अनुसार गणितानुयोग के प्रकाशन की उपयोगिता निर्विवाद है।

प्राचीन और अर्वाचीन भूगोल-खगोल का समन्वय एक भगीरथ कार्य है। जैनागमों में वर्णित भूगोल-खगोल और आधुनिक भूगोल-खगोल का समन्वय यद्यपि सदिग्ध है, फिर भी यह कार्य बहुश्रुतो का है।

मुनि-कन्हैयालाल 'कमल'

आभार–प्रदर्शन

प्रस्तुत सकलन में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में जिन व्यक्तियो का सहयोग रहा है, उन सब का मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। विशेष रूप से मुनि श्री मिश्रीमलजी म. 'मुमुक्षु', मुनि श्री चादमल जी, श्री विनय मुनिजी तथा तपस्वी श्री गौरीलालजी म, श्री नवीन मुनिजी आदि ने उदार हृदय से सेवा कार्य कर सहयोग दिया—तथा प हीरालालजी शास्त्री—प्रबधक—श्री श्वेताम्बर जैन–मदिर, ज्ञान–भण्डार रूपनगर, दिल्ली का सहयोग चिरस्मरणीय रहेगा। जिन्होंने समय—समय पर आवश्यक ग्रन्थ-साहित्य की सुविधा प्रदान कर अनेक समस्याओ के सुलझाने मे सहयोग दिया है।

गणितानुयोग एक अध्ययन के कुछ पृष्ठ

गणितानुयोग के वर्णन प्राय गणित से सबंधित है—इसलिए सर्वसाधारण की अभिरुचि के अनुसार इसे प्रस्तुत करना तो अति कठिन है, फिर भी इस विषय की विशिष्ट जिज्ञासा वाले बन्धुओ के लिए "गणितानुयोग एक अध्ययन" लिखने का सकल्प मुनिश्री ने किया और कुछ पृष्ठ लिखे भी, किन्तु पर्याप्त समय एवं साहित्य-सामग्री के अभाव मे यह सभव नही था—इधर प्रकाशन मे अधिक विलम्ब हम सबको अखर रहा था।

परिचय के लिए कुछ पृष्ठ यहा पढिए.—

—प्रबन्धक

अलोकाकाश—अनन्त शून्य आकाश

(१) जैनागमों में यह अनन्त आकाश एक द्रव्य माना गया है। और इसके दो विभाग माने गये हैं—अलोकाकाश और लोकाकाश।[1]

अलोक का व्युत्पत्तिपरक अर्थ

(२) जो नही देखा—जाना वह अलोक है। यह अलोक अतीन्द्रिय पदार्थ है इसलिये इसके ज्ञाता सर्वज्ञ के अतिरिक्त कोई नही है। अत' अलोक का व्युत्पत्तिपरक अर्थ सगत है।

अलोकाकाश का अस्तित्व

(३) लोकाकाश मे जिन पदार्थों का सद्भाव है उनका अभाव जिस आकाश मे हो, वह अलोकाकाश है। यह निषेधवाचक स्वत अलोकाकाश का अस्तित्व सिद्ध करता है। इसके लिए यह उदाहरण है कि जिस व्यक्ति मे पण्डित के गुण नही हैं वह व्यक्ति अपण्डित कहा जाता है। अपण्डित का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नही होती। इसी प्रकार अलोक का अस्तित्व सिद्ध करने के लिये किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नही है।

अलोकाकाश एक अखण्ड द्रव्य है।[2] इसके अनन्त प्रदेश हैं।[3] इसमे एक आकाश द्रव्य के अतिरिक्त कोई द्रव्य नही है। अर्थात् यह अनन्त शून्य आकाश है। इसमे या इसके किसी एक प्रदेश मे धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, काल, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय का सर्वथा अभाव है।

टिप्पण—

(१) औपपातिक-सूत्र।

(२) ठाणा० अ० १, सूत्र ६। सम० १, १।

(३) सिद्ध, निगोद जीव, वनस्पति कायिक-जीव, विश्व के परमाणु और त्रिकाल के समयो से भी अनन्तानन्त अलोकाकाश के प्रदेश हैं।

किन्तु अलोक मे इन द्रव्यो के अभाव का कारण क्या है ? यह एक प्रश्न है—इसके दो समाधान है —

(१) अलोक मे जीवादि द्रव्यो की गति ही नही है। क्योकि वहा न जीव है और न पुद्‌गल। यदि शक्तिशाली देव भी अलोक में हाथ-पैर फैलाना चाहे तो नही फैला सकता—क्योंकि वहा गति का अभाव है। और गति-सहायक धर्मास्तिकाय का भी अभाव है। गतिशील द्रव्य-जीव और पुद्‌गल हैं। इन दो द्रव्यो के निमित्त से ही प्रत्येक पदार्थ की गति है।[1]

(२) लोकाकाश मे से अलोकाकाश मे कोई द्रव्य नही जा सकता। क्योकि लोकाकाश के अन्त मे बालु मिट्टी जैसे अत्यन्त रुक्ष पुद्‌गल हैं। रुक्षता प्रधान पुद्‌गलो की गति नही होती। गति सदा स्निग्धता प्रधान पुद्‌गलो की होती है। अथवा लोक का स्वभाव ही ऐसा है कि जीवादि द्रव्य उसके बाहर नही जा सकते।[2]

अलोकाकाश का आकार

(४) अलोकाकाश का आकार पोले गोले में रही हुई पोल जैसा है—आगमोक्त इस उपमा के सबध मे यहा कुछ चिन्तन करना है।

अलोकाकाश अनन्त और असीम है अतः उसका आकार बताने के लिए पोले गोले के अन्दर की पोल की उपमा उपयुक्त प्रतीत नही होती। क्योकि गोले के अन्दर की पोल अनन्त और असीम कैसे हो सकती है !

"गोल वस्तु का कही अन्त नही माना जाता अत वह अनन्त होती है" इस अपेक्षा से गोले के अन्दर का आकाश अनन्त तो माना जा सकता है किन्तु असीम नही माना जा सकता। यदि अलोकाकाश अनन्त होते हुए भी असीम है तो उस सीमा से आगे क्या है ? यह प्रश्न पैदा होगा। अत पोले गोले के अन्दर की पोल की उपमा लोकाकाश के आकार को तथा गोले के बाहर की पोल की उपमा अलोकाकाश के आकार को दी जाये तो अलोकाकाश का आकाश अनन्त और असीम सिद्ध हो सकेगा[3]।

टिप्पण:—

(१) अलोक मे अन्य द्रव्यो के अभाव का एक मात्र हेतु गति अभाव है। विवाह प्रज्ञप्ति (भगवती) श० १६—उ० ८ मे इसी एक हेतु का कथन है। यह गति अभाव अलोक मे है। किन्तु स्था० अ० ४ उ० ३ मे गति अभाव और गति अभाव के तीन हेतु भी कहे गए हैं —
 (१) गति सहायक धर्मास्तिकाय का अभाव।
 (२) लोक के अन्त मे स्थित रुक्ष पुद्‌गल।
 (३) लोक स्वभाव।
 इनमें गति अभाव का प्रथम हेतु अलोक मे है और शेष दो हेतु लोक मे हैं। अलोक मे अन्य द्रव्यों के अभाव का एकमात्र हेतु गति अभाव का कथन—संग्रहनय की अपेक्षा से है। और गति अभाव के तीन हेतुओं का कथन व्यवहारनय की अपेक्षा से है।

(२) अलोक में अन्य द्रव्यो के अभाव का हेतु यदि अलोक का स्वभाव मान लिया जाय तो कोई असगति नहीं होगी। क्योकि अलोक मे अन्य द्रव्यों के अभाव का हेतु जो गति अभाव माना गया है, उसका भी हेतु जीव और पुद्‌गल द्रव्य का अभाव है। किन्तु जीव और पुद्‌गल द्रव्य के अभाव का हेतु अलोक के स्वभाव के अतिरिक्त कोई नहीं है।
 लोक के बाहर जीवादि द्रव्यो के न जा सकने मे भी प्रमुख कारण लोक स्वभाव ही है। इसी प्रकार अलोक स्वभाव भी अलोक मे अन्य द्रव्यो के अभाव का प्रमुख हेतु है।

(३) विवा० श० ११, उ० १०।

एक असत्कल्पना से अलोक की अनन्तता का अंकन

(५) इस मनुष्य क्षेत्र को चारो ओर से घेर कर दस महर्धिक देव खड़े रहे और (मानुषोत्तर पर्वत के) नीचे आठ दिक्कुमारिया वलिपिण्ड लेकर चार दिशाओ मे तथा चार विदिशाओ मे (मनुष्य क्षेत्र के वाहर की ओर मुह करके) खडी रहे। आठ दिक्कुमारिया एक साथ वाहर की ओर वलिपिण्ड फेंके। जमीन पर गिरने से पूर्व वे देव उन्हे ग्रहण कर लें। ऐसी दिव्य त्वरित गतिवाले वे देव अलोक का अन्त पाने के लिए लोकान्त से एक नीचे की ओर, एक ऊपर की ओर तथा शेष आठ चार दिशा एव विदिशाओ मे जिस समय जावें, उस समय एक लाख वर्ष की आयु वाला वालक उत्पन्न हो, उसके माता-पिता तथा वह आयु भोगकर समाप्त हो जाएँ, तथा उसकी सात पीढिया एक-एक लाख वर्ष की पूर्णायु भोगकर मृत्यु को प्राप्त हो जायें, और उसके नाम, गौत्र भी नष्ट हो जाये, फिर भी वे देव अलोक का अन्त नही पा सकते। इतने लम्बे समय मे भी उन देवो ने केवल अलोक का अनन्तवा भाग ही पार किया है। इस प्रकार अलोक की अनन्तता इस दृष्टान्त से निर्धारित की गई है। [१]

लोकाकाश–अनन्त पदार्थ सद्भावी–आकाश

जिस आकाश मे लोक है, वह लोकाकाश है। लोक का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है कि — "जो देखा जाता है वह लोक है।" लोक मे जो इन्द्रिय प्रत्यक्ष पदार्थ हैं, उनके दृष्टा छद्मस्थ (असर्वज्ञ) हैं। और जो लोक मे अतीन्द्रिय पदार्थ हैं, उनके दृष्टा सर्वज्ञ हैं। इस प्रकार लोक दृश्य है अत. सर्वज्ञ और असर्वज्ञ द्वारा देखा जाता है। लोक के पर्यायवाची विश्व, संसार आदि अनेक हैं —

लोक की व्याख्या अनेक प्रकार से की गई है।

[१] प्राचीन व्याख्या पद्धति "अनुयोग पद्धति" के नाम से प्रसिद्ध है। इस व्याख्या पद्धति को समझाने के लिये पूरे अनुयोग-द्वार की रचना की गई है। लोक की व्याख्या भी इस अनुयोग पद्धति से की गई है —

(क) १– नाम लोक, २– स्थापना लोक, ३– दृश्य लोक।

(ख) १– द्रव्य लोक, २– क्षेत्र लोक ३– काल लोक
४– भाव लोक।

(ग) १– अधोलोक, २– तिर्यक् लोक, ३– ऊर्ध्व लोक।

(घ) १– ज्ञान लोक, २– दर्शन लोक, ३– चारित्र लोक।

[१] नाम लोक [२]

[२] स्थापना लोक,—लोक का आकार अर्थात्–लोक का सस्थान

टिप्पण —

१. विवा० श० ११ उ० १०।

२. अनुयोग-द्वार सूत्रांक।

अलोकाकाश के मध्य मे लोकाकाश है । परन्तु सान्त ससीम है । इसका आकार त्रिसराव सम्पुटाकार है । एक सराव (शिकोरा) उल्टा, उस पर एक सराव सीधा, फिर उस पर एक सराव उल्टा रखने से जो आकार बनता है उसे "त्रिसराव" सम्पुटाकार कहते हैं । शास्त्रीय भाषा मे यह "सुप्रतिष्ठक" आकार कहा जाता है । यह लोक नीचे से विस्तृत, मध्य मे सक्षिप्त और ऊपर से पुन विस्तृत है । [1]

लोक पुरुष और विराट पुरुष

आगमोत्तर कालीन जैन ग्रन्थो मे समस्त लोक (अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक) को लोक–पुरुष के रूप मे चित्रित किया है । किन्तु जैनागमो मे कही भी लोक पुरुष का वर्णन नही है ।

अत विचारणीय प्रश्न यह है कि जैनागमो मे जो "ग्रैवेयक" देवो के नाम गिनाए गए हैं, उनके नामकरण का हेतु क्या है ? उनके विमान लोक पुरुष की ग्रीवा के स्थान पर हैं, इसलिए वे "ग्रैवेयक" देव कहे गए हैं । यदि यह व्युत्पत्तिपरक अर्थ सगत है तो आगमो मे भी किसी समय लोक–पुरुष की कल्पना का अस्तित्व रहा होगा । जब कुटिल काल के कुचक्र से आगमो के अनेक अश विच्छिन्न हुए हैं तो समव है उस समय लोक–पुरुष की कल्पना का अग भी विच्छिन्न हो गया होगा ।

लोक–पुरुष की कल्पना के समान विराट पुरुष की कल्पना वैदिक ग्रथो मे भी मिलती है —

<u>विराट-पुरुष</u>

भूर्लोक· कल्पित पद्भ्या, भूवर्लोकाऽस्य नाभितः ।
हृदा स्वर्लोक उरसा, महर्लोको महात्मन ।।
ग्रीवायां जनलोकश्च, तपोलोक स्तनद्वयात् ।
मूर्धनि सत्यलोकस्तु, ब्रह्मलोक सनातनः ।।
तत्कट्या चातलक्लृप्त, मुरुभ्यां वितल विभो ।
जानुभ्या सुतलं शुद्ध, जघाभ्यां तु तलातलम् ।
पाताल पादतलत, इति लोक मय पुमान् ।।

भागवत् पुराण २/५/ ३८-४०
गीता प्रेस-प्रथम भाग पृ० १६६

---

१ लोकाकाश के आकार को समझाने के लिये श्वेतांबर और दिगम्बर आगमों मे विविध उपमायें दी गई हैः–

श्वेताम्बर आगम

अधोलोक का आकार

१ उल्टे सराव का आकार
(म श ७, उ १)

२. पल्यक का आकार
(म श ७, उ १)

३. तप्राकार का आकार
(म श ११, उ १०)

दिगम्बर आगम

अधोलोक का आकार

१. वेत्रासन का आकार (त्रिलोक प्रज्ञप्ति)

मध्यलोक का आकार

१. झल्लरी का आकार
२ आधे ऊर्ध्व मृदग का आकार
(जबूद्वीप प्रज्ञप्ति सग्रह)

ऊर्ध्वलोक का आकार

१ ऊर्ध्व मृदग का आकार
(त्रिलोक प्रज्ञप्ति)

कतिपय जैन ग्रथों मे लोक का आकार पुरुष सस्थान के समान भी बतलाया है—दोनो हाथ कमर पर रखकर तथा दोनो पैरो को फैला कर कोई पुरुष खडा हो, वैसा ही यह लोक है ।

(लोक प्रकाश १२–३)

वैदिक ग्रथों मे विश्व का आकार विराट पुरुष के रूप मे लिखा है ।

द्रव्य-लोक

लोक में छः द्रव्य हैं, अतः यह द्रव्य-लोक है।

छ द्रव्यो के नाम —

१. धर्मास्तिकाय—गति सहायक द्रव्य,

२. अधर्मास्तिकाय—स्थिति सहायक द्रव्य,

३. आकाशास्तिकाय—आश्रयदाता द्रव्य,

४. काल द्रव्य—स्थिति नियन्ता द्रव्य,

५. जीवास्तिकाय—चेतनाशील द्रव्य,

६. पुद्गलास्तिकाय—मूर्त जड द्रव्य,

(क) इन छ द्रव्यो मे—एक जीव है, शेष पाच अजीव हैं।

(ख) ,, ,, —एक मूर्त है,[1] शेष पाच अमूर्त हैं।

(ग) ,, ,, —एक काल द्रव्य है, शेष पाच अस्तिकाय हैं।

(घ) ,, ,, —चार अस्तिकाय—लोक, अलोक के विभाजक है—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय—एक-एक द्रव्य है। आकाशास्तिकाय यद्यपि एक द्रव्य है किन्तु लोक—अलोक दोनो मे व्याप्त है। जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय अनन्त द्रव्य हैं।

(ङ) इन छः द्रव्यो मे से, एक काल द्रव्य के प्रदेश नही है। क्योकि अतीत के समय नष्ट हो जाते हैं—और भविष्य के समय अनुत्पन्न है, इसलिए इनका कोई अस्तित्व नही है; केवल वर्तमान का एक समय[2] ऐसा काल-द्रव्य है, जो अविभाज्य है, अत इसके प्रदेश नही हैं। और प्रदेशो के न होने से ही यह काल द्रव्य अस्तिकाय नही है।[3] शेष पाच द्रव्यो के प्रदेश हैं अत वे अस्तिकाय हैं। इन्ही पचास्तिकायो से यह लोक, द्रव्य लोक कहा जाता है।

---

१ पुद्गलास्तिकाय।

२ मुक्त आत्मा को मध्यलोक से, लोक के अग्रभाग तक पहुचने मे एक समय लगता है। मुक्त आत्मा जब मध्य-लोक से एक रज्जु जितनी ऊँचाई तक पहुचता है, तब तक उसे जितना समय लगता है उतना समय, उस एक समय का विभाज्य अंश मान लिया जाए तो क्या आपत्ति है!

३. काय अर्थात्—शरीर के देश—प्रदेशो के समान काल-द्रव्य के देश-प्रदेश नहीं हैं, इसलिए काल द्रव्य होते हुए भी अस्तिकाय नहीं है।

क्षेत्र-लोक

लोक का विस्तार

इस अनन्त आकाश मे प्रतिदिन होने वाले चद्र-सूर्य के उदयास्त को तथा झिलमिलाते अनगिनत तारो को देखकर जब कभी मानव ने कुछ किया तो उनके मन मे विश्व के विस्तार की परिकल्पना जागृत हुई और वह यह सोचने लगा कि नीचे ऊपर और दायें—बायें यह लोक (विश्व) कितनी दूरी तक फैला हुआ है ? यह असीम—अनन्त है या ससीम—सान्त है ?

जैनागमो मे तथा ग्रथो मे उक्त जिज्ञासाओ के तीन समाधान मिलते हैं —

(१) यह लोक नीचे—ऊपर और दायें-बायें असख्य कोटा-कोटी योजन पर्यन्त फैला हुआ है ।

(२) **एक असत्कल्पना से लोक के विस्तार का अकन**

जम्बूद्वीप के मध्य मे स्थित मेरू-पर्वत की चूलिका को घेर कर खडे रहे और नीचे जम्बूद्वीप की परिधि पर चार दिक्कुमारिया चारो दिशाओ मे बाहर (लवण-समुद्र) की ओर मुंह करके खडी रहे । वे चारो एक साथ चारो बलि-पिण्डो को बाहर की ओर फैंके । पृथ्वी पर गिरने से पूर्व उन बलिपिण्डो को वे देव एक साथ ग्रहण कर सकें, ऐसी दिव्यगति वाले वे देव, लोक का अन्त पाने के लिये पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, ऊपर और नीचे की ओर एक साथ चलें । जिस ससय वे देव मेरु की चूलिका से चलें, उसी समय एक हजार वर्ष की आयु वाली उनकी सात पीढिया भी समाप्त हो गईं, तत्पश्चात् उनके नाम-गोत्र भी नष्ट हो गये । फिर भी वे देव लोक के अन्त को न पा सके । किन्तु उस समय तक देवताओ ने जितना क्षेत्र पार किया है वह अधिक है और शेष क्षेत्र अल्प है ।

(३) **चौदह रज्जु प्रमाण लोक तथा एक रज्जु का औपमिक माप ।**

तीन क्रोड, इक्यासी लाख, सत्ताईस हजार, नौ सो सत्तर मण वजन का "एक भार" होता है । ऐसे हजार भार अर्थात्—(३८ अरब, १२ क्रोड, ७९ लाख, ७०००० सत्तर हजार) मण वजन का एक लोहे का गोला छ मास, छ: दिन, छ प्रहर और छ घडी मे जितनी दूरी तय करे उतनी लम्बी दूरी एक रज्जु होता है । ऐसे चौदह रज्जु प्रमाण यह लोक नीचे से ऊपर पर्यन्त है ।

उक्त तीन समाधानों की क्रमशः समीक्षा

(१) प्रथम समाधान, द्वितीय और तृतीय समाधान की अपेक्षा प्राचीन तथा तर्क सगत प्रतीत होता है । आधुनिक विज्ञान भी विश्व का विस्तार असख्य योजन का ही मानता है । यथा एक घटे में प्रकाश की गति ६७८७४४० मील है । इस अनन्त आकाश में अनेक ग्रह ऐसे हैं जिनका प्रकाश पृथ्वी पर अनेक प्रकाश वर्षो मे पहुँचता है, अत लोक का विस्तार असख्य कोटा-कोटी मानना ही ठीक है ।

(२) प्रस्तुत असत्कल्पना के सम्बन्ध मे निम्नलिखित मुद्दे विचारणीय हैं —

(क) पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर मे जाने वाले देवो का केवल आधे रज्जु की दूरी ही तय करनी है, जबकि नीचे, ऊपर जाने वाले देवो को लगभग सात-सात रज्जु की दूरी तय करनी है । अत समान वेग वाले देवो ने समान समय मे, समान दूरी तय कर ली—यह कैसे सगत हो सकता है ?

टीकाकार आचार्य ने भी इस सबंध मे अपना अभिमत प्रस्तुत करते हुए कहा है कि लोक का आकार यदि सम चतुरस्र मान लिया जाए तो समान वेग वाले देव समान समय मे समान दूरी तय कर सकते हैं, अन्यथा आगमोक्त उदाहरण की सगति सभव नही है ।

(ख) देवो द्वारा नही पार किया हुआ क्षेत्र, पार किये हुए क्षेत्र के असख्यातवें भाग जितना है । अर्थात्—देवो द्वारा नही पार किये हुए क्षेत्र से पार किया हुआ क्षेत्र असख्यात गुणा अधिक है । इस आगम निर्णय की सगति किस प्रकार की जाये !

(ग) बलि-पिण्ड लेने के लिये जिस देव को मेरु की चूलिका से जबूद्वीप के विजय द्वार तक आना होता है, उसे लगभग १,१२२०० योजन की दूरी तय करनी पडती है । इतनी दूरी कम से कम एक चुटकी बजे जितनी देर मे तय कर लेता होगा, जबकि कुछ ऐसे दिव्य गति वाले देव हैं जो एक चुटकी बजे जितनी देर मे पूरे जबूद्वीप की परिक्रमा कर लेते है । अर्थात्—बलिपिण्ड पकडने वाले देव से एक चुटकी मे तिगुनी दूरी तय कर लेते हैं । कुछ देव ऐसी दिव्य गति वाले भी हैं जो तीन चुटकी बजे उतनी देर मे जबूद्वीप की इक्कीस परिक्रमा कर लेते हैं । अब विचारणीय विषय यह है कि उक्त कल्पना मे लोक का अत पाने के लिये ऐसी दिव्य गतिवाले देवो की गति का उदाहरण क्यो नही दिया गया ?

(घ) उक्त कल्पना मे लोक का अन्त पाने के लिए जाने वाले देव लगभग आठ हजार वर्ष में भी लोक का अन्त नही पा सकते, जबकि तीर्थंकर भगवान के जन्माभिषेक आदि महोत्सवो में अच्युतेन्द्र आदि आते हैं तो वे एक मुहूर्त (लग-भग ४८ मिनिट) मे पौने चार रज्जु की दूरी तय कर लेते हैं । यदि (असत्कल्पनासे) अच्युतेन्द्र लोक का अन्त पाने के लिए तीव्रतम गति से चलें तो लग-भग चार मुहूर्त मे लोक के अन्त तक पहुच सकते हैं । अत. आठ हजार वर्ष तक लोक का अन्त न पा सकना विचारणीय अवश्य है ।

(ङ) चमरेन्द्र भगवान महावीर की शरण लेकर शक्रेन्द्र को अपमानित करने के लिए सौधर्म देवलोक तक गया । और वज्र की मार से बचने के लिए वह वहा से लौट कर भगवान महावीर के समीप पहुँचा । शक्रेन्द्र भी वज्र को पकडने के लिए तीव्रतम गति से चला । "प्रस्तुत प्रसग मे चमरेन्द्र लगभग डेढ रज्जु गया और आया, शक्रेन्द्र केवल डेढ रज्जु आया ।" चमरेन्द्र को आने-जाने मे अधिक से अधिक एक मुहूर्त लगा होगा ! जबकि उक्त असत्कल्पना मे देव लोकान्त तक आठ हजार वर्ष मे भी नही पहुच पाते । अत यह अवधि विचारणीय है ।

(३) **एक रज्जु के औपमिक परिमाण के संबन्ध मे निम्न लिखित तथ्य विचारणीय हैं:—**

(क) एक रज्जु का जो औपमिक परिमाण बताया है उस हिसाब से उक्त भारवाला लोहे का गोला सात वर्ष, तीन मास और आठ दिन मे चौदह रज्जु की दूरी पार कर सकता है । जब कि उक्त असत्कल्पना मे तीव्रतम गतिवाले देव भी आठ हजार वर्ष मे लोकान्त तक नही पहुच सके ।

इसका फलितार्थ यह हुआ कि लोहे के गोले की गति से देवताओ की गति मन्द है जबकि देवताओ की गति से लोहे के गोले की गति मन्द होनी चाहिये । "शक्रेन्द्र की गति से वज्र की गति मन्द रही है ।" यह तथ्य व्याख्या प्रज्ञप्ति मे वर्णित है ।

(ख) एक रज्जु का यह औपमिक परिमाण "जैनतत्त्व-प्रकाश" (स्व० पूज्य श्री अमोलक ऋषिजी म० लिखित) मे दिया गया है । किंतु किस ग्रथ से उद्धृत किया गया—यह अज्ञात है । यदि किसी प्राचीन ग्रन्थ में यह है तो अवश्य विचारणीय है ।

(ग) आधुनिक वैज्ञानिको की यह मान्यता है कि लोहे का गोला एक मण वजन का हो चाहे हजार मण वजन का हो, परन्तु किसी निर्धारित ऊचाई से गिराने पर एक समान गति से गिरता है। एक घटे में लोहे के गोले की गति ऊपर से नीचे की ओर केवल ७८ हजार ५५२ माइल की होती है। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण में ही यह गति आधुनिक वैज्ञानिको ने मानी है।

यदि विज्ञान सम्मत लोहे के गोले की गति का आधार लेकर एक रज्जु का परिमाण निकालें तो इस प्रकार आयगा —

यथा—छ मास, छ दिन, छ प्रहर और छ घडी के ४४८४ घटे और २४ मिमिट होते हैं। इतने समय में लोहे का गोला ३५ करोड, २२ लाख, ५८ हजार और ५८६ माइल की दूरी पार कर लेगा—ये एक रज्जु के माइल हुए।

इस प्रकार चौदह रज्जु के ४ अरब, ६३ करोड, १७ लाख और २४३ माइल हुए। लोहे के गोले की गति से लोक का विस्तार इतना ही होता है, किंतु यह लोक का विस्तार सर्वथा असगत है।

(घ) तोल में 'मण' सज्ञा किस युग में निर्धारित की गई ? इसका ऐतिहासिक दृष्टि से निर्णय होना आवश्यक है। क्योंकि राजाओ के शासन काल में तोल में 'मण' प्रचलित था।

(ङ) आगम काल में 'मण' तोल प्रचलित नही था, अत यह मध्यकालीन तोल का नाम है। फिर भी इस सम्बन्ध में शोध कार्य होना आवश्यक है।

काल–लोक

यह लोक (विश्व) सान्त है या अनन्त ? यह एक प्रश्न है। इसका समाधान वैदिक-परम्परा ने इस प्रकार किया है·—"विश्व की आदि भी है और अन्त भी है, अर्थात् सृष्टि का सर्जन और सहार दोनो होते हैं।" जैन-दर्शन ने इसका समाधान अनेकान्त-दृष्टि से इस प्रकार किया है —

"यह लोक द्रव्य[1] और क्षेत्र[2] की अपेक्षा से सान्त है, काल[3] और भाव[4] की अपेक्षा से अनन्त है।"

---

१. जहां तक यह लोक है वहां तक ही धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय हैं। जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय भी लोकान्त तक ही हैं। अत यह लोक द्रव्यापेक्षया सान्त है।

२ यह लोक क्षेत्र से असख्य कोटा-कोटी योजन पर्यन्त है, आगे अलोक है। अत यह लोक क्षेत्रापेक्षया भी सान्त है।

३. काल दो प्रकार का है —नैश्चयिक काल और व्यावहारिक काल। नैश्चयिक काल अनन्त है। अत इसकी अपेक्षा यह लोक भी अनन्त है। और यह काल लोक व्यापी है। अत यह धर्मास्तिकाय के समान लोक-अलोक का विभाजन भी है।

समय, आवलिका-यावत्-कालचक्र पर्यन्त व्यावहारिक काल है। चन्द्र, सूर्य आदि ग्रहों के निमित्त से मानव ही व्यावहारिक-काल के विभाग स्थिर करता है, इसलिए मनुष्य–क्षेत्र को समय-क्षेत्र कहते हैं। यह मनुष्य-क्षेत्र अढाई द्वीप पर्यन्त है।

४ जीव द्रव्य, काल की अपेक्षा से अनन्त है, अत जीव समुदाय के औपशमिकादि भाव भी काल की अपेक्षा से अनन्त हैं। और इन औपशमिकादि भावो की अपेक्षा यह लोक अनन्त है।

भाव लोक

भाव पाच प्रकार के हैं—१—औपशमिक[1] २—क्षायोपशमिक[2] ३—क्षायिक[3] ४—औदयिक,[4] ५—पारिणामिक[5]। ये पाचो भाव जीव के स्वरूप हैं। इन पाचो मे एक औदयिक भाव वैभाविक है—शेष चार स्वाभाविक हैं। औपशमिक आदि तीन भाव उत्तरोत्तर आत्मशुद्धि के द्योतक हैं।[6]

मुक्त जीवो मे दो भाव है—१—क्षायिक और २—पारिणामिक।

ससारी जीवो मे से किसी के तीन भाव, किसी के चार भाव और किसी के पाच भाव हैं। दो या एक भाव किसी ससारी जीव मे नही होते। यह लोक अनन्त जीवो से व्याप्त है। और वे अनन्त जीव इन पाच भावो से युक्त हैं। इसलिये यह भावलोक भी है।

---

१. औपशमिक भाव दो प्रकार का है:—१—सम्यक्त्व, २—चारित्र।

२. क्षायिक भाव नव प्रकार का है:—१—ज्ञान, २—दर्शन, ३—दान, ४—लाभ, ५—भोग, ६—उपभोग, ७—वीर्य, ८—सम्यक्त्व, ९—चारित्र।

३. क्षायोपशमिक भाव अठारह प्रकार का है:—

१—चार ज्ञान, २—तीन अज्ञान, ३—तीन दर्शन, ४—पांच दानादि लब्धियां, ५—सम्यक्त्व, ६—चारित्र-सर्वविरति, और ७—संयमासयम-देश विरति।

४. औदयिक भाव इक्कीस हैं—१—चार गतियां, २—चार कषाय, ३—तीन लिंग-वेद, ४—एक मिथ्यादर्शन, ५—एक अज्ञान, ६—एक असयम, ७—एक असिद्ध भाव, ८—छः लेश्यायें।

५. पारिणामिक भाव अनेक प्रकार के हैं.—जीवत्व, भव्यत्व और अभव्यत्व ये तीन तथा अन्य भी पारिणामिक भाव हैं।

६. स्थानांग—अ. ३, उ. २, सूत्र १५३ मे ज्ञान, दर्शन, चारित्र को ही भाव-लोक कहा है। केवलज्ञान, केवल-दर्शन और यथाख्यात चारित्र क्षायिक भाव हैं। शेष चार चारित्र क्षायोपशमिक भाव एवं औपशमिक भाव हैं। आत्म शुद्धि की अपेक्षा से औपशमिकादि तीन लोक ही भाव लोक हैं।

सम्पादकीय

प्रवुद्ध पाठको के मन मे सहज ही यह सन्देह हो सकता है कि आखिर प्रस्तुत गणितानुयोग-सकलन का उद्देश्य क्या है ? इस युग मे, जव कि वैज्ञानिक ज्योतिष्क-लोक की सैर कर चुके हैं और गहरी जानकारी प्राप्त कर चुके हैं, तव इस सकलन का क्या मूल्य होगा ? इन प्रश्नो का उत्तर भी मुनिश्री ने अपने वक्तव्य मे दिया है । मगर भूगोल-खगोल सबधी जो विवरण प्रस्तुत ग्र थ मे दिया गया है, उसमे शत-शत ऐसे विषय हैं जिनको जानकारी आधुनिक वैज्ञानिको को नही है । जिन विषयो की जानकारी है, वह भी अन्तिम है, यह नही कहा जा सकता । अतएव यह उचित ही है कि इस विपय की पुरातन विचारणाएँ अद्यतन अन्वेपको के समक्ष उपस्थित की जाएं ।

इसके अतिरिक्त प्रस्तुत प्रकाशन एक महती योजना की आशिक पूर्त्ति स्वरूप है—अपने आप मे परिपूर्ण नही । वत्तीस मूल प्राकृत-जैनागमो मे वर्णित समस्त विषयो का सकलन करके प्रकाशित करना आगम-अनुयोग-प्रकाशन की योजना है । सर्व प्रथम तैयार हो जाने के कारण ही यह विभाग पहिले प्रकाशित किया जा रहा है ।

आगम-अनुयोग के वर्गीकरण की कल्पना बडी महत्त्वपूर्ण है । श्री 'कमल' मुनिजी ने इस कल्पना को मूर्त्त रूप देने मे घोर परिश्रम किया है । कई वर्षो से वे इसके लिए निरन्तर प्रयत्न करते आ रहे हैं । इसके लिए उन्होंने दुस्साध्य साधना की है । जिन्होने उन्हे शारीरिक और मानसिक श्रम करते देखा है, वे उनकी गहरी लगन को देख कर चकित रह गए हैं । दिन मे एक ही बार आहार ग्रहण करते हुए वे अधिकाश समय इसी साधना मे लगा रहे हैं ।

मुनि श्री का अध्ययन विशाल है और उनकी कल्पनाशक्ति भी उर्वरा है । सचमुच विज्ञ-समाज के वे धन्यवाद के पात्र हैं और अन्य मुनियो के समक्ष उन्होने एक स्पृहणीय उदाहरण उपस्थित किया है । इस प्रकार की विशुद्ध साहित्य-सेवा में अन्य मुनिजन भी प्रवृत्त हो, यह सर्वथा अनुकरणीय है ।

मुनिश्री कमलजी और पण्डितवर श्री हीरालालजी शास्त्री की विस्तृत प्रस्तावनाएँ प्रस्तुत ग्रन्थ के साथ प्रकाशित हो रही हैं । उनमे प्रस्तुत वक्तव्य के अतिरिक्त कुछ कहना शेष नही रहता । अतएव 'सम्पादकीय' लिखना अपरिहार्य आदेश का पालन मात्र है ।

इस उपयोगी साहित्य-आयोजन मे मैं कुछ योग दे सका, यह मेरे लिए अत्यन्त प्रमोद का विषय है ।

'गणितानुयोग' के सकलन मे त्रुटिया रह जाना स्वाभाविक हैं । आशा है विषय की दुरूहता एव गभीरता को देखते हुए वे क्षम्य मानी जाएँगी ।

अन्त मे, सकलन को मुद्रित करने मे जिन्होंने प्रशसनीय आर्थिक-योग प्रदान किया है, उन महानुभाव को शतश धन्यवाद दिये बिना नहीं रहा जा सकता, जिनकी उदारता और साहित्य-भक्ति के बिना प्रकाशन का कार्य सर्वथा असभव था । बस, इतना ही ।

—शोभाचन्द्र भारिल्ल

प्रस्तावना

(क)-जैन मान्यतानुसार लोक-वर्णन

अनन्त आकाश के ठीक बीचो-बीच यह हमारा लोक अवस्थित है, जो नीचे पल्यक के सदृश, मध्य मे वज्र के समान और ऊपर खडे मृदग के तुल्य है। यह लोक नीचे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त और ऊर्ध्वमुख मृदग के समान है। यह सब मिलकर लोक का आकार पुरुष के आकार का सा हो जाता है। जैसे कोई पुरुष अपने दोनो पैरो को फैलाकर और दोनो हाथो को कटि पर रख कर खडा हो, तो उसका जैसा आकार होगा, ठीक इसी प्रकार लोक का आकार है। अथवा आधे मृदग के ऊपर पूरे मृदग के रखने पर जैसा आकार होता है, वैसा आकार लोक का समझना चाहिए[1]। कटि से नीचे के भाग को अधो-लोक, ऊपर के भाग को ऊर्ध्व-लोक और कटि-स्थानीय भाग को मध्य-लोक कहते हैं। इस तीन विभाग वाले लोक को लोकाकाश कहा जाता है, क्योकि इसके भीतर ही जीव-पुद्गलादि सभी चेतन और अचेतन द्रव्य पाये जाते हैं। इस लोकाकाश के सर्व ओर पाये जाने वाले अनन्त आकाश को अलोकाकाश कहते हैं, क्योकि इसमे केवल आकाश के अतिरिक्त अन्य कोई चेतन या अचेतन द्रव्य नही पाया जाता है।

१-सामान्य लोक-स्वरूप

लोकाकाश की ऊचाई १४ राजु है[2]। यह अधोलोक मे सबसे नीचे सात राजु विस्तृत है। पुन क्रम से घटता हुआ कटि स्थानीय मध्य—भाग मे एक राजु विस्तृत है। इससे ऊपर क्रम से बढता हुआ दोनो हाथो के कोहिनी-स्थान पर पाच राजु विस्तृत है। पुन क्रमसे घटता हुआ शिर-स्थानीय लोक के अग्र-भाग पर एक राजु विस्तृत है। यह समस्त लोक सर्व ओर घनोदधि, घनवात और तनुवात इन तीन वलयो से वेष्टित है। अर्थात् इनके आधार पर अवस्थित है। प्रथम वलय अधिक सघन है, अत इसे घनोदधि कहते हैं। दूसरा वलय तीसरे वलय की अपेक्षा सघन है, अत' उसे घनवात कहा गया है। तीसरा वलय उक्त दोनो की अपेक्षा अत्यन्त सूक्ष्म या पतला है, इसलिए इसे तनुवात कहते हैं[3]।

२—अधोलोक

कटि-स्थानीय झल्लरी के समान आकारवाले मध्यलोक के नीचे सात पृथिविया हैं— धम्मा, वशा, सेला, अजना, अरिष्टा, मघा और माघवती। रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पकप्रभा, धूमप्रभा, तम प्रभा और महातम प्रभा—इनके गोत्र कहे गये हैं। इनमे से पहली रत्नप्रभा पृथ्वी के तीन भाग हैं—खरभाग, पकभाग और अब्बहुलभाग। इनमे खरभाग सोलह हजार योजन मोटा है। पकभाग चौरासी हजार योजन और अब्बहुलभाग अस्सी हजार योजन मोटा है। इस प्रकार रत्नप्रभा पृथ्वी की मोटाई एक लाख अस्सी हजार योजन है। इस तीन विभाग—

---

१. देखो प्रस्तुत ग्रन्थ, पृ० ६-७। तिलोयपण्णत्ती, अ०. १ गा० १३७-३८।
उब्भिय दलेक्कमुरवद्धसंचयसण्णिहो हवे लोगो। (त्रिलोकसार गा० ६)

२. चोद्दस रज्जूदयो लोगो (त्रिलोकसार गा० ६) जगसेढिसत्तभागो रज्जू। (त्रिलोकसार गा०७)
चउदसरज्जू लोओ बुद्धिकओ होइ सत्तराजुघणो। कर्म ग्र थ. ५–९७
सयभुपरिमताओ अवरतो जाव रज्जूमाईओ। (प्रवचनसारो० १४३, ३१) राजु का प्रमाण जगच्छ्रेणी के सातवें भाग-बराबर है जो कि स्वयम्भूरमण द्वीप के पूर्व भाग से लेकर पश्चिम भाग-पर्यन्त के प्रमाण है। एक राजु मे असंख्यात योजन होते हैं।

३. दि. शास्त्रों मे घनोदधिवात का वर्ण गोमूत्र-सम, घनवातका मूंग-समान और तनुवात का अव्यक्त वर्ण कहा है।

वाली रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे असख्यात हजार योजन के अन्तराल के बाद दूसरी शर्करा पृथ्वी है। यह एक लाख बत्तीस हजार योजन मोटी है। इसके नीचे पुन असख्यात हजार योजन नीचे जाकर तीसरी बालुका पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख अट्ठाईस हजार योजन है। इस तीसरी पृथ्वी का तल भाग मध्यलोक से दो रज्जु प्रमाण नीचा है। तीसरी पृथ्वी से असख्यात हजार योजन नीचे जाकर चौथी पकप्रभा पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख चौबीस हजार योजन है। इस पृथ्वी का तल भाग मध्यलोक से तीन राजु नीचा है। इससे असख्यात हजार योजन नीचे जाने पर पांचवी धूमप्रभा पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख बीस हजार योजन है। इसका तल भाग मध्यलोक से चार रज्जु नीचा है। पांचवीं पृथ्वी से असख्यात हजार योजन नीचे जाने पर छठी तम'प्रभा पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख सोलह हजार योजन मोटी है। इसका तलभाग मध्यलोक से पाच राजु नीचा है। छठी पृथ्वी से असख्यात हजार योजन नीचे जाने पर सातवी महातम प्रभा पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख आठ हजार योजन है[१]। इसका तल भाग मध्यलोक से छह राजु नीचा है।

रत्नप्रभा पृथ्वी के एक लाख अस्सी हजार योजन प्रमाण क्षेत्र मे से ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन भाग को छोडकर मध्यवर्ती क्षेत्र में ऊपर भवनवासियों के सात करोड बहत्तर लाख भवन हैं,[२] तथा नीचे नारकियो के तीस लाख नारकावास हैं[३]। किन्तु त्रिलोकप्रज्ञप्ति, तत्त्वार्थ-वार्त्तिक आदि दि० ग्रन्थो मे इससे भिन्न उल्लेख पाया जाता है[४]।

दूसरी पृथ्वी के ऊपर नीचे एक-एक हजार योजन भूमि-भाग को छोडकर मध्यवर्ती भाग मे नारको के २५ लाख नारकावास हैं। इसी प्रकार तीसरी से लगा कर सातवी पृथ्वी तक उनकी मोटाई के ऊपरी-नीचे के एक-एक हजार योजन भाग को छोडकर मध्यवर्ती भागो मे क्रमश १५ लाख, १० लाख, ३ लाख, पाच कम १ लाख और ५ नारकावास हैं। ये नारकावास पटल या पाथडो मे विभक्त हैं। पहली आदि पृथ्वी मे क्रमश १३, ११, ९, ७, ५, ३ और १ पटल हैं। इस प्रकार सातो पृथिवियो के नारकावासो के ४९ पटल हैं। इन ४९ पटलो मे विभक्त सातो पृथिवियो के नारकावासो का प्रमाण ८४ लाख है, जिनमे असख्यात नारकी जीव सदाकाल अनेक प्रकार के क्षेत्रज परस्परोदीरित, शारीरिक और मानसिक दु खो को भोगा करते हैं। इन नरको मे क्रूर कर्म करने वाले पापी मनुष्य और पशु-पक्षी तिर्यंच उत्पन्न होते हैं। वे पहली पृथ्वी में कम से कम १० हजार वर्ष की आयु से लेकर सातवी पृथ्वी में ३३ सागरोपम काल तक नाना दु खों को उठाया करते हैं। उनकी अकाल मृत्यु नही होती है। उनका शरीर वैक्रियिक और औपपातिक होता है। जन्म लेने के पश्चात् अन्तर्मुहूर्त मे ही उनके शरीर का पूर्ण निर्माण हो जाता है और वे उत्पन्न होते ही ऊपर की ओर पैर तथा अधोमुख होकर नीचे नरक-भूमि पर गिरते हैं।

सातवी-पृथ्वी के नीचे एक राजु-प्रमाण मोटे और सात राजु-प्रमाण विस्तृत क्षेत्र मे केवल एकेन्द्रिय जीव ही रहते हैं।

---

१ दि० परम्परा मे शर्करा आदि पृथिवियो की मोटाई क्रमश ३२०००, २८०००, २४०००, २००००, १६००० और ८००० योजन मानी गई है। तिलोयपण्णत्ती मे 'पाठान्तर' देकर उपर्युक्त मोटाई का भी उल्लेख है।

२. देखो प्रस्तुत ग्रन्थ का पृष्ठ ५३।

३. देखो प्रस्तुत ग्रन्थ का पृ० ४३।

४ दिगम्बर परम्परा के अनुसार रत्नप्रभा के तीन भागो मे से प्रथम भाग के एक-एक हजार-योजन क्षेत्र को छोडकर मध्यवर्त्ती १४ हजार योजन क्षेत्र मे किन्नर आदि सात व्यन्तर देवो के, तथा नागकुमार आदि नौ भवनवासी देवो के आवास हैं। तथा रत्नप्रभा के दूसरे भाग मे असुर-कुमार भवनपति और राक्षस व्यन्तर-पति के आवास हैं। रत्नप्रभा के तीसरे भाग मे नारको के आवास हैं।

(देखो तिलोयपण्णत्ती अ० ३ गा ७। तत्त्वार्थवार्तिक अ० ३, सू १)

३—मध्यलोक

मध्यलोक का आकार झल्लरी या चूडी के समान गोल है। इसके सबसे मध्य भाग मे एक लाख योजन विस्तृत जम्बूद्वीप है। इसे सर्व ओर से घेरे हुए दो लाख योजन विस्तृत लवण समुद्र है। इसे सर्व ओर से घेरे हुए चार लाख योजन विस्तृत धातकीखण्ड द्वीप है। इसे सर्व ओर से घेरे हुए आठ लाख योजन विस्तृत कालोद समुद्र है। इसे सर्व ओर से घेरे हुए सोलह लाख योजन विस्तृत पुष्कर द्वीप है, इस पुष्कर द्वीप के ठीक मध्य भाग मे गोल आकार वाला मानुषोत्तर पर्वत है। इससे परवर्ती पुष्करार्घ द्वीप मे, तथा उससे आगे के असख्यात द्वीप-समुद्रो मे वैक्रिय लब्धि-सपन्न या चारणमुनि के अतिरिक्त अन्य मनुष्यो का आवागमन नही हो सकता ऐसी श्वेताम्बर सम्प्रदाय की मान्यता है। किन्तु दिगम्बर-सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार ऋद्धि-सम्पन्न मनुष्य भी नही जा आ सकते हैं।

पुष्कर द्वीप को घेर कर उससे दूने विस्तार वाला पुष्करोद समुद्र है। पुन उसे घेरकर उत्तरोत्तर दूने-दूने विस्तार वाले वरुणवरद्वीप वरुणवर समुद्र, क्षीरवरद्वीप-क्षीरोदसागर घृतवरद्वीप घृतवर-समुद्र, क्षोदवर द्वीप क्षोदवर समुद्र, नदीश्वर द्वीप-नन्दीश्वरवर समुद्र आदि नाम वाले असख्यात द्वीप और समुद्र है। सब से अन्त में असख्यात योजन विस्तृत स्वयम्भूरमण समुद्र है।

इस असख्यात द्वीप--समुद्रो वाले मध्य लोक के ठीक मध्य भाग मे जो एक लाख योजन विस्तृत जम्बूद्वीप है उसके भी मध्य भाग मे मूल मे दस हजार योजन विस्तार वाला और एक लाख योजन ऊचा मेरु पर्वत है। इसके उत्तर दिशा मे अवस्थित उत्तरकुरु मे एक अनादि-निधन पार्थिव जम्बू-वृक्ष है, जिसके निमित्त से ही इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप पडा है। इस द्वीप का विभाजन करने वाले, पूर्व से लेकर पश्चिम तक लम्बे छह वर्षधर पर्वत हैं—हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी। इन वर्षधर पर्वतो से विभक्त होने के कारण जम्बूद्वीप के सात विभाग हो जाते हैं, जिन्हे वर्ष या क्षेत्र कहते हैं। इनके नाम दक्षिण की ओर से इस प्रकार है—भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत वर्ष। इनमे से विदेह क्षेत्र के मध्य-भाग मे मेरु पर्वत है। इसके दक्षिणी भाग मे भरत आदि तीन क्षेत्र हैं और उत्तरी भाग मे रम्यक आदि तीन क्षेत्र हैं।

४–कर्मभूमियां और अकर्मभूमियां

उपर्युक्त सात क्षेत्रो मे से भरत, ऐरावत और देवकुरु-उत्तरकुरु को छोडकर शेष विदेह क्षेत्र को कर्मभूमि कहा जाता है, क्योकि यहा के मनुष्य असि, मषी, कृषि, आदि कर्मों के द्वारा अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। यहा के मनुष्य-तिर्यंच अपने अपने पुण्य-पापो के अनुसार नरक, तिर्यंचादि चारो गतियो मे उत्पन्न होते हैं तथा यहा के ही मनुष्य अपने पुरुषार्थ के द्वारा कर्मो का क्षय करके मोक्ष प्राप्त करते हैं। उक्त कर्मभूमि के सिवाय शेष क्षेत्रो को अकर्म भूमि या भोगभूमि कहा जाता है, क्योकि वहा असि-मषी आदि कर्मों के द्वारा जीविकोपार्जन नही करना पड़ता, किन्तु प्रकृति-प्रदत्त कल्पवृक्षो के द्वारा ही जीवन-निर्वाह होता है। भोगभूमि के जीवो की अकाल मृत्यु भी नही होती है, किन्तु वे सदा स्वस्थ रहते हुए पूर्ण आयु-पर्यन्त दिव्य भोगो को भोगते रहते है।

५—अन्तर्द्वीप

प्रथम हिमवान, पर्वत की चारो विदिशाओ मे तीन-तीन सौ योजन लवण-समुद्र के भीतर जाकर चार अन्तर द्वीप हैं। इसी प्रकार लवण-समुद्र के भीतर चार सौ, पाच सौ, छह सौ, सात सौ, आठ सौ और नौ सौ योजन आगे जाकर चारो विदिशाओ मे चार-चार अन्तर-द्वीप और हैं। इस प्रकार चुल्ल हिमवान् के (७×४=२८) सर्व अन्तर-द्वीप २८ होते है। इसी प्रकार छठे शिखरी पर्वत के लवण समुद्रगत २८ अन्तर-द्वीप हैं। दोनो ओर के मिलाकर ५६ अन्तर द्वीप हो जाते हैं[1]। इनमे एकोरुक आदि अनेक आकृतियो वाले मनुष्य रहते हैं। वे कल्प वृक्षो के

१. दिगम्बर परम्परा मे अन्तर द्वीपो की संख्या ९६ बतलायी गयी है। विशेष के लिए देखो-तिलोयपण्णत्ती अ० ४, गा० २४७८-२४९०। तत्त्वार्थवार्त्तिक अ० ३, सूत्र ३७ की टीका आदि।

फल-फूलो को खाकर अपना जीवन-निर्वाह करते हैं, स्त्री-पुरुष के रूप मे युगल ही उत्पन्न होते हैं और साथ ही मरते हैं। इनके मरण से कुछ समय पूर्व युगल-सन्तान उत्पन्न होती है[1]।

ऊपर जिन छह वर्षधर पर्वतो के नाम कहे गये हैं, उनके ऊपर क्रमश पद्म, महापद्म, तिगिञ्छ, केशरी, महापुण्डरीक और पुण्डरीक नामका एक-एक ह्रद या सरोवर है। इन्ही सरोवरो के मध्य मे पद्मो (कमलो) का अवस्थान वतलाया गया है। (विशेष वर्णन के लिए देखिये प्रस्तुत ग्रन्थ का पृ० ८३—८५)

हिमवान पर्वतस्थ पद्मद्रह के पूर्व भाग से गगा महानदी निकली है, जो पर्वत से नीचे गिरकर दक्षिण भरत क्षेत्र मे वहकर पूर्वमुखी होकर पूर्व के लवण-समुद्र मे जाकर मिलती है। इसी पद्म-सरोवर के पश्चिम-भाग से सिन्धु महानदी निकल कर भारतवर्ष के दक्षिण भाग मे कुछ दूर वह कर पश्चिमाभिमुखी होकर पश्चिम लवण-समुद्र मे जाकर मिलती है। इसी सरोवर के उत्तरी भाग से रोहितासन नदी निकली है जो कि हैमवत-क्षेत्र मे वहती है। अन्तिम शिखरी-पर्वत के ऊपर स्थित पुण्डरीक सरोवर के पूर्वी भाग से रक्ता और पश्चिमी भाग से रक्तोदा नदी निकलकर ऐरावत क्षेत्र मे वहती हुई क्रमश पूर्व और पश्चिम समुद्र मे जाकर मिलती हैं। इसी पुण्डरीक सरोवर के दक्षिणी-भाग से सुवर्णकूला नदी निकली है, जो हैरण्यवत-क्षेत्र मे वहती है। शेष मध्यवर्ती वर्षधर पर्वतो के सरोवरो से दो-दो नदिया निकली हैं। वे अपने-अपने क्षेत्रो मे बहती हुई पूर्व एव पश्चिम के समुद्र मे जाकर मिलती हैं। इन प्रधान महानदियो मे सहस्रो अन्य छोटी नदिया आकर मिलती हैं।

विदेह क्षेत्र मे मेरु पर्वत के ईशानादि चारो कोणो मे क्रमश गन्धमादन, माल्यवान्, सौमनस और विद्युत्प्रभ नाम वाले चार पर्वत हैं। इनसे विभक्त होने के कारण मेरु के दक्षिणी भाग को देवकुरु और उत्तरी भाग को उत्तरकुरु कहते हैं। ये दोनो ही क्षेत्र भोगभूमि हैं। मेरु के पूर्ववर्त्ती भाग को पूर्व-विदेह और पश्चिम दिशा वाले भाग को अपर या पश्चिम-विदेह कहते हैं इन दोनो ही स्थानो में सीता—सीतोदा नदी के बहने से दो-दो खण्ड हो जाते हैं। इन चारो ही खण्डो में कर्मभूमि है। इन्ही मे सीमन्धर आदि तीर्थंकर सदा विहार करते और धर्मोपदेश देते हुए विराजते हैं और आज भी वहा के पुरुषार्थी मानव कर्मों का क्षय करके मोक्ष जाते हैं।

६-ज्योतिष्क लोक

जम्बू-द्वीप के समतल भाग से ७९० योजन की ऊचाई से लेकर ९०० योजन की ऊँचाई तक ज्योतिष्क लोक है, जहा पर सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र और तारा, इन पाँच जाति के ज्योतिषी देवो के विमान हैं। ये सभी विमान यत ज्योतिर्मान या प्रकाश-स्वभावी हैं, अत इन्हे ज्योतिष्क कहते हैं। और उनमे रहने वाले ज्योतिष्क देवो के निवास के कारण उक्त क्षेत्र ज्योतिष्क-लोक कहलाता है। तिरछे रूप मे यह ज्योतिष्क-लोक स्वयम्भूरमण समुद्र तक फैला हुआ है। इसमे ७९० योजन की ऊचाई पर सर्व प्रथम ताराओ के विमान है। उनसे १० योजन की ऊचाई पर सूर्य का विमान है। सूर्य से ८० योजन ऊपर चन्द्र का विमान हैं। चन्द्र से ४ योजन ऊपर नक्षत्र हैं। नक्षत्रो से ४ योजन ऊपर बुध का विमान है। बुध से ३ योजन ऊपर शुक्र का विमान है। शुक्र से ३ योजन ऊपर गुरु का विमान है। गुरु से ३ योजन ऊपर मगल का विमान है। और मगल से ३ योजन ऊपर शनैश्चर का विमान है। इस प्रकार सर्व ज्योतिष्क विमान-समुदाय एक सौ दश योजन के भीतर पाया जाता है।

मध्य-लोकवर्ती तीसरे पुष्कर-द्वीप के मध्य मे जो मानुषोत्तर पर्वत है, वहा तक का क्षेत्र मनुष्य लोक कहलाता है। इस मनुष्य लोक के भीतर सर्व ज्योतिष्क-विमान मेरु की प्रदक्षिणा करते हुए निरन्तर घूमते रहते हैं। यहां पर सूर्य के उदय और अस्त से ही दिन-रात्रि का व्यवहार होता है। मनुष्य लोक के वाहिरी भाग से लेकर स्वयम्भूरमण समुद्र तक के असख्यात योजन विस्तृत क्षेत्र मे जो असख्य ज्योतिष्क-विमान हैं, वे घूमते नही, किन्तु

---

१. देखो-तिलोयपण्णत्ती अ० ४, गा० २४८९, तथा २५१२ आदि।

सदा अवस्थित रहते है। जम्बूद्वीप मे मेरु के चारो ओर ११२१ योजन तक ज्योतिष्क-मण्डल नही है। लोकान्त मे भी इतने ही योजन छोडकर ज्योतिष्क-मण्डल अवस्थित है। इसके मध्यवर्ती भाग मे यथा समव अन्तराल के साथ सर्वत्र वह फैला हुआ है।

जैन मान्यता के अनुसार जम्बूद्वीप मे २ सूर्य और २ चन्द्र हैं। एक सूर्य मेरुपर्वत की पूरी प्रदक्षिणा दो दिन-रात में करता है। इसका परिभ्रमण-क्षेत्र जम्बूद्वीप के भीतर १८० योजन और लवण-समुद्र के भीतर ३३०$\frac{४८}{६१}$ योजन है। सूर्य के घूमने के मण्डल १८४ हैं। एक मण्डल से दूसरे मडल का अन्तर दो योजन का है। इस प्रकार प्रथम मण्डल से अन्तिम मडल तक परिभ्रमण करने में सूर्य को ३६८ दिन लगते हैं। सौर मास के अनुसार एक वर्ष में इतने ही दिन होते हैं। चन्द्र के परिभ्रमण के मण्डल केवल १५ हैं। चन्द्र को भी मेरु की एक प्रदक्षिणा करने में दो दिन-रात से कुछ अधिक समय लगता है, क्योकि उसकी गति सूर्य से मन्द है। इसी कारण से चन्द्र के उदय मे सूर्य की अपेक्षा आगा-पीछापन दिखाई देता है। एक चन्द्र अपने १५ मडलो में चन्द्रमास में १४$\frac{१}{४}$+$\frac{१}{१२४}$ मडल ही चलता है, अतः चान्द्रमास के अनुसार वर्ष मे ३५५ या ३५६ ही दिन होते हैं।

जैन मान्यतानुसार लवण-समुद्र मे ४ सूर्य और ४ चन्द्र हैं। धातकी-खण्ड मे १२ सूर्य और १२ चन्द्र है। कालोद-समुद्र मे ४२ सूर्य और ४२ चन्द्र है। पुष्करार्घ-द्वीप मे ७२ सूर्य और ७२ चन्द्र हैं। पुष्करार्घ के परवर्ती अर्घ भाग मे भी ७२-७२ ही सूर्य-चन्द्र है[1]। इससे आगे स्वयम्भूरमण-समुद्र पर्यन्त सूर्य और चन्द्र की सख्या उत्तरोत्तर दूनी-दूनी है।

एक चन्द्र के परिवार मे एक सूर्य, अट्ठाईस नक्षत्र, अठ्यासी ग्रह, और ६६९७५ कोडाकोडी तारे होते हैं। जम्बूद्वीप मे दो चन्द्र होने से नक्षत्रादि की सख्या भी दूनी जाननी चाहिए। इस प्रकार सारे ज्योतिर्लोक मे असख्य सूर्य, चन्द्र है। इनसे अट्ठाईस गुणित नक्षत्र और अठ्यासी गुणित ग्रह है। तथा सूर्य से ६६९७५ कोडाकोड़ी गुणित तारे हैं[2]।

मनुष्य लोकवर्ती ज्योतिष्क-विमान यद्यपि स्वय गमन-स्वभावी है, तथापि आभियोग्य जाति के देव, सूर्य चन्द्रादि के विमानो को गतिशील बनाये रखने मे निमित्त-स्वरूप है। ये देव सिंह, गज, बैल, और अश्व का आकार धारण कर और क्रमश पूर्वादि चारो दिशाओ मे सलग्न रहकर सूर्यादि को गतिशील बनाये रखते है[3]।

७-ऊर्ध्व-लोक

मेरु-पर्वत को तीनो लोको का विभाजक माना गया है। मेरु के अधस्तन भाग को अधोलोक और मेरु से ऊपरके भाग को ऊर्ध्व-लोक कहते है। ऊर्ध्वलोक में श्वेताम्बरीय मान्यतानुसार स्वर्गो की सख्या बारह है और दिगम्बरीय मान्यतानुसार सोलह है। इन स्वर्गो में कल्पवासी देव और देविया रहती हैं। इनसे ऊपर नौ ग्रैवेयक, उनके ऊपर दिगम्बरीय मान्यतानुसार नौ अनुदिश और उनके ऊपर पांच अनुत्तर विमान हैं इन विमानो में रहनेवाले देव कल्पातीत कहलाते हैं, क्योकि उनमें इन्द्र, सामानिक आदि की कल्पना नही है, वे उससे परे है। इन विमानो में रहनेवाले देव समान वैभव वाले है और सभी अपने आपको इन्द्र-स्वरूप से अनुभव करते है, इसलिए वे (अह+ इन्द्रः) 'अहमिन्द्र' कहलाते हैं।

स्वर्गो मे जो कल्पवासी देव रहते है, उनमे इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, पारिषद्, आत्मरक्ष, लोकपाल अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक नामकी दस जातिया है। जो सामानिक आदि अन्य देवो के स्वामी होते हैं, उन्हे इन्द्र कहते हैं। इनकी आज्ञा सर्व देव शिरोधार्य करते है और उनका वैभव, ऐश्वर्य अन्य सर्व देवो से बहुत बढ-चढा होता है। जो आज्ञा और ऐश्वर्य को छोडकर शेष सब बातो मे इन्द्र के समान होते है उन्हे

---

१. देखो प्रस्तुत ग्रन्थ पृष्ठ २५२-२५६।

२. देखो प्रस्तुत ग्रन्थ पृ० २५२।

३. देखो प्रस्तुत ग्रन्थ पृ० २६१-२६५।

सामानिक कहते हैं। मत्री और पुरोहित का काम करने वाले देव त्रायस्त्रिश कहलाते हैं। इनकी सख्या तैंतीस ही होती हैं, इसलिए ये त्रायस्त्रिश कहे जाते हैं। इन्द्र की सभा या परिषद् के सदस्यो को पारिषद कहते हैं। इन्द्र के अग-रक्षक देव आत्मरक्ष कहलाते हैं। सर्व देवो की रक्षा करने वाले देव लोकपाल कहलाते हैं। सेना में काम करने वाले देवो को अनीक कहते हैं। साधारण प्रजा-स्थानीय देवो को प्रकीर्णक कहते हैं। देव लोक में जो देव सब मे हीन पुण्यवाले होते हैं, उन्हे किल्विपिक कहते हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ में भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्क देवो का भी वर्णन किया गया है, उनमें से भवन-वासियो में भी उपर्युक्त दस भेद हैं। किन्तु व्यन्तर और ज्योतिष्क देवो में त्रायस्त्रिश और लोकपाल को छोडकर शेप आठ भेद होते हैं। व्यन्तर देवो के आवास रत्नप्रभा पृथ्वी के प्रथम-द्वितीय-काण्ड में तथा मध्य-लोकवर्ती असख्यात द्वीप और समुद्रो में पाये जाते हैं।

पाचवें ब्रह्म स्वर्ग के अन्त मे सारस्वत आदि लौकान्तिक देव रहते हैं। ये देवर्षि कहलाते हैं। वे स्वर्ग के देवो में सर्वाधिक ज्ञानी होते हैं। वे तीर्थंकरो के अभिनिष्क्रमण कल्याणक के सिवाय अन्य किसी कल्याणक में नही आते हैं और वे सभी एक भवावतारी होते हैं।

भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और कल्पवासी इन सभी प्रकार के देवो का औपपातिक जन्म होता है। ये अपनी उपपाद शय्या पर जन्म लेने के पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त मे ही पूर्ण युवावस्था को प्राप्त हो जाते हैं।

८-तमस्काय

जम्बूद्वीप से तिर्छे असख्यात द्वीप-समुद्रो को लाघने पर अरुणवर-द्वीप की बाहिरी वेदिका के अन्त से अरुणोदय समुद्र में बयालीस हजार योजन अवगाहन करके जल के ऊपरी भाग से एक प्रदेश की श्रेणी वाला तमस्काय (अन्धकार-पिण्ड) आरम्भ होता है। पुन वह १७२१ योजन ऊपर उठकर विस्तार को प्राप्त होता हुआ सौधर्मादि चार कल्पो को आवृत करके पाचवें ब्रह्म लोक मे रिष्ट विमान को प्राप्त होकर समाप्त होता है। इस तमस्काय का आकार नीचे मल्लकमूल और ऊपर मुर्गे के पीजरे के समान है। इसके लोकतमिस्र आदि १३ नाम हैं और इसकी आठ कृष्णराजियाँ वतलायी गयी हैं। (विशेप के लिए देखें प्रस्तुत ग्रन्थ का पृ० ४२६-३१)

९-सिद्धलोक

ऊर्ध्व लोक के सब से अन्त में स्थित सर्वार्थ सिद्धि विमान के अग्रभाग से वारह योजन ऊपर ईपत्प्राग्भारा नामकी पृथ्वी है। वह पैंतालीस लाख योजन विस्तृत गोल-आकार वाली है। यह बीच मे आठ योजन मोटी है फिर क्रम से घटती हुई सबसे अन्तिम प्रदेशो मे मक्खी के पख से भी पतली हो गई है। दिगम्बर मान्यतानुसार ईपत्प्राग्भार पृथ्वी लोकान्त तक विस्तृत होने से एक राजु चौडी और सात राजु लम्बी है। इसके ठीक मध्य भाग मे मनुष्य क्षेत्र के ऊपर पैंतालीस लाख योजन लम्बा-चौडा गोल-आकार वाला सिद्धक्षेत्र है। इसका आकार रूप्यमय छत्राकार है। इस सिद्धक्षेत्र या सिद्ध लोक मे कर्मो का क्षय करके ससार चक्र से छूटने वाले मुक्त जीव निवास करते हैं और अनन्त काल तक अपने आत्मीक अव्यावाध निरुपम सुख को भोगते रहते हैं।

१०—क्षेत्र—माप

जैन परम्परा मे क्षेत्र-माप इस प्रकार बतलाया गया है —

परमाणु	=	पुद्गल का सबसे सबसे छोटा अविभागी अश
अनन्तपरमाणु	=	१ उस्सण्हसण्हिया (उत्सज्ञसज्ञिका)
८ उस्सण्हसण्हिया	=	१ सण्हसण्हिया (सज्ञासज्ञिका)
८ सण्हसण्हिया	=	१ ऊर्ध्वरेणु
८ ऊर्ध्वरेणु	=	१ त्रसरेणु
८ त्रसरेणु	=	१ रथरेणु
८ रथरेणु	=	१ देवकुरु के मनुष्य का वालाग्र
८ देवकुरु मनुष्य का वालाग्र	=	१ हरिवर्ष " "
८ हरिवर्ष " "	=	१ हैमवत " "
८ हैमवत " "	=	१ विदेहक्षेत्रज " "
८ विदेहक्षेत्रज " "	=	१ भरतक्षेत्रज " "
८ भरतक्षेत्रज " "	=	१ लिक्षा (लीख)
८ लिक्षा	=	१ यूका (जूं)
८ यूका	=	१ यवमध्य
८ यवमध्य	=	१ उत्सेघागुल
६ उत्सेधागुल	=	१ पाद
२ पाद	=	१ वितस्ति
२ वितस्ति	=	१ रत्नि
२ रत्नि	=	१ कुक्षि (दि० पर० किष्कु)
२ कुक्षि (किष्कु)	=	१ दण्ड (धनुष)
२ सहस्र धनुष	=	१ गव्यूति
४ गव्यूति	=	१ योजन

उपर्युक्त माप-वर्णन उत्सेधागुल से है। उत्सेधागुल से प्रमाणागुल पाच सौ गुणा होता है। एक उत्सेधागुल लम्बी एक प्रदेश की श्रेणी (पक्ति) को सूच्यगुल कहते हैं। सूच्यगुल के वर्ग को प्रतरागुल कहते हैं और सूच्यगुल के घन को घनागुल कहते है। असख्यात कोडाकोडी घनांगुल गुणित योजनो की पक्ति को श्रेणी या जगच्छे्रणी कहते हैं। जगच्छे्रणी के वर्ग को जगत्प्रतर कहते हैं और जगच्छे्रणी के घन को लोक या घन—लोक कहते हैं। इनमे से जगच्छे्रणी के सातवें भाग-प्रमाण क्षेत्र को राजु कहते है। लोकाकाश का घनफल ३४३ राजु प्रमाण है।

११-काल-माप

समय		=	काल का सूक्ष्मतम अश
जघन्य युक्त असख्यात समय		=	१ आवलिका
४४४६ $\frac{२४५८}{३७७३}$		=	आवलिका = १ प्राण
७	प्राण	=	१ स्तोक
७	स्तोक	=	१ लव
३८ $\frac{१}{२}$	लव	=	१ घडी
२	घडी	=	१ मुहूर्त (= ४८ मिनिट)
३०	मुहूर्त	=	१ अहोरात्र
३०	अहोरात्र	=	१ मास
१२	मास	=	१ वर्ष
८४ लाख वर्ष		=	१ पूर्वांग
,,	पूर्वांग	=	१ पूर्व
,,	पूर्व	=	१ त्रुटिताग
,,	त्रुटिताग	=	१ त्रुटित
,,	त्रुटित	=	१ अडडाग
,,	अडडाग	=	१ अडड
,,	अडड	=	१ अववाग
,,	अववाग	=	१ अवव
,,	अवव	=	१ हूहूकाग
,,	हूहूकाग	=	१ हूहूक
,,	हूहूक	=	१ उत्पलाग
,,	उत्पलाग	=	१ उत्पल

इसी प्रकार आगे पद्माग, पद्म, नलिनाग, नलिन, अर्थनिपुराग, अर्थनिपुर, अयुताग, अयुत, प्रयुताग, प्रयुत, नयुताग, नयुत, चूलिकाग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकाग और शीर्षप्रहेलिका उत्तरोत्तर चौरासी लाख गुणित जानना चाहिए। यह काल-मान श्वेताम्बर-आगमो के अनुसार है।

दिगम्बर मान्यतानुसार उपर्युक्त कालमाप का वर्णन इस प्रकार है —

	=	
समय	=	काल का सबसे छोटा अविभागी अश
असख्यात समय	=	१ आवली
सख्यात आवली	=	१ प्राण (श्वासोच्छ्वास)
७ प्राण	=	१ स्तोक
७ स्तोक	=	१ लव
७७ लव	=	१ मुहूर्त
३० मुहूर्त्त	=	१ अहोरात्र
१५ अहोरात्र	=	१ पक्ष
२ पक्ष	=	१ मास
२ मास	=	१ ऋतु
३ ऋतु	=	१ अयन
२ अयन	=	१ वर्ष
८४ लाख वर्ष	=	१ पूर्वाङ्ग

समय		काल का सूक्ष्मतम अंश
८४ लाख पूर्वाङ्ग	=	१ पूर्व
८४ „ पूर्व	=	१ पर्वाङ्ग
८४ „ पूर्वाङ्ग	=	१ पर्व
८४ „ पर्व	=	१ नयुताङ्ग
८४ „ नयुताङ्ग	=	१ नयुत
८४ „ नयुत	=	१ कुमुदाङ्ग
८४ „ कुमुदाङ्ग	=	१ कुमुद
८४ „ कुमुद	=	१ पद्माङ्ग
८४ „ पद्माङ्ग	=	१ पद्म
८४ „ पद्म	=	१ नलिनाङ्ग
८४ „ नलिनाङ्ग	=	१ नलिन

इसी प्रकार आगे कमलाङ्ग-कमल, तुट्याग-तुट्य, अटटाङ्ग-अटट, अममाङ्ग-अमम, हूहूअग-हूहू, लताङ्ग-लता, महालताङ्ग-महालता, शिर प्रकम्पित, हस्तप्रहेलित और अचलात्म को उत्तरोत्तर ८४ लाख गुणित जानना चाहिए। ये सभी संख्याएँ संख्यात गणना के ही भीतर हैं। पल्योपम और सागरोपम आदि असंख्यात-गणना के भीतर हैं। इन सबसे ऊपर अन्त-विहीन जो राशि है, वह अनन्त कहलाती है।

(ख)–बौद्ध मतानुसार लोक–वर्णन

१-लोक-रचना

आ० वसुबन्धु ने अपने अभिधर्म-कोश मे लोक रचना इस प्रकार बतलाई है —

लोक के अधोभाग मे सोलह लाख योजन ऊचा, अपरिमित वायु-मण्डल है[1]। उसके ऊपर ११ लाख बीस हजार योजन ऊचा जल मडल है। उसमे ३ लाख वीस हजार योजन कचनमय भूमण्डल है[2]। जल-मण्डल और कञ्चन-मण्डल का विस्तार १२ लाख ३ हजार चार सौ पचास योजन तथा परिधि छत्तीस लाख दस हजार तीन सौ पचास योजन प्रमाण है[3]।

काचनमय भूमण्डल के मध्य मे मेरु-पर्वत है। यह अस्सी हजार योजन नीचे जल मे डूबा हुआ है तथा इतना ही ऊपर निकला हुआ है[4]। इससे आगे अस्सी हजार योजन विस्तृत और दो लाख चालीस हजार योजन प्रमाण परिधि से सयुक्त प्रथम सीता (समुद्र) है। जो मेरु को घेर कर अवस्थित है। इससे आगे चालीस हजार योजन विस्तृत युगन्धर पर्वत वलयाकार से स्थित है। इसके आगे भी इसी प्रकार से एक एक सीता को अन्तरित करके आधे-आधे विस्तार से सयुक्त क्रमश युगन्धर ईशाधर, खदीरक, सुदर्शन, अश्वकर्ण, विनतक, और निमिन्धर पर्वत हैं। सीताओ का विस्तार भी उत्तरोत्तर आधा-आधा होता गया है[5]। उक्त पर्वतो मे से मेरु चतुर्रत्नमय और शेष सात पर्वत स्वर्णमय हैं। सबसे बाहिर अवस्थित सीता (महासमुद्र) का विस्तार तीन लाख बाईस हजार योजन प्रमाण है। अन्त मे लौहमय चक्रवाल पर्वत स्थित है।

निमिन्धर और चक्रवाल पर्वतो के मध्य मे जो समुद्र स्थित है उसमे जम्बूद्वीप, पूर्वविदेह, अवरगोदानीय और उत्तर कुरु, ये चार द्वीप हैं। इनमे जम्बूद्वीप मेरु के दक्षिण भाग मे है, उसका आकार शकट के समान है। उसकी तीन भुजाओ मे से दो भुजाए दो-दो हजार योजन और एक भुजा तीन हजार पचास योजन की है।

मेरु के पूर्व भाग मे अर्द्ध-चन्द्राकार पूर्वविदेह नाम का द्वीप है। इसकी भुजाओ का प्रमाण जम्बूद्वीप की तीनो भुजाओ के समान है[7]। मेरु के पश्चिम भाग में मण्डल-मार अवरगोदानीय-द्वीप है। इसका विस्तार अढाई हजार योजन और परिधि साढे सात हजार योजन प्रमाण है[8]। मेरु के उत्तर भाग मे सम चतुष्कोण उत्तरकुरु-द्वीप है। इसकी एक-एक भुजा दो-दो हजार योजन की है। इनमें से पूर्व विदेह के समीप मे देह-विदेह, उत्तरकुरु के समीप मे कुरु-कौरव, जम्बूद्वीप के समीप मे चामर, अवर-चामर तथा गोदानीय द्वीप के समीप में शाटा-और उत्तरमन्त्री नामक अन्तर्द्वीप अवस्थित हैं। इनमे से चमरद्वीप मे राक्षसो का और शेष द्वीप मे मनुष्य का निवास है[9]।

---

१ अभिधर्मकोश, ३, ४५।
२ " " ३, ४६।
३. " " ३, ४७-४८।
४ " " ३, ५०।
५ " " ३, ५१-५२।
६ " " ३, ५३।
७ " " ३, ५४
८. " " ३, ५५
९. " " ३, ५६

मेरु-पर्वत के चार परिखण्ड (विभाग) हैं। प्रथम परिखड शीता-जल से दस हजार योजन ऊपर तक माना गया है। इसके आगे क्रमशः दस-दस हजार ऊपर जाकर दूसरा, तीसरा और चौथा परिखण्ड है। इनमे से पहला परिखड सोलह हजार योजन, दूसरा परिखड आठ हजार योजन, तीसरा परिखड चार हजार योजन और चौथा परिखड दो हजार योजन मेरु से बाहर निकला हुआ है। पहले परिखंड मे पूर्व की ओर करोट-पाणि-यक्ष रहते हैं। दूसरे परिखड मे दक्षिण की ओर मालाधर रहते हैं। तीसरे परिखड मे पश्चिम की ओर सदामद रहते हैं और चौथे परिखण्ड मे चातुर्महाराजिक देव रहते हैं। इसी प्रकार शेष सात पर्वतो पर भी उक्त देवो का निवास है[1]।

जम्बूद्वीप मे उत्तर की ओर बने कीटादि और उनके आगे हिमवान पर्वत अवस्थित है। हिमवान पर्वत से आगे उत्तर मे पाँच सौ योजन विस्तृत अनवतप्त नाम का अगाध सरोवर है। इससे गगा, सिन्धु, वक्षु और सीता नाम की चार नदियाँ निकली हैं। इस सरोवर के समीप जम्बू-वृक्ष है, जिससे इस द्वीप का नाम जम्बू-द्वीप पडा है। अनवतप्त-सरोवर के आगे गन्धमादक नाम का पर्वत है[2]।

२-नरक-लोक

जम्बूद्वीप के नीचे बीस हजार योजन विस्तृत अवीचि नाम का नरक है। उसके ऊपर क्रमश: प्रतापन, तपन, महारौरव, रौरव, सन्घात, कालसूत्र और सजीव नाम के सात नरक और है[3]। इन नरको के चारो पार्श्व-भागो मे कुकूल, कुणप, क्षुर्मार्गादिक, (असिपत्रवन, श्यामसबलस्वस्थान अय: शाल्मलीवन) और खारोदक वाली वैतरणी नदी ये चार उत्सद हैं। अर्बुद, निरर्बुद अटट उहहब, हुहूब, उत्पल, पद्म और महापद्म वाले ये आठ शीत-नरक और हैं, जो जम्बूद्वीप के अधो-भाग मे महा नरको के धरातल मे अवस्थित हैं[4]।

३-ज्योतिर्लोक

मेरु-पर्वत के अर्द्ध-भाग अर्थात् भूमि से चालीस हजार योजन ऊपर चन्द्र और सूर्य परिभ्रमण करते हैं। चन्द्र-मडल का प्रमाण पचास योजन और सूर्य-मण्डल का प्रमाण इक्यावन योजन है। जिस समय जम्बू-द्वीप मे मध्याह्न होता है उस समय उत्तर-कुरु मे अर्ध रात्रि, पूर्व विदेह मे अस्तगमन और अवर गोदानीय मे सूर्योदय होता है[5]। भाद्र मास के शुक्ल-पक्ष की नवमी से रात्रि की वृद्धि और फाल्गुन मास के शुक्ल-पक्ष की नवमी से उसके हानि का आरम्भ होता है। रात्रि की वृद्धि, दिन की हानि और रात्रि की हानि, दिन की वृद्धि होती है। सूर्य के दक्षिणायन मे रात्रि की वृद्धि और उत्तरायण मे दिन की वृद्धि होती है[6]।

४-स्वर्गलोक

मेरु के शिखर पर त्रयस्त्रिंश (स्वर्ग) लोक है। इसका विस्तार अस्सी हजार योजन है। यहाँ पर त्रायस्त्रिंश देव रहते हैं। इसके चारो विदिशाओ मे वज्रपाणि देवो का निवास है[7]। त्रयस्त्रिंश-लोक के मध्य मे सुदर्शन नाम का नगर है, जो सुवर्णमय है। इसका एक-एक पार्श्व भाग ढाई हजार योजन विस्तृत है। उसके मध्य-भाग मे इन्द्र का अढाई सौ योजन विस्तृत वैजयन्त नामक प्रासाद है। नगर के बाहरी भाग मे चारो ओर चैत्ररथ, पारुष्य, मिश्र और नन्दन ये चार वन है[8]। इनके चारो ओर बीस हजार योजन के अन्तर से देवो के क्रीडा-स्थल हैं[9]।

---

१. अभिधर्मकोश ३, ६३-६४, २—अ. को. ३, ५७, ३—अ. को. ३, ५८, ४—अ को. ३, ५६,
५. अ.को. ३, ६०, ६—अ. को. ३, ६१, ७—अ. को. ३, ६५, ८—अ. को. ३, ६६-६७, ९—३, ६८

त्रयस्त्रिश-लोक के ऊपर विमानो मे याम, तुषित निर्माणरति, और परनिर्मित-वशवर्त्ती देव रहते हैं। कामधातुगत देवो मे से चातुर्महाराजिक और त्रायस्त्रिश देव मनुष्य के समान काम सेवन करते हैं। याम, तुषित, निर्माणरति, परनिर्मितवशवर्ती देव क्रमश आलिंगन, पाणिसयोग, हसित, और अवलोकन से ही तृप्ति को प्राप्त होते हैं [1]।

कामधातु के ऊपर सत्तरह स्थानो से सयुक्त रूपधातु हैं। वे सत्तरह स्थान इस प्रकार हैं। प्रथम स्थान मे ब्रह्मकायिक ब्रह्मपुरोहित, और महाब्रह्म लोक हैं। द्वितीय ध्यान मे परिताभ, अप्रमाणाभ, और आभस्वर लोक हैं। तृतीय ध्यान मे परित्तशुभ, अप्रमाणशुभ, और शुभकृत्स्न लोक हैं, चतुर्थ ध्यान मे अनभ्रक, पुण्यप्रसव, वृहद्फल, पचशुद्धावासिक, अवृह, अतप सुद्दश-सुदर्शन और अकनिष्ठ नाम वाले आठ लोक हैं। ये सभी देव लोक क्रमश ऊपर-ऊपर अवस्थित हैं। इनमे रहने वाले देव ऋद्धि-बल अथवा अन्य देव की सहायता से ही अपने से ऊपर के देवलोक को देख सकते हैं [2]।

जम्बूद्वीपस्थ मनुष्यो का शरीर साढे तीन या चार हाथ, पूर्व विदेहवासियो का ७-८ हाथ, गोदानीय द्वीपवासियो का १४-१६ हाथ, और उत्तर-कुरुस्थ मनुष्यो का शरीर २८-३२ हाथ ऊचा होता है। कामधातु वासी देवो मे चातुर्महाराजिक देवो का शरीर $\frac{1}{4}$ कोश, त्रायस्त्रिशो का $\frac{1}{2}$ कोश, यामो का $\frac{3}{4}$ कोश, तुषितो का १ कोश निर्माणरति देवो का $१\frac{1}{4}$ कोश और परनिर्मितवशवर्ती देवो का शरीर $१\frac{1}{2}$ कोश ऊचा है। आगे ब्रह्मपुरोहित, महाब्रह्म, परिताभ, अप्रभाणाभ, आभस्वर, परित्तशुभ, अप्रमाणशुभ, और शुभकृत्स्न देवो का शरीर क्रमश १, $१\frac{1}{2}$, २, ४, ८, १६, ३२, और ६४ योजन प्रमाण ऊचा है। अनभ्र देवो का शरीर १२५ योजन ऊचा है, आगे पुण्यप्रसव आदि देवो के शरीर उत्तरोत्तर दूनी ऊचाई वाले हैं [3]।

५–क्षेत्र–माप

बौद्ध ग्रन्थो मे योजन का प्रमाण इस प्रकार बतलाया गया है [4] —

७	परमाणु	=	१ अणु
७	अणु	=	१ लौहरज
७	लोहरज	=	१ जलरज
७	जलरज	=	१ शशरज
७	शशरज	=	१ मेषरज
७	मेषरज	=	१ गोरज
७	गारज	=	१ छिद्ररज
७	छिद्ररज	=	१ लिक्षा (लीख)
७	लिक्षा	=	१ यव
७	यव	=	१ अगुलीपर्व
२४	अगुलीपर्व	=	१ हस्त
४	हस्त	=	१ धनुष
५००	धनुष	=	१ कोश
८	कोश	=	१ योजन

१–अभि कोश. ३, ३६, २–अ. को. ३, ७१-७२, ३–अ. को. ३, ७५-७७ ४–अ. को ३, ८५-८७

६—काल-माप

बौद्ध ग्रन्थो मे काल का प्रमाण इस प्रकार बतलाया गया है[1] :—

१२०	क्षण	=	१ तत्क्षण
६०	तत्क्षण	=	१ लव
३०	लव	=	१ मुहूर्त्त
६०	मुहूर्त्त	=	१ अहोरात्रि
३०	अहोरात्र	=	१ मास
१२	मास	=	१ सवत्सर

कल्पो के अन्तरकल्प, सवर्त्तकल्प और महाकल्प आदि अनेक भेद बतलाये गये हैं[2] ।

तुलना और समीक्षा

बौद्धो ने दस लोक माने हैं—नरकलोक, प्रेतलोक, तिर्यक्लोक, मनुष्यलोक और ६ देवकोल[3] । ६ देवलोको के नाम इस प्रकार है—चातुर्महाराजिक, त्रयस्त्रिश, याम, तुषित, निर्माणरति, और परनिर्मितवशवर्ती। प्रेतो को जैनो ने देवयौनिक माना है । अतएव इसे उक्त ६ देवलोको मे अन्तर्गत करने पर नरक, तिर्यक्, मनुष्य और देव, ये चार लोक ही सिद्ध होते हैं, जो कि जैनाभिमत चारो गतियो का स्मरण कराते हैं ।

बौद्धो ने प्रेत-योनि को एक पृथक गति मानकर पांच गतियां स्वीकार की हैं । यथा:—

नरकादिस्वनामोक्ता गतय· पंच तेषु ता· । (अभिधर्मकोश ३,४)

ऊपर बतलाये देवो मे से चातुर्महाराजिक देव-इन्द्र का, तुषित-लौकान्तिक देवो का, त्रयस्त्रिश-त्रायस्त्रिश देवो का, तथा शेष भेद व्यन्तर-देवो का स्पष्ट रूप से स्मरण कराते हैं ।

जैनो के समान बौद्धो ने भी देवो और नारकी जीवो को औपपातिक जन्म वाला माना है । यथा.—

नारका उपपादुकाः अन्तरा भव देवाश्च । (अभिधर्मकोश,३, ४)

बौद्धो ने भी जैनो के समान नारकी जीवो का उत्पन्न होने के साथ ही ऊर्ध्वपाद और अधोमुख होकर नरक-भूमि पर गिरना माना है । यथा:—

एते पतंति निरय उद्धपादा अवसिरा । (सुत्तनिपात)
(ऊर्ध्वपादास्तु नारका:) (अभिधर्मकोश ३,१५)

---

१. अभिधर्म—कोश ३, ८८-८९
२. ,, ,, ,, ९०
३. नरक-प्रेत-तिर्यञ्चो मानुषा· षड् दिवौकसः । (अभिधर्मकोश ३,१)

(ग) वैदिक धर्मानुसार लोक-वर्णन

१—मर्त्य लोक

जिस प्रकार जैन ग्रन्थो से ऊपर भूगोल का वर्णन किया गया है लगभग उसी प्रकार से हिन्दू-पुराणो मे भी भूगोल का वर्णन पाया जाता है। विष्णु-पुराण के द्वितीयाश के द्वितीयाध्याय मे बतलाया गया है कि इस पृथ्वी पर १ जम्बू, २ प्लक्ष, ३ शाल्मल, ४ कुश, ५ क्रौंच, ६ शाक और ७ पुष्कर, नाम वाले सात द्वीप हैं। ये सभी चूडी के समान गोलाकार और क्रमश १ लवणोद, २ इक्षुरस, ३ मदिरारस, ४ घृतरस, ५ दधिरस, ६ दूधरस, ७ मधुररस वाले सात समुद्रो से वेष्टित हैं। इन सब के मध्य-भाग मे जम्बू-द्वीप है। इसका विस्तार एक लाख योजन है। उसके मध्य भाग मे ८४ हजार योजन ऊचा स्वर्णमय मेरु-पर्वत है। इसकी नीव पृथ्वी के भीतर १६ हजार योजन है। मेरु का विस्तार मूल मे १६ हजार योजन है और फिर क्रमश बढ़कर शिखर पर ३२ हजार योजन हो गया है[1]।

इस जम्बू द्वीप मे मेरु-पर्वत के दक्षिण-भाग मे हिमवान, हेमकूट और निषध तथा उत्तर भाग मे नील, श्वेत और शृ गी ये छ वर्ष-पर्वत हैं। इन से जम्बू-द्वीप के सात भाग हो जाते हैं। मेरु के दक्षिणवर्ती निषध और उत्तर-वर्ती नील पर्वत, पूर्व-पश्चिम लवण-समुद्र तक १ लाख योजन लम्बे दो-दो हजार योजन ऊचे और इतने ही चौडे हैं। इनसे परवर्ती हेमकूट और श्वेत-पर्वत लवण-समुद्र तक पूर्व-पश्चिम मे नव्वे (९०) हजार योजन लम्बे, दो हजार योजन ऊचे और इतने ही विस्तार वाले हैं। इनसे परवर्ती हिमवान और शृ गी-पर्वत पूर्व-पश्चिम मे अस्सी (८०) हजार योजन लम्बे, दो हजार योजन ऊचे और इतने ही विस्तार वाले हैं। इन पर्वतो के द्वारा जम्बू-द्वीप के सात भाग हो जाते हैं। जिनके नाम दक्षिण की ओर से क्रमशः इस प्रकार हैं—१ भारतवर्ष, २ किम्पुरुष, ३ हरिवर्ष, ४ इलावृत, ५ रम्यक, ६ हिरण्मय, ७ और उत्तरकुरू[2]। इनमे इलावृत को छोडकर शेष ६ का विस्तार उत्तर-दक्षिण मे ९ नौ हजार योजन है। इलावृत-वर्ष मेरु के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन चारो ही दिशाओ मे नौ-नौ हजार योजन विस्तृत है। इस प्रकार सर्व पर्वतो व वर्षों के विस्तार को मिलाने पर जम्बू-द्वीप का विस्तार १ लाख योजन प्रमाण हो जाता है।

मेरु-पर्वत के दोनो ओर पूर्व-पश्चिम मे इलावृत-वर्ष की सीमा स्वरूप माल्यवान और गन्धमादन पर्वत हैं, जो नील और निषध-पर्वत तक विस्तृत हैं। इनके कारण दोनो ओर दो विभाग और हैं, जिनके नाम भद्राश्व, और केतुमाल हैं। इस प्रकार उपर्युक्त सात वर्षों मे इन दो वर्षों को और मिला देने पर जम्बू-द्वीप-सम्बन्धी सर्व वर्षों (क्षेत्रो) की सख्या नौ हो जाती है[3]।

मेरु के चारो ओर पूर्वादिक दिशाओ मे क्रमश मन्दर, गन्धमादन, विपुल और सुपार्श्व नाम वाले चार पर्वत हैं। इन के ऊपर क्रमश ११०० योजन ऊचे कदम्ब, जम्बू, पीपल और वट-वृक्ष हैं। इनमे से जम्बू-वृक्ष के नाम से यह जम्बूद्वीप कहलाता है[4]।

जम्बू द्वीपस्थ भारतवर्ष मे महेन्द्र, मलय, सह्य, सूक्तिमान् ऋक्ष, विन्ध्य, पारियात्र, ये सात कुल पर्वत हैं। इनमे से हिमवान से शत्तद्रु और चन्द्रभागा आदि, पारियात्र से वेद और स्मृति आदि, विन्ध्य से नर्मदा और सुरसा आदि, ऋक्ष से तापी, पयोष्णी और निर्विन्ध्यादि, सह्य से गोदावरी, भीमरथी और कृष्णवेणी आदि, मलय से-

---

१ विष्णु-पुराण द्वितीयाश, द्वितीय-अध्याय, श्लोक, ५–९ मार्कण्डेय-पुराण अ० ५४ श्लोक ५–७
२. ,, ,, ,, १०–१५ ,, श्लोक ८–१४
३ ,, ,, ,, ,, १६ ,, ५४ श्लोक १४–१९,
४. ,, ,, ,, ,, १७–१९ ,, ,, ,, ,, ९
५. ,, ,, ,, ,, १६ ,, ,, ,, ,, ,, १४–१९

कृतमाला और ताम्रपर्णी आदि, महेन्द्र से त्रिसामा और आर्यकुल्या आदि, तथा सुक्तिमान् पर्वत से ऋषिकुल्या और कुमारी आदि नदियाँ निकली हैं[1]। इन नदियो के किनारों पर मध्यदेश को आदि लेकर कुरु और पान्चाल पूर्व देश को आदि लेकर काम-रूप, दक्षिण को आदि लेकर पुण्ड्र, कलिंग और मगध, पश्चिम को आदि लेकर सौराष्ट्र सूर आभीर और अर्बुद, तथा उत्तर देश को आदि लेकर मालव, कोसम, सौवीर, सैन्धव, हूण, शाल्व और पारसीको को आदि लेकर माद्र, आराम और अम्बष्ठ देशवासी रहते हैं[2]।

उपर्युक्त सप्त क्षेत्रो मे से केवल भारतवर्ष मे ही कृत, त्रेता, द्वापर, और कलि नामक चार युगो से काल परिवर्तन होता है। किम्पुरुषादिक शेष क्षेत्रो मे काल परिवर्तन नही होता है। उन आठ क्षेत्रो मे रहनेवाली प्रजा को शोक, परिश्रम, उद्वेग और क्षुधा आदि की बाधा नही होती है। वहाँ के लोग सदा स्वस्थ एव आतक और दु ख से विमुक्त रहते हैं। वे सदा जरा और मृत्यु से निर्भय रहकर आनद का उपभोग करते हैं। इसलिए वहाँ पर भोगभूमि कही गयी है। वहाँ पर पुण्य-पाप, और ऊँच-नीच आदि का भी भेद नही है। उन क्षेत्रो मे स्वर्ग-मुक्ति की प्राप्ति के कारण भूत, व्रत-तपश्चर्या आदि का भी अभाव है, केवल भारतवर्ष के ही लोगो मे व्रत-तपश्चरणादि के द्वारा स्वर्ग-मोक्षादिक की प्राप्ति सभव है। इसलिए यह सर्व क्षेत्रो में श्रेष्ठ माना गया है। यहाँ के लोग असि, मषी, आदि कर्मों के द्वारा अपनी आजीविका का उपार्जन करते है। इसलिए यहाँ की भूमि को कर्म भूमि कहा गया है[3]।

जम्बूद्वीप को सर्व ओर से घेरकर लवण-समुद्र अवस्थित है। यह १ एक लाख योजन विस्तृत है[4]। लवण-समुद्र को घेर कर दो लाख योजन विस्तार वाला प्लक्षद्वीप है। इसके भीतर गोमेघ, चन्द्र, नारद, दुन्दुभि, सोमक और सुमना नामक ६ पर्वत हैं। इनसे विभाजित होकर शान्तद्वय, शिशिर, सुखोदय, आनन्द, शिव, क्षेमक, और ध्रुव नामक सात वर्ष अवस्थित हैं। इन वर्षो और पर्वतो के ऊपर देव और गन्धर्व रहते हैं, वे आधि-व्याधि से रहित और अतिशय पुण्यवान हैं। वहाँ युगो का परिवर्तन नही है। केवल सदा काल त्रेतायुग जैसा समय रहता है। उनमे चतुर्वर्ण-व्यवस्था है और वे अहिंसा-सत्यादि पांच धर्मों का पालन करते हैं। इस द्वीप मे १ प्लक्ष वृक्ष है, इस कारण यह द्वीप प्लक्ष नाम से प्रसिद्ध है[5]।

प्लक्षद्वीप को चारो ओर से घेरकर इक्षुरसोद समुद्र-अवस्थित है, जो प्लक्षद्वीप के समान ही विस्तार वाला है इसे। चारो ओर से घेर कर चार लाख योजन विस्तार वाला शाल्मलद्वीप है। इसी क्रम से आगे सुरोद, समुद्र, कुश-द्वीप, घृतोद समुद्र क्रौंचद्वीप, दधिरसोद समुद्र, शाकद्वीप, और क्षीरसमुद्र अवस्थित हैं। ये सभी द्वीप अपने पूर्ववर्त्ती द्वीप की अपेक्षा दूने विस्तार वाले हैं और समुद्रो का विस्तार अपने-अपने द्वीप के समान है। इन द्वीपो की रचना प्लक्षद्वीप के समान है[6]।

क्षीरसमुद्र को घेरकर सातवा पुष्कर-द्वीप अवस्थित है। इसके ठीक मध्य-भाग मे गोलाकार वाला मान-सोत्तर पर्वत है। इसके बाहरी भाग का नाम महावीर-वर्ष और भीतरी भाग का नाम घातकी वर्ष है। इस द्वीप मे रहने वाले लोग भी रोग-शोक, एव राग-द्वेष से रहित होते है। वहाँ न ऊच नीच का भेद है, और न वर्णाश्रम व्यवस्था ही है। इस पुष्कर द्वीप मे नदिया और पर्वत भी नही हैं[7]।

---

१. विष्णु–पुराण, द्वितीयांश, द्वितीय अ०, श्लोक १६ मार्क० पु० अ० ४५ श्लोक० १४-१६ १०–१४
२. „ „ „ „ १५–१७
३. वि० पु० द्वि० अ० तृ० अ० श्लोक १६-२२।
४. „ „ „ „ „ २८
५. „ „ च. अ. „ १-१८।
६. „ „ „ „ „ २०-७२।
७. „ „ „ „ „ ७३-८०।

इस द्वीप को सर्व ओर से घेरकर मधुरोदक समुद्र अवस्थित है इससे आगे प्राणियो का निवास नही है। मधुरोदक समुद्र से आगे उससे दूने विस्तार वाली स्वर्णमयी भूमि है। उसके आगे १० हजार योजन विस्तृत और इतना ही ऊचा, लोकालोक पर्वत है। उसको चारो ओर से वेष्ठित करके तमस्तम स्थित है। इस अण्डकटाह के साथ उपर्युक्त द्वीप-समुद्रो वाला यह समस्त भूमण्डल ५० करोड योजन विस्तार वाला है और इसकी ऊचाई ७० हजार योजन है[१]।

इस भूमण्डल के नीचे दस-दस हजार योजन के ७ पाताल हैं। जिनके नाम इस प्रकार है—अतल, वितल, नितल, गभस्तिमत, महातल, सूतल, और पाताल। ये क्रमश शुक्ल, कृष्ण, अरुण, पीत, शर्करा, शैल, और काञ्चन स्वरूप हैं। यहां उत्तम भवनो से युक्त भूमियां हैं और यहां दानव, दैत्य, यक्ष, एव नाग आदि निवास करते हैं[२]।

पातालो के नीचे विष्णु भगवान का शेष नामक तामस शरीर स्थित है। जो अनन्त कहलाता है। यह शरीर सहस्र-फणो से सयुक्त होकर समस्त भूमण्डल को धारण करके पाताल मूल मे अवस्थित है। कल्पान्त के समय इसके मुख से निकली हुई सकर्पात्मक, रुद्र विषाग्नि-शिखा तीनो लोको का भक्षण करती है[३]।

२-नरक-लोक

पृथ्वी और जल के नीचे रौरव, सूकर, रोध, ताल, विशासन महाज्वाल, तप्तकुंभ, लवण, विलोहित, रुधिर, वैतरणी, कृमीश, कृमि-भोजन असिपत्रवन, कृष्ण, अलाभक्ष, दारुण, पूयवह, वन्हिज्वाल अध शिरा, संदेस, कालसूत्र, तम, आवीचि, श्वभोजन, अप्रतिष्ण और अप्रवि, इत्यादि नाम वाले अनेक महान भयानक नरक हैं। इनमे पापी जीव मरकर जन्म लेते हैं[४]। वे वहां से निकल कर क्रमश. स्थावर कृमि, जलचर, मनुष्य और देव आदि होते हैं। जितने जीव स्वर्ग मे हैं उतने ही जीव नरको मे भी रहते हैं।

३ ज्योतिर्लोक

भूमि से १ लाख योजन दूरी पर सौर-मण्डल-इससे १ लाख योजन ऊपर चन्द्रमण्डल, इससे १ लाख योजन ऊपर नक्षत्र-मडल, इससे २ लाख योजन ऊपर बुध, इससे २ लाख योजन ऊपर शुक्र, इससे २ लाख योजन ऊपर मगल, इससे २ लाख योजन ऊपर वृहस्पति, इससे २ लाख योजन ऊपर शनि, इससे १ लाख योजन ऊपर सप्तर्षि-मण्डल तथा इससे १ लाख योजन ऊपर ध्रुवतारा स्थित है।[६]

४—महर्लोक (स्वर्गलोक)

ध्रुव से १ करोड योजन ऊपर जाकर महर्लोक है, यहां कल्प काल तक जीवित रहने वाले कल्पवासियो का निवास है। इससे २ करोड योजन ऊपर जनलोक है यहां नन्दनादि से सहित ब्रह्माजी के प्रसिद्ध पुत्र रहते हैं। इससे ८ करोड योजन ऊपर तपलोक है। यहां वैराज देव निवास करते हैं। इससे १२ करोड योजन ऊपर सत्य

---

१. विष्णु पुराण द्वितीय अश चतुर्थ अध्याय श्लोक ६३-९६।
२ ,, ,, पचम् ,, ,, २-४
३. ,, ,, ,, ,, १३-१५-१९-२०।
४. ,, ,, षष्ठम् ,, ,, १—६।
५ ,, ,, ,, ,, ३४ ।
६ ,, ,, सप्तम् ,, ,, २—९।

लोक हैं, यहाँ कभी न मरने वाले अमर (अपुनमरिक) रहते हैं। इसे ब्रह्मलोक भी कहते हैं। भूमि (भूलोक) और सूर्य के मध्य मे सिद्धजनो और मुनिजनो से सेवित स्थान भुवर्लोक कहलाता है। सूर्य और ध्रुव के मध्य मे चौदह लाख योजन प्रमाण क्षेत्र स्वर्लोक नाम से प्रसिद्ध है[६]।

भूलोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक, ये तीनो लोक कृतक, तथा जनलोक, तपलोक और सत्यलोक, ये तीन लोक अकृतक है। इन दोनो लोको के बीच में महर्लोक है, यह कल्पात में जन-शून्य हो जाता है, किन्तु सर्वथा नष्ट नही होता[७]।

५-तुलना और समीक्षा

विष्णु-पुराण के आधार पर जो लोक स्थिति या भूगोल का वर्णन किया है उसका जब हम जैन सम्मत लोक के वर्णन से मीलान करते हैं तो अनेक तथ्य सामने आते हैं। जिनका दोनो मान्यताओं के नाम निर्देश के साथ यहाँ उल्लेख किया जाता है —

द्वीप

	जैनमान्यता		वैदिक मान्यता	
१.	द्वीप, समुद्र	असंख्यात	द्वीप, समुद्र,	७ सात
२.	प्रथम द्वीप	जम्बूद्वीप	प्रथम द्वीप	जम्बूद्वीप
३.	कुशक	पन्द्रवाँ द्वीप[१]	कुश	चौथा द्वीप
४.	क्रौंच	सोलहवाँ द्वीप[२]	क्रौंच	पाँचवाँ द्वीप
५.	पुष्कर	तीसरा द्वीप	पुष्कर	सातवाँ द्वीप

समुद्र

१.	लवणोद	प्रथम समुद्र	लवणोद	प्रथम समुद्र
२.	वारुणी रस	चौथा समुद्र	मदिरा रस	तीसरा ,,
३.	क्षीर सागर	पाँचवाँ ,,	दूधरस	छठा ,,
४.	घृतवर	छठा ,,	मधुर रस	सातवाँ ,,
५.	इक्षुरस	सातवाँ ,,	इक्षुरस	दूसरा ,,

क्षेत्र

१.	भारतवर्ष	१.	भारतवर्ष
२.	हैमवत	२.	किम्पुरुष
३.	हरि वर्ष	३.	हरि वर्ष
४.	विदेह	४.	इलावृत
५.	रम्यक	५.	रम्यक
६.	हैरण्यत	६.	हिरण्मय
७.	ऐरावत	७.	उत्तर-कुरु

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि जैन मान्यतानुसार उत्तर-कुरु विदेह-क्षेत्र का एक भाग है। इलावृत ऐरावत का ही रूपान्तर है। हा, दूसरे हैमवत क्षेत्र के स्थान पर किम्पुरुष नाम अवश्य नया है।

---

६. विष्णु-पुराण द्वितीयांश षष्ठमू अध्याय श्लोक १२—१८।
७. ,, ,, ,, ,, १९—२०।
१-२. तिलोयपण्णत्ती अ०....।

६-पर्वत

जैन परम्परा	वैदिक परम्परा
१. हिमवान	१ हिमवान्
२. महाहिमवान	२. हेमकूट
३. निषध	३ निषध
४ नील	४ नील
५ रुक्मी	५ श्वेत
६ शिखरी	६ शृ गी

यहां यह ध्यान देने योग्य है कि शिखरी एव शृ गी ये दोनो एकार्थक नाम हैं। पाचवें रुक्मी पर्वत का वर्ण जैन मान्यतानुसार श्वेत ही माना गया है जो कि वैदिक मान्यता के श्वेत-पर्वत का ही बोधक है। केवल महा हिमवान के स्थान पर हेमकूट नाम नवीन है।

जैन और वैदिक दोनो ही मान्यताओ के अनुसार मेरु-पर्वत जम्बूद्वीप के मध्य-भाग मे स्थित है। अन्तर केवल ऊचाई का है। वैदिक मान्यता से मेरु चौरासी हजार योजन ऊचा है। जबकि जैन मान्यता से वह १ लाख योजन ऊचा है।

७-नदियाँ

वैदिक मान्यतानुसार ऊपर जो नदियो के नाम दिये गये हैं वे प्राय सब आधुनिक नदियो के ही नाम हैं। जैन मान्यतानुसार जम्बू-द्वीप के सात क्षेत्रो मे १४ प्रधान नदियां हैं। उनके नाम इस प्रकार है—गगा, सिन्धु, रोहित-रोहितास्या, हरित-हरिकान्ता, सीता-सीतोदा, नारी-नरकान्ता, स्वर्णकूला-रूप्यकूला, रक्ता-और रक्तोदा। भारतवर्ष आदि क्षेत्रो मे क्रमश उक्त दो-दो नदियां बहती हैं। उनमें से पहली नदी पूर्व के समुद्र और दूसरी नदी पश्चिम के समुद्र में, जाकर मिलती है। इस प्रकार दोनो मान्यताओ वाली नदियो के नामो में कोई समानता नही है।

८-नरक-स्थिति

जैन मान्यता के समान ही वैदिक मान्यता मे भी अत्यन्त दुख भोगने वाले नारकी-जीवो का अवस्थान इस धरातल के नीचे माना गया है। दोनो के कुछ नामो में समानता है, और कुछ नामो में विषमता है।

९-ज्योतिर्लोक

जैन मान्यतानुसार सम-भूमितल से सूर्य-चद्र आदि की ऊचाई का जो उल्लेख है उससे वैदिक मान्यता मे बहुत भारी अन्तर है। जो दोनो के पूर्व वर्णनो मे पाठक भली भाति जान सकेंगे।

१०-स्वर्ग-लोक

दोनो ही मान्यताओ के अनुसार स्वर्गलोक की स्थिति ज्योतिर्लोक के ऊपर ही मानी गई है। वैदिक मान्यता मे स्वर्गलोक का नाम महर्लोक दिया गया है तथा वहां के निवासियो को जैन मान्यता के समान कल्पवासी कहा गया है। वैदिक मान्यता मे स्वर्गलोक की स्थिति सूर्य और ध्रुव के मध्य मे चौदह लाख योजन प्रमाण क्षेत्र मे है। जबकि जैन मान्यता मे वह सुमेरु के ऊपर से लेकर असंख्यात योजन ऊपरी क्षेत्र तक बतलाई गई है।

११—कर्मभूमि और भोग-भूमि

जिस प्रकार जैनागमो मे कर्मभूमि और भोगभूमि का वर्णन आया है उसी प्रकार का वर्णन हिन्दु पुराणो मे भी मिलता है, विष्णु-पुराण के द्वितीयाश के तीसरे अध्याय मे कर्मभूमि का वर्णन इस प्रकार किया गया है:—

उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्च दक्षिणम् ।
वर्षं तद्भारत नाम भारती यत्र संतति' ॥१॥

नवयोजनसाहस्रो विस्तोरोऽस्य महामुने ।
कर्मभूरिय स्वर्गमपवर्गञ्च गच्छताम् ॥२॥

अत. सम्प्राप्यते स्वर्गो मुक्तिमस्मात् प्रयान्ति वै ।
तिर्यक्त्वं नरक चापि यान्त्यत पुरुषा मुने ॥४॥

इत स्वर्गश्च मोक्षश्च, मध्य चान्तश्च गम्यते ।
न खल्वन्यत्र मर्त्याना, कर्मभूमौ विधीयते ॥५॥

भावार्थ—समुद्र के उत्तर और हिमाद्रि के दक्षिण मे भारतवर्ष अवस्थित है । इसका विस्तार नौ हजार योजन विस्तृत है । यह स्वर्ग और मोक्ष जानेवाले पुरुषो की कर्मभूमि है । इसी स्थान से यत मनुष्य स्वर्ग और मुक्ति प्राप्त करते हैं और यही से भी तिर्यञ्च और नरक-गति मे भी जाते हैं—अतः कर्मभूमि है । इस भारतवर्ष के सिवाय अन्य क्षेत्र मे कर्मभूमि नही है ।

अग्नि-पुराण के एक सौ अठारवें अध्याय के द्वितीय श्लोक मे भी भारतवर्ष को कर्म-भूमि कहा गया है । यथा— कर्मभूमिरिय स्वर्गमपवर्गञ्च गच्छताम्

विष्णु-पुराण के अन्त मे कर्मभूमि का उपसहार करते हुए लिखा है-कि भारतवर्ष मे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र रहते हैं तथा वे क्रमश पूजन-पाठ, आयुध-धारण, वाणिज्य-कर्म और सेवादि कार्य करते है । यथा—

ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्या॰मध्ये शूद्राश्च भागश ।
इज्याऽऽयुधवाणिज्याद्यैर्वर्तयन्तो व्यवस्थिता ॥६॥

इस अध्याय का उपसहार करते हुए कहा गया है कि भारतवर्ष के सिवाय अन्य सब क्षेत्रो में भोगभूमि है । यथा—

अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने ।
यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्या भोगभूमय ॥

भावार्थ—इस जम्बू-द्वीप मे भारतवर्ष सर्वश्रेष्ठ है । क्योकि यहाँ पर स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त करानेवाली कर्मभूमि है । भारतभूमि के सिवाय अन्य सर्व क्षेत्र की भूमिया तो भोग-भूमिया है । क्योकि वहाँ पर रहनेवाले जीव सदाकाल बिना किसी रोग-शोक-बाधा के भोगो का उपभोग करते रहते हैं ।

मार्कण्डेय-पुराण के ५५ वें अध्याय के श्लोक २०-२१ मे भी भोगभूमि और कर्मभूमि का वर्णन मिलता है ।

१२-उत्सर्पिणी अवसर्पिणीकाल

जैनागमो मे काल के परिवर्तन स्वरूप का वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि जिस समय मनुष्यो की आयु, सम्पत्ति, सुख-समृद्धि एवं भोगोपभोगो की वृद्धि हो उसे उत्सर्पिणी काल कहते है और जिस समय उक्त वस्तुओं की हानि या ह्रास हो उसे अवसर्पिणीकाल कहते हैं। इन दोनो प्रकार के कालो का परिवर्तन कर्मभूमि वाली पृथ्वियों में ही होता है–अन्यत्र भोग भूमिवाली पृथ्वियो मे नही। विष्णुपुराण मे भी इसका उल्लेख इस प्रकार से मिलता है —

अपसर्पिणी न तेषा वै नचोत्सार्पिणी द्विज।
नत्वेषाऽस्ति युगावस्था तेषु स्थानेषु सप्तसु,॥
(विष्णु० द्वि अ अ ४ श्लोक १३)

अर्थात्–हे द्विज ! जम्बू द्वीपस्थ अन्य सात क्षेत्रो मे भारतवर्ष के समान न काल की अवसर्पिणी अवस्था है और न उत्सर्पिणी अवस्था ही।

१३-वर्ष धर पर्वतों पर सरोवर

जैन मान्यता के समान मार्कण्डेय पु० मे भी वर्षधर पर्वतो के ऊपर सरोवरो का तथा उनमे कमलो का उल्लेख इस प्रकार है —

एतेषां पर्वताना तु द्रोण्योऽतीव मनोहरा।
वनैरमलपानीयैं सरोभिरूप शोभिता॥
(अ० ५५ श्लोक १४—१५)

उक्त सरोवरो में कमलो का उल्लेख इस प्रकार है —

तदेतत् पार्थिव पद्मं चतुष्पत्र मयोदितम्।
(अ० ५५ श्लोक २०)

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि जैन मान्यता के समान ही पुराणकार ने भी पद्म को पार्थिव माना है।

(घ) 'भारतवर्ष' का नाम करण

जम्बूद्वीप के प्रथम वर्ष या क्षेत्र का नाम 'भारतवर्ष' है। इसका यह नाम कैसे पडा, इस विषय मे जैन मान्यता है कि आदि तीर्थंकर भ० ऋषभदेव के सौ पुत्रो में ज्येष्ठ आदि पुत्र भरत जो कि प्रथम चक्रवर्ती थे, उन्होने इस क्षेत्र का सर्व प्रथम राज्य-सुख भोगा, इस कारण इस क्षेत्र का नाम 'भारतवर्ष' प्रसिद्ध हुआ। (देखो प्रस्तुत ग्रन्थ पृ०-११३)। श्री मदुमास्वाति-रचित तत्त्वार्थाधिगम-सूत्र के महान् भाष्यकार श्रीमदकलक देव ने तीसरे अध्याय के दशवें सूत्र की व्याख्या करते हुए लिखा है.—

"भरतक्षत्रिययोगाद्वर्षो भरत विजयार्धस्य दक्षिणतो जलधेरुत्तरत गगा-सिन्ध्वोर्बहुमध्यदेशभागे विनीता नाम नगरी। तस्यामुत्पन्न सर्व राजलक्षणसम्पन्नो भरतो नामाद्यश्चक्रधर षट्खण्डाधिपतिः। अवसर्पिण्या राज्य विभागकाले तेनादौ भुक्तत्वात्, तद्योगाद् 'भरत' इत्याख्यायते वर्ष.।"

हिन्दुओ के प्रसिद्ध मार्कण्डेय-पुराण मे भी व्यास महर्षि ने उक्त कथन का ही समर्थन करते हुए तिरेपनवें अध्याय मे कहा हैं—

ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीर पुत्रशताद्वर।
सोऽभिषिच्यर्षभ. पुत्र, महाप्राव्राज्यमास्थित. ॥४१॥

तपस्तेपे महाभग पुलहाश्रमसश्रय।
हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं, भरताय पिता ददौ ॥४२॥

तस्मात्तु भारतं वर्ष, तस्य नाम्ना महात्मन ॥४३॥

अर्थात्—ऋषभ से भरत पैदा हुआ, जो उनके सौ पुत्रो में सर्व श्रेष्ठ था। उसका राज्याभिषेक कर के ऋषभ महानुभाव प्रव्रजित होकर पुलहाश्रम चले गये। जम्बूद्वीपका हिम नामक दक्षिण क्षेत्र-पिता ने भरत को दिया, इसके कारण उस महात्मा के नाम से यह क्षेत्र 'भारतवर्ष' कहलाने लगा।

इसके अतिरिक्त जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति मे 'भरत क्षेत्र' इस नाम के दो कारण और भी प्रतिपादित किये गये हैं— प्रथम इस क्षेत्र के अधिष्टायक देव का नाम भरत है। दूसरा यह नाम शाश्वत है। (देखो प्रस्तुत ग्रन्थ, पृ० ११३)

यहा यह भी स्मरणीय है कि प्रत्येक उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल के प्रथम चक्रवर्ती का नाम भरत ही होता है। इन सब कारणो से यह क्षेत्र भरत नाम से प्रसिद्ध है।

कुछ लोग दुष्यन्त-पुत्र भरत के नाम से इस क्षेत्र का नाम करण हुआ कहते हैं। किन्तु इस भरत का व्यक्तित्व इतना असाधारण नही रहा है कि उसके नाम पर इस क्षेत्र की प्रसिद्धि मानी जाय। इसके अतिरिक्त इससे पूर्व इस क्षेत्र का नाम क्या था, यह अब तक किसी भी इतिहास-वेत्ता ने प्रकट नही किया है। इसी कारण अब विचार-शील इतिहासज्ञो ने इस अभिमत को अस्वीकार कर दिया है।

(ड·) वैज्ञानिकों के मतानुसार आधुनिक विश्व

१-भूमण्डल

जिस पृथ्वी पर हम निवास करते हैं वह मिट्टी-पत्थर का एक नारगी के समान चपटा गोला है। इसका व्यास लगभग आठ हजार मील (७९२६·६/७८९९·९—२६ ७) और परिधि लगभग पचीस हजार मील (२४९०२/२४८६०—४२) है।

वैज्ञानिको के मतानुसार आज से करोडो वर्ष पूर्व किसी समय यह ज्वालामयी अग्नि का गोला था। यह अग्नि धीरे-धीरे ठडी होती गई और अब यद्यपि पृथ्वी का धरातल सर्वत्र शीतल हो चुका है, तथापि अभी इसके गर्भ मे अग्नि तीव्रता से जल रही है, जिसके कारण पृथ्वी का धरातल भी कुछ उष्णता को लिए हुए है। नीचे की ओर खुदाई करने पर उत्तरोत्तर अधिक उष्णता पाई जाती है। कभी-कभी यही भूगर्भ की ज्वाला कुपित होकर भूकम्प उत्पन्न कर देती है और कभी ज्वालामुखी के रूप मे भी फूट निकलती है, जिससे पर्वत, भूमि, नदी, समुद्र आदि के जल और स्थल भागो मे परिवर्तन होता रहता है। इसी अग्नि के ताप से पृथ्वी का द्रव्य यथायोग्य दवाव और शीतलता पाकर नाना प्रकार की धातु-उपधातुओ एव तरल पदार्थो मे परिवर्तित हो गया है जो हमे पत्थर कोयला, लोहा, सोना, चादी आदि, तथा जल और वायुमडल के रूप मे दिखाई देता है। जल और वायु ही सूर्य के ताप से मेघ आदि का रूप धारण कर लेते हैं। यह वायुमण्डल पृथ्वी के धरातल से उत्तरोत्तर विरल होते हुए लगभग ४०० मील तक फैला हुआ अनुमान किया जाता है। पृथ्वी का धरातल भी सर्वत्र समान नही है। पृथ्वी तल का उच्चतम भाग हिमालय का गौरीशकर शिखर (माउण्ट एवरेस्ट) माना जाता है, जो समुद्र तल से उनतीस हजार फुट, अर्थात् लगभग साढे पाच मील ऊचा है। समुद्र की अधिकतम गहराई ३५,४०० फुट अर्थात् लगभग छह मील तक नापी जा चुकी है। इस प्रकार पृथ्वी तल की ऊचाई-नीचाई मे साढे ग्यारह मील का अन्तर पाया जाता है।

पृथ्वी की ठडी होकर जमी हुई परत सत्तर मील समझी जाती है। इसकी द्रव्य-रचना के अध्ययन से अनुमान लगाया गया है कि उसे जमे हुए लगभग तीन करोड वर्ष हुए हैं। सजीव तत्त्व के चिह्न केवल चौंतीस मील की ऊपरी परत मे पाये जाते हैं। जिससे अनुमान लगाया गया है कि पृथ्वी पर जीव-तत्त्व उत्पन्न हुए दो करोड वर्ष से अधिक समय नही हुआ है। इसमे भी मनुष्य के विकास के चिह्न केवल एक करोड वर्ष के भीतर ही अनुमान किये जाते हैं।

पृथ्वी तल के ठडे हो जाने के पश्चात् उस पर आधुनिक जीव-शास्त्र के अनुसार जीवन का विकास इस क्रम से हुआ—सर्व प्रथम स्थिर जल के ऊपर जीव-कोश प्रकट हुए, जो पाषाणादि जड पदार्थों से मुख्यतया तीन बातो मे भिन्न थे। एक तो वे आहार ग्रहण करते और बढते थे। दूसरे वे इधर-उधर चल भी सकते थे। और तीसरे वे अपने ही तुल्य अन्य कोश भी उत्पन्न कर सकते थे। काल-क्रम से इनमे से कुछ कोश भूमि मे जड जमाकर स्थावर काय-वनस्पति बन गये, और कुछ जल मे ही विकसित होते-होते मत्स्य बन गये। क्रमश धीरे-धीरे ऐसे वनस्पति और मेढक आदि प्राणी उत्पन्न हुए, जो जल मे ही नही, किन्तु स्थल पर भी श्वासोच्छ्वास ग्रहण कर सकते थे। इन्ही स्थल प्राणियो मे से से उदर के बल रेंग कर चलने वाले केंचुआ, साँप आदि प्राणी उत्पन्न हुए। इनका विकास दो दिशाओ मे हुआ—एक पक्षी के रूप मे और दूसरे स्तनधारी प्राणी के रूप मे। स्तनधारी प्राणी की यह विशेषता है कि वे अण्डे से उत्पन्न न होकर गर्भ से उत्पन्न होते हैं और पक्षी अण्डे से उत्पन्न होते हैं। मगर से लेकर भेड, बकरी, गाय, भैंस, घोडा आदि सब इसी स्तनधारी जाति के प्राणी हैं। इन्हीं स्तनधारी प्राणियो की एक वानर जाति उत्पन्न हुई। किसी समय कुछ वानरो ने अपने अगले दो पैर उठाकर पीछे के दो पैरो पर चलना-फिरना सीख लिया। बस, यही से मनुष्य जाति का विकास प्रारम्भ हुआ माना जाता है। उक्त जीवकोश से लगाकर मनुष्य के विकास तक प्रत्येक नयी धारा उत्पन्न होने मे लाखो करोडो वर्ष का अन्तर माना जाता है।

इस विकास-क्रम में समय-समय पर तात्कालिक परिस्थितियो के अनुसार नाना प्रकार की जीव-जातियाँ उत्पन्न हुईं। उनमे से अनेक जातिया समय के परिवर्तन, विप्लव और अपनी अयोग्यता के कारण विनष्ट हो गईं, जिनका पता हमे भूगर्भ मे उनके निखातको द्वारा मिलता है।

पृथ्वी-तल पर भूमि से जलका विस्तार लगभग तिगुना है। (थल २९% जल ७१%)। जल के विभागानुसार पृथ्वी के पाच प्रमुख खण्ड पाये जाते है—एशिया, यूरोप और अफ्रीका मिलकर एक, उत्तरी-दक्षिणी अमेरिका मिलकर दूसरा, आस्ट्रेलिया तीसरा, उत्तरी ध्रुव चौथा, पाचवा दक्षिणी ध्रुव। इनके अतिरिक्त अनेक छोटे-मोटे द्वीप भी हैं। यह भी अनुमान किया जाता है कि सुदूर पूर्व मे सभवत ये प्रमुख भूमि-भाग परस्पर जुडे हुए थे। उत्तरी दक्षिणी अमेरिका की पूर्वी समुद्र तटीय रेखा ऐसी दिखाई देती है कि वह यूरोप-अफ्रीका की पश्चिमी समुद्र-तटीय रेखा के साथ मिलकर ठीक बैठ सकती है। तथा हिन्द-महासागर के अनेक द्वीप-समूह की शृखला एशिया खण्ड को आस्ट्रेलिया के साथ जोडती हुई दिखाई देती है। वर्तमान मे नहरें खोदकर अफ्रीका का एशिया-यूरोप भूमि खण्ड से, तथा उत्तरी अमेरिका का दक्षिणी अमेरिका से भूमि-सम्बन्ध तोड़ दिया गया है। इन भूमि-खण्डो का आकार, परिमाण और स्थिनि परस्पर अत्यन्त विषम हैं।

भारतवर्ष एशिया-खण्ड का दक्षिण-पूर्वी भाग है। यह त्रिकोणाकार है। दक्षिणी कोण लका द्वीप को प्राय. स्पर्श करता है। वहा से भारत वर्ष की सीमा उत्तर की ओर पूर्व-पश्चिम दिशाओ मे फैलती हुई चली गई है और हिमालय पर्वत की श्रेणियो पर जाकर समाप्त होती है। भारत का पूर्व- पश्चिम और उत्तर-दक्षिण विस्तार लगभग दो--दो हजार मील का है। इसकी उत्तरी सीमा पर हिमालय पर्वत है। मध्य मे विन्ध्य और सतपुडा की पर्वत-मालाए हैं। तथा दक्षिण के पूर्वी और पश्चिमी समुद्र-तटो पर पूर्वी-घाट और पश्चिमी-घाट नाम वाली पर्वत-श्रेणियाँ फैली हुई हैं।

भारतवर्ष की प्रमुख नदियो मे हिमालय के प्राय मध्य भाग से निलकर पूर्व की ओर समुद्र मे गिरनेवाली ब्रह्मपुत्र और गगा है। इनकी सहायक नदियो मे जमुना, चम्बल, वेतवा और सोन आदि हैं। हिमालय से निकलकर पश्चिम की ओर समुद्र मे गिरनेवाली सिन्धु और उसकी सहायक नदिया झेलम, चिनाव, रावी, व्यास और सतलज हैं। गगा और सिन्धु की लम्बाई लगभग पन्द्रह सौ मील की है। देश के मध्य मे विन्ध्य और सतपुडा के बीच पूर्व से पश्चिम की ओर समुद्र तक बहनेवाली नर्मदा नदी है। सतपुडा के दक्षिण मे ताप्ती नदी है। दक्षिण भारत की प्रमुख नदिया गोदावरी, कृष्णा, कावेरी पश्चिम से पूर्व की ओर वहती हैं।

देश के उत्तर मे सिन्धु से गगा के कछार तक प्राय. आर्य जाति के, तथा सतपुडा से सुदूर दक्षिण में द्रविड जाति के, एव पहाडी प्रदेशो में गोंड, भील, कोल और किरात आदि आदिवासी जन-जातियो के लोग रहते हैं।

वर्तमान में उपलब्ध इस आठ हजार मील विस्तृत और पच्चीस हजार मील परिधिवाले भू-मण्डल के चारो ओर अनन्त आकाश है, जिसमें हमे दिन को सूर्य और रात्रि को चन्द्रमा एव ताराओ के दर्शन होते हैं और उनसे प्रकाश मिलता है। इनमे पृथ्वी के सबसे अधिक समीप मैं चन्द्रमा है, जो इस भूमण्डल से लगभग अढाई लाख मील दूर है। यह पृथ्वी के समान ही एक भूमण्डल है जो पृथ्वी से बहुत छोटा है और उसी के चारो ओर घूमा करता हैं, जिससे हमारे यहा शुक्ल और कृष्णपक्ष होते हैं। चन्द्रमा मे स्वय प्रकाश नही है, किन्तु वह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है, इसीलिए अपने परिभ्रमण के अनुसार घटता-बढता दिखाई देता है। अनुसन्धान से ज्ञात हुआ हैं कि चन्द्रमा बिलकुल ठडा हो गया है और पृथ्वी के गर्भ के समान अब उसमे अग्नि नही है। उसके आस-पास वायु-मण्डल भी नही है और न उसके धरातल पर जल ही है। इन्ही कारणो से वहा श्वासोच्छ्वास-प्रधान प्राणी और वनस्पति उपलब्ध नहीं हैं। वहा पर्वत तथा कन्दराओ के अतिरिक्त और कुछ नही है। अनुमान किया जाता है कि चन्द्रमा पृथ्वी का ही एक भाग है, जिसे टूटकर अलग हुए पाच-छह करोड वर्ष हुए है।

९-चन्द्र का क्षेत्रफल आदि

आज के वैज्ञानिको ने चन्द्र के विषय मे जो तथ्य सकलित किये हैं उनमे से कुछ इस प्रकार हैं:—

चन्द्र व्यास—२१६० मील, या ३४५६ किलोमीटर, पृथ्वी का चतुर्थ भाग

चन्द्र की परिधि—१०८६४ किलोमीटर,

चन्द्र की पृथ्वी से दूरी—३८११७१ किलोमीटर,

चन्द्र का तापमान—११७ सेन्टीमीटर, जब सूर्य सिर के ऊपर हो,

चन्द्र का राह मे तापमान—१३७ सेन्टीमीटर,

चन्द्र सतह मे गुरुत्वाकर्षण—पृथ्वी का छठा अश

पृथ्वी पर जिस वस्तु का वजन २७ किलो है, । उसका चाद पर ४—५ किलो है । चन्द्रविस्तार या विम्व पृथ्वी का १०० वा अश है, और उसका आयतन पृथ्वी के आयतन का ५ वा भाग है ।

चन्द्रकक्षा की गति ३६६९ किलोमीटर प्रति घण्टा है । चन्द्र को पृथ्वी की एक परिक्रमा करने में २७ दिन, ७ घण्टे और ४३ मिनिट लगते हैं, क्योकि वह लगभग इसी गति से अपनी धुरी पर घूमता है ।

चन्द्रमा से परे क्रमश शुक्र, बुध, मगल, वृहस्पति और शनि आदि ग्रह हैं । ये सब पृथ्वी के समान ही भूमण्डल वाले हैं और सूर्य की परिक्रमा किया करते हैं, तथा सूर्य के ही प्रकाश से प्रकाशित होते हैं । इन ग्रहो मे से किसी मे भी हमारी पृथ्वी के समान जीवो की समावना नही मानी जाती है, क्योकि वहाँ की परिस्थितियां जीवन के साधनो से सर्वथा प्रतिकूल हैं ।

इन ग्रहो से परे पृथ्वी से लगभग साढे नौ करोड मील की दूरी पर सूर्य-मण्डल है, जो पृथ्वी से लगभग पन्द्रह लाख गुना वडा है, अर्थात् पृथ्वी के समान लगभग पन्द्रह लाख भूमण्डल उसके गर्भ मे समा सकते हैं । सूर्य का व्यास ८६०००० मील है । यह महाकाय सूर्य-मण्डल अग्नि से प्रज्वलित है और उसकी ज्वाला लाखो मील तक उठती हैं । सूर्य की ज्वाला से करोडो मील विस्तृत सौर-मण्डल भर मे प्रकाश और उष्णता फैलती है । सूर्य के धरातल पर १०००० फारेन-हीट गर्मी है । जेम्स जीन्स वैज्ञानिक का मत है कि इसी सूर्य की विच्छिन्नता से पृथ्वी, बुध, वृहस्पति आदि ग्रह और उनके उपग्रह बने हैं, जो सब अभी तक उसके आकर्षण से निवद्ध होकर उसी के आस-पास घूम रहे हैं । हमारा भूमण्डल सूर्य की परिक्रमा ३६५¼ दिन मे तथा प्रति चौथे वर्ष ३६६ दिन मे पूरी करता है और इसी के आधार पर हमारा वर्ष-मान अवलम्बित है । इसी परिक्रमण मे पृथ्वी निरन्तर अपनी कीली पर ६० हजार मील प्रति घण्टे के हिसाव से घूमा करती है, जिसके कारण हमारे यहा दिन और रात्रि हुआ करते हैं । पृथ्वी का जो गोलार्ध सूर्य के सम्मुख पडता है, वहा दिन और शेष गोलार्घ मे रात्रि होती है । वैज्ञानिको का यह भी मत है कि ये पृथ्वी आदि ग्रह और उपग्रह पुन सूर्य की ओर आकृष्ट हो रहे हैं ।

ऊपर जिस महाकाय सूर्य-मण्डल का उल्लेख किया गया है उसकी वरावरी का अन्य कोई भी ज्योतिर्मण्डल आकाश मे दिखाई नही देता । किन्तु इससे यह नही समझना चाहिए कि उन अति लघु दिखाई देने वाले तारो मे सूर्य के समान महान कोई एक भी नही है । वस्तुत हमे जिन तारो का दर्शन होता है, उनमे सूर्य से छोटे एव सूर्य की वरावरी वाले तारे तो वहुत थोडे हैं । उनमे अधिकाश तो सूर्य से भी बहुत विशाल हैं, तथा उससे सैकडो, हजारो-लाखों गुने वडे हैं । किन्तु उनके छोटे दिखाई देने का कारण यह है कि वे हम से सूर्य की अपेक्षा बहुत अधिक दूरी पर हैं । ज्येष्ठा नक्षत्र इतना विशाल है कि उसमे ७००,००,००,००,००,००० पृथिविया समा जायें ।

३ प्रकाश-वर्ष

तारो की दूरी समझने के लिए हमारे सख्या-वाचक शब्द काम नही देते। उसकी गणना के लिए वैज्ञानिको की दूसरी ही विधि है। प्रकाश की गति प्रति सेकिण्ड एक लाख छयासी हजार (१८६०००) मील, तथा प्रति मिनिट एक करोड ग्यारह लाख साठ हजार (१११६००००) मील मापी गई है। इस प्रमाण से सूर्य का प्रकाश हमारी पृथ्वी तक आने मे साढे आठ (८½) मिनिट लगते हैं। तारे हमसे इतनी दूर हैं कि उनका प्रकाश हमारे समीप वर्षों मे आ पाता है और जितने वर्षों मे वह आता है उतने ही प्रकाश-वर्ष की दूरी पर वह तारा कहा जाता है। सेन्चुरी नामक अति निकटवर्ती तारा हमसे साढे चार प्रकाश-वर्ष की दूरी पर है क्योकि उनके प्रकाश को हमारे पास तक आने मे साढे चार प्रकाश-वर्ष लगते हैं। इस प्रकार दस, बीस, पचास एवं सैकड़ो प्रकाश-वर्षों की दूरी के ही नहीं, किन्तु ऐसे-ऐसे तारो का ज्ञान हो चुका है जिनकी दूरी दस लाख प्रकाश-वर्ष की मापी गई है तथा जो प्रमाण में इस पृथ्वी से तो क्या, हमारे सूर्य से भी लाखो गुने बडे हैं।

ताराओ की सख्या का पार नही है। हमे अपनी दृष्टि से तो अधिक से अधिक छठे प्रमाण तक के लगभग छह-सात हजार तारे ही दिखाई देते हैं। किन्तु दूर-दर्शक यंत्रो की जितनी शक्ति बढती जाती है, उतने ही अधिकाधिक तारे दिखाई देते हैं। अभी तक बीसवें प्रमाण तक के तारो को देखने योग्य यत्र बन चुके हैं, जिनके द्वारा दो अरब से भी अधिक तारे देखे जा चुके हैं। जिनकी तालिका आगे दी जाती है।

४ वैज्ञानिकों के अनुसार ताराओं की संख्या

आज के वैज्ञानिको ने प्रकाश की हीनाधिकता के अनुसार तारो को कई वर्गों मे बाँटा है। पहिले, दूसरे और तीसरे वर्ग के तारे अधिक चमकीले हैं, किन्तु उनकी सख्या बहुत कम है। आठवें वर्ग तक के तारों को आँखो से देखा और गिना जा सकता है, किन्तु इससे आगे के वर्गो के तारो को दूरबीन की सहायता से ही देखा और गिना गया है।

वैज्ञानिको के द्वारा २० वर्गो मे विभक्त तारो की सख्या इस प्रकार है:—

वर्ग	सख्या	वर्ग	संख्या
१	१६	११	८७०००
२	६५	१२	२२,७००००
३	२००	१३	५७०००००
४	५३०	१४	१,३८०००००
५	१६२०	१५	३,२००००००
६	४८५०	१६	७,१००००००
७	१४३००	१७	१,५००००००
८	४१०००	१८	२६,६००००००
९	११७०००	१९	५६,०००००००
१०	३२४०००	२०	१००००००००० (एक अरब)

जेम्स जीन्स सदृश वैज्ञानिक ज्योतिषी का मत है कि तारो की सख्या हमारे पृथ्वी के समस्त समुद्र-तटो की रेत के कणो के बराबर हो तो आश्चर्य नही है। ये असख्य तारे एक दूसरे से कितने दूर-दूर हैं, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि सूर्य से अति निकटवर्ती तारा साढे चार प्रकाश-वर्ष अर्थात् अरबो-खरबो मील की दूरी पर है। ये सब तारे बडे वेग से गतिशील हैं और उनका प्रवाह दो भिन्न दिशाओ मे पाया जाता है।

५-नीहारिका

विखरी वाप्प की शक्ल मे जो अनेक तारो का समूह पाया जाता है, उन्हें नीहारिका कहते हैं। बिना दूरवीन के हम अपनी आंखो से एकाध ही नीहारिका देख सकते हैं और वह भी देखने मे तारों जैसी ही मालूम होती है। दूरवीन से देखने पर उनमें कुछ गोल दिखाई देती हैं और कुछ की आकृति शख के चक्कर की भाति। गोल नीहारिकाए हमारे स्थानीय विश्व या आकाश- गगा के तारागुच्छ हैं। चक्करदार नीहारिकाए महान् विश्वसे छोटी, किन्तु करोडो तारा-गुच्छको से मिलकर वने छोटे विश्व हैं। यद्यपि विशेष विवरण के साथ जांच-पडताल की गई नीहारिकाए सौ से भी कम हैं, किन्तु दूरवीन से वीस लाख के करीव चक्करदार नीहारिकाओ के अस्तित्व का पता चला है। आकाश-गगा भी इसी श्रेणी का एक द्वीप-विश्व है। हमारी पृथ्वी न वृहस्पति की भाति विशाल और न शुक्र की भाति छोटा ग्रह है। सूर्य भी मध्यम आकार का एक ग्रह है। किन्तु आकाश-गगा अपनी श्रेणी के द्वीप-विश्वो से वहुत वडी है। आकाश-गगा भी एक मध्यम आकार की नीहारिका है, जिसकी मात्रा एक अरव सूर्यो से भी ज्यादा है। सूर्य हमारी पृथ्वी से तीन लाख तेरह हजार गुना वडा है।

६-आकाश-गंगा

यहा यह ज्ञातव्य है कि आकाश गगा क्या वस्तु है ? रात को आकाश मे एक सफेद वालु का पथ या गगा जैसी सफेद चौडी धारा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर लम्वे आकार में दिखाई देती है, इसे ही आकाश-गगा कहते हैं। आकाश-गगा स्वय तारो का एक समूह है। इसमे सूर्य जैसे दो खरव के करीव तारे हैं। इसकी आकृति अडाकार जेवी घडी या दो जुडे गोल तवो की भाति वीच मे मोटी और किनारो पर पतली है। इसका व्यास ३ लाख प्रकाश-वर्ष और मोटाई १० हजार प्रकाश-वर्ष है।

७-ग्रह

ज्योतिर्मण्डल मे ग्रहो का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है, उनका किंचित् परिचय निम्न लिखित कोष्ठक से ज्ञात हो सकेगा।

ग्रह का नाम	सूर्य से औसत दूरी मीलो मे	औसत व्यास मीलों मे	परिक्रमा का समय वर्षों मे	उपग्रहो की सख्या
१. वुध	३,६० ०० ०००	३०३०	० २२	०
२ शुक्र	६ ७२.००.०००	७७००	० ६२	०
३ पृथ्वी	६ २६ ०० ०००	७६१८	१.००	१
४ मगल	१४.१५ ०० ०००	४२३०	१ ८८	२
५ वृहस्पति	४८.३२ ०० ०००	८६५००	११ ८६	६
६ शनि	८८ ५६ ०० ०००	७३०००	२६ ४६	६
७. अरुण	१ ७८ २२ ००.०००	३११००	८४.०२	४
८ वरुण	२ ७६ १६.०० ०००	३४८००	१६४ ७८	१
६ कुवेर	३ ७० ०० ०० ०००	३६०५	२५० ००	अज्ञात

सूर्य तथा उसका ग्रह-कुटुम्व मिलकर सौर्य-मण्डल कहा जाता है।

८-लोक या ब्रह्माण्ड का आकार

जिसको हम ब्रह्माण्ड कहते हैं, उसमें अनेक सौर्य-मण्डल हैं। ऐसा अनुमान किया जाता कि ऐसे सौर्य-मण्डलो की संख्या लगभग १० करोड है। हमारा सौर्य-मण्डल 'ऐरावत पथ' (मिल्की वे) नामक ब्रह्माण्ड मे स्थित है। ऐरावत-पथ के चन्द्र रूपी पथ के लगभग २/३ भाग पर एक पीला बिन्दु है। यही बिन्दु हमारा सूर्य है, जो अपने ग्रहों को साथ लिए ऐरावत पथ पर बराबर घूम रहा है। पूर्व ऐरावत पथ मे लगभग ५०० करोड तारे विद्यमान हैं। इनमें से बहुतो को हम नही देख सकते है, क्योकि वे हमारे सामने से दिन में निकलते हैं, अत सूर्य के प्रकाश में उनका प्रकाश हमें नही दिखाई देता है। तारो के अतिरिक्त ऐरावत-पथ में धुंध, गैस और धूल भी अधिक मात्रा मे है। रात्रि में अनेक तारागणो का प्रकाश एकत्रित होकर इस गैस और धूल को प्रकाशित कर देता है।

इस प्रकार सारे विश्व या लोक का प्रमाण असख्य है और आकाश का तो कही अन्त ही नही दिखाई देता है। तारागणो का आकाश में जिस प्रकार वितरण है, तथा आकाश-गगा में जो तारा-पुञ्ज दिखाई देता है, उस पर से अनुमान लगाया गया है कि तारामण्डल-सहित समस्त लोक का आकार लैन्स के समान है, अर्थात् ऊपर-नीचे को उभरा हुआ और बीच में फैला हुआ गोल है, जिसकी परिधि पर आकाश-गगा दिखाई देती है और उभरे हुए भाग के मध्य में सूर्य-मण्डल है।

प्रस्तुत प्रस्तावना के लेखन में जिन लेखको की रचनाओ का उपयोग किया गया है, मैं उन सबका आभारी हू। साथ ही प० मुनि श्री कन्हैयालाल जी महाराज 'कमल' का विशेषत: आभार मानता हू, जिन्होने अपने इस महान् श्रम-साध्य 'गणितानुयोग'-सकलन की प्रस्तावना लिखने का अवसर प्रदान किया।

दि० श्रावण शुक्ला १५, वी० नि० २४९५
ऐ० पन्नालाल दि० जैन सरस्वती–भवन
ब्यावर (राजस्थान)

हीरालाल 'सिद्धान्त शास्त्री',
'न्यायतीर्थ'

गणितानुयोग-विषयानुक्रम

१— अलोक पृ० १–४

२— लोक — पृ० ५–२६

३— अधोलोक पृ० २७–६६

विषय	पृष्ठांक

ऊर्ध्वलोक ४२१-४४४

गणितानुयोग

संकलनकर्त्ता .

मुनि कन्हैयालाल "कमल

अलोक

संख्या, संस्थान, संस्पर्श

[१] एगे अलोए।

—ठा १, ६; सम. १, १

[२] [१] प्र०—अलोए ण भते ! किसठिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! भुसिरगोलसठिए पण्णत्ते।

—विवा भाग ३ श ११ उ १० प्र १० पृ २२६

[३] [१] प्र०—अलोए ण भते ! किणा फुडे ?

कतिहि वा काएहि पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! नो धम्मत्थिकाएण फुडे,—जाव[१]—आगासत्थिकायस्स पदेसेहि फुडे, नो पुढविकाइएणं फुडे—जाव[२]—नो अद्धासमएण फुडे।

एगे अजीवदव्वदेसे, अगुरुलहुए, अणंतेहि अगुरुलहुयगुणेहि संजुत्ते, सव्वागासअणतभागूणे।

—पण्ण० १५ इन्द्रियपद पृ० ६३४

[१] अलोक एक है।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! अलोक किस आकार का है ?

उ०—गौतम ! (अलोक) पोले गोले के आकार का है।

[३] [१] प्र०—भगवन् ! अलोक किससे स्पृष्ट है ? कितने कायो से स्पृष्ट है ?

उ०—गौतम ! (अलोक) धर्मास्तिकाय से स्पृष्ट नही है—यावत्—आकाशास्तिकाय से स्पृष्ट नही है किन्तु आकास्तिकाय के प्रदेशो से स्पृष्ट है। पृथ्वीकाय से स्पृष्ट नही है—यावत्—अद्धासमय से स्पृष्ट नही है। (अलोक मे) एक अजीवद्रव्यदेश अर्थात् आकाशभाग है, जो अगुरुलघु है, अनन्त अगुरुलघु गुणो से युक्त है तथा सर्वाकाश का अनन्ततम भाग न्यून है।

अलोक की विशालता

[४] [१] प्र०—अलोए ण भते ! केमहालए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अयं णं समयखेत्ते पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयाम-विक्खंभेणं, जहा[३] खंदए—जाव—परिक्खेवेणं।

ते ण काले णं ते ण समए णं दस देवा महिड्ढिया तहेव—जाव[४]—सपरिक्खित्ताणं सचिट्ठेज्जा। अहे ण अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तियाओ अट्ठ बलिपिडे गहाय माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स चउसु वि दिसासु चउसु वि विदिसासु बहियाभिमुहीओ ठिच्चा ते अट्ठ बलिपिडे जमगसमगं बहियाभिमुहीओ पक्खिवेज्जा, पभू ण गोयमा ! तओ एगमेगे देवे ते अट्ठ बलिपिडे धरणितलमसंपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए, ते णं गोयमा ! देवा ताए उक्किट्ठाए—जाव—देवगईए लोगंते ठिच्चा

१—पण्ण. १५ इन्द्रियपद, पृ. ६३०।

२— ,, ,, ,,

३—विवा. भाग १, श. २ उ. १, पृ. २३५।

४— ,, भाग ३, श. ११, उ. १०, प्र. १६, पृ. २३१।

असब्भावपट्ठवणाए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाए,
एगे देवे दाहिण-पुरच्छाभिमुखे पयाए,
एव—[1]जाव—उत्तर-पुरच्छाभिमुहे,
एगे देवे उड्ढाभिमुहे पयाए,
एगे देवे अहोभिमुहे पयाए,
ते ण काले ण वाससयसहस्साउए दारए पयाए,
तए ण तस्स दारगस्स अम्मापियरो पहीणा भवति,
नो चेव ण ते देवा अलोयत सपाउणति ।
त चेव—जाव[2]—तेसि ण देवाण कि गए वहुए, अगए वहुए ?
गोयमा! नो गए वहुए, अगए वहुए,
गयाउ से अगए अणतगुणे,
अगयाउ से गए अणतभागे,
अलोए ण गोयमा ! एमहालए पण्णत्ते ।

—विवा० भाग ३, श० ११, उ० १०, प्र० २०, पृ० २३२

[४] [१] प्र०—भगवन् ! अलोक कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! इस मनुष्यक्षेत्र की लम्वाई-चौडाई पैंतालीस लख योजन की है, जैसा कि स्कन्दक के प्रकरण मे विस्तार से वताया गया है । इस प्रकार के मनुष्यक्षेत्र को दस महर्द्धिक देव सब ओर से घेर कर खडे हो । उनके नीचे आठ महत् दिक्कुमारिया आठ वलिपिण्ड ग्रहण कर मानुषोत्तर पर्वत की चारो दिशाओ और चारो विदिशाओ मे वाह्याभिमुख खडी रहें । पश्चात् वे उन आठो वलिपिण्डो को एक साथ वाहर फेंकें । ऐसी स्थिति मे, हे गौतम ! उन देवो मे से प्रत्येक उन आठो वलिपिण्डो को पृथ्वी पर गिरने से पूर्व ही ग्रहण कर लेता है । इस प्रकार की उत्कृष्ट एव त्वरित गति वाले देवो मे से एक ने लोकान्त से, असत्कल्पना से, पूर्व मे प्रयाण किया, एक ने दक्षिण-पूर्व मे प्रयाण किया—यावत्—एक ने उत्तर-पूर्व मे प्रयाण किया, एक ने ऊर्ध्वदिशा मे प्रयाण किया, एक ने अधोदिशा मे प्रयाण किया । उस समय एक वर्ष की आयु वाला एक वालक उत्पन्न हुआ । कालक्रम से उसके माता-पिता का देहान्त हुआ । तव भी वे देव अलोक का अन्त न पा सके ।

इसी प्रकार वालक की आयु क्षीण हुई—यावत्—उसके नाम-गोत्र भी क्षीण हो गए । फिर भी वे देव अलोक का अन्त (छोर) न पा सके ।

प्र०—(भगवन् ! इतने समय मे) उन देवो ने जो क्षेत्र पार किया वह अधिक है अथवा जिस क्षेत्र को वे पार न कर सके वह अधिक है ?

उ०—गौतम ! पार किया गया क्षेत्र अधिक नही है, पार न किया गया क्षेत्र अधिक है । पार किये गए क्षेत्र से पार न किया गया क्षेत्र अनन्तगुणा है तथा पार न किये गए क्षेत्र से पार किया गया क्षेत्र अनन्तवा भाग है । गौतम ! अलोक इतना विशाल है ।

अलोक मे गति का अभाव

[५] [१] प्र०—देवे ण भते ! महिड्ढिए[3]—जाव—महासोक्खे लोगते ठिच्चा पभू अलोगसि हत्य वा—जाव—उरु वा आउ टावेत्तए वा पसारेत्तए वा ?

उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

---

१. विवा भाग ३, श ११, उ १०, प्र. १९, पृ २३१ ।
२. " " " " " " ।
३. "महज्जुइए, महावले, महायसे"

[२] प्र०—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—देवे णं महिड्ढिए—जाव—लोगंते ठिच्चा णो पभू अलोगंसि हत्थं वा—जाव—पसारेत्तए वा ?

उ०—जीवा णं आहारोवचिया पोग्गला,
बोंदिचिया पोग्गला,
कलेवरचिया पोग्गला,
पोग्गलामेव पप्प जीवाण य अजीवाण य गतिपरियाए आहिज्जइ,
अलोए ण नेवत्थि जीवा,
नेवत्थि पोग्गला,
से तेणट्ठेण—जाव—पसारेत्तए वा।
सेव भंते ! सेव भंते ! त्ति।

—विवा भाग ४, श १६, उ. ८, प्र ६, पृ. २५

[५] [१] प्र०—भगवन् ! क्या महाऋद्धिसम्पन्न—यावत्—महासुख वाला देव लोकान्त मे स्थित होकर अलोक मे अपने हाथ—यावत्—उरु आदि को सकुचित करने या फैलाने मे समर्थ है ?

उ०—नही, समर्थ नही है।

[२] प्र०—भगवन् ! ऐसा क्यो ?

उ०—क्योकि जीवो द्वारा पुद्गल ही आहार, शरीर और कलेवर रूप मे उपचित होते है। पुद्गलो की अपेक्षा से ही जीवो और अजीवो मे गतिपर्याय का कथन होता है। अलोक मे न तो जीव हैं और न पुद्गल है। इसी कारण उसमे हाथ आदि नही फैलाए जा सकते।
भगवन् ! ऐसा ही है, भगवन् ! ऐसा ही है !

[६] चउहिं ठाणेहिं जीवा य पोग्गला य णो सचाएति बहिया लोगता गमणयाए, तजहा—
गइअभावेण, निरुवग्गहयाए, लुक्खत्ताए, लोगणुभावेणं।

—ठाणाग अ. ४, उ. ३, सूत्र ३३७ पृ २४१

चार कारणो से जीव और पुद्गल लोकान्त से ब हर (अलोक मे) गमन करने मे समर्थ नही होते। वे चार कारण ये हैं—(१) गति का अभाव होने से (२) धर्मास्तिकाय रूप निमित्त का अभाव होने से (३) रूक्षता के कारण और (४) लोक की मर्यादा होने से।

अलोक में अन्य द्रव्यों का अभाव

[७] दव्वओ ण अलोए णेवत्थि जीवदव्वा, णेवत्थि अजीवदव्वा,
णेवत्थि जीवाजीवदव्वा,
एगे अजीवदव्वदेसे—जाव[1]—सव्वागासअणंतभागूणे। कालओ ण अलोए न कयाइ नासि—जाव[2]—णिच्चे। भावओ ण अलोए नेवत्थि वन्नपज्जवा—जाव[3]—नेवत्थि अगुरुलहुयपज्जवा।
एगे अजीवदव्वदेसे—जाव[4]—अणतभागूणे।

—विवा. भाग ३, श. ११, उ १०, पृ. २३०, ३१

---

१. विवा० भाग १, श० २, उ० १०, प्र० ६७, पृ० ३१०।
२. विवा० भाग १, श० १, उ० १०, पृ० २३५।
३. ,, ,, ,, ,, ,,
४. विवा० भाग १, श० २, उ० १०, प्र० ६७, पृ० ३१०।

[७] द्रव्य से अलोक मे जीवद्रव्य नही हैं, अजीवद्रव्य नही हैं, जीवाजीवद्रव्य नही हैं। एक अजीवद्रव्यदेश है—यावत्—सर्वाकाश से अनन्तभाग न्यून है।
काल से अलोक कभी नही था, ऐसा नही है—यावत्—नित्य है।
भाव से अलोक मे वर्णपर्यव नही है—यावत्—अगुरुलघुपर्यव नही है।
वह एक अजीवद्रव्यदेश है—यावत्—अनन्तभाग न्यून है।

[८] [१] प्र०—अलोगागासे ण भते ! किं जीवा, पुच्छा तह चेव ?

उ०—गोयमा ! नो जीवा—जाव[1]—नो अजीवपएसा,
एगे अजीवदव्वदेसे, अगुरुलहुए, अणतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते, सव्वागासे अणतभागूणे।

—विवा भाग १, श० १, उ० १०, प्र० ६७, पृ० ३१०

[८] [१] प्र०—भगवन् ! क्या अलोकाकाश मे जीव, जीवदेश—यावत्—अजीवप्रदेश हैं ?
उ०—गौतम ! (अलोक मे) जीव—यावत्—अजीवप्रदेश नही हैं, केवल एक अजीवद्रव्यदेश अर्थात् आकाश भाग है, जो अगुरुलघु है, अनन्त अगुरुलघु गुणो से युक्त है तथा सम्पूर्ण आकाश से अनन्तवा भाग न्यून है।

[९] [१] प्र०—अलोए ण भते ! किं जीवा० ?

उ०—एव चेव।

[२] प्र०—अलोगस्स ण भते ! एगमि आगासपएसे पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! नो जीवा, नो जीवदेसा, त चेव—जाव[2]—अणतेहिं अगुरुयलहुयगुणेहिं सजुत्ते सव्वागासस्स अणतभागूणे।

—विवा भाग ३, श० ११, उ० १०, प्र० १५-१७, पृ० २३०

[९] [१] प्र०—भगवन् ! क्या अलोक मे जीव आदि है ?
उ०—इसका उत्तर उसी प्रकार है।

[२] प्र०—भगवन् ! अलोक के एक आकाशप्रदेश मे क्या जीव, जीवदेश आदि हैं ?
उ०—गौतम ! (अलोक के एक आकाशप्रदेश मे) जीव नही हैं, जीवदेश नही हैं इत्यादि। वहा केवल एक अजीवद्रव्यदेश है, जो अगुरुलघु है, अनन्त अगुरुलघु गुणो से युक्त है तथा समस्त आकाश से अनन्ततम भाग न्यून है।

---

१ विवा भाग १, श० १, उ० १०, प्र० ६६, पृ० ३१०।
२ ,, ,, ,, ,, प्र० ६७, पृ० ३१०।

लोक

लोक के प्रकार

[१] एगे लोए।

—ठा० १, ५, सम० १, १.

[१] लोक एक है।

[२] तिविहे लोगे पण्णत्ते, तजहा—
णामलोगे, ठवणालोगे, दव्वलोगे।

—ठा ३, २, सू १५३ पृ० १२१

[२] लोक तीन प्रकार का कहा है, यथा—
नामलोक, स्थापनालोक, द्रव्यलोक।

[३] रायगिहे—जाव—एवं वयासी—
[१] प्र०—कतिविहे ण भते! लोए पण्णत्ते?
उ०—गोयमा! चउव्विहे लोए पण्णत्ते तंजहा—
दव्वलोए, खेत्तलोए, काललोए, भावलोए

—विवा० भा. ३ श. ११ उ. ११ प्र. २ पृ० २३४

[४] [१] प्र०—खेत्तलोए णं भते! कतिविहे पण्णत्ते?
उ०—गोयमा! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा—
अहोलोयखेत्तलोए, तिरियलोयखेत्तलोए, उड्ढलोयखेत्तलोए।

—विवा. भा. ३ श. ११, उ १० प्र. १–५, पृ० २२८
—ठा. अ. ३ उ. २ सूत्र १५३
—अनु. सू. १४५ पृ० ५५१

राजगृह नगर मे—यावत्—इस प्रकार कहा—
[३] [१] प्र०—भगवन्! लोक कितने प्रकार का कहा है?
उ०—गौतम! चार प्रकार का कहा ह, वह इस प्रकार है—
द्रव्यलोक, क्षेत्रलोक, काललोक, भावलोक।
[४] [१] प्र०—भगवन्! क्षेत्रलोक कितने प्रकार का कहा है?
उ०—गौतम! तीन प्रकार का कहा है, यथा—
अधोलोकक्षेत्रलोक, तिर्यक्लोकक्षेत्रलोक, ऊर्ध्वलोकक्षेत्रलोक।

[५] तिविहे भावलोके पण्णत्ते तजहा—
णाणलोगे, दसणलोगे, चरित्तलोगे।

—ठा. ३, २, सू. १५३ पृ० १२१

[५] भावलोक तीन प्रकार का कहा है—
ज्ञानलोक, दर्शनलोक, चारित्रलोक।

लोक का स्वरूप

[६] धम्मो अहम्मो आगासं, कालो पुग्गल जतवो।
एस लोगो त्ति पन्नत्तो, जिणेहिं वरदसिहिं॥

—उत्तर अ २८ गा ७

[६] केवलदर्शी जिनेश्वरो ने धर्म, अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल तथा जीवरूप लोक कहा है।

[७] [१] प्र०—किमियं भंते ! लोएत्ति पवुच्चइ ?

उ०—गोयमा ! पंचत्थिकाया,
एस णं एवइए लोए इ पवुच्चइ, तंजहा—
धम्मत्थिकाए, अहम्मत्थिकाए—जाव—पोग्गलत्थिकाए ।

—विवा भा ३, श. १३, उ ४, प्र १३, पृ० ३१५

[७] [१] प्र०—भगवन् ! यह लोक (इस लोक का स्वरूप) क्या है ?

उ०—गौतम ! यह लोक पंचास्तिकाय रूप है । पंचास्तिकाय इस प्रकार हैं—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाम आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय ।

[८] [१] प्र०—के अयं लोए ?

उ०—जीवच्चेव, अजीवच्चेव ।

—ठा अ. २, उ ४, सू १०३, प्र० ९० ।

प्र०—यह लोक क्या है ?

[८] [१] उ०—लोक जीव और अजीव रूप है ।

[९] [१] प्र०—से नूणं भंते ! असंखेज्जे लोए अणंता राइंदिया उप्पज्जिंसु वा, उप्पज्जंति वा, उप्पज्जिस्संति वा ?
विगच्छिंसु वा, विगच्छंति वा, विगच्छिस्संति वा ?
परित्ता राइंदिया उप्पज्जिंसु वा ३ ?
विगच्छिंसु वा ३ ?

उ०—हंता अज्जो ! असंखेज्जे लोए अणंता राइंदिया तं चेव ।

[२] प्र०—से केणट्ठेणं—जाव—विगच्छिस्संति वा ?

उ०—से नूणं भे अज्जो ! पासेणं अरहया पुरिसादाणीएणं सासए लोए वुइए, अणादीए, अणवदग्गे, परित्ते, परिवुडे
हेट्ठा विच्छिन्ने,[1] मज्झे संखित्ते, उप्पिं विसाले,
अहे पलियंकसंठिए, मज्झे वरवइरविग्गहिते, उप्पिं उद्धमुइंगाकारसंठिए,
तंसि च णं सासयंसि लोगंसि अणादियंसि अणवदग्गंसि परित्तंसि परिवुडंसि,
हेट्ठा विच्छिन्नंसि, मज्झे संखित्तंसि, उप्पिं विसालंसि,
अहे पलियंकसंठियंसि, मज्झे वरवइरविग्गहियंसि, उप्पिं मुइंगाकारसंठियंसि
अणंता जीवघणा उप्पज्जित्ता २ निलीयंति, परित्ता जीवघणा उप्पज्जित्ता २ निलीयंति,
से नूणं भूए उप्पन्ने विगए परिणए अजीवेहिं लोक्कंति, पलोक्कइ ।

---

१ प्र०—लोए णं भंते ! किंसंठिए पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! सुपइट्ठगसंठिए पण्णत्ते, तंजहा—
हेट्ठा विच्छिन्ने, मज्झे संखित्ते, उप्पिं उड्ढमुइंगाकारसंठिए पण्णत्ते ।

—विवा भाग ३ श ७, उ १, प्र. ४, पृ० २
—विवा भाग ३ श ११ उ १० प्र ६, पृ० २२९
—विवा भाग ३ श. १३, उ ४, प्र. ४७, पृ० ३२३

प्र०—भगवन् ! लोक का आकार कैसा है ?
उ०—गौतम ! सुप्रतिष्ठक (शराव-सिकोरा) के आकार का है । नीचे से विस्तीर्ण, मध्य मे संक्षिप्त और ऊपर ऊर्ध्वमुख मृदंग के समान है ।

जे लोक्कइ से लोए
हंता भगवं !
से तेणट्ठेण अज्जो ! एवं वुच्चइ असंखेज्जे तं चेव ।

—विवा० भाग २, श० ५, उ० ९, प्र० १५-१६ पृ० २४९-५०

[९] [१] प्र०—(पार्श्वापत्य स्थविर श्रमण भगवान् महावीर से पूछते हैं–) भगवन् ! क्या असख्य लोक मे अनन्त रात्रि-दिवस हुए है, होते हैं और होगे ? विगत (व्यतीत) हुए हैं, विगत होते हैं व विगत होगे ? परित्त (नियत परिमाण वाले) रात्रि-दिवस हुए हैं, होते हैं व होगे ? परित्त रात्रि-दिवस विगत हुए है, विगत होते हैं व विगत होंगे ?

उ०—हाँ आर्यो ! असख्य लोक मे अनन्त रात्रि-दिवस हुए हैं, होते हैं व होगे—यावत्—परित्त रात्रि-दिवस विगत हुए हैं, विगत होते है व होगे ।

[२] प्र०—ऐसा क्यो ?

उ०—क्योकि पुरुषादानीय अर्हन्त पार्श्व ने कहा है—लोक शाश्वत, अनादि, अनन्त, परित्त एव परिवृत (अलोक से घिरा हुआ) है । आकार की दृष्टि से यह नीचे विस्तीर्ण, मध्य मे सकीर्ण तथा ऊपर विशाल है । नीचे पल्यक के सदृश, मध्य मे श्रेष्ठ वज्र के समान एव ऊपर खडे मृदग के तुल्य है । ऐसे लोक मे अनन्त जीवघन (असख्यप्रदेशी जीव) उत्पन्न हो-हो कर मरते रहते हैं, परित्त-मर्यादित जीवघन उत्पन्न हो-हो कर मरते रहते हैं । इस दृष्टि से लोक भूत, उत्पन्न, विगत एव परिणत है । यह लोक अजीवादि पदार्थों द्वारा जाना एव पहचाना जाता है ।
जो जाना जाय वह लोक कहलाता है न ?
हाँ भगवन् ! बात ऐसी ही है ।
आर्यो ! इसलिए यह कहा गया है कि लोक मे असख्य रात्रि-दिवस हुए है,—यावत्–वह इसी प्रकार का है ।

लोक का विस्तार

[१०][१] प्र०—केमहालए ण भते ! लोए पण्णत्ते ?

उ०—महइमहालए लोए पण्णत्ते,
पुरत्थिमेण असखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ, दाहिणेणं असखिज्जाओ एव चेव, एव पच्चत्थिमेण वि, एव उत्तरेणं वि, उड्ढं पि, अहे असखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयामविक्खमेण ।

— विवा० भाग ३, श० १२, उ० ७, प्र० १, पृ० १८२
— विवा० भाग ४, श० १६, उ० ८, प्र० १, पृ० २१

[१०][१] प्र०—भगवन् ! लोक कितना वडा है ?

उ०—लोक अत्यन्त विशाल है । वह पूर्व मे असख्य कोडाकोडी योजन है । इसी प्रकार दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, ऊर्ध्व एव अधोदिशा मे भी असख्य कोडाकोडी योजन लम्बा-चौडा है ।

[११][१] प्र०—लोए णं भते ! केमहालए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अयण्ण जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीव०—जाव—परिक्खेवेण, ते णं काले ण ते ण समए ण छ देवा महिड्ढीया—जाव—महासोक्खा जबुद्दीवे दीवे मदरे पव्वए मदरचूलियं सव्वओ समता संपरिक्खित्ताण चिट्ठिज्जा,
अहे णं चत्तारि दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ चत्तारि वलिपिडे गहाय जबुद्दीवस्स दीवस्स चउसु वि दिसासु वहियाऽभिमुहीओ ठिच्चा ते चत्तारि वलिपिडे जमगसमगं वहियाऽभिमुहे पक्खिवेज्जा, पभू णं गोयमा ! ताओ एगमेगे देवे ते चत्तारि वलिपिडे धरणितलमसपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए

ते ण गोयमा ! देवा ताए उक्किट्ठाए—जाव—देवगईए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाते,
एव दाहिणाभिमुहे, एव पच्चत्थाभिमुहे, एव उत्तराभिमुहे,
एव उड्ढाभिमुहे, एगे देवे अहोभिमुखे पयाए ।
ते ण काले ण ते ण समए ण वाससहस्साउए दारए पयाए,
तए ण तस्स दारगस्स अम्मापियरो पहीणा भवति,
णो चेव ण ते देवा लोगत सपाउणति,
तए ण तस्स दारगस्स आउए पहीणे भवति,
णो चेव ण ते देवा लोगत सपाउणति,
तए ण तस्स दारगस्स अट्ठिमिजा पहीणा भवति,
णो चेव ण ते देवा लोगत सपाउणति,
तए ण तस्स दारगस्स आसत्तमे वि कुलवसे पहीणे भवति,
णो चेव ण ते देवा लोगत सपाउणति,
तए ण तस्स दारगस्स नामगोए वि पहीणे भवति,
णो चेव ण ते देवा लोगत सपाउणति,

[२] प्र०—तेसि ण भते ! देवाण कि गए वहुए, अगए वहुए ?

उ०—गोयमा ! गए वहुए, नो अगए वहुए,
गयाउ से अगए असखेज्जइभागे, अगयाउ से गए असखेज्जगुणे,
लोए ण गोयमा ! एमहालए पण्णत्ते ।

—विवा भाग ३ श ११ उ १० प्र १९ पृ० २३१

[११][१] प्र०—भगवन् ! लोक कितना वडा है ?

उ०—गौतम ! यह जम्बूद्वीप नामक द्वीप सर्व द्वीप–समुद्रो के मध्य मे स्थित है । महर्द्धिक—यावत्—महासुख सम्पन्न छह देव जम्बूद्वीप के मध्य मे रहे हुए मेरु पर्वत पर उसकी चूलिका (चोटी) को चारो ओर से घेर कर खडे रहे । नीचे चार महत्‌दिक्कुमारियाँ चार वलिपिंड ग्रहण कर जम्बूद्वीप की चारो दिशाओ मे वाह्यमुख खडी हो । वे दिक्कुमारियाँ चारो वलिपिंडो को एक साथ वाहर फेंकें । ऐसी दशा मे, हे गौतम ! उन देवो मे से प्रत्येक देव चारो वलिपिंडो को पृथ्वी पर गिरने से पूर्व ही ग्रहण कर लेता है । इस प्रकार की गति वाले देवो मे से एक उत्कृष्ट—यावत्—तीव्र गति से पूर्व मे, एक दक्षिण मे, एक पश्चिम मे, एक उत्तर मे, एक ऊर्ध्व दिशा मे और एक अधो-दिशा मे गया ।

उस समय एक सहस्र वर्ष की आयु वाला एक वालक जन्मा । कालक्रम से उस वालक के माता-पिता का देहावमान हुआ । तव भी वे देवलोक का अन्त (छोर) प्राप्त न कर सके । वालक की आयु क्षीण हुई, फिर भी वे देवलोक का अन्त न पा सके । वालक की अस्थि और मज्जा विनष्ट हो गई, तव भी उन्हे लोक का अन्त न मिला । वालक की सात पीढियो के वाद वह कुल-वश नष्ट हो गया, फिर भी वे लोक का अन्त प्राप्त करने मे असमर्थ रहे । धीरे-धीरे वालक के नाम-गोत्र भी लुप्त हो गये, तव भी उन्हे लोक का अन्त न मिला ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस मे देवो द्वारा उल्लघित क्षेत्र अधिक है अथवा अनुल्लघित क्षेत्र ?

उ०—गौतम ! इसमे उल्लघित क्षेत्र अधिक है, अनुल्लघित क्षेत्र कम । अनुल्लघित क्षेत्र उल्लघित क्षेत्र का असख्यातवाँ भाग है और उल्लघित क्षेत्र अनुल्लघित क्षेत्र से असख्यातगुण है । गौतम ! लोक इतना वडा है ।
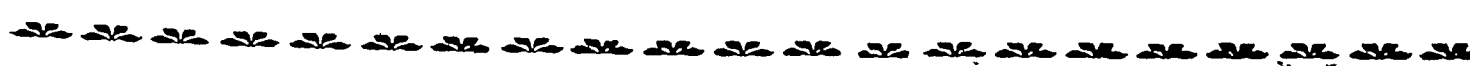
लोक--सान्त और अनन्त

[१२] जे वि य ते खदया ! अयमेयारूवे अज्झत्थिए—जाव—समुप्पज्जित्था—

[१] प्र०—किं सअंते लोए, अणंते लोए ? तस्स वि य ण अय अट्ठे,

उ०—एवं खलु खदया ! चउव्विहे लोए पण्णत्ते, तंजहा—

दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ ।

दव्वओ ण एगे लोए सअंते,

खेत्तओ णं लोए असखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयाम-विक्खभेणं,

असखेज्जाओ जोअणकोडाकोडीओ परिक्खेवेण पण्णत्ते,

अत्थि पुण से अंते,

कालओ ण लोए ण कयाइ न आसी, न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भविसु य, भवति य, भविस्सइ य,

धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए, णिच्चे,

नत्थि पुण से अते,

भावओ ण लोए अणंता वण्णपज्जवा, गध-रस-फासपज्जवा, अणंता संठाणपज्जवा, अणता गरुअलहुअपज्जवा, अणता अगरुअलहुअपज्जवा,

नत्थि पुण से अते ।

सेत्त खदगा ! दव्वओ लोए सअते, खेत्तओ लोए सअते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणते ।

—विवा भाग १, श. २, उ १, पृ० २३५

स्कन्दक ! लोक सान्त है या अनन्त है, इस प्रकार का जो अध्यवसाय तुम्हे उत्पन्न हुआ है, उसका भी अर्थ यह है—

हे स्कन्दक ! लोक चार प्रकार का कहा गया है, यथा—द्रव्यलोक, क्षेत्रलोक, काललोक और भावलोक । इनमे से द्रव्यलोक एक और सान्त है । क्षेत्रलोक असख्य कोडाकोडी योजन लम्बा-चौडा है । इसकी परिधि असख्य कोडाकोडी योजन की है । यह भी सान्त है । काललोक कभी नही था, नही है अथवा नही होगा, ऐसी बात नही है । यह सदैव था, सदैव है और सदैव होगा । यह ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित एव नित्य है । इसका अन्त नही है । भावलोक अनन्त वर्णपर्यायिरूप, (अनन्त) गध-रस-स्पर्शपर्यायिरूप, अनन्त सस्थानपर्यायिरूप, अनन्त गुरुलघुपर्यायिरूप तथा अनन्त अगुरुलघुपर्यायिरूप है । इसका भी अन्त नही है । इस प्रकार द्रव्य से और क्षेत्र से लोक सान्त है तथा काल से और भाव से लोक अनन्त है ।

लोकस्थिति

[१३] अट्ठविहा लोकट्ठिई पण्णत्ता, तजहा—

(१) आगासपइट्ठिए वाए, (२) वायपइट्ठिए उदही,
(३) उदहिपइट्ठिया पुढवी, (४) पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा,
(५) अजीवा जीवपइट्ठिया, (६) जीवा कम्मपइट्ठिया,
(७) अजीवा जीवसंगहिया (८) जीवा कम्मसंगहिया ।

—ठा अ. ३, उ. २, सू. १६३, पृ० १२६
—ठा अ ४, उ २, सू २८६, पृ० २०२
—ठा अ. ६, सू ४६८, पृ० ३४०
—ठा अ. ८, सू ६००, पृ० ४००
—विवा. भाग १, श. १, उ ६, प्र. २२४, पृ० १६६-७०

लोकस्थिति आठ प्रकार की कही गई है, यथा—(१) आकाशप्रतिष्ठित वायु (२) वायुप्रतिष्ठित उदधि (३) उदधिप्रतिष्ठित पृथ्वी (४) पृथ्वीप्रतिष्ठित त्रस-स्थावर प्राणी (५) जीवप्रतिष्ठित अजीव (६) कर्मप्रतिष्ठित जीव (७) जीवसगृहीत अजीव (८) कर्मसगृहीत जीव ।

[१४][१] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ-अट्ठविहा-जाव-जीवा कम्मसगहिया ?

उ०—गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे बत्थिमाडोवेइ,
बत्थिमाडोवेत्ता उप्पि सित बधइ, बधइत्ता मज्झेण गठि बधइ,
बन्धइत्ता उवरिल्ल गठि मुयइ, मुइत्ता उवरिल्ल देस वामेइ,
उवरिल्ल देस वामेत्ता उवरिल्ल देस आउयायस्स पूरेई,
पूरित्ता उप्पि सित बधइ, बधित्ता मज्झिमगठि मुयइ,
इत्ता से णूण गोयमा ! से आउयाये वाययायस्स उप्पि उवरिमतले चिट्ठइ ?
हता चिट्ठइ ।
से तेणट्ठेण—जाव-जीवा कम्मसगहिया ।
से जहा वा केइ पुरिसे बत्थि आडोवेइ,
आडोवेत्ता कडीए ब्रधइ, बधइत्ता अत्थाह-मतार-मपोरसियसि उदगसि ओगाहेज्जा,
से णूण गोयमा ! से पुरिसे तस्स आउयायस्स उवरिमतले चिट्ठइ ?
हता चिट्ठइ ।
एव वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पण्णत्ता—जाव—जीवा कम्मसगहिया ।

प्र०—भगवन् ! ऐसा क्यो कहा गया है कि लोकस्थिति आठ प्रकार की है, इत्यादि ?

उ०—गौतम ! जैसे कोई पुरुष हवा से चर्म-मसक को फुला कर उसका मुख बद कर दे एव मध्य मे गाठ बाध कर मसक का मुख खोल दे । हवा निकल जाने पर ऊपर के भाग मे पानी भर दे । तदनन्तर मसक का मुख बाध कर मध्य की गाठ खोल दे । परिणाम यह होगा कि वह भरा हुआ पानी हवा के ऊपरी भाग मे ही रहेगा । इसी कारण, गौतम ! लोकस्थिति आठ प्रकार की कही गई है ।

अथवा कोई पुरुष चर्म-मसक को हवा से फुलाकर अपने कटिप्रदेश मे बाधे एव अथाह, अतार तथा पुरुष-प्रमाण से अधिक गहरे पानी मे उतरे । ऐसी स्थिति मे वह पुरुष पानी मे न डूबता हुआ उसके ऊपरी भाग पर ही तैरता रहेगा । इसी दृष्टि से लोकस्थिति आठ प्रकार की कही गई है ।

[१५] दसविहा लोगट्ठिई पण्णत्ता तंजहा—

१–जण्णं जीवा उद्दाइत्ता २ तत्थेव २ भुज्जो-भुज्जो पच्चायति, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,
२–जण्णं जीवाणं सया समिय पावे कम्मे कज्जइ, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,
३–जण्णं जीवा सया समिय मोहणिज्जे पावे कम्मे कज्जइ, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,
४–ण एव भूय वा भव्व वा भविस्सइ वा ज जीवा अजीवा भविस्सति, अजीवा वा जीवा भविस्सति, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,
५–ण एव भूय वा भव्व वा भविस्सइ वा ज तसा पाणा वोच्छिज्जिसति, थावरा पाणा वोच्छिज्जिसति, तसा पाणा भविस्सति वा, एव पि एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,
६–ण एव भूय वा३ ज लोगे अलोगे भविस्सइ, अलोगे वा लोगे भविस्सइ, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,
७–ण एव भूय वा३ ज लोए अलोए पविस्सइ, अलोए वा लोए पविस्सइ, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,
८–जाव ताव लोगे ताव ताव जीवा, जाव ताव जीवा ताव ताव लोगे,
९–जाव ताव जीवाण य पोग्गलाण य गइपरियाए ताव ताव लोए, जाव ताव लोए ताव ताव जीवाण य पोग्गलाण य गइपरियाए, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता,

१०—सव्वेसु वि ण लोगंतेसु अवद्धपासपुट्ठा पोग्गला लुक्खत्ताए कज्जति जेणं जीवा य पोग्गला य नो संचायति वहिया लोगता गमणयाए, एव एगा लोगट्ठिई पण्णत्ता ।

—ठा० अ० १० सू० ७०४ पृ० ४४६

लोकस्थिति दस प्रकार की कही गई है, यथा—

१—जीवो का मर कर पुन पुन वही उत्पन्न होना ।

२—जीवो का सदैव पापकर्म करते रहना ।

३—जीवो का सदैव मोहनीय पापकर्म करते रहना ।

४—तीनो कालो मे से किसी भी काल मे जीवो का अजीव न होना और अजीवो का जीव न होना ।

५—तीनो कालो मे से किसी भी काल मे त्रस अथवा स्थावर जीवो का उच्छेद न होना ।

६—तीनो कालो मे से किसी भी काल मे लोक का अलोक के रूप मे और अलोक का लोक के रूप मे परिणत न होना ।

७—तीनो कालो मे से किसी भी काल मे लोक का अलोक मे और अलोक का लोक मे प्रवेश न होना ।

८—जव तक लोक है तब तक जीव है और जव तक जीव हैं तव तक लोक है ।

९—जव तक जीवो तथा पुद्गलो का गतिपर्याय है तव तक लोक है और जव तक लोक है तव तक जीवो का गतिपर्याय है ।

१०—समस्त लोकान्तो मे अवद्ध-पार्श्व स्पृष्ट पुद्गल रूक्षता को प्राप्त होते हैं, जिससे जीव और पुद्गल लोकान्त से वाहर जाने मे समर्थ नही होते ।

लोक का आयाममध्य

[१६][१] प्र०—कहि ण भते ! लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरस्स असंखेज्जतिभागं ओगाहेत्ता एत्थ णं लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ।

प्र०—भगवन् ! लोक का आयाममध्य (लम्वाई का वीच का भाग) कहा है ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अवकाशान्तर का असख्यातवा भाग उल्लघन करने पर लोक का आयाममध्य है ।

लोक का सम भाग

[१७][१] प्र०—कहि णं भते ! लोए बहुसमे ?

कहि ण भते ! लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिम-हेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु एत्थ णं लोए बहुसमे, एत्थ ण लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते ।

प्र०—भगवन् ! लोक का समभाग कहा है ?

भगवन् ! लोक का सवसे सक्षिप्त (छोटा) भाग कहा है ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी पर नीचे के छोटे प्रतरो मे लोक का सममाग है । यही लोक का सबसे छोटा भाग है ।

लोक का वक्र भाग

[१८][१] प्र०—कहि ण भते ! विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! विग्गहकंडए एत्थ ण विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते ।

प्र०—भगवन् ! लोक वक्रतायुक्त कहा है ?

उ०—गौतम ! जहा विग्रह कडक[1] (वक्रतायुक्त अवयव) है वही लोक वक्रतायुक्त है ।

---

१. लोकरूप शरीर का ब्रह्म-देव लोक रूप कोहनी का भाग है । वहां प्रदेशो की हानि-वृद्धि होने से वक्र अवयव है ।

लोक के साथ स्पर्श

[१९][१] प्र०—लोगे णं भंते ! किणा फुडे, कइहिं वा काएहिं फुडे, किं धम्मत्थिकाएण फुडे, धम्मत्थिकायस्स देसेण फुडे, धम्मत्थिकायस्स पदेसेहिं फुडे, एवं अधम्मत्थिकाएणं, एएणं भेदेण—जाव—पुढविकाएण फुडे—जाव—तसकाएण, अद्धासमएण फुडे ?

उ०—गोयमा ! धम्मत्थिकाएण फुडे, नो धम्मत्थिकायस्स देसेण फुडे, धम्मत्थिकायस्स पदेसेहिं फुडे, एवं अधम्मत्थिकाएण वि, नो आगासत्थिकाएण फुडे, आगासत्थिकायस्स देसेण फुडे, आगासत्थिकायस्स पदेसेहिं—जाव—वणस्सइकाएण फुडे, तसकाएण सिय फुडे, अद्धासमएण देसे णो फुडे।

—पण्ण० १५ इन्द्रियपद, सू १९८

प्र०—भगवन् ! लोक किससे स्पृष्ट है ? क्या धर्मास्तिकाय से स्पृष्ट है ? धर्मास्तिकाय के (एक) देश से स्पृष्ट है ? धर्मास्तिकाय के प्रदेशो से स्पृष्ट है ? इसी प्रकार क्या अधर्मास्तिकाय से, इन्ही भेदो से—यावत्—पृथ्वीकाय, त्रसकाय, अद्धासमय आदि से स्पृष्ट है ?

उ०—गौतम ! (लोक) धर्मास्तिकाय से स्पृष्ट है। धर्मास्तिकाय के (एक) देश से स्पृष्ट नही है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय से भी जानना चाहिए। आकाशास्तिकाय से स्पृष्ट नही है। आकाशास्तिकाय के (एक) देश मे स्पृष्ट है। आकाशास्तिकाय के प्रदेशो से—यावत्—वनस्पतिकाय से स्पृष्ट है। त्रसकाय से कथचित् स्पृष्ट है। अद्धासमय से देशत स्पृष्ट नही है।

[२०] चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे पण्णत्ते तंजहा—
धम्मत्थिकाएणं, अधम्मत्थिकाएणं, जीवत्थिकाएणं, पुग्गलत्थिकाएणं,
चउहिं बादरकाएहिं उववज्जमाणेहिं लोगे फुडे पण्णत्ते तंजहा—
पुढविकाइएहिं, आउ० वाउ० वणस्सइकाइएहिं

—ठा अ ४ उ ३ सू ३३३ पृ० २३९

चार अस्तिकायो से लोक स्पृष्ट है, यथा—
धर्मास्तिकाय से, अधर्मास्तिकाय से, जीवास्तिकाय से और पुद्गलास्तिकाय से
लोक चार उत्पद्यमान बादर कायो से स्पृष्ट है, यथा—
पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय।

[२१][१] प्र०—लोयंते भंते ! अलोयंत फुसइ, अलोयंते वि लोयंत फुसइ ?
उ०—हंता गोयमा ! लोयंते अलोयंत फुसइ, अलोयंते वि लोयंत फुसइ।
[२] प्र०—तं भंते ! किं पुट्ठं फुसइ, अपुट्ठं फुसइ ?
उ०—जाव णियमा छद्दिसिं फुसइ।

—विवा० भाग १ श १ उ ६ प्र २०२-३ पृ०१६३-६४

[२२][१] प्र०—अहोलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति ?
उ०—गोयमा ! सातिरेगं अद्धं फुसति।
[२] प्र०—तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! असंखेज्जइभागं फुसइ।
[३] प्र०—उड्ढलोए णं भंते ! पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! देसूणं अद्धं फुसइ।

—विवा भाग १ श २ उ० १० प्र ७०-७२ पृ ३१३

प्र०—भगवन् ! क्या लोकान्त-लोक का अन्तिम भाग-अलोकान्त को स्पर्श करता है ? क्या अलोकान्त लोकान्त को स्पर्श करता है ?

उ०—हां गौतम ! लोकान्त अलोकान्त को स्पर्श करता है और अलोकान्त लोकान्त को स्पर्श करता है।

प्र०—भगवन्! वे क्या स्पृष्ट होकर स्पर्श करते हैं अथवा अस्पृष्ट होकर ?

उ०—वे-यावत्-नियमत चारो दिशाओ मे स्पृष्ट हैं।

प्र०—भगवन्! अधोलोक धर्मास्तिकाय का कितना भाग स्पर्श करता है ?

उ०—गौतम! (अधोलोक धर्मास्तिकाय का) आधे से अधिक भाग स्पर्श करता है।

प्र०—भगवन्! तिर्यक् लोक के विषय मे बताइये ?

उ०—गौतम! (तिर्यक् लोक धर्मास्तिकाय का) असख्यातवा भाग स्पर्श करता है।

प्र०—भगवन्! ऊर्ध्वलोक के सम्बन्ध मे भी बताइये ?

उ०—गौतम! (ऊर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय का) किंचित् न्यून अर्धभाग स्पर्श करता है।

लोक-परिज्ञान

[२३] आययचक्खू लोगविपस्सी
लोगस्स अहोभागं जाणइ,
" उड्ढं भाग जाणइ,
" तिरियभाग जाणइ,

—आचा. श्रु. १ अ. २ उ ५

विशालदृष्टि लोकदर्शी लोक के अधोभाग को जानता है, ऊर्ध्वभाग को जानता है, तिर्छे भाग को जानता है।

[२४] लोयं अयोणित्तिह केवलेणं, कहंति जे धम्ममजाणमाणा।
णासंति अप्पाण पर व णट्ठा संसार घोरम्मि अणोरपारे॥
लोय विजाणतिह केवलेण, पुन्नेण नाणेण समाहिजुत्ता।
धम्म समत्तं च कहंति जे उ, तारंति अप्पाण पर च तिन्ना॥

—सूत्र, श्रु. २ अ ६ उ २ गा ४९-५०

जो अज्ञानी केवल ज्ञान से लोक को न जान कर धर्म का निरूपण करते हैं वे अपना और दूसरे का भी नाश करते हैं। वे अपार एव घोर ससार मे भ्रमण करते हैं।

जो समाधिमान् पुरुष पूर्ण केवल ज्ञान द्वारा लोक को जानते हैं और फिर धर्म का कथन करते हैं, वे तीर्ण पुरुष स्व-पर को तारते हैं।

[२५] अणादीयं परिन्नाय, अणवदग्गति वा पुणो।
सासयमसासए वा, इइ दिट्ठि न धारए॥
एएहि दोहिं ठाणेहिं, ववहारो ण विज्जइ।
एएहि दोहिं ठाणेहिं, अणायार तु जाणए॥

—सूत्र श्रु २ अ. ५ उ २ गाथा २-३

(लोक को) अनादि और अनन्त जान कर वह एकान्त शाश्वत (नित्य) है या एकान्त अशाश्वत (अनित्य) है, ऐसी दृष्टि धारण न करे।

इन दोनो (एकान्त) स्थानो से व्यवहार नही होता। इन दोनों स्थानो (को स्वीकार करने) से अनाचार जानना चाहिये।

लोक की नित्यता-अनित्यता

[२६] जमालीति समणे भगवं महावीरे जमालिं अणगार एव वयासी—सासए लोए जमाली! जन्न कयावि णासी-जाव-अवट्ठिए, णिच्चे,
असासए लोए जमाली! जओ ओसप्पिणी भवित्ता उस्सप्पिणी भवइ,
उस्सप्पिणी भवित्ता ओसप्पिणी भवइ।

—विवा भाग ३ श ९ उ. ३३ पृ १८१

'जमालि' इस प्रकार सम्बोधन करके श्रमण भगवान् महावीर जमाली अनगार को इस प्रकार कहते हैं—जमालि ! लोक शाश्वत है । लोक कभी नही था, नही है, नही रहेगा, ऐसी बात नही है । लोक था, है और रहेगा । यह ध्रुव, नियत शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित और नित्य है ।

जमालि ! लोक अशाश्वत भी है, क्योकि वह अवसर्पिणी होकर उत्सर्पिणी रूप होता है और उत्सर्पिणी होकर अवसर्पिणीरूप होता है ।

[२७] अदुवा वायाओ विप्पउजति, तजहा—
अत्थि लोए, नत्थि लोए,
धुवे लोए, अधुवे लोए,
साइए लोए, अणाइए लोए,
सपज्जवसिए लोए, अपज्जवसिए लोए ।

—आचा श्रु १ अ ८ उ १

अथवा (अन्यतीर्थिक) इस प्रकार वचन कहते हैं, यथा—
लोक (एकान्तत) है, लोक (एकान्तत) नही है,
लोक ध्रुव (ही) है, लोक अध्रुव (ही) है,
लोक सादि (ही) है, लोक अनादि (ही) है,
लोक सान्त (ही) है, लोक अनन्त (ही) है ।

लोक में धर्मास्तिकाय आदि का अवगाहन

[२८] प्र०—अहो लोए ण भते ! धम्मत्थिकायस्स केवतिय ओगाढे ?
उ०—गोयमा ! सातिरेग अद्ध ओगाढे ।
एव एएण अभिलावेणं-जाव-देसूण अद्ध ओगाढे ।

—विवा भाग ४ श २० उ० २ प्र ३ पृ १७

प्र०—भगवन् ! अधोलोक मे धर्मास्तिकाय का कितना भाग अवगाढ है ?
उ०—गौतम ! आधे से कुछ अधिक भाग अवगाढ है । इसी प्रकार तिर्यक्लोक और ऊर्ध्वलोक के विषय मे भी (स्पर्शन की भाति ही) यथावत् समझना चाहिये ।

लोक-रचना संबंधी विभिन्न मान्यताएँ

[२९] इणमन्न तु अन्नाणं, इहमेगेसिमाहिय ।
देवउत्ते अय लोए, बभउत्तेत्ति आवरे ।।
ईसरेण कडे लोए, पहाणाइ तहाऽवरे ।
जीवाजीवसमाउत्ते सुहदुक्खसमन्निए ।।
सयभुणा कडे लोए, इति वुत्त महेसिणा ।
मारेण सथुया माया, तेण लोए असासए ।।
माहणा समणा एगे, आह अडकडे जगे ।
असो तत्तमकासी अ, अयाणता मुस वदे ।।
सएहि परियायेहि, लोय वूया कडेत्ति य ।
तत्त ते ण विजाणति, ण विणासी कयाइ वि ।।

—सूत्र श्रु १ अ १ उ ३ गाथा ५-९

एक अज्ञान यह भी है—कोई कहते हैं कि यह लोक किसी देवता द्वारा बनाया गया है। दूसरे कहते हैं कि यह लोक ब्रह्मा का बनाया हुआ है,

कोई (ईश्वरकर्तृत्व वादी) कहते है कि जीव और अजीव से तथा सुख और दुःख से युक्त यह लोक ईश्वरकृत है। तथा दूसरे (सांख्यवादी) कहते हैं कि यह प्रधान (प्रकृति) आदि के द्वारा कृत है।

कोई कहते हैं कि हमारे महर्षि ने कहा है—इस लोक को स्वयभू (विष्णु आदि) ने बनाया है। यमराज ने माया की रचना की है, अत यह लोक अनित्य है।

कोई ब्राह्मण तथा श्रमण कहते हैं कि यह जगत् अण्डे से बना है तथा ब्रह्मा ने तत्त्व की रचना की है। ये लोक अज्ञानवश इस प्रकार मिथ्याभाषण करते है।

उल्लिखित वादी अपने-अपने अभिप्राय (युक्तिविशेष) से लोक को कृत-बना हुआ बतलाते हैं। वे वस्तु-स्वरूप को नही जानते। वस्तुत यह जगत् कभी विनष्ट नही होता।

लोक में अनन्त और शाश्वत

[३०][१] के अणता लोए ?
जीवच्चेव, अजीवच्चेव।
[२] के सासया लोए ?
जीवच्चेव, अजीवच्चेव।

—ठाणा, अ २ उ ४ सूत्र १०३ पृ ९०

प्र०—लोक मे अनन्त क्या है ?
उ०—लोक मे जीव अनन्त हैं, अजीव अनन्त हैं।
प्र०—लोक मे शाश्वत क्या है ?
उ०—लोक मे जीव और अजीव शाश्वत है।

लोक में द्विरूपता

[३१] जदत्थि णं लोगे त सव्व दुपओआरं, तंजहा—
जीवच्चेव, अजीवच्चेव।
तसे चेव, थावरे चेव,
सजोणियच्चेव, अजोणियच्चेव,
साउयच्चेव, अणाउयच्चेव,
सइंदियच्चेव, अणिंदियच्चेव,
सवेयगा चेव, अवेयगा चेव,
सरूवि चेव, अरूवि चेव,
सपोग्गला चेव, अपोग्गला चेव,
संसारसमावन्नगा चेव, असंसारसमावन्नगा चेव,
सासया चेव, असासया चेव।

—ठाणा, अ २ सूत्र ५७ पृ ३५

[३२] आगासा चेव, नोआगासा चेव,
धम्मे चेव, अधम्मे चेव।

—ठाणा, अ २ सूत्र ५८ पृ ३६

[३३] बंधे चेव, मोक्खे चेव,
पुन्ने चेव, पावे चेव,
आसवे चेव, सवरे चेव,
वेयणा चेव, निज्जरा चेव।

—ठाणा, अ २ सूत्र, ५९ पृ ३६

लोक मे जो कुछ है वह सव दो प्रकार का है, जैसे—जीव और अजीव, त्रस और स्थावर, सयोनिक और अयोनिक, सायुष्क और अनायुष्क, सेन्द्रिय और अनिन्द्रिय, सवेदक और अवेदक, रूपी और अरूपी, सपुद्गल और अपुद्गल, ससारसमापन्नक और असंसारसमापन्नक, शाश्वत और अशाश्वत। आकाश और नोआकाश, धर्म और अधर्म, वन्ध और मोक्ष, पुण्य और पाप, आस्रव और सवर, वेदना और निर्जरा।

लोक में जीव-अजीव

[३४][१] प्र०—लोगागासे ण भते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा,
अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा ?

उ०—गोयमा ! जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पएसा वि,
अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवप्पएसा वि,
जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, वेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पचिंदिया, अणिंदिया।
जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा—जाव—अणिंदियदेसा,
जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा—जाव—अणिंदियपएसा।
जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता, तजहा—
रूवी य, अरूवी य,
रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता तजहा—
खधा १, खधदेसा २, खधपएसा ३, परमाणुपोग्गला ४,
जे अरूवी ते पचविहा पण्णत्ता तजहा—
धम्मत्थिकाए—नोधम्मत्थिकायस्स देसे १, धम्मत्थिकायस्स पएसा २, अधम्मत्थिकाए—नो-धम्मत्थिकायस्स देसे ३, अधम्मत्थिकायस्स पएसा ४, अद्धासमए ५।

—विवा भाग ३ श २ उ १० प्र ६६ पृ० ३१०

प्र०—भगवन् ! लोक मे क्या जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश तथा अजीवप्रदेश हैं ?

उ०—गौतम ! (लोकाकाश मे) जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश तथा अजीवप्रदेश हैं। वहा जो जीव हैं वे एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय और अनिन्द्रिय—सिद्ध हैं। जो जीवदेश और जीवप्रदेश हैं, वे भी नियमत इन्ही के हैं।

जो अजीव हैं वे दो प्रकार के हैं—रूपी और अरूपी। रूपी चार प्रकार के हैं—स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणुपुद्गल। अरूपी पाच प्रकार के हैं—(१) धर्मास्तिकाय—नोधर्मास्तिकायदेश (२) धर्मास्तिकायप्रदेश (३) अधर्मास्तिकाय—नोअधर्मास्तिकायदेश (४) अधर्मास्तिकायप्रदेश और (५) अद्धासमय।

[३५][१] प्र०—लोए ण भते ! किं जीवा० ?
उ०—एव चेव—
नवर अरूवी सत्तविहा,
धम्मत्थिकाए—जाव—अधम्मत्थिकायस्स पएसा,
नोआगासत्थिकाए, आगासत्थिकायस्स देसे ५,
आगासत्थिकायपएसा ६,
अद्धासमए ७, सेस त चेव।

[२] प्र०—अहेलोगखेत्तलोए ण भते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा ?
उ०—एव जहा लोए—जाव—अद्धासमए।

[३] प्र०—तिरियलोए णं भंते ! किं जीवा० ?

उ०—एवं चेव। एवं उड्ढलोए वि,
नवरं अरूवी छव्विहा, अद्धासमओ नत्थि।

—विवा. भाग ३ श. ११ उ. १० प्र १३, ११, १२ पृ० २२९

प्र०—भगवन् ! लोक मे क्या जीव, जीवदेश आदि हैं ?

उ०—इस प्रकार जैसा लोकाकाश के विषय में कहा गया है वैसा ही यहाँ भी जानना चाहिए। विशेष यह है कि लोक मे सात प्रकार के अरूपी (अजीव) हैं—१–धर्मास्तिकाय, २–धर्मास्तिकाय–प्रदेश, ३–अधर्मास्तिकाय, ४–अधर्मास्तिकायप्रदेश, ५–नोआकाशास्तिकाय–आकाशास्तिकायदेश, ६–आकाशास्तिकायप्रदेश, ७–अद्धासमय।

प्र०—भगवन् ! अधोलोक–क्षेत्रलोक मे क्या जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश आदि हैं ?

उ०—(उत्तर) लोक के समान ही समझना चाहिए।

प्र०—भगवन् ! तिर्यक्‌लोक–क्षेत्रलोक मे क्या जीव आदि हैं ?

उ०—इसका उत्तर भी लोक के समान ही समझना चाहिए। ऊर्ध्वलोक–क्षेत्रलोक के संबध मे भी यही बात जानना चाहिए। अन्तर केवल इतना ही है कि ऊर्ध्वलोक मे छह प्रकार के अरूपी (अजीव) हैं। वहा अद्धासमय नही है।

अधोलोक के एक प्रदेश में जीवाजीव

[३६][१] प्र०—अहेलोगखेत्तलोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा ?

उ०—गोयमा ! नो जीवा, जीवदेसा वि, जीवपएसा वि, अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवपएसा वि,
जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा,
अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे,
अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा,
एवं मज्झिल्लविरहिओ-जाव-अणिंदिएसु,
जाव-अहवा एगिंदियदेसा य अणिंदियदेसा य,
जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा,
अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियस्स पएसा,
अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियाण य पएसा,
एवं आइल्लविरहिओ-जाव-पंचिंदिएसु।
अणिंदिएसु तियभंगो।
जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—
रूवी अजीवा य, अरूवी अजीवा य, रूवी तहेव।
जे अरूवी अजीवा ते पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा—
नो धम्मत्थिकाए, धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसे,
एवं अहम्मत्थिकायस्स वि, अद्धासमए।

प्र०—अधोलोक क्षेत्र लोक के एक आकाश-प्रदेश मे क्या जीव हैं जीवदेश हैं, जीवप्रदेश हैं ? अजीव हैं, अजीवदेश हैं, अजीवप्रदेश हैं ?

उ०—गौतम ! (अधोलोक क्षेत्र लोक के एक प्रदेश मे) जीव नही हैं, किन्तु जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव अजीवदेश तथा अजीवप्रदेश है। जो जीवदेश हैं वे नियमत. एकेन्द्रिय जीवो के देश हैं, अथवा
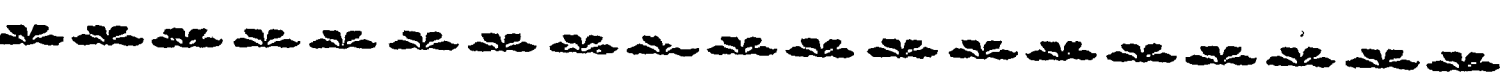
एकेन्द्रिय जीवो के (अनेक) देश और द्वीन्द्रिय जीव का (एक) देश है, अथवा एकेन्द्रिय जीवो के देश और द्वीन्द्रिय जीवो के देश हैं ।

इस प्रकार मध्यम भग को छोडकर शेष भग अनिन्द्रिय जीव (सिद्ध) पर्यन्त जानने चाहिये । वहा जो जीवप्रदेश हैं वे नियमत एकेन्द्रिय जीवो के प्रदेश हैं, अथवा एकेन्द्रिय जीवो के और द्वीन्द्रिय जीव के प्रदेश हैं, अथवा एकेन्द्रिय जीवो के और द्वीन्द्रिय जीवो के प्रदेश हैं।

इस प्रकार-यावत्-पचेन्द्रिय व अनिन्द्रिय के सम्बन्ध मे प्रथम भग को छोडकर शेप तीन भग जानने चाहिये ।

वहा जो अजीव हैं वे दो प्रकार के हैं—रूपी अजीव और अरूपी अजीव । रूपी अजीव पूर्वोक्त प्रकार से जानने चाहिये । अरूपी अजीव पाच प्रकार के हैं—(१) नोधर्मास्तिकाय-धर्मास्तिकाय-देश (२) धर्मास्तिकायप्रदेश (३) नोअधर्मास्तिकाय-अधर्मास्तिकाय देश (४) अधर्मास्तिकाय-प्रदेश (५) अद्धासमय ।

तिर्यक्लोक और ऊर्ध्वलोक के एक प्रदेश में जीवाजीव

[२] प्र०—तिरियलोगखेत्तलोगस्स ण भते ! एगमि आगासपएसे किं जीवा० ?

उ०—एव जहा अहोलोगखेत्तलोगस्स तहेव । एव उड्ढलोगखेत्तलोगस्स वि, नवर अद्धासमओ नत्थि ।
अरूवी चउव्विहा,
लोगस्स जहा अहेलोगखेत्तलोगस्स एगमि आगासपएसे ।

—विवा, भाग ३ श ११, उ १० प्र, १५-१७ पृ, २३०

प्र०—भगवन् ! तिर्यक्लोक-क्षेत्रलोक के एक आकाश-प्रदेश मे क्या जीव आदि हैं ?

उ०—इस विषय में अधोलोक क्षेत्रलोक की भाति समझना चाहिये । यही बात ऊर्ध्वलोक-क्षेत्रलोक के सम्बन्ध मे भी जाननी चाहिये । विशेप यह है कि ऊर्ध्वलोक-क्षेत्रलोक के एक आकाशप्रदेश मे अद्धासमय नही है, अत वहा चार प्रकार के अरूपी अजीव हैं । लोक (के एक प्रदेश) के विषय मे वैसा ही जानना चाहिये जैसा अधोलोक-क्षेत्रलोक के एक प्रदेश मे कहा गया है ।

लोक के एक प्रदेश में अनाबाध अवगाहन

[३७][१] प्र०—लोगस्स ण भते ! एगमि आगासपएसे एगिंदियपएसा—जाव—पचिंदियपएसा अणिंदियपएसा अन्नमन्नबद्धा,
अन्नमन्नपुट्ठा—जाव—अन्नमन्नसमभरघडत्ताए चिट्ठ ति,
अत्थि ण भते ! अन्नमन्नस्स किंचि आबाह् वाबाह् वा उप्पायति,
छविच्छेद वा करेंति ?

उ०—णो इणट्ठे समट्ठे ।

[२] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ—लोगस्स ण एगमि आगासपएसे जे एगिंदियपएसा—जाव—चिट्ठ ति,
णत्थि ण भते ! अन्नमन्नस्स किंचि आबाह् वा—जाव—करेंति ?

उ०—गोयमा ! से जहानामए नट्टिया सिया
सिंगारागारचारुवेसा—जाव—कलिया रगट्ठाणमि जणयाउलमि जणसयसहस्साउलमि बत्तीसइ-विहस्स नट्टस्स अन्नयर नट्टविंहि उवदसेज्जा,
से नूण गोयमा ! ते पेच्छगा त नट्टिय अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समता समभिलोएति,
ताओ ण गोयमा ! दिट्ठीओ तसि नट्टियसि सव्वओ समता सनिपडियाओ ?
हता सनिपडियाओ ।
अत्थि ण गोयमा ! ताओ दिट्ठीओ तीसे नट्टियाए किंचि वि आबाह् वा वाबाह् वा उप्पाएति,
छविच्छेद वा करेंति ? णो इणट्ठे समट्ठे ।

[३] अहवा सा नट्टिया तासिं दिट्ठीणं किंचि आबाहं वा उप्पाएति,
छविच्छेदं वा करेइ ?
णो इणट्ठे समट्ठे ।

[४] ताओ वा दिट्ठीओ अन्नमन्नाए दिट्ठीए किंचि आवाहं वा वाबाहं वा उप्पाएति,
छविच्छेद वा करेंति ?
णो इणट्ठे समट्ठे ।
से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-तं चेव-जाव-छविच्छेद वा करेंति ।

प्र०—भगवन् ! लोक के एक आकाशप्रदेश मे एकेन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक के तथा अनिन्द्रिय (जीवो) के जो अन्योन्य स्पृष्ट यावत् अन्योन्य सम्वद्ध आत्मप्रदेश हैं, वे क्या एक-दूसरे को किसी प्रकार की बाधा अथवा व्यावाधा (विशिष्ट बाधा) उपन्न करते हैं अथवा किसी का छविच्छेद करते हैं ?

उ०—नही, ऐसी बात नही है ।

प्र०—भगवन् ! ऐसा क्यो ?

उ०—गौतम ! जिस प्रकार कोई शृगार युक्त चारु वेष वाली—यावत्—मधुर कठ वाली नर्त्तकी सहस्रो व्यक्तियो से परिपूर्ण रगस्थली मे बत्तीस प्रकार के नाट्यो मे से किसी एक नाट्य को दिखलाती है तो दर्शकगण उस नर्त्तकी को निर्निमेष दृष्टि से चारो ओर से देखते हैं। इस प्रकार उनकी दृष्टिया नर्त्तकी पर चारो ओर से गिरती हैं। इससे, गौतम ! क्या उस नर्त्तकी को बाधा या व्यावाधा उत्पन्न होती है ? अथवा उसके किसी अवयव का छेद होता है ?
नही होता ।
अथवा वह नर्त्तकी उन दर्शको की दृष्टियो को कोई बाधा या व्यावाधा पहुँचाती है ? अथवा किसी प्रकार का छविच्छेद करती है ?
नही करती ।
इसी प्रकार हे गौतम ! जीवो के आत्मप्रदेश परस्पर स्पृष्ट होते हुए भी किसी प्रकार की बाधा या व्यावाधा उपन्न नही करते और न किसी प्रकार का छविच्छेद ही उपन्न करते हैं ।

[३८][१] प्र०—एयस्स णं भंते ! अहोलोगस्स तिरियलोयस्स उड्ढलोगस्स य कयरे कयरेहिंतो—जाव—विसेसाहिया वा ?

उ०—गोयमा ! सव्वत्थोवे तिरियलोए,
उड्ढलोए असखेज्जगुणे,
अहेलोए विसेसाहिए,
सेव भते ! सेवं भंतेत्ति ।

प्र०—भगवन् ! अधोलोक, तिर्यक्लोक और ऊर्ध्वलोक मे से कौन किससे छोटा—यावत्—कौन विशेषाधिक है ?

उ०—गौतम ! तिर्यक्लोक सब से छोटा है, ऊर्ध्वलोक उससे असख्येयगुण तथा अधोलोक उससे विशेषाधिक है ।
भगवन् ! ऐसा ही है, भगवन् ! ऐसा ही है ।

[३९][१] प्र०—लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे जहण्णपए जीवपएसाणं उक्कोसपए जीवपएसाणं सव्व-जीवाण य कयरे कयरेहिंतो—जाव-विसेसाहिया वा ?

उ०—गोयमा ! सव्वत्थोवा लोगस्स एगंमि आगासपएसे जहण्णपए जीवपएसा, सव्वजीवा असंखेज्जगुणा, उक्कोसपए जीवपएसा विसेसाहिया ।
सेव भंते ! सेवं भंते ! त्ति ।

—विवा भाग ३ श. ११ उ. १० प्र २१ पृ २३२

प्र०—भगवन् ! लोक के एक आकाशप्रदेश मे जघन्यपदस्थित जीवप्रदेश, उत्कृष्टपदस्थित जीवप्रदेश तथा सर्वजीव–इन तीनो मे कौन सब से अल्प है—यावत्–कौन विशेषाधिक है ?

उ०—गौतम ! लोक के एक आकाशप्रदेश मे जघन्यपदस्थित जीवप्रदेश सब से अल्प हैं, सर्वजीव उनसे असख्येयगुण है, तथा उत्कृष्ट पदस्थित जीवप्रदेश उनसे विशेषाधिक हैं ।

पांच बादर

[४०] अहे लोए ण पच बायरा पण्णत्ता तजहा—
पुढविकाइया, आउ० वाउ० वणस्सइकाइया, उराला तसा पाणा ।
उड्ढलोगे ण पच बायरा—एए चेव,
तिरियलोगे ण पच बायरा पण्णत्ता—तजहा—
एगिंदिया—जाव—पंचिंदिया ।

—ठा अ ५ उ ३ सूत्र ४४४ पृ० ३१८

अधोलोक मे पाच बादरकाय होते हैं, यथा—पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और उदार-औदारिक त्रस प्राणी ।
ऊर्ध्वलोक मे भी यही पाच बादर होते हैं ।
तिर्यक्लोक मे पाच बादर होते हैं, यथा—एकेन्द्रिय—यावत्—पचेन्द्रिय ।

पांच अनुत्तर

[४१] अहे लोगे ण पच अणुत्तरा महइमहालगा महाणिरया पण्णत्ता, तजहा—
काले, महाकाले, रोरुए, महारोरुए, अप्पइट्ठाणे ।
उड्ढलोगे ण पच अणुत्तरा महाविमाणा पण्णत्ता तजहा—
विजए, वेजयते, जयते, अपराजिए, सव्वट्ठसिद्धे ।

—ठा अ ५ उ ३ सूत्र ४५१, पृ० ३२४

अधोलोक मे पाच प्रधान व सब से बडे नारकावास हैं, यथा—काल, महाकाल, रोरुय, महारोरुय और अप्रतिष्ठान ।
ऊर्ध्वलोक मे पाच प्रधान व सब से बडे विमान हैं, यथा—विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्ध ।

चार द्विशरीरी

[४२] उड्ढलोगे ण चत्तारि बिसरीरा पण्णत्ता, तजहा—
पुढविकाइया, आउ—वणस्सइ काइया, उराला तसा पाणा ।
अहोलोग ण चत्तारि बिसरीरा पण्णत्ता तंजहा—
एव चेव, एव तिरियलोए वि ४ ।

—ठा अ. ४ उ ३ सूत्र ३२९ पृ० २३८

ऊर्ध्वलोक मे चार [1]द्विशरीरी होते हैं, यथा—पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, वनस्पतिकायिक और औदारिक त्रसकायिक ।
अधोलोक और तिर्यक्लोक मे भी यही चार द्विशरीरी होते हैं ।

---

१. वर्तमान भव के शरीर के पश्चात् दूसरा मनुष्यशरीर ग्रहण करके सिद्ध हो जाने वाले ।

लोक के चरमान्त में जीव-अजीव

[४३][१] प्र०—लोयस्स ण भते ! पुरच्छिमिल्ले चरिमते किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा ?

उ०—गोयमा ! नो जीवा, जीवदेसा वि, जीवपएसा वि,
अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवपएसा वि,
जे जीवदेसा ते नियम एगिंदियदेसा य,
अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स य देसे,
एवं जहा दसमसए अग्गेयी दिसा तहेव,
नवर देसेसु अणिंदियाण आइल्लविरहिओ,
जे अरूवी अजीवा ते छव्विहा, अद्धासमयो नत्थि ।
सेसं तं चेव निरवसेसं ।

[२] प्र०—लोगस्स णं भंते ! दाहिणिल्ले चरिमते किं जीवा० ?

उ०—एवं चेव । एवं पच्चत्थिमिल्ले वि, उत्तरिल्ले वि ।

[३] प्र०—लोगस्स ण भते ! उवरिल्ले चरिमते किं जीवा० पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! नो जीवा, जीवदेसा वि, जीवपएसा वि—जाव-अजीवपएसा वि ।
जे जीवदेसा ते नियम एगिंदियदेसा य अणिंदियदेसा य;
अहवा एगिंदियदेसा य, अणिंदियदेसा य, बेइंदियस्स य देसे;
अहवा एगिंदियदेसा य, अणिंदियदेसा य, बेंदियाण य देसा;
एवं मज्झिल्लविरहिओ—जाव-पंचिंदियाण ।
जे जीवप्पएसा ते नियमं एगिंदियप्पएसा य, अणिंदियप्पएसा य;
अहवा एगिंदियप्पएसा य, बेंदियस्स पदेसा य;
अहवा एगिंदियपएसा य, अणिंदियपएसा य, बेइंदियाण य पएसा;
एवं आदिल्लविरहिओ—जाव-पचिंदियाणं ।
अजीवा ते छव्विहा, अद्धासमयो नत्थि, सेसं तं चेव निरवसेसं ।

[४] प्र०—लोगस्स णं भंते ! हेट्ठिल्ले चरिमंते किं जीवा०पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! नो जीवा, जीवदेसा वि, जीवपएसा वि—जाव-अजीवप्पएसा वि ।
जे जीवदेसा ते नियमं एगिंदियदेसा,
अहवा एगिंदियदेसा य, बेइंदियस्स देसे;
अहवा एगिंदियदेसा य, बेंदियाण य देसा;
एव मज्झिल्लविरहिओ—जाव-अणिंदियाणं ।
पएसा आइल्लविरहिया सव्वेसिं जहा पुरत्थिमिल्ले चरिमंते तहेव ।
अजीवा जहेव उवरिल्ले चरिमंते तहेव ।

—विवा० भाग ३ श. १६ उ ८, प्र. २-५ पृ० २१-२३

प्र०—भगवन् ! लोक के पूर्वी चरमान्त मे क्या जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश तथा अजीवप्रदेश हैं ?

उ०—गौतम ! (लोक के पूर्वी चरमान्त मे) जीव नही है, किन्तु जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीव-देश तथा अजीवप्रदेश हैं । वहा जो भी जीवदेश हैं वे नियमत. एकेन्द्रिय जीवो के देश हैं अथवा

१. लोकालोक के एवं लोक के चरमा चरम के अल्पबहुत्व के लिए देखो—पन्न० पद १०

एकेन्द्रिय जीवो के देश एव द्वीन्द्रिय जीव का देश है। इस सम्बन्ध में दशम शतक मे कथित आग्नेयी दिशा का सव वर्णन यहा समझ लेना चाहिये[1]। विशेषता यह है कि अनिन्द्रिय सम्बन्धी देशो के विषय मे प्रथम भग का प्रयोग नही करना चाहिये। तथा वहा के अरूपी अजीव छह प्रकार के ही समझने चाहिये, क्योकि वहा अद्धासमय नही है।

प्र०—भगवन्! लोक के दक्षिणी चरमान्त मे क्या जीव आदि हैं ?

उ०—पूर्वोक्त प्रकार से ही समझना चाहिये।
पश्चिमी और उत्तरी चरमान्त के विषय मे भी यही वात जानना चाहिये।

प्र०—भगवन्! लोक के ऊर्ध्व चरमान्त मे क्या जीव आदि हैं ?

उ०—गौतम! (लोक के ऊर्ध्व चरमान्त मे) जीव नही हैं, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश तथा अजीवप्रदेश है। वहा जो जीवदेश हैं वे नियमत एकेन्द्रिय जीवो के देश तथा अनिन्द्रिय जीवो के देश हैं, अथवा एकेन्द्रिय जीवो के देश, अनिन्द्रिय जीवो के देश तथा (मारणान्तिक समुद्घात की स्थिति मे) द्वीन्द्रिय जीव का देश है, अथवा एकेन्द्रिय जीवो के देश, अनिन्द्रिय जीवो के देश तथा द्वीन्द्रिय जीवो के देश हैं। इस प्रकार मध्य के भग को छोडकर सब भगो की योजना कर लेनी चाहिये। यही वात पचेन्द्रिय पर्यन्त जान लेना चाहिये।

वहा जो जीवप्रदेश हैं वे नियमत एकेन्द्रिय-प्रदेश तथा अनिन्द्रिय-प्रदेश हैं, अथवा एकेन्द्रिय प्रदेश तथा (एक) द्वीन्द्रिय के प्रदेश हैं, अथवा एकेन्द्रिय-प्रदेश, अनिन्द्रिय-प्रदेश तथा द्वीन्द्रिय-प्रदेश हैं। इस प्रकार आदिम भग को छोडकर सब भगो की योजना कर लेनी चाहिये। पचेन्द्रिय पर्यन्त यही वात समझनी चाहिये।

वहा जो अजीव हैं वे छह प्रकार के हैं, क्योकि वहा अद्धासमय का अभाव है। शेष बातें समान हैं।

प्र०—भगवन्! लोक के अध चरमान्त मे क्या जीव आदि हैं ?

उ०—गौतम! (वहा) जीव नही हैं। जीवदेश, जीवप्रदेश, यावत्-अजीवप्रदेश हैं। जो जीव-देश हैं वे नियमत एकेन्द्रियदेश हैं, अथवा एकेन्द्रियदेश तथा (एक) द्वीन्द्रिय का देश है, अथवा एकेन्द्रिय-देश तथा द्वीन्द्रियदेश हैं। इस प्रकार अनिन्द्रिय पर्यन्त, मध्यम भग के अतिरिक्त शेष समस्त भगो की योजना कर लेनी चहिये। प्रदेशो के सम्बन्ध मे पूर्व चरमान्त की तरह प्रारम्भ के भग को छोड़कर शेष भगो की रचना कर लेनी चाहिये। अजीवो के विषय मे ऊर्ध्व चरमान्त की भाति सम्पूर्ण वर्णन समझ लेना चाहिये।

[५] प्र०—अलोगस्स णं भंते! अचरिमस्स य चरिमाण य चरिमतपएसाण य अचरिमंतपएसाण य दव्वट्ठयाए पदेसट्ठयाए दव्वट्ठ-पएसट्ठयाए कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?

उ०—गोयमा! सव्वत्थोवे अलोगस्स दव्वट्ठयाए एगे अचरिमे,
चरिमाइ असखेज्जगुणाइ,
अचरिम च चरिमाणि य दो वि विसेसाहियाइ।
पदेसट्ठयाए सव्वत्थोवा अलोगस्स चरिमतपदेसा,
अचरिमंतपदेसा अणतगुणा,
चरिमतपदेसा य अचरिमतपदेसा य दो वि विसेसाहिया।
दव्वट्ठ-पदेसट्ठयाए सव्वत्थोवे अलोगस्स दव्वट्ठयाए एगे अचरिमे,

---

१. भग० शतक १० उ० १ प्र० ७ पृ० १८९

चरमाइं असंखेज्जगुणाइं,
अचरिम च चरिमाणि य दो वि विसेसाहियाइं,
चरिमंतपदेसा असखेज्जगुणा,
अचरिमतपदेसा अणतगुणा,
चरिमतपदेसा य अचरिमतपदेसा य दो वि विसेसाहिया ।

—पन्न० पद १० सूत्र ७७९

प्र०—भगवन् ! अलोक के अचरम, चरमो, चरमान्त प्रदेशो और अचरमान्त प्रदशो मे, द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेशो की अपेक्षा और द्रव्य तथा प्रदेशो (दोनो) की अपेक्षा कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

उ०—गौतम ! सब से कम अलोक का द्रव्य की अपेक्षा एक अचरम है, चरम असख्यातगुण है, अचरम और (बहुत) चरम दोनो विशेषाधिक हैं ।

प्रदेशो की अपेक्षा सब से कम अलोक के चरमान्त प्रदेश हैं, अचरमान्त प्रदेश (उनसे) अनन्तगुण है, चरमान्त प्रदेश और अचरमान्त प्रदेश दोनो विशेषाधिक हैं ।

द्रव्य-प्रदेश (दोनो) की अपेक्षा सव से कम अलोक का द्रव्य से एक अचरम है। चरम उससे असख्यातगुण हैं। अचरम और बहुत चरम (चरिमाणि) दोनो विशेषाधिक है। चरमान्त प्रदेश असख्यातगुण है, अचरमान्त प्रदेश अनन्तगुण हैं, चरमान्त प्रदेश और अचरमान्त प्रदेश—दोनो विशेषाधिक हैं ।

[६] प्र०—लोगालोगस्स ण भते ! अचरिमस्स य चरिमाण य, चरिमंतपएसाण य, अचरिमंतपएसाण य दव्वट्ठयाए पदेसट्ठयाए दव्वट्ठ-पएसट्ठयाए कतरे कतरेहिन्तो अप्पा वा, बहुया वा, तुल्ला वा, विसेसाहिया वा ?

उ०—गोयमा ! सव्वत्थोवे लोगालोगस्स दव्वट्ठयाए एगमेगे अचरिमे,
लोगस्स चरिमाइ असखेज्जगुणाइं,
अलोगस्स चरिमाइ विसेसाधियाइं,
लोगस्स य अलोगस्स य अचरिमं चरिमाणि य दो वि विसेसाधियाइं ।
पदेसट्ठयाए सव्वत्थोवा लोगस्स चरिमंतपदेसा,
अलोगस्स चरिमंतपदेसा विसेसाहिया,
लोगस्स अचरिमंतपदेसा असखेज्जगुणा,
अलोगस्स अचरिमतपदेसा अणतगुणा,
लोगस्स य अलोगस्स य चरिमंतपदेसा य अचरिमतपदेसा य दो वि विसेसाहिया ।
दव्वट्ठ-पदेसट्ठयाए सव्वत्थोवे लोगालोगस्स दव्वट्ठयाए एगमेगे अचरिमे,
लोगस्स चरिमाइ असखेज्जगुणाइं,
अलोगस्स चरिमाइं विसेसाहियाइं
लोगस्स अलोगस्स य अचरिमं च चरिमाणि य दो वि विसेसाहियाइं,
लोगस्स अचरिमतपएसा असंखेज्जगुणा,
अलोगस्स अचरिमतपएसा अणतगुणा,
लोगस्स य अलोगस्स य चरिमंतपएसा य अचरिमतपएसा य दो वि विसेसाहिया,
सव्वदव्वा विसेसाहिया,
सव्वपएसा अणंतगुणा,
सव्वपज्जवा अणंतगुणा ।

—पन्न० पद १० सूत्र ७८०

प्र०—भगवन् ! लोकालोक के (एक) अचरम, (बहुत) चरम, चरमान्त प्रदेशो और अचरमान्त प्रदेशों मे द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेशो की अपेक्षा तथा द्रव्य और प्रदेश (दोनो) की अपेक्षा कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है ?

उ०—गौतम ! सब से कम लोकालोक का एक-एक अचरम है। लोक के चरम असख्यातगुण हैं, अलोक के चरम विशेषाधिक हैं। लोक का और अलोक का अचरम और (बहुत) चरम दोनो विशेषाधिक हैं।

प्रदेशो की अपेक्षा सब से कम लोक के चरमान्त प्रदेश हैं, अलोक के चरमान्त प्रदेश विशेषाधिक हैं। लोक के अचरमान्त प्रदेश असख्यगुण हैं। अलोक के अचरमान्त प्रदेश अनन्तगुण हैं। लोक के और अलोक के चरमान्त प्रदेश और अचरमान्त प्रदेश दोनो विशेषाधिक हैं।

द्रव्य-प्रदेश (दोनो) की अपेक्षा से, सब से कम लोकालोक के द्रव्य से एक-एक अचरम है। लोक के चरम असख्यातगुण हैं। अलोक के चरम विशेषाधिक हैं। लोक और अलोक का अचरम और (बहुत) चरम दोनो विशेषाधिक हैं। लोक के अचरमान्त प्रदेश असख्यातगुण हैं, अलोक के अचरमान्त प्रदेश अनन्तगुण हैं। लोक और अलोक के चरमान्त प्रदेश और अचरमान्त प्रदेश दोनो विशेषाधिक हैं।

सर्व द्रव्य विशेषाधिक हैं, सर्व प्रदेश अनन्तगुण हैं, सर्व पर्याय (उनसे भी) अनन्तगुण हैं।

लोक में समान परिमाण वाले चार स्थान

[४४] **चत्तारि[1] लोगे समा सपक्खि सपडिदिसिं पण्णत्ता, तजहा—**
अप्पइट्ठाणे नरए १, जबुद्दीवे, दीवे २,
पालए जाणविमाणे ३, सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे ४।

लोक मे (एक लाख योजन विस्तार वाले) चार स्थान समान, सपक्ष एव सप्रतिदिक कहे गये हैं—१—अप्रतिष्ठान नामक नरक, २—जबूद्वीप नामक द्वीप, ३—पालक नामक यान-विमान, ४—सर्वार्थ-सिद्ध नामक महाविमान।

चत्तारि लोगे समा सपक्खि सपडिदिस पण्णता, तजहा—
सीमतए ण णरए १, समयक्खेत्ते २, उडुविमाणे ३, ईसिपब्भारपुढवी

—ठा० अ ४ उ ३ सूत्र ३२८ पृ २३८
—सम० १,

लोक मे (पैंतालीस लाख योजन विस्तृत) चार स्थान समान, सपक्ष एव सप्रतिदिक् कहे गये हैं—१—सीमान्तक नामक नरक, २—समयक्षेत्र ३—उडुविमान, ४—ईषत्प्राग्भार पृथ्वी।

लोक में अन्धकार-प्रकाश के कारण

[४५] **चउहि ठाणेहि लोगंधयारे सिया, तजहा—**
१-अरिहतेहिं वोच्छिज्जमाणेहिं, २-अरिहंतपण्णत्ते धम्मे वोच्छिज्जमाणे, ३-पुव्वगए वोच्छिज्जमाणे, ४-जायतेए वोच्छिज्जमाणे।

—ठा अ ३ उ १ सूत्र १३४ पृ ११०
—ठा अ ४ उ ३ सूत्र ३२४ पृ २३३

---

१. ठा अ ३ उ १ सू १४८ पृ ११९

चार कारणो से लोक मे अन्धकार होता है–
१–अर्हन्तो का व्युच्छेद होने से, २–अर्हत्-प्रणीत धर्म का व्युच्छेद होने से, ३–पूर्व शास्त्रो का व्युच्छेद होने से, ४–अग्नि का व्युच्छेद होने से ।

[४६] **अहोलोगे णं चत्तारि अधयारं करेंति, तंजहा—**
णरगा, णेरइया, पावाइ कम्माइं, असुभा पोग्गला ।

—ठा अ ३ उ १ सूत्र १३४ पृ ११०
—ठा अ ४ उ. ३ सूत्र ३३९ पृ. २५०

अधोलोक मे चार पदार्थ अन्धकार करते हैं–
नरक, नारक, पाप कर्म और अशुभ पुद्गल ।

[४७] **चउहिं ठाणेहिं लोउज्जोए सिया, तंजहा–**
१–अरिहतेहिं जम्मणेहिं, २–अरिहतेहिं पव्वयमाणेहिं, ३–अरिहंताणं णाणुप्पायमहिमासु, ४–अरिहंताणं परिनिव्वाणमहिमासु ।

—ठा अ. ३ उ १ सूत्र १३४ पृ ११०
—ठा अ ४ उ ३ सूत्र ३२४ पृ २३३

[४८] **तिरियलोगे ण चत्तारि उज्जोय करेंति, तंजहा–**
चंदा, सूरा, मणी, जोई ।
उड्ढलोगे णं चत्तारि उज्जोयं करेंति तंजहा–
देवा, देवीओ, विमाणा, आभरणा ।

—ठा. अ. ३ उ १ सूत्र १३४ पृ ११०
—ठा. अ ४ उ ३ सूत्र ३३९ पृ २५०

चार कारणो से लोक मे उद्योत होता है, यथा—
१–अर्हन्तो (तीर्थंकरो) का जन्म होने से, २–अर्हन्तो की प्रव्रज्या होने से, ३–अर्हन्तो को केवल ज्ञान उत्पन्न होने से, ४–अर्हन्तो का परिनिर्वाण होने से ।
मध्यलोक मे चार पदार्थ उद्योत करते हैं, यथा—
चन्द्र, सूर्य, मणि और ज्योति ।
ऊर्ध्वलोक मे चार पदार्थ उद्योत करते हैं, यथा—
देव, देवियां, विमान और आभरण ।

लोक-अलोक की पूर्वापरता

[४९][१] **प्र०—पुव्वि भंते ! लोए, पच्छा अलोए ?**
पुव्वि अलोए, पच्छा लोए ?
उ०—रोहा ! लोए य, अलोए य, पुव्वि पेते, पच्छा पेते, दो वि एए सासया भावा, अणाणुपुव्वी एसा रोहा !

—विवा भाग १ श. १ उ. ३ प्र २१६ पृ० १६७

[५०][१] **प्र०—पुव्वि भंते ! लोयंते, पच्छा अलोयंते ?**
पुव्वि अलोयंते, पच्छा लोयंते ?
उ०—रोहा ! लोयंते य अलोयंते य,—जाव—अणाणुपुव्वी एसा रोहा !

[२] **प्र०—पुव्वि भंते ! लोयंते, पच्छा सत्तमे उवासंतरे ? पुच्छा ।**
उ०—रोहा ! लोयते य सत्तमे उवासतरे, पुव्वि पि दो वि एते,—जाव—अणाणुपुव्वी एसा रोहा !
एवं लोयंते य, सत्तमे य तणुवाए, एवं घणवाए, घणोदही, सत्तमा पुढवी ।
एवं लोयते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहिं ठाणेहिं, तंजहा—
उवास–वाय–घणउदहि–पुढवी–दीवा य सागरा वासा ।

नेरइआई अत्थिय समया कम्माइ लेस्साओ ॥१॥
दिट्ठी दंसण णाणा सण्णा सरीरा य जोग–उवओगे ।
दव्वपएसा पज्जव अद्धा किं पुव्वि लोयंते ॥२॥

[३] प्र०—पुव्वि भंते ! लोयंते, पच्छा सव्वद्धा ?
उ०—जहा लोयंतेणं संजोइया सव्वे ठाणा एते, एवं अलोयंतेण वि संजोएयव्वा सव्वे ।

—विया सा १ श १ उ ६ प्र २१९–२१ पृ० १६८

प्र०—भगवन् ! पहले लोक और फिर अलोक है ? या पहले अलोक और फिर लोक है ?

उ०—रोह ! लोक और अलोक, ये पहले भी हैं और पीछे भी हैं। ये दोनो ही शाश्वत भाव हैं। हे रोह ! इन दोनो मे 'यह पहले और यह पीछे' ऐसा क्रम नहीं है।

प्र०—भगवन् ! पहले लोकान्त और पीछे अलोकान्त है या पहले अलोकान्त और पीछे लोकान्त है ?

उ०—रोह ! लोकान्त और अलोकान्त—इन दोनो मे हे रोह ! कोई क्रम नहीं है,

प्र०—भगवन् ! पहले लोकान्त है और पीछे सातवां अवकाशान्तर है ? इत्यादि प्रश्न ।

उ०—रोह ! लोकान्त और सातवां अवकाशान्तर—ये दोनो पहले भी हैं (पीछे भी हैं।) रोह ! इनमे कोई (आगे पीछे का) क्रम नहीं है।

इसी प्रकार लोकान्त, सातवां तनुवात, इसी प्रकार घनवात, घनोदधि और सातवीं पृथ्वी, इस तरह एक-एक के साथ लोकान्त निम्न लिखित स्थानो के साथ जोडना चाहिये—
अवकाशान्तर, वात, घनोदधि, पृथ्वी, द्वीप, सागर, वर्ष-क्षेत्र, नारक आदि जीव, अस्तिकाय, समय, कर्म, लेश्या, दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, सज्ञा, शरीर, योग, उपयोग, द्रव्य प्रदेश, पर्यव तथा काल (ये सब पहले हैं और लोकान्त पीछे है ? इत्यादि) ।

प्र०—भगवन् ! पहले लोकान्त, पीछे सर्वाद्धा (काल) है ?
उ०—जैसे लोकान्त के साथ इन सब का योग किया है इसी प्रकार अलोकान्त के साथ भी सब का सयोग करना चाहिए ।
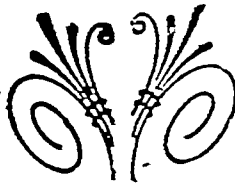
अधोलोक

अधोलोक के भेद

[१] [१] प्र०—अहोलोयखेत्तलोए ण भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सत्तविहे पण्णत्ते, तंजहा—

रयणप्पभापुढवी-अहेलोयखेत्तलोए-जाव-अहे सत्तमा पुढवी अहोलोयखेत्तलोए ।

—विवा. भाग ३ श ११ उ. १० प्र ३ पृ. २२८

[२] अहेलोए णं सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, सत्त घणोदधीओ पण्णत्ताओ,
सत्त घणवाता, सत्त तणुवाता पण्णत्ता, सत्त उवासतरा पण्णत्ता,
एतेसु ण सत्तसु उवासंतरेसु सत्त तणुवाता पइट्ठिया,
एतेसु णं सत्तसु घणोदधीसु पिंडलगपिहुणसंठाणसठिआओ,
सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ तंजहा-पढमा-जाव-सत्तमा ।
एतासि ण सत्तण्हं पुढवीणं सत्त नामधेज्जा पण्णत्ता तजहा—
घम्मा वंसा सेला अंजणा रिट्ठा मघा माघवती,
एतासि ण सत्तण्हं पुढवीण सत्त गोत्ता पण्णत्ता तंजहा–
रयणप्पभा सक्करप्पभा वालुयप्पभा पकप्पभा धूमप्पभा तमा तमतमा[1] ।

—ठा अ ७ सूत्र ५४६ पृ ३६८

—विवा. भा ३, श १२, उ ३, प्र. १,२, पृ २६१

[१][१] प्र०—भगवन् ! अधोलोक-क्षेत्रलोक कितने प्रकार का है ?

उ०—गौतम ! अधोलोक-क्षेत्रलोक सात प्रकार का है, यथा-रत्नप्रमापृथ्वी-अधोलोक-क्षेत्रलोक-यावत्-अध स्थित सप्तमपृथ्वी-अधोलोक-क्षेत्रलोक ।

[२] अधोलोक मे सात पृथ्विया हैं, सात घनोदधि हैं, सात घनवात हैं, सात तनुवात हैं, सात अवकाशान्तर है । इन सात अवकाशान्तरो पर सात तनुवात प्रतिष्ठित हैं । इन सात तनुवातो पर सात घनवात प्रतिष्ठित है । इन सात घनवातो पर सात घनोदधि प्रतिष्ठित हैं । इन सात घनोदधियो पर पटलकपृथुसस्थान (पुष्पपात्र-छावडी के समान विस्तृत आकार) वाली सात पृथिविया हैं—प्रथम—यावत्—सप्तम ।

इन सात पृथ्वियो के सात नाम हैं—घम्मा, वसा, सेला, अजना, अरिष्टा, मघा, माघवती ।

इन सात पृथ्वियो के सात गोत्र है—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पकप्रभा, धूमप्रभा, तम प्रभा, तमस्तम प्रभा ।

---

१. प्र०-पढमा णं भंते ! पुढवी किंनामा, किंगोत्ता पण्णत्ता ?
उ०-गोयमा ! णामेण घम्मा गोत्तेणं रयणप्पभा ।
प्र०-दोच्चा णं भंते ! पुढवी किंनामा किंगोत्ता पण्णत्ता ?
उ०-गोयमा ! णामेणं वसा गोत्तेण सक्करप्पभा ।
एवं एतेणं अभिलावेणं सव्वासिं पुच्छा ।

—जीवाभिगम, सूत्र ६७ पृ. ८८

—विवा भाग ३ श. १२ उ ३ प्र. १-२ पृ २६१

आठ पृथ्वियाँ

[३] [१] प्र०—कइ ण भते ! पुढवीओ पन्नत्ताओ ?
उ०—गोयमा ! अट्ठ पुढवीओ पन्नत्ताओ, तंजहा-रयणप्पभा—जाव-ईसिपब्भारा ।[1]

[२] प्र०—अत्थि ण भते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे गेहा ति वा, गेहावणा इ वा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[३] प्र०—अत्थि ण भते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे गामा इ वा,-जाव-सन्निवेसा इ वा ?
उ०—णो इणट्ठे समट्ठे ।

[४] प्र०—अत्थि णं भते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे उराला बलाहया ससेयति, संमुच्छति, वास वासति ?
उ०—हता अत्थि, तिन्नि वि पकरेंति, देवो वि पकरेति, असुरो वि पकरेति, नागो वि पकरेति ।

[५] प्र०—अत्थि ण भते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बादरे थणियसद्दे ?
उ०—हता अत्थि, तिन्नि वि पकरेंति ।

[६] प्र०—अत्थि णं भते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे बायरे अगणिकाए ?
उ०—गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे, नन्नत्थ विग्गहगतिसमावन्नएण ।

[७] प्र०—अत्थि णं भते ! इमीसे रयणप्पभाए अहे चंदिम-जाव-तारारूवा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[८] प्र०—अत्थि ण भते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए चदाभा ति वा, सूराभा ति वा ?
उ०—णो इणट्ठे समट्ठे ।
एव दोच्चाए पुढवीए भाणियव्व, एव तच्चाए वि भाणियव्व, नवर देवो वि पकरेति, असुरो वि-पकरेति, णो णागो पकरेति,
चउत्थीए वि एव, नवर देवो एक्को पकरेति, नो असुरो, नो नागो पकरेति ।
एवं हिट्ठिल्लासु सव्वासु देवो एक्को वि पकरेति ।

—विवा भाग २ श ६ उ ८ प्र १-८ पृ० ३२७-३२८

[३] [१] प्र०—भगवन् ! पृथ्वियाँ कितनी हैं ?
उ०—गौतम ! आठ पृथ्वियाँ हैं—रत्नप्रभा-यावत्-ईषत्प्राग्भारा ।

[२] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे गृह तथा गृहापण आदि हैं ?
उ०—गौतम ! नही, ऐसा नही है ।

[३] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे ग्राम—यावत्—सन्निवेश आदि हैं ?
उ०—नहीं, ऐसा नहीं है ।

[४] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे विशाल मेघ मडराते हैं, बनते हैं और वर्षा बरसाते हैं ?
उ०—हाँ, ऐसा ही है । यह वर्षा देव, असुर और नाग तीनो करते हैं ।

[५] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे बादर स्तनित शब्द (मेघगर्जन) है ?
उ०—हाँ, है । यह शब्द (देव आदि) तीनो करते हैं ।

---

१. स्थानाग अ ८ सूत्र ६४८ ।
विवा भाग ३ श ८ उ. ३ पृ. ७८ ।
विवा. भाग ३ श १३ उ. १ पृ. ३०१ ।

[६] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे बादर अग्निकाय है ?
उ०—गौतम ! नहीं, ऐसा नहीं है। यह निषेध विग्रहगतिसमापन्न जीवो को छोडकर शेष जीवो के लिए है।

[७] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे चन्द्र—यावत्—तारा आदि हैं ?
उ०—नहीं, ऐसी बात नहीं है।

[८] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे चन्द्राभा अथवा सूर्याभा है ?
उ०—नहीं, ऐसा नहीं है।
यही बात द्वितीय पृथ्वी के विषय मे भी समझनी चाहिए। तृतीय के विषय मे भी ऐसा ही समझना चाहिए। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ वर्षा देव और असुर ही करते हैं, नाग नहीं। यही बात चौथी पृथ्वी के सबध मे भी है, किन्तु वहाँ वर्षा केवल देव ही करता है, असुर और नाग नहीं। इसी प्रकार नीचे की शेष पृथ्वियो मे भी केवल देव ही वर्षा करता है।

नरकभूमियों का आधार

[४] **तिपतिट्ठिया णरगा पं०, तंजहा—**
पुढविपतिट्ठिया, आगासपतिट्ठिया, आयपइट्ठिया।
णेगम-संगह-ववहाराणं पुढविपइट्ठिया, उज्जुसुतस्स आगास-पतिट्ठिया, तिण्हं सद्दनयाणं आयपतिट्ठिया।
—ठा अ ३ उ ३ सूत्र १८६ पृ. १४२

[४] नरक त्रिप्रतिष्ठित-तीन पदार्थों पर आश्रित हैं, यथा पृथ्वीप्रतिष्ठित, आकाशप्रतिष्ठित और आत्मप्रतिष्ठित।
नैगम, सग्रह और व्यवहार नय की अपेक्षा पृथ्वी पर आश्रित है, ऋजुसूत्र नय की अपेक्षा आकाश पर आश्रित हैं और तीन शब्दनयो (शब्द, समभिरूढ, एवभूत) की अपेक्षा आत्मप्रतिष्ठित अर्थात् स्वाश्रित है।

नरकभूमियों के नीचे घनोदधि आदि

[५][१] **प्र०—अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे घणोदधीति वा, घणवातेति वा, तणुवातेति वा, ओवासंतरेति वा ?**
उ०—हंता अत्थि।
एवं-जाव-अहेसत्तमाए।
—जीवा सूत्र ७१ पृ ६०

[५][१] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे घनोदधि, घनवात, तनुवात अथवा अवकाशान्तर है ?
उ०—हा, है।
इसी प्रकार सप्तम पृथ्वी तक समझना चाहिये।

[६][१] **प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही केवतियं बाहल्लेणं पन्नत्ते ?**
उ०—गोयमा ! वीसं जोयणसहस्साइं बाहल्लेण पण्णत्ते[१]।

[२] **प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणवाए केवतियं बाहल्लेणं पण्णत्ते ?**
उ०—गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं बाहल्लेणं पण्णत्ते। एवं तणुवाते वि, ओवासंतरे वि।

[३] **प्र०—सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए घणोदही केवतियं बाहल्लेणं पण्णत्ते ?**
उ०—गोयमा ! वीसं जोयणसहस्साइं बाहल्लेण पण्णत्ते।

१—सम० २० सूत्र ३

[४] प्र०—सक्करप्पभाए पुढवीए घणवाते केवइय बाहल्लेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ बाहल्लेण पण्णत्ते । एव तणुवाते वि ।

ओवासतरे वि जहा सक्करप्पभाए, एव-जाव-अधेसत्तमा ।

—जीवा सूत्र ७२ पृ ९२

[७][१] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदधिवलए केवतिय बाहल्लेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! छ जोयणाणि बाहल्लेण पण्णत्ते ।

[२] प्र०—सक्करप्पभाए पुढवीए घणोदधिवलए केवतिय बाहल्लेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सतिभागाइ छ जोयणाइ बाहल्लेण पण्णत्ते

[३] प्र०—बालुयप्पभाए पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! तिभागूणाइ सत्त जोयणाइ बाहल्लेण पण्णत्ते ।

एव एतेण अभिलावेण पकप्पभाए सत्त जोयणाइ बाहल्लेण पण्णत्ते ।
धूमप्पभाए सतिभागाइ सत्त जोयणाइं पण्णत्ते
तमप्पभाए तिभागूणाइ अट्ठ जोयणाइ ।
तमतमप्पभाए अट्ठ जोयणाइ[1] ।

—जीवा सूत्र ७६ पृ ९५

[६][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे घनोदधि कितना विशाल-मोटा है ?

उ०—गौतम ! (रत्नप्रभा पृथ्वी मे घनोदधि) वीस सहस्र योजन विशाल है ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे घनवात कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! (रत्नप्रभा पृथ्वी मे घनवात) असख्य सहस्र योजन विशाल है ।

तनुवात एव अवकाशान्तर के विषय मे भी यही बात जाननी चाहिए ।

[३] प्र०—भगवन् ! शर्करा पृथ्वी मे घनोदधि कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! (शर्कराप्रभा मे घनोदधि) वीस सहस्र योजन विशाल है ।

[४] प्र—शर्कराप्रभा पृथ्वीं मे घनवात कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! (शर्कराप्रभा मे घनवात) असख्य सहस्र योजन विशाल है । इसी प्रकार तनुवात एव अवकाशान्तर के विषय मे भी समझ लेना चाहिये । सप्तम भूमि तक इस प्रकार की सयोजना कर लेनी चाहिये ।

[७][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे घनोदधिवलय कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! (रत्नप्रभा मे घनोदधिवलय) छह योजन विशाल है ।

[२] प्र०—शर्कराप्रभा पृथ्वी मे घनोदधिवलय कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! (शर्कराप्रभा मे घनोदधिवलय) त्रिभाग अधिक छह (साढे छ) योजन विशाल है ।

[३] प्र०—बालुकाप्रभा मे कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! त्रिभागन्यून सप्त ($६\frac{२}{३}$) योजन विशाल है । इसी प्रकार पकप्रभा मे (घनोदधिवलय) सप्त योजन विशाल है । धूमप्रभा मे सत्रिभाग सप्त ($७\frac{१}{३}$) योजन विशाल है । तम प्रभा मे त्रिभाग न्यून अष्ट ($७\frac{२}{३}$) योजन विशाल है । तमस्तम प्रभा मे अष्ट योजन विशाल है ।

१—ठाणा० ३ उ० ४ सूत्र २४४ पृ० १६६ ।

घनोदधि आदि का संस्थान

[८] [१] प्र०—इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदधिवलए किंसठिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! वट्टे वलयागारसंठाणसठिए पण्णत्ते,
जे ण इम रयणप्पभं पुढविं सपरिविखवित्ता णं चिट्ठति,
एव जाव अधेसत्तमाए पुढवीए घणोदधिवलए,
णवर अप्पणप्पण पुढविं सपरिविखवित्ता ण चिट्ठति ।

[२] प्र०—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए घणवातवलए किंसठिते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! वट्टे वलयागारे तहेव—जाव—जे णं इमीसे णं रयणप्पभापुढवीए घणोदधिवलयं सव्वओ समता सपरिविखवित्ता ण चिट्ठइ ।
एवं—जाव—अहेसत्तमाए घणवातवलए ।

प्र०—इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए तणुवातवलए किंसंठिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! वट्टे वलयागारसठाणसठिए—जाव—जे णं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए घणवातवलयं सव्वओ समता संपरिविखवित्ता ण चिट्ठइ,
एवं—जाव—अधेसत्तमाए तणुवातवलए ।

—जीवा सूत्र ७६ पृ० ६५–६६
— „ „ ७४ पृ० ६३

[८] [१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का घनोदधिवलय किस आकार का है ?

उ०—गौतम ! वृत्त—वलय के आकार का है, जो इस रत्नप्रभा पृथ्वी को सब ओर से घेर कर स्थित है । इसी प्रकार—यावत्—अध सप्तमा पृथ्वी का घनोदधिवलय समझना चाहिए । विशेष यह है कि वे घनोदधिवलय अपनी-अपनी पृथ्वी को घेर कर स्थित है ।

[२] प्र०—इस रत्नप्रभा पृथ्वी का घनवातवलय किस आकार का है ?

उ०—गौतम ! वृत्त-वलय के आकार का है,—यावत्—इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनोदधिवलय को चारो ओर से घेरे हुए है । तमस्तम पृथ्वी के घनवातवलय पर्यन्त इसी प्रकार समझना चाहिए ।

[३] प्र०—इस रत्नप्रभा पृथ्वी का तनुवातवलय किस आकार का है ?

उ०—गौतम ! वृत्त—वलय के आकार का है,—यावत्—इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनवातवलय को सभी ओर से घेरे हुए है । यही बात तमस्तम प्रभा पृथ्वी के तनुवातवलय पर्यन्त जाननी चाहिए ।

घनोदधि आदि की मोटाई

[९] [१] प्र०—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए घणवायवलए केवतियं बाहल्लेणं पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! अद्धपंचमाइं जोयणाइ बाहल्लेणं ।

[२] प्र०—सक्करप्पभाए पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! कोसूणाइं पंच जोयणाइं बाहल्लेण पण्णत्ताइं ।
एव एतेण अभिलावेण बालुयप्पभाए पंच जोयणाइं बाहल्लेणं पण्णत्ताइं ।
पकप्पभाए सक्कोसाइ पंच जोयणाइं बाहल्लेण पण्णत्ताइं ।
धूमप्पभाए अद्धछट्ठाइं जोयणाइ बाहल्लेणं पण्णत्ताइं ।
तमप्पभाए कोसूणाइ छ जोयणाइं बाहल्लेणं पण्णत्ताइं ।
अहेसत्तमाए छ जोयणाइं बाहल्लेणं पण्णत्ताइं ।

[९] [१] प्र०—इस रत्नप्रभा पृथ्वी का घनवातवलय कितना मोटा है ?
उ०—गौतम ! साढे चार योजन मोटा है।

[२] प्र०—शर्कराप्रभा का घनवातवलय कितना मोटा है ?
उ०—गौतम ! एक कोस कम पाच योजन मोटा है।

इसी प्रकार वालुकाप्रभा का पाच योजन मोटा है, पकप्रभा का एक कोस अधिक पाच योजन मोटा है, धूमप्रभा का साढे पाच योजन मोटा है, तम प्रभा का क्रोशन्यून पट् योजन मोटा है और अध सप्तम (तमस्तम प्रभा) का पट् योजन मोटा है।

[१०][१] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए तणुवायवलए केवतिय वाहल्लेण पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! छक्कोसे ण वाहल्लेण पण्णत्ते ।
एव एतेण अभिलावेण सक्करप्पभाए सतिभागे छक्कोसे वाहल्लेण पण्णत्ते ।
वालुयप्पभाए तिभागूणे सत्तकोस वाहल्लेण पण्णत्ते ।
पकप्पभाए पुढवीए सत्तकोस वाहल्लेण पण्णत्ते ।
धूमप्पभाए सतिभागे सत्तकोसे ।
तमप्पभाए तिभागूणे अट्ठकोसे वाहल्लेण पण्णत्ते ।
अधेसत्तमाए पुढवीए अट्ठकोसे वाहल्लेण पण्णत्ते ।

—जीवा सूत्र ७६ पृ० ६५,६६

[१०][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का तनुवातवलय कितना मोटा है ?
उ०—गौतम ! छह कोस मोटा है।

इसी प्रकार शर्कराप्रभा का सत्रिभाग छह ($6\frac{1}{3}$) कोस मोटा है, वालुकाप्रभा का त्रिभागन्यून सात ($6\frac{2}{3}$) कोस मोटा है, पकप्रभा का सात कोस मोटा है, धूमप्रभा का सत्रिभाग सात ($7\frac{1}{3}$) कोस विशाल है, तम प्रभा का त्रिभागन्यून आठ ($7\frac{2}{3}$) कोस मोटा है, अध सप्तम पृथ्वी का आठ कोस मोटा है।

घनोदधि आदि में पुद्गलद्रव्य

[११] इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदधिवलयस्स छज्जोयणबाहल्लस्स खेत्तच्छेएणं छिज्जमाणस्स अत्थि दव्वाइ वण्णतो काल[1]—जाव—हता अत्थि ।
सक्करप्पभाए ण भते ! पुढवीए घणोदधिवलयस्स सतिभागछज्जोयणवाहल्लस्स खेत्तच्छेदेणं छिज्जमाणस्स—[2]जाव—हता अत्थि ।
एव—जाव—अधसत्तमाए ज जस्स वाहल्ल ।

—जीवा० सूत्र ७६, पृ० ६५

[११] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनोदधिवलय को, जो छह योजन मोटा है, (कल्पना से) छिन्न (प्रतर, काण्ड आदि के रूप मे विभक्त) करने पर क्या वहा (उस विभाग मे) वर्ण से काले आदि द्रव्य रहते हैं ?—यावत्—हाँ, रहते हैं।
भगवन् ! सत्रिभाग छह योजन मोटे शर्कराप्रभा पृथ्वी के घनोदधिवलय को (पूर्ववत्) छिन्न करने पर वहाँ वर्ण से कृष्ण आदि द्रव्य रहते हैं ?—यावत्—हाँ, रहते हैं।
इसी प्रकार अध सप्तम (तमस्तम प्रभा) पृथ्वी पर्यन्त अपनी अपनी मोटाई के अनुसार समझ लेना चाहिए।

---

१. जीवा सूत्र ७३ पृ० ६२
२. " " "

[१२] इमीसे ण भंते ! घणवातवलयस्स अद्धपंचमजोयणं बाहल्लस्स खेतच्छेएणं छिज्जमाणस्स—[1]जाव—
हता अत्थि ।
एवं—जाव—अहेसत्तमाए, ज जस्स बाहल्ल ।
एव तणुवातवलयस्स वि—जाव—अधेसत्तमा, जं जस्स बाहल्ल ।

—जीवा. सूत्र ७६, पृ० ६५

[१२] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनवातवलय के साढे चार योजन मोटे क्षेत्र को (पूर्ववत्) छेदन करने पर क्या वहाँ वर्ण से काले इत्यादि द्रव्य रहते हैं ?—हाँ रहते हैं ।
इसी प्रकार अपनी-अपनी मोटाई के अनुसार सप्तम भूमि पर्यन्त जानना चाहिए । यही बात तनुवातवलय के सबध मे भी अपनी-अपनी मोटाई के अनुसार समझ लेना चाहिए ।

नरकभूमियों के विभाग

[१३][१] प्र०—इमा ण भंते ! रयणप्पभा पुढवी कतिविधा पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तजहा—
खरकंडे, पंकबहुले कडे, आवबहुले कडे ।

[२] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए खरकडे कतिविधे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! सोलसविहे पण्णत्ते, तजहा—
(१) रयणकडे (२) वइरे (३) वेरुलिए (४) लोहितक्खे (५) मसारगल्ले (६) हंसगब्भे (७) पुलए (८) सोयधिए (९) जोतिरसे (१०) अंजणे (११) अंजणपुलए (१२) रयते (१३) जातरूवे (१४) अंके (१५) फलिहे (१६) रिट्ठे कंडे ।

[३] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभापुढवीए रयणकडे कतिविधे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! एगागारे पण्णत्ते, एव जाव रिट्ठे ।

[४] प्र०—इमीसे ण भंते ! रयणप्पभापुढवीए पंकबहुले कंडे कतिविधे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! एगागारे पण्णत्ते ।

[५] प्र०—एव आवबहुले कडे कतिविधे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! एगागारे पण्णत्ते ।

[६] प्र०—सक्करप्पभा णं भंते ! पुढवी कतिविधा पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! एगागारा पण्णत्ता ।
एव-जाव-अहेसत्तमा ।

—जीवा. सूत्र ६९ पृ. ८१
—ठा. अ १० सूत्र ७७८ पृ. ४९७

[१३][१] प्र०—भगवन् ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी कितने प्रकार की है ?
उ०—गौतम ! तीन प्रकार की है, यथा—खरकाण्ड, पकबहुलकाण्ड और अप्बहुलकाण्ड ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का खरकाण्ड कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! सोलह प्रकार का है, यथा—(१) रत्नकाण्ड (२) वज्रकाण्ड (३) वैडूर्यकाण्ड (४) लोहिताक्षकाण्ड (५) मसारगल्लकाण्ड (६) हसगर्भकाण्ड (७) पुलककाण्ड (८) सौगधिककाण्ड (९) ज्योतिरत्नकाण्ड (१०) अजनकाण्ड (११) अजनपुलककाण्ड (१२) रजतकाण्ड (१३) जातरूपकाण्ड (१४) अककाण्ड (१५) स्फटिककाण्ड और (१६) अरिष्ट काण्ड ।

---

१. जीवा. सूत्र ७३ पृ० ९२

[३] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का रत्नकाण्ड कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! एक ही प्रकार का है। यही बात अरिष्ट पर्यन्त सभी के विषय मे जाननी चाहिए।

[४] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का पंकबहुलकाण्ड कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! एक ही प्रकार का है।

[५] प्र०—इसी प्रकार अप्बहुलकाण्ड कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! वह भी एक ही प्रकार का है।

[६] प्र०—भगवन् ! शर्कराप्रभा पृथ्वी कितने प्रकार की है ?
उ०—गौतम ! (शर्कराप्रभा) एक ही प्रकार की है।
यही बात नीचे की सातवी पृथ्वी तक जाननी चाहिए। अर्थात् वे सभी एक-एक प्रकार की हैं।

रत्नप्रभा के काण्डों की मोटाई

[१४][१] प्र०—इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए खरकंडे केवतियं बाहल्लेण पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! सोलस जोयणसहस्साइं बाहल्लेण पण्णत्ते।

[२] प्र०—इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए रयणकंडे केवतियं बाहल्लेण पन्नत्ते ?
उ०—गोयमा ! एक्कं जोयणसहस्सं बाहल्लेण पण्णत्ते,[1] एवं-जाव-रिट्ठे।

[३] प्र०—इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए, पंकबहुले कंडे[2] केवतियं बाहल्लेण पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! चतुरसीतिजोयणसहस्साइं बाहल्लेणं पण्णत्ते।

[४] प्र०—इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए आवबहुले कंडे केवतियं बाहल्लेण पन्नत्ते ?
उ०—गोयमा ! असीतिं जोयणसहस्साइं बाहल्लेण पण्णत्ते।

—जीवा सूत्र ७२ पृ ९२
—सम ८०

[१४][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का खरकाण्ड कितना विशाल है ?
उ०—गौतम ! (खरकाण्ड) सोलह सहस्र योजन विशाल है।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का रत्नकाण्ड कितना विशाल है ?
उ०—गौतम ! (रत्नकाण्ड) एक सहस्र योजन विशाल है। इसी प्रकार अरिष्ट काण्ड पर्यन्त जानना चाहिये।

[३] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का पंकबहुल काण्ड कितना विशाल है ?
उ०—गौतम ! (पंकबहुल काण्ड) चौरासी सहस्र योजन विशाल है।

[४] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का अप्बहुल काण्ड कितना विशाल है ?
उ०—गौतम ! (अप्बहुल काण्ड) अस्सी सहस्र योजन विशाल है।

नरकभूमियों का संस्थान

[१५][१] प्र०—इमा ण भंते ! रयणप्पभा पुढवी किंसठिता पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! झल्लरिसंठिता पण्णत्ता।

---

१. स्थानांग अ १०, सूत्र ७७८, पृ ४९७।
२. सम. स ८४ सूत्र ९।

[२] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए खरकडे किंसंठिते पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! झल्लरिसंठिते पण्णत्ते ।

[३] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए रयणकडे किंसठिते पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! झल्लरिसंठिए पण्णत्ते ।
एवं—जाव—रिट्ठे, एव पकबहुले वि, एवं आवबहुले वि,
घणोदधी वि, घणवाए वि, तणुवाए वि, ओवासतरे वि,
सव्वे झल्लरिसठिते पण्णत्ते ।

[४] प्र०—सक्करप्पभा ण भंते ! ढवी किंसठिता पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! झल्लरिसठिता पण्णत्ता ।

[५] प्र०—सक्करप्पभा पुढवीए घणोदधी किंसठिते पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! झल्लरिसठिते पण्णत्ते ।
एवं—जाव—ओवासतरे,
जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया एव—जाव—अहेसत्तमाइ वि ।

[१५][१] प्र०—भगवन् ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी किस आकार की है ?
उ०—गौतम ! झालर के आकार की है ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का खरकाण्ड किस आकार का है ?
उ०—गौतम ! झालर के आकार का है ।

[३] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का रत्नकाण्ड किस आकार का है ।
उ०—गौतम ! झालर के आकार का है ।

इसी प्रकार अरिष्ट पर्यन्त समझना चाहिए । पंकबहुल काण्ड, अप्बहुलकाण्ड, घनोदधि, घनवात, तनुवात, अवकाशान्तर आदि सब झल्लरी के आकार के हैं ।

[४] प्र०—भगवन् ! शर्कराप्रभा पृथ्वी किस आकार की है ।
उ०—गौतम ! झल्लरी (झालर) के आकार की है ।

[५] प्र०—शर्कराप्रभा पृथ्वी मे घनोदधि किस आकार का है ?
उ०—गौतम ! झल्लरी के आकार का है ।
इसी प्रकार अवकाशान्तर तक समझना चाहिये । शर्कराप्रभा पृथ्वी के विषय मे जो कहा गया है वही तमस्तम पृथ्वी तक सब के विषय मे जानना चाहिए ।

नरकभूमियों में पुद्‌गल द्रव्य

[१६][१] प्र०—इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तर जोयणसयसहस्सबाहल्लाए खेत्तच्छेएणं छिज्जमाणीए अत्थि दव्वाइं वण्णतो काल-नील-लोहित-हालिद्द-सुक्किलाइं,
गंधतो सुरभिगंधाइं, दुब्भिगंधाइं,
रसतो तित्त-कडुय-कसाय-अबिल-महुराइं,
फासतो कक्खड-मउय-गरुय-लहु-सीय-उसिण-णिद्ध-लुक्खाइं,
संठाणतो परिमडल-वट्ट-तस-चउरंस-आययसंठाणपरिणयाइं,
अन्नमन्नबद्धाइं, अण्णमण्णपुट्ठाइं, अण्णमण्णओगाढाइं, अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धाइं, अण्णमण्ण-घडत्ताए चिट्ठ ति ?
उ०—हंता, अत्थि ।

[२] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए खरकडस्स सोलस जोयणसहस्सबाहल्लस्स खेत्तच्छेएण छिज्जमाणस्स अत्थि दव्वाइ वण्णओ काल०—जाव—परिणयाइ ?

उ०—हता, अत्थि ।

[३] प्र०—इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए रयणनामगस्स कडस्स जोयणसहस्सबाहल्लस्स खेत्तच्छेएण छिज्जाणस्स त चेव—जाव—परिणयाइ ?

उ०—हता, अत्थि ।

एव जाव रिट्ठस्स ।

इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए पकबहुलस्स कडस्स चउरासीति जोयणसहस्सबाहल्लस्स खेत्तच्छेएण त चेव—जाव—परिणयाइ, एव आवबहुलस्स वि असीति जोयणसहस्सबाहल्लस्स ।

इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदधिस्स वीस जोयणसहस्सबाहल्लस्स खेत्तच्छेएण तहेव ।

एव घणवातस्स असखेज्जजोयणसहस्सबाहल्लस्स तहेव,

ओवासतरस्स वि त चेव ।

[४] प्र०—सक्करप्पभाए ण भते ! पुढवीए बत्तीसुत्तर जोयणसयसहस्सस्स खेत्तच्छेएण छिज्जमाणीए अत्थि दव्वाइ वण्णतो—जाव—घडत्ताए चिट्ठ ति ?

उ०—हता, अत्थि ।

एवं घणोदहिस्स वीसजोयणसहस्सबाहल्लस्स घणवातस्स असखेज्ज जोयणसहस्सबाहल्लस्स,

एव—जाव—ओवासतरस्स, जहा सक्करप्पभाए, एव—जाव—अहेसत्तमाए ।

—जीवा सूत्र ७३ पृ ९२-९३

[१६][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के एक लाख अस्सी हजार योजन विशाल क्षेत्र को (बुद्धि से) छिन्न करने पर क्या (उन छिन्न विभागो मे) कृष्ण, नील, लोहित, पीत और शुक्ल वर्ण वाले, सुरभिगध और दुरभिगध वाले, तिक्त, कटु, कषाय, अम्ल और मधुर रस वाले, कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श वाले, परिमडल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र और आयत सस्थान वाले द्रव्य अन्योन्य बद्ध, अन्योन्य स्पृष्ट, अन्योन्य अवगाढ, स्निग्धता के कारण अन्योन्य प्रतिबद्ध तथा अन्योन्य ग्रथित होकर रहते हैं ।

उ०—हाँ, रहते हैं ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के खर काण्ड के सोलह हजार योजन विशाल क्षेत्र को (कल्पना से) छिन्न करने पर क्या वहाँ वर्ण से काले आदि द्रव्य रहते हैं ?

उ०—हाँ, रहते हैं ।

[३] प्र०—इस रत्नप्रभा पृथ्वी के रत्नकाण्ड के एक हजार योजन विशाल क्षेत्र को छिन्न करने पर क्या वहाँ वर्ण से कृष्ण आदि द्रव्य होते हैं ?

उ०—हाँ, होते हैं ।

इसी प्रकार रिष्ट पर्यन्त समझना चाहिए ।

[४] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के पकबहुल काण्ड के चौरासी हजार योजन विशाल क्षेत्र को (कल्पना से) छिन्न करने पर क्या वहाँ वर्णत कृष्ण आदि द्रव्य रहते हैं ?

उ०—हाँ, रहते हैं ।

इसी प्रकार अप्बहुल काण्ड के अस्सी हजार योजन विशाल क्षेत्र के विषय मे भी समझना चाहिए ।

[५] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनोदधि के बीस हजार योजन विशाल क्षेत्र को (कल्पना से) छिन्न करने पर क्या वहाँ कृष्ण वर्ण वाले आदि द्रव्य रहते हैं ?

उ०—हाँ, रहते हैं।

इसी प्रकार घनवात के असख्यात हजार योजन विशाल क्षेत्र के विषय मे भी समझ लेना चाहिए। अवकाशान्तर के विषय मे भी ऐसा ही जानना चाहिए।

[६] प्र०—भगवन् ! शर्कराप्रभा पृथ्वी के एक लाख बत्तीस हजार योजन विशाल क्षेत्र को (कल्पना से) छिन्न करने पर क्या वहाँ कृष्ण वर्ण आदि वाले द्रव्य रहते हैं ?

उ०—हाँ, रहते हैं।

इसी प्रकार घनोदधि के बीस हजार योजन विशाल क्षेत्र, घनवात के असख्य सहस्र योजन विशाल क्षेत्र,—यावत्—अवकाशान्तर के विषय मे भी समझना चाहिए। यही बात शर्कराप्रभा की ही तरह सप्तम पृथ्वी पर्यन्त जाननी चाहिए।

नरकभूमियों की लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई

[१७][१] प्र०—इमा ण भते ! रयणप्पभा पुढवी केवतिया आयाम-विक्खभेणं, परिक्खेवेणं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ आयाम-विक्खभेणं,
असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ परिक्खेवेण पण्णत्ता,
एव-जाव-अधेसत्तमा।

[२] प्र०—इमा ण भते ! रयणप्पभा पुढवी अते य मज्झे य सव्वत्थ समाबाहल्लेण पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! इमा णं रयणप्पभा पुढवी अते य मज्झे य सव्वत्थ समा बाहल्लेणं,
एव-जाव-अधेसत्तमा।

—जीवा सूत्र ७६ पृ. ६६

[१७][१] प्र०—भगवन् ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी कितनी लम्बी-चौडी एव कितने घेरे वाली है ?

उ०—गौतम ! असख्य सहस्र योजन लम्बी-चौडी एव असख्य सहस्र योजन घेरे वाली है। सप्तम पृथ्वी तक यही बात समझनी चाहिये।

[२] प्र०—भगवन् यह रत्नप्रभा पृथ्वी क्या अन्त मे और मध्य मे सर्वत्र समान मोटी है ?

उ०—गौतम ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी अन्त मे और मध्य मे सर्वत्र मोटाई मे समान है। सप्तम पृथ्वी तक इसी प्रकार कहना चाहिये।

नरकभूमियों का सापेक्ष परिमाण

[१८][१] प्र०—इमा णं भते ! रयणप्पभा पुढवी दोच्च पुढविं पणिहाय सव्वमहंतिया बाहल्लेण, सव्वखुड्डिया सव्वतेसु ?

उ०—हता, गोयमा ! इमा णं रयणप्पभा पुढवी दोच्चं पुढविं पणिहाय-जाव-सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु।

[२] प्र०—दोच्चा णं भंते ! पुढवी तच्चं पुढविं पणिहाय सव्वमहंतिया बाहल्लेणं पुच्छा ?

उ०—हंता, गोयमा ! दोच्चा णं पुढवी-जाव-सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु।
एव एएणं अभिलावेणं-जाव-छट्ठिया पुढवी अहेसत्तमं पुढविं पणिहाय सव्वखुड्डिया सव्वतेसु।

—जीवा सूत्र ६२ पृ १२७

—विवा. भाग ३ श. १३ उ ४ प्र ४ पृ ३१३

[१८][१] प्र०—भगवन् ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी द्वितीय (शर्कराप्रभा) पृथ्वी की अपेक्षा मोटाई मे सबसे बडी है ? तथा चारो दिशाओ मे लम्बाई-चौडाई मे सबसे छोटी है ?

उ०—हा, गौतम ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी द्वितीय पृथ्वी की अपेक्षा-यावत्-लम्बाई-चौडाई मे सबसे छोटी है।

[२] प्र०—भगवन् ! क्या द्वितीय पृथ्वी तृतीय (वालुकाप्रभा) पृथ्वी की अपेक्षा मोटाई मे सबसे बडी है इत्यादि प्रश्न ?

उ०—हा, गौतम ! द्वितीय पृथ्वी-यावत्-लम्बाई-चौडाई मे छोटी है ।
इसी प्रकार-यावत्-षष्ठ पृथ्वी सप्तम पृथ्वी की अपेक्षा से लम्बाई-चौडाई मे छोटी है ।

[१६][१] प्र०—**इमा ण भते ! रयणप्पभा पुढवी दोच्च पुढविं पणिहाय बाहल्लेणं किं तुल्ला, विसेसाहिया, सखेज्जगुणा ?**
वित्थरेण किं तुल्ला, विसेसहीणा, सखेज्जगुणहीणा ?

उ०—**गोयमा ! इमा ण रयणप्पभा पुढवी दोच्च पुढविं पणिहाय बाहल्लेण नो तुल्ला विसेसाहिया, नो सखेज्जगुणा ।**
वित्थरेण नो तुल्ला, विसेसहीणा, णो सखेज्जगुणहीणा ।

[२] प्र०—**दोच्चा ण भते ! पुढवी तच्च पुढविं पणिहाय बाहल्लेण किं तुल्ला ?**
उ०—**एव चेव भाणितव्व ।**
एव तच्चा, चउत्थी, पचमी, छट्ठी ।

[३] प्र०—**छट्ठी ण भते ! पुढवी सत्तमं पुढविं पणिहाय बाहल्लेण किं तुल्ला, विसेसाहिया, सखेज्जगुणा ?**
उ०—**एव चेव भाणियव्व ।**
सेवं भते ! सेवं भते !

—जीवा सूत्र ८० पृ १०१

[१६][१] प्र०—भगवन् यह रत्नप्रभा पृथ्वी द्वितीय पृथ्वी की अपेक्षा मोटाई मे क्या तुल्य है, अथवा विशेषाधिक है, अथवा सख्यातगुण अधिक है ?

उ०—गौतम ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी द्वितीय पृथ्वी की अपेक्षा मोटाई मे तुल्य नही है, विशेषाधिक है, सख्यातगुण अधिक नही है । विस्तार मे तुल्य नही है, विशेष हीन है, सख्येयगुण हीन नही है ।

[२] प्र०—भगवन् ! द्वितीय पृथ्वी तृतीय पृथ्वी की अपेक्षा मोटाई मे क्या तुल्य है, इत्यादि प्रश्न ?
उ०—ऊपर की भाति ही कहना चाहिए । यही बात तीसरी, चौथी, पाचवी और छठी पृथ्वी के विषय मे भी समझना चाहिए ।

[३] प्र०—भगवन् ! छठी पृथ्वी सातवी पृथ्वी की अपेक्षा क्या मोटाई मे तुल्य है, अथवा विशेषाधिक है अथवा सख्यातगुण अधिक है ?
उ०—पूर्ववत् ही कह लेना चाहिये ।
भगवन् ! ऐसा ही है, ऐसा ही है !

नरकभूमियों का अन्तर

[२०][१] प्र०—**इमीसे णं भते ! रयणप्पभाए पुढवीए सक्करप्पभाए य पुढवीए केवतिय अबाहाए अतरे पण्णत्ते ?**
उ०—**गोयमा ! असखेज्जाइं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।**

[२] प्र०—**सक्करप्पभाए ण भते ! पुढवीए वालुयप्पभाए य पुढवीए केवतिय अबाहाए अतरे पण्णत्ते ?**
उ०—**गोयमा ! एव चेव ।**
एव-जाव-तमाए अहेसत्तमाए य ।

[३] प्र०—**अहेसत्तमाए ण भंते ! पुढवीए अलोगस्स य केवतिय अबाहाए अतरे पण्णत्ते ?**
उ०—**गोयमा ! असखेज्जाइं जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते ।**

—विवा भाग ३ श १४ उ ८ प्र १-३ पृ ३५८

[२०][१] प्र०—भगवन्! इस रत्नप्रभा पृथ्वी और शर्कराप्रभा पृथ्वी मे कितना अबाध अन्तर-व्यवधान है ?
उ०—गौतम! असख्यात सहस्र योजन का अवाध अन्तर है।

[२] प्र०—भगवन्! शर्कराप्रभा पृथ्वी और वालुकाप्रभा पृथ्वी मे कितना अन्तर है
उ०—गौतम! उतना ही (असख्यात सहस्र योजन का) इसी प्रकार-यावत्-तमःप्रभा और तमस्तम प्रभा मे भी अन्तर है।

[३] प्र०—भगवन्! तमस्तम प्रभा पृथ्वी और अलोक मे कितना अबाध अन्तर है ?
उ०—गौतम! असख्य हजार योजन का अबाध अन्तर है।

रत्नप्रभा आदि के चरमान्तों का अन्तर

[२१][१] प्र०—इमीसे ण भंते! रयणप्पहाए पुढवीए उवरिल्लाओ चरिमंताओ उवासतरस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते केवतियं अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा! असखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइ अबाधाए अतरे पण्णत्ते।
—जीवा सूत्र ७९ पृ १००

[२१][१] प्र०—भगवन्! रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से अवकाशान्तर के अध चरमान्त तक कितना अबाध अन्तर है ?
उ०—गौतम! असख्य लाख योजन का अबाध अन्तर है।

[२२] इमीसे ण भते! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदहिस्स उवरिल्ले चरिमते असिउत्तरजोयणसयसहस्स, हेट्ठिल्ले चरिमते दो जोयणसयसहस्साइ।
इमीसे ण भते! रयणप्पभाए पुढवीए घणवातस्स उवरिल्ले चरिमते दो जोयणसयसहस्साइ, हेट्ठिल्ले चरिमते असखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइ।
इमीसे ण भते! रयणप्पभाए पुढवीए तणुवातस्स उवरिल्ले चरिमते असखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइ अबाधाए अतरे, हेट्ठिल्ले वि असखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइ,
एव ओवासतरे वि।
दोच्चाए ण भते! पुढवीए उवरिल्लाओ चरिमताओ हेट्ठिल्ले चरिमते एस णं केवतिय अबाधाए अंतरे पण्णत्ते[1] ?
गोयमा! बत्तीसुत्तर जोयणसयसहस्स अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।
सक्करप्पभाए पुढवीए उवरि घणोदधिस्स हेट्ठिल्ले चरिमते बावण्णुत्तर जोयणसयसहस्सं अबाधाए।
घणवातस्स असखेज्जाइं जोयणसयसहस्साइ पण्णत्ताइ,
एंव-जाव-उवासतरस्स वि-जाव-अधेसत्तमाए,
णवर-जीसे ण बाहल्ल तेण घणोदही संबंधेतव्वो बुद्धीए।
सक्करप्पभाए अणुसारेणं घणोदहिसहिताण इमं पमाणं।
तच्चाए णं भते! अडयालीसुत्तर जोयणसतसहस्स,
पकप्पभाए पुढवीए चत्तालीसुत्तर जोयणसतसहस्सं,
धूमप्पभाए पुढवीए अट्ठतीसुत्तर जोयणसयसहस्स,
तमाए पुढवीए छत्तीसुत्तर जोयणसतसहस्स,[2]
अधेसत्तमाए पुढवीए अट्ठावीसुत्तरं जोयणसतसहस्स-जाव-अधेसत्तमाए।
—जीवा सूत्र ७९ पृ. १००

---

१. दोच्चाए णं पुढवीए बहुमज्झदेसभागाओ दोच्चस्स घणोदहिस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस ण छलसीइ जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते।
—सम ८३, सूत्र ३

२. छट्ठीए पुढवीए बहुमज्झदेसभायाओ छट्ठस्स घणोदहिस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस णं एगूणासीति जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते।
—सम. ७९ सूत्र ३

[२२] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनोदधि के ऊर्ध्व चरमान्त तक एक लाख अस्सी हजार योजन का तथा अध चरमान्त तक दो लाख योजन का अन्तर है ।
भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनवात के ऊर्ध्व चरमान्त तक दो लाख योजन का तथा अध चरमान्त तक असख्य लाख योजन का अन्तर है ।
भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तनुवात के ऊर्ध्व चरमान्त तक असख्य लाख योजन का तथा अध चरमान्त तक भी असख्य लाख योजन का अबाध अन्तर है ।
अवकाशान्तर के विषय मे भी यही बात जाननी चाहिए । भगवन् ! द्वितीय (शर्कराप्रभा) पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से अध चरमान्त तक कितना अबाध अन्तर है ?
गौतम ! एक लाख बत्तीस हजार योजन का अबाध अन्तर है । शर्कराप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से घनोदधि के अध चरमान्त तक एक लाख बावन हजार योजन का अबाध अन्तर है । घनवात का असख्य लाख योजन का अन्तर है । इसी प्रकार अवकाशान्तर तक-यावत्-अध सप्तम (तमस्तम प्रभा) तक समझ लेना चाहिये । इसमे इतना ध्यान रखना चाहिए कि जिस पृथ्वी की जितनी विशालता हो उसके साथ घनोदधि का सबध उसी हिसाब से जोडना चाहिए । इस प्रकार शर्कराप्रभा के अनुसार घनोदधि सहित (पृथ्वियो का) अन्तर-प्रमाण निम्नलिखित है—
भगवन् ! तृतीय (वालुकाप्रभा) का (अन्तर) एक लाख अडतालीस हजार योजन, पकप्रभा का एक लाख चालीस हजार योजन, धूमप्रभा का एक लाख अडतीस हजार योजन, तम प्रभा का एक लाख छत्तीस हजार योजन तथा तमस्तम प्रभा का एक लाख अट्ठाईस हजार योजन है ।

[२३][१] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्ले चरिमते कतिविधे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तजहा—
घणोदधिवलए, घणवायवलए, तणुवायवलए ।

[२] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए दाहिणिल्ले चरिमते कतिविधे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! तिविधे पण्णत्ते, तजहा—
एव-जाव-उवरिल्ले, एव सव्वासि-जाव-अधेसत्तमाए उवरिल्ले ।

—जीवा० सूत्र ७५ पृ० ८४

[२३][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का पूर्व का चरमान्त कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! तीन प्रकार का है, यथा-घनोदधिवलय-घनवातवलय, तनुवातवलय ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नाप्रभा पृथ्वी का दक्षिणी चरमान्त कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! तीन प्रकार का है । तमस्तम प्रभा तक के उत्तर आदि के चरमान्तो के विषय मे यही जानना चाहिए ।

[२४][१] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवरिल्लतो चरिमंतातो हेट्ठिल्ले चरिमते एस णं केवतियं अबाधाए अतरे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! असिउत्तर जोयणसतसहस्स अबाधाए अतरे पण्णत्ते ।

[२] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवरिल्लतो चरिमताओ खरस्स कडस्स हेट्ठिल्ले चरिमते एस णं केवतिय अबाधाए अतरे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! सोलस जोयणसहस्साइ अबाधाए अतरे पण्णत्ते ।

[३] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवरिल्लातो चरिमताओ रयणकडस्स हेट्ठिल्ले चरिमते एस ण केवतिय अबाधाए अतरे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! एक्क जोयणसहस्स अबाधाए अतरे पण्णत्ते ।

[४] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवरिल्लातो चरिमंतातो वइरस्स कंडस्स उवरिल्ले चरिमंते एस णं भंते ! केवतियं अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एक्क जोयणसहस्सं अवाधाए अंतरे पण्णत्ते ।

[५] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवरिल्लातो चरिमताओ वइरस्स कंडस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस ण भंते ! केवतियं अबाधाए अतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! दो जोयणसहस्साइं इमीसे णं अवाधाए अतरे पण्णत्ते । एव-जाव-रिट्ठस्स उवरिल्ले-पन्नरसजोयणसहस्साइं, हेट्ठिल्ले चरिमते सोलस जोयणसहस्साइ ।

[६] प्र०—इमीसे णं भते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवरिल्लाओ चरिमंताओ पंकबहुलस्स कंडस्स उवरिल्ले चरिमते एस ण भते ! केवतिय अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सोलस जोयणसहस्साइं अबाधाए अतरे पण्णत्ते । हेट्ठिल्ले चरिमते एक्कं जोयणसयसहस्सं आवबहुलस्स उवरि एक्कं जोयणसयसहस्स, हेट्ठिल्ले चरिमंते असीउत्तरं जोयणसयसहस्स ।

—जीवा० सूत्र ७९ पृ० ९९

[२४][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से अध चरमान्त तक कितना अबाध अन्तर है ?

उ०—गौतम ! एक लाख अस्सी हजार योजन का अवाध अन्तर है ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से खरकाण्ड के अध चरमान्त तक कितना अवाध अन्तर है ?

उ०—गौतम ! सोलह हजार योजन का अवाध अन्तर है ।

[३] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से रत्नकाण्ड के अध चरमान्त तक कितना अवाध अन्तर है ?

उ०—गौतम ! एक हजार योजन का अवाध अन्तर है ।

[४] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से वज्रकाण्ड के ऊर्ध्व चरमान्त तक कितना अवाध अन्तर है ?

उ०—गौतम ! एक हजार योजन का अवाध अन्तर है ।

[५] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से वज्रकाण्ड के अध चरमान्त तक कितना अवाध अन्तर है ?

उ०—गौतम ! दो हजार योजन का अवाध अन्तर है ।

इस प्रकार—यावत्—अरिष्ट के ऊर्ध्व चरमान्त तक पन्द्रह हजार योजन का तथा अध चरमान्त तक सोलह हजार योजन का अन्तर है ।

[६] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊर्ध्व चरमान्त से पंकबहुल काण्ड के ऊर्ध्व चरमान्त तक कितना अबाध अन्तर है ?

उ०—गौतम ! सोलह हजार योजन का अवाध अन्तर है ।

अध चरमान्त तक एक लाख योजन का अन्तर है । अप्बहुल काण्ड के ऊर्ध्व चरमान्त तक एक लाख योजन का तथा अध चरमान्त तक एक लाख अस्सी हजार योजन का अन्तर है ।

[७] इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए वइरकंडस्स उवरिल्लाओ चरमंताओ लोहियक्खकंडस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस णं तिन्नि जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते ।

—सम. स. ३००० सूत्र ११६ ।

इस रत्नप्रभा पृथ्वी के वज्रकाण्ड के ऊपरी चरमान्त से लोहिताक्षकाण्ड के निचले चरमान्त का तीन हजार योजन का अव्यवहित अन्तर कहा गया है ।

[८] इमीसे ण रयणप्पहाए पुढवीए रयणस्स कंडस्स उवरिल्लाओ चरमंताओ पुलगस्स कडस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस ण सत्त जोयणसहस्साइ अवाहाए अतरे पण्णत्ते ।

—सम स ७०००• सूत्र १२० ।

इस रत्नप्रभा पृथ्वी के रत्नकाण्ड के ऊपरी चरमान्त से पुलककाण्ड के निचले चरमान्त का सात हजार योजन का अव्यवहित अन्तर है ।

नरकभूमियों से लोकान्त का अन्तर

[२७][१] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्लाओ चरिमताओ केवतिय अबाधाए लोयते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! दुवालसहि जोयणेहि अबाधाए लोयते पण्णत्ते ।
एव दाहिणिल्लातो पच्चत्थिमिल्लातो, उत्तरिल्लातो ।

[२] प्र०—सक्करप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्लातो चरिमतातो केवतिय अबाधाए लोयते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! तिभागूणेहि तेरसहि जोयणेहि अबाधाए लोयते पण्णत्ते ।
एव चउद्दिसि पि ।

[३] प्र०—वालुयप्पभाए पुढवीए पुरत्थिमिल्लातो पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! सतिभागेहि तेरसहि जोयणेहि अबाधाए लोयते पण्णत्ते ।
एव चउद्दिसिपि, एव सव्वासि चउसु वि दिसासु पुच्छितव्व ।
पकप्पभाए चोद्दसहि जोयणेहि अबाधाए लोयते पण्णत्ते ।
पचमाए तिभागूणेहि पन्नरसहि जोयणेहि अबाधाए लोयते पण्णत्ते ।
छट्ठीए सतिभागेहि पन्नरसहि जोयणेहि अबाधाए लोयते पण्णत्ते ।
सत्तमीए सोलसहि जोयणेहि अबाधाए लोयते पण्णत्ते ।
एव—जाव—उत्तरिल्लातो ।

—जीवा सूत्र ७५ पृ० ९४

[२७][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त से लोकान्त कितना दूर है ?

उ०—गौतम ! (रत्नप्रभा के चरमान्त से) लोकान्त वारह योजन दूर है ।
इसी प्रकार दक्षिण, पश्चिम एव उत्तर (चरमान्त) से भी इतना ही दूर है ।

[२] प्र०—शर्कराप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त से लोकान्त कितना दूर है ?

उ०—गौतम ! (शर्कराप्रभा के पूर्व चरमान्त से) लोकान्त त्रिभागन्यून तेरह (१२$\frac{2}{3}$) योजन दूर है ।
इसी प्रकार चारो दिशाओ के विषय मे जानना चाहिए ।

[३] प्र०—वालुकाप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त से लोकान्त कितना दूर है ?

उ०—गौतम ! (वालुकाप्रभा के पूर्व चरमान्त से) लोकान्त सत्रिभाग तेरह (१३$\frac{1}{3}$) योजन दूर है ।
इसी प्रकार चारो दिशाओ के सम्वन्ध मे जानना चाहिए एव समस्त पृथ्वियो के विषय मे चारो दिशाओ के लिए प्रश्न करना चाहिए ।
पकप्रभा से लोकान्त चौदह योजन दूर है ।
पचम (धूमप्रभा) से लोकान्त त्रिभागन्यून पन्द्रह (१४$\frac{2}{3}$) योजन दूर है ।
पष्ठ (तम प्रभा) से लोकान्त सत्रिभाग पन्द्रह (१५$\frac{1}{3}$) योजन दूर है ।
सप्तम (तमस्तम प्रभा) से लोकान्त सोलह योजन दूर है ।
इसीप्रकार—यावत्—उत्तरी चरमान्त से जानना चाहिए ।

नरकभूमियों की नित्यानित्यता

[२८][१] प्र०—इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी किं सासया, असासया ?
उ०—गोयमा ! सिय सासया, सिय असासया ।

[२] प्र०—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—सिय सासया, सिय असासया ?
उ०—गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासया, वण्णपज्जवेहिं, गंधपज्जवेहिं, रसपज्जवेहिं, फासपज्जवेहिं असासया ।
से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति—तं चेव—जाव—सिय असासया ।
एवं—जाव—अधेसत्तमा ।

[३] प्र०—इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी कालतो केवच्चिरं होई ?
उ०—गोयमा ! न कयाइ न आसी, ण कयाइ णत्थि, ण कयाइ ण भविस्सइ । भुविं च, भवइ य, भविस्सति य, धुवा णियया सासया अक्खया अव्वया अवट्ठिया णिच्चा,
एवं—जाव—अधेसत्तमा ।

—जीवा. सूत्र ७८ पृ० ९८
" सूत्र ८५ पृ० १०९

[२८][१] प्र०—भगवन् ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी शाश्वत है या अशाश्वत ?
उ०—गौतम ! कथचित् शाश्वत है, कथचित् अशाश्वत है ।

[२] प्र०—भगवन् ! ऐसा क्यो कि कथचित् शाश्वत और कथचित् अशाश्वत है ?
उ०—गौतम ! द्रव्य की दृष्टि से शाश्वत है, वर्णपर्याय, गधपर्याय, रसपर्याय और स्पर्शपर्याय की अपेक्षा से अशाश्वत है, इस कारण, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि रत्नप्रभा पृथ्वी कथचित् शाश्वत और कथचित् अशाश्वत है ।
सप्तम पृथ्वी तक ऐसा ही समझना चाहिए ।

[३] प्र०—भगवन् ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी काल (की दृष्टि) से कितने समय पर्यन्त रहने वाली है ?
उ०—गौतम ! (रत्नप्रभा पृथ्वी) कभी नही थी, ऐसा नही है; कभी नही है, ऐसा भी नही है; कभी नही होगी, ऐसा भी नही है । (यह) थी, है और रहेगी । (यह) ध्रुव है, नियत है, शाश्वत हैं, अक्षय है, अव्यय हैं, अवस्थित है, नित्य है ।
सप्तम पृथ्वी तक ऐसा ही समझना चाहिए ।

नारकों के स्थान

[२९][१] प्र०—कहि णं भंते ! नेरइयाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि णं भंते ! नेरइया परिवसंति ?
उ०—गोयमा ! सट्ठाणेणं सत्तसु पुढवीसु, तं जहा—
रयणप्पभाए—जाव—तमतमप्पभाए ।

—पण्ण. स्थानपद सू. १८ पृ० २३९

[२९][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त नैरयिको के स्थान कहाँ हैं ?
अर्थात् नारक जीव कहाँ निवास करते हैं ?
उ०—गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा सात पृथ्वियो मे नारक निवास करते हैं, वह इस प्रकार—
रत्नप्रभा मे—यावत्—तमस्तम प्रभा मे ।

नारकावास

[३०] एत्थ णं नेरइयाणं चउरासीइ निरयावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खायं,[1]
ते णं णरगा अंतो वट्टा, बाहिं चउरंसा, अहे खुरप्पसंठाणसंठिया,
निच्चंधयारतमसा, ववगयगह-चंद-सूर-नक्खत्त-जोइसियपहा,

१—(क) सम० ८४ ।
(ख) विवा भाग २ श. ६ प्र० १ पृ० ३१५

मेद-वसा-पूयपडल-रुहिर-मस-चिविखल्लताणुलेवणतला, असुई (वीसा) परमदुब्भिगधा, काउयअगणि-वन्नाभा, कक्खडफासा, दुरहियासा, असुभा णरगा, असुभा णरगेसु वेयणाओ,

एत्थ ण नेरइयाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता,

उववाएण लोयस्स असखेज्जभागे, समुग्घाएण लोयस्स असखेज्जइभागे, सट्ठाणेण लोयस्स असखेज्जइभागे।

एत्थ[1] ण बहवे नेरइया परिवसति—काला, कालोभासा, गभीरलोमहरिसा, भीमा, उत्तासणगा, परमकण्हा वन्नेण पन्नत्ता समणाउसो !

ते ण[2] तत्थ निच्च भीता, निच्च तसिया, निच्च उव्विग्गा, निच्च परममसुहसबद्ध णरगभयं पच्चणुभवमाणा विहरति।

—पण्ण पद २ पृ० २३९-२४१

[३०] यहाँ (पूर्वोक्त सात पृथ्वियो मे) नैरयिको के चौरासी लाख नारकावास कहे गए हैं। वे नारकावास अन्दर से गोल, बाहर से चौकोर और नीचे से छुरे के समान तीक्ष्ण हैं। सदैव महा अधकार से युक्त, ग्रह चन्द्र सूर्य नक्षत्र आदि ज्योतिष्को की प्रभा से रहित, मेद, चर्बी, मवाद-पटल, रुधिर और मास की कीचड से भरे तल वाले, अशुचि, अति दुर्गन्धमय, कापोत-अग्नि-के समान आभा वाले, कर्कश स्पर्श वाले दुस्सह एव अशुभ हैं।

इन नारकावासो मे अशुभ वेदनाएँ हैं।

यहाँ पर्याप्त और अपर्याप्त नैरयिको के स्थान बताए गए हैं। वे उपपात की दृष्टि से लोक के असख्यातवें भाग मे, समुद्घात की दृष्टि से लोक के असख्यातवें भाग मे तथा स्वस्थान की दृष्टि से भी लोक के असख्यातवें भाग मे हैं।

यहाँ बहुत से नारक निवास करते हैं। वे सब काले, काली आभा वाले, खड़े रोमाञ्च वाले, भयकर, त्रास-कारी एव परम कृष्ण वर्ण वाले हैं।

वे वहाँ सदैव भीत, त्रस्त, त्रसित एव उद्विग्न रहते हैं तथा अत्यन्त अशुभ नरकभय का अनुभव करते हुए विचरते हैं।

रत्नप्रभा पृथ्वी में नारकावास

[३१][१] प्र०—इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तर जोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरि केवतिय ओगाहेत्ता, हेट्ठा केवइय वज्जित्ता मज्झे केवतिए केवतिया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तर जोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरि एग जोयण-सहस्स ओगाहित्ता, हेट्ठा वि एग जोयणसहस्स वज्जेत्ता मज्झे अडसत्तरी जोयणसयसहस्सा, एत्थ णं रयणप्पभा ए, पुढवीए नेरइयाण तीस निरयावाससयसहस्साइ भवंतितिमक्खाया।[3]

ते ण णरगा अतो वट्टा, बाहि चउरसा, अहे खुरप्पसंठाणसंठिया, निच्चंधयारतमसा, ववगयगह-चद-सूर-नक्खत्त जोइसियपहा, मेद-वसा-पूयपडल-रुहिर-मसचिविखल्लताणुलेवणतला, असुई, वीसा परमदुब्भिगधा, काउयअगणिवन्नाभा कक्खडफासा, दुरहियासा, असुभा णरगा।

असुभा नरगेसु वेयणाओ।

—जीवा प्र ३ सूत्र ८१ पृ १०२, प्र ३ सूत्र ६८ पृ ८८

—पन्नवणा पद २ सूत्र १६, पृ २४३, ४४

—सम० १४६

—विवा० भा १ श १ उ ५ प्र १६४-१६५ पृ १४१

१—जीवा० सूत्र ८७ पृ० ११४

२— " सूत्र ८६ पृ० ११७

३—सम० ३० सूत्र ८

[३१][१] प्र०—एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के कितने भाग को अवगाहन करके और नीचे के कितने भाग को छोड कर कितने मध्यभाग मे कितने लाख नारकावास हैं ?

उ०—गौतम ! एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी रत्नप्रभा पृथ्वी का एक हजार योजन ऊपरी भाग अवगाहन करके अर्थात् एक हजार योजन नीचे जाकर और नीचे के भी एक हजार योजन को छोड कर, मध्य के एक लाख अठहत्तर हजार योजन मे रत्नप्रभा पृथ्वी के नारको के तीस लाख नारकावास है। वे नरक अन्दर गोलाकार, बाहर से चौकोर और नीचे छुरा के आकार के हैं। सदैव महान्धकार से युक्त, ग्रह चन्द्र सूर्य नक्षत्र आदि ज्योतिष्को की प्रभा से रहित, मेद, चर्बी, मवाद के पटल से तथा रुधिर एव मास के कीचड से व्याप्त तलभाग वाले, अशुचि, अत्यन्त दुर्गन्धमय, कापोत अग्नि के समान वर्ण वाले, कर्कश स्पर्श वाले, दुस्सह एव अशुभ हैं। इन नरको मे अशुभ वेदनाएँ हैं।

—विवा मा ३ श १३, उ. १, प्र ३ पृ० ३०१

— „ भा० ४ श २५ उ० प्र० ६१ पृ० २१४

— „ भा० २ श ६ उ ६ प्र १ पृ० ३१५

शर्कराप्रभा में नारकावास

[३२][१] प्र०—सक्करप्पभाए ण भंते ! पुढवीए बत्तीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं केवइयं ओगाहित्ता, हेट्ठा केवइयं वज्जेत्ता, मज्झे चेव केवइए केवइया णिरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! सक्करप्पभाए ण पुढवीए बत्तीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्स-मोगाहित्ता, हेट्ठा एग जोयणसहस्स वज्जेत्ता, मज्झे तीसुत्तरजोयणसयसहस्से एत्थ णं सक्करप्पभा-पुढविनेरइयाण पणवीसा[1] नरयावाससयसहस्सा भवतीतिमक्खायं।

ते णं णरगा अंतो वट्टा—जाव—असुभा नरएसु वेयणा।

—जीवा प्र ३ सूत्र ८१, पृ० १०२

—पन्न० पद २ सूत्र २० पृ० २४४, ४५।

—सम० २५

बालुकाप्रभा में नारकावास

[३३][१] प्र०—वालुयप्पभाए ण भंते ! पुढवीए अट्ठावीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं केवइयं ओगाहित्ता, हेट्ठा केवइयं वज्जित्ता, मज्झे केवइए केवइया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! वालुयप्पभाए पुढवीए अट्ठावीसुत्तर-जोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता, हेट्ठं एग जोयणसहस्स वज्जित्ता, मज्झे छव्वीसुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ ण वालुयप्पभा-पुढविनेरइयाण पण्णरस निरयावाससयसहस्सा भवतीति मक्खायं।

ते णं नरगा—जाव—असुभा नरगेसु वेयणा।

—जीवा प्र ३ सूत्र ८१, पृ० १०२

—पन्न० पद २ सूत्र २१, पृ० २४६

पंकप्रभा में नारकावास

[३४][१] प्र०—पंकप्पभाए णं भंते ! पुढवीए वीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं केवइयं ओगाहित्ता, हेट्ठा केवइयं वज्जित्ता, मज्झे केवइए केवइया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

---

१ सम० स० २५ सूत्र ४

उ०—गोयमा ! पंकप्पभाए ण पुढवीए वीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एग जोयणसहस्सं ओगाहित्ता, हिट्ठावि एग जोयणसहस्सं वज्जेत्ता मज्झे अट्ठारसुत्तरे जोयणसयसहस्से, एत्थ ण पंकप्पभापुढविनेरइयाण दस निरयावाससयसहस्सा भवतीति मक्खाय ।[1]

ते ण णरगा—जाव—असुभा नरगेसु वेयणा ।

—जीवा प्रति ३ सूत्र ८१, पृ० १०२
—पन्न पद २ सूत्र २२ पृ० २४७

धूमप्रभा में नारकावास

[३५][१] प्र०—धूमप्पभाए ण भते ! पुढवीए अट्ठारसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं केवइय ओगाहेत्ता, हेट्ठा केवइय वज्जित्ता मज्झे केवइए केवइया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! धूमप्पभाए ण पुढवीए अट्ठारसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एग जोयणसहस्समोगाहेत्ता, हेट्ठा एग जोयणसहस्स वज्जेत्ता, मज्झे सोलसुत्तरे जोयणसयसहस्से, एत्थ ण धूमप्पभापुढविनेरइयाण तिन्नि नेरइयावाससयसहस्सा भवतीति मक्खाय ।

ते ण णरगा अतो वट्टा—जाव—असुभा नरगेसु वेयणा इति ।

—जीवा प्रति ३ सूत्र ८१
—पन्न पद २ सूत्र २३, पृ० २४८
—सम० १८ सूत्र ७

तमःप्रभा में नारकावास

[३६][१] प्र०—तमप्पभाए ण भते ! पुढवीए सोलसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं केवतिय ओगाहेत्ता, हेट्ठा केवतिय वज्जेत्ता, मज्झे केवतिए केवतिया नरगावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! तमप्पभाए ण पुढवीए सोलसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एग जोयणसहस्समोगाहेत्ता, हेट्ठा एग जोयणसहस्स वज्जेत्ता, मज्झे चोद्दसुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ ण तमापुढविनेरइयाण एगे पचूणे नरगावाससयसहस्से भवतीति मक्खाय ।

ते ण णरगा अतो वट्टा—जाव—असुभा नरगेसु वेयणा ।

—जीवा प्रति ३ सूत्र ८१, पृ० १०२
—पन्न पद २ सूत्र २४ पृ० २४९

तमस्तमःप्रभा में नारकावास

[३७][१] प्र०—अहेसत्तमाए ण भते ! पुढवीए अट्ठोत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं केवइय ओगाहेत्ता, हेट्ठा केवइय वज्जेत्ता, मज्झे केवइए केवइया अणुत्तरा महइमहालया महानरगावासा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! अहेसत्तमाए पुढवीए अट्ठोत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं अद्धतेवण्ण जोयणसहस्साइं ओगाहेत्ता हेट्ठा वि अद्धतेवण्ण जोयणसहस्साइ वज्जित्ता मज्झे तिसु जोयणसहस्सेसु एत्थ णं अहेसत्तमपुढविनेरइयाण पंच अणुत्तरा महइमहालया महानिरया पण्णत्ता । तजहा—

काले, महाकाले, रोरुए, महारोरुए, मज्झे अप्पइट्ठाणे ।

ते ण महानरगा अंतो वट्टा—जाव—असुभा महानरगेसु वेयणा इति ।

---

१. सम० १० सूत्र ११ ।

गाहाओ

आसीयं बत्तीसं अट्ठावीस तहेव वीसं च ।
अट्ठारस सोलसगं अट्ठुत्तरमेव हेट्ठिमया[1] ॥१॥
अट्ठुत्तरं च तीसं छव्वीसं चेव सयसहस्सं तु ।
अट्ठारस सोलसगं चोद्दसमहियं तु छट्ठीए ॥२॥
अद्ध तिवण्णसहस्सा उवरिमहे वज्जिऊण तो भणिया ।
मज्झे तिसु सहस्सेसु होंति निरया तमतमाए ॥३॥
तीसा य पण्णवीसा पण्णरस दस चेव सयसहस्साइं ।
तिन्नि य पंचूणेगं पंचेव अणुत्तरा निरया[2]—॥४॥

—जीवा. प्रति. ३ सूत्र ८१, पृ० १०२
—पन्न पद २, सूत्र २५, पृ० २५१

[३२][१] प्र०—भगवन् ! एक लाख बत्तीस हजार योजन मोटी शर्कराप्रभा पृथ्वी का कितना ऊपरी भाग अवगाहन करके और कितना नीचे का भाग छोड कर, कितने मध्यभाग मे कितने लाख नारकावास हैं ?

उ०—गौतम ! एक लाख बत्तीस हजार योजन मोटी शर्कराप्रभा पृथ्वी के ऊपर के एक हजार योजन और नीचे के भी एक हजार योजन भाग को छोड कर बीच के एक लाख तीस हजार योजन भाग मे शर्कराप्रभा पृथ्वी के नारको के पच्चीस लाख नारकावास हैं । वे नारकावास अन्दर से गोल—यावत्—अशुभ वेदना वाले हैं ।

---

१. प्र०—इमा णं रयणप्पभा पुढवी केवतिया बाहल्लेणं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! इमा णं रयणप्पभा पुढवी असिउत्तर जोयणसयसहस्सं बाहल्लेणं पण्णत्ता ।

एवं एतेणं अभिलावेणं इमा गाहा अणुगंतव्वा—

गाहा—आसीतं बत्तीसं अट्ठावीसं तहेव वीसं च ।
अट्ठारस-सोलसगं अट्ठुत्तरमेव हिट्ठिमिया ॥

—जीवा० सूत्र ६८ पृ ८८

२, पढम-पंचम-छट्ठी-सत्तमीसु चउसु पुढवीसु चोतीस निरयावाससयसहस्सा प० । —सम० ३४.
बितिय-चउत्थीसु दोसु पुढवीसु पणतीस निरयावाससयसहस्सा प० —सम० ३५.
दोच्च-चउत्थ-पंचम-छट्ठ-सत्तमासु णं पंचसु पुढवीसु एगूणचत्तालीस निरयावाससयसहस्सा प० । —सम० ३९.
चउसु पुढवीसु एक्कचत्तालीसं निरयावाससयसहस्सा प०, तंजहा-रयणप्पभाए, पंकप्पभाए, तमाए, तमतमाए ।
—सम० ४१.
पढम-चउत्थ-पंचमासु पुढवीसु तेयालीसं निरयावाससयसहस्सा प० । —सम० ४३.
पढम-बिइयासु दोसु पुढवीसु पणवन्नं निरयावाससयसहस्सा प० । —सम० ५५.
पढम-दोच्च-पंचमासु तिसु पुढवीसु अट्ठावन्नं निरयावाससयसहस्सा प० । —सम० ५८.
चउत्थवज्जासु छसु पुढवीसु चोवत्तरिं निरयावाससयसहस्सा प० । —सम० ७४.

प्रथम, पचम, षष्ठ और सप्तम, इन चार पृथ्वियो मे (सब के मिला कर) चौतीस लाख नारकावास हैं ।
द्वितीय तथा चतुर्थ, इन दोनो पृथ्वियों मे पैंतीस लाख नारकावास हैं ।
द्वितीय, चतुर्थ, पचम, षष्ठ और सप्तम, इन पाचो पृथ्वियो मे उनतालीस लाख नारकावास हैं ।
चार पृथ्वियो मे इकतालीस लाख नारकावास है, यथा—रत्नप्रभा, पकप्रभा, तम प्रभा और तमस्तम:प्रभा ।
प्रथम, चतुर्थ तथा पचम पृथ्वियो मे तयालीस लाख नारकावास है ।
प्रथम तथा द्वितीय, दोनो पृथ्वियो में पचपन लाख नारकावास हैं ।
प्रथम, द्वितीय और पचम, इन तीन पृथ्वियो मे अठावन लाख नारकावास हैं ।
चतुर्थ को छोड़ कर शेष छह पृथ्वियो मे चौहत्तर लाख नारकावास हैं ।

[३३][१] प्र०—भगवन् ! एक लाख अट्ठाईस हजार योजन मोटी वालुकाप्रभा पृथ्वी के ऊपरी कितने और निचले कितने भाग को छोड कर मध्य के कितने भाग मे कितने लाख विमान हैं ?

उ०—गौतम ! एक लाख अट्ठाईस हजार योजन मोटी वालुकाप्रभा पृथ्वी के नीचे और ऊपर के एक-एक हजार योजन भाग को छोड कर मध्य के एक लाख छब्वीस हजार योजन भाग मे वालुकाप्रभा पृथ्वी के नारको के पन्द्रह लाख नारकावास हैं। वे नरक—यावत्—अशुभ वेदना से युक्त हैं।

[३४][१] प्र०—भगवन् ! पकप्रभा पृथ्वी, जो एक लाख बीस हजार योजन मोटी है, उसके कितने ऊपरी भाग और कितने नीचे के भाग को छोड कर मध्य के कितने भाग मे कितने लाख नारकावास हैं ?

उ०—गौतम ! एक लाख बीस हजार योजन मोटी पकप्रभा पृथ्वी के ऊपरी एक हजार और नीचे के भी एक हजार योजन को छोड कर बीच के एक लाख अठारह हजार योजन मे पकप्रभा पृथ्वी के नारको के दस लाख नारकावास हैं। वे नरक—यावत्—अशुभ वेदना वाले हैं।

[३५][१] प्र०—भगवन् ! एक लाख अठारह हजार योजन मोटी धूमप्रभा पृथ्वी के कितने ऊपरी भाग और कितने निचले भाग को छोड कर मध्य के कितने भाग मे कितने लाख नारकावास हैं ?

उ०—गौतम ! एक लाख अठारह हजार योजन मोटी धूमप्रभा पृथ्वी के ऊपर के एक हजार और नीचे के एक हजार योजन को छोड कर मध्य के एक लाख सोलह हजार योजन मे धूमप्रभा पृथ्वी के नारको के तीन लाख नारकावास हैं। वे नारकावास अन्दर से गोल—यावत्—अशुभ वेदना से युक्त हैं।

[३६][१] प्र०—भगवन् ! एक लाख सोलह हजार योजन मोटी तम प्रभा पृथ्वी के ऊपर के कितने भाग को और नीचे के कितने भाग को छोड कर बीच के कितने भाग मे कितने लाख नारकावास हैं ?

उ०—गौतम ! एक लाख सोलह हजार योजन मोटी तम प्रभा पृथ्वी के ऊपर के एक हजार और नीचे के एक हजार योजन को छोड कर मध्य के एक लाख चौदह हजार योजन मे तम प्रभा पृथ्वी के नारको के पाच कम एक लाख नारकावास हैं। वे नरक अन्दर से गोल—यावत्—अशुभ वेदना वाले हैं।

[३७][१] प्र०—भगवन् ! एक लाख आठ हजार योजन मोटी तमस्तम पृथ्वी के ऊपर के और नीचे के कितने भाग को छोड कर मध्य के कितने भाग मे कितने लाख नारकावास हैं ?

उ०—गौतम ! एक लाख आठ हजार योजन मोटी तमस्तम प्रभा पृथ्वी के ऊपर के साढे बावन और नीचे के भी साढे बावन हजार योजन भाग को छोड कर मध्य के तीन हजार योजन मे तमस्तम प्रभा पृथ्वी के नारको के पाच अनुत्तर—महत्तम—महानारकावास हैं, जिनके नाम ये हैं—काल, महाकाल, रोरुअ, महारोरुअ, और अप्रतिष्ठान। वे महानरक अन्दर से गोल—यावत्—अशुभ वेदना से युक्त हैं।

गाथाओ का अर्थ

सात नरक-पृथ्वियो का पिण्ड अर्थात् मोटापन क्रमश इस प्रकार है—१–एक लाख अस्सी हजार योजन, २–एक लाख वत्तीस हजार योजन, ३–एक लाख अट्ठाईस हजार योजन, ४–एक लाख बीस हजार योजन, ५–एक लाख अठारह हजार योजन, ६–एक लाख सोलह हजार योजन, ७–एक लाख आठ हजार योजन ॥१॥

सात पृथ्वियो का मध्य भाग—जिसमे नारकावास हैं, क्रमश इस प्रकार है—१–एक लाख अठहत्तर हजार योजन, २–एक लाख तीस हजार योजन, ३–एक लाख छब्बीस हजार योजन, ४–एक लाख अठारह हजार योजन, ५–एक लाख सोलह हजार योजन, ६—एक लाख चौदह हजार योजन, ७–तीन हजार योजन ॥२-३॥

सात नरको मे नारकावासो की सख्या क्रमश इस प्रकार है—१–तीस लाख, २–पच्चीस लाख, ३–पन्द्रह लाख, ४–दस लाख, ५–तीन लाख, ६–पाच कम एक लाख, ७–पाच ॥४॥

नारकावासों का संस्थान

[३८][१] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए णरका किंसठिया पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—
आवलियपविट्ठा य, आवलियबाहिरा य,
तत्थ णं जे ते आवलियपविट्ठा ते तिविहा पण्णत्ता, तजहा-वट्टा, तंसा, चउरंसा ।
तत्थ ण जे ते आवलियबाहिरा ते णाणासठाणसठिया पण्णत्ता, तजहा—
अयकोट्ठसठिआ, पिट्ठपयणगसठिआ, कडूसठिआ, लोहीसठिया,
कडाहसठिआ, थालीसठिआ, पिहडगसठिआ, किमियडसठिआ, किन्नपुडगसंठिआ, उडवसंठिआ, मुरवसंठिआ, मुयगसठिआ, नंदिमुयगसठिआ, आलिंगकसंठिआ, सुघोससठिआ, दद्दरयसंठिआ, पणवसंठिआ, पडहसंठिआ, भेरिसठिआ, झल्लरीसठिआ, कुतु बकसंठिआ, नालिसठिआ,
एवं—जाव—तमाए ।

[२] प्र०—अहेसत्तमाए ण भंते ! पुढवीए णरका किंसठिआ पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—
वट्टे य, तसा य ।

—जीवा० सूत्र ८२ पृ० १०४

[३८][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे नरक किस आकार के हैं ?
उ०—गौतम ! नरक दो प्रकार के है—आवलिकाप्रविष्ट और आवलिकाबाह्य ।
इनमे जो आवलिकाप्रविष्ट है वे तीन प्रकार के हैं, यथा—गोल, त्रिकोण और चौकोर ।
इनमे जो आवलिकाबाह्य हैं वे अनेक आकार के हैं,
यथा—अयकोष्ठ, पिष्टपचनक, कडू, लोही, कडाह, थाली, पिहडक, कृमिपट,
किन्नपुटक, उडव, मुरव मृदग, नन्दिमृदग, आलिंगक, सुघोश दर्दरक, पणव, पटह, भेरी, झालर,
कुतु वक, नाली ।
तम प्रभा पर्यन्त ऐसा ही समझना चाहिए ।

[२] प्र०—भगवन् ! तमस्तम प्रभा पृथ्वी मे नरक किस आकार के हैं ?
उ०—गौतम ! दो प्रकार (आकार) के हैं, यथा—गोल और त्रिकोण ।

नारकावासों का परिमाण

[३९][१] प्र०—इसीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए नरका केवतियं बाहल्लेणं पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! तिण्णि जोयणसहस्साइ बाहल्लेणं पण्णत्ता, तंजहा-हेट्ठा घणा सहस्सं, मज्झे झुसिरा सहस्सं,
उप्पि संकुइया सहस्सं,
एव—जाव—अहेसत्तमाए ।

[२] प्र०—इमीसे णं भंते ! रयणप्पभापुढवीए नरगा केवतियं आयामविक्खंभेणं, केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तंजहा—
संखिज्जवित्थडा[1] य, असंखेज्जवित्थडा य ।
तत्थ णं जे ते सखिज्जवित्थडा ते ण सखेज्जाइं जोयणसहस्साइं आयामविक्खभेणं, संखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिक्खेवेण पण्णत्ता,

---

1—सीमंतए णं नरए पणयालीस जोयणसयसहस्साइ आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते—

समं० ४५ सूत्र २ ।

प्रथम नरक के प्रथम प्रस्तट मे सीमतक नाम का नारकावास पैतालीस लाख योजन लबा-चौडा कहा है ।

तत्य ण जे ते असखिज्जवित्थडा ते ण असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ आयामविक्खमेण, असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ परिक्खेवेण पण्णत्ता,
एव—जाव—तमाए ।

[३] प्र०—अहेसत्तमाए ण भते ! पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तजहा—
सखेज्जवित्थडे[1] य, असखेज्जवित्थडा य ।
तत्य ण जे ते सखेज्जवित्थडे से ण एक्क जोयणसयसहस्स आयामविक्खमेण, तिन्नि जोयणसय-सहस्साइ सोलस सहस्साइं दोन्नि य सत्तावीसे जोयणसए तिन्नि कोसे य अट्ठावीस च धणुसत तेरस य अगुलाइ अद्धगुल च किंचिविसेसाधिए परिक्खेवेण पण्णत्ते ।
तत्य ण जे ते असखेज्जवित्थडा ते ण असखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइ आयामविक्खमेण, असखेज्जाइं —जाव—परिक्खेवेण पण्णत्ता ।

—जीवा० सूत्र ८२ पृ १०४–५
—विवा भाग ३ श १३ उ १, प्र ३,८–१३, पृ ३०१–५

[३९][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नरक (नारकावास) कितने मोटे हैं ?
उ०—गौतम ! तीन हजार योजन मोटाई वाले हैं, यथा—नीचे एक हजार योजन घन हैं, मध्य मे एक हजार योजन पोले हैं और ऊपर एक हजार योजन सकुचित हैं। इसी प्रकार सातवी पृथ्वी तक समझना चाहिए ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नरक कितने लम्बे-चौडे एव कितनी परिधि वाले हैं ?
उ०—गौतम ! दो प्रकार के विस्तार वाले हैं, यथा—सख्येय-विस्तार वाले और असख्येय विस्तार वाले । इनमे से जो सख्येय विस्तार वाले हैं उनकी लम्बाई-चौडाई सख्येय सहस्र योजन की एव परिधि भी सख्येय सहस्र योजन की है । जो असख्येय विस्तार वाले हैं उनकी लम्बाई-चौडाई असख्येय सहस्र योजन की और परिधि भी असख्येय सहस्र योजन की है ।
तम प्रभा पृथ्वी पर्यन्त ऐसा ही समझना चाहिए ।

[३] प्र०—भगवन् ! सप्तम पृथ्वी के नरक कितने लम्बे-चौडे एव कितनी परिधि वाले हैं ?
उ०—गौतम ! दो प्रकार के विस्तार वाले है, यथा—सख्येय-विस्तार वाले और असख्येय विस्तार वाले । इनमे से जो सख्येय विस्तार वाले हैं वे एक लाख योजन लम्बे-चौडे एव तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन, तीन कोस, एक सौ अट्ठाईस धनुष, किंचित् अधिक साढे तेरह अगुल की परिधि वाले हैं । जो असख्येय विस्तार वाले हैं वे असख्य लाख योजन लम्बे-चौडे एव असख्य लाख योजन की परिधि वाले है ।

नारकावासों का विस्तार

[४०][१] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए नरका केमहालिया पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! अयण्ण जवुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भतरए, सव्वखुड्डाए, वट्टे तेल्लापूवसंठाण-सठिते, वट्टे रयचक्कवालसठाणसठिते, वट्टे पुक्खरकण्णियासठाणसठिते, वट्टे पडिपुण्णचदसठाणसठिते, एक्कं जोयणसयसहस्स आयामविक्खमेण—जाव—किंचि—विसेसाहिए परिक्खेवेण ।
देवे ण महिड्ढिए—जाव—महाणुभागे—जाव—

१–अप्पइट्ठाणे नरए एग जोयण-सय-सहस्सं आयामविक्खमेण पण्णत्ते ।

सम० १ सूत्र २० ।

सप्तम नरक मे अप्रतिष्ठान नाम का नारकावास एक लाख योजन लवा चौडा कहा है ।

इणामेव इणामेवत्ति कट्टु इमं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं तिहिं अच्छरानिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणु-परियट्टित्ता णं हव्वमागच्छेज्जा,
से णं देवे ताए उक्किट्ठाए तुरिताए चवलाए चडाए सिग्घाए उद्धुयाए जयणाए छेगाए दिव्वाए दिव्वगतीए वीतिवयमाणे २ जहण्णेणं एगाहं वा दुयाहं वा तिआहं वा उक्कोसेणं छम्मासेणं वीतिवएज्जा,
अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीतिवएज्जा ।
एमहालया ण गोयमा ! इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए णरगा पण्णत्ता,
एव—जाव—अधेसत्तमाए,
णवर—अधेसत्तमाए अत्थिगतिय नरग वीइवइज्जा,
अत्थेगइए नरग नो वीतिवएज्जा ।

—जीवा सूत्र ८४ पृ० १०८

[४०][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नरक कितने विशाल हैं ?

उ०—गौतम ! यह जम्बूद्वीप सब द्वीप-समुद्रो के मध्य मे है, सब से छोटा है, तेल मे तले हुए पुये के समान गोल है, रथ के चक्रवाल के समान गोल है, कमल की कर्णिका के समान गोल है, प्रतिपूर्ण चन्द्रमा के समान गोल है, एक लाख योजन लम्बा-चौडा है,—यावत्—किंचित् अधिक तीन लाख योजन की परिधि वाला है ।

इस प्रकार के जम्बूद्वीप की तीन चुटकियो मे इक्कीस वार परिक्रमा करके आ जाने वाला कोई महर्धिक—यावत्—महानुभाव देव हो । वह ऐसी उत्कृष्ट, त्वरित, चपल, चड, शीघ्र, उद्धूत, वेगयुक्त, छेक एव दिव्य देवगति से गमन करता हुआ जघन्य एक दिन, दो दिन अथवा तीन दिन एव उत्कृष्ट छह मास चले तो कतिपय नारकावासो की भूमि का उल्लघन (पार) कर सकता है, कतिपय नारकावासो को नही पार कर सकता है। हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के नरक इतने विशाल है । सप्तम पृथ्वी तक ऐसा ही समझना चाहिए ।

सप्तम पृथ्वी के विषय मे विशेषता यह है कि एक नारकावास को पार कर सकता है, किसी-किसी को अर्थात् शेष को पार नही कर सकता ।

नारकावासों का वर्णादि

[४१][१] प्र०—इमीसे णं भते ! रयणप्पभाए पुढवीए नरया केरिसया वण्णेणं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! काला कालावभासा गंभीरलोमहरिसा भीमा उत्तासणया परमकिण्हा वण्णेणं पण्णत्ता,
एवं—जाव—अधेसत्तमाए ।

[२] प्र०—इमीसे ण भते ! रयणप्पभाए पुढवीए णरका केरिसया गंधेणं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! से जहानामए अहिमडेति वा, गोमडेति वा, सुणगमडेति वा, मज्जारमडेति वा, मणुस्समडेति वा, महिसमडेति वा, मूसगमडेति वा, आसमडेति वा, हत्थिमडेति वा, सीहमडेति वा, वग्घमडेति वा, विगमडेति वा, दीवियमडेति वा, मयकुहियचिरविणट्ठकुणिमवावण्णदुब्भिगंधे, असुइविलीण-विगतवीभत्थदरिसणिज्जे, किमिजालाउलसंसत्ते, भवेयारूवे सिया ? णो इणट्ठे समट्ठे ।
गोयमा ! इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए णरगा एत्तो अणिट्ठतरका चेव, अकंततरका चेव—जाव—अमणामतरा चेव गधेण पण्णत्ता ।
एवं—जाव—अधेसत्तमाए पुढवीए ।

[३] प्र०—इमीसे णं भते ! रयणप्पभापुढवीणरया केरिसया फासेणं पण्णत्ता ?
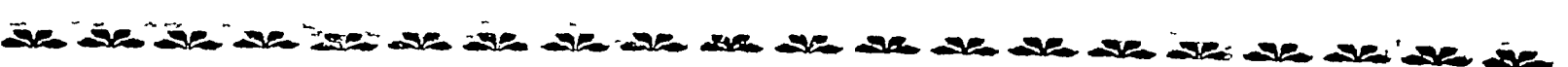
उ०—गोयमा ! से जहानामए असिपत्तेइ वा, खुरपत्तेइ वा, कलवचीरियापत्तेइ वा, सत्तग्गेइ वा, कुतग्गेइ वा, तोमरग्गेइ वा, नारायग्गेइ वा, सूलग्गेइ वा, लउलग्गेइ वा, भिडिमालग्गेइ वा, सूचिकलावेति वा, कवियच्छूति वा, विच्छुयकटएति वा इगालेति वा, जालेति वा, मुम्मुरेति वा, अच्चित्ति वा, अलाएति वा, सुद्धागणीइ वा, भवे एतारूवे सिया ?

णो तिणट्ठे समट्ठे । गोयमा ! इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए णरगा एत्तो अणिट्ठतरा चेव-जाव-अमणामतरका चेव फासेण पण्णत्ता ।

एव-जाव-अधेसत्तमाए पुढवीए ।

—जीवा० सूत्र ८३ पृ० १०६-७

[४१] [१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नारकावास कैसे वर्ण के हैं ?

उ०—गौतम ! काले, काले अवभास वाले गभीर लोमहर्ष वाले, भीम, त्रास उत्पन्न करने वाले एव परम कृष्ण वर्ण वाले हैं । सप्तम नरकभूमि तक ऐसा ही जानना चाहिए ।

[२] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नारकावास कैसी गध वाले है ?

उ०—गौतम ! जैसे सर्प का मृत कलेवर, गौ का मृत कलेवर, श्वान का मृत कलेवर, मार्जार का मृत कलेवर, मनुष्य का मृत कलेवर, महिप (भैंसे) का मृत कलेवर, मूसक का मृत कलेवर, अश्व का मृत कलेवर, हस्ती का मृत कलेवर, सिंह का मृत कलेवर, व्याघ्र का मृत कलेवर, भेडिया का मृत कलेवर, अथवा द्वीपिक का मृत कलेवर, जो वहुत समय से पडा हो, विनष्ट हो रहा हो, सड कर दुर्गन्ध दे रहा हो, अशुचि के समान क्लेशकारी परिणाम उत्पन्न करने वाला हो, देखने मे वीभत्स हो तथा जिसमे कीडो का समूह विलविला रहा हो, क्या उसकी दुर्गन्ध के समान (रत्नप्रभा पृथ्वी के नरको की दुर्गन्ध) है ? नही, ऐसा नही है ।

गौतम ! इस रत्नप्रभा के नारकावास इससे भी अधिक अनिष्ट, अकान्त,-यावत्-अतिशय अमनोज्ञ गध वाले हैं । सप्तम पृथ्वी के नरको तक ऐसा ही जानना चाहिए ।

[३] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नरक किस प्रकार के स्पर्श वाले हैं ?

उ०—गौतम ! जिस प्रकार असिपत्र, क्षुरपत्र, कदम्बचीरिकापत्र, शक्ति का अग्रभाग (नौक), कुन्त का अग्रभाग, तोमर का अग्रभाग, नाराच का अग्रभाग, शूल का अगभाग, लकुलाग्रभाग, भिंडिमाल का अग्रभाग, सूचीकलाप (सुइयो का समूह), कपिकच्छू (करौंच), विच्छू का डक, अग्नि, ज्वाला, मुर्मुर, अर्चि (लपट), अलात अथवा शुद्धाग्नि, क्या (रत्नप्रभा के नरको का स्पर्श) ऐसा है ? नही, ऐसा नही है । गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के नरक इससे भी अनिष्टतर-यावत्-अमनामतर स्पर्श वाले हैं । सप्तम पृथ्वी के नरको तक यही बात समझनी चाहिए ।

वज्रमय नारकावास

[४२][१] प्र०—इमीसे ण भते रयणप्पभाए पुढवीए णरगा किंमया पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! सव्वइरामया पण्णत्ता ।

—जीवा सूत्र ८५ पृ० १०९

[४२][१] प्र०—भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नरक किसके वने हैं ?
उ०—गौतम ! पूरी तरह वज्रमय-वज्र के हैं ।

भवनावास

भवनवासी देवों के स्थान

[१][१] प्र०—कहि णं भंते ! भवणवासीणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता—
कहि णं भंते ! भवणवासी देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तर-जोयण-सयसहस्सबाहल्लाए
उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता,
हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जित्ता, मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयण सयसहस्से एत्थ णं भवणवासीणं देवाणं सत्त भवनकोडीओ बावत्तरि भवणावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खाय[1]।

—पन्न० पद २ पृ २५५-६

[१][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त भवनवासी देवो के स्थान कहा हैं—
भगवन् ! भवनवासी देव कहाँ रहते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी का एक लाख अस्सी हजार योजन का पिण्ड (मोटापन) है। इसमे से एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे का भाग छोडकर बीच मे एक लाख अठहत्तर हजार योजन के पिंड मे भवनवासी देवो के सात करोड बहत्तर लाख भवनावास है।

असुरकुमारों के स्थान

[२][१] प्र०—अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे असुरकुमारा देवा परिवसंति ?
उ०—गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।
एवं-जाव-अहेसत्तमाए पुढवीए,

[२] प्र०—सोहम्मस्स कप्पस्स अहे-जाव-अत्थि णं भंते ! ईसिपब्भाराए पुढवीए अहे असुरकुमारा देवा परिवसंति ?
उ०—नो इणट्ठे समट्ठे।

[३] प्र०—से कहिं खाइ णं भंते ! असुरकुमारा देवा परिवसंति ?
उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीओ, (उ)त्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए,
एवं[2] असुरकुमारदेववत्तव्वया,-जाव-दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति।

—विवा. भाग २ श, ३ उ. १ प्र १-३, पृ ८४

[२][१] प्र०—भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे असुरकुमार देव रहते हैं ?
उ०—गौतम ! नही, ऐसा नही है।
इसी प्रकार सप्तम पृथ्वी पर्यन्त जानना चाहिए।

---

१. (क)-जीवा. सूत्र ११६ पृ. १५८
(ख)-सम. १५०
(ग)-विवा. भाग १ श. २ उ ७ प्र. ५० पृ. २६५
२. पण्ण. पद २, पृ. २६५-२६८।

[२] प्र०—भगवन् ! क्या सौधर्मकल्प के नीचे-यावत्-ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के नीचे असुरकुमार देव रहते हैं ?
उ०—नही, ऐसा नही है ।

[३] प्र०—भगवन् ! तो फिर असुरकुमार देव कहा रहते हैं ?
उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के एक लाख अस्सी हजार योजन के पिण्ड मे से (एक हजार ऊपर और एक हजार नीचे के भाग को छोडकर) बीच मे असुरकुमार देवो के आवास हैं । यहा असुरकुमारो की वक्तव्यता कहनी चाहिए,-यावत्-वे दिव्य भोग भोगते हुए रहते हैं ।

[३] [१] प्र०—कहि ण भते ! असुरकुमाराण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ?
कहि ण भते ! असुरकुमारा देवा परिवसति ?
उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए—जाव—मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से, एत्थ-ण असुरकुमाराणं देवाण चउसट्ठि भवणावाससयसहस्सा भवतीति मक्खाय ।[1]
ते ण भवणा बाहि वट्टा—जाव—पडिरूवा,
एत्थ ण असुरकुमाराण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ।
तीसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे ।
तत्थ ण बहवे असुरकुमारा देवा परिवसति ।
काला, लोहियक्खबिबोट्ठा, धवलपुप्फदता, असियकेसा, वामे एगकुडलधरा, अद्दचदणाणुलित्तगत्ता,
ईसिसिलिधपुप्फपगासाइ असकिलिट्ठाइ सुहुमाइ वत्थाइ पवरपरिहिया,
वय च पढम समइक्कता, बिइय च असपत्ता,
भद्दे जोव्वणे वट्टमाणा,
तलभगयतुडियपवरभूसणनिम्मलमणिरयणमडितभुया, दसमुद्दामडियग्गहत्था,
चूडामणिविचित्तचिधगया, सुरूवा—जाव—दिव्वाइं भोगभोगाइ भुजमाणा विहरति ।
—पन्न पद २ पृ० २६५-२६८

[३] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त असुरकुमार देवो के स्थान कहाँ हैं ? अर्थात् भगवन् ! असुरकुमार देव कहाँ रहते हैं ?
उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे (ऊपर-नीचे एक-एक हजार योजन छोडकर) एक लाख अठहत्तर हजार योजन के पृथ्वीपिण्ड मे असुरकुमार देवो के चौसठ लाख भवनावास हैं ।
ये भवन बाहर से गोल—यावत्—प्रतिरूप हैं । यही पर्याप्त और अपर्याप्त असुरकुमार देवो के स्थान हैं । ये भी उपपात समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवें भाग मे हैं ।
यहाँ अनेक असुरकुमार देव रहते हैं ।
ये देव काले, लाल नेत्रो वाले, बिम्बफल के समान (लाल) ओष्ठ वाले, श्वेत पुष्प के समान दाँतो वाले, काले केशो वाले, वाम कर्ण मे एक कुडल धारण करने वाले, आर्द्र चन्दन से शरीर का लेपन करने वाले, किंचित् शिलिन्ध्र पुष्प के वर्ण के सदृश तथा अत्यन्त सुखद होने से तनिक भी सक्लेश न उत्पन्न करने वाले मुलायम एव हल्के वस्त्रो को धारण करने वाले, प्रथम वय (कुमारावस्था) को पार कर द्वितीय वय (पूर्ण यौवनावस्था) को असप्राप्त अर्थात् भद्र यौवनावस्था मे

१—(क) जीवा सूत्र ११७ पृ १५६
(ख) सम ६४
(ग) विवा भाग १ श १ उ. ५ प्र. १६६ पृ १४२
(घ) " " ४ श १६ उ. ७ प्र १ पृ ८६
(ङ) " " ३ श १३ उ. २ प्र ३ पृ ३०७

रहने वाले, तलभगक, त्रुटित तथा अन्य श्रेष्ठ आभूषणो तथा निर्मल मणिरत्नो से मण्डित भुजा वाले, हाथो की अगुलियो मे दस अगूठिया धारण करने वाले, चूडामणि के अद्‌भुत चिह्न वाले, सुरूप–यावत्–दिव्य भोग भोगते हुए रहते है।

[४] ते ण भवणा बाहिं वट्टा, अतो चउरसा, अहे पुक्खरकन्नियासठाणसठिया, उक्किन्नंतरविउलगंभीरखात-फलिहा, पागार-ट्टालय-कवाड-तोरण-पडिदुवारदेसभागा, जत-सयग्घि-मुसल-मुसढि-परियारिया, अउज्झा, सदाजया, सदागुत्ता, अडयालकोट्ठगरइया, अडयालकयवणमाला, खेमा, सिवा, किंकरामरदंडोवरक्खिया लाउल्लोइयमहिया, गोसीस-सरस-रत्तचदणदद्दरदिन्नपचगुलितला, उवचियचंदणकलसा, चंदणघड-सुकयतोरण-पडिदुवारदेसभागा,
आसत्तोसत्त-विउल-वट्टवग्घारियमल्लदामकलावा,
पंचवन्न-सरस-सुरभि-मुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिया,
कालागुरु-पवरकुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूवमघमघतगधुद्धुयाभिरामा, सुगधवरगंधिया, गंधवट्टिभूया,
अच्छरगणसघसविगिन्ना, दिव्वतुडियसद्दसंपणादिया,
सव्वरयणामया, अच्छा, सण्हा, लण्हा, घट्ठा, मट्ठा, णीरया, निम्मला, निप्पंका, निक्ककडच्छाया, सप्पहा, ससिरिया, समरीइया, सउज्जोया, पासादीया, दरिसणिज्जा, अभिरूवा, पडिरूवा,
एत्थ णं भवणवासिदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता,
उववाएण लोगस्स असखेज्जइभागे, समुग्घाएण लोयस्स असखेज्जइभागे, सट्ठाणेण लोयस्स असखेज्जइभागे।

—पन्न पद २ पृ. २५५
—जीवा सूत्र ११६ पृ १५८
—सम १४९

[४] (भवनवासी देवो के) वे भवन बाहर से गोल, अन्दर से चौकोर, नीचे से कमल की कर्णिका के समान हैं। इनके चारो ओर स्पष्ट अन्तर वाली, विस्तीर्ण और गहरी खात (खाई) एव परिखा है। ये प्राकार अट्टालक, कपाट, तोरण एव प्रतिद्वार से युक्त हैं। यत्र, शतघ्नी, मूसल, मुसढी आदि शस्त्रो से सज्जित हैं। इस कारण वे अयोध्य है—वहाँ कोई युद्ध करने मे समर्थ नही है, सदा विजयशील तथा गुप्त—शत्रु के प्रवेश से रहित हैं। उनमे अडतालीस कोठे और अडतालीस वनमालाएँ है। वे क्षेमकारी और कल्याण-कारी हैं। किंकर देव इनकी रक्षा करते हैं। गोमय तथा चूने से लिपे-पुते एव श्रेष्ठ हैं। रक्त चन्दन तथा गोशीर्ष चन्दन से वहाँ हाथे लगाए हुए हैं। चन्दन-चर्चित कलशो से सुशोभित है। चन्दन-चर्चित घटो से निर्मित तोरणो से शोभायमान हैं। नीचे तक लटकती हुई विपुल वर्तुलाकार मालाओ के समूह से शोभित हैं। पच वर्ण के सरस सुरभित फैलाए हुए पुष्पो के पुज से शोभायमान हैं। कृष्ण अगर, प्रवर कुन्दुरुष्क, तुरुष्क (लोभान), धूप आदि से मघमघायमान होने से अभिराम हैं। श्रेष्ठ सुगध से सुवासित हैं अतएव सुगधद्रव्य की गोली जैसे प्रतीत होते है। अप्सराओ के समूह से व्याप्त हैं। दिव्य वाद्यो के नाद से गुजायमान हैं। पूरी तरह रत्नमय हैं, आकाश के समान स्वच्छ है। चिकने, मुलायम, घटारे और मठारे हैं। नीरज, निर्मल, निष्पक, निरावरण कान्ति वाले, प्रभायुक्त, सश्रीक, किरणो वाले, सोद्योत, प्रासादिक, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप हैं। इनमे पर्याप्त और अपर्याप्त भवनवासी देवो के स्थान हैं।

ये उपपात की अपेक्षा लोक के असख्यातवें भाग मे, समुद्घात की अपेक्षा लोक के असख्यातवे भाग मे और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवें भाग मे हैं।

चमरचंचा आवास

[५] [१] प्र०—कहिन्नं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररन्नो चमरचंचा नामं आवासे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे एवं जहा बितियसए[1] सभाउद्देसए वत्तव्वया सच्चेव अपरिसेसा नेयव्वा।

१–विवा. भाग १ श. २ उ. ८ प्र. ५१ पृ. २६७

नवर इम णाणत्त —जाव—तिगिच्छकूडस्स उप्पायपव्वयस्स चमरचंचाए रायहाणीए आवास-पव्वयस्स अन्नेसिं च वहूण

सेस त चेव—जाव—तेरस य अगुलाइ अद्धगुल च किंचि विसेसाहिय परिक्खेवेण ।

तीसे णं चमरचचाए रायहाणीए दाहिणपच्चत्थिमेण छक्कोडिसए पणपन्न च कोडीओ पणतीस च सयसहस्साइ पन्नास च सहस्साइ अरुणोदयसमुद्द तिरिय वीइवइत्ता,

एत्थ ण चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो चमरचचे नाम आवासे पण्णत्ते ।

चउरासीइ जोयणसहस्साइ आयाम विक्खभेण,

दो जोयणसयसहस्सा पन्नट्ठिं च सहस्साइ छच्च वत्तीसे जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेण ।

से ण एगेण पागारेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते,

से ण पागारे दिवड्ढ जोयणसय उड्ढ उच्चत्तेण,

एव चमरचचाए रायहाणीए वत्तव्वया भाणियव्वा[1] सभाविहूणा,—जाव—चतारिपासायपतीओ ।

[२] प्र०—चमरे ण भते ! असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचचे आवासे वसहिं उवेति ?

उ०—नो तिणट्ठे समट्ठे ।

[३] प्र०—से केण खाइ अट्ठे ण भते ! एव वुच्चइ—चमरचचे आवासे० ?

उ०—गोयमा ! से जहानामए इह मणुस्सलोगसि उवगारियलेणाइ वा, उज्जाणियलेणाइ वा, णिज्जा-णियलेणाइ वा, धारिवारियलेणाइ वा,

तत्थ ण वहवे मणुस्सा य मणुस्सीओ य आसयति सयति जहा रायप्पसेणइज्जे[2]—जाव—कल्लाणफल-वित्तिविसेस पच्चणुब्भवमाणा विहरति,

अन्नत्थ पुण वसहिं उवेंति,

एवामेव गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो चमरचचे आवासे केवल कीडारतिपत्तियं, अन्नत्थ पुण वसहिं उवेति, से तेणट्ठेण—जाव—आवासे ।

सेव भते ! सेव भते ! त्ति—जाव—विहरइ ।

—विवा भाग ३ श १३ उ ६ प्र २–३ पृ ३२५

[५] [१] प्र०—भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमर का चमरचचा नामक आवास कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे स्थित मन्दर पर्वत के दक्षिण से तिर्यक् असख्यात द्वीप-समुद्रो को उल्लघन करने पर अरुणवर नामक द्वीप आता है । इत्यादि वक्तव्यता जो द्वितीय शतक के सभा-उद्देशक मे कही है, वह सभी यहाँ भी समझ लेना चाहिए । विशेषता यह है कि—यावत्—तिगिच्छकूट नामक उत्पात पर्वत, चमरचचा नामक राजधानी, चमरचच नामक आवासपर्वत तथा अन्य वहुतो का (अधिपतित्व करता हुआ विचरता है) शेप सव उसी प्रकार जानना चाहिए। यावत्—(तीन लाख, सोलह हजार, दो सौ सत्ताईस योजन, तीन गव्यूति, अट्ठाईस धनुष, और) किंचित् अधिक साढे तेरह अगुल की चमरचचा की परिधि है। इस चमरचचा राजधानी से दक्षिण-पश्चिम (नैऋत्य) कोण मे छह सौ पचपन करोड, पैंतीस लाख, पचास हजार योजन अरु-णोदक समुद्र मे तिर्छा जाने पर असुरकुमारेन्द्र-असुरकुमारराज चमर का चमरचच नामक आवास आता है । इसकी लम्वाई-चौडाई चौरासी हजार योजन है । इसकी परिधि दो लाख पैंसठ हजार छह सौ वत्तीस योजन से कुछ विशेषाधिक है । यह एक प्राकार से चारो ओर से घिरा हुआ है । यह प्राकार डेढ सौ योजन ऊँचा है। इस प्रकार चमरचचा राजधानी की वक्तव्यता यहाँ कह लेना चाहिए किन्तु सभा की वक्तव्यता छोड देना चाहिए,—यावत्—चार प्रासादपक्तियाँ हैं ।

१–विवा० भाग १, श २, उ ८, प्र ५१, पृ. २६७

२–रायप्पसेणइज्ज प ७६ सूत्र ३२

[२] प्र०—भगवन् ! क्या असुरेन्द्र-असुरकुमारो का राजा चमर चमरचच नामक आवास मे रहता है ?
उ०—नही, ऐसा नही है ।

[३] प्र०—भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते है कि चमरचच आवास मे—इत्यादि ?
उ०—गौतम ! जैसे इस मनुष्यलोक मे उपकारक—पीठबद्ध गृह, उद्यान मे स्थित लोगो के लिए उपकारक गृह, नगरनिर्गमगृह (नगर से निकलने पर प्राप्त होने वाले घर) तथा वारिधारा (फौहारो) से युक्त गृह होते है, जहाँ अनेक पुरुष और स्त्रियाँ उठते, बैठते और सोते है,—यावत्—राजप्रश्नीय मे उपलब्ध वर्णन की भाति—यावत्—कल्याणरूप फल और वृत्तिविशेष का अनुभव करते हुए रहते है, किन्तु निवास अन्यत्र करते है, इसी प्रकार गौतम ! असुरेन्द्र असुरकुमारराजा चमर का चमरचच आवास केवल क्रीडा और रति के लिए है। उसका निवास तो अन्यत्र ही है ।
हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है, ऐसा कह कर यावत् (गौतम) विचरते हैं ।

चमरेन्द्र की सुधर्मा सभा

[६][१] प्र०—कहि णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो सभा सुहम्मा पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे वीईवइत्ता अरुणवरस्स दीवस्स बाहिरिल्लाओ वेइयंताओ अरुणोदय समुद्दं बायालीसं जोयणसयसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तिगिच्छियकूडे नाम उप्पायपव्वए पण्णत्ते ।
सत्तरस एक्कवीसे जोयणसए उड्ढं उच्चत्तेण[1]
चत्तारि जोयणसए कोसं च उव्वेहेणं
गोत्थूभस्स आवासपव्वयस्स पमाणेणं णेयव्वं ।
नवरं उवरिल्लं पमाणं मज्झे भाणियव्वं ।
मूले दस बावीसे जोयणसए विक्खमेण[2]
मज्झे चत्तारि चउवीसे जोयणसते विक्खभेणं
उवरिं सत्ततेवीसे जोयणसते विक्खभेणं
मूले तिण्णि जोयणसहस्साइं दोण्णि य बत्तीसुत्तरे जोयणसते किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं,
मज्झे एगं जोयणसहस्सं तिण्णि य इगयाले जोयणसते किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं
उवरिं दोण्णि य जोयणसहस्साइं दोण्णि य छलतीसे जोयणसते किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं
—जाव-मूले वित्थडे, मज्झे संखित्ते, उप्पिं विसाले,
मज्झे वरवइरविग्गहिए महामउंदसंठाणसंठिए
सव्वरयणामए अच्छे-जाव-पडिरूवे ।
से णं एगाए पउमवरवेइयाए, एगेणं वणसंडेणं य सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते ।
पउमवरवेइयाए वणसंडस्स य वण्णओ ।
तस्स णं तिगिच्छिकूडस्स उप्पायपव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते ।
वण्णओ ।

---

१. सम. १७ सूत्र ७
२. ठा. अ. १० सूत्र ७२८ पृ. ४५७

तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभागे
एत्थ ण मह एगे पासायवडिसए पण्णत्ते ।
अड्डाइज्जाइ जोयणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण[1]
पणवीस जोयणसयाइ विक्खभेण ।
पासायवण्णओ, उल्लोयभूमिवण्णओ,
अट्ठ जोयणाइ मणिपेढिया,
चमरस्स सीहासण सपरिवार भाणियव्वं ।
तस्स ण तिगिच्छिकूडस्स दाहिणेण छक्कोडिसए पणपन्नं च कोडीओ पणतीस च सयसहस्साइ
अरुणोद समुद्द तिरिय वीइवइत्ता
अहे रयणप्पभाए पुढवीए चत्तालीस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता
एत्थ ण चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो चमरचचा नाम रायहाणी पण्णत्ता ।
एग जोयणसयसहस्स आयामविक्खभेणं जबुद्दीवप्पमाणं ।
पागारो दिवड्ढ जोयणसय उड्ढ उच्चत्तेण
मूले पन्नास जोयणाइ विक्खभेण
उर्वारि अद्धतेरसजोयणाइ विक्खभेण कविसीसगा अद्धजोयण आयामेण, कोस विक्खभेण,
देसूण अद्धजोयणं उड्ढ उच्चत्तेणं
एगेगाए बाहाए पच-पच दारसया अड्डाइज्जाइ जोयणसयाइं (२५०) उच्चत्तेणं
अद्धं (१२५) विक्खभेण, उवरियलेण सोलसजोयणसहस्साइ आयाम-विक्खभेण[3]
पन्नास जोयणसहस्साइ पच य सत्ताणउय जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं
सव्वप्पमाण वेमाणियप्पमाणस्स अद्ध नेयव्वं ।
सभा सुहम्मा,[4] उत्तरपुरच्छिमेण जिणघर,

१—असुरकुमाराणं देवाण पासायवडिसगा अड्डाइज्जाइ जोयणसयाइ उड्ढं उच्चत्तेण पण्णत्ता । —सम १०३
असुरकुमार देवो के प्रासाद अढाई सौ योजन ऊँचे हैं ।

२—चमरस्स ण असुरिंदस्स असुररण्णो चमरचचाए राजहाणीए एक्कमेक्कवाराए तेतीस तेतीसं भोमा प० । —सम ३३
असुरेन्द्र असुरराज चमर की चमरचचा राजधानी मे एक-एक द्वार पर तेतीस-तेतीस भौम हैं ।

३—चमर-बलीण उवयरियालेणे सोलसजोयणसहस्साइ आयामविक्खभेण पण्णत्ते । —सम १६सूत्र ६
चमरेन्द्र और बलीन्द्र के उपकारिकालयनो की लम्बाई-चौडाई सोलह हजार योजन की कही गई है ।

४—चमरचचाए रायहाणीए पच सभा प०, तजहा—
सभा सुहम्मा, उववातसभा, अभिसेयसभा, अलकारितसभा, ववसायसभा ।
एगमेगे ण इंदट्ठाणे ण पच सभाओ प० तजहा—
सभा सुधम्मा—जाव—ववसातसभा । —ठा. अ ५ उ ३ सूत्र ४७२ पृ ३३३
चमर चचा राजधानी मे पाच सभाएँ हैं, यथा—
सुधर्मा सभा, उपपातसभा, अभिषेकसभा, अलकारसभा और व्यवसाय सभा ।
प्रत्येक इन्द्रस्थान मे पाच सभाएँ हैं, यथा—
सुधर्मा सभा—यावत्—व्यवसाय सभा ।
चमरस्स ण असुरिंदस्स असुररण्णो सभा सुहम्मा छत्तीस जोयणाइ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था । —सम ३६
असुरेन्द्र असुरराज चमर की सुधर्मा सभा छत्तीस योजन ऊँची है ।
चमरस्स ण असुरिंदस्स असुररण्णो सभा सुधम्मा एक्कावन्नखंभसयसनिविट्ठा प० । —सम. ५१
असुरेन्द्र असुरराज चमर की सुधर्मा सभा इक्यावन सौ खभो पर सन्निविष्ट है ।

तती उववायसभा, हरओ, अभिसेय, अलंकारो जहा विजयस्स
गाथा—उववाओ संकप्पो अभिसेय-विभूसणा य ववसाओ,
अच्चणिय सिद्धायण गमो वि य णं चमरपरिवार इड्ढ॰ ।

—विवा भाग १ श. २ उ. ८ प्र. ५१ पृ. २९७-२९९

[६] [१] प्र०—भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमर की सुधर्मा सभा कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे स्थित मन्दर (मेरु) पर्वत के दक्षिण से तिर्यक् असख्यात द्वीप-समुद्र उल्लघन करने के पश्चात् अरुणवर नामक द्वीप आता है । इस द्वीप की बाह्य वेदिका से आगे बढने पर अरुणोदय नामक समुद्र आता है । इस समुद्र मे बयालीस लाख योजन नीचे जाने पर असुरेन्द्र एव असुरराज चमर का तिगिच्छककूट नामक उत्पातपर्वत आता है । इस पर्वत की उचाई १७२१ योजन है । उसका उद्वेध ४३० योजन और एक कोस है । इस पर्वत का नाप गोस्तुभ नामक आवास पर्वत के नाप के समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि गोस्तुभ के ऊपरी भाग का नाप इसके मध्य भाग के लिए जानना चाहिए । तिगिच्छककूट पर्वत का विष्कम्भ (चौडाई) मूल मे १०२२ योजन, मध्य मे ४२४ योजन और ऊपर ७२३ योजन है । इसका परिक्षेप (घेर) मूल मे ३२३२ योजन से कुछ अधिक, मध्य मे १३४१ योजन से कुछ अधिक तथा ऊपर से २२८६ योजन से कुछ अधिक है । यह मूल मे विस्तृत, मध्य मे सकीर्ण तथा ऊपर से विशाल है । इसका मध्यभाग उत्तम वज्र तथा महामुकुन्द (वाद्यविशेष) के आकार का है । यह सारा ही रत्नमय है, सुन्दर है—यावत्—प्रतिरूप है ।

यह पर्वत एक पद्मवरवेदिका से तथा एक वनखण्ड से सम्यक्तया चारो ओर से वेष्टित है । यहाँ पद्मवरवेदिका और वनखण्ड का वर्णन समझ लेना चाहिए ।

इस तिगिच्छककूट पर्वत का ऊपरी भाग समतल एव मनोहर है । इसका भी वर्णन यहाँ समझना चाहिये । उस समतल मनोहर भूमिभाग के मध्य मे एक विशाल प्रासाद है, जिसकी उचाई २५० योजन तथा विष्कभ १२५ योजन है । यहाँ प्रासाद तथा उसके ऊपरी भाग का वर्णन जान लेना चाहिए । यहाँ आठ योजन की मणिपीठिका है । चमर के सपरिवार सिंहासन का वर्णन जान लेना चाहिए ।

तिगिच्छककूट पर्वत के दक्षिण मे ६५५ करोड, ३५ लाख, ५५ हजार योजन अरुणोद समुद्र से तिर्छे जाकर नीचे रत्नप्रभा पृथ्वी मे ४० हजार योजन प्रदेश पार करने के पश्चात् असुरेन्द्र असुरराज चमर की चमरचचा नामक राजधानी है ।

चमरचचा राजधानी की लम्बाई-चौडाई (आयाम-विष्कभ) जम्बूद्वीप के समान एक लाख योजन का है । इसका प्राकार १५० योजन ऊँचा है । प्राकार के मूल का विष्कभ ५० योजन तथा ऊपर का विष्कभ साढे बारह योजन का है । उसके कगूरो (कपिशीर्षको) का आयाम आधा योजन, विष्कभ एक कोस और ऊँचाई आधे योजन से किंचित् न्यून है ।

प्राकार की प्रत्येक बाहु मे पाच सौ द्वार है, जिनकी ऊँचाई २५० योजन और विष्कभ इससे आधा अर्थात् १२५ योजन है । उपकारिकालयन (गृह के पीठबध जैसे भाग) का आयामविष्कभ १६ हजार योजन व परिक्षेप ५०५९७ योजन से कुछ विशेष कम है ।

यहाँ सर्व प्रमाण-नाप वैमानिको से आधा जानना चाहिये । सुधर्मा सभा, उत्तर-पूर्व दिशा मे जिनगृह, तत्पश्चात् उपपातसभा, ह्रद, अभिषेक (सभा) एव अलकार (सभा) का वर्णन विजयदेव के वर्णन के समान जानना चाहिए[1] ।

सकल्प, अभिषेक, विभूषणा, व्यवसाय, अर्चनिका, सिद्धायतन-गम, चमर का परिवार तथा ऋद्धि-सम्पन्नता (विजय देव के समान ।)

१—जीवाभिगम सूत्र, विजयवर्णन अधिकार ।

चमरेन्द्र के लोकपालों के उत्पात पर्वत

[७] **चमरस्स ण असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो सोमस्स महारण्णो सोमप्पभे उप्पातपव्वते दस जोयणसयाइ उद्ध उच्चत्तेण, दस गाउयसयाइ उव्वेहेण, मूले दस जोयणसयाइ विक्खभेण पण्णत्ते।**

[७] असुरेन्द्र असुरराज चमर के महाराजा सोमप्रभ का सोमप्रभ नामक उत्पात पर्वत दस सौ योजन ऊँचा है, दस सौ गव्यूति गहरा है और मूल मे दस सौ योजन विस्तृत है।

[८] **चमरस्स ण असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो जमरस महारण्णो जमप्पभे उप्पातपव्वते एव चेव।**
एव वरुणस्स वि, एव वेसमणस्स वि।

—ठा अ १० सूत्र ७२८ पृ ४५७

[८] चमर असुरेन्द्र असुरराजा के महाराज यम का यमप्रभ नामक उत्पातपर्वत भी इसी प्रकार समझना चाहिए।
इसी प्रकार वरुण और वैश्रमण के उत्पात पर्वत भी समझ लेना चाहिए।

बली की सुधर्मा सभा

[९] [१] **प्र०—कहिन्न भते ! वलिस्स वइरोयणिदस्स वइरोयणरन्नो सभा सुहम्मा पन्नत्ता ?**

उ०—गोयमा ? जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण तिरियमसखेज्जे जहेव चमरस्स—जाव—बायालीस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता एत्थ ण वलिस्स वइरोयणिदस्स वइरोयणरण्णो रुयगिंदे नाम उप्पायपव्वते पन्नत्ते,[1]

सत्तरस एक्कवीसे जोयणसए[2]—एव पमाण जहा तिगिच्छिकूडस्स पासायवडेंसगस्स वि त चेव पमाण,

सीहासण सपरिवार वलिस्स परियारेण,

अट्ठो तहेव, नवर रुयगिंदप्पभाइ ३, सेस त चेव—जाव—वलिचचाए रायहाणीए अन्नेसिं च—जाव—रुयगिंदस्स ण उप्पायपव्वयस्स उत्तरेण छक्कोडिसए तहेव—जाव—चत्तालीस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता, एत्थ ण वलिस्स वइरोयणिदस्स वइरोयणरन्नो वलिचचा नामं रायहाणी पन्नत्ता,

एग जोयणसयसहस्स पमाण, तहेव—जाव—वलिपेढस्स उववाओ—जाव—आयरक्खा, सव्व तहेव निरवसेस,

नवर सातिरेग सागरोवम ठिती पन्नत्ता,

सेस त चेव—जाव—वली वइरोयणिदे वली० २।

—विवा भाग ४ श १६ उ. ९ प्र १ पृ २६

[९] [१] प्र०—भगवन् ! वैरोचनेन्द्र—वैरोचनराजा वलि की सुधर्मा सभा कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे स्थित मन्दर पर्वत के उत्तर से तिर्छे असख्य (द्वीप-समुद्र लाघने के पश्चात्), इत्यादि समस्त वर्णन जिस प्रकार चमर के विषय मे किया गया है, उसी प्रकार यहाँ भी समझ लेना चाहिए,—यावत्—४२ हजार योजन नीचे जाने पर वैरोचनेन्द्र—वैरोचनराजा वलि का रुचकेन्द्र नामक उत्पात पर्वत आता है। यह पर्वत भी तिगिच्छककूट पर्वत की ही तरह १७२१ योजन ऊँचा है। प्रासाद का प्रमाण भी वही है। वलि का सिंहासन, परिवार, आठ योजन की मणिपीठिका आदि सब का वर्णन चमर की ही भाँति समझना चाहिए। विशेषता यह है कि

१—ठा अ. १० सूत्र ७२८ पृ. ४५७
२—सम. १७

यहाँ रुचकेन्द्र (रत्न) की प्रभा वाले (उत्पलादि) होते हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है,—यावत्—बलिचचा राजधानी के—यावत्—रुचकेन्द्र नामक उत्पात पर्वत के उत्तर मे ६५५ करोड—यावत्—चालीस हजार योजन प्रदेश पार करने के अनन्तर वैरोचनेन्द्र—वैरोचनराजा बलि की बलिचचा नामक राजधानी आती है। इसका प्रमाण एक लाख योजन है। बलिपीठ, उपपात, आत्मरक्षक आदि समस्त बातें उसी प्रकार हैं। विशेषता यह है कि (बलि की) स्थिति सागरोपम से कुछ अधिक है। शेष सब उसी प्रकार।

बलि के लोकपालों के उत्पात पर्वत

[१०] बलिस्स णं वइरोयणिंदस्स सोमस्स एवं चेव जधा चमरस्स लोगपालाणं तं चेव बलिस्स वि।

—ठा अ. १० सूत्र ७२८ पृ. ४५७

[१०] वैरोचनेन्द्र बलि के उत्पातपर्वत के समान (लोकपाल) सोम के उत्पातपर्वत का वर्णन है। बलि के लोकपालो का कथन चमर के लोकपालो जैसा ही है।

दाक्षिणात्य असुरकुमारों के स्थान

[११][१] प्र०—कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?—कहि णं भते ! दाहिणिल्ला देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं, इमीसे रयणप्पभाए—जाव—मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से, एत्थ णं दाहिणिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं चउतीसं भवणावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खायं।[1]

ते णं भवणा बाहिं वट्टा, अतो चउरंसा, सो चेव वण्णओ—जाव—पडिरूवा।

एत्थ णं दाहिणिल्लाणं असुरकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता।

तीसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे,

तत्थ णं बहवे दाहिणिल्ला असुरकुमारा देवा देवीओ य परिवसंति,

काला लोहियक्खा तहेव—जाव—भुंजमाणा विहरति।[2]

एएसि ण तहेव तायतीसग—लोगपाला भवति,

एवं सव्वत्थ भाणियव्वं भवणवासीणं।

—पन्न. पद २ पृ २७१-२७२

[११][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त दक्षिणी असुरकुमार देवो के स्थान कहाँ हैं ? अर्थात् भगवन् ! दक्षिणी असुरकुमार देव कहाँ रहते हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मदर (मेरु) पर्वत के दक्षिण मे, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे एक लाख अठहत्तर हजार योजन के पिण्ड मे दक्षिणी असुरकुमार देवो के चौतीस लाख भवनावास हैं।

ये भवन बाहर से गोल, अन्दर से चौकोर—यावत्—प्रतिरूप हैं। यही पर्याप्त-अपर्याप्त दक्षिणी असुरकुमार देवो के स्थान हैं। ये भी उपपात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवें भाग मे हैं। यहा बहुत से असुरकुमार देव और देविया रहती हैं। ये कृष्ण वर्ण वाले लाल नेत्रो वाले—यावत्—दिव्य भोग भोगते हुए रहते है। उसी प्रकार इनके त्रायस्त्रिंशक और लोकपाल होते हैं।

शेष भवनावासो मे सर्वत्र इसी प्रकार कह लेना चाहिए।

१—जीवा. सूत्र ११७ पृ. १५६

२—सम. ३४ सूत्र ५

उत्तरीय असुरकुमारों के स्थान

[१२][१] प्र०—कहि ण भंते ! उत्तरिल्लाण असुरकुमाराण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! उत्तरिल्ला असुरकुमारा देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तर जोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एग जोयणसहस्स ओगाहित्ता, हिट्ठा चेग जोयणसहस्स वज्जित्ता, मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ ण उत्तरिल्लाण असुरकुमाराण देवाण तीस भवणावाससय-सहस्सा भवतीति मक्खाय ।
ते ण भवणा बाहिं वट्टा, अतो चउरसा,
सेस जहा दाहिणिल्लाण—जाव—विहरति ।

—पन्न पद २ पृ २७३
—जीवा सूत्र ११६ पृ १६६

[१२][१] प्र०—भगवन् ! उत्तरीय पर्याप्त-अपर्याप्त असुरकुमार देवो के स्थान कहाँ हैं ? अर्थात् भगवन् ! उत्तरीय असुरकुमार देव कहाँ रहते हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मदर पर्वत के उत्तर मे, इसी रत्नप्रभा पृथ्वी के एक लाख अस्सी हजार मोटे पृथ्वी पिण्ड मे से एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे के भाग को छोडकर बीच के एक लाख अठहत्तर हजार योजन पिण्ड मे उत्तरीय असुरकुमार देवो के तीस लाख भवनावास हैं। ये भवन बाहर से गोल एव अन्दर से चौकोर हैं। शेष सब कथन दक्षिणी असुरकुमारो के समान समझ लेना चाहिए ।

नागकुमार देवों के स्थान

[१३][१] प्र०—कहि ण भंते ! नागकुमाराण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! नागकुमारा देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए—जाव—मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ ण नागकुमाराणं देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण चुलसीइ भवणावाससयसहस्सा भवतीति मक्खाय ।[1]
ते ण भवणा बाहिं वट्टा, अतो चउरसा—जाव—पडिरूवा,
तत्थ ण णागकुमाराण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता,
तीसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे,
तत्थ ण बहवे नागकुमारा देवा परिवसंति, महिड्ढिया महज्जुईया,
सेस जहा ओहियाण—जाव—विहरति ।
धरणभूयाणंदा एत्थ ण नागकुमारिंदा णागकुमाररायाणो परिवसंति महिड्ढिया,
सेस जहा ओहियाण—जाव—विहरति ।

—पन्न. पद २ पृ २७५
—जीवा सूत्र १२० पृ १६७

[१३][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त नागकुमार देवो के स्थान कहाँ हैं ? अर्थात् भगवन् ! नागकुमार देव कहाँ रहते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे (ऊपर-नीचे एक-एक हजार योजन छोडकर) एक लाख अठहत्तर हजार योजन पृथ्वीपिण्ड मे पर्याप्त-अपर्याप्त नागकुमार देवों के चौरासी लाख भवनावास हैं। ये भवन बाहर से गोल, अन्दर से चौकोर,—यावत्—प्रतिरूप है। यही पर्याप्त-अपर्याप्त नागकुमार देवो के स्थान हैं। ये उपपात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवें

१—सम. ८४ सूत्र ११

भाग मे हैं। यहाँ बहुतेरे नागकुमार देव रहते हैं जो महर्धिक एव महाद्युतिमान् हैं। शेष कथन सामान्य भवनवासियो के समान समझना चाहिए। इनमे धरण और भूतानन्द नामक दो नाग कुमारेन्द्र एव नागकुमारो के राजा रहते हैं, जो—यावत्—महर्द्धिक है। शेष सब सामान्य वक्तव्यता के अनुसार समझना,—यावत्—भोग भोगते हुए विचरते हैं।

दाक्षिणात्य नागकुमारों के स्थान

[१४][१] प्र०—कहि ण भंते ! दाहिणिल्लाण नागकुमाराण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! दाहिणिल्ला नागकुमारा देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए—जाव—मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं दाहिणिल्लाण नागकुमाराणं देवाणं, चउयालीसं[१] भवणावाससयसहस्सा भवतीति मक्खायं,
ते णं भवणा बाहिं वट्टा—जाव—पडिरूवा,
एत्थ णं दाहिणिल्लाणं नागकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता,
तीसु वि लोयस्स असखेज्जइभागे,
एत्थ णं दाहिणिल्ला नागकुमारा देवा परिवसति महिड्ढिया—जाव—विहरति।

—पन्न पद २ पृ २७५–२७६
—जीवा सूत्र १२० पृ. १६७

[१४][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त दक्षिणी नागकुमार देवो के स्थान कहा हैं ? अर्थात् भगवन् ! दाक्षिणात्य नागकुमार देव कहा रहते है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मदर (मेरु) पर्वत के दक्षिण मे, इसी रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे, एक लाख अठहत्तर हजार योजन के पृथ्वी पिण्ड मे दक्षिणी नागकुमार देवो के चवालीस लाख भवनावास हैं।

ये भवन बाहर से गोलाकार–यावत्–प्रतिरूप है। यही पर्याप्त-अपर्याप्त दक्षिणी नागकुमारो के स्थान है। ये तीनो अपेक्षाओ से लोक के असख्यातवें भाग मे है। यही दक्षिणी नागकुमार देव रहते हैं। ये महर्द्धिक-यावत्-भोग भोगते हुए विचरने वाले हैं।

उत्तरीय नागकुमारों के स्थान

[१५][१] प्र०—कहि णं भंते ! उत्तरिल्लाणं णागकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि णं भंते ! उत्तरिल्ला नागकुमारा देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं,
इमीसे रयणप्पभाए-जाव-मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से
एत्थ णं उत्तरिल्लाणं नागकुमाराणं देवाणं
चत्तालीसं भवणावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खायं।[१]
ते णं भवणा बाहिं वट्टा, सेस जहा दाहिणिल्लाणं-जाव-विहरंति।

—पन्न पद २ पृ. २७७
—जीवा. सूत्र १२० पृ. १६८

१—सम. ४० सूत्र ४

[१५][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त उत्तरीय नागकुमार देवो के स्थान कहा हैं ? अर्थात् भगवन् ! उत्तरीय नागकुमार देव कहा रहते हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मदर (मेरु) पर्वत के उत्तर मे, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे, एक लाख अठहत्तर हजार योजन के पृथ्वीपिण्ड मे उत्तरीय नागकुमार देवों के चालीस लाख भवनावास हैं। ये भवन बाहर से गोल है। शेष दाक्षिणात्य नागकुमारो की भांति जानना चाहिये।

सुपर्णकुमार देवों के स्थान

[१६][१] प्र०—कहि ण भते ! सुवन्नकुमाराण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ?
कहि ण भते ! सुवन्नकुमारा देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए-जाव-एत्थ ण सुवन्नकुमाराण देवाण बावर्त्तारं भवणावास-सयसहस्सा भवतीति मक्खाय ।[1]
ते ण भवणा बाहिं वट्टा-जाव-पडिरूवा,
तत्थ ण सुवन्नकुमाराण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता
जाव-तिसु वि लोयस्स असखेज्जइभागे,
तत्थ ण बहवे सुवन्नकुमारा देवा परिवसति महिड्ढिया,
सेस जहा ओहियाण-जाव-विहरति ।
वेणुदेवे वेणुदाली य इत्य दुवे सुवण्णकुमारिंदा सुवण्णकुमाररायाणो परिवसति,[2]
महिड्ढिया-जाव-विहरति ।

—पन्न पद २ पृ २७८

[१६][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त सुव (प) र्णकुमार देवो के स्थान कहाँ हैं ? अर्थात् भगवन् ! सुवर्ण-कुमार देव कहा रहते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे सुवर्णकुमार देवो के बहत्तर लाख भवनावास हैं। ये भवन बाहर से गोल-यावत्-प्रतिरूप हैं। यहा पर्याप्त-अपर्याप्त सुवर्णकुमार देवो के स्थान हैं। ये तीनों अपेक्षाओ मे लोक के असख्यातवें भाग मे हैं। यहा बहुत से सुवर्णकुमार देव रहते हैं जो महर्द्धिक है। शेष कथन सामान्य भवनवासियो के कथन के समान समझना चाहिए। यहा वेणुदेव और वेणुदाली नामक दो सुवर्णकुमारेन्द्र सुवर्णकुमारराजा रहते हैं। ये भी महर्द्धिक हैं,—यावत्—भोग भोगते हुए रहते हैं।

दाक्षिणात्य सुपर्णकुमार देवों के स्थान

[१७][१] प्र०—कहि णं भते ! दाहिणिल्लाण सुवण्णकुमाराण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भते ! दाहिणिल्ला सुवण्णकुमारा देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे-जाव-मज्झे अट्ठहुत्तरे जोयणसयसहस्से
एत्थ णं दाहिणिल्लाणं सुवण्णकुमाराण अट्ठतीस भवणावाससयसहस्सा भवतीति मक्खाय,
ते ण भवणा बाहिं वट्टा-जाव-पडिरूवा ।

---

१ सम ७२ सूत्र १
२ ठा अ २ उ २ सूत्र ९४ पृ ८०

एत्थ णं दाहिणिल्लाणं सुवण्णकुमाराणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ।
तीसु वि लोगस्स असंखेज्जइभागे,
एत्थ णं बहवे सुवण्णकुमारा देवा परिवसति,
वेणुदेवे य इत्थ सुवन्नकुमारिंदे सुवन्नकुमारराया परिवसइ ।[1]
सेसं जहा नागकुमाराणं ।

—पन्न पद २ पृ. २७६

[१७][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त दक्षिणी सुवर्णकुमार देवो के स्थान कहा हैं ? अर्थात् भगवन् ! दक्षिणी सुवर्णकुमार देव कहा रहते है ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे, एक लाख अठहत्तर हजार योजन के पृथ्वीपिण्ड मे दाक्षिणात्य सुवर्णकुमारो के अडतीस लाख भवनावास हैं। ये भवन बाहर से गोल-यावत्-प्रतिरूप है, जहा पर्याप्त-अपर्याप्त दक्षिणी सुवर्णकुमारो के स्थान हैं। ये उपपात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवे भाग मे हैं। यहा अनेक सुवर्णकुमार देव रहते हैं। यहा वेणुदेव नामक सुवर्णकुमारेन्द्र-सुवर्णकुमारराजा है। शेष कथन नागकुमारो के समान समझना चाहिए।

उत्तरीय सुपर्णकुमार देवों के स्थान

[१८][१] प्र०—कहि णं भंते ! उत्तरिल्लाणं सुवन्नकुमाराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि णं भंते ! सुवन्नकुमारा देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए-जाव—
एत्थ णं उत्तरिल्लाण सुवन्नकुमाराणं चउतीसं भवणावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खायं ।
ते णं भवणा-जाव-एत्थ ण बहवे उत्तरिल्ला सुवन्नकुमारा देवा परिवसंति,
महिड्ढिया-जाव-विहरति ।
वेणुदाली इत्थ सुवण्णकुमारिंदे सुवन्नकुमारराया परिवसइ महिड्ढीए, सेसं जहा नागकुमाराणं ।

—पन्न पद २ पृ २८०

[१८][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त उत्तरीय सुवर्णकुमार देवो के स्थान कहाँ हैं ? अर्थात् भगवन् ! उत्तरीय सुवर्णकुमार देव कहाँ रहते है ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के मध्य मे उत्तरीय सुवर्णकुमार देवो के चौतीस लाख भवनावास है। इन भवनो मे बहुत से उत्तरी सुवर्णकुमार देव रहते हैं। ये महर्द्धिक—यावत्—भोग भोगते हुए विचरते है। यहाँ वेणुदाली नामक सुवर्णकुमारेन्द्र-सुवर्णकुमारराजा रहता है। यह भी महर्धिक है। शेष कथन नागकुमारो के समान समझ लेना चाहिए।

गाहाओ—

चउसट्ठी असुराणं चउरासीइ य होइ नागाणं,
बावत्तरि सुवण्णाण वाउकुमाराण छन्नउई ।।१।।
दीव-दिसा-उदहीणं विज्जुकुमारिंद-थणिय-मग्गीणं,
छण्णं पि जुयलयाणं छावत्तरिमो सयसहस्सा ।।२।।
चोत्तीसा चोयाला अट्ठत्तीस च सयसहस्साइं ।

---

1. ठा. अ. २ उ. ३ सूत्र ६४ पृ. ८०

पण्णा चत्तालीसा, दाहिणओ होंति भवणाइं ।।३।।
तीसा चत्तालीसा चोत्तीस चेव सयसहस्साइं ।
छायाला छत्तीसा, उत्तरओ होंति भवणाइं ।।४।।

—विवा श १ उ ५ प्र १६६, पृ १४२
—पण्ण पद २, पृ २८१

गाथार्थ—

असुरकुमारो के चौंसठ लाख, नागकुमारो के चौरासी लाख, सुवर्णकुमारो के वहत्तर लाख, वायुकुमारो के छयानवे लाख, द्वीपकुमारो, दिक्कुमारो, उदधिकुमारो, विद्युत्कुमारो, स्तनितकुमारो और अग्निकुमारो के युगलो के छहत्तर लाख भवनावास हैं।

दक्षिण दिशा मे असुरकुमारो के ३४ लाख, नागकुमारो के ४४ लाख, सुवर्णकुमारो के ३८ लाख, वायुकुमारो के ५० लाख तथा शेष के—चालीस-चालीस लाख भवन हैं।

उत्तर दिशा मे असुरकुमारो के ३० लाख, नागकुमारो के ४० लाख, सुवर्णकुमारो के ३४ लाख, वायुकुमारो के ४६ लाख तथा शेष (छह) के छत्तीस-छत्तीस लाख विमान हैं।

धरणेन्द्र आदि की प्ररूपणा

[१६] धरणस्स ण णागकुमारिंदस्स णागकुमाररन्नो धरणप्पभे उप्पातपव्वते दस जोयणसहस्साइं उड्ढं उच्चत्तेणं, दस गाउयसताइ उव्वेहेण, मूले दस जोयणसताइ विक्खभेण।
धरणस्स णागकुमारिंदस्स ण णागकुमाररन्नो कालवालस्स महारण्णो एव—जाव—सखवालस्स।
एव भूताणदस्स वि।
एव लोगपालाण पि से जहा धरणस्स, एव—जाव—थणियकुमाराण सलोगपालाण भाणियव्वं, सव्वेसिं उप्पायपव्वया भाणियव्वा सरिसणामगा।

—ठा अ १० सूत्र ७२८ पृ ४५७

[१६] नागकुमारेन्द्र नागकुमारराजा धरण का धरणप्रभ नामक उत्पात पर्वत है। इसकी ऊँचाई दस हजार योजन, उद्वेध दस सौ गव्यूति तथा मूल मे विष्कंभ दस सौ योजन है।
नागकुमारेन्द्र- नागकुमारराजा धरण के (लोकपाल) कालपाल महाराजा का महाकालप्रभ पर्वत भी इसी प्रकार है।
भूतानन्द के विषय मे भी ऐसा ही समझना चाहिए।
लोकपालो के विषय मे भी धरण के समान समझना चाहिए। इस तरह लोकपालो सहित स्तनितकुमार पर्यन्त समझ लेना चाहिए। इन सब के उत्पातपर्वत सदृश नाम वाले (इन्द्रो के समान नाम वाले) कहने चाहिए।

अधोलोक का मध्यभाग

प्र०—कहि ण भंते ! अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! चउत्थीए पकप्पभाए पुढवीए उवासतरस्स सातिरेग अद्ध ओगाहित्ता एत्थ णं अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते।

—विवा भाग ३ श १३ उ ४ प्र ७ पृ ३१३

प्र०—भगवन् ! अधोलोक का आयाममध्य कहा है ?
उ०—गौतम ! चौथी पकप्रभा पृथ्वी के अवकाशान्तर मे आधे से कुछ अधिक भाग अवगाहन करने पर अधोलोक का आयाममध्य कहा गया है।
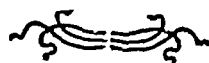
मध्यलोक

वान-व्यन्तर देवों के स्थान

[१][१] प्र०—कहि णं भंते! वाणमंतराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि णं भंते! वाणमंतरा देवा परिवसंति ?

उ०—इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए रयणामयस्स कंडस्स जोयणसहस्सबाहल्लस्स उवरिं एगं जोयणसयं ओगाहित्ता, हिट्ठा वि एगं जोयणसयं वज्जित्ता, मज्झे अट्ठसु जोयणसएसु,[1] एत्थ णं वाणमंतराणं देवाणं तिरियमसंखेज्जा भोमेज्जनगरावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खायं।[2]
ते णं भोमेज्जा नगरा बाहिं वट्टा-जाव-दिव्वतुडियसद्दसंपणादिया, पडागमालाउलाभिरामा, सव्वरयणामया, अच्छा-जाव-पडिरूवा।
एत्थ णं वाणमंतराणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता।
तिसु वि लोयस्स असंखेज्जइभागे।

—पण्ण. पद २ पृ. २८४।६
—जीवा. सूत्र १२१
—सम सूत्र १५० पृ. १७१

[१][१] प्र०—भगवन्! पर्याप्त-अपर्याप्त वाण-व्यन्तर देवो के स्थान कहा है ? अर्थात् भगवन्! वाण-व्यन्तर देव कहा रहते है ?

उ०—इस रत्नप्रभा पृथ्वी के रत्नमय काण्ड के सहस्र योजन के पृथ्वीपिण्ड मे से एक सौ योजन ऊपर और एक सौ योजन नीचे के भाग को छोडकर मध्य के आठ सौ योजन पृथ्वीपिण्ड मे वाण-व्यन्तर देवो के असख्य लाख तिर्यक् भौमेय नगरावास हैं। ये भौमेय नगर बाहर से गोल-यावत्-दिव्य वाद्यो के शब्दो से गु जायमान रहते है। पताकाओ की पक्तियो से शोभायमान है, सर्वरत्नमय हैं, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप हैं। यहा पर्याप्त और अपर्याप्त वाण-व्यन्तर देवो के स्थान है। ये उपपात, समुद्घात और स्वस्थान-तीनो की अपेक्षा से लोक के असख्यातवें भाग मे है।

[२][१] प्र०—केरिसा णं भंते! तेसिं वाणमंतराणं देवाणं देवलोया पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा! से जहानामए इह मणुस्सलोगम्मि असोगवणे इ वा, सत्तवण्णवणे इ वा, चंपयवणे इ वा, चूयवणे इ वा, तिलगवणे इ वा, लाउवणे इ वा, निग्गोहवणे इ वा, छत्तोहवणे इ वा, असणवणे इ वा, सणवणे इ वा, अयसिवणे इ वा, कुसुंभवणे इ वा, सिद्धत्थवणे इ वा, बंधुजीवगवणे इ वा, णिच्चं कुसुमिय-माइय-लवइय-थवइय-गुलुइय-गोच्छिय-जमलिय-जुवलिय-विणमिय-पणमिय-सुविभत्तपिंडिमंजरिवडेंसगधरे, सिरीए अतीव अतीव उवसोभेमाणे-उवसोभेमाणे चिट्ठइ,
एवामेव तेसिं वाणमंतराणं देवाणं देवलोगा जहण्णेणं दसवाससहस्सट्ठितीएहिं,
उक्कोसेणं पलिओवमट्ठितीएहिं,
बहूहिं वाणमंतरेहिं देवेहिं देवीहि य आइण्णा,

---

१. सम. १११ सूत्र २
२. विवा. भाग ४ श. १९ उ. ८ प्र. ३ पृ. ९०

विकिण्णा, उवत्थडा, सथडा, फुडा, अवगाढगाढा,
सिरीए अतीव अतीव उवसोभेमाणा-उवसोभेमाणा चिट्ठ ति ।
एरिसगा ण गोयमा ! तेसि च वाणमतराण देवाण देवलोआ पण्णत्ता ।

—विवा भाग १ श १ उ १ प्र ६२ पृ ८४-८५

[२][१] प्र०—भगवन् ! इन वाण-व्यन्तर देवो के देवलोक कैसे हैं ?

उ०—गौतम ! जिस प्रकार इस मनुष्यलोक मे सदैव कुसुमित, मजरीयुक्त, पुष्पगुच्छ युक्त, लतासमूह-युक्त, पत्रगुच्छयुक्त,समान श्रेणीवाले, युगल वृक्ष वाले, पुष्प-फलभार से विनमित, पुष्प-फलभार से प्रणमित तथा विभिन्न शाखाओ एव मजरियो के मुकुट को धारण करने वाले अशोकवन, सप्त-पर्णवन, चम्पकवन, आम्रवन, तिलकवन, अलावुवन, न्यग्रोधवन, छत्रौघवन, असनवन, सनवन, अलसीवन, कुसुभवन, सर्षपवन अथवा बन्धुजीवकवन शोभा से अत्यन्त सुशोभित होते हैं, उसी प्रकार जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक पल्योपम की स्थिति वाले अनेक वाणव्यन्तर देवो एव देवियो से व्याप्त, सुव्याप्त, ऊर्ध्वोर्ध्व, आच्छादित स्पृष्ट एव अवगाढ वाण-व्यन्तर देवो के देवलोक शोभा से अत्यन्त सुशोभित रहते हैं। गौतम ! इन वाण-व्यन्तर देवो के देवलोग ऐसे हैं ।

पिशाच देवों के स्थान

[३] [१] प्र०—कहि ण भते ! पिसायाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ? कहि ण भते ! पिसाया देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए—जाव—मज्झे अट्ठसु जोयणसएसु,
एत्थ ण पिसायाण देवाण तिरियमसखेज्जा भोमेज्जनगरावाससयसहस्सा भवतीति मक्खायं,
ते ण भोमेज्जनगरा बाहिं वट्टा जहा ओहिओ भवणवन्नओ तहा भाणियव्वो—जाव—पडिरूवा ।
एत्थ ण पिसायाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता,
तीसु वि लोयस्स असखेज्जइभागे,
तत्थ बहवे पिसाया, देवा परिवसति,
महिड्ढिया जहा ओहिया—जाव—विहरति,
काल-महाकाला इत्थ दुवे पिसायिंदा पिसायरायाणो परिवसति,[1]
महिड्ढिया महज्जुइया—जाव—विहरति ।

—पण्ण पद २ पृ २८६—२६०
—जीवा सूत्र १२१ पृ १७१

[३] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त-अपर्याप्त पिशाच देवो के स्थान कहां हैं ? अर्थात् भगवन् ! पिशाच देव कहाँ रहते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के (रत्नमय काण्ड के) मध्य मे, आठ सौ योजन मे पिशाच देवो के असख्य लाख तिर्यक् भूमिगृह-नगरावास हैं। ये भूमिगृह-नगरावास बाहर से गोल—यावत्—औघिक भवन वर्णन के समान प्रतिरूप हैं। यहाँ पर्याप्त-अपर्याप्त पिशाच देवो के स्थान हैं। ये भी लोक के असख्यातवें भाग मे हैं। यहाँ अनेक पिशाच देव रहते हैं, जो महर्धिक—यावत्—औघिको के समान विचरने वाले हैं।

यहाँ काल और महाकाल नामक दो पिशाचेन्द्र पिशाचराज निवास करते, हैं जो महर्धिक एव महा-द्युतिमान् हैं,—यावत्—(भोगोपभोग भोगते हुए) विचरते हैं ।

१—ठा. अ २ उ. ३ सूत्र ९४ पृ. ८०

दाक्षिणात्य पिशाच देवों के स्थान

[४] [१] प्र०—कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाण पिसायाण देवाणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! दाहिणिल्ला पिसाया देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेण इमीसे—जाव—मज्झे अट्ठसु जोयणसएसु एत्थ णं दाहिणिल्लाण पिसायाण देवाण तिरियमसंखेज्जा भोमेज्जनगरावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खायं।
ते ण भवणा जहा ओहिओ भवणवन्नओ तहा भाणियव्वो—जाव—पडिरूवा।
एत्थ णं दाहिणिल्लाण पिसायाणं देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता,
तीसु वि लोगस्स असंखेज्जइभागे,
तत्थ ण बहवे दाहिणिल्ला पिसाया देवा परिवसंति,
महिड्ढिया—जहा ओहिया—जाव—विहरंति।
काले एत्थ पिसायिंदे पिसायराया परिवसइ, महिड्ढिए—जाव—पभासेमाणे,
से णं तत्थ तिरियमसंखेज्जाणं भोमेज्जनयरावाससयसहस्साणं—जाव—विहरइ।

—पण्ण पद २ पृ २९०-२९१
—जीवा. सूत्र १२१ पृ. १७१

[४] [१] प्र०—भगवन् ! दक्षिणी पिशाच देवो के स्थान कहाँ हैं ? अर्थात् भगवन् ! दक्षिणी पिशाच देव कहाँ रहते हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे स्थित मंदर पर्वत के दक्षिण मे इसी (रत्नप्रभा पृथ्वी) के (रत्नमय काण्ड के) मध्य मे आठ सौ योजन मे दक्षिणी पिशाच देवो के असख्य लाख तिर्यक् भौमेय-नगरावास हैं। इन भवनो का वर्णन औधिक भवनो के वर्णन के ही समान है—यावत्—वे प्रतिरूप हैं। यहाँ पर्याप्त-अपर्याप्त दक्षिणी पिशाच देवो के स्थान है। ये उत्पात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवें भाग मे हैं। यहाँ बहुत-से दक्षिणी पिशाच देव रहते हैं जो महर्द्धिक हैं—यावत्—औधिक (सामान्य) पिशाच देवो के समान विचरण करने वाले हैं।

यहाँ काल नामक पिशाचेन्द्र-पिशाचराज रहता है जो महर्द्धिक है—यावत्—प्रभासमान है। यह असख्य लाख तिर्यक् भौमेयनगरावासो का—यावत्-अधिपतित्व करता हुआ विचरता है।

उत्तरीय पिशाच देवों के स्थान

[५] [१] प्र०—उत्तरिल्लाणं पुच्छा।

उ०—गोयमा ! जहेव दाहिणिल्लाणं वत्तव्वया तहेव उत्तरिल्लाण पि।
नवर मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण।
एवं जहा पिसायाणं तहा भूयाण पि-जाव-गंधव्वाणं।

—पन्न पद २ पृ. २९१-९२

[५] [१] प्र०—भगवन् ! उत्तरीय पिशाच देवो के स्थान कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जैसा दाक्षिणात्य पिशाच देवो के विषय मे कहा गया है वैसा ही उत्तरीय पिशाचों के सबध मे भी समझ लेना चाहिए। विशेष यह कि उत्तरीय पिशाच देवो के स्थान मेरु पर्वत के उत्तर मे हैं।

पिशाच देवो के स्थानो के समान भूत यावत् गधर्वों के स्थान समझ लेने चाहिए।

[६] [१] प्र०—कहि णं भंते ! अणवन्नियाणं देवाण ठाणा पन्नत्ता ?
कहि ण भंते ! अणवन्निया देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए-जाव-मज्झे अट्ठसु जोयणसएसु एत्थ णं अणवन्नियाणं देवाण तिरिय-मसंखेज्जा णगरावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खाय,
ते णं-जाव-पडिरूवा ।
एत्थ ण अणवन्नियाण देवाण ठाणा पन्नत्ता,
तिसु वि लोयस्स असंखेज्जइभागे ।
तत्थ ण बहवे अणवन्निया देवा परिवसंति,
महिड्ढिया जहा पिसाया-जाव-विहरंति,
सन्निहिय-सामाणा इत्थ दुवे अणवन्निंदा अणवन्नियकुमाररायाणो परिवसंति महिड्ढीया,
एवं जहा काल-महाकालाणं दोण्ह पि दाहिणिल्लाणं उत्तरिल्लाण य भणिया तहा सन्निहिय-सामा-णाण पि भाणियव्वा ।

संगहणी गाहाओ—

अणवन्निय-पणवन्निय-इसिवाइय-भूयवाइया चेव ।
कंदिय-महाकंदिय कोहंडा पयगए चेव ॥१॥

इमे इंदा—सन्निहिया सामाणा धाय-विधाए इसी य इसिवाले ।
ईसर-महेसरे वि य हवइ सुवच्छे विसाले'य ॥२॥
हासे हासरई चेव सेए तहा भवे महासेए ।
पयए पयगवई वि य नेयव्वा आणुपुव्वीए ॥३॥

[६] [१] प्र०—भगवन् ! आनपन्निक देवो के स्थान कहा हैं ?
अर्थात् भगवन् ! आनपन्निक देव कहा रहते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के (रत्नमय काण्ड के) मध्य मे आठ सौ योजन मे आनपन्निक देवो के असख्य लाख तिर्यक् नगरावास हैं। ये-यावत्-प्रतिरूप हैं। यहा आनपन्निक देवो के स्थान हैं। उत्पात, समुद्घात और स्वस्थान-तीनो की अपेक्षा ये लोक के असख्यातवें भाग मे हैं। यहा बहुत-से आनपन्निक देव निवास करते हैं। ये महर्द्धिक-यावत्-पिशाच देवो के समान विचरण करने वाले है। यहा सन्निहित और सामान्य नामक दो आनपन्निकेन्द्र आनपन्निककुमारराजा रहते हैं जो महर्द्धिक हैं। जिस प्रकार काल और महाकाल-इन दोनो का दक्षिणी और उत्तरी (पिशाच देवो) के प्रसग मे वर्णन किया गया है, उसी प्रकार सन्निहित और सामान्य का भी वर्णन कह लेना चाहिए। सग्रहणी गाथाओ का अर्थ-आनपन्निक, पानपन्निक, ऋषिवादी, भूतवादी, क्रदित, महाक्रंदित, कूष्माण्ड, और पतग (ये देव हैं।)

इनके इन्द्र क्रमश इस प्रकार हैं—सन्निहित और सामान्य, धाता और विधाता, ऋषि और ऋषि-पाल, ईश्वर और महेश्वर, सुवत्स और विशाल, हास्य और हास्यरति, श्वेत और महाश्वेत, पतय और पतयपति।

जृम्भक देवों के स्थान

[७] [१] प्र०—जभगा ण भंते ! देवा कहिं वसहिं उवेंति ?

उ०—गोयमा ! सव्वेसु चेव दीहवेयड्ढेसु, चित्त-विचित्तजमगपव्वएसु, कंचणपव्वएसु य,
एत्थ ण जंभगा देवा वसहिं उवेंति ।

[७] [१] प्र०—भगवन् ! जृंभक देव कहा रहते हैं ?

उ०—गौतम ! समस्त दीर्घ वैताढ्यो मे, चित्र, विचित्र, यमक (समक) एव काचन पर्वतो मे जृंभक देव निवास करते हैं ।

वाणव्यन्तर देवों की सुधर्मा सभा

[८] वाणमंतराण देवाणं सभाओ सुहम्माओ
नव जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पन्नत्ता ।

—सम० ९ सूत्र १०

वाण-व्यन्तर देवो की सुधर्मा सभायें नौ योजन ऊची कही गई हैं ।

तिर्यक्लोक: भेद, संस्थान, मध्य

[१] [१] प्र०—तिरियलोयखेत्तलोए ण भते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! असंखेज्जविहे पण्णत्ते, तजहा—
जंबुद्दीवे दीवे तिरियलोयखेत्तलोए—जाव—सयभूरमणसमुद्दे तिरियलोयखेत्तलोए ।

[२] प्र०—तिरियलोयखेत्तलोए णं भते ! किंसंठिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! झल्लरिसठाणसंठिए पण्णत्ते ।

—विवा भाग ३ श. ११ उ. १० प्र. ४, ७ पृ. २२८–२९

[१] प्र०—भगवन् ! तिर्यक्लोक-क्षेत्रलोक कितने प्रकार का है ?

उ०—गौतम ! असख्येय प्रकार का है, यथा—जम्बूद्वीप द्वीप तिर्यक्लोक क्षेत्रलोक—यावत्—स्वयभूरमण समुद्र-तिर्यक् लोक क्षेत्रलोक ।

[२] प्र०—भगवन् ! तिर्यक् लोक क्षेत्रलोक किस आकार का है ?

उ०—गौतम ! झालर के आकार का है ।

[३] प्र०—कहि ण भंते ! तिरियलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स बहुमज्झदेसभाए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिम-हेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु एत्थ णं तिरियलोगस्स मज्झे अट्ठपएसिए रुयए पण्णत्ते ।

—विवा. भाग ३ श. १३ उ. ४ प्र. ९ पृ. ३१

[३] प्र०—भगवन् ! तिर्छे लोक का आयाम-मध्य कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मदर पर्वत के बीचो बीच, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर और नीचे के दो क्षुद्र प्रतरो मे तिर्छे लोक का मध्य भाग रूप आठ प्रदेशो का रुचक कहा गया है ।
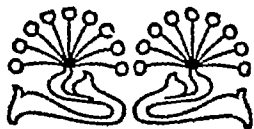
जम्बूद्वीप

जम्बूद्वीप-वर्णन

[२] [१] प्र०—कहि ण भते ! जवुद्दीवे ?
केमहालए ण भते ! जवुद्दीवे दीवे ?
किसठिए ण भते ! जवुद्दीवे ?
किमायारभावपडोयारे ण भते ! जवुद्दीवे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अयण्ण जवुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भंतराए, सव्वखुड्डाए,
वट्टे तेल्लापूयसठाणसठिए,
वट्टे रहचक्कवालसठाणसठिए,
वट्टे पुक्खरकण्णियासंठाणसठिए,
वट्टे पडिपुण्णचदसठाणसठिए,
एग जोयणसयसहस्स आयाम-विक्खभेण,[1]
तिण्णि जोयणसयसहस्साइ सोलस सहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसय तेरस अगुलाइं अद्धंगुल च किंचिविसेसाहिय परिक्खेवेण पण्णत्ते[2]

—जम्बू वक्ष० १ सूत्र ३ पृ १४–१५

१—ठा १, सूत्र ५२ ।
सम० १, सूत्र १६ ।
सम० एक लाख, सूत्र, १२४ पृ० ११८ ।
विवा० भाग ३ श० ६ उ० १ प्र० २ पृ० १२५ ।

२—प्र०—जवुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइय आयामविक्खभेणं, केवइय परिक्खेवेण, केवइय उव्वेहेण, केवइय उद्ध उच्चत्तेण, केवइय सव्वग्गेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जवुद्दीवे दीवे एग जोयणसयसहस्स आयामविक्खभेण,
तिण्णि जोयणसयसहस्साइ सोलस य सहस्साइं दोण्णि अ सत्तावीसे जोअणसए तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसय तेरस अगुलाइ अद्धगुलं च किंचिविसेसाहिय परिक्खेवेण पण्णत्ते ।
एग जोअणसहस्स उव्वेहेण, णवणउतिं जोअणसहस्साइं साइरेगाइ उद्ध उच्चत्तेणं साइरेगं जोअणसयसहस्स सव्वग्गेण पण्णत्ते ।

—जम्बू १७४ पृ ५३८

प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप का आयाम, विष्कभ, परिक्षेप, उद्वेघ, ऊँचाई और सर्व परिमाण क्या है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप का आयाम-विष्कभ एक लाख योजन, परिधि ३१६२२७ योजन, तीन कोस १२८ धनुप एव कुछ अधिक साढे तेरह अगुल की है। गहराई एक हजार योजन, ऊँचाई किंचित् अधिक ९९ हजार योजन एव सर्वपरिमाण किंचित् अधिक एक लाख योजन है ।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप कहाँ है ?
भगवन् ! जम्बूद्वीप कितना विशाल है ?
भगवन् ! जम्बूद्वीप का सस्थान कैसा है ?
भगवन् ! जम्बूद्वीप का आकारभाव कैसा है ?

उ०—गौतम ! यह जम्बूद्वीप सर्वद्वीप-समुद्रो के अभ्यन्तर-बीच मे है। सबसे छोटा है।

तेल मे तले हुए पूए के आकार का गोल है, रथ के पहिये के सस्थान के समान गोल है, कमल की कर्णिका के आकार की तरह गोल है, परिपूर्ण चन्द्रमा के आकार की तरह गोल है। एक लाख योजन लम्बा-चौडा है। तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन, तीन कोस, एक सौ अट्ठाईस धनुष, कुछ अधिक साढे तेरह अगुल की परिधि वाला है।

जम्बूद्वीप की जगती

[३] **से णं एगाए वइरामईए जगईए सव्वओ समता सपरिक्खित्ते,**
सा णं जगई अट्ठ जोयणाइं उड्ढ उच्चत्तेणं,[1]
मूले बारस जोअणाइ विक्खभेणं,[2]
मज्झे अट्ठ जोयणाइं विक्खभेणं,
उवरिं चत्तारि जोअणाइं विक्खभेणं,
मूले विच्छिन्ना, मज्झे सखित्ता उवरिं तणुया,
गोपुच्छसठाणसठिया, सव्ववइरामई अच्छा सण्हा लण्हा घट्टा मट्ठा णीरया णिम्मला णिप्पंका णिक्कं-कडच्छाया सप्पभा्सिमिरीया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा,
सा णं जगई एगेणं महतगवक्खकडएणं सव्वओ समता संपरिक्खित्ता,
से णं गवक्खकडए अद्धजोयण उड्ढं उच्चत्तेणं,
पंच धणुसयाइं विक्खभेणं,
सव्वरयणामए अच्छे जाव पडिरूवे,[3]

—जम्बू वक्ष १ सूत्र ४ पृ २०

[३] वह (जम्बूद्वीप) एक वज्रमय जगती से सब ओर से घिरा है। वह जगती आठ योजन ऊची है। मूल मे बारह योजन चौडी, मध्य मे आठ योजन चौडी और ऊपर चार योजन चौडी है। मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त और ऊपर पतली है। गौ की पूछ के आकार की, पूरी तरह वज्रमयी, स्वच्छ, चिकनी, घुटे पट के समान मसृण, घटारी, मठारी, नीरज, निर्मल, निष्पक, अनावरण दीप्ति वाली, प्रभायुक्त, किरणो से युक्त, उद्योतमय, प्रसादजनक, दर्शनीय, अभिरूव और प्रतिरूप है।

वह जगती एक जालकटक (जालियो के समूह) से सब ओर से घिरी है।
वह जालकटक आधा योजन ऊचा, पाच सौ धनुष चौडा, सर्वरत्नमय, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप है।

---

१. (क) ठा. ८ सूत्र ६४२ पृ. ४१३
(ख) सम. ८ सूत्र ६ पृ. १५
२. (क) सम. १२ सूत्र ६ पृ. २४
(ख) ठा. २ उ. ३ सूत्र ९३ पृ ७६
३. जीवा. प्र. ३ उ. १ सूत्र १२४

पद्मवरवेदिका

[४] तीसे ण जगतीए उप्पि बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं एगा महई पउमवरवेदिका पण्णत्ता,

सा ण पउमवरवेदिया अद्धजोयण उड्ढ उच्चत्तेण,

पच धणुसयाइ विक्खभेण,

जगती समिया परिक्खेवेण,

सव्वरयणामई अच्छा-जाव-पडिरूवा ।

तीसे ण पउमवरवेइयाए अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तजहा-वइरामया नेमा, रिट्ठामया पइट्ठाणा, वेरुलियामया खभा, सुवण्णरुप्पमया फलगा, वइरामया सधी, लोहितक्खमईओ सूईओ, णाणामणिमया कलेवरा, कलेवरसघाडा, णाणामणिमया रूवा, नाणामणिमया रूवसघाडा, अकामया पक्खा पक्खवाहाओ, जोतीरसामया वसा वसकवेल्लुया य, रययामईओ पट्टियाओ, जातरूवमयीओ ओहाडणीओ, वइरामयीओ उवरि पुच्छणीओ, सव्वसेए रययामते साण छादणे ।

सा ण पउमवरवेइया एगमेगेण हेमजालेण, (एगमेगेण गवक्खजालेण) एगमेगेण खिखिणिजालेणं-जाव-मणिजालेण (कणयजालेण रयणजालेण) एगमेगेण पउमवरजालेण सव्वरयणामएण सव्वतो समता सपरिक्खित्ता ।

ते णं जाला तवणिज्जलबूसगा सुवण्णपयरगमडिया णाणामणि-रयण-विविहहार-द्धहारउवसोभितसमुदया, ईसिं अण्णमण्णमसपत्ता पुव्वावरदाहिणउत्तरागतेहिं वाएहिं मदाग २ एज्जमाणा २ कपिज्जमाणा २ लबमाणा २ पझझमाणा २ सद्दायमाणा २ तेण ओरालेण मणुण्णेण कण्ण-मणणेव्वुतिकरेणं सद्देणं सव्वतो समता आपूरेमाणा, सिरीए अतीव उवसोभेमाणा २ चिट्ठ ति ।

तीसे ण पउमवरवेइयाए तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे हयसघाडा, गयसघाडा, नरसघाडा, किण्णरसघाडा, किंपुरिससघाडा, महोरगसघाडा, गधव्वसघाडा, वसहसघाडा, सव्वरयणामया अच्छा-जाव-पडिरूवा ।

तीसे णं पउमवरवेइयाए तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे हयपतीओ तहेव-जाव-पडिरूवाओ ।

एवं हयवीहीओ-जाव-पडिरूवाओ ।

एव हयमिहुणाइ-जाव-पडिरूवाइ ।

तीसे ण पउमवरवेइयाए तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे पउमलयाओ नागलताओ,

एव असोग० चपग० चूयवण० वासति० अतिमुत्तग० कुद० सामलयाओ णिच्च कुसुमियाओ-जाव-सुविहत्त-पिंडमजरिवडिंसकधरीओ सव्वरयणामईओ-जाव-पडिरूवाओ ।

[तीसे ण पउमवरवेइयाए तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे अक्खयसोत्थिया पण्णत्ता सव्वरयणामया अच्छा ।]

[४] उस जगती के ऊपर बीचो बीच एक महती पद्मवरवेदिका है। वह पद्मवरवेदिका आधा योजन ऊँची, पाच सौ धनुष चौडी, जगती के समान विस्तृत, सर्वात्मना रत्नमय, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप है। उस पद्मवरवेदिका का वर्णन इस प्रकार कहा गया है—

उसके नेम (भूमिभाग से ऊपर निकलते प्रदेश) वज्रमय हैं। प्रतिष्ठान (मूल पाये) रिष्टमय हैं। स्तभ वैडूर्यमय हैं। फलक स्वर्ण-रजतमय, सधिया वज्रमय, सूचिया लोहिताक्षमय, कलेवर एव कलेवरयुग्म नाना मणिमय, रूपक और रूपकयुगल नाना मणिमय, पक्ष एव पक्षवाहु अकरत्नमय, वश (पृष्ठवश) एव वशकवेल्लुक ज्योतिरस नामक रत्नमय, पट्टिकायें (पृष्ठवशो के ऊपर की कम्बायें) रजतमय, अवघाटिनी जातरूप स्वर्ण की, पुञ्छनी वज्रमय सर्वात्मना श्वेत रजतमय आच्छादन है।

वह पद्मवरवेदिका एक-एक हेमजाल (एक-एक गवाक्षजाल) से, एक-एक किंकिनीजाल से-यावत्-मणि-जाल से (कनकजाल तथा रजतजाल से) एक-एक पद्मवरजाल से-जो सर्वरत्नमय है, सब ओर से घिरी हुई है।

वे जाल तपनीयमय लंबूसक (झूमका) वाले, स्वर्ण के पतरे से मंडित, विविध मणि, रत्न, विविध हार एवं अर्धहार से सुशोभित है, कुछ-कुछ एक दूसरे से असप्राप्त (दूर) हैं, पूर्व पश्चिम दक्षिण और उत्तर (दिशा) से आए हुए वायु से मन्द-मन्द डोलते हुए, कंपित होते हुए, लटकते हुए, आवाज करते हुए एवं गूंजते हुए है। उस उदार, मनोज्ञ, कर्णों एवं मन को आनन्द देने वाले शब्द से सब दिशाओ को पूरित करते हुए तथा श्री से अतीव-अतीव शोभित होते हुए स्थित हैं।

उस पद्मवरवेदिका पर जगह-जगह बहुत से अश्वयुगल, गजयुगल, नरयुगल, किन्नरयुगल, किंपुरुषयुगल, महोरगयुगल, गंधर्वयुगल, वृषभयुगल बने है, जो सर्वरत्नमय-यावत्-प्रतिरूप है।

उस पद्मवरवेदिका पर जगह-जगह बहुत-सी अश्वपंक्तियाँ आदि हैं। वे—यावत्—प्रतिरूप हैं।
इसी प्रकार अश्ववीथियाँ तथा अश्वमिथुन आदि हैं, जो—यावत्—प्रतिरूप हैं,

उस पद्मवरवेदिका पर स्थान-स्थान पर बहुतेरी पद्मलताएँ, नागलताएँ, अशोकलताएँ, चंपकलताएँ, चूतलताएँ, वासन्तिकलताएँ, अतिमुक्तकलताएँ, कुन्द लताएँ, श्यामलताएँ हैं, जो सदैव पुष्पित रहती हैं—यावत्—सुविभक्त पिंडमंजरी एवं अवतंसकों को धारण करने वाली, सर्वरत्नमय—यावत्—प्रतिरूप है।

(उस पद्मवरवेदिका पर स्थान-स्थान पर बहुत-से अक्षत-स्वस्तिक कहे हैं, जो सर्वरत्नमय और स्वच्छ हैं।)

[५] [१] प्र०—से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-पउमवरवेइया पउमवरवेइया ?

उ०—गोयमा! पउमवरवेइयाए तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं वेदियासु वेदियाबाहासु वेदियासीसफलएसु वेदियापुडंतरेसु पक्खेसु पक्खबाहासु पक्खपेरंतेसु,

बहूइं उप्पलाइं पउमाइं-जाव-सतसहस्सपत्ताइं सव्वरयणामयाइं अच्छाइं-जाव-पडिरूवाइं महता २ वासिक्कच्छत्तसमयाइं पण्णत्ताइं समणाउसो!

से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-पउमवरवेइया २।

[२] प्र०—पउमवरवेइया णं भंते! किं सासया असासया ?

उ०—गोयमा! सिय सासया, सिय असासया।

[३] प्र०—से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-सिय सासया, सिय असासया ?

उ०—गोयमा! दव्वट्ठयाए सासता, वण्णपज्जवेहिं गंधपज्जवेहिं रसपज्जवेहिं फासपज्जवेहिं असासता।

से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ-सिय सासता सिय असासता।

[४] प्र०—पउमवरवेइया णं भंते! कालओ केवच्चिरं होति ?

उ०—गोयमा! ण कयावि णासि, ण कयावि णत्थि, ण कयावि न भविस्सइ,

भुविं च, भवति य, भविस्सति य,

धुवा नियया सासता अक्खया अव्वया अवट्ठिया णिच्चा पउमवरवेदिया[1]।

—जीवा प्रति ३ सूत्र १२५ पृ. १७६-१८०

---

१. जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स पुरच्छिमिल्लाओ वेइयंताओ धायइखंडचक्कवालस्स पच्चत्थिमिल्ले चरमंते एस णं सत्तजोयण-सयसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

—सम. सूत्र १३०

[५] [१] प्र०—भगवन् ! पद्मवरवेदिका, पद्मवरवेदिका क्यो कहलाती है ?

उ०—गौतम ! पद्मवरवेदिका के ऊपर जगह-जगह वेदिकाओ पर, वेदिका-पार्श्वो पर, वेदिका-शीशफलकों पर दो वेदिकाओ के मध्य-भाग मे, पक्षो पर, पक्षपार्श्वों पर, पक्षो के पर्यन्त भागो पर बहुतेरे उत्पल, पद्म—यावत्—शतसहस्रपत्र हैं, जो सर्वरत्नमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप हैं तथा वर्षा-काल मे वनाई हुई वडी-वडी छतरियो से समान हैं। आयुष्मन् श्रमणो ! इस कारण से पद्मवर-वेदिका को पद्मवरवेदिका कहते हैं।

[२] प्र०—भगवन् ! पद्मवरवेदिका शाश्वत है या अशाश्वत ?

उ०—गौतम ! कथचित् शाश्वत और कथचित् अशाश्वत है।

[३] प्र०—भगवन् ! किस हेतु से कहा जाता है कि कथचित् शाश्वत और कथचित् अशाश्वत है ?

उ०—गौतम ! द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत तथा वर्णपर्यायो से, गधपर्यायो से, रसपर्यायो से और स्पर्शपर्यायो से अशाश्वत है। गौतम ! इस कारण उसे कथचित् शाश्वत और कथचित् अशाश्वत कहा है।

[४] प्र०—भगवन् ! पद्मवरवेदिका काल से कब तक होती है ?

उ०—गौतम ! वह न कभी नही थी, न कभी नही है और न कभी नही होगी। वह (सदा) थी, है और रहेगी। पद्मवरवेदिका ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित और नित्य है।

जगती पर वनखण्ड

[६] तीसे ण जगईए उप्पि बाहि पउमवरवेइयाए एत्थ ण मह एगे वणसडे पण्णत्ते, देसूणाइ दो जोअणाइं विक्खभेण, जगईसमए परिक्खेवेण वणसडवण्णओ णेयव्वो।

—जम्बू वक्ष १ सूत्र ५ पृ० २७

[६] उस जगती के ऊपर एव पद्मवरवेदिका से वाहर एक विशाल वनखण्ड है। उसका विष्कभ कुछ कम दो योजन का है और परिक्षेप (परिधि) जगती के समान है। वनखण्ड का वर्णन यहाँ समझ लेना चाहिए।

[७] तस्स ण वणसडस्स अतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिगपुक्खरेइ वा—जाव—णाणाविहपचवण्णेहिं मणीहिं तणेहि उवसोभिए, तजहा-किण्हेहिं एव वण्णो रसो फासो सद्दो पुक्खरिणीओ पव्वयगा घरगा मडवगा पुढविसिलावट्टया गोयमा ! णेयव्वा।

तत्थ ण वहवे वाणमंतरा देवा य देवीओ य आसयति सयति पुरा पोराणाण सुपरक्कंताण सुभाण कल्लाणाण कडाण कम्माण कल्लाणफलवित्तिविसेस पच्चणुभवमाणा विहरति।

तीसे ण जगईए उप्पि अंतो पउमवरवेइयाए एत्थ ण एगे मह वणसंडे पण्णत्ते, देसूणाइं दो जोअणाइ विक्खभेण, वेदियासमएण परिक्खेवेण, किण्हे—जाव—तणविहूणे णेअव्वो।[1]

—जम्बू वक्ष १ सूत्र ६ पृ ३०–३१

[७] उस वनखण्ड के अन्दर अत्यन्त सम एव रमणीय भूमिभाग कहा गया है। वह मृदग पर मढे चमडे के समान है—यावत्—नाना प्रकार के कृष्ण आदि पचवर्ण मणियो तथा तृणो से सुशोभित है। गौतम ! यहाँ वर्ण, रस, स्पर्श, शब्द, पुष्करिणी, पर्वत, गृह, मडप तथा पृथ्वीशिलापट्टक समझ लेना चाहिए।

वहाँ बहुत-से वान-व्यन्तर देव और देवीगण बैठते हैं, शयन करते हैं तथा पूर्वकृत शुभ, कल्याणकारी कर्मों का कल्याणमय फल भोगते हैं।

उस जगती के ऊपर पद्मवरवेदिका के अन्दर एक विशाल वनखण्ड कहा गया है। उसका विष्कभ कुछ कम दो योजन का है। उसकी परिधि वेदिका के समान है। कृष्ण आदि उसके विशेषण समझ लेना चाहिए—यावत्—वह तृणहीन है।

१—जीवा. प्र ३, उ. १, सूत्र १२६–२७

जम्बूद्वीप के द्वार

[८] [१] प्र०—जम्बुद्दीवस्स णं भंते ! दीवस्स कइ दारा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि दारा पण्णत्ता, तंजहा—
विजए, वेजयंते, जयंते, अपराजिए ।
एवं चत्तारिवि दारा सरायहाणिया भाणियव्वा[1] ।

[२] प्र०—कहि णं भंते ! जंबुद्दीवस्स दीवस्स विजए णाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जम्बुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं पणयालीसं जोयणसहस्साइं वीइवइत्ता जंबुद्दीवदीवपुरत्थिमपेरंते,
लवणसमुद्दपुरत्थिमद्धस्स पच्चत्थिमेणं,
सीआए महाणईए उप्पिं,
एत्थ णं जंबुद्दीवस्स विजए णाम दारे पण्णत्ते,
अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, चत्तारि जोयणाइं विक्खंभेणं,
तावइयं चेव पवेसेणं,
सेए वरकणगथूभियाए,
—जाव-दारस्स वण्णओ-जाव-रायहाणी ।

—जम्बू वक्ष. १, सूत्र ७-८ पृ ४७

[८] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के कितने द्वार हैं ।

उ०—गौतम ! चार द्वार हैं–विजय, वैजयन्त, जयन्त और और अपराजित । इस प्रकार राजधानी सहित चारो द्वारो का कथन समझ लेना चाहिए ।

[२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप का विजय नामक द्वार कहा है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत के पूर्व मे पैंतालीस हजार योजन चलकर, जम्बूद्वीप के पूर्वी पर्यन्त भाग मे, पूर्वार्ध लवणसमुद्र के पश्चिम मे, सीता महानदी के ऊपर जम्बूद्वीप का विजय नामक द्वार है । वह आठ योजन ऊंचा है, चार योजन चौडा है और इतना ही प्रवेश वाला है । वह श्वेत, उत्तम स्वर्णमय स्तूपिकाओ से युक्त है, इत्यादि द्वार-वर्णन राजधानी पर्यन्त समझ लेना चाहिए ।

[९] [१] प्र०—कहि णं भंते ! जंबुद्दीवस्स वेजयंते णाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दक्खिणेणं पणयालीसं जोयणसहस्साइं अबाधाए जंबुद्दीवदीवदाहिणपेरंते लवणसमुद्ददाहिणद्धस्स उत्तरेणं एत्थ णं जंबुद्दीवस्स २ वेजयंते णाम दारे पण्णत्ते,
अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं,
सच्चेव सव्वा वत्तव्वया-जाव-णिच्चे ।

[२] प्र०—कहि णं भंते ! रायहाणी[2] ?

उ०—दाहिणेणं—जाव-वेजयंते देवे ।

---

१. (क) जीवा. प्र. ३ उ. १ सूत्र १२८, १४३ ।
(ख) ठा. ४ उ. २ सूत्र ३०३ पृ. २१४ ।
(ग) ठा. ८ सूत्र ६५७ पृ. ४२० ।
२. सम. ३७ सूत्र ३

[३] प्र०—कहिं ण भंते ! जंबुद्दीवस्स दीवस्स जयंते णाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमेणं पणयालीसं जोयणसहस्साइं जंबुद्दीवपच्चत्थिम-पेरंते लवणसमुद्दपच्चत्थिमद्धस्स पुरच्छिमेणं, सीओदाए महाणदीए उप्पिं एत्थ णं जंबुद्दीवस्स जयंते णाम दारे पण्णत्ते ।
तं चेव से पमाणं,
जयंते देवे, पच्चत्थिमेणं से रायहाणी-जाव-महिड्ढीए ।

[४] प्र०—कहिं णं भंते ! जंबुद्दीवस्स अपराइए णाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! मंदरस्स उत्तरेणं पणयालीसं जोयणसहस्साइं अबाहाए जंबुद्दीवे दीवे उत्तरपेरंते, लवणसमुद्दस्स उत्तरद्धस्स दाहिणेणं, एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे अपराइए णाम दारे पण्णत्ते ।
तं चेव पमाणं,
रायहाणी उत्तरेणं-जाव-अपराइए देवे ।
चउण्हवि अण्णंमि जंबुद्दीवे ।

[५] प्र०—जंबुद्दीवस्स णं भंते ! दीवस्स दारस्स य दारस्स य एस णं केवतियं अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अउणासीतिं जोयणसहस्साइं बावण्णं च जोयणाइं देसूणं च अद्धजोयणं दारस्स य २ अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ।

—जीवा प्रति ३ सूत्र १४४-१४५ पृ २६०
—जम्बू वक्ष १ सूत्र ६ पृ ६५

[६] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप का वैजयन्त नामक द्वार कहां है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से दक्षिण में, पैंतालीस हजार योजन की दूरी पर जम्बूद्वीप नामक द्वीप के दक्षिण-पर्यन्त में तथा लवणसमुद्रार्ध के उत्तर में जम्बूद्वीप का वैजयन्त द्वार कहा गया है। वह आठ योजन ऊँचा है, इत्यादि वक्तव्यता वही पूर्ववत् है-यावत्-नित्य है।

[२] प्र०—भगवन् ! राजधानी कहां है ?

उ०—दक्षिण में है-यावत्-वैजयन्त देव (उसका अधिपति है) ।

[३] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप का जयन्त नामक द्वार कहां है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से पश्चिम में पैंतालीस हजार योजन चलकर जम्बूद्वीप के पश्चिमी पर्यन्त भाग में, लवणसमुद्र के पश्चिमार्ध के पूर्व में, शीतोदा महानदी के ऊपर जम्बूद्वीप का जयन्त नामक द्वार है। इसका प्रमाण भी वही पूर्ववत् है। यहां जयन्त देव है; उसकी राजधानी पश्चिम में है-यावत्-(वह देव) महर्द्धिक है।

[४] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप का अपराजित नामक द्वार कहां है ?

उ०—गौतम ! मन्दर पर्वत से उत्तर में पैंतालीस हजार योजन की दूरी पर, जम्बूद्वीप में उत्तरी पर्यन्त भाग में तथा उत्तरार्ध लवणसमुद्र के दक्षिण में जम्बूद्वीप का अपराजित द्वार है। इसका प्रमाण भी वही पूर्ववत् है। राजधानी उत्तर में है-यावत्-अपराजित देव है। चारों की (राजधानियां) अन्य जम्बूद्वीप में है।

[५] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के एक द्वार से दूसरे द्वार का कितना अव्यवहित अन्तर है ?

उ०—गौतम ! ७९ हजार एवं कुछ कम ५२॥ योजन का अव्यवहित अन्तर है।

जम्बूद्वीप के उपादानद्रव्य

[१०][१] प्र०—जम्बुद्दीवे णं भते ! दीवे किं पुढविपरिणामे आउपरिणामे जीवपरिणामे पोग्गलपरिणामे ?

उ०—गोयमा ! पुढविपरिणामेवि आउपरिणामेवि जीवपरिणामेवि पुग्गलपरिणामेवि ।

—जम्बू. वक्ष. ७ सूत्र १७६ पृ ५३८

[१०][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप क्या पृथ्वी का परिणमन है, जल का परिणमन है, जीव का परिणमन है या पुद्गल का परिणमन है ?

उ०—गौतम ! पृथ्वी का भी परिणमन है, अप् का भी परिणमन है, जीव का भी परिणमन है, पुद्गल का भी परिणमन है ।

'जम्बूद्वीप' नाम का हेतु

[११][१] प्र०—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-जंबुद्दीवे दीवे ?

उ०—गोयमा ! जम्बुद्दीवे णं दीवे तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे जम्बूरुक्खा जम्बूवणा जम्बूवणसंडा णिच्चं कुसुमिआ-जाव-पिंडिममजरिवडेंसगधरा सिरीए अईव उवसोभेमाणा चिट्ठंति,
जम्बूए सुदंसणाए अणाढिए णाम देवे महिड्ढीए-जाव-पलिओवमट्ठिइए परिवसइ,
से तेणट्ठेण गोअमा ! एवं वुच्चइ-जम्बुद्दीवे दीवे इति[1] ।

—जम्बूद्वीप. वक्ष ७ सूत्र १७७ पृ. ५४०

[११][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप का नाम जम्बूद्वीप क्यो है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में जगह-जगह बहुतेरे जम्बूवृक्ष, जम्बूवन एव जम्बूवनखण्ड है, जो सदा फूले रहते है, मजरियो एव अवतसको को धारण करने वाले हैं तथा श्री से अतीव सुशोभित रहते हैं । जम्बू सुदर्शन पर अनाहृत नामक महर्द्धिक-यावत्-पल्योपम की स्थिति वाला देव निवास करता है ।
गौतम ! इस कारण जम्बूद्वीप का नाम जम्बूद्वीप है ।

जम्बूद्वीप की नित्यानित्यता

[१२][१] प्र०—जम्बुद्दीवे णं भंते ! दीवे किं सासए असासए ?
उ०—गोयमा ! सिअ सासए सिअ असासए !

[२] प्र०—से केणट्ठेणं भते ! एवं वुच्चइ-सिअ सासए, सिअ असासए ?

उ०—गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासए, वण्णपज्जवेहिं गंधपज्जवेहिं रसपज्जवेहिं फासपज्जवेहिं असासए ।
से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-सिअ सासए, सिअ असासए ।

[३] प्र०—जम्बुद्दीवे णं भते ! दीवे कालओ केवचिरं होइ ?

उ०—गोअमा ! ण कयावि णासि, ण कयावि णत्थि, ण कयावि ण भविस्सइ, भुविं च, भवइ अ, भविस्सइ अ, धुवे णिइए सासए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे जंबुद्दीवे दीवे पण्णत्ते इति[2] ।

—जम्बू वक्ष. ७ सूत्र १७५ पृ ५३८

---

१. जीवा. प्र. ३ उ. २ सूत्र १५२ पृ. २६५
२. जीवा. प्र. ३ उ. २ सूत्र १५२

[१२][१] प्र०—भगवन्! जम्बूद्वीप नामक द्वीप शाश्वत है या अशाश्वत ?
उ०—गौतम! कथचित् शाश्वत और कथचित् अशाश्वत है।

[२] प्र०—भगवन्! किस हेतु से ऐसा कहा जाता है कि कथचित् शाश्वत और कथचित् अशाश्वत है ?
उ०—गौतम! (जम्बूद्वीप) द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत है, वर्णपर्यायो से, गधपर्यायो से, रसपर्यायो से और स्पर्शपर्यायो से अशाश्वत है।

[३] प्र०—भगवन्! जम्बूद्वीप काल की अपेक्षा कब तक रहता है ?
उ०—गौतम! न कभी नही था, न कभी नही है, न कभी नही होगा। वह था, है और रहेगा। जम्बूद्वीप ध्रुव नियत शाश्वत अव्यय अवस्थित और नित्य है।

जम्बूद्वीप में वर्षधर पर्वत

[१] जंबुद्दीवे दीवे छ वासहरपव्वता पण्णत्ता,[1] तजहा—
चुल्लहिमवते, महाहिमवते, निसढे, नीलवते, रुप्पि, सिहरी[2]।

—ठा, ६ उ ३ सूत्र ५२२ पृ ३५०

[२] जम्बूद्वीप मे छह वर्षधर पर्वत कहे हैं, यथा—क्षुद्रहिमवन्त, महाहिमवन्त, निषध, नीलवन्त, रुक्मि और शिखरी।

चुल्लहिमवन्त पर्वत

[२] [१] प्र०—कहि ण भते! जबुद्दीवे दीवे चुल्लहिमवते[3] णाम वासहरपव्वए पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा! हेमवयस्स वासस्स दाहिणेणं,
भरहस्स वासस्स उत्तरेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे चुल्लहिमवते णाम वासहरपव्वए पण्णत्ते।
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणवित्थिण्णे,
दुहा लवणसमुद्द पुट्ठे,
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्द पुट्ठे,
पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठे,
एग[4] जोअणसय उड्ढ उच्चत्तेण,
पणवीस जोयणाइ उव्वेहेण,
एगं जोअणसहस्स बावण्णं च जोअणाइं दुवालस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं।
तस्स बाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण पच जोअणसहस्साइ तिण्णि अ पण्णासे जोअणसए पण्णरस य

१. ठा ७ सूत्र ५५५ पृ ३७७
२ ठा ३ उ ४ सूत्र १९७ पृ १५०
३ (क)—ठा २ उ ३ सूत्र ८७ पृ० ६५
(ख) „ ३ उ ४ सूत्र १९७ पृ० १५१
(ग) „ ७ सूत्र ५५५ पृ० ३७७
४ सम० १००, सूत्र ७

एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणं ।
तस्स जीवा उत्तरेण पाईण-पडीणायया-जाव-पच्चत्थिमिल्लाए [illegible] मिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा
चउव्वीसं[1] जोअणसहस्साइ णव य वत्तीसे जोअणसए अद्धभागं च किंचिविसेसूणा आयामेणं पण्णत्ता ।
तीसे धणुपट्ठे दाहिणेणं पणवीसं जोअणसहस्साइं,
दोण्णि अ तीसे जोअणसए, चत्तारि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेण पण्णत्ते ।
रुअगसंठाणसंठिए, सव्वकणगामए, अच्छे, सण्हे-जाव-पडिरूवे,
उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं, दोहि य वणसंडेहिं संपरिक्खित्ते,
दुण्हवि पमाणं वण्णगोत्ति ।
चुल्लहिमवतस्स वासहरपव्वयस्स उवरिं वहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
से जहाणामए आलिगपुक्खरेइ वा-जाव—
वहवे वाणमंतरा देवा य देवीओ अ आसयति-जाव-विहरंति ।

—जम्बू. वक्ष ४ सूत्र ७२ पृ २८१

[२] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे चुल्ल (छोटा) हिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! हैमवत वर्ष के दक्षिण मे, भरत वर्ष के उत्तर मे, पूर्वीय लवणसमुद्र के पश्चिम मे, पश्चिमी लवणसमुद्र के पूर्व मे, जम्बूद्वीप का चुल्लहिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत है । यह पूर्व-पश्चिम मे लम्वा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा, तथा दो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । पूर्व की ओर से पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है और पश्चिम की ओर से पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है ।

इसकी ऊँचाई सौ योजन की, गहराई पच्चीस योजन की तथा चौडाई १०५२$\frac{१२}{१९}$ योजन की है ।
इसकी वाहु पूर्व-पश्चिम की ओर ५३५०$\frac{१५}{१९}$+$\frac{१}{२}$ योजन लम्वी है ।

इसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम की ओर लम्वी है-यावत्-पश्चिम की ओर पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है ।
इसकी लम्वाई २४९३२+$\frac{१}{२}$ योजन से कुछ विशेष कम है ।
इसका धनु पृष्ठ दक्षिण मे २५२३०$\frac{४}{१९}$ योजन की परिधि वाला है ।

यह रुचक (स्वर्ण के आभूषण विशेष) के आकार का, सर्वात्मना सुवर्णमय, स्वच्छ, चिकना यावत्-प्रतिरूप है । इसके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकायें तथा दो वनखण्ड है । इनका प्रमाण एव वर्णन पूर्वोक्त प्रकार का समझ लेना चाहिए ।

चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत के ऊपर अति सम और रमणीय भूभाग है, जैसे आलिंगपुष्कर हो ! -यावत्-अनेक वाणव्यन्तर देव-देवियां यहा बैठते हैं-यावत्-विचरते हैं ।

छह द्रह

[३] जंबुद्दीवे २ छ महद्दहा पण्णत्ता—
पउमद्दहे, महापउमद्दहे, तिगिच्छद्दहे, केसरिद्दहे महापोंडरीयद्दहे, पुंडरीयद्दहे ।

—ठा० ६, उ. ३ सूत्र ५२२ पृ० ३५०

जम्बुद्वीप मे छह महाद्रह हैं, यथा—पद्मद्रह, महापद्मद्रह, तिगिंछद्रह, केसरिद्रह, महापुण्डरीकद्रह और पुण्डरीकद्रह ।

---

१. सम. २४ सूत्र २

द्रहवर्तिनी देवियां

[४] तत्थ ण छ देवयाओ महिड्ढियाओ—जाव—पल्लोवमट्ठिताओ परिवसति, तजहा—
सिरि हिरि धिति कित्ति बुद्धि लच्छी ।[१]

—ठा० ६ उ० ३ सूत्र ५२२ पृ० ३५०

उन (पद्म आदि द्रहो मे अनुक्रम से) छह देवियाँ महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाली निवास करती हैं, यथा श्री, ह्री, धृति, कीर्त्ति, बुद्धि और लक्ष्मी ।

पद्मद्रह

[५] तस्स ण वहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स वहुमज्झदेसभाए
इत्थ ण इक्के मह पउमद्दहे[२] णाम दहे पण्णत्ते ।
पाईण–पडीणायए, उदीण–दाहिणविच्छिण्णे
इक्क जोअणसहस्स आयामेण,[३]
पच जोअणसयाइ विक्खभेण,
दस जोअणाइ उव्वेहेण[४],
अच्छे सण्हे, रययामयकूले—जाव—पासाईए—जाव—पडिरूवेति ।
से ण एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसडेणं सव्वओ समता सपरिक्खित्ते ।
वेइआ–वणसडवण्णओ भाणिअव्वोत्ति ।
तस्स ण पउमद्दहस्स चउद्दिसिं चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता ।
वण्णावासो भाणिअव्वोत्ति
तेसि ण तिसोवाणपडिरूवगाण पुरओ पत्तेअ-पत्तेअ तोरणा पण्णत्ता ।
ते ण तोरणा णाणामणिमया ।
तस्स ण पउमद्दहस्स वहुमज्झदेसभाए
एत्थ मह पउमे पण्णत्ते ।
जोअण आयाम–विक्खभेण, अद्धजोअण वाहल्लेण, दस जोअणाइ उव्वेहेण,
दो कोसे ऊसिए जलताओ,
साइरेगाइ दस जोअणाइ सव्वग्गेण पण्णत्ता (त्ते) ।
से ण एगाए जगईए सव्वओ समता सपरिक्खित्ते ।
जबुद्दीवजगइप्पमाणा ।
गवक्खकडएवि तह चेव पमाणेणति ।
तस्स ण पउमस्स अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तजहा—
वइरामया मूला, रिट्ठामए कदे, वेरुलिआमए णाले,
वेरुलिआमया वाहिरपत्ता, जवूणयामया अब्भितरपत्ता,
तवणिज्जमया केसरा, णाणामणिमया पोक्खरत्थिभाया,
कणगामई कण्णिगा, सा ण अद्धजोअण आयामविक्खभेण,
कोस वाहल्लेण, सव्वकणगामई अच्छा ।

१—(क) ठा० २ उ० ३ सूत्र ८८ पृ० ६८
(ख) ठा० ३ उ० ४ सूत्र १९७ पृ० १५०
२—(क) ठा० अ० २ उ० ३ सूत्र ८८ पृ० ६८
(ख) " अ० ३ उ० ४ सूत्र १९७ पृ० १५०
३— सम० २१३ सूत्र १०
४— ठा० १० सूत्र ७७६ पृ० ४९८

तीसे णं कण्णिआए उप्पिं वहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा,
तस्स णं वहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स वहुमज्झदेसभाए
एत्थ णं महं एगे भवणे पण्णत्ते ।
कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं,
देसूणगं कोसं उड्ढं उच्चत्तेण ।
अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे पासाईए दरिसणिज्जे ।
तस्स णं भवणस्स तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता ।
ते ण दारा पंचधणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेण,
अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं विक्खभेणं
तावतिअं चेव पवेसेणं,
सेआवरकणगथूभिआओ—जाव—वणमालाओ णेअव्वाओ ।
तस्स ण भवणस्स अंतो वहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते
से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा,
तस्स णं वहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महई एगा मणिवेढिआ पण्णत्ता ।
सा णं मणिवेढिआ पंचधणुसयाइं आयामविक्खभेणं,
अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं वाहल्लेण,
सव्वमणिमई अच्छा ।
तीसे ण मणिपेढिआए उप्पिं,
एत्थ ण महं एगे सयणिज्जे पण्णत्ते ।
सयणिज्जवण्णओ भाणिअव्वो ।

[५] इस अति सम एवं रमणीय भूमिभाग के मध्य मे एक विशाल पद्मद्रह नामक द्रह है। यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा, एक हजार योजन लम्बा, पाच सौ योजन चौडा तथा दस योजन गहरा है। यह स्वच्छ, चिकना, रजतमय किनारो वाला—यावत्—प्रासादिक व प्रतिरूप है।

यह एक पद्मवरवेदिका तथा एक वनखड से सब ओर से घिरा है। यहा वेदिका और वनखड का वर्णक कहना चाहिए।

इस पद्मद्रह की चारो दिशाओ मे चार प्रतिरूप त्रिसोपान [पक्तियाँ) हैं। यहा इनका भी वर्णक कहना चाहिए। इन प्रतिरूप त्रिसोपानो के सामने पृथक्-पृथक् तोरण है। ये तोरण नाना-मणिमय है।

इस पद्मद्रह के मध्य मे एक विशाल पद्म है। यह एक योजन लम्बा-चौडा, आधा योजन मोटा, दस योजन गहरा और जल से दो कोस ऊचा है। सव मिलाकर इसका परिमाण कुछ अधिक दस योजन का है।

इसके सब ओर एक जगती (कोट) है। इसका परिमाण जम्बूद्वीप की जगती के बराबर है। उसके गवाक्षकटक (जालियो के समूह) का भी परिमाण उसी प्रकार समझना चाहिए।

इस पद्म का वर्णन इस प्रकार है—

इसके मूल वज्रमय हैं। कन्द (मूल नाल के वीच की गाठ) अरिष्टरत्न की है। नाल वैडूर्यमय है। वाहर के पत्ते वैडूर्यमय है, अन्दर के पत्ते जम्बूनदमय हैं। केसर रक्तस्वर्णमय हैं। पुष्करास्थि-भाग (कमल के बीज के विभाग) नाना-मणिमय हैं। कर्णिका कनकमयी है। यह कर्णिका आधा योजन लम्बी-चौडी, एक कोस मोटी तथा सर्वकनकमय और स्वच्छ है। इस कर्णिका के ऊपर अति सम और रमणीय भू-भाग है जैसे आलिंगपुष्कर हो इत्यादि।

इस सम एव रमणीय भूभाग के मध्य मे एक विशाल भवन है। यह एक कोस लम्बा, आधा कोस चौडा सैंकडो स्तभो से सन्निविष्ट, प्रासादिक एव दर्शनीय है।

इस भवन की तीन दिशाओ मे तीन द्वार हैं। ये द्वार पाच सौ धनुष ऊ चे, अढाई सौ धनुष विष्कम वाले एव उतने ही प्रवेश वाले हैं। यहाँ श्वेत व श्रेष्ठ कनक–स्तूपिका है–यावत्–वनमालाओ तक का कथन समझ लेना चाहिए।

इस भवन के अदर अति समतल एव रमणीय भूमिभाग के बीचो बीच एक विशाल मणिपीठिका है। यह मणिपीठिका पाच सौ धनुप लवी-चौडी, अढाई सौ धनुप मोटी, सर्वमणिमय और स्वच्छ है।

इस मणिपीठिका के ऊपर एक बडी शय्या है। शय्या का वर्णक यहा कह लेना चाहिए।

[६] से ण पउमे अण्णेण अट्ठसएण पउमाण
तदद्धुच्चत्तप्पमाणमित्ताण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते।
ते ण पउमा अद्धजोयण आयाम-विक्खभेण,
कोस वाहल्लेण, दसजोयणाइ उव्वेहेण।
कोस ऊसिया जलताओ, साइरेगाइ दसजोयणाइं उच्चत्तेण।
तेसि ण पउमाण अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तजहा—वइरामया मूला—जाव—कणगामई कण्णिआ।
सा ण कण्णिया कोस आयामेणं, अद्धकोस बाहल्लेणं,
सव्वकणगामई अच्छा इति।
तीसे ण कण्णिआए उप्पि वहुसम-रमणिज्जे—जाव—मणीहिं उवसोभिए।
तस्स ण पउमस्स अवरुत्तरेण उत्तरेण पुरत्थिमेण एत्थ ण सिरीए देवीए चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं चत्तारि पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
तस्स ण पउमस्स पुरत्थिमेण एत्थ ण सिरीए देवीए चउण्ह महत्तरियाण चत्तारि पउमा पण्णत्ता।
तस्स णं पउमस्स दाहिण-पुरत्थिमेण सिरीए देवीए अब्भितरिआए परिसाए अट्ठण्ह देवसाहस्सीणं अट्ठ पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
दाहिणेण मज्झिमपरिसाए दसण्ह देवसाहस्सीणं दस पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
दाहिण-पच्चत्थिमेण वाहिरिआए परिसाए बारसण्ह देवसाहस्सीण बारसपउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
पच्चत्थिमेण सत्तण्हं अणिआहिवईण सत्त पउमा पण्णत्ता।
तस्स ण पउमस्स चउद्दिसि सव्वओ समता एत्थ ण सिरीए देवीए सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं सोलस पउमसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
से ण तीहि पउमपरिक्खेवेहिं सव्वओ समता सपरिक्खित्ते, तजहा–
अब्भितरकेण, मज्झिमएणं, वाहिरएण।
अब्भितरए पउमपरिक्खेवे वत्तीस पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
मज्झिमए पउमपरिक्खेवे चत्तालीस पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
वाहिरए पउमपरिक्खेवे अडयालीस पउमसयसाहस्सीओ पण्णत्ताओ।
एवामेव सपुव्वावरेण तिहि पउमपरिक्खेवेहिं
एगा पउमकोडी वीस च पउमसयसाहस्सीओ भवतीति अक्खाय।

[६] यह (उपर्युक्त) पद्म अपने से आधी ऊ चाई वाले अन्य एक सौ आठ पद्मो से सव ओर से घिरा हुआ है। ये पद्म आधा योजन लम्बे-चौडे, एक कोस मोटे, दस योजन गहरे तथा एक कोस पानी से ऊपर (पानी के वाहर) हैं। (इस प्रकार सव मिला कर) दस योजन से अधिक ऊ चे हैं। इन पद्मो का वर्णन इस प्रकार है—

इनके मूल वज्रमय हैं—यावत्—कर्णिका कनकमय है। यह कर्णिका एक कोस लम्बी, आधा कोस मोटी, सर्वकनकमयी और स्वच्छ है। इस कर्णिका के ऊपर अति सम एव रमणीय (भूमिभाग है) यह—यावत्—मणियो से सुशोभित है।

इस पद्म से।पश्चिमोत्तर मे, उत्तर मे तथा उत्तर-पूर्व मे श्रीदेवी के चार हजार सामानिको (देवो) के चार हजार पद्म हैं।

इस पद्म के पूर्व मे श्रीदेवी की चार महत्तरिकाओ (मुख्य देवियो) के चार पद्म है।

इस पद्म के दक्षिण-पूर्व मे श्रीदेवी की आभ्यतर परिषद् के आठ हजार देवो के आठ हजार पद्म हैं, दक्षिण मे मध्यम परिषद् के दस हजार देवो के दस हजार पद्म हैं, दक्षिण-पश्चिम मे बाह्य परिषद् के बारह हजार देवो के बारह हजार पद्म है तथा पश्चिम मे सात अनीकाधिपतियो (देवो) के सात पद्म हैं।

इस पद्म की चारो दिशाओ मे सभी ओर श्रीदेवी के सोलह हजार आत्मरक्षक देवो के सोलह हजार पद्म हैं।

यह पद्म सब ओर से तीन पद्म-परिधियो से घिरा है, यथा-आभ्यन्तरपरिधि, मध्य की परिधि और बाह्य परिधि। आभ्यन्तर पद्म-परिधि मे बत्तीस लाख पद्म हैं। मध्यम परिधि मे चालीस लाख पद्म हैं और बाह्य परिधि मे अडतालीस लाख पद्म हैं। यह सब मिलकर तीनो पद्म-परिधियो मे एक करोड और बीस लाख पद्म हैं।

'पद्मद्रह' संज्ञा का कारण

[७] [१] प्र०—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-पउमद्दहे पउमद्दहे ?

उ०—गोयमा ! पउमद्दहे णं तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे उप्पलाइं-जाव-सयसहस्सपत्ताइं
पउमद्दहप्पभाइं पउमद्दहवण्णाभाइं
सिरी अ इत्थ देवी महिड्ढिया-जाव-पलिओवमट्ठिईआ परिवसइ।
से एएणट्ठेणं-जाव-अदुत्तरं च णं गोअमा !
पउमद्दहस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते।
ण कयाइ णासि, न०।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ७३ पृ. २८३-८४

[७] [१] प्र०—भगवन् ! पद्मद्रह, पद्मद्रह क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! पद्मद्रह मे स्थान-स्थान पर बहुत पद्म हैं-यावत्-शतपत्र-सहस्रपत्र (जाति के कमल) हैं, वे पद्मद्रह की प्रभा वाले तथा पद्मद्रह के वर्ण जैसे हैं। यहा महान् ऋद्धि की धारिका-यावत्-पल्योपम की स्थिति वाली श्री नामक देवी निवास करती है। इस कारण इसे पद्मद्रह कहते हैं।
इसके अतिरिक्त, गौतम ! पद्मद्रह नाम शाश्वत है जो न कभी नही था (न कभी नही है, न कभी नही होगा अर्थात् सदैव था, है और रहेगा)।

गंगा का उद्गम और प्रपात

[८] तस्स णं पउमद्दहस्स[1] पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं गगा महाणई पवूढा समाणी पुरत्थाभिमुही पंच जोअण-सयाइं पव्वएणं गता गंगावत्तणकूडे[2] आवत्ता समाणी पंच तेवीसे जोअणसए तिण्णि अ एगूणवीसइभाए

---

१. (क) ठा. २ उ. ३ सूत्र ८८ पृ. ६८
(ख) " " " " सूत्र १९७
२. ठा. ८ सूत्र ६३९ पृ. ४१३

जोअणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएण गता महया घडमुहपवत्तएण मुत्तावलिहारसठिएण साइरेगजोअणसइ-
एणं पवाएणं पवडइ ।
गगा महाणई जओ पवडइ इत्थ ण मह एगा जिब्भिया पण्णत्ता ।
सा ण जिब्भिआ अद्धजोअण आयामेणं,
छ सकोसाइ जोअणाइ विक्खभेण[1] ।
अद्धकोसं वाहल्लेण ।
मगरमुहविउट्ठसठाणसठिआ सव्ववइरामई अच्छा सण्हा ।
गंगा महाणई जत्थ पवडइ,
एत्थ ण मह एगे गगप्पवाए कुडे णाम कुडे पण्णत्ते[2] ।
सट्ठि जोअणाइ आयाम-विक्खभेण ।
णउअ जोअणसय किंचिविसेसाहिअ परिक्खेवेण ।
दस जोअणाइ उव्वेहेण,[3] अच्छे सण्हे रययामयकूले
समतीरे वइरामयपासाणे वइरतले
सुवण्ण-सुब्भरययामयवालुआए वेरुलिअमणिफालिअपडलपच्चोअडे,
सुहोआरे सुहोत्तारे णाणामणितित्थसुवद्धे वट्टे
अणुपुव्व-सुजाय-वप्प-गभीर-सीअलजले
सछण्णपत्त-भिस-मुणाले
वहुउप्पल-कुमुअ-णलिण-सुभग-सोगधिअ-पोंडरीअ-महापोडरीअ-सयपत्त-सहस्सपत्त-सयसहस्सपत्तप्फुल्ल-
केसरोवचिए
छप्पय-महुयरपरिभुज्जमाणकमले
अच्छ-विमल-पत्थसलिले पुण्णे
पडिहत्थभमतमच्छ-कच्छभ-अणेगसउणगण-मिहुणपविअरियसद्दुन्नइअ-महुरसरणाइए पासाईए ।
से ण एगाए पउमवरवेइयाए, एगेण य वणसडेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते ।
वेइआ-वणसडगाण पउमाण वण्णओ भाणिअव्वो ।

[८] इस पद्मद्रह के पूर्वदिशा के तोरण (द्वार) से गगा महानदी निकल कर पूर्व ही की ओर पाच सौ योजन पर्वत पर होकर गई है । यहा गगावर्त्तन कूट के नीचे से मुडकर ५२३$_1\frac{3}{8}$ योजन दक्षिण मे पर्वत पर होकर घट के मुख से निकलते हुए जल के समान (खल-खल करते हुए) मोतियो के हार के समान एव सौ योजन से कुछ अधिक चौडे प्रपात से नीचे गिरती है ।

गगा महानदी जहा से गिरती है वहा एक विशाल जिह्विका (नालिका) है । यह नालिका आधा योजन लम्बी, सवा छह योजन चौडी, आधा कोस मोटी, मकर के खुले हुए मुख के आकार की, सर्वात्मना वज्र-मयी, स्वच्छ और चिकनी है ।

गगा महानदी जहा गिरती है वहा गगाप्रपात नामक एक विशाल कुण्ड है । यह साठ योजन लम्बा-चौडा, एक सौ नव्वे योजन से किंचित् अधिक की परिधि वाला, दस योजन गहरा, स्वच्छ और श्लक्ष्ण है ।

---

१. सम २५ सूत्र ७ पृ ५२
२. ठा २ उ ३ सूत्र ८८ पृ. ६८
३. ठा १० सूत्र ७७६ पृ. ४९८

इसके किनारे रजतमय हैं, तीर समतल हैं, दीवालें वज्रमय हैं, तल भी वज्रमय है। उसमें सुवर्णमय, सुभ्रमय (रूप्यविशेषमय) एव रजतमय वालुका है। उसके किनारे के ऊचे प्रदेश वैडूर्यमणिमय एव स्फटिकरत्न के पटलमय हैं। सुखपूर्वक उतरने चढने योग्य हैं। उसका तीर्थ (घाट) नाना प्रकार की मणियो से सुवद्ध है। वह गोलाकार है। अनुक्रम से नीचा, और नीचा तथा सुनिर्मित केदार मे गहरा और शीतल जल उसमे है। वह (पद्मिनी के) पत्तो से, कन्दो से और मृणालो से आच्छादित है। खिले हुए उत्पलो, कुमुदो, नलिनो, सुभगो, सौगन्धिको, पुण्डरीको, महापुण्डरीको, शतपत्रो, सहस्रपत्रो एव लक्षपत्र कमलो की केसर से सुशोभित है। भ्रमरो (षट्पद मधुपो) से परिभुज्यमान पद्मो वाला है। स्वच्छ, विमल एव पथ्य जल से युक्त है। पूरा भरा हुआ है। उसमे मच्छ और कच्छ बडी सख्या मे घूमते रहते हैं। अनेक पक्षी-युगलो का वहा विहार होता रहता है। उनके मधुर स्वरो से वह गूजता रहता है और इस कारण चित्त को प्रसन्न करने वाला है।

यह गगाप्रपात कुण्ड एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से सब ओर से घिरा हुआ है। पद्मवरवेदिका का, वनखण्ड का और पद्मो का वर्णन यहा कह लेना चाहिए।

गंगाप्रपातकुंड के सोपान

[९] **तस्स ण गगप्पवायकुंडस्स तिदिसिं तओ तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता, तंजहा—**
पुरत्थिमेणं दाहिणेण पच्चत्थिमेण।
तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाणं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते, तंजहा—
वइरामया णेम्मा, रिट्ठामया पइट्ठाणा,
वेरुलिआमया खभा, सुवण्ण-रुप्पमया फलगा,
लोहिअक्खमईओ सूईओ, वइरामया संधी,
णाणामणिमया आलवणा आलबणवाहाओत्ति।

[९] इस गगाप्रपातकुड की तीन दिशाओ मे तीन प्रतिरूप (सुन्दर) सोपानपक्तिया हैं, यथा—पूर्व मे, दक्षिण मे और पश्चिम मे।

इन प्रतिरूप सोपानो का वर्णन इस प्रकार है—इनके पाये वज्रमय हैं, प्रतिष्ठान अरिष्टमय हैं, स्तम्भ वैडूर्यमय है, फलक स्वर्ण-रूप्यमय है, सूचिया लोहिताक्षमय है, सधिया वज्रमय है, आलवन (उतरते-चढते समय सहारा लेने के साधन) तथा आलवनवाहाए (आलवन की आधारभूत भित्तिया) नानामणिमय हैं।

तोरणवर्णन

[१०] **तेसि णं तिसोवाणपडिरूवगाण पुरओ**
पत्तेय-पत्तेय तोरणा पण्णत्ता।
ते णं तोरणा णाणामणिमया
णाणामणिमएसु खभेसु उवणिविट्ठसनिविट्ठा
विविहमुत्तंतरोवइआ विविहतारारूवोवचिआ
ईहामिअ-उसह-तुरग-णर-मगर-विहग-वालगकिण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलयभत्तिचित्ता,
खंभुग्गयवइरवेइआ-परिगयाभिरामा,
विज्जाहरजमलजुअलजतजुत्ताविव अच्चीसहस्समालणीआ, रूवगसहस्सकलिआ,
भिसमाणा भिब्भिसमाणा चक्खुल्लोअणलेसा
सुहफासा सस्सिरीअरूवा
घंटावलिचलिअ-महुर-मणहरसरा पासादीया।

तेसि ण तोरणाण उवरिं बहवे अट्ठट्ठमगलगा पण्णत्ता, तजहा—
सोत्थिए, सिरिवच्छे—जाव—पडिरूवा ।
तेसि ण तोरणाण उवरिं बहवे किण्हचामरज्झया—जाव—सुक्किल्लचामरज्झया अच्छा सण्हा रुप्पपट्टा वइरामयदण्डा जलयामलगंधिया सुरम्मा पासादीया ।
तेसि ण तोरणाण उप्पि बहवे छत्ताइछत्ता,
पडागाइपडागा घटाजुअला चामरजुअला
उप्पलहत्थगा पउमहत्थगा—जाव—सयसहस्सपत्तहत्थगा सव्वरयणामया अच्छा—जाव—पडिरूवा ।

[१०] इन प्रतिरूप त्रिसोपानो के सामने पृथक्—पृथक् तोरण है । ये तोरण नानामणिमय हैं, नानामणिमय स्तभो से उपनिविष्ट और सन्निविष्ट हैं । विविध मुक्ताओ से उपचित है । विविध तारारूपो से सहित हैं । उन पर भेडिया, वृषभ, तुरग, नर, मगर, विहग, सर्प, किन्नर, रुरु (मृगविशेष) अष्टापद, चमर, कुजर, वनलता, पद्मलता आदि के चित्र अकित हैं । वे वज्रमय वेदिका से सुशोभित है । विद्याधरो की जुगल जोडी से युक्त हैं । सहस्रो किरणो की प्रभा वाले हैं । सहस्र रूप से कलित हैं, चमकीले हैं, देदीप्यमान हैं । देखने पर नेत्र उनमे गड जाते हैं । सुखद स्पर्श वाले तथा सश्रीक रूप वाले हैं । हिलती हुई घटावलि से मधुर एव मनोहर स्वर को उत्पन्न करने वाले हैं, प्रासादिक हैं।

इन तोरणो पर वहुत-से अष्ट-अष्ट मगल हैं, यथा—स्वस्तिक, श्रीवत्स-यावत्-प्रतिरूप है ।
इन तोरणो पर अनेक कृष्ण चामरध्वजाए—यावत्—शुक्ल चामरध्वजाए हैं । (चामरध्वजाए) स्वच्छ, श्लक्ष्ण, रौप्यपट्ट वाली, वज्र के दड वाली, कमल के समान सुगधित, सुरम्य एव प्रासादिक हैं । इन तोरणो पर अनेक छत्रो पर छत्र, पताकाओ पर पताकाए, घटायुगल, चामरयुगल उत्पलहस्तक (उत्पल-कमल हाथ मे लिए हुए के चित्र), पद्महस्तक-यावत्-लक्षपत्र-हस्तक हैं । ये सव सर्वरत्नमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप हैं ।

गंगाद्वीप

[११] तस्स ण गगप्पवायकुडस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण महं एगे गगादीवे णाम दीवे पण्णत्ते ।[१]
अट्ठ जोअणाइ आयाम-विक्खभेण,
साइरेगाइ पणवीस जोअणाइं परिक्खेवेण ।
दो कोसे ऊसिए जलताओ,
सव्ववइरामए अच्छे सण्हे,
से ण एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेण सव्वओ समता संपरिक्खित्ते ।
वण्णओ भाणिअव्वो ।
गगादीवस्स ण दीवस्स उप्पि बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते ।
तस्स ण बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण महं गगाए देवीए भवणे पण्णत्ते ।
कोस आयामेण, अद्धकोस विक्खभेण, देसूणग च कोस उड्ढं उच्चत्तेणं ।
अणेगखभसयसण्णिविट्ठे—जाव—बहुमज्झभाए मणिपेढियाए सयणिज्जे ।
से केणट्ठेण ?—जाव—सासए णामधेज्जे पण्णत्ते ।

[११] उस गगाप्रपात कुण्ड के मध्य मे गगाद्वीप नामक एक विशाल द्वीप है । वह आठ योजन लम्बा-चौडा, पच्चीस योजन से कुछ अधिक की परिधि वाला, पानी से दो कोस ऊँचा, सर्ववज्रमय, स्वच्छ एव चिकना है ।

१–ठा ८ सूत्र ६२९ पृ० ४११

वह (द्वीप) एक पद्मवरवेदिका तथा एक वनखण्ड से सब ओर से घिरा हुआ है। यहाँ इन दोनो का वर्णक कह लेना चाहिए।
गगाद्वीप के ऊपर अत्यन्त सम एव रमणीय भूमि-भाग है।

[१२] इसके मध्य मे गगा देवी का एक विशाल भवन है। यह एक कोस लम्बा, आधा कोस चौडा, एक कोस ऊचा एव सैकडो स्तभो वाला है।—यावत्—इसके मध्य मे मणिपीठिका के ऊपर शय्या है।
इसका गगाद्वीप नाम क्यो है ?—यावत्—यह नाम शाश्वत है।

गंगा-संगम

[१३] तस्स णं गगप्पवायकुडस्स दक्खिणिल्लेण तोरणेणं
गगामहाणई पवूढा समाणी
उत्तरड्ढभरहवासं एज्जमाणी-एज्जमाणी
सत्तहिं सलिलासहस्सेहिं आउरेमाणी-आउरेमाणी
अहे खंडप्पवायगुहाए वेअड्ढपव्वयं दालइत्ता
दाहिणड्ढभरहवासं एज्जमाणी-एज्जमाणी
दाहिणड्ढभरहवासस्स बहुमज्झदेसभागं गंता
पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी
चोद्दसहि सलिलासहस्सेहिं समग्गा
अहे जगइं दालइत्ता पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ।[1]
गंगा णं महाणई पवहे छ सकोसाइं जोअणाइं विक्खंभेणं, अद्धकोसं उव्वेहेणं,[2]
तयणंतर च णं मायाए-मायाए परिवड्ढमाणी-परिवड्ढमाणी मुहे वासट्ठि जोअणाइं अद्धजोअणं च विक्खंभेणं।
सकोस जोअणं उव्वेहेण,
उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइआहिं दोहि अ वणसंडेहिं संपरिक्खित्ता।
वेइआ-वणसंडवण्णओ भाणिअव्वो।

[१३] इस गगाप्रपात कुड के दक्षिणी द्वार से गगा महानदी निकल कर उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र मे बहती हुई सात हजार नदियो को अपने मे मिलाती है। फिर खण्डप्रपात गुफा के नीचे से निकल कर वैताढ्य पर्वत को भेदती हुई दक्षिणार्ध भरतक्षेत्र मे बहती है। दक्षिणार्ध भरतक्षेत्र के मध्य मे होकर पूर्वाभिमुख होती हुई चौदह हजार नदियो सहित जगती के नीचे होती हुई पूर्वी लवण समुद्र मे मिल जाती है।

गगा महानदी उद्गम मे सवा छह योजन चौडी और आधा कोस गहरी है। तदनन्तर अनुक्रम से बढती-बढती (समुद्र मे) गिरते समय साढे बासठ योजन चौडी एव सवा योजन गहरी हो जाती है।

इसके दोनो ओर दो पद्मवर वेदिकाएँ तथा दो वनखण्ड हैं। यहा वेदिकाओ और वनखण्डों का वर्णक समझ लेना चाहिए।

१—जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं गंगा महानदी पंच महानदीओ समप्पेति, तंजहा—
१ जउणा, २ सरऊ, ३ आदी, ४ कोसी, ५ मही।

—ठा. ५ उ ३ सूत्र ४७० पृ० ३३३
—ठा. १० सूत्र ७१७ पृ० ४५३

२—सम० २४ सूत्र ५ पृ० ४६

सिन्धु नदी

[१४] एव सिंधूएवि णेअव्व—जाव—
तस्स ण पउमद्दहस्स पच्चत्थिमिल्लेण तोरणेण
सिंधुआवट्टणकूडे[1] दाहिणाभिमुही
सिंधुप्पवाय कु ड,[2] सिंधुद्दीवो,[3]
अट्ठो सो चेव-जाव-
अहे तिमिसगुहाए वेअड्ढपव्वय दालइत्ता पच्चत्थिमाभिमुही आवत्ता समाणी—
चोद्दससलिला अहे जगइ
पच्चत्थिमेण लवणसमुद्द—जाव—समप्पेइ[4] ।
सेस त चेवत्ति ।

[१४] इसी प्रकार सिन्धु (महानदी) के विषय मे भी जान लेना चाहिए। यह पद्मद्रह के पश्चिमी तोरण से निकल कर सिन्धु-आवर्त्तन कूट से दक्षिण की ओर जाती है (इस सवधी) सिन्धुप्रपात कुण्ड, सिन्धु द्वीप आदि समझने चाहिए। इसके नाम का कारण भी कह लेना चाहिए। —यावत्—तमिस्र गुफा के नीचे होती हुई, वैताढय पर्वत को भेदती हुई पश्चिम की ओर जाकर चौदह हजार नदियो सहित, जगती के नीचे होती हुई पश्चिमी लवणसमुद्र मे गिरती है। शेष कथन वही (पूर्ववत्) समझना चाहिए।

रोहितांसा महानदी

[१५] तस्स ण पउमद्दहस्स उत्तरिल्लेण तोरणेण
रोहिअसा महाणई[5] पवूढा समाणी
दोण्णि छावत्तरे जोअणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोअणस्स
उत्तराभिमुही पव्वएण गता
महया घडमुहपवत्तिएण मुत्तावलिहारसठिएणं
साइरेगजोअणसइएण पवाएण पवडइ
रोहिअसा महाणई जओ पवडइ एत्थ ण मह एगा जिब्भिआ पण्णत्ता ।
सा ण जिब्भिआ जोअण आयामेण,
अद्धतेरसजोअणाइ विक्खभेण,
कोस वाहल्लेण ।
मगरमुहविउट्ठसठाणसठिआ, सव्ववइरामई, अच्छा ।
रोहिअसा महाणई जहि पवडइ
एत्थ ण मह एगे रोहिअसापवायकु डे णाम कु डे पण्णत्ते ।

---

१ ठा० ८ सूत्र ६३६ पृ० ४१३ ।
२ ,, ,, ,, ,,
३ ,, सूत्र ६२६ पृ० ४११ ।
४ जवूमदरस्स दाहिणेण सिंधुमहाणदी पच महानईओ समप्पेति तजहा—
१ सतद्दू, २ विभासा, ३ वितत्था, ४ एरावती, ५ चदभागा ।
—ठा० ५ उ० ३ सूत्र ४७० पृ० ३३३ ।
—ठा० १० सूत्र ७१७ पृ० ४५३ ।
५ ठा० ३ उ० ४ सूत्र १९७ पृ० १५१

सवीसं जोअणसयं आयाम-विक्खंभेणं,
तिण्णि असीए जोअणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं ।
दस जोअणाइं उव्वेहेण,
अच्छे, कु डवण्णओ—जाव—तोरणा ।

[१५] इस पद्मद्रह के उत्तरी द्वार से रोहितासा महानदी निकल कर २७६ $\frac{६}{१९}$ योजन उत्तर की ओर पर्वत पर होती हुई विशाल घट से गिरते हुए एव मुक्तावलीहार के समान, सौ योजन से कुछ अधिक (चौडे) प्रपात से नीचे गिरती है ।
रोहितासा महानदी जहा गिरती है वहा एक विशाल नालिका है । यह नालिका एक योजन लम्बी, साढे बारह योजन चौडी, एक कोस मोटी, मगर के खुले मुख के आकार की, सर्वात्मना वज्रमयी और स्वच्छ है ।
जहा रोहितासा महानदी गिरती है वहा एक विशाल रोहितासाप्रपात नामक कुण्ड है । यह एक सौ बीस योजन लम्बा-चौडा, तीन सौ अस्सी योजन से कुछ कम की परिधि वाला, दस योजन गहरा और स्वच्छ है । यहा कुण्ड का वर्णन समझ लेना चाहिए-यावत्-तोरण हैं ।

रोहितांसा द्वीप

[१६] तस्स ण रोहिअसप्पवायकु डस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ णं मह एगे रोहिअसाणाम दीवे पण्णत्ते ।
सोलस जोअणाइं आयाम-विक्खभेण,
साइरेगाइं पण्णासं जोअणाइं परिक्खेवेणं,
दो कोसे ऊसिए जलताओ,
सव्वरयणामए अच्छे सण्हे,
सेस त चेव-जाव-भवणं अट्ठो अ भाणिअव्वोत्ति ।

[१६] रोहितासाप्रपात कुण्ड के मध्य मे रोहितासा नामक एक विशाल द्वीप है । यह सोलह योजन लम्बा-चौडा, पचास योजन से कुछ अधिक की परिधि वाला, पानी से दो कोस ऊ चा, पूरी तरह रत्नमय स्वच्छ और चिकना है । शेष वर्णन वही-पूर्ववत् है—यावत्-भवन और नाम का कारण कह लेना चाहिए ।

रोहितांसा का संगम

[१७] तस्स णं रोहिअंसप्पवायकुंडस्स उत्तरिल्लेण तोरणेणं,
रोहिअसा महाणई[1] पवूढा समाणी हेमवयं वासं एज्जमाणी—एज्जमाणी
चउद्दर्साहि सलिलासहस्सेंहि आपूरेमाणी-आपूरेमाणी
सद्दावइवट्टवेअद्धपव्वयं अद्धजोयणेणं असंपत्ता समाणी
पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी
हेमवय वासं दुहा विभयमाणी-विभयमाणी
अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेंहि समग्गा
अहे जगइं दालइत्ता पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ ।
रोहिअंसा णं पवहे अद्धतेरस जोअणाइं विक्खभेणं, कोस उव्वेहेणं,

१—ठा. २ उ. ४ सूत्र १९७ पृ०-१५१

तयणतर च ण मायाए-मायाए परिवड्ढमाणी-परिवड्ढमाणी,
मुहमूले पणवीस जोअणसयं विक्खमेण
अड्ढाइज्जाइ जोअणाइ उव्वेहेण
उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसडेहिं सपरिक्खित्ता ।

जम्बू वक्ष ४ सूत्र ७४ पृ० २८९-९०

[१७] रोहितासाप्रपात कुड के उत्तरीय तोरण (द्वार) से रोहितासा महानदी निकल कर हैमवत वर्ष मे वहती हुई, चौदह हजार नदियो के साथ, शव्दापाती नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत से आधे योजन की दूरी पर पश्चिम की ओर मुडती हुई, हैमवत वर्ष को दो भागो मे विभक्त करती हुई, अट्ठाईस हजार नदियो सहित, नीचे की भूमि को काटती हुई पश्चिमी लवण समुद्र मे मिलती है ।

उद्गम मे रोहितासा का प्रवाह साढे वारह योजन चौडा और एक कोस गहरा है । फिर अनुक्रम से वढते-वढते सगम के स्थान पर एक सौ पच्चीस योजन चौडा तथा अढाई योजन गहरा हो गया है । इसके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाए और दो वनखण्ड हैं जो इसे सब ओर से घेरे हुए हैं ।

चुल्लहिमवन्त पर्वत के कूट

[१८][१] प्र०—चुल्लहिमवते ण भते ! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता [1] ?

उ०—गोयमा ! इक्कारस कूडा पण्णत्ता, तजहा–सिद्धाययणकूडे १, चुल्लहिमवतकूडे २, भरहकूडे ३, इलादेवीकूडे ४, गगादेवीकूडे ५, सिरिकूडे ६, रोहिअसकूडे ७, सिन्धुदेवीकूडे ८, सुरदेवीकूडे ९, हेमवयकूडे १०, वेसमणकूडे ११ ।

[१८][१] प्र०—भगवन् ! चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत पर कितने कूट हैं ?

उ०—गौतम ! ग्यारह कूट हैं, यथा—

(१) सिद्धायतनकूट (२) चुल्लहिमवन्तकूट (३) भरतकूट (४) इलादेवीकूट (५) गगादेवीकूट (६) श्रीकूट (७) रोहितांसाकूट (८) सिन्धुदेवीकूट (९) सुरादेवीकूट (१०) हैमवतकूट और (११) वैश्रमणकूट ।

कूटवर्णन

[१९][१] प्र०—कहि ण भते ! चुल्लहिमवते वासहरपव्वए सिद्धाययणकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पुरच्छिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
चुल्लहिमवतकूडस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ णं सिद्धाययणकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ।
पंच जोअणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण, [2]
मूले पच जोअणसयाइ विक्खमेण,
मज्झे तिण्णि अ पण्णत्तरे जोअणसए विक्खमेण,
उप्पि अड्ढाइज्जे जोअणसए विक्खमेण,
मूले एग जोअणसहस्स पच य एगासीए जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण,
मज्झे एग जोअणसहस्स एग च छलसीअ जोअणसय किंचिविसेसूण परिक्खेवेण,

---

१—ठा० २ उ. ३ सूत्र ८७ पृ०–६५
२—सम० १०८ सूत्र २

उप्पि सत्तइक्काणउए जोअणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं ।
मूले विच्छिण्णे, मज्झे सखित्ते, उप्पि तणुए,
गोपुच्छसंठाणसठिए सव्वरयणामए अच्छे ।
से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसडेणं सव्वओ समंता सपरिक्खित्ते ।
सिद्धाययणकूडस्स णं उप्पि वहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते—जाव—
तस्स ण वहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स वहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण मह एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते ।
पण्णास जोअणाइ आयामेण,
पणवीस जोअणाइ विक्खमेण,
छत्तीसं जोअणाइ उड्ढ उच्चत्तेण—जाव—जिणपडिमावण्णओ भाणिअव्वो ।

[१९][१] प्र०—भगवन् ! चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत पर सिद्धायतन नामक कूट कहा है ?

उ०—गौतम ! पूर्वी लवण समुद्र से पश्चिम मे तथा चुल्लहिमवन्त कूट से पूर्व मे सिद्धायतन नामक कूट है । यह पाँच सौ योजन ऊ चा, मूल मे पाच सौ योजन चौडा, मध्य मे तीन सौ पचहत्तर योजन चौडा, ऊपर अढाई सौ योजन चौडा है । इसकी परिधि मूल मे १५८१ योजन से किंचित् अधिक है । मध्य मे ११८६ योजन से कुछ कम है और ऊपर ७९१ योजन से कुछ कम है ।
यह मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त और ऊपर पतला है । गाय की पू छ के आकार का है । सर्वरत्नमय और स्वच्छ है ।
यह एक पद्मवरवेदिका और वनखण्ड से सभी ओर से घिरा है ।
सिद्धायतन कूट पर अत्यन्त सम और रमणीय भूमिभाग है—यावत्—इस सम एव रमणीय भूमिभाग के मध्य मे एक विशाल सिद्धायतन है । यह सिद्धायतन पचास योजन लम्वा, पच्चीस योजन चौडा, छत्तीस योजन ऊ चा—यावत्—जिनप्रतिमा से युक्त है । यहाँ जिनप्रतिमा का वर्णन कह लेना चाहिए ।

चुल्लहिमवन्त कूट

[२०][१] प्र०—कहि ण भंते ! चुल्लहिमवते वासहरपव्वए चुल्लहिमवतकूडे णामं कूडे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! भरहकूडस्स पुरत्थिमेण, सिद्धाययणकूडस्स पच्चत्थिमेणं
एत्थ णं चुल्लहिमवते वासहरपव्वए चुल्लहिमवंतकूडे णाम कूडे पण्णत्ते[1] ।
एवं जो चेव सिद्धाययणकूडस्स उच्चत्त-विक्खभ-परिक्खेवो-जाव-
वहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स वहुमज्झदेसभाए एत्थ ण महं एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते ।
वासट्ठि जोयणाइं अद्धजोअणं च उच्चत्तेणं,
इक्कतीस जोअणाइं कोसं च विक्खमेणं,
अब्भुग्गयमूसिअपहसिए विव विविहमणिरयणभत्ति-चित्ते, वाउद्धुअविजय-वेजयन्ती-पडाग-च्छत्ताइ-च्छत्तकलिए तुगे गगणतलमभिलंघमाणसिहरे जालंतर-रयणपंजरुम्मीलिएव्व मणिरयणथूभिआए विअसिअसयवत्त-पु डरीअ-तिलय-रयण-द्धचंदचित्ते णाणामणिमयदामालंकिए
अंतो वहिं च सण्हवइरतवणिज्जरुइलवालुगापत्थडे सुहफासे सस्सिरीअरूवे पासाईए-जाव-पडिरूवे :
तस्स णं पासायवडेंसगस्स अतो वहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते-जाव-सीहासणं सपरिवार ।

[२] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एवं वुच्चइ-चुल्लहिमवतकूडे चुल्लहिमवंतकूडे ?
उ०—गोअमा ! चुल्लहिमवते णामं देवे महिड्ढीए-जाव-परिवसइ ।

१—चुल्लहिमवंतकूडस्स उवरिल्लाओ चरमंताओ चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स समधरणितले एस णं छ जोयणसयाइं अवाहाए अंतरे पण्णत्ते । —सम० ६०० सूत्र २

[२०][१] प्र०—भगवन् ! चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत पर चुल्लहिमवन्त नामक कूट कहा है ?

उ०—गौतम ! भरतकूट से पूर्व मे तथा सिद्धायतन कूट से पश्चिम मे चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत का चुल्लहिमवन्त नामक कूट है। सिद्धायतन कूट की ऊचाई, चौडाई, परिधि आदि की तरह इसकी भी ऊचाई आदि समझ लेनी चाहिए-यावत्-इसके सम एव रमणीय भूमिभाग के मध्य मे एक विशाल प्रासादावतसक है। यह साढे बासठ योजन ऊचा और सवा इकतीस योजन चौडा है। वह प्रवल एव शुभ्र प्रभापटल के कारण मानो हँस रहा है। विविध प्रकार के मणि-रत्नो की रचना से चित्र-विचित्र है। वायु से उडती हुई विजय-वैजयन्ती, पताकाओ एव छत्रातिछत्रो (छत्रो के ऊपर बने छत्रो) से सुशोभित है। ऊचा है। गगन तल को लाघने वाले शिखर से युक्त है। उसकी जालियो मे (शोभा के हेतु) रत्नो की रचना की गई है। वह अविनष्ट शोभा वाला है मानो पीजरे से निकाला गया हो या जालियो मे लगे रत्नो के समुदाय से नेत्रो को आकर्पित करने वाला है। मणियो एव रत्नो की स्तूपिकाओ से युक्त है। विकसित शतपत्र, पुण्डरीक, तिलक एव रत्नमय अर्धचद्रो से चित्र-विचित्र है। नाना मणिमय मालाओ से अलकृत है। उसके अन्दर और बाहर मुलायम वज्र एव रक्तसुवर्ण की मनोहर वालुका के पटल हैं। वह सुखद स्पर्श वाला, शोभायमान रूप वाला, प्रसन्नताकारी है—यावत्—प्रतिरूप है।

इस प्रासादावतसक के अन्दर अति सम एव रमणीय भूमिभाग है—यावत्—सपरिवार सिंहासन है।

[२] प्र०—भगवन् ! चुल्लहिमवन्तकूट चुल्लहिमवन्तकूट क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! यहा चुल्लहिमवन्त नामक महर्द्धिक देव—यावत्—रहता है

चुल्लहिमवन्ता राजधानी

[२१][१] प्र०—कहि ण भते ! चुल्लहिमवतगिरिकुमारस्स देवस्स चुल्लहिमवता णाम रायहाणी पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चुल्लहिमवतकूडस्स दक्खिणेण तिरियमसखेज्जे दीवसमुद्दे वीईवइत्ता
अण्ण जबुद्दीव दीव दक्खिणेण बारस जोअणसहस्साइ ओगाहित्ता
इत्थ ण चुल्लहिमवतस्स गिरिकुमारस्स देवस्स चुल्लहिमवता णाम रायहाणी पण्णत्ता।
बारस जोयणसहस्साइ आयाम-विक्खभेणं,
एव विजयरायहाणीसरिसा भाणिअव्वा।

[२१][२] प्र०—भगवन् ! चुल्लहिमवन्तगिरिकुमार देव की चुल्लहिमवन्ता नामक राजधानी कहा है ?

उ०—गौतम ! चुल्लहिमवन्तकूट से दक्षिण की ओर तिर्छे असख्य द्वीप और समुद्र पार करने पर एक दूसरा जम्बूद्वीप है। इस द्वीप मे दक्षिण मे बारह हजार योजन जाने पर चुल्लहिमवन्तगिरिकुमार देव की चुल्लहिमवन्ता नामक राजधानी है। यह बारह योजन लम्बी-चौडी है। इसका कथन विजया राजधानी के समान कह लेना चाहिए।

अवशेष कूट

[२२] एव अवसेसाणवि कूडाण वत्तव्वया णेअव्वा।
आयाम-विक्खभ-परिक्खेव-पासाय-देवयाओ
सीहासण-परिवारो अट्ठो णेअव्वाओ।
चउसु देवा-चुल्लहिमवन्त १ भरह २ हेमवय ३ वेसमणकूडेसु।
सेसेसु देवयाओ।

[२२] शेष कूटो की भी वक्तव्यता इसी प्रकार समझना चाहिए। इनकी लम्बाई, चौडाई, परिधि, प्रासाद, देवता, सिंहासन, परिवार, नाम का कारण कह लेना चाहिए।

चुल्लहिमवन्त, भरत, हैमवत और वैश्रमणकूटो मे देव हैं, शेष कूटो मे देविया हैं।

'चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत' संज्ञा का हेतु

[२३][१] प्र०—से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ-चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए २ ?

उ०—गोयमा ! महाहिमवंतवासहरपव्वयं पणिहाय आयामुच्चत्तुव्वेह-विक्खंभ-परिक्खेवं पडुच्च ईसिं खुड्डुतराए चेव, हस्सतराए चेव, णीअतराए चेव ।

चुल्लहिमवंते अ इत्थ देवे महिड्ढीए-जाव-पलिओवमट्ठिइए परिवसइ ।

से एएणट्ठेणं गोअमा ! एवं वुच्चइ चुल्लहिमवंते वासहरपव्वए २ ।

अदुत्तरं च णं गोअमा ! चुल्लहिमवंतस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते जं ण कयाइ णासि ३ ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ७५ पृ २९६

[२३][१] प्र०—भगवन् ! चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत को चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत क्यों कहते हैं ?

उ०—गौतम ! महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत की अपेक्षा लम्बाई, ऊंचाई, गहराई, चौड़ाई, परिधि आदि में यह छोटा है, ह्रस्व है, निम्न है। यहां चुल्लहिमवन्त नामक महर्धिक-यावत्-पल्योपम की स्थिति वाला देव निवास करता है। इस कारण गौतम ! इसे चुल्ल (छोटा) हिमवन्त वर्षधर पर्वत कहते हैं।

इसके अतिरिक्त गौतम ! चुल्लहिमवन्त नाम शाश्वत है, जो न कभी नहीं था इत्यादि ।

महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत

[१] [१] प्र०—कहि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे महाहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! हरिवासस्स दाहिणेणं,
हेमवयस्स वासस्स उत्तरेणं,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे महाहिमवंते णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते ।
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणवित्थिण्णे पलिअंकसंठाणसंठिए
दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए-जाव-पुट्ठे
पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे ।
दो जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं,
पण्णासं जोअणाइं उव्वेहेणं,[१]
चत्तारि जोअणसहस्साइं दोण्णि य दसुत्तरे जोअणसए दस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं ।
तस्स बाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं णव जोअणसहस्साइं दोण्णि य दसुत्तरे जोअणसए दस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणं ।
तस्स जीवा उत्तरेणं पाईण-पडीणायया, दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा,
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा पच्चत्थिमिल्लाए-जाव-पुट्ठा ।
तेवण्णं[२] जोअणसहस्साइं नव य एगतीसे जोअणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोअणस्स किंचिविसेसाहिए आयामेणं ।

१—सम. १०२ सूत्र २
२—सम. ५३ सूत्र २

तस्स धणु दाहिणेणं सत्तावण्णं[1] जोअणसहस्साइ दोण्णि अ तेणउए दस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेण ।

रुअगसठाणसठिए सव्वरयणामए अच्छे उभओ पासि दोहि पउमवरवेइयाहि दोहि अ वणसडेहि सपरिक्खित्ते ।

महाहिमवतस्स ण वासहरपव्वयस्स उप्पि बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते-जाव-णाणाविहपच-वण्णेहि मणीहि तणेहि य उवसोभिए-जाव-आसयति सयति य[2] ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ७९ पृ ३०१

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे महाहिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! हरिवर्ष से दक्षिण मे, हैमवत वर्ष से उत्तर मे, पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे एव पश्चिमी लवणसमुद्र से पूर्व मे जम्बूद्वीप स्थित महाहिमवन्त नामक वर्षधर पर्व है। यह पूर्व-पश्चिम मे लम्वा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा, पलग के आकार का तथा दो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। पूर्व की ओर से पूर्वी लवणसमुद्र से और पश्चिम की ओर से पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है।

इसकी ऊचाई दो सौ योजन, गहराई पचास योजन एव चौडाई ४२१०$\frac{१०}{१९}$ योजन है ।

इसकी वाहु पूर्व-पश्चिम की ओर ९२७६$\frac{९}{१९}$+$\frac{१}{२}$ योजन लम्वी है ।

इसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम की ओर लम्वी एव दोनो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। पूर्व की ओर से पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है, पश्चिम की ओर से पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। यह ५३९३१$\frac{६}{१९}$ योजन से कुछ अधिक लम्वी है। इसका धनुपृष्ठ दक्षिण की ओर ५७२९३$\frac{१०}{१९}$ योजन की परिधिवाला है। यह रुचक के आकार का, सर्वरत्नमय, स्वच्छ एव दोनो ओर से दो पद्मवर-वेदिकाओ व दो वनखण्डो से घिरा है।

महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत के ऊपर अति सम एव रमणीय भूमि है-यावत्-वह नानाविध पचवर्ण मणियो और तृणो से सुशोभित है-यावत्-(यहा देव) बैठते और शयन करते हैं।

महापद्मद्रह

[२] महाहिमवतस्स ण बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण एगे महापउमद्दहे णाम दहे पण्णत्ते ।
दो जोअणसहस्साइ आयामेण,[3]
एग जोअणसहस्स विक्खभेण,
दस जोअणाइ उव्वेहेण
अच्छे रययामयकूले
एवं आयाम-विक्खभविहूणा जा चेव पउमद्दहस्स वत्तव्वया सा चेव णेअव्वा ।
पउमप्पमाण दो जोअणाइ, अट्ठो—जाव—
महापउमद्दहवण्णाभाइ
हिरी अ इत्थ देवी—जाव—पलिओवमट्ठिइया परिवसइ ।
से एएणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ ।
अदुत्तरं च णं गोअमा ! महापउमद्दहस्स सासए णामधिज्जे पण्णत्ते
ज ण कयाइ णासी ३ ।

---

१ सम ५७ सूत्र ५

२. महाहिमवयस्स ण वासहरपव्वयस्स उवरिल्लाओ चरमताओ सोगधियस्स कडस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस ण बासीइ जोयणसयाइ अवाहाए अतरे पण्णत्ते ।

—सम ८२ सूत्र ३

३ सम० ११५

[२] महाहिमवन्त पर्वत के मध्य मे एक महापद्मद्रह नामक द्रह है। यह दो हजार योजन लम्बा, एक हजार योजन चौडा, दस योजन गहरा, स्वच्छ, रजतमय किनारो वाला—यावत्—लम्बाई-चौडाई को छोड कर शेष बातो मे पद्मद्रह के ही समान है।

इसके पद्म का प्रमाण दो योजन का है। इसके नाम का कारण (कह लेना चाहिए)—यावत्—यहा महापद्मद्रह के वर्ण जैसे (कमल आदि हैं)।

ह्री नामक देवी यहा निवास करती है जो—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाली है।

इस कारण गौतम ! (इसे महापद्मद्रह) कहते हैं। इसके अतिरिक्त गौतम ! महापद्मद्रह का यह नाम शाश्वत है जो न कभी नही था, (न कभी नही है और जो न कभी नहीं होगा।)

रोहिता महानदी का उद्गम

[३] तस्स ण महापउमद्दहस्स[1] दक्खिणिल्लेण तोरणेणं
रोहिआ महाणई पवूढा समाणी
सोलस पंचुत्तरे जोअणसए पच एगूणवीसइभाए जोअणस्स दक्खिणाभिमुही पव्वएण गंता
महया घडमुहपवित्तिएण मुत्तावलिहारसठिएण
साइरेगदोजोअणसइएण पवाएण पवडइ।
रोहिआ णं महाणई जओ पवडइ
एत्थ ण महं एगा जिब्भिया पण्णत्ता।
सा ण जिब्भिया जोअण आयामेण
अद्धतेरसजोअणाइं विक्खभेणं
कोस बाहल्लेण
मगरमुहविउट्टसठाणसंठिया सव्ववइरामयी अच्छा।
रोहिआ णं महाणई जहिं पवडइ
एत्थ णं मह एगे रोहिअप्पवायकुंडे णाम कुंडे पण्णत्ते।[2]
सवीसं जोअणसयं आयाम-विक्खभेण,
तिण्णि असीए जोअणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं,
दस जोअणाइं उव्वेहेणं, अच्छे, सण्हे,
सो चेव वण्णओ।
वइरतले वट्टे समतीरे—जाव—तोरणा।

[३] इस महापद्मद्रह के दक्षिणी तोरण से रोहिता महानदी निकल कर १६०५ $\frac{५}{१९}$ योजन दक्षिण की ओर पर्वत पर जाकर विशाल घट के मुख से निकलते हुए (भल्-भल्-खल्-खल् शब्द करते हुए) एव मुक्तावली हार के सदृश दो सौ योजन से कुछ अधिक (चौडे) प्रवाह से नीचे गिरती है।

जहा रोहिता महानदी गिरती है वहा एक विशाल जिह्विका (नाली) है। यह नाली एक योजन लबी, साढे बारह योजन चौडी, एक कोस मोटी, खुले हुए मगर के मुख के आकार-की, सर्ववज्रमयी और स्वच्छ है।

जहा रोहिता महानदी गिरती है वहा रोहिताप्रपात नामक एक विशाल कुड है। यह एक सौ बीस योजन लबा-चौडा, तीन सौ अस्सी योजन से कुछ कम परिधि वाला, दस योजन गहरा, स्वच्छ, चिकना (आदि विशेषणो से युक्त) है। इसका तल वज्रमय है, यह वर्त्तुलाकार व सम किनारो वाला है—यावत्—तोरण हैं।

१–२–ठा. अ, २ उ. ३ सूत्र ८८ पृ० ६८

रोहिताद्वीप

[४] तस्स ण रोहिअप्पवायकु डस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण मह एगे रोहिअदीवे णाम दीवे पण्णत्ते ।
सोलस जोअणाइ आयाम-विक्खभेण ।
साइरेगाइ पण्णास जोअणाइ परिक्खेवेण ।
दो कोसे ऊसिए जलताओ, सव्ववइरामए अच्छे ।
से ण एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसडेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते ।
रोहिअदीवस्स ण दीवस्स उप्पि वहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते ।
तस्स ण वहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण मह एगे भवणे पण्णत्ते ।
कोस आयामेण, सेस त चेव,
पमाण च अट्ठो अ भाणिअव्वो ।

[४] इस रोहिताप्रपात कु ड के मध्य मे रोहिताद्वीप नामक एक विशाल द्वीप है । यह सोलह योजन लम्वा-चौडा, पचास योजन से कुछ अधिक की परिधि वाला, जल की सतह से दो कोस ऊ चा, सर्ववज्रमय एव स्वच्छ है । यह एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से सब ओर से घिरा है ।

रोहिताद्वीप के ऊपर अत्यन्त सम एव रमणीय भूमाग है । इस सम एव रमणीय भूभाग के मध्य मे एक विशाल भवन है । यह एक कोस लम्बा है । शेष वक्तव्यता वही (गगाद्वीप आदि के समान) है । इसका प्रमाण और नाम का हेतु कह लेना चाहिए ।

रोहिता महानदी का संगम

[५] तस्स ण रोहिअप्पवायकुंडस्स दक्खिणिल्लेण तोरणेणं
रोहिआ महाणई पवूढा समाणी
हेमवय वासं एज्जमाणी-एज्जमाणी
सद्दावइ वट्टवेयड्ढपव्वय अद्धजोअणेण असपत्ता
पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी
हेमवयं वास दुहा विभयमाणी-विभयमाणी
अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा
अहे जगइ दालइत्ता पुरत्थिमेण लवणसमुद्द समप्पेइ ।
रोहिआ ण जहा रोहिअसा तहा पवाहे अ मुहे अ भाणिअव्वा
इति-जाव-सपरिक्खित्ता ।

[५] इस रोहिताकु ड के दक्षिणी तोरण से रोहिता महानदी निकल कर हैमवत क्षेत्र मे आती हुई शब्दापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत से आधे योजन की दूरी पर पूर्वाभिमुख मुडती हुई, हैमवत वर्ष को दो भागो मे विभाजित करती हुई, अट्ठाईस हजार नदियो सहित, नीचे की भूमि को काटती हुई पूर्वी लवणसमुद्र मे गिरती है ।

रोहिता का प्रवाह और मुख आदि का प्रमाण रोहितासा नदी के समान समझना चाहिए-यावत्-यह (पद्मवरवेदिका और वनखण्ड से) सपरिक्षिप्त है ।

हरिकान्ता महानदी का उद्गम

[६] तस्स णं [1]महापउमद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं
हरिकंता महाणई पवूढा समाणी
सोलस पंचुत्तरे जोअणसए पंच य एगूणवीसइभाए जोअणस्स उत्तराभिमुही पव्वएणं गंता
महया घडमुहपवत्तिएणं मुत्तावलिहारसंठिएणं
साइरेगदुजोअणसइएण पवाएणं पवडइ ।
हरिकंता महाणई जओ पवडइ
एत्थ ण महं एगा जिब्भिआ पण्णत्ता ।
दो जोअणाइं आयामेण, पणवीस जोअणाइं विक्खंभेणं,
अद्धजोयण वाहल्लेण ।
मगरमुहविउट्ठसंठाणसंठिआ सव्वरयणामई अच्छा ।
हरिकंता णं महाणई जहिं पवडइ
एत्थ ण महं एगे हरिकंतप्पवायकुंडे णाम कुंडे पण्णत्ते ।
दोण्णि अ चत्ताले जोअणसए आयाम-विक्खंभेण,
सत्तअउणट्ठे जोअणसए परिक्खेवेण ।
अच्छे एव कुंडवत्तव्वआ सव्वा नेयव्वा—जाव—तोरणा ।

[६] इस (उल्लिखित) महापद्मद्रह के उत्तरीय तोरण से हरिकान्ता महानदी निकल कर १६०५ $\frac{५}{१९}$ योजन उत्तर की ओर पर्वत पर बह कर विशाल घटमुख से गिरते हुए (जल के समान खल् खल् शब्द करती हुई) मुक्तावली हार के समान, दो सौ योजन से कुछ अधिक (चौडे) प्रपात से नीचे गिरती है ।

जहाँ हरिकान्ता महानदी गिरती है वहाँ एक विशाल नालिका है । वह दो योजन लबी, पच्चीस योजन चौडी, आधा योजन मोटी, मगर के खुले मुख के समान आकार वाली, सर्वरत्नमयी व स्वच्छ है । जहाँ हरिकान्ता महानदी गिरती है वहाँ हरिकान्ता-प्रपात नामक एक विशाल कुड है । यह दो सौ चालीस योजन लवा-चौडा, सात सौ उनसठ योजन की परिधि वाला और स्वच्छ है । यहाँ सम्पूर्ण कुडवक्तव्यता कह लेनी चाहिए—यावत्—तोरण है ।

हरिकान्ताद्वीप

[७] तस्स णं हरिकंतप्पवायकुंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे हरिकंतदीवे णामं दीवे पण्णत्ते ।
बत्तीसं जोअणाइं आयाम-विक्खंभेणं,
एगुत्तरं जोअणसयं परिक्खेवेण,
दो कोसे ऊसिए जलंताओ,
सव्वरयणामए अच्छे ।
से णं एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेणं—जाव—संपरिक्खित्ते । वण्णओ भाणिअव्वोत्ति ।
पमाणं च, सयणिज्जं च, अट्ठो अ भाणिअव्वो ।

[७] उस हरिकान्ताप्रपात कुड के मध्य मे हरिकान्ताद्वीप नामक एक विशाल द्वीप है । यह बत्तीस योजन लम्बा-चौडा, एक सौ एक योजन की परिधि वाला, जल से दो कोस ऊँचा, सर्वरत्नमय एव स्वच्छ हैं । यह एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से सभी ओर से घिरा हुआ है । इनका वर्णक यहाँ कह लेना चाहिए । प्रमाण, शय्या तथा नाम का हेतु भी कह लेना चाहिए ।

---

[1]—ठा. अ. २ उ, ३ सूत्र ८८ पृ० ३८

महाहिमवंत नाम का हेतु

[१०] [१] प्र०—से केणट्ठेण भंते ! एव वुच्चइ-महाहिमवते वासहरपव्वए २ ?

उ०—गोअमा ! महाहिमवते ण वासहरपव्वए चुल्लहिमवंत वासहरपव्वय पणिहाय आयामु-च्चत्त्-व्वेह-विक्खभ-परिक्खेवेण महंततराए चेव, दीहतराए चेव।

महाहिमवते अ इत्थ देवे महिड्ढीए—जाव—पलिओवमट्ठिइए परिवसइ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ८१ पृ ३०४

[१०][१] प्र०—भगवन् ! महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत महाहिमवन्त क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत की अपेक्षा लबाई, ऊँचाई, गहराई, चौडाई, परिधि आदि मे बडा है।

यहाँ महाहिमवन्त नामक महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला देव निवास करता है।
(इस कारण यह महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत कहलाता है।)

निषध पर्वत

[१] [१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे णिसहे णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! महाविदेहस्स वासस्स दक्खिणेणं,

हरिवासस्स उत्तरेणं,

पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं,

पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं,

एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे णिसहे णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते।

पाईण-पडीणायए उदीण-दाहिणवित्थिण्णे,

दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे,

पुरत्थिमिल्लाए—जाव—पुट्ठे, पच्चत्थिमिल्लाए—जाव—पुट्ठे।

चत्तारि जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं,

चत्तारि गाउअसयाइं उव्वेहेणं,[1]

सोलस जोअणसहस्साइं अट्ठ य बायाले जोअणसए

दोण्णि य एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं।

तस्स बाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण वीसं जोअणसहस्साइं एगं च पणट्ठं जोअणसयं दुण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्धभागं च आयामेणं।

तस्स जीवा उत्तरेणं-जाव-चउणवइं जोअणसहस्साइं एग च छप्पण्णं जोअणसयं दुण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणंति।[2]

तस्स धणुं दाहिणेण एगं जोअणसयसहस्सं चउवीसं च जोअणसहस्साइं तिण्णि अ छायाले जोअणसए णव य एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेणंति।

१—(क)-सम. १०६ सूत्र. २
(ख)-ठा. ४ उ. २ सूत्र ३०२ पृ. २१२

२—सम. ९४ सूत्र १

रुअगसंठाणसठिए सव्वतवणिज्जमए अच्छे
उभओ पासि दोहि पउमवरवेइआहि दोहि अ वणसडेहि—जाव—सपरिक्खित्ते ।
णिसहस्स ण पव्वयस्स उप्पि बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते—जाव—आसयति सयंति ।

[१] [२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे निषध नामक वर्षधर पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! महाविदेह क्षेत्र के दक्षिण मे, हरिवर्ष क्षेत्र के उत्तर मे, पूर्वी लवण समुद्र के पश्चिम मे और पश्चिमी लवण समुद्र के पूर्व मे जम्बूद्वीपस्थित निषध नामक वर्षधर पर्वत है। यह पूर्व-पश्चिम मे लबा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा एव दो ओर से लवण समुद्र से स्पृष्ट है। पूर्व की ओर पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है और पश्चिम की ओर पश्चिमी लवण समुद्र से स्पृष्ट है।

यह चार सौ योजन ऊ चा, चार सौ कोस (एक सौ योजन) गहरा एव १६८४२$\frac{२}{१६}$ योजन चौडा है। इसकी बाहु पूर्व-पश्चिम की ओर २०१६५$\frac{२}{१६}$+$\frac{१}{२}$ योजन लम्बी है।

इसकी जीवा उत्तर मे—यावत्—९४१५६$\frac{२}{१६}$ योजन लबी है।

इसकी धनु पीठिका दक्षिण मे १२४३४६$\frac{६}{१६}$ योजन की परिधि मे है।

यह रुचकाकार, सर्वसुवर्णमय एव स्वच्छ है। इसके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाए और वनखण्ड हैं।

निषध पर्वत पर अति सम एव रमणीय भूमि-भाग है—यावत्—(यहाँ देवराज) बैठते और शयन करते हैं।

तिगिञ्छि द्रह

[२] तस्स ण बहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण मह एगे तिगिंछिद्दहे णाम दहे पण्णत्ते । [1]
पाईण-पडीणायए उदीण-दाहिणवित्थिण्णे,
चत्तारि जोअणसहस्साइ आयामेण [2]
दो जोअणसहस्साइ विक्खमेण,
दस जोयणाइं उव्वेहेण,
अच्छे सण्हे रययामयकूले ।
तस्स ण तिगिंछिद्दहस्स चउद्दिसि चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता ।
एव—जाव—आयाम-विक्खभविहूणा जा चेव महापउमद्दहस्स वत्तव्वया सा चेव तिगिंछिद्दहस्स वि वत्तव्वया ।
त चेव पउमद्दहप्पमाण ।
अट्ठो—जाव—तिगिंछिवण्णाइ ।
धिई अ इत्थ देवी पलिओवमट्ठिइआ परिवसइ ।
से तेणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ तिगिंछिद्दहे तिगिंछिद्दहे ।

—जम्बू. वक्ष. ४ सूत्र ८३ ३०६

[२] इस अति सम एव रमणीय भूमिभाग के मध्य मे तिगिंछि नामक एक विशाल द्रह है। यह पूर्व और पश्चिम मे लम्बा, उत्तर और दक्षिण मे चौडा, चार हजार योजन लम्बा, दो हजार योजन चौडा, दस योजन गहरा, स्वच्छ, चिकना एव रत्नमय किनारो वाला है।

१—ठा उ. ३ सूत्र. ८८ पृ. ६८
२—सम० ४००० सूत्र. ११७

इस तिगिछि द्रह की चारो दिशाओ मे चार प्रतिरूप त्रिसोपान ( ) हैं। लम्बाई और चौडाई को छोडकर तिगिछि द्रह का समस्त वर्णन महापद्मद्रह के समान समझना चाहिए। (धृति देवी के) पद्मो-कमलो का प्रमाण भी वही (एक करोड बीस लाख पचास हजार एक सौ बीस) समझना चाहिए।

तिगिछिद्रह का अर्थ कह लेना चाहिए—यावत्—तिगिछिद्रह के वर्ण जैसे (उत्पलादि है।) यहा धृति नामक पल्योपम की स्थिति वाली देवी निवास करती है। इस कारण गौतम! तिगिछिद्रह, तिगिछिद्रह कहलाता है।

हरिसलिला महानदी

[३] तस्स ण तिगिछिद्दहस्स दक्खिणिल्लेणं तोरणेणं हरि (सलिला) महाणई पवूढा समाणी[1]
सत्त जोअणसहस्साइ चत्तारि अ एकवीसे जोअणसए एग च एगूणवीसइभागं जोअणस्स दाहिणाभिमुही पव्वएणं गता
महया घडमुहपवित्तिएणं—जाव—
साइरेगचउजोअणसइएण पवाएण पवडइ।
एवं जा चेव हरिकताए वत्तव्वया सा चेव हरीए वि णेअव्वा।
जिब्भिआए, कुंडस्स, दीवस्स, भवणस्स तं चेव पमाणं।
अट्ठो वि भाणिअव्वो—जाव—
अहे जगइं दालइत्ता छप्पणाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिमं लवणसमुद्दं समप्पेइ।
तं चेव पवहे अ मुहमूले अ पमाणं।
उव्वेहो अ जो हरिकंताए—जाव—वणसंडपरिक्खित्ता।

[३] इस तिगिछिद्रह के दक्षिण तोरण से हरि या हरिसलिला महानदी निकल कर ७४२१ $\frac{1}{19}$ योजन दक्षिण की ओर पर्वत पर जाकर विशाल घटमुख से निकले (खल्-खल् शब्द करते हुए एव मुक्तावलिहार के सदृश) कुछ अधिक चार सौ योजन के प्रपात से नीचे गिरती है।

इस प्रकार हरिकान्ता का जो वर्णन किया गया है वही हरि महानदी के विषय मे भी समझ लेना चाहिए। प्रणालिका, कुड, द्वीप और भवन का प्रमाण भी उसी प्रकार है। —यावत्—नीचे की भूमि को काट कर छप्पन हजार नदियो के साथ पूर्वी लवणसमुद्र मे मिलती है। इसके (प्रवाह एव गिरते समय के मुख का प्रमाण तथा गहराई भी हरिकान्ता के समान है। —यावत्— यह (दो पद्मवरवेदिकाओ से तथा दो) वनखण्डो से घिरी हुई है।

शीतोदा महानदी-उद्गम

[४] तस्स णं तिगिछिद्दहस्स उत्तरिल्लेणं तोरणेणं
सीओआ महणई पवूढा समाणी
सत्त जोयणसहस्साइं चत्तारि अ एगवीसे जोअणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोअणस्स उत्तराभिमुही पव्वएण गता महया घडमुहपवित्तिएणं—जाव—साइरेगचउजोअणसइएणं पवाएण पवडइ।
सीओआ ण महाणई जओ पवडइ एत्थ ण मह एगा जिब्भिया पण्णत्ता।
चत्तारि जोअणाइं आयामेणं, पण्णासं जोअणाइं विक्खमेणं, जोअणं बाहल्लेण,
मगरमुहविउट्टसंठाणसठिआ सव्ववइरामई अच्छा।
सीओआ णं महाणई जहिं पवडइ

१—ठा० २ उ० ३ सूत्र ८८ पृ० ६८

एत्थ ण मह एगे सीओअप्पवायकु डे णाम कु डे पण्णत्ते,[1]
चत्तारि असीएजोअणसए आयाम-विक्खमेण,
पण्णरस-अट्ठारे जोअणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेण, अच्छे ।
एव कु डवत्तव्वया णेअव्वा—जाव—तोरणा ।

[४] इस तिगिंछि द्रह के उत्तरीय तोरण से शीतोदा (अथवा सीतोदा) महानदी निकल कर ७४२१ $\frac{1}{१९}$ योजन उत्तर की ओर पर्वत पर जाकर विशाल घटमुख से गिरते (मुक्तावलिहार के समान)—यावत्—चार सौ योजन के प्रपात से नीचे गिरती है। जहा सीतोदा महानदी गिरती है वहा एक विशाल जिह्विका है। यह जिह्विका (नाली) चार सौ योजन लम्बी, पचास योजन चौडी, एक योजन मोटी, मगर के मुख के आकार की, सर्ववज्रमयी एव स्वच्छ है।

इस प्रकार कु ड की वक्तव्यता जान लेना चाहिए—यावत्—तोरण हैं।

शीतोदाद्वीप

[५] तस्स णं सीओअप्पवायकु डस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण मह एगे सीओअदीवे णाम दीवे पण्णत्ते ।
चउसट्ठि जोअणाइ आयाम-विक्खंभेणं,
दोण्णि बिउत्तरे जोअणसए परिक्खेवेण,
दो कोसे ऊसिए जलंताओ
सव्ववइरामए अच्छे
सेस तमेव वेइया-वणसड-भूमिभाग-भवण-सयणिज्ज-अट्ठो भाणिअव्वो ।

[५] इस शीतोदाप्रपातकुण्ड के मध्य मे शीतोदा द्वीप नामक एक विशाल द्वीप है। वह चौसठ योजन लम्बा-चौडा, दो सौ दो योजन की परिधिवाला, जल की सतह से दो कोस ऊचा, सर्ववज्रमय और स्वच्छ है। वेदिका, वनखण्ड, भूमि, भवन, शय्या तथा अर्थ का कथन समझ लेना चाहिए।

शीतोदा—संगम

[६] तस्स ण सीओअप्पवायकु डस्स उत्तरिल्लेण तोरणेण सीओआ महाणई पवूढा समाणी देवकुरु एज्जमाणा-एज्जमाणा,
चित्त-विचित्तकूडे पव्वए निसढ-देवकुरु-सूर-सुलस-विज्जुप्पभदहे अ दुहा विभयमाणी-विभयमाणी ।
चउरासीए सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी-आपूरेमाणी भद्दसालवण एज्जमाणी-एज्जमाणी,
मदर पव्वय दोहिं जोअणेहिं असपत्ता पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी
अहे विज्जुप्पभ वक्खारपव्वयं दारइत्ता
मदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमेण अवरविदेह वासं दुहा विभयमाणी-विभयमाणी
एगमेगाओ चक्कवट्टिविजयाओ अट्ठावीसाए-अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी-आपूरेमाणी पचहिं सलिलासयसहस्सेहिं दुत्तीसाए अ सलिलासहस्सेहिं समग्गा,
अहे जयतस्स दारस्स जगइ दालइत्ता
पच्चत्थिमेण लवणसमुद्द समप्पेति ।
सीओआ ण महाणई पवहे पण्णासं जोअणाइ विक्खमेण, जोअण उव्वेहेण,
तयणतर च ण मायाए-मायाए परिवड्ढमाणी-परिवड्ढमाणी,

१—सम० ७४ सूत्र २

मुहमूले पंच जोअणसयाइं विक्खंभेणं,
दस जोअणाइं उव्वेहेण,[1]
उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं
दोहिं अ वणसडेहिं संपरिक्खित्ता ।

[६] शीतोदाप्रपात कुण्ड के उत्तरी तोरण से शीतोदा महानदी निकलकर देवकुरु क्षेत्र मे आती हुई चित्र-विचित्र कूट पर्वतो एव निषध, देवकुरु, सूर्य, सुलस तथा विद्युत्प्रभ द्रहो को दो भागो मे विभक्त करती हुई, चौरासी हजार नदियो को अपने मे मिलाती हुई, भद्रशाल वन मे आती हुई, मेरु पर्वत से दो योजन की दूरी पर पश्चिम की ओर मुडती हुई, विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत को नीचे से भेद कर मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर अपरविदेह क्षेत्र को दो भागो मे विभक्त करती हुई, प्रत्येक चक्रवर्तीविजय की अट्ठाईस-अट्ठाईस हजार नदियो को अपने मे मिलाती हुई (सब मिलाकर) पाच लाख एव बत्तीस हजार नदियों सहित जयन्त द्वार के नीचे की भूमि को फोडकर पश्चिमी लवणसमुद्र मे मिलती है ।
सीतोदा महानदी का पचास योजन चौडा व एक योजन गहरा प्रवाह अनुक्रम से बढता हुआ सगम की जगह पाच सौ योजन चौडा और दस योजन गहरा हो जाता है ।
इसके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाए व दो वनखण्ड हैं ।

निषधपर्वत के कूट

[७] [१] प्र०—णिसढे णं भते ! वासहरपव्वए णं कति कूडा पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! णव[2] कूडा पण्णत्ता, तजहा—
सिद्धाययणकूडे १, णिसढकूडे[3] २, हरिवासकूडे ३, पुव्वविदेहकूडे ४, हरिकडे ५, धिईकूडे ६, सीओआकूडे ७, अवरविदेहकूडे ८, रुअगकूडे ९ ।
जो चेव चुल्लहिमवतकूडाण उच्चत्त-विक्खभपरिक्खेवो पुव्ववण्णिओ रायहाणी अ सच्चेव इहपि णेअव्वो ।

[७] [२] प्र०—भगवन् ! निषध वर्षधर पर्वत पर कितने कूट है ?
उ०—गौतम ! नव कूट है, यथा—
(१) सिद्धायतनकूट (२) निषधकूट (३) हरिवर्षकूट (४) पूर्वविदेहकूट (५) हरिकूट (६) धृतिकूट (७) सीतोदाकूट (८) अपरविदेहकूट (९) रुचककूट ।
चुल्लहिमवन्त पर्वत के कूटो की ऊ चाई, चौडाई, परिधि, राजधानी आदि का जो कथन पहले किया जा चुका है वही यहा भी समझ लेना चाहिए ।

'निषध' संज्ञा का हेतु

[८] [१] प्र०—से केणट्ठेणं भते ! एवं वुच्चइ-णिसहे वासहरपव्वए २ ?
उ०—गोअमा ! णिसहे णं वासहरपव्वए बहवे कूडा णिसहसंठाणसंठिआ, उसभसंठाणसठिआ, णिसहे अ इत्थ देवे महिड्ढिए-जाव-पलिओवमट्ठिइए परिवसइ ।
से तेणट्ठेणं गोअमा ! एव वुच्चइ णिसहे वासहरपव्वए २ ।

—जम्बू. वक्ष. ४ सूत्र ८४ पृ ३०८

---

१. ठा. १०, सूत्र ७७९ पृ. ४९८
२. (क) ठा. २, उ. ३ सूत्र ८७ पृ. ६५
(ख) ठा. ९, सूत्र ६८९ पृ ४३०-३१
३. निसढस्स णं वासहरपव्वयस्स उवरिल्लाओ सिहरतलाओ इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए पढमस्स कडस्स बहुमज्झ-देसभाए एस णं नव जोयणसयाइ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

—सम. ११२ सूत्र ६

[८]]२] प्र०—भगवन् ! निषध पर्वत, निषधपर्वत क्यों कहलाता है ?

उ०—गौतम ! निषधपर्वत पर बहुत-से कूट निषध अर्थात् बैल के आकार के या वृषभ (बैल) के आकार के हैं। इसके अतिरिक्त यहां निषध नामक देव निवास करता है जो महर्द्धिक-यावत्-पल्योपम की स्थिति वाला है।

इस कारण गौतम ! निषध वर्षधर पर्वत निषध वर्षधर पर्वत कहलाता है।

नीलवन्त पर्वत

[२] [२] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे णीलवते णाम वासहरपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! महाविदेहस्स वासस्स उत्तरेण,
रम्मगवासस्स दक्खिणेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे णीलवते णाम वासहरपव्वए पण्णत्ते।
पाईण-पडीणायए, उदीण–दाहिणवित्थिण्णे,
णिसहवत्तव्वया णीलवतस्स भाणिअव्वा।
णवर जीवा दाहिणेण, धणु उत्तरेण।
एत्थ ण केसरिद्दहो।
दाहिणेण सीआ[1] महाणई पवूढा समाणी उत्तरकुरु एज्जमाणी-एज्जमाणी
जमगपव्वए णीलवत-उत्तरकुरु-चदेरावत-मालवतद्दहे अ दुहा विभयमाणी-विभयमाणी
चउरासीए सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी-आपूरेमाणी
भद्दसालवण एज्जमाणी-एज्जमाणी
मदर पव्वय दोहिं जोअणेहिं असपत्ता
पुरत्थाभिमुही आवत्ता समाणी
अहे मालवतवक्खारपव्वयं दालयित्ता
मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेण
पुव्वविदेहवास दुहा विभयमाणी-विभयमाणी
एगमेगाओ चक्कवट्टिविजयाओ अट्ठावीसाए-अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं आपूरेमाणी-आपूरेमाणी
पचहिं सलिलासयसहस्सेहिं वत्तीसाए य सलिलासहस्सेहिं समग्गा
अहे विजयस्स दारस्स जगइ दालइत्ता
पुरत्थिमेण लवणसमुद्द समप्पेइ।
अवसिट्ठ त चेवत्ति।
एव णारिकतावि उत्तराभिमुही णेअव्वा।
णवरमिम णाणत्त गधावइवट्टवेअड्ढपव्वय जोअणेण असपत्ता पच्चत्थाभिमुही आवत्ता समाणी अवसिट्ठ त चेव पवहे अ मुहे अ जहा हरिकता सलिला इति।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे नीलवन्त नामक वर्षधर पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! महाविदेह क्षेत्र से उत्तर मे, रम्यकवर्ष से दक्षिण मे, पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे और पश्चिमी लवणसमुद्र से पूर्व मे जम्बूद्वीपस्थित नीलवन्त नामक वर्षधर पर्वत है। यह पूर्वपश्चिम मे

१—(क) ठा० २ उ. ३ सूत्र ८८ पृ० ६८
(ख) सम ७४ सूत्र ३

लम्बा और उत्तर-दक्षिण मे चौडा है। नीलवन्त पर्वत का वर्णन निषधपर्वत के समान कर लेना चाहिए। विशेषता यह है कि इसकी जीवा दक्षिण मे एव धनु पृष्ठ उत्तर मे है।

यहाँ केसरी नामक द्रह है। इसके दक्षिण से सीता महानदी निकल कर उत्तरकुरु मे होती हुई यमक पर्वतो को तथा नीलवन्त, उत्तरकुरु, चन्द्र, ऐरावत व माल्यवन्त द्रहो को दो भागो मे विभक्त करती हुई ८४००० सलिलाओ से आपूरित होती हुई, भद्रशाल वन मे आती हुई, मेरु पर्वत से दो योजन की दूरी पर पूर्वाभिमुख मुडती हुई, माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत को नीचे से भेद कर मेरु पर्वत से पूर्व पूर्वमहाविदेह क्षेत्र को दो भागो मे विभक्त करती हुई, प्रत्येक चक्रवर्तीविजय की अट्ठाईस-अट्ठाईस हजार नदियो को अपने मे मिलाती हुई, कुल ५३२००० नदियो सहित विजयद्वार के नीचे की भूमि को भेद कर पूर्वी लवणसमुद्र मे मिल जाती है। शेष वर्णन पूर्ववत् है।

इसी प्रकार उत्तराभिमुखी नारीकान्ता का भी वर्णन कर लेना चाहिए।

विशेषता यह है कि नारीकान्ता गन्धापातीवृत्तवैताढय पर्वत से एक योजन की दूरी पर पश्चिम मे मुडती हुई (पश्चिमी लवणसमुद्र मे मिलती है।) शेष वर्णन उसी प्रकार है। प्रवाह (उद्गम) और मुख (सगम की जगह के प्रवाह) का प्रमाण हरिकान्ता नदी के समान है।

नीलवन्त पर्वत के कूट

[२] [१] प्र०—णीलवते ण भते! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता?

उ०—गोअमा! णव[1] कूडा पण्णत्ता, तजहा—सिद्धाययणकूडे—

सिद्धे १ णीले[2]-२ पुव्वविदेहे ३ सीआ य ४ कित्ति ५ णारी अ ६।
अवरविदेहे ७ रम्मग कूडे ८ उवदसणे ९ चेव।। १।।
सव्वे एए कूडा पचसइआ, रायहाणीउ उत्तरेण।

[२] [१] प्र०—भगवन्! नीलवन्त वर्षधर पर्वत पर कितने कूट हैं?

उ०—गौतम! नौ कूट है, यथा—सिद्धायतन कूट आदि। गाथार्थ—

(१) सिद्धायतन कूट (२) नीलवन्त कूट (३) पूर्वविदेह कूट (४) सीता कूट (५) कीर्त्ति कूट
(६) नारीकान्ता कूट (७) अपरविदेह कूट (८) रम्यक कूट और (९) उपदर्शन कूट।
ये सब कूट पाच सौ योजन ऊचे हैं। (इनके अधिष्ठायक देवो की) राजधानियां उत्तर मे हैं।

नीलवन्त नाम का हेतु

[३] [१] प्र०—से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-णीलवंते वासहरपव्वए २?

उ०—गोअमा! णीले णीलोभासे णीलवंते अ इत्थ देवे महिड्ढीए-जाव-परिवसइ।
सव्ववेरुलिआमए णीलवते-जाव-णिच्चेति।

—जम्बू, वक्ष, ४ सूत्र ११० पृ० ३७६

[३] [१] प्र०—भगवन्! इसे नीलवन्त वर्षधर पर्वत क्यो कहते हैं?

उ०—गौतम! (यह पर्वत) नील एव नीलावभास है। यहा नीलवत नामक देव निवास करता है।
यह पूरी तरह वैडूर्यमय है—यावत्—(इसका नीलवन्त नाम) नित्य है।

---

१ (क) ठा० ९ सूत्र ६८९ पृ० ४३१
(ख) ,, २ उ० ३ सूत्र ८७ पृ० ६५
२—सम ११२ सूत्र ७

रुक्मीपर्वत

[१] [१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे रुप्पी णाम वासहरपव्वए पण्णत्ते ?
गोअमा ! रम्मगवासस्स उत्तरेण,
हेरण्णवयवासस्स दक्खिणेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे रुप्पी णाम वासहरपव्वए पण्णत्ते ।
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणवित्थिण्णे,
एव जा चेव महाहिमवतवत्तव्वया सा चेव रुप्पिस्स वि ।
णवर दाहिणेण जीवा, उत्तरेण धणु । अवसेस त चेव ।
महापुण्डरीए दहे
णरकता[1] णदी दक्खिणेण णेअव्वा जहा रोहिआ पुरत्थिमेण गच्छइ ।
रुप्पकूला[2] उत्तरेण णेअव्वा जहा हरिकता पच्चत्थिमेण गच्छइ ।
अवसेस त चेवत्ति ।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे रुक्मी नामक वर्षधर पर्वत कहा है ?
गौतम ! रम्यक क्षेत्र से उत्तर मे, हैरण्यवत क्षेत्र से दक्षिण मे, पूर्वी लवण समुद्र से पश्चिम मे और पश्चिमी लवण समुद्र से पूर्व मे जम्बूद्वीप स्थित रुक्मी नामक वर्षधर पर्वत है ।

यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा और उत्तर-दक्षिण मे चौडा है । इस प्रकार महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत की जो वक्तव्यता है वही रुक्मी की भी है । विशेष बात यह है कि इसकी जीवा दक्षिण मे और धनुपृष्ठ उत्तर मे है । शेष सब वही है ।

यहा महापुण्डरीक नामक द्रह है । इसके दक्षिण से नरकान्ता नदी निकलती है जो रोहिता की तरह पूर्वदिशा मे जाती है । इसके उत्तर से रूप्यकूला निकलती है जो हरिकान्ता की तरह पश्चिम मे जाती है । शेष वर्णन उसी प्रकार है ।

रुक्मी पर्वत के कूट

[२] [१] प्र०—रुप्पिम्मि ण भते ! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता ?
उ०—गोअमा ! अट्ठ[3] कूडा पण्णत्ता, तजहा—
गाहा—
सिद्धे १ रुप्पी[4] २ रम्मग ३ णरकता ४ बुद्धि ५ रुप्पकूला ६ य ।
हेरण्णवय ७ मणिकचण ८ अट्ठ य रुप्पिमि कूडाइ ।।१।।
सव्वेवि एए पचसइआ ।
रायहाणीओ उत्तरेण ।

१—२—ठा २ उ० ३ सूत्र ८८ पृ० ६८
३. (क) ठा ८ उ ३ सूत्र ६४३ पृ ४१३
(ख) " २ उ ३ सूत्र ८७ पृ ६५
४ (क) सम ८७ सूत्र ७
(ख) सम ११० सूत्र ६

[२] [१] प्र०—भगवन् ! रुक्मी वर्षधर पर्वत पर कितने कूट हैं ?
उ०—गौतम ! आठ कूट हैं, यथा—
गाथार्थ—
(१) सिद्धायतन (२) रुक्मी (३) रम्यक (४) नरकान्ता (५) बुद्धि (६) रूप्यकूला (७) हैरण्यवत और (८) मणिकाचनकूट। रुक्मी पर्वत पर ये आठ कूट हैं।

'रुक्मी' संज्ञा का हेतु

[३] [१] प्र०—से केट्ठेण भंते ! एव वुच्चइ-रुप्पी वासहरपव्वए २ ?
उ०—गोअमा ! रुप्पीणामवासहरपव्वए रुप्पी रुप्पपट्टे रुप्पोभासे सव्वरुप्पामए,
रुप्पी अ इत्थ देवे पलिओवमट्ठिइए परिवसइ।
से एएणट्ठेण गोअमा ! एवं वुच्चइत्ति।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १११ पृ. ३७८

[३] [१] प्र०—भगवन् ! इसे रुक्मी वर्षधर पर्वत क्यो कहते हैं ?
उ०—गौतम ! रुक्मी वर्षधर पर्वत रुक्म (रूप्य-चादी) का है, रुक्म के समान चमकीला है, रुक्ममय है। और यहाँ रुक्मी नामक पल्योपम की स्थिति वाला देव निवास करता है। इस कारण गौतम ! इसे (रुक्मी वर्षधर पर्वत) कहते हैं।

शिखरी पर्वत

[१] [१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे सिहरी णामं वासहरपव्वए पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! हेरण्णवयस्स उत्तरेण,
एरावयस्स दाहिणेणं,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं,
एवं जह चेव चुल्लहिमवंतो तह चेव सिहरी वि।
णवरं जीवा दाहिणेणं, धणुं उत्तरेण।
अवसिट्ठं तं चेव।
पुंडरीए दहे[1], सुवण्णकूला[2] महाणई दाहिणेण णेअव्वा।
जहा रोहिअंसा पुरत्थिमेणं गच्छइ।
एवं जह चेव गंगा-सिंधूओ तह चेव रत्ता[3]—
रत्तवईओ[4] णेअव्वाओ।
पुरत्थिमेण रत्ता, पच्चत्थिमेण रत्तवई।[5]
अवसिट्ठं तं चेव अवसेसं भाणिअव्वंति।

१—ठा. ६ सूत्र ५२२ पृ. ३५०
२–३–४–(क) ठा. ३ उ. ३ सूत्र १९७ पृ. १५०
(ख) सम. २५ सूत्र ८
५—जंबूमंदरस्स उत्तरेणं रत्ता महाणई पंच महाणईओ समप्पेंति, तंजहा-(१) किण्हा, (२) महाकिण्हा, (३) नीला, (४) महानीला, (५) महातीरा।
जंबूमंदरस्स उत्तरेणं रत्तवई महाणई पंच महाणईओ समप्पेंति, तंजहा-(१) इंदा, (२) इंदसेणा, (३) सुसेणा, (४) वारिसेणा, (५) महाभोया।
(क) ठा. ५ उ. ३ सूत्र ४७० पृ. ३३३
(ख) „ १० सूत्र ७१७ पृ. ४५३

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे शिखरी नामक पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! हैरण्यवत क्षेत्र मे उत्तर मे, ऐरावत क्षेत्र से दक्षिण मे, पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे और पश्चिमी लवणसमुद्र से पूर्व मे (शिखरी नामक वर्षधर पर्वत है।) जैसा क्षुल्लहिमवन्त वैसा ही शिखरी पर्वत। विशेषता यह है कि इसकी जीवा दक्षिण मे और धनुपृष्ठ उत्तर मे है। शेष वक्तव्यता वही है।

यहां पुण्डरीक नामक द्रह है और दक्षिण की ओर से सुवर्णकूला महानदी निकली है, जैसे रोहितासा महानदी, मगर यह पश्चिम मे जाती है।

जैसी गगा-सिन्धु की वक्तव्यता कही वैसी ही रक्ता और रक्तवती की जानना चाहिए। पूर्व मे रक्ता, पश्चिम मे रक्तवती, शेष समस्त वक्तव्यता वही (गगा-सिन्धु के सदृश है।)

शिखरी पर्वत के कूट

[२] [१] प्र—सिहरिम्मि ण भते ! वासहरपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! इक्कारस कूडा पण्णत्ता, तजहा—

सिद्धाययणकूडे १, सिहरिकूडे[1] २, हेरण्णवयकूडे ३, सुवण्णकूलाकूडे ४, सुरादेवीकूडे ५, रत्ताकूडे ६, लच्छीकूडे ७, रत्तवईकूडे ८, इलादेवीकूडे ९, एरवयकूडे १०, तिगिच्छिकूडे ११।
एव सव्वेवि कूडा पचसइआ,[2] रायहाणीओ उत्तरेण।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! शिखरी वर्षधर पर्वत पर कितने कूट हैं ?

उ०—गौतम ! ग्यारह कूट हैं, यथा—

(१) सिद्धायतनकूट (२) शिखरीकूट (३) हैरण्यवतकूट (४) सुवर्णकूलाकूट (५) सुरादेवीकूट (६) रक्ताकूट (७) लक्ष्मीकूट (८) रक्तवतीकूट (९) इलादेवीकूट (१०) ऐरवतकूट और (११) तिगिछिकूट।
ये सभी कूट पाच सौ योजन ऊँचे हैं। (इनके अधिष्ठाता देवो की) राजधानियाँ उत्तर दिशा मे हैं।

'शिखरी' संज्ञा का हेतु

[३] [१] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ-सिहरिवासहरपव्वए २ ?

उ०—गोअमा ! सिहरिम्मि वासहरपव्वए वहवे कूडा सिहरिसठाणसठिआ, सव्वरयणामया, सिहरी अ इत्थ देवे—जाव—परिवसइ।
से तेणट्ठेण ०

—जम्बू. वक्ष सूत्र १११ पृ ३७९

[३] [१] प्र०—शिखरी पर्वत किस कारण से शिखरी वर्षधर-पर्वत कहलाता है ?

उ०—गौतम ! शिखरी वर्षधर पर्वत के ऊपर (पूर्वोक्त ग्यारह कूटो के अतिरिक्त) बहुत से कूट हैं जो शिखरी अर्थात् वृक्ष के आकार के हैं और वे सर्वरत्नमय हैं।

इनके अतिरिक्त यहां शिखरी नामक देव—यावत्—निवास करता है। इस कारण (गौतम ! यह पर्वत शिखरी कहलाता है।)

१—(क) ठा २ उ ३ सूत्र ८७ पृ ६५
   (ख) " ६ सूत्र ५२२ पृ ३५०
२—सम १०८ सूत्र २

द्वार : दक्षिण
अढाई द्वीप का नकशा

जम्बूद्वीप में वर्ष

[१] [१] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे कति वासा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! सत्तवासा,[1] तंजहा-भरहे, एरवए, हेमवए हिरण्णवए, हरिवासे, रम्मगवासे, महाविदेहे ।

—जम्बू वक्ष ६ सूत्र १२५ पृ ४२६
—ठा ७ सूत्र ५५५ पृ ३७७
—सम ७ सूत्र ५

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे कितने वर्ष (क्षेत्र) है ?

उ०—गौतम ! सात वर्ष है, यथा-भरत, ऐरावत, हैमवत, हैरण्यवत, हरिवर्ष, रम्मकवर्ष और महाविदेह ।

कर्मभूमियाँ

[२] जंबुद्दीवे दीवे तओ कम्मभूमीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-भरहे, एरवते, महाविदेहे ।
एवं धायइसंडे दीवे पुरच्छिमद्धे-जाव-पुक्खरवरदीवड्ढपच्चत्थिमद्धे ।

—ठा ३ उ. ३ सूत्र १८३ पृ १४०

[३] जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे तीन कर्मभूमिया कही हैं, यथा-भरत, ऐरवत और महाविदेह ।
इसी प्रकार धातकीखण्ड द्वीप के पूर्वार्ध मे, पश्चिमार्ध मे और पुष्करवरद्वीप के पश्चिमार्ध मे (तीन-तीन कर्मभूमिया हैं) ।

अकर्मभूमियाँ

[३] जंबुद्दीवे दीवे छ अकम्मभूमीओ पण्णत्ताओ,[2] तंजहा-हेमवते, हेरण्णवते, हरिवस्से, रम्मगवासे, देवकुरा, उत्तरकुरा ।

—ठा ६ उ ३ सूत्र ५२२ पृ ३५०

[३] जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे छह अकर्मभूमिया कही हैं, यथा-हैमवत, हैरण्यवत, हरिवर्ष, रम्यकवर्ष, देवकुरु, उत्तरकुरु ।

उत्तर-दक्षिण के क्षेत्रों की समानता

[४] जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तर-दाहिणेणं दो वासा बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता अन्नमन्नं णातिवट्टंति आयाम-विक्खंभ-संठाण-परिणाहेणं, तंजहा—

---

१. (क) ठा. ६ सूत्र ५२२ पृ. ३५०
(ख) जम्बुद्दीवे दीवे दस खेत्ता प० तं०-भरहे, एरवते, हेमवते, हेरन्नवते, हरिवस्से, रम्मगवस्से, पुव्वविदेहे, अवरविदेहे, देवकुरा, उत्तरकुरा ।

—ठा १०, सूत्र ७२३ पृ. ४५३

(ग) जंबूमंदरस्स दाहिणेणं ततो वासा प० तं० भरहे, हेमवए, हरिवासे ।
जंबूमंदरस्स उत्तरेणं ततो वासा प० तं०-रम्मगवासे, हेरन्नवते, एरवए ।

—ठा ३ सूत्र १९७ पृ १५०

२. (क) ठा. ३ उ. ४ सूत्र १९७ पृ. १५०
(ख) ठा. ४ उ. २ सूत्र ३०२ पृ. २१२

भरहे चेव एरवए चेव,
एवमेएणमहिलावेण हिमवए चेव हेरन्नवते चेव,
हरिवासे चेव रम्मगवासे चेव,
जवुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरच्छिम-पच्चत्थिमेण दो खित्ता बहुसमतुल्ला अविसेस०-जाव-पुव्वविदेहे चेव, अवरविदेहे चेव,
जवुमदरस्स पव्वयस्स उत्तर-दाहिणेण दो कुराओ बहुसमतुल्लाओ-जाव-देवकुरा चेव, उत्तरकुरा चेव ।

—ठा २, उ ३ सूत्र ८५ पृ ३३

[४] जम्बूद्वीप के मदर पर्वत से उत्तर और दक्षिण मे दो वर्ष बिल्कुल समान, विशेषतारहित, नानात्वहीन एव ऐसे हैं जो लम्बाई, चौडाई, विस्तार, सस्थान और परिधि मे एक दूसरे भिन्न नही हैं, यथा—भरत और ऐरवत, इसी प्रकार हैमवत और हैरण्यवत, हरिवर्ष और रम्यकवर्ष ।

जम्बूद्वीप के मदर पर्वत से पूर्व और पश्चिम मे दो क्षेत्र बिल्कुल एक जैसे हैं— यावत्-देवकुरु और उत्तरकुरु ।

[५] [१] प्र०—कहि ण भते ! जवुद्दीवे दीवे भरहे णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चुल्लहिमवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,
दाहिणलवणसमुद्दस्स उत्तरेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जवुद्दीवे दीवे भरहे णाम वासे पण्णत्ते,
खाणुबहुले कटकबहुले विसमबहुले दुग्गबहुले पव्वयबहुले पवायबहुले उज्भरबहुले णिज्भरबहुले खड्डाबहुले दरीबहुले णईबहुले दहबहुले रुक्खबहुले गुच्छबहुले गुम्मबहुले लयाबहुले वल्लीबहुले अडवीबहुले सावयबहुले तेणबहुले तक्करबहुले डिम्बबहुले डमरबहुले दुब्भिक्खबहुले दुक्कालबहुले पासडबहुले किवणबहुले वणीमगबहुले ईतिबहुले मारिबहुले कुवुट्ठिबहुले अणावुट्ठिबहुले रायबहुले रोगबहुले सकिलेसबहुले अभिक्खण-अभिक्खण सखोहबहुले,
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविच्छि (त्थि)न्ने,
उत्तरओ पलिअकसठाणसठिए,
दाहिणतो धणुपिट्ठसठिए,
तिधा लवणसमुद्द पुट्ठे,
गगासिधूहि महाणईहि वेयड्ढेण य पव्वएण छब्भागपविभत्ते,
जवुद्दीवदीवणउयसयभागे
पचछव्वीसे जोयणसए छच्च एगूणवीसइभागे जोयणस्स विक्खभेण ।
भरहस्स ण वासस्स बहुमज्भदेसभाए एत्थ ण वेअड्ढे णाम पव्वए पण्णत्ते, जे ण भरह वास दुहा विभयमाणे-विभयमाणे चिट्ठइ, तजहा—
दाहिणड्ढभरह च उत्तरड्ढभरह च ।

—जम्बू वक्ष १ सूत्र १० पृ ६५, ६६

[५] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे भरत नामक वर्ष (क्षेत्र) कहाँ है ?

उ०—गौतम ! चुल्लहिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत के दक्षिण मे, दक्षिणी लवणसमुद्र के उत्तर मे, पूर्वी लवणसमुद्र के पश्चिम मे तथा पश्चिमी लवणसमुद्र के पूर्व मे, जम्बूद्वीप के अन्दर भरत नामक वर्ष (क्षेत्र) है । इस क्षेत्र मे ठूठ, कटक, विषम भूमि, दुर्ग प्रदेश, पर्वत, प्रपात, निर्झर, गडहे, गुफा, नदी, द्रह, वृक्ष- गुच्छ, गुल्म, लता, वल्लरी, अटवी, श्वापद (हिंस्र जन्तु), स्तेन (चोर), तस्कर, डिम्व (स्वराजा का उपद्रव) डमर (परराजा का उपद्रव), दुर्भिक्ष, दुष्काल, पाखड, कृपण

वनीपक (भिखारी), ईति, मारी, कुवृष्टि, अनावृष्टि, राजा, रोग, संक्लेश, सक्षोभ, इत्यादि की वहुलता है ।

यह वर्ष पूर्व-पश्चिम मे लम्बा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा, उत्तर मे पर्यंक के आकार का, दक्षिण मे धनुप की पीठ के आकार का तथा तीन तरफ लवण समुद्र से स्पृष्ट है। गगा और सिन्धु नामक महानदियो तथा वैताढ्य नामक पर्वत से यह छह भागो मे विभक्त है। जम्बूद्वीप नामक द्वीप के १९० भाग करने पर ५२६ $\frac{६}{१९}$ एक भाग होता है। यही भरत क्षेत्र का विस्तार है।

भरत क्षेत्र के मध्य भाग मे वैताढ्य नामक पर्वत है जो भरत क्षेत्र को दो भागो मे विभक्त करता है—दक्षिणार्ध भरत और उत्तरार्ध भरत।

'भरत' संज्ञा का हेतु

[६] [१] प्र०—से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ–भरहे वासे २ ?

उ०—गोयमा ! भरहे ण वासे वेअद्धस्स पव्वयस्स दाहिणेण,
चोद्दसुत्तर जोअणसयं एगस्स य एगूणवीसइ भाए जोयणस्स अबाहाए,
लवणसमुद्दस्स उत्तरेणं चोद्दसुत्तर जोअणसय एक्कारस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स अबाहाए,
गंगाए महाणईए पच्चत्थिमेण,
सिंधूए महाणईए पुरत्थिमेणं,
दाहिणद्धभरहमज्झिल्लतिभागस्स बहुमज्झदेसभाए,
एत्थ णं विणीआ णामं रायहाणी पण्णत्ता[1],
पाईण-पडीणायया उदीण-दाहिणविच्छिन्ना दुवालसजोयणायामा णवजोयणविच्छिन्ना,
धणवइमतिणिम्माया चामीयरपायारा णाणामणिपंचवण्णकविसीसगपरिमंडिआभिरामा अलकापुरी-सकासा पमुइयपक्कीलिआ पच्चक्ख देवलोगभूआ रिद्धित्थिमिअसमिद्धा पमुइअजण-जाणवया—जाव-पडिरूवा ।
तत्थ णं विणीआए रायहाणीए भरहे णाम राया चाउरंतचक्कवट्टी समुप्पज्जित्था...............

—जम्बू० वक्ष० ३ सूत्र ४१-४२ पृ० १७९-८०

[६] [१] प्र०—भगवन् ! भरतवर्ष भरतवर्ष क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! भरत वर्ष मे, वैताढ्य पर्वत से दक्षिण मे ११४ $\frac{१}{१९}$ योजन पर, लवण समुद्र से उत्तर मे ११४ $\frac{११}{१९}$ योजन पर, गगा महानदी के पश्चिम मे, सिन्धु महानदी से पूर्व मे, दक्षिणार्ध भरत के मध्य के त्रिभाग के ठीक वीचोवीच विनीता नामक राजधानी कही है।

वह पूर्व-पश्चिम मे लवी, उत्तर-दक्षिण मे चौडी, वारह योजन लम्वी, नौ योजन चौडी है। वह कुवेर की वुद्धि से निर्मित, स्वर्णमय प्राकार वाली, नाना मणियो के पचरगे कगूरो से मडित होने से रमणीय, अलकापुरी के सदृश, प्रमुदित एव प्रकीडित जैसी, प्रत्यक्ष देवलोक के समान, ऋद्धि-भवन-जनसमूह से समृद्ध, नगरनिवासी जनो एव आगत जनो को प्रमोद उत्पन्न करने वाली-यावत्-प्रतिरूप है।

उस विनीता राजधानी मे भरत नामक राजा चारो दिशाओ पर विजय प्राप्त करने वाला चक्रवर्ती उत्पन्न हुआ।

१—जवुद्दीवे दीवे भरहवासे दस रायहाणीओ पण्णत्ताओ, तजहा—
(१) चपा (२) महुरा (३) वाणारसी य सावत्थी (४) तह य साएत।
(६) हत्थिणउर (७) कम्पिल्ल, (८) मिहिला (९) कोसंवि (१०) रायगिहं ।।

—ठा० १० सूत्र ७१८ पृ० ४५३

भरहे अ इत्य देवे महिड्ढिए महज्जुईए-जाव-पलिओवमट्ठिइए परिवसइ,
से एएणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ भरहे वासे २ इति ।
अदुत्तर च ण गोयमा ! भरहस्स वासस्स सासए णामधिज्जे पण्णत्ते, ज ण कयाइ ण आसि, ण कयाइ णत्थि, ण कयाइ ण भविस्सइ, भुवि च, भवइ अ, भविस्सइ अ, धुवे णिअए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे भरहे वासे ।

जम्बू० वक्ष० ३ सू० ७१ पृ० २८०

यहाँ भरत नामक देव रहता है जो महर्द्धिक एव महाद्युतियुक्त है—यावत्-पल्योपम की स्थिति वाला है। इस कारण गौतम ! इसका नाम भरतवर्ष है।

भरतवर्ष का यह नाम शाश्वत है, जो न कभी नहीं था, न कभी नहीं है, न कभी नहीं होगा। वह था, है और रहेगा। यह नाम ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है, अक्षय है, अव्यय है, अवस्थित है, नित्य है।

दक्षिणार्ध भरत की अवस्थिति

[७] [१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे भरहे णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! वेयड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेणं,
दाहिणलवणसमुद्दस्स उत्तरेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढभरहे णाम वासे पण्णत्ते,
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविच्छिन्न(त्थि)न्ने,
अद्धचदसठाणसठिए,
तिहा लवणसमुद्द पुट्ठे,
गगा-सिधूहि महाणईहि तिभागपविभत्ते,
दोण्णि अट्ठतीसे जोअणसए तिण्ण अ एगूणवीसइभागे जोयणस्स विक्खभेणं,
तस्स जीवा उत्तरेण पाईण-पडीणायया,
दुहा लवणसमुद्द पुट्ठा,
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठा,
पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठा,
णव जोयणसहस्साइ सत्त य अडयाले जोयणसए दुवालस य एगूणवीसइभागे जोयणस्स आयामेण ।[1]
तीसे धणुपुट्ठे दाहिणेण णव जोयणसहस्साइ,
सत्तछावट्ठे जोयणसए इक्क च एगूणवीसइभागे जोयणस्स किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण पण्णत्ते ।[2]

[७] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे दक्षिणार्ध भरत नामक वर्ष कहा है ?

उ०—गौतम ! वैताढ्य पर्वत के दक्षिण मे, दक्षिणी लवण समुद्र के उत्तर मे, पूर्वी लवण समुद्र के पश्चिम मे तथा पश्चिमी लवण समुद्र के पूर्व मे जम्बूद्वीप नामक द्वीप का दक्षिणार्ध भरत नामक वर्ष है। यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा और उत्तर-दक्षिण मे चौडा है। इसका आकार अर्ध-चन्द्र के समान है। यह तीन ओर से लवण समुद्र से स्पृष्ट है तथा गगा और सिन्धु नामक महानदियो से तीन भागो मे विभक्त है। इसकी चौडाई २३८ $\frac{3}{19}$ योजन है।

१—सम. ६०००, सूत्र १२२,
२—सम ६८, सूत्र ४,

इसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम की ओर लवी तथा दोनो ओर से लवण समुद्र से स्पृष्ट है। पूर्व की ओर पूर्वी लवण समुद्र से स्पृष्ट है और पश्चिम की ओर पश्चिमी लवण समुद्र से स्पृष्ट है। इसकी लम्बाई ९७४८ १२/१९ योजन है। इसकी धनुर्पीठिका दक्षिण मे ९७६६ १/१९ योजन से किंचित् विशेष अधिक परिधि वाली है।

दक्षिणार्ध भरत का आकारभाव

[८] [१] प्र०—दाहिणद्धभरहस्स ण भते ! वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! वहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते।
से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा—जाव—णाणाविहपंचवण्णेहि मणीहिं तणेहिं उवसोभिए।
तंजहा-कित्तिमेहि चेव, अकित्तिमेहि चेव।

[२] प्र०—दाहिणद्धभरहे ण भंते ! वासे मणुयाणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! ते ण मणुआ वहुसंघयणा वहुसंठाणा
वहुउच्चत्तपज्जवा वहुआउपज्जवा, वहूइ वासाइं आउं पालेंति, पालित्ता
अप्पेगइया णिरयगामी,
अप्पेगइया तिरियगामी,
अप्पेगइया मणुयगामी,
अप्पेगइया देवगामी,
अप्पेगइया सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति।

जम्बू. वक्ष. १ सूत्र ११ पृ ६८

[८] [१] प्र०—भगवन् ! दक्षिणार्ध भरत का आकारभाव-स्वरूप कैसा है ?

उ०—गौतम ! इसका भूमिभाग वहुत सम और रमणीय है, जैसे मानो आलिंगपुष्कर हो—यावत्—नाना प्रकार की पचवर्ण मणियो से तथा तृणो से शोभित है। ये मणिया और तृण कृत्रिम और अकृत्रिम (दो तरह के) हैं।

[२] प्र०—भगवन् ! दक्षिणार्ध भरतवर्ष के मनुष्यो का आकारभाव-स्वरूप कैसा है ?

उ०—गौतम ! ये मनुष्य अनेक प्रकार के सहनन, अनेक प्रकार के सस्थान, अनेक प्रकार की ऊँचाई तथा अनेक प्रकार की आयु वाले है। वे वहुत वर्षों की आयु भोगकर कोई-कोई नरक मे जाते हैं, कोई तिर्यंचगति मे जाते हैं, कोई मनुष्य गति मे जाते हैं, कोई-कोई देवगति मे जाते हैं। कोई-कोई सिद्ध, वुद्ध, मुक्त एव परिनिर्वृत्त होकर सव दु खो का अन्त करते हैं।

उत्तरार्ध भरतवर्ष

[९] [१] प्र०—कहि ण भंते ! जंवुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे णामं वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चुल्लहिमवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेणं,
वेअड्ढस्स पव्वयस्स उत्तरेणं,
पुरच्छिमलवणसमुद्दस्स पच्चच्छिमेणं,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरच्छिमेण,
एत्थ णं जंवुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे णाम वासे पण्णत्ते,
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविच्छिन्ने, पलिअंकसंठिए,
दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठे,

पुरच्छिमिल्लाए कोडीए पुरच्छिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठे,
पच्चत्थिमिल्लाए—जाव—पुट्ठे,
गगा-सिन्धूहि महाणईहि तिभागपविभत्ते,
दोण्णि अट्ठतीसे जोअणसए तिण्णि अ एगूणवीसइभागे जोअणस्स विक्खमेण,
तस्स बाहा पुरच्छिम-पच्चच्छिमेण अट्ठारस बाणउए जोअणसए सत्त य एगूण वीसइभागे जोअणस्स अद्धभाग च आयामेण ।
तस्स जीवा उत्तरेण पाईण-पडीणायया,
दुहा लवणसमुद्द पुट्ठा,
तहेव—जाव—[1]चोद्दस जोअणसहस्साइ चत्तारि अ एक्कहत्तरे जोअणसए छच्च एगूणवीसइभाए जोअणस्स किंचि विसेसूणे आयामेण पण्णत्ते ।
तीसे णं धणुपट्ठे दाहिणेण चोद्दस जोअणसहस्साइ पच अट्ठावीसे जोअणसए एक्कारस य एगूण-वीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेण ।

[९] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे उत्तरार्ध भरत नामक वर्ष (क्षेत्र) कहाँ है ?

उ०—गौतम ! चुल्लहिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत के दक्षिण मे, वैताढय पर्वत के उत्तर मे, पूर्वी लवण-समुद्र के पश्चिम मे, पश्चिमी लवणसमुद्र के पूर्व मे जम्बूद्वीप का उत्तरार्ध भरत नामक वर्ष है । यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण मे चौडा है । इसका आकार पर्यक (पलग) के समान है । यह दो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । पूर्व की ओर पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है और पश्चिम की ओर पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । गगा और सिन्धु नामक महानदियाँ इसे तीन भागो मे विभक्त करती हैं । इसकी चौडाई २३८$\frac{३}{१९}$ योजन है । पूर्व-पश्चिम मे इसकी बाहु १८९२$\frac{७}{१९}+\frac{१}{२}$ योजन लम्बी है ।

इसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी है तथा दोनो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । यह १४४७१$\frac{६}{१९}$ योजन से कुछ कम लबी है ।

इसका धनुषपृष्ठ दक्षिण मे १४५२८$\frac{११}{१९}$ योजन की परिधि वाला है ।

उत्तरार्ध भरत का आकारभाव-स्वरूप

[१०][१] प्र०—उत्तरड्ढभरहस्स ण भते ! वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा—जाव—कित्तिमेहि चेव अकित्तिमेहि चेव ।

[२] प्र०—उत्तरड्ढभरहे ण भते ! वासे मणुआण केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! ते ण मणुआ बहुसघयणा—जाव—अप्पेगइया सिज्झति-जाव-सव्वदुक्खाणमंत करेंति ।

—जम्बू. वक्ष १ सूत्र १६ पृ ८५

[१०][१] प्र०—भगवन् ! उत्तरार्ध भरत का स्वरूप कैसा है ?

उ०—गौतम ! इसका भूमिभाग अति सम एव रमणीय है । यह आलिंगपुष्कर के समान है—यावत्—कृत्रिम तथा अकृत्रिम मणियो और तृणो से सुशोभित है ।

[२] प्र०—भगवन् ! उत्तरार्ध भरत क्षेत्र के मनुष्यो का स्वरूप कैसा है ?

उ०—गौतम ! यहाँ के मनुष्य अनेक प्रकार के सहनन वाले हैं—यावत्—कोई-कोई सिद्ध होकर सब दु खो का अन्त करने वाले हैं ।

१—सम. १४ सूत्र ६

ऋषभकूट पर्वत

[११][१] प्र०—कहि ण भंते ! जबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे वासे उसभकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! गगाकुंडस्स पच्चत्थिमेणं,
सिंधुकुंडस्स पुरच्छिमेणं,
चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणल्ले नितबे,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे उत्तरड्ढभरहे वासे उसहकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते[1] ।
अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेण,
दो जोयणाइ उव्वेहेणं,
मूले अट्ठ जोयणाइं विक्खभेणं,
मज्झे छ जोयणाइ विक्खभेण,
उवरि चत्तारि जोयणाइं विक्खंभेणं,
मूले साइरेगाइं पणवीसं जोअणाइं परिक्खेवेणं,
मज्झे साइरेगाइं अट्ठारस जोअणाइ परिक्खेवेणं
उवरि साइरेगाइं दुवालस जोअणाइ परिक्खेवेण,[2]
मूले विच्छिन्ने, मज्झे सखित्ते, उप्पि तणुए,
गोपुच्छसंठाणसठिए, सव्वजंबूणयामए
अच्छे सण्हे—जाव—पडिरूवे ।
से ण एगाए पउमवरवेइयाए तहेव—जाव—
भवण कोस आयामेण, अद्धकोसं विक्खभेणं,
देसऊणं कोस उड्ढं उच्चत्तेण,
अट्ठो तहेव उप्पलाणि पउमाणि—जाव—
दाहिणेणं रायहाणी तहेव मंदरस्स पव्वयस्स जहा विजयस्स अविसेसियं ।

—जम्बू बक्ष. १ सूत्र १७ पृ. ८६

[११][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के उत्तरार्ध भरत वर्ष मे ऋषभकूट नामक पर्वत कहा है ?

गौतम ! गगाकुड के पश्चिम मे सिन्धुकुड के पूर्व मे चुल्लहिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत के दक्षिण के नितम्ब (निम्न भाग) मे जम्बूद्वीप के उत्तरार्ध भरत वर्ष का ऋषभकूट नामक पर्वत है । यह आठ योजन ऊचा, दो योजन गहरा, मूल मे आठ योजन चौडा, मध्य मे छह योजन चौडा और ऊपर चार योजन चौडा है । इसकी परिधि मूल मे पच्चीस योजन से कुछ अधिक तथा ऊपर वारह योजन से कुछ अधिक है ।

१—ठा. ८ सूत्र ६३९ पृ. ४१३

२—पाठान्तरं—मूले वारस जोअणाइं विक्खभेणं,
मज्झे अट्ठ जोअणाइं विक्खभेणं,
उप्पि चत्तारि जोअणाइ विक्खभेणं,
मूले साइरेगाइं सत्ततीस जोअणाइ परिक्खेवेणं,
मज्झे साइरेगाइं पणवीसं जोअणाइं परिक्खेवेणं,
उप्पि साइरेगाइं वारस जोयणाइं परिक्खेवेण,

पाठान्तर के अनुसार—यह ऋषभकूट पर्वत मूल मे वारह योजन चौडा, मध्य मे आठ योजन चौडा, ऊपर चार योजन चौडा, मूल मे सैंतीस योजन से अधिक की परिधि वाला, मध्य मे पचीस योजन से अधिक की परिधि वाला, ऊपर वारह योजन से कुछ अधिक की परिधि वाला है ।

मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त तथा ऊपर पतला है ।

यह गोपुच्छ के आकार का, सर्वसुवर्णमय, स्वच्छ, चिकना—यावत्—प्रतिरूप है ।

यह एक पद्मवरवेदिका से वेष्टित है—यावत्—भवन पर्यन्त सम्पूर्ण वर्णन से युक्त है । इसकी वेदिका की लम्बाई एक कोस, चौडाई आधा कोस, तथा ऊचाई एक कोस से कुछ कम है । अर्थ उसी प्रकार है । यहा उत्पल एव पद्म हैं,—यावत्—ऋषभ नामक महर्धिक देव रहता है—यावत्—मेरुपर्वत से दक्षिण मे इसकी राजधानी है । शेष वर्णन विजय देव की राजधानी (विजया) के समान समझना चाहिए ।

वैताढ्य पर्वत

[१२][१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे भरहे वासे वेयड्ढे णाम पव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! उत्तरड्ढभरहवासस्स दाहिणेण,
दाहिणभरयवासस्स उत्तरेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे भरहे वासे वेअड्ढे णाम पव्वए पण्णत्ते ।
पाईण-पडीणायए उदीण-दाहिणविच्छिन्ने,
दुहा लवणसमुद्द पुट्ठे,
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठे,
पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठे,
पणवीस जोअणाइ उड्ढ उच्चत्तेण,[1]
छ सकोसाइ जोअणाइ उव्वेहेण,[2]
पण्णास जोअणाइ विक्खमेण,[3]
तस्स वाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण चत्तारि अट्ठासीए जोयणसए सोलस य एगूणवीसइभागे जोअणस्स अद्धभाग च आयामेण पण्णत्ता,
तस्स जीवा उत्तरेण पाईण-पडीणायया,
दुहा लवणसमुद्द पुट्ठा,
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठा,
पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्ल लवणसमुद्द पुट्ठा,
दस जोअणसहस्साइ सत्त य वीसे जोअणसए दुवालस य एगूणवीसइभागे जोअणस्स आयामेणं,
तीसे धणुपिट्ठे दाहिणेण दस जोअणसहस्साइ सत्त य तेआले जोयणसए पण्णरस य एगूणवीसइभागे जोयणस्स परिक्खेवेण ।
रुअगसठाणसठिए सव्वरययामए अच्छे सण्हे लण्हे घट्ठे मट्ठे णीरए णिम्मले णिप्पके णिक्ककडच्छाए सप्पभे सस्सिरीए पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ।
उभओ पासि दोहिं पउमवरवेइयाहिं, दोहि य वणसडेहिं सव्वओ समता सपरिक्खित्ते ।
ताओ ण पउमवरवेइयाओ अद्धजोयण उड्ढ उच्चत्तेण, पचधणुसयाइ विक्खमेण, पव्वयसमियाओ आयामेण—वण्णओ—भाणियव्वो ।

१—सम० १०० सूत्र ६ पृ. १०८
२—सम० २५ सूत्र ३ पृ. ५१
३—सम० ५० सूत्र ४ पृ ८२

ते ण वणसंडा देसूणाइ दो जोअणाइ विक्खभेण,
पउमवरवेइयासमगा आयामेणं,
किण्हा किण्होभासा—जाव—वण्णओ ।

—जबू वक्ष १ सूत्र १२ पृ. ७०

[१२][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के भरत वर्ष मे वैताढ्य नामक पर्वत कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! उत्तरार्ध भरत क्षेत्र के दक्षिण मे, दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र के उत्तर मे, पूर्वी लवणसमुद्र के पश्चिम मे, पश्चिमी लवणसमुद्र के पूर्व मे जम्बूद्वीप के भरत वर्ष का वैताढ्य नामक पर्वत है । यह पर्वत पूर्व-पश्चिम मे लम्बा एव उत्तर-दक्षिण मे चौडा है तथा दो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । पूर्व मे पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है तथा पश्चिम मे पश्चिमी लवणसमुद्र मे स्पृष्ट है । इसकी ऊँचाई पच्चीस योजन, गहराई सवा छह योजन एव चौडाई पचास योजन है ।

इसकी वाहु पूर्व-पश्चिम मे ४८८ $\frac{१६}{१९}$ + $\frac{१}{२}$ योजन लम्बी है ।

इसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम की ओर लबी तथा दोनो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है ।

पूर्व की ओर पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है तथा पश्चिम की ओर पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । इसकी लबाई १०७२० $\frac{१२}{१९}$ योजन है ।

इसका धनु पृष्ठ दक्षिण मे १०७४३ $\frac{१५}{१९}$ योजन की परिधि वाला है ।

वैताढ्य पर्वत रुचक (ग्रीवा के आभूपण) के आकार का है, सर्वात्मना रजतमय है, स्वच्छ, चिकना, लष्ट, मृष्ट, नीरज, निर्मल, निष्पक, निष्ककडच्छाय, सप्रभ, सश्रीक, प्रासादिक, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप है ।

इसके दोनो पार्श्व दो पद्मवरवेदिकाओ से तथा दो वनखण्डो से चारो ओर से घिरे हैं । ये पद्मवर-वेदिकाएँ अर्ध योजन ऊँची, पाच सौ धनुप चौडी एव पर्वत जितनी लम्बी हैं । इनका वर्णन कह लेना चाहिए । वनखण्ड दो योजन से कुछ कम चौडे, पद्मवरवेदिका जितने लबे, कृष्णवर्ण एवं कृष्ण आभास वाले है—यावत्—इनका भी वर्णन समझ लेना चाहिए ।

तमिस्रगुफा और खण्डप्रपातगुफा

[१३] वेयड्ढस्स ण पव्वयस्स पुरच्छिम-पच्चच्छिमेणं दो गुहाओ पण्णत्ताओ,
उत्तर-दाहिणाययाओ पाईण-पडीणवित्थिन्नाओ,
पण्णास[१] जोअणाइ आयामेण,
दुवालस जोयणाइ विक्खभेण,
अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेण[२],
वइरामयकवाडोहाडिआओ, जमल-जुअलकवाड-घणदुप्पवेसाओ, णिच्चधयारतिमिस्साओ, ववगयगह-चंद-सूर-णक्खत्तजोइसपहाओ-जाव-पडिरूवाओ, तंजहा—
तमिसगुहा चेव खडप्पवायगुहा चेव ।
तत्थ णं दो देवा महिड्ढिया महज्जुइया महावला महायसा महासुक्खा महाणुभागा पलिओवमट्ठिईओ परिवसति । तंजहा—
कयमालए चेव णट्टमालए चेव[३] ।

जंबू० वक्ष० १, सूत्र १२, पृ० ७१ ।

---

१ सम० ५०, सूत्र ६ ।
२ ठा० ८ सूत्र ६३६ पृ० ४१२
३ ठा० २ उ० ३ सूत्र ८७ पृ० ६५

[१३] वैताढ्य पर्वत के पूर्व और पश्चिम मे दो गुफाए हैं। ये उत्तर-दक्षिण मे लम्बी और पूर्व-पश्चिम मे चौडी है। इनकी लम्बाई पचास योजन, चौडाई बारह योजन और ऊंचाई आठ योजन है। ये वज्रमय कपाटो से युक्त हैं। इनके जुगल-जोडी वाले कपाट सघन और दुष्प्रवेश्य हैं। ये गुफाए सदैव अंधकार से व्याप्त रहती हैं। इनमे ग्रह, चन्द्र, सूर्य एव नक्षत्र रूप ज्योतिष्को की प्रभा का अभाव है।
—यावत्—ये प्रतिरूप हैं। इनके नाम हैं—
तमिस्रगुफा और खण्डप्रपातगुफा।

इन गुफाओ मे दो देव रहते हैं जो महर्धिक, महद्द्युतिक, महाबली, महायशस्वी, महासुखी, महानुभाग एव पल्योपम की स्थिति वाले हैं। उनके नाम हैं। कृतमाल और नृत्यमाल।

विद्याधरश्रेणियां

[१४] तेसि ण वणसडाण बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ वेयड्ढस्स पव्वयस्स उभओ पासिं दस दस जोयणाइ उड्ढ उप्पइत्ता एत्थ ण दुवे विज्जाहरसेढीओ पण्णत्ताओ,
पाईण-पडीणायायाओ उदीण-दाहिणविच्छिण्णाओ दस दस जोअणाइ विक्खभेण[1],
पव्वयसमियाओ आयामेण,
उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहिं वणसडेहिं सपरिक्खित्ताओ।
ताओ ण पउमवरवेइयाओ अद्धजोयण उड्ढ उच्चत्तेण,
पच धणुसयाइ विक्खभेण,
पव्वयसमियाओ आयामेण,
वण्णओ णेयव्वो।
वणसडावि पउमवरवेइयासमगा आयामेण, वण्णओ।

[१५][१] प्र०—विज्जाहरसेढीण भते! भूमीण केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?
उ०—गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहानामए आलिंगपुक्खरेइ वा-जाव-
णाणाविहपचवण्णेहिं मणीहिं तणेहिं उवसोभिए
तजहा-कित्तिमेहिं चेव अकित्तिमेहिं चेव
तत्थ ण दाहिणिल्लाए विज्जाहरसेढीए गगन-वल्लभपामोक्खा पण्णास विज्जाहरणगरावासा पण्णत्ता।
उत्तरिल्लाए विज्जाहरसेढीए रहनेउरचक्कवालपामोक्खा सट्ठि विज्जाहरणगरावासा पण्णत्ता।
एवामेव सपुव्वावरेण दाहिणिल्लाए उत्तरिल्लाए विज्जाहरसेढीए एग दसुत्तर विज्जाहरणगरावाससय भवतीतिमक्खाय।
ते विज्जाहरणगरा रिद्धत्थिमियसमिद्धा पमुइयजण-जाणवया—जाव—पडिरूवा।
तेसु ण विज्जाहरणगरेसु विज्जाहररायाणो परिवसति
महयाहिमवत-मलय-मदर-महिंदसारा-रायवण्णओ भाणिअव्वो।

[२] प्र०—विज्जाहरसेढीण भते! मणुआण केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?
उ०—गोयमा! ते णं मणुआ बहुसघयणा बहुसठाणा
बहुउच्चत्तपज्जवा—जाव—सव्वदुक्खाणमत करेंति।

जम्बू वक्ष १, सूत्र १२, पृ ७१

[१४] इन वनखडो के अति सम एव रमणीय भूमिभाग से वैताढ्य पर्वत के दोनो ओर दस-दस योजन ऊपर जाने पर दो विद्याधरश्रेणियां आती हैं। ये पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी और उत्तर-दक्षिण

---

१ ठा० १० सूत्र ७७४, पृ० ४६२

की ओर चौड़ी हैं। इनकी चौड़ाई दस-दस योजन व लम्बाई पर्वत के बराबर है। इनके दोनों ओर दो पद्मवरवेदिकाएं तथा दो वनखण्ड हैं। ये पद्मवरवेदिकाएं आधा योजन ऊंची, पांच सौ धनुष चौड़ी तथा पर्वत जितनी लम्बी हैं। इसी प्रकार तत्संबंधी समस्त विचार कर लेना चाहिए। वनखण्ड भी पद्मवरवेदिका के बराबर लम्बे समझने चाहिए।

[१५][१] प्र०—भगवन्! विद्याधरश्रेणियों की भूमियों का स्वरूप कैसा है?

उ०—गौतम! इनका भूमिभाग सम और रमणीय है। वह आलिंगपुष्कर के समान—यावत्—नानाविध पंचवर्ण मणियों और तृणों से शोभित है। (ये मणियां और तृण) कृत्रिम भी हैं और अकृत्रिम भी हैं।

इनमें से दक्षिण की विद्याधरश्रेणी में गगनवल्लभ वगैरह पचास विद्याधरों के नगरावास हैं। उत्तरस्थित विद्याधरश्रेणी में रथनूपुर-चक्रवाल आदि साठ विद्याधरों के नगरावास हैं। इस प्रकार सब मिलाकर दक्षिण और उत्तर की विद्याधरश्रेणियों में एक सौ दस विद्याधरों के नगरावास हैं।

ये विद्याधरनगर ऋद्धि तथा भवनों आदि से समृद्ध हैं, प्रमुदित जनों और जानपदों से युक्त—यावत्—प्रतिरूप हैं। इन विद्याधरनगरों में विद्याधर राजा रहते हैं। ये महाहिमवन्त, मलय, मन्दर, महेन्द्र गिरि के समान महान् हैं। यहां राजा का वर्णन कह लेना चाहिए।

[२] प्र०—भगवन्! विद्याधरश्रेणियों के मनुष्यों का स्वरूप कैसा है?

उ०—गौतम! वहाँ के मनुष्य अनेक प्रकार के संहनन वाले, अनेक प्रकार के संस्थान वाले, अनेक प्रकार की ऊंचाई वाले तथा—यावत्—कोई-कोई सब दुखों का अन्त करने वाले हैं।

आभियोग्यश्रेणियाँ

[१६] तासि णं विज्जाहरसेढीण बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ वेयड्ढस्स पव्वयस्स उभओ पासिं दस दस जोयणाइं उड्ढं उप्पइत्ता एत्थ णं दुवे आभिओगसेढीओ पण्णत्ताओ।

पाईण-पडीणाययाओ उदीण-दाहिणविच्छिन्नाओ दस दस जोयणाइं विक्खंभेणं,[1] पव्वयसमियाओ आयामेणं, उभओ पासिं दोहि पउमवरवेइयाहिं दोहि य वनसंडेहिं संपरिक्खित्ताओ, वण्णओ दोण्ह वि, पव्वयसमियाओ आयामेण।

[१७][१] प्र०—अभिओगसेढीण भंते! केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते?

उ०—गोयमा! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते—जाव—तणेहिं उवसोभिए।

वण्णाइं—जाव—तणाणं सद्दोत्ति।

तासि णं अभिओगसेढीणं तत्थ तत्थ देसे तहिं तहिं—जाव—वाणमंतरा देवा य देवीओ य आसयंति सयंति—जाव—फलवित्तिविसेसं पच्चणुभवमाणा विहरंति।

तासु णं आभिओगसेढीसु सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो,

सोम-जम-वरुण-वेसमणकाइआणं आभिओगाणं देवाणं बहवे भवणा पण्णत्ता।

ते णं भवणा बाहिं वट्टा, अतो चउरसा,

वण्णओ—जाव—अच्छरगणसंघविकिण्णा—जाव—पडिरूवा।

तत्थ णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो

१—ठा. १० सूत्र ७७४ पृ. ४६३

सोम-जम-वरुण-वेसमणकाइआ बहवे आभिओगा देवा,
महिड्ढीया महज्जुईया—जाव—महासुक्खा पलिओवमट्ठिइया परिवसंति ।

—जंबू वक्ष १, सूत्र १२, पृ ७१

[१६] इन विद्याधर श्रेणियो के अति सम रमणीय भूमिभाग से वैताढय पर्वत के दोनो ओर दस-दस योजन ऊपर जाने पर दो आभियोग्यश्रेणिया आती हैं । ये पूर्व-पश्चिम मे लम्बी तथा उत्तर-दक्षिण मे चौडी हैं। इनकी चौडाई दस-दस योजन व लम्बाई पर्वत जितनी है । इनके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाए और दो वनखण्ड हैं । इनका वर्णन समझ लेना चाहिए । इन दोनो की लम्बाई पर्वत जितनी है ।

[१७][१] प्र०—भगवन् ! आभियोग्यश्रेणियो का स्वरूप किस प्रकार का है ?

उ०—गौतम ! ये अति सम एव रमणीय भूमिभाग वाली हैं—यावत्—तृणो से सुशोभित हैं । वर्ण आदि के विषय मे भी उसी प्रकार समझ लेना चाहिए ।

इन आभियोगिकश्रेणियो के देश-देश मे यत्र-तत्र वाणव्यन्तर देव और देविया बैठते है, सोते हैं—यावत्—पुण्य फल आदि का अनुभव करते हुए विचरते हैं ।

इन आभियोग्यश्रेणियो मे देवेन्द्र देवराज शक्र के सोम, यम, वरुण एव वैश्रमण नामक दिक्पालो के परिवार रूप अनेक आभियोगिक देवो के अनेक भवन हैं ।

ये भवन बाहर से गोल, अन्दर से चौकोर–यावत्–अप्सराओ के समूह से व्याप्त हैं–यावत्–प्रतिरूप हैं । इनमे देवेन्द्र देवराज शक्र के सोम, यम, वरुण एव वैश्रमण नामक दिक्पालो के परिवारभूत (आश्रित) अनेक आभियोगिक देव रहते हैं जो महर्धिक, महद्द्युतिक—यावत्—महासुख वाले तथा पल्योपम की स्थिति वाले हैं ।

वैताढय का शिखर

[१८] **तासि ण आभिओगसेढीण बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ वेयड्ढस्स पव्वयस्स उभओ पासिं पच पच जोयणाइ उड्ढ उप्पइत्ता एत्थ ण वेअड्ढस्स पव्वयस्स सिहरतले पण्णत्ते ।**
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविच्छिण्णे
दस जोयणाइ विक्खभेण, पव्वयसमगे आयामेण,
से ण इक्काए पउमवरवेइयाए इक्केण वणसडेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते ।
पमाण वण्णगो दोण्हंपि ।

[१९][१] **प्र०—वेयड्ढस्स ण भते पव्वयस्स सिहरतलस्स केरिसए आगारभावपडोआरे पण्णत्ते ?**
उ०—गोयमा ! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा—जाव—
णाणाविहपंचवण्णेहिं मणीहिं उवसोभिए—जाव—
वावीओ पुक्खरिणीओ—जाव—
वाणमतरा देवा य देवीओ अ आसयति—जाव—भुंजमाणा विहरंति ।

जम्बू वक्ष १, सूत्र १२, पृ ७२

[१८] इन आभियोगिकश्रेणियो के अति सम एव रमणीय भूमिभाग से वैताढय पर्वत के दोनो ओर पाच-पाच योजन ऊपर जाने पर वैताढय पर्वत का शिखरतल आता है ।
यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा और उत्तर-दक्षिण मे चौडा है । इसकी चौडाई दस योजन की और लम्बाई पर्वत जितनी है । इसके चारो ओर पद्मवरवेदिका तथा वनखण्ड है । इन दोनो का प्रमाण और वर्णक समझ लेना चाहिए ।

[१९][१] प्र०—भगवन् ! वैताढ्य पर्वत के शिखर तल का स्वरूप कैसा है ?

उ०—गौतम ! इसका भूमिभाग अति सम एवं रमणीय है। वह आलिंगपुष्कर (मृदंग पर मढे हुए चमडे) के समान समतल—यावत्—नानाविध पंचवर्ण मणियों से सुशोभित है। —यावत्—वापिकाओं तथा पुष्करिणियों से युक्त है—यावत्—वहां वाणव्यन्तर देव एवं देवियाँ बैठते हैं—यावत्—भोग भोगते हुए विचरते हैं।

वैताढ्य के कूट

[२०][१] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे भारहे वासे वेअड्ढपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! णव कूडा पण्णत्ता[1], तंजहा—

सिद्धाययणकूडे १, दाहिणड्ढभरहकूडे २, खंडप्पवायगुहाकूडे ३, माणिभद्दकूडे ४, वेअड्ढकूडे ५, पुण्णभद्दकूडे ६, तिमिसगुहाकूडे ७, उत्तरड्ढभरहकूडे ८, वेसमणकूडे ९।

—जम्बू. वक्ष. १, सूत्र १२, पृ. ७२

[२०][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप में भरत वर्ष के वैताढ्य पर्वत पर कितने कूट हैं ?

उ०—गौतम ! नौ कूट हैं, यथा—१—सिद्धायतनकूट, २—दक्षिणार्ध भरत कूट, ३—खण्डप्रपातगुफा कूट, ४—माणिभद्र कूट, ५—वैताढ्य कूट, ६—पूर्णभद्र कूट, ७—तमिश्रगुफा कूट, ८—उत्तरार्ध भरत कूट, ९—वैश्रमण कूट।

सिद्धायतनकूट

[२१][१] प्र०—कहि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वेअड्ढपव्वए सिद्धायतणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पुरच्छिमलवणसमुद्दस्स पच्चच्छिमेणं,
दाहिणड्ढभरहकूडस्स पुरच्छिमेणं,
एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वेअड्ढे पव्वए सिद्धायतणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते।
छ सक्कोसाइं जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं,
मूले छ सक्कोसाइं जोअणाइं विक्खंभेणं,
मज्झे देसूणाइं पंच जोअणाइं विक्खंभेणं,
उवरिं साइरेगाइं तिण्णि जोअणाइं विक्खंभेणं,
मूले देसूणाइं बावीसं जोअणाइं परिक्खेवेणं,
मज्झे देसूणाइं पण्णरस जोअणाइं परिक्खेवेणं,
उवरिं साइरेगाइं णव जोअणाइं परिक्खेवेणं,
मूले विच्छि(त्थि)ण्णे, मज्झे संखित्ते, उप्पिं तणुए,
गोपुच्छसंठाणसंठिए,
सव्वरयणामए अच्छे सण्हे—जाव—पडिरूवे।
से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेण सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते।
पमाणं वण्णओ दोण्हंपि।
सिद्धायतणकूडस्स णं उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा—जाव—वाणमंतरा देवा य—जाव—विहरंति।
तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते,
कोसं आयामेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, देसूणं कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं।
अणेगखंभसयसन्निविट्ठे, खंभुग्गयसुकयवइरवेइआ-तोरण-वररइअसालभंजिअ-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ—लट्ठ—

1—ठा०, ९, सूत्र ६८९ पृ० ४३०.

सठिअ-पसत्थ-वेरुलिअविमलखंभे, णाणामणिरयणखचिअ उज्जल बहुसम-सुविभत्तभूमिभागे, ईहामिग-उसभ तुरग-णर मगर-विहग--वालग--किन्नर--रुरु सरभ--चमर--कुंजर-वणलय--पउमलयभत्तिचित्ते,
कंचण मणिरयणथूभियाए णाणाविहपंचवण्णघंटापडागपरिमंडिअग्गसिहरे, ...
घंटा-पडागपरिमंडिअग्गसिहरे, धवले, मरीइकवय विणिम्मुअंते लाउल्लोइअमहिए—जाव—झया।
तस्स ण सिद्धायतणस्स तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता,
ते ण दारा पंच धणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेण,
अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं विक्खंभेण,
तावइयं चेव पवेसेण,
सेआवरकणगथूभिआगा,
दारवण्णओ—जाव—वणमाला।
तस्स ण सिद्धायतणस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
से जहाणामए आलिंगपुक्खरेइ वा—जाव—
तस्स ण सिद्धाययणस्स ण बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण महं एगे देवच्छंदए पण्णत्ते,
पंच धणुसयाइं आयाम-विक्खंभेण,
साइरेगाइं पंच धणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेण,
सव्वरयणामए,
एत्थ ण अट्ठसयं जिणपडिमाणं जिणुस्सेहप्पमाणमित्ताणं संनिक्खित्तं चिट्ठइ, एवं—जाव—धूवकडुच्छुगा।

—जम्बू. वक्ष १ सूत्र १३ पृ ७७-७८

[२१][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे भरत क्षेत्र के वैताढ्य पर्वत पर सिद्धायतन कूट कहाँ है ?

उ०—गौतम ! पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे तथा दक्षिणार्ध भरतकूट से पूर्व मे जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का वैताढ्य पर्वतस्थित सिद्धायतन कूट नामक कूट है। यह सवा छह योजन ऊँचा, मूल मे सवा छह योजन चौडा, बीच मे पाच योजन से कुछ कम चौडा, ऊपर तीन योजन से अधिक चौडा, मूल मे बाईस योजन से कुछ कम की परिधि वाला, मध्य मे पन्द्रह योजन से कुछ कम की परिधि वाला, ऊपर नौ योजन से अधिक की परिधि वाला, मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त, ऊपर से पतला, गोपुच्छ के आकार वाला, सर्वरत्नमय, स्वच्छ, चिकना—यावत्—प्रतिरूप है। इसके चारो ओर एक पद्मवरवेदिका तथा एक वनखण्ड है। इन दोनो का प्रमाण और वर्णन समझ लेना चाहिए।

सिद्धायतन कूट के ऊपर अति सम और रमणीय भूमिभाग है। यह आलिंगपुष्कर के समान है—यावत्—वाणव्यन्तर आदि देव वहाँ विहार करते हैं।

इस अत्यन्त सम एव रमणीय भूमिभाग के मध्य मे एक विशाल सिद्धायतन है। यह एक कोस लम्बा, आधा कोस चौडा, तथा एक कोस से कुछ कम ऊँचा है। कई सौ स्तभो द्वारा निर्मित है। स्तभो पर स्थित और सुनिर्मित वज्ररत्न की वेदिका एव तोरण है। श्रेष्ठ और आनन्ददायिनी पुतलियो से युक्त, सम्बद्ध, विशिष्ट एव मनोज्ञ आकार के प्रशस्त वैडूर्यमणि के विमल स्तभ है। इसका भूमिभाग विविध प्रकार के मणि-रत्नो से खचित, उज्ज्वल और अति सुविभक्त है। ईहामृग (भेडिया) वृषभ तुरग, नर, मकर विहग, सर्प, किन्नर, रुरु, शरभ, चमर, कुंजर, वनलता तथा पद्मलता के चित्रो से दीवारें सुशोभित है। इसकी स्तूपिका कचन एव मणिरत्नो की है। नाना प्रकार के पचवर्ण पुष्पो के उपचार से युक्त हैं। अग्र शिखर घटा-पताकाओ से परिमडित है। यह धवल प्रभा से युक्त, किरणो के समूह को विकीर्ण करता हुआ, लिपा-पुता-यावत्-ध्वजा से युक्त है।

इस सिद्धायतन की तीन दिशाओं में तीन द्वार हैं। ये द्वार पांच सौ धनुष ऊँचे, अढाई सौ धनुष चौड़े, इतने ही प्रवेश वाले, श्वेत तथा श्रेष्ठ स्वर्ण की स्तूपिकाओं वाले हैं। यहाँ द्वारों का वर्णन कह लेना चाहिए—यावत्—वनमाला पर्यन्त वर्णन समझ लेना चाहिए। इस सिद्धायतन के अन्दर का प्रदेश अति सम एवं रमणीय भूमिभाग वाला है। आलिंगपुष्कर के समान है—यावत्—इस सिद्धायतन के अति सम रमणीय भूमिभाग के मध्य में एक विशाल देवच्छंद है जो पांच सौ धनुष लम्बा-चौड़ा एवं पांच सौ धनुष से अधिक ऊँचा है। यह सर्वरत्नमय है। यहाँ जिन भगवान् की ऊँचाई के बराबर ऊँची एक सौ आठ जिन प्रतिमाएँ हैं, इसी प्रकार—यावत्—धूपदानियाँ हैं।

दक्षिणार्ध भरतकूट

[२२] [१] प्र०—कहि णं भंते! वेयड्ढे पव्वए दाहिणद्धभरहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते?

उ०—गोयमा! खंडप्पवायकूडस्स पुरत्थिमेण,
सिद्धाययणकूडस्स पच्चत्थिमेण,
एत्थ णं वेयड्ढपव्वए दाहिणद्धभरहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते।
सिद्धाययणकूडप्पमाणसरिसे—जाव—
तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ णं महं एगे पासायवडिंसए पण्णत्ते।
कोसं उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं,
अब्भुग्गयमूसियपहसिए-जाव-पासाईए।
तस्स णं पासायवडिंसगस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगा मणिपेढिया पण्णत्ता।
पंच धणुसयाइं आयाम-विक्खंभेणं,
अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेणं,
सव्वमणिमई,
तीसे णं मणिपेढिआए उप्पिं सीहासणं पण्णत्तं,
सपरिवारं भाणियव्वं।

[२] प्र०—से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-दाहिणड्ढभरहकूडे २?

उ०—गोयमा! दाहिणड्ढभरहकूडे णं दाहिणड्ढभरहे णामं देवे महिड्ढीए-जाव-पलिओवमट्ठिईए परिवसइ,
से णं तत्थ चउण्हं सामाणिअसाहस्सीणं,
चउण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं,
तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं,
सत्तण्हं अणियाहिवईणं, सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं,
दाहिणड्ढभरहकूडस्स दाहिणड्ढाए रायहाणीए अण्णेसिं बहूणं देवाण य देवीण य-जाव-विहरइ।

[३] प्र०—कहि णं भंते! दाहिणड्ढभरहकूडस्स देवस्स दाहिणड्ढा णाम रायहाणी पण्णत्ता?

उ०—गोयमा! मंदरस्स पव्वयस्स दक्खिणेणं तिरियमसंखेज्जदीवसमुद्दे वीईवइत्ता,
अयण्णं (अण्णमि) जंबुद्दीवे दीवे दक्खिणेणं बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता,
एत्थ णं दाहिणड्ढभरहकूडस्स देवस्स दाहिणड्ढभरहा णामं रायहाणी भाणिअव्वा जहा विजयस्स देवस्स।

[२२] [१] प्र०—भगवन्! वैताढ्य पर्वत पर दक्षिणार्धभरतकूट नामक कूट कहाँ है?

उ०—गौतम! खंडप्रपात कूट से पूर्व में व सिद्धायतन कूट से पश्चिम में वैताढ्य पर्वत का दक्षिणार्धभरतकूट नामक कूट है। यह प्रमाण की दृष्टि से सिद्धायतन कूट के समान है-यावत्-इसके अति

सम रमणीय भूमिभाग के मध्य मे एक विशाल प्रासादावतंसक है। वह एक कोस ऊँचा, आधा कोस चौडा, ऊँचा और खिला हुआ है-यावत्-दर्शकों के चित्त को प्रसन्नता प्रदान करने वाला है।

इस प्रासादावतंसक के मध्य भाग मे एक विशाल मणिपीठिका है जो पाच सौ धनुष लम्बी-चौडी एव अढाई सौ धनुष मोटी है। वह सर्वात्मना मणिमयी है। उस मणिपीठिका के ऊपर सिंहासन है जो सपरिवार है।

[२] प्र०—भगवन् ! दक्षिणार्धभरतकूट क्यो दक्षिणार्धभरतकूट कहा जाता है ?

उ०—गौतम ! (क्योकि) दक्षिणार्धभरतकूट पर दक्षिणार्धभरत नामक देव रहता है जो महर्धिक-यावत्-पल्योपम की स्थिति वाला है। वह देव वहाँ चार सहस्र सामानिक देवो का, सपरिवार चार अग्रमहिषियो का, तीन परिषदो का, सात अनीको का, सात अनीकाधिपति देवो का, सोलह सहस्र आत्मरक्षक देवो का, दक्षिणार्धभरतकूट की दक्षिणार्धा राजधानी का तथा अन्य बहुत-से देवो और देवियो का (आधिपत्य करता हुआ यावत्) रहता है।

[३] प्र०—भगवन् ! दक्षिणार्धभरतकूट के देव की दक्षिणार्धा नामक राजधानी कहाँ है ?

उ०—गौतम ! मंदर (मेरु) पर्वत से दक्षिण की ओर तिर्छे असंख्यात द्वीप-समुद्र पार करने पर दूसरे जम्बूद्वीप मे दक्षिण की ओर बारह हजार योजन जाने पर दक्षिणार्धभरतकूट के देव की दक्षिणार्धभरता नामक राजधानी है। इसका वर्णन विजय देव की राजधानी के समान कर लेना चाहिए।

शेष कूट

[२३] एव सव्वकूडा णेयव्वा—जाव—वेसमणकूडे।
परोप्पर पुरच्छिम-पच्चत्थिमेण।
इमेसिं वण्णावासे गाहा—
मज्झे वेअड्ढस्स उ कणयमया तिण्णि होंति कूडाउ।
सेसा पव्वयकूडा सव्वे रयणामया होंति ॥१॥
माणिभद्दकूडे १ वेअड्ढकूडे २ पुण्णभद्दकूडे ३ एए तिण्णिकूडा कणगामया सेसा छप्पि रयणमया।
दोण्ह विसरिसणामया देवा कयमालए चेव णट्टमालए चेव,
सेसाण छण्ह सरिसणामया, गाहा—
जण्णामया य कूडा तन्नामा खलु हवंति ते देवा।
पलिओवमट्ठिईया हवंति पत्तेअपत्तेय ॥१॥
रायहाणीओ जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरिअं असंखेज्जदीवसमुद्दे वीईवइत्ता अण्णंमि जंबुद्दीवे दीवे बारस जोअणसहस्साइं ओगाहित्ता
एत्थ णं रायहाणीओ भाणिअव्वाओ विजयरायहाणीसरिसयाओ।

जम्बू. वक्ष. १, सूत्र १४ पृ ८३

[२३] इसी प्रकार वैश्रमणकूट पर्यन्त सब कूटो को समझ लेना चाहिए। ये सब परस्पर (अनुक्रम से) पूर्वपश्चिम मे है। इनकी वर्णनविषयक गाथा है—'वैताढ्य पर्वत के मध्य मे तीन कूट कनकमय हैं, शेष सब कूट रत्नमय है।'

माणिभद्रकूट, वैताढ्यकूट और पूर्णभद्रकूट, ये तीनो कूट सुवर्णमय हैं, शेष छह रत्नमय हैं। दो कूटो के देवो के नाम विसदृश हैं, यथा—(तमिस्रगुफाकूट के देव का नाम) कृतमाल और (खडप्रपातगुफा कूट के देव का नाम) नृत्यमाल है। शेष छह कूटो के देवो के नाम सदृश हैं, अर्थात् जो नाम कूट का है वही उसके देव का है।

[सिद्धायतन स्वय प्रधान होने से उस कट के देव के नाम का उल्लेख नही किया गया है ।]
प्रत्येक देव की स्थिति एक—एक पल्योपम की है । इनकी राजधानिया जम्बूद्वीप के मेरुपर्वत से दक्षिण मे तिर्छे असख्यात द्वीप–समुद्रो को लाघने पर आने वाले दूसरे जम्बूद्वीप मे बारह सहस्र योजन जाने पर आती है । इनका वर्णन विजया राजधानी के समान समझ लेना चाहिए ।

'वैताढ्य' नाम का हेतु

[२४][१] प्र०—से केणट्ठे ण भते ! एव वुच्चइ—वेयड्ढे पव्वए वेयड्ढे पव्वए ?

उ०—गोयमा ! वेअड्ढे णं पव्वए भरह वास दुहा विभयमाणे २ चिट्ठइ, तजहा—
दाहिणड्ढभरह च उत्तरड्ढभरह च ।
वेयड्ढगिरिकुमारे अ इत्थ देवे महिड्ढीए—जाव—पलिओवमट्ठिइए परिवसइ ।
से तेणट्ठेण गोयमा ! एव वुच्चइ—वेअड्ढे पव्वए २ ।
अदुत्तर च ण गोअमा ! वेयड्ढस्स पव्वयस्स सासए णामधेज्जे पण्णत्ते,
ज ण कयाइ ण आसि, ण कयाइ ण अत्थि, ण कयाइ ण भविस्सइ,
भुविं च, भवइ अ, भविस्सइ अ,
धुवे णिअए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे ।

—जम्बू. वक्ष. १ सूत्र १५ पृ० ८४

[२४][१] प्र०—भगवन् ! वैताढ्य पर्वत, वैताढ्यपर्वत क्यो कहा जाता है ?

उ०—गौतम ! वैताढ्यपर्वत भरतवर्ष को दो भागो मे विभक्त करता है, यथा—दक्षिणार्ध भरत और उत्तरार्ध भरत ।
और यहा वैताढ्यगिरिकुमार नामक देव रहता है जो महर्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला है । इस कारण गौतम ! इसे वैताढ्य पर्वत कहते है ।
इसके अतिरिक्त, गौतम ! वैताढ्य पर्वत का यह नाम शाश्वत है । यह न कभी नही था, न कभी नही है, न कभी नही होगा । यह था, है और रहेगा । यह नाम ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है, अक्षय है, अवस्थित है, नित्य है ।

ऐरावत वर्ष

[१] [१] प्र.—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे एरावए णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! सिहरिस्स उत्तरेणं, उत्तरलवणसमुद्दस्स दक्खिणेणं,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण, पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ णं जबुद्दीवे दीवे एरावए णाम वासे पण्णत्ते ।
खाणुबहुले, कटकबहुले
एव जच्चेव भरहस्स वत्तव्वया सच्चेव सव्वा निरवसेसा णेअव्वा
सओअवणा सणिक्खमणा सपरिनिव्वाणा
णवरं एरावओ चक्कवट्टी, एरावतो देवो, से तेणट्ठेण एरावए वासे २ ।

—जम्बू वक्ष. ४ सूत्र १११

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे ऐरावत नामक वर्ष (क्षेत्र) कहा है ?

उ०—गौतम ! शिखरिपर्वत के उत्तर मे, उत्तर लवणसमुद्र के दक्षिण मे, पूर्व लवणसमुद्र के पश्चिम मे और पश्चिम लवणसमुद्र के पूर्व मे, जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे ऐरावत नामक वर्ष कहा है ।
वह स्थाणु (ठूठ) बहुल और कटकबहुल है । इस प्रकार जो वक्तव्यता भरत वर्ष की कही है वही सब इसकी समझ लेनी चाहिए-षट्खण्ड की साधना सहित, निष्क्रमण सहित और निर्वाण-सहित ।

महाविदेह वर्ष

[१] [१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेण,
णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे णाम वासे पण्णत्ते ।
पाडीण-पडीणायए, उदीण-दाहिणवित्थिन्ने
पलिअकसठाणसठिए
दुहा लवणसमुद्द पुट्ठे,
पुरत्थिम-जाव-पुट्ठे
पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्ल-जाव-पुट्ठे
तित्तीस जोअणसहस्साइ छच्च चुलसीए जोअणसए
चत्तारि अ एगूणवीसइभागे जोअणस्स विक्खमेण ति ।
तस्स वाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण तेत्तीस जोअणसहस्साइ सत्त य सतसट्ठे जोअणसए सत्त य एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेण ति ।
तस्स जीवा बहुमज्झदेसभाए पाईण-पडीणायया दुहा लवणसमुद्द पुट्ठा
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्ल-जाव-पुट्ठा
एव पच्चत्थिमिल्लाए- जाव-पुट्ठा ।
एग जोयणसयसहस्स आयामेण ति ।
तस्स धणु उभओ पासि उत्तर-दाहिणेण
एग जोयणसयसहस्स अट्ठावण्ण जोअणसहस्साइ एग च तेरसुत्तर जोअणसय सोलस य एगूणवीसइभागे जोयणस्स किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणति ।
महाविदेहे ण वासे चउव्विहे[1] चउप्पडोआरे पण्णत्ते, तजहा—
पुव्वविदेहे १, अवरविदेहे २, देवकुरा ३, उत्तरकुरा ४, ।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे महाविदेह नामक वर्ष (क्षेत्र) कहा है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, निषध वर्षधर पर्वत से उत्तर मे, पूर्व लवणसमुद्र से पश्चिम मे तथा पश्चिम लवणसमुद्र से पूर्व मे जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह नामक वर्ष है । यह पूर्व और पश्चिम मे लम्बा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा, पर्यंक (पलग) के आकार का एव दो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । पश्चिम की ओर से पश्चिमी लवणसमुद्र से (एव पूर्व की ओर से पूर्वी लवणसमुद्र से) स्पृष्ट है । यह ३३६८४ $\frac{४}{१९}$ योजन चौडा है । इसकी वाहु पूर्व-पश्चिम की ओर ३३७६७ $\frac{७}{१९}$ योजन लम्बी है ।
इसकी जीवा मध्य मे पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी है एव दोनो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । पूर्व की ओर पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है, आदि । यह एक लाख योजन लम्बी है ।
इसका धनु पृष्ठ दोनो ओर उत्तर-दक्षिण मे १५८११३ $\frac{१६}{१९}$ योजन से कुछ अधिक की परिधि मे है ।

---

१ ठा० ४ उ० २ सूत्र ३०२ पृ० २१२

महाविदेह वर्ष चार भागो मे विभक्त है, यथा—(१) पूर्वमहाविदेह (२) अपर महाविदेह (३) देवकुरु और (४) उत्तरकुरु।

महाविदेह का स्वरूप

[२] [१] प्र०—महाविदेहस्स ण भते ! वासस्स केरिसए आगारभावपडोयारे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते
—जाव—कित्तिमेहिं अकित्तिमेहिं चेव।

[२] प्र०—महाविदेहे णं भंते ! वासे मणुआणं केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! तेसि णं मणुआणं छव्विहे संघयणे, छव्विहे सठाणे, पच धणुसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेण पुव्वकोडी आउअं पालेंति, पालेत्ता अप्पेगइआ निरयगामी—जाव—अप्पेगइआ सिज्झति—जाव—अत करेंति।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष का स्वरूप कैसा है ?
उ०—गौतम ! इसकी भूमि बहुत सम और रमणीय है।—यावत्—कृत्रिम और अकृत्रिम (मणियो तथा तृणो) से (सुशोभित है)।

[२] प्र०—भगवन् ! महाविदेह के मनुष्यो का स्वरूप कैसा है ?
उ०—गौतम ! वहा के मनुष्य छह प्रकार के सहनन और छह प्रकार के सस्थान वाले हैं, उत्कृष्ट पाच सौ धनुष ऊचाई वाले हैं। वे जघन्य अन्तर्मुहूर्त एव उत्कृष्ट पूर्वकोटि की आयु भोगकर कोई-कोई नरक मे जाते हैं—यावत्—कोई-कोई सिद्ध होते हैं—यावत्—(सब प्रकार के दु खो का) अन्त करते हैं।

महाविदेह संज्ञा का हेतु

[३] [१] प्र०—से केणट्ठेणं भते ? एवं वुच्चइ–महाविदेहे वासे २ ?
उ०—गोअमा ! महाविदेहे ण वासे
भरहे-रवय-हेमवय-हेरण्णवय-हरिवास-रम्मगवासेहिंतो आयाम-विक्खभ-संठाण-परिणाहेणं
वित्थिन्नतराए चेव, विपुलतराए चेव,
महंततराए चेव, सुप्पमाणतराए चेव,
महाविदेहा य इत्थ मणूसा परिवसंति।
महाविदेहे अ इत्थ देवे महिड्ढिए—जाव—पलिओवमट्ठिइए परिवसइ।
से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–महाविदेहेवासे २।
अदुत्तर च णं गोअमा ! महाविदेहस्स वासस्स सासए णामधज्जे पण्णत्ते,
जं ण कयाइ णासि ३।

जम्बू वक्ष ४ सूत्र ८५ पृ ३११

[३] [१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष महाविदेह वर्ष क्यो कहा जाता है ?
उ०—गौतम ! महाविदेह वर्ष भरत, ऐरावत हैमवत, हैरण्यवत, हरिवर्ष और रम्यक वर्ष से लबाई, चौडाई, सस्थान (आकार) और परिधि मे अधिक विस्तीर्ण है, अधिक विपुल है, अधिक विशाल है और अधिक सुप्रमाण वाला है।
यहा महाविदेह अर्थात् बडे ऊचे शरीर वाले मनुष्य रहते हैं।

यहा महाविदेह नामक मर्हधिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला देव रहता है। इस हेतु से, गौतम! यह महाविदेह वर्ष कहलाता है। अथवा गौतम! इसका यह नाम शाश्वत है, जो न कभी नही था, इत्यादि।

गंधमादन पर्वत

[४] [१] प्र०—कहि ण भते! महाविदेहे वासे गधमायणे णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा! णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,
मदरस्स पव्वयस्स उत्तरपच्चत्थिमेण,
गधिलावइस्स विजयस्स पुरच्छिमेण[1],
एत्थ ण महाविदेहे वासे गधमायणे णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते[2]।
उत्तर-दाहिणायए, पाईण-पडीणविच्छिन्ने,
तीस जोअणसहस्साइ दुण्णि अ णउत्तरे जोअणसए छच्च य एगूणवीसइभागे जोअणस्स आयामेण,
णीलवतवासहरपव्वयतेण चत्तारि जोअणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण,
चत्तारि गाउअसयाइ उव्वेहेण,
पच जोअणसयाइ विक्खभेण,
तयाणतर च ण मायाए २ उस्सेहुव्वेहपरिवुड्ढीए परिवड्ढमाणे २
विक्खभपरिहाणीए परिहायमाणे २
मदरपव्वयतेण पचजोयणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण,
पच गाउअसयाइ उव्वेहेण,[3],
अगुलस्स असखेज्जइभाग विक्खभेण पण्णत्ते।
गयदतसठाणसठिए सव्वरयणामए अच्छे
उभओ पासि दोहिं पउमवरवेइयाहि, दोहि य वणसडेहिं सव्वओ समता सपरिक्खित्ते।
गधमायणस्स ण वक्खारपव्वयस्स उप्पि बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते।
—जाव—आसयति।

[४] [१] प्र०—भगवन्! महाविदेह वर्ष मे गधमादन नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम! नीलवन्त वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, मेरु पर्वत से उत्तर-पश्चिम मे, गधिलावती विजय से पूर्व मे एव उत्तरकुरु से पश्चिम मे महाविदेह वर्ष मे गधमादन नामक वक्षस्कार पर्वत है। यह उत्तर-दक्षिण मे लवा, पूर्व-पश्चिम मे चौडा एव ३०२०९$\frac{६}{१९}$ योजन लम्बा है। नीलवन्त वर्षधर पर्वत के पास चार सौ योजन ऊचा, चार सौ कोस गहरा और पाच सौ योजन चौडा है। तदनन्तर क्रमश ऊँचाई और गहराई मे बढता-बढता किन्तु विस्तार मे कम होता-होता मेरु पर्वत के पास पाच सौ योजन ऊँचा पाच सौ कोस गहरा एव अगुल के असख्यातवें भाग चौडा हो जाता है।
यह गजदन्त के आकार का है, सर्वात्मना रत्नमय एव स्वच्छ है।
इसके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाएँ और दो वनखण्ड हैं। गधमादन वक्षस्कार पर्वत पर अत्यन्त सम और रमणीय भूमिभाग है।
—यावत्—(वहाँ देवगण क्रीडा करते हैं) बैठते हैं।

१—ठा २ उ. ३ सूत्र ८७ पृ ६५
२—ठा. ४ उ २ सूत्र ३०२ पृ. २१२
३—(क) सम ५०० सूत्र १-५ पृ ११२
(ख) ठा ५ उ. २ सूत्र ४३४ पृ ३१०

गंधमादन पर्वत के कूट

[५] [१] प्र०—गंधमायणे णं वक्खारपव्वए कति कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! सत्त कूडा पण्णत्ता[1], तजहा—

सिद्धाययणकूडे १, गधमायणकूडे २, गधिलावईकूडे ३, उत्तरकुरुकूडे ४, फलिहकूडे ५, लोहियक्खकूडे ६, आणंदकूडे ७ ।

[२] प्र०—कहि णं भंते ! गंधमायणे वक्खारपव्वए सिद्धाययणकूडे णामं कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! मदरस्स पव्वयस्स उत्तर-पच्चत्थिमेणं गंधमायणकूडस्स दाहिण-पुरत्थिमेण,
एत्थ ण गधमायणे वक्खारपव्वए,
सिद्धाययणकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ।
ज चेव चुल्लहिमवते सिद्धाययणकूडस्स पमाणं त चेव एएसि सव्वेसि भाणिअव्वं ।
एव चेव विदिसाहि तिण्णि कूडा भाणिअव्वा ।
चउत्थे ततिअस्स उत्तरपच्चत्थिमेण पंचमस्स दाहिणेणं ।
सेसा उ उत्तर-दाहिणेण ।
फलिह-लोहिअक्खेसु भोगकर-भोगवईओ देवयाओ सेसेसु सरिसणामया देवा ।
छसु वि पासायवडेंसगा ।
रायहाणीओ विदिसासु ।

[५] [१] प्र०—भगवन् ! गधमादन वक्षस्कार पर्वत पर कितने कूट हैं ?

उ०—गौतम ! सात कूट है, यथा—(१) सिद्धायतनकूट (२) गधमादनकूट (३) गधिलावतीकूट (४) उत्तरकुरुकूट (५) स्फटिककूट (६) लोहिताक्षकूट और (७) आनन्दकूट ।

[२] प्र०—भगवन् ! गधमादन वक्षस्कार पर्वत पर सिद्धायतन नामक कूट कहाँ है ?

उ०—गौतम ! मेरु पर्वत से उत्तर-पश्चिम मे एव गधमादनकूट से दक्षिण-पूर्व मे गधमादन वक्षस्कार पर्वत का सिद्धायतन नामक कूट है ।
चुल्लहिमवन्त के सिद्धायतन कूट का जो प्रमाण है वही इन सब का कह लेना चाहिए । इसी प्रकार विदिशाओ मे तीन कूट कहने चाहिए । चौथा (कूट) तीसरे के उत्तर-पश्चिम मे और पाचवें के दक्षिण मे है । शेप उत्तर-दक्षिण मे है । स्फटिक और लोहिताक्ष कूटो पर भोगकरी और भोगवती नामक (दिक् कुमारी) देवियाँ है । शेष मे कूटो के सदृश नाम वाले देव हैं । छहो पर प्रासादावतसक है । राजधानियाँ विदिशा मे हैं ।

'गन्धमादन' संज्ञा का कारण

[६] [१] प्र०—से केणट्ठेणं भते ! एवं वुच्चइ-गंधमायणे वक्खारपव्वए २ ?

उ०—गोयमा ! गंधमायणस्स ण वक्खारपव्वयस्स गधे
से जहाणामए कोट्ठपुडाण वा—जाव—
पीसिज्जमाणाण वा उक्किरिज्जमाणाण वा
विकिरिज्जमाणाण वा परिभुज्जमाणाण वा-जाव-ओराला मणुण्णा-जाव-गंधा अभिणिस्सवंति ।
भवे एयारूवे ?
णो इणट्ठे समट्ठे ।

१—ठा. ७ सूत्र ५९० पृ. ३९३

गधमायणस्स ण इत्तो इट्ठतराए चेव-जाव गधे पण्णत्ते ।
से एएणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ-गधमायणे वक्खारपव्वए २ ।
गधामायणे अ इत्थ देवे महिड्ढिए परिवसइ,
अदुत्तर च ण सासए णामधिज्जे इति ।

—जवू० वक्ष० ४ सूत्र ८६ पृ० ३१३

[६]]१] प्र०—भगवन् ! इसे गधमादन वक्षस्कार पर्वत क्यो कहते हैं ?

उ०—गौतम ! गधमादन वक्षस्कार पर्वत की गध क्या कोष्ठ नामक सुगधी द्रव्य के पुट-यावत्-जो पीसे जा रहे हों, उत्कीर्ण किये जा रहे हो, विखेरे जा रहे हो, उपभोग मे लिये जा रहे हो—यावत्-उनसे जो मनोज्ञ एव मनोरम गध निकलती है, वैसी है ? नही, ऐसा नही है । गधमादन पर्वत की गध उनमे भी अधिक इष्ट है—इष्टतर है । इस कारण गौतम ! यह गधमादन (अपनी गध से मतवाला वना देनेवाला) पर्वत कहलाता है ।
यहाँ गधमादन नामक महर्द्धिक देव रहता है । इसके अतिरिक्त यह नाम शाश्वत है ।

महाविदेह में माल्यवन्त पर्वत

[७] [१] प्र०—कहि ण भते ! महाविदेहे वासे मालवते णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! मदरस्स पव्वयस्स उत्तर-पुरत्थिमेण,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,
उत्तरकुराए पुरत्थिमेण,
वच्छस्स चक्कवट्टिविजयस्स पच्चत्थिमेण,
एत्थ ण महाविदेहे वासे मालवते णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते,
उत्तर-दाहिणायए, पाईण-पडीणविच्छि (त्थि) न्ने, ज चेव गधमायणस्स पमाण विक्खम्भो अ,
णवरमिम णाणत्त-सव्ववेरुलिआमए, अवसिट्ठ त चेव-जाव-गोअमा ! नव कूडा पण्णत्ता,[1] तजहा-
सिद्धाययणकूडे०
सिद्धे य मालवन्ते, उत्तरकुरु कच्छसायरे रयए ।
सीओय पुण्णभद्दे, हरिस्सहे[2] चेव वोद्धव्वे ।।१।।

[२] प्र०—कहि ण भते ! मालवन्ते वक्खारपव्वए सिद्धाययणकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! मन्दरस्स पव्वयस्स उत्तर-पुरत्थिमेण मालवन्तस्स कूडस्स दाहिण-पच्चत्थिमेण एत्थ ण सिद्धाययणे कूडे पण्णत्ते,
पच जोअणसयाइ उद्ध उच्चत्तेण, अवसिट्ठ त चेव-जाव-रायहाणी ।
एव मालवन्तस्स कूडस्स, उत्तरकुरुकूडस्स, कच्छकूडस्स,
एए चत्तारि कूडा दिसाहि पमाणेहि णेअव्वा,
कूडसरिसनामया देवा ।

[७] [१] प्र०—भगवन् ! महाविदेहवर्ष मे माल्यवन्त नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! मन्दर पर्वत मे उत्तर-पूर्व मे, नीलवन्त नामक वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, उत्तरकुरु मे पूर्व मे और वत्स नामक चक्रवर्तिविजय मे पश्चिम मे, महाविदेह वर्ष मे माल्यवन्त नामक वक्षस्कार पर्वत है । वह उत्तर-दक्षिण मे लम्बा, पूर्व-पश्चिम मे विस्तीर्ण और गधमादन पर्वत के वरावर प्रमाण एव विष्कभ वाला है । विशेषता यह है कि यह (माल्यवन्त पर्वत) सर्वात्मना

१—ठा० ९, सूत्र ६८९ पृ० ४३०
२ सम० ११३, सूत्र ५

वैडूर्यमय है, शेष वर्णन वही है—यावत्-गौतम ! सिद्धायतनकूट आदि नौ कूट कहे गए है।
(गाथार्थ)—(१) सिद्धायतनकूट (२) माल्यवन्त कूट (३) उत्तरकुरुकूट (४) कच्छकूट (५) सागर कूट (६) रजतकूट (७) शीतोदाकूट (८) पूर्णभद्रकूट और (९) हरिस्सहकूट, (ये नौ कूट) जानने चाहिए।

[२] प्र०—भगवन् ! माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत पर सिद्धायतन कूट नामककूट कहाँ है ?

उ०—गौतम ! मन्दर पर्वत से उत्तर-पूर्व मे एव माल्यवन्तकूट से दक्षिण-पश्चिम मे सिद्धायतन कूट कहा गया है। यह पाच सौ योजन ऊँचा है। राजधानी पर्यन्त शेष सब वर्णन वही है।
इसी प्रकार माल्यवन्त कूट, उत्तरकुरुकूट और कच्छकूट का (वर्णन समझना चाहिए)। इन चारो कूटो की दिशा और प्रमाण (सिद्धायतनकूट के समान) समझ लेना चाहिए। उनके देव कूट के सदृश नाम वाले है।

माल्यवन्त का सागर कूट

[८] [१] प्र०—कहि ण भंते ! मालवन्ते सागरकूडे णामं कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा! कच्छकूडस्स उत्तर-पुरत्थिमेण, रम्मयकूडस्स दक्खिणेणं, एत्थ णं सागरकूडे णामं कूडे पण्णत्ते,
पंच जोअणसयाइं उद्ध उच्चत्तेण, अवसिट्ठं त चेव,
सुभोगा देवी, रायहाणी उत्तर-पुरत्थिमेणं,
रययकूडे भोगमालिणी देवी, रायहाणी उत्तर-पुरत्थिमेणं,
अवसिट्ठा कूडा उत्तरदाहिणेणं णेअव्वा एक्केण पमाणेणं।

—जम्बू. वक्ष. ४ सूत्र ९१,पृ ३३७

[८] [१] प्र०—भगवन् ! माल्यवन्त पर्वत पर सागर कूट नामक कूट कहां है ?

उ०—गौतम ! कच्छ कूट से उत्तर-पूर्व मे तथा रजत कूट से दक्षिण मे सागर कूट है।
यह पाच सौ योजन ऊँचा है, शेष सब वही। वहाँ सुभोगा देवी है (उसकी) राजधानी उत्तर-पूर्व मे है।
रजतकूट पर भोगमालिनी देवी है (उसकी) राजधानी उत्तर-पूर्व मे है।
शेष कूट उत्तर-दक्षिण मे जानने चाहिए। इन सब का प्रमाण एक (हिमवत् कूट के बराबर) है।

माल्यवन्त का हरिस्सह कूट

[९] [१] प्र०—कहि ण भंते ! मालवन्ते हरिस्सहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! पुण्णभद्दस्स उत्तरेण, णीलवन्तस्स दक्खिणेणं, एत्थ णं हरिस्सहकूडे णामं कूडे पण्णत्ते,
एग जोअणसहस्स उद्ध उच्चत्तेणं, जमगपमाणेणं णेअव्वं,
रायहाणी उत्तरेण असंखेज्जे दीवे अण्णमि जबुद्दीवे दीवे उत्तरेणं बारस जोअणसहस्साइं ओगाहित्ता
एत्थ ण हरिस्सहस्स देवस्स हरिस्सहाणाम रायहाणी पण्णत्ता,
चउरासीइं जोअणसहस्साइं आयाम-विक्खंभेणं,
बे जोयणसयसहस्साइं पण्णट्ठिं च सहस्साइं छच्च छत्तीसे जोअणसए परिक्खेवेणं,
सेसं जहा चमरचंचाए रायहाणीए तहा पमाण भाणिअव्व,
महिड्ढीए महज्जुईए

[९] [१] प्र०—भगवन् ! माल्यवन्त पर्वत पर हरिस्सह कूट नामक कूट कहाँ है ?

उ०—गौतम ! पूर्णभद्र कूट से उत्तर मे नीलवन्त पर्वत से दक्षिण मे हरिस्सह कूट नामक कूट है।
यह एक हजार योजन ऊँचा है। उसका प्रमाण यमक पर्वत के बराबर जानना चाहिए।

राजधानी उत्तर दिशा मे, असख्यात द्वीप-समुद्रो के आगे, अन्य जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे, उत्तर की ओर बारह हजार योजन अवगाहन करके हरिस्सह देव की हरिस्सहा नामक राजधानी कही गई है। वह चौरासी हजार योजन लम्बी-चौडी है। उसकी परिधि २६५६३६ योजन है। शेष कथन चमरचचा राजधानी के समान है। वही प्रमाण है। (यहा हरिस्सह नामक) महर्द्धिक और महाद्युतिमान् (देव निवास करता है, अतएव उसका नाम हरिस्सह कूट है।)

'माल्यवन्त' संज्ञा का हेतु

[१०][१] प्र०—से केणट्ठेण भन्ते ! एव वुच्चइ-मालवन्ते वक्खारपव्वए २ ?

उ०—गोअमा ! मालवन्ते ण वक्खारपव्वए तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे सरिआगुम्मा णोमालिआगुम्मा-जाव-मगदन्तिआ गुम्मा,

ते ण गुम्मा दसद्धवण्ण कुसुम कुसुमेति,

जे ण त मालवन्तस्स वक्खारपव्वयस्स बहुसमरमणिज्ज भूमिभाग वायविधुअग्गसाला मुक्कपुप्फपु जोवयारकलिअ करेन्ति,

मालवन्ते अ इत्थ देवे महिड्ढीए-जाव-पलिओवमट्ठिइए परिवसइ,

से तेणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ,

अदुत्तर च ण-जाव-णिच्चे।

—जम्बू० वक्ष० ४ सूत्र ९२ पृ० ३६८—३३९

[२०][१] प्र०—भगवन् ! माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत को माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत क्यो कहते हैं ?

उ०—गौतम ! माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत पर स्थान स्थान पर सरिकागुल्म, नवमालिकागुल्म-यावत्-मगदन्तिकागुल्म हैं। वे गुल्म पचरगी कुसुमो को उत्पन्न करते हैं, जो (कुसुम) माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत के अत्यन्त समतल एव रमणीय भूमिभाग को, वायु के सचार से, शाखाओ के अग्रभाग के हिलने से जो कुसुम झडते हैं, उन कुसुमो के द्वारा वे गुल्म सुशोभित करते हैं।

इसके अतिरिक्त यहां माल्यवन्त नामक महर्द्धिक-यावत् पल्योपम की स्थिति वाला देव निवास करता है। गौतम ! इस कारण यह पर्वत माल्यवन्त कहलाता है। इसके अतिरिक्त (यह नाम) यावत्-नित्य है।

सौमनस वक्षस्कार पर्वत

[२१][१] प्र०—कहि ण भते ! जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सोमणसे णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेण,

मदरस्स पव्वयस्स दाहिण-पुरत्थिमेण,

मगलावईविजयस्स पच्चत्थिमेण,

देवकुराए पुरत्थिमेण,

एत्थ ण जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सोमणसे णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते,

उत्तर-दाहिणायए, पाईण-पडीणवित्थिन्ने,

जहा मालवन्ते वक्खारपव्वए तहा, णवरं-सव्वरययामए अच्छे-जाव-पडिरूवे।

णिसहवासहरपव्वयतेण चत्तारि जोयणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण, चत्तारि गाउअसयाइं उव्वेहेण, सेस तहेव सव्व,

णवर-अट्ठो से गोअमा ! सोमणसे ण वक्खारपव्वए बहवे देवा य देवीओ य सोमा सुमणा, सोमणसे य इत्थ देवे महिड्ढीए-जाव-परिवसइ, से एणट्ठेण गोअमा !-जाव-णिच्चे।

][११][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे सौमनस नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! निषध वर्षधर पर्वत से उत्तर मे, मन्दर पर्वत से दक्षिण-पूर्व में मगलावती विजय से पश्चिम मे और देवकुरु से पूर्व मे, जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे सौमनस नामक वक्षस्कार पर्वत है। वह उत्तर-दक्षिण मे लम्बा और पूर्व-पश्चिम मे विस्तीर्ण है। इसकी वक्तव्यता माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत के समान है।विशेष यह कि यह पर्वत सर्व-रजतमय है, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप है। निषध नामक वर्षधर पर्वत के अन्त से चार सौ योजन ऊँचा और चार सौ गव्यूति गहरा है। शेष सब कथन उसी प्रकार है ।

विशेष-उसके नाम का कारण कह लेना चाहिए-गौतम! सौमनस वक्षस्कार पर्वत पर बहुत से सौम्य और शुद्ध मन वाले देव-देवियो का निवास है। यहां सौमनस नामक महर्द्धिक देव-यावत् निवास करता है। इस कारण गौतम ! यह पर्वत सौमनस कहलाता है। इसके सिवाय इसका नाम-यावत्-नित्य है।

सौमनस पर्वत के कूट

[१२][१] प्र०—सोमणसे वक्खारपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! सत्त कूडा पण्णत्ता, तजहा-
सिद्धे सोमणसे विय, बोद्धव्वे मंगलावई कूडे ।
देवकुरु विमल कंचण वसिट्ठकूडे अ बोद्धव्वे ॥१॥
एव सव्वे पचसइया कूडा,
एएसि पुच्छा दिसि-विदिसाए भाणिअव्वा जहा गंधमायणस्स,
विमल-कंचणकूडेसु णवरि देवयाओ सुवच्छा वच्छमित्ता य, अवसिट्ठेसु कूडेसु सरिसणामया देवा, रायहाणीओ दक्खिणेणति ।

—जम्बू० वक्ष० ४ सूत्र ९७ पृ० ३५३

| [१२][१] प्र०—सौमनस वक्षस्कार पर्वत पर कितने कूट है ?

उ०—गौतम ! सात कूट हैं, यथा- (१) सिद्धायतन कूट, (२) सौमनसकूट, (३) मगलावतीकूट, (४) देवकुरुकूट, (५) विमलकूट, (६) काचनकूट और (७) वशिष्ठकूट ।

ये सब कूट पाच सौ योजन ऊचे है। दिशाओ एव विदिशाओ मे इनके सबध मे प्रश्न (उत्तर) गधमादन की तरह समझ लेने चाहिए ।

विशेष बात यह है कि इसके विमल और काचन कूटो पर सुवत्सा और वत्समित्रा देवियाँ है। शेष कूटो पर उनके नाम के समान नाम वाले देव हैं। उनकी राजधानिया दक्षिण मे है।

विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत

[१३][१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे विज्जुप्पभे णामं वक्खारपव्वए पन्नत्ते ?

उ०—गोयमा ! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं,
मदरस्स पव्वयस्स दाहिण-पच्चत्थिमेणं,
देवकुराए पच्चत्थिमेण,
पम्हस्स विजयस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ णं जम्बुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे विज्जुप्पभे वक्खारपव्वए पण्णत्ते ।
उत्तर-दाहिणायए एव जहा मालवन्ते, णवरि सव्वतवणिज्जमए अच्छे—जाव—देवा आसयन्ति ।

[१३][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! निषध नामक वर्षधर पर्वत से उत्तर मे, मदर पर्वत से दक्षिण-पश्चिम मे, देवकुरु के पश्चिम मे और पक्ष्मविजय के पूर्व मे, जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार पर्वत है ।

वह उत्तर-दक्षिण मे लम्बा है, इत्यादि वर्णन माल्यवन्त के समान समझना चाहिए । विशेष यह कि यह पर्वत सर्वतपनीय-स्वर्णमय है, स्वच्छ है—यावत्—वहाँ देवगण विहार करते हैं ।

विद्युत्प्रभ पर्वत के कूट

[१४][१] प्र०—विज्जुप्पभे ण भते ! वक्खारपव्वए कइ कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! नव कूडा पण्णत्ता, तजहा—सिद्धाययणकूडे विज्जुप्पभकूडे देवकुरुकूडे पम्हकूडे कणगकूडे सोवत्थिअकूडे सीओआकूडे सयज्जलकूडे हरिकूडे ।[1]

सिद्धे अ विज्जुणामे देवकुरु पम्ह-कणग-सोवत्थी ।
सीओआ य सयज्जल-हरिकूडे चेव वोद्धव्वे ॥१॥
एए हरिकूडवज्जा पचसइआ णेअव्वा,
एएसि कूडाण पुच्छा दिसि-विदिसाओ णेअव्वाओ,
जहा मालवन्तस्स हरिस्सहकूडे तह चेवहरिकूडे,
रायहाणी जह चेव दाहिणेण चमरचचा रायहाणी तह णेअव्वा,
कणग-सोवत्थिअकूडेसु वारिसेण-बलाहयाओ दो देवयाओ,
अवसिट्ठेसु कूडेसु कूडसरिसणामया देवा, रायहाणीओ दाहिणेण ।

प्र०—से केणट्ठेण भते ? एव वुच्चइ-विज्जुप्पभे वक्खारपव्वए २ ?

उ०—गोयमा ! विज्जुप्पभे ण वक्खारपव्वए विज्जुमिव सव्वओ समता ओभासेइ उज्जोवेइ पभासइ, विज्जुप्पभे य इत्थ देवे पलिओवमट्ठिइए—जाव—परिवसइ ।
से एएणट्ठेण गोयमा ! एव वुच्चइ-विज्जुप्पभे २, अदुत्तर च ण—जाव—णिच्चे ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०१ पृ. ३५५

[१४][१] प्र०—भगवन् ! विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत पर कितने कूट हैं ?

उ०—गौतम ! नौ कूट हैं, यथा—(१) सिद्धायतनकूट (२) विद्युत्प्रभकूट (३) देवकुरुकूट (४) पक्ष्मकूट (५) कनककूट (६) सौवस्तिककूट (७) शीतोदाकूट (८) शतज्वलकूट और (९) हरिकूट ।
सिद्धायतन, विद्युत्प्रभ, देवकुरु, पक्ष्म, कनक, सौवस्तिक, शीतोदा, शतज्वल और हरिकूट जानने चाहिए ॥१॥ हरिकूट को छोडकर ये सब कूट पाच सौ योजन ऊँचे समझ लेना चाहिए । दिशा-विदिशा मे इनके विषय मे पृच्छा कर लेनी चाहिए । हरिकूट का कथन माल्यवन्त के हरिस्सहकूट के समान है । राजधानी चमरचचा के समान ही दक्षिण मे कह लेनी चाहिए । कनककूट और सौवस्तिककूट पर वारिषेणा और बलाहका नामक देवियाँ हैं । शेष कूटो पर कूटो के नाम के समान नाम वाले देव हैं । इनकी राजधानियाँ दक्षिण मे हैं ।

प्र०—भगवन् ! विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत किस कारण से विद्युत्प्रभ कहलाता है ?

उ०—गौतम ! विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत बिजली की तरह सब दिशा-विदिशाओ मे अवभासित, उद्योतित और प्रभासित होता रहता है । तथा यहाँ विद्युत्प्रभ नामक पल्योपम की स्थिति वाला देव—यावत्—निवास करता है, गौतम ! इस कारण यह विद्युत्प्रभ कहलाता है । इसके अतिरिक्त यह नाम—यावत्—नित्य है ।

१—ठा ९ सूत्र ६८९ पृ ४३०

सुदर्शन मेरु पर्वत
चूलिका
ऊंचाई= ४० योजन
तृतीय काण्ड
ऊंचाई ३६००० योजन
पंडग वन
चौड़ाई =१००० योजन
सोमनस वन
चौड़ाई ४२७२ योजन
नंदन वन
चौड़ाई: ९९५४ ६/११ योजन
द्वितीय काण्ड
ऊंचाई ६३००० योजन
भद्रशाल वन
चौड़ाई १०००० योजन
प्रथम काण्ड
भूमि के अंदर
गहराई =१००० योजन
चौड़ाई = १००९० १०/११ योजन

मन्दर पर्वत

[१५] [१] प्र०—कहि ण भंते ! जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे मंदरे णामं पव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! उत्तरकुराए दक्खिणेणं,

देवकुराए उत्तरेण,

पुव्वविदेहस्स वासस्स पच्चत्थिमेणं,

अवरविदेहस्स वासस्स पुरच्छिमेणं,

जबुद्दीवस्स बहुमज्झदेसभाए,

एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरे णामं पव्वए पण्णत्ते ।

णवणउति जोअणसहस्साइं उद्धं उच्चत्तेण,[१]

एग जोअणसहस्स उव्वेहेणं,

मूले दसजोअणसहस्साइ णवइ च जोअणाइ दस य एगारसभाए जोअणस्स विक्खभेणं,

धरणिअले दस जोअणसहस्साइं विक्खभेण,[२]

तयणतर च ण मायाए २ परिहायमाणे-परिहायमाणे उवरितले एगं जोअणसहस्सं विक्खभेणं,[३]

मूले एक्कतीसं जोअणसहस्साइं णव य दसुत्तरे जोअणसए तिण्णि अ एगारसभाए जोअणस्स परिक्खेवेण

धरणियले एकत्तीसं जोअणसहस्साइं छच्च तेवीसे जोअणसए परिक्खेवेणं,[४]

उवरितले तिण्णि जोअणसहस्साइं एग च बावट्ठं जोअणसयं किंचिविसेसाहिअं परिक्खेवेणं,

मूले वित्थिण्णे, मज्झे संखित्ते, उवरि तणुए,

गोपुच्छसठाणसंठिए, सव्वरयणामए, अच्छे, सण्हेत्ति ।[५]

से ण एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसडेण

सव्वओ समता सपरिक्खित्ते, वण्णओ त्ति ।

१—(क) सम. ९९, सूत्र १
(ख) सम. ८५ सूत्र, २
(ग) ठा, १० सूत्र ७२१ पृ ४५३
(घ) सम. ८४, सूत्र ६

२—(क) सम. १०, सूत्र ३
(ख) सम. सूत्र १२३
(ग) ठा. १०, सूत्र ७१९ पृ० ४५३

३—मदरे ण पव्वए धरणितलाओ सिहरतले एक्कारसभागपरिहीणे उच्चत्तेणं पण्णत्ते । सम. ११ सू. ७

४—सम. ३१, सूत्र २

५—मंदरस्स णं पव्वयस्स चउदिसिं पि पणयालीसं २ जोयणसहस्साइ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । —सम. ४५, सूत्र ६
—मंदरस्स ण पव्वयस्स पच्चत्थिमिल्लाओ चरिमताओ विजयदारस्स पच्चत्थिमिल्ले चरमंते एस णं पणपन्नजोयण-सहस्साइ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।
—एव चउद्दिसिपि वेजयत-जयंत-अपराजियं ति । —सम. ५५, २-३

[१५] [१] प्र०—भगवन्! जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष मे मेरु (मन्दर) नामक पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम! उत्तर कुरु से दक्षिण मे, देव कुरु से उत्तर मे, पूर्व महाविदेह से पश्चिम मे एव अपरविदेह से पूर्व मे, जम्बूद्वीप के ठीक मध्य मे जम्बूद्वीपस्थित मदर नामक पर्वत है। यह ९९००० योजन ऊचा, १००० योजन गहरा, मूल मे १००९०$\frac{१०}{११}$ योजन विस्तार वाला तथा पृथ्वी-तल पर १०००० योजन विस्तृत है। तदनन्तर धीरे-धीरे कम होते-होते उपरितल पर १००० योजन विस्तार वाला रह गया है। इसकी परिधि मूल मे ३१९१०$\frac{३}{११}$ योजन की, पृथ्वीतल पर ३१६२३ योजन की तथा उपरितल पर ३१६२ योजन से कुछ अधिक की है। यह मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त, ऊपर पतला, गोपुच्छ के आकार का, सर्वात्मना रत्नमय, स्वच्छ और चिकना है।

यह चारो ओर से एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से घिरा है। इनका वर्णन यहाँ समझ लेना चाहिए।

भद्रशालवन

[१६] [१] प्र०—मदरे ण भते! पव्वए कइ वणा पण्णत्ता[1] ?

प्र०—गोयमा! चत्तारि वणा पण्णत्ता, तजहा—
भद्दसालवणे १, णंदणवणे २, सोमणसवणे ३, पडगवणे ४।

[२] प्र०—कहि ण भते! मदरे पव्वए भद्दसालवणे णाम वणे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा! धरणिअले एत्थ ण मदरे पव्वए भद्दसालवणे णाम वणे पण्णत्ते—
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणवित्थिन्ने,
सोमणस-विज्जुप्पह-गधमायण-मालवतेहिं वक्खारपव्वएहिं सीआ-सीओआहिं अ महाणईहिं अट्ठभागपविभत्ते।
मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण बावीस बावीस जोअणसहस्साइ आयामेण,
उत्तर-दाहिणेण अड्ढाइज्जाइ अड्ढाइज्जाइ जोअणसयाइ विक्खमेणति।
से ण एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसडेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते।
दुण्हवि वण्णओ भाणिअव्वो।
किण्हे किण्होभासे-जाव-देवा आसयति सयति।

[१६] [१] प्र०—भगवन्! मेरु पर्वत पर कितने वन हैं ?

उ०—गौतम! चार वन हैं, यथा-भद्रशाल वन, नन्दन वन, सौमनस वन और पडक वन।

प्र०—भगवन्! मेरु पर्वत पर भद्रशाल नामक वन कहा है ?

उ०—गौतम! मेरु पर्वत के पृथ्वीतल पर भद्रशाल नामक वन है। यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा और उत्तर-दक्षिण मे चौडा है। सौमनस, विद्युत्प्रभ, गधमादन और माल्यवन्त नामक वक्षस्कार पर्वतों और सीता तया सीतोदा महानदियो के कारण आठ भागो मे विभक्त हो गया है।

यह मेरु पर्वत से पूर्व-पश्चिम की ओर २२००० योजन लम्वा है और उत्तर-दक्षिण मे २५० योजन चौडा है। इसके चारो ओर एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड है। यहा इन दोनो का वर्णन कह लेना चाहिए।

यह (भद्रशाल वन) कृष्ण व कृष्णावभास है-यावत्-यहा देव (क्रीडा करते एव) बैठते सोते हैं।

---

१. ठा ४ उ २ सूत्र ३०२ पृ २१२

सिद्धायतनवर्णन

[१७] मंदरस्स ण पव्वयस्स पुरत्थिमेणं भद्दसालवणं पण्णासं जोअणाइं ओगाहित्ता एत्थ णं महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते,
पण्णास जोअणाइं आयामेणं,
पणवीस जोयणाइ विक्खमेणं,
छत्तीसं जोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेण,
अणेगखभसयसण्णिविट्ठे, वण्णओ ।
तस्स ण सिद्धाययणस्स तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता,
ते ण दारा अट्ठ जोअणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं,
चत्तारि जोअणाइ विक्खमेण,
तावइय चेव पवेसेणं ।
सेया वरकणगथूभिआगा-जाव-वणमालाओ,
भूमिभागो य भाणिअव्वो ।
तस्स णं बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण मह एगा मणिपेढिया पण्णत्ता,
अट्ठजोअणाइं आयाम-विक्खमेण,
चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं,
सव्वरयणामई, अच्छा,
तीसे णं मणिपेढिआए उवरि देवच्छदए,
अट्ठ जोयणाइ आयाम-विक्खमेण,
साइरेगाइं अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं,
—जाव—जिणपडिमावण्णओ ।
देवच्छदगस्स-जाव-धूवकडुच्छुआणं इति ।
मदरस्स ण पव्वयस्स दाहिणेण भद्दसालवणं पण्णासं ······
एवं चउद्दिसिं पि मंदरस्स भद्दसालवणे चत्तारि सिद्धाययणा भाणिअव्वा ।

[१७] मेरु पर्वत से पूर्व की ओर भद्रशाल वन को पचास योजन अतिक्रमण करने पर एक विशाल सिद्धायतन कहा गया है । यह पचास योजन लम्बा, पच्चीस योजन चौडा, छत्तीस योजन ऊँचा और कई सौ स्तभो से सन्निविष्ट है । इसका वर्णन कह लेना चाहिए ।

इस सिद्धायतन के तीन दिशाओ मे तीन द्वार हैं । ये द्वार आठ योजन ऊचे, चार योजन चौडे एवं उतने ही प्रवेश वाले है । ये श्वेतवर्ण तथा श्रेष्ठ स्वर्ण की स्तूपिकाओ वाले हैं—यावत्—वनमालाएँ हैं । यहाँ की भूमि का भी वर्णन कर लेना चाहिए ।

इस (सिद्धायतन) के मध्य भाग मे एक विशाल मणिपीठिका है । यह आठ योजन लम्बी-चौडी, चार योजन मोटी, सर्वरत्नमय व स्वच्छ है । इस मणिपीठिका पर एक देवच्छद है । यह आठ योजन लम्बा-चौडा, सातिरेक आठ योजन ऊँचा—यावत्—जिनप्रतिमा से युक्त है । देवच्छदक से लगाकर धूपकडुच्छुक (धूपदानी) पर्यन्त समस्त वर्णन पूर्ववत् कर लेना चाहिए ।

मेरु पर्वत से दक्षिण की ओर भद्रशाल वन को पचास योजन अतिक्रमण करने पर एक विशाल सिद्धायतन है ।

इस प्रकार मेरु की चारो दिशाओ मे भद्रशाल वन मे चार सिद्धायतन हैं ।

पुष्करिणीवर्णन

[१८] मदरस्स ण पव्वयस्स उत्तर-पुरत्थिमेण भद्दसालवण पण्णास जोअणाइ ओगाहित्ता
एत्थ ण चत्तारि णदापुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तजहा–
'पउमा १, पउमप्पभा २, चेव, कुमुदा ३, कुमुदप्पभा ४ ।'
ताओ ण पुक्खरिणीओ पण्णास जोअणाइ आयामेण,
पणवीस जोअणाइ विक्खभेण,
दस जोयणाइ उव्वेहेण, वण्णओ ।
वेइया-वणसडाण भाणिअव्वो ।
चउद्दिसि तोरणा-जाद-तासि ण पुक्खरिणीण बहुमज्भदेसभाए एत्थ ण मह एगे ईसाणस्स देविंदस्स
देवरण्णो पासायवडिसए पण्णत्ते–
पंच जोअणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण,
अड्ढाइज्जाइ जोअणसयाइ विक्खभेण,
अब्भुग्गयमूसिय
एव सपरिवारो पासायवडिसओ भाणिअव्वो ।
मदरस्स ण एव दाहिणपुरत्थिमेण पुक्खरिणीओ उप्पलगुम्मा १ णलिणा २ उप्पला ३ उप्पलुज्जला ४ ।
त चेव पमाण । मज्भे पासायवडिसओ सक्कस्स सपरिवारो ।
तेण चेव पमाणेण ।
दाहिण-पच्चत्थिमेण वि पुक्खरिणीओ–
'भिगा १ भिगनिभा २ चेव, अजणा ३ अजणप्पमा ४ ।'
पासायवडिसओ, सक्कस्स सीहासण सपरिवार ।
उत्तरपुरत्थिमेण पुक्खरिणीओ—
'सिरिकता १ सिरिचदा २ सिरिमहिता ३ चेव सिरिणिलया ४ ।'
पासायवडिसओ, ईसाणस्स सीहासण सपरिवारति ।

[१८] मेरु पर्वत से उत्तर-पूर्व की ओर भद्रशाल वन मे पचास योजन जाने पर चार नन्दा पुष्करिणिया (वापिकाए) आती हैं, यथा-पद्मा, पद्मप्रभा, कुमुदा, कुमुदप्रभा ।

ये पुष्करिणिया पचास योजन लम्बी, पच्चीस योजन चौडी एव दस योजन गहरी हैं ।

इनका वर्णन समझ लेना चाहिए-यावत्-इनके चारो ओर पद्मवरवेदिकाए और वनखण्ड हैं। इन की चारो दिशाओं मे (चार) तोरण हैं–यावत्–इन पुष्करिणियो के मध्य मे ईशान-देवेन्द्र देवराज का एक विशाल उत्तम प्रासाद है—यह पाच सौ योजन ऊचा, अढाई सौ योजन चौडा एव उन्नत शिखर वाला है । *यहा सपरिवार प्रासादावतसक का वर्णन समझ लेना चाहिए ।*

इसी प्रकार मेरु से दक्षिण-पूर्व मे (चार) पुष्करिणिया हैं–उत्पलगुल्मा, नलिना, उत्पला और उत्पलोज्ज्वला । इनका प्रमाण भी वही (पूर्वोक्त) है । इनके मध्य मे शक्र (देवेन्द्र देवराज) का सपरिवार प्रासादावतसक है । इसका प्रमाण भी वही है ।

दक्षिण-पश्चिम मे भी (चार) पुष्करिणिया हैं—भृ गा, भृगनिभा, अजना और अजनप्रभा । (इनके मध्य मे) प्रासादावतसक एव शक्र का सपरिवार सिंहासन है ।

उत्तर-पूर्व मे (चार) पुष्करिणिया हैं—श्रीकान्ता, श्रीचन्द्रा, श्रीमहिता और श्रीनिलया । (इनके मध्य मे) प्रासादावतसक व ईशानेन्द्र का सपरिवार सिंहासन है ।

दिशाहस्तिकूट

[१६][१] प्र०—मदरे ण भते ! पव्वए भद्दसालवणे कइ दिसाहत्थिकूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! अट्ठ दिसाहत्थिकूडा पण्णत्ता,[1] तजहा—

गाहा—पउमुत्तरे णीलवते सुहत्थी अजणागिरी ।
कुमुदे अ पलासे अ वडिंसे रोअणागिरी ।।१।।

[२] प्र०—कहि ण भते मदरे पव्वए भद्दसालवणे पउमुत्तरे णाम दिसाहत्थिकूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! मदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेण पुरत्थिमिल्लाए सीआए उत्तरेणं,
एत्थ ण पउमुत्तरे णाम दिसाहत्थिकूडे पण्णत्ते,
पंच जोयणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण,
पंच गाउअसयाइ उव्वेहेण,
एवं विक्खभ-परिक्खेवो भाणियव्वो चुल्लहिमवतसरिसो ।
पासायाण य त चेव,
पउमुत्तरो देवो, रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेण (१)
एवं णीलवतदिसाहत्थिकूडे,
मदरस्स दाहिणपुरत्थिमेणं पुरत्थिमिल्लाए सीआए दक्खिणेणं ।
एअस्स वि नीलवतो देवो, रायहाणी दाहिणपुरत्थिमेण (२)
एवं सुहत्थिदिसाहत्थिकूडे,
मदरस्स दाहिणपुरत्थिमेण दक्खिणिल्लाए सीओआए पुरत्थिमेणं ।
एअस्सवि सुहत्थी देवो, रायहाणी दाहिणपुरत्थिमेण (३)
एवं चेव अंजणागिरिदिसाहत्थिकूडे,
मदरस्स दाहिण-पच्चत्थिमेणं दक्खिणिल्लाए सीओआए पच्चत्थिमेण ।
एअस्स वि अंजणागिरी देवो, रायहाणी दाहिणपच्चत्थिमेण (४)
एवं कुमुदे विदिसाहत्थिकूडे
मदरस्स दाहिण-पच्चत्थिमेण पच्चत्थिमिल्लाए सीओआए दक्खिणेण ।
एअस्स वि कुमुदो देवो, रायहाणी दाहिण-पच्चत्थिमेण (५)
एव पलासे विदिसाहत्थिकूडे
मंदरस्स उत्तर-पच्चत्थिमेणं, पच्चत्थिमिल्लाए सीओआए उत्तरेणं,
एअस्स वि पलासो देवो, रायहाणी उत्तर-पच्चत्थिमेणं (६)
एवं वडेंसे विदिसाहत्थिकूडे
मदरस्स उत्तर-पच्चत्थिमेणं, उत्तरिल्लाए सीआए महाणईए पच्चत्थिमेणं,
एअस्स वि वडेंसो देवो, रायहाणी उत्तर-पच्चत्थिमेण (७)
एव रोअणागिरी दिसाहत्थिकूडे
मदरस्स उत्तर पुरत्थिमेणं, उत्तरिल्लाए सीआए पुरत्थिमेण,
एयस्स वि रोअणागिरी देवो, रायहाणी उत्तर-पुरत्थिमेण (८)

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०३ पृ. ३६०

[१६][१] प्र०—भगवन् ! मेरु पर्वत के भद्रशालवन मे कितने दिक्हस्तिकूट (हाथी के आकार के कूट) हैं ?

उ०—गौतम ! आठ दिक्हस्तिकूट हैं, यथा—

गाथार्थ—(१) पद्मोत्तर (२) नीलवन्त (३) सुहस्ती (४) अजनगिरि (५) कुमुद (६) पलास (७) अवतसक (८) रोचनगिरि।

---

१ ठा० ८ सूत्र ६४२ पृ० ४१३

[२] प्र०—भगवन् ! मेरु पर्वत के भद्रशालवन मे पद्मोत्तर नामक दिक्हस्तिकूट कहाँ है ?

उ०—मेरु पर्वत के उत्तर-पूर्व मे एव पूर्वी शीता (महानदी) के उत्तर मे पद्मोत्तर नामक दिक्हस्तिकूट है। यह पाच सौ योजन ऊँचा एव पाच सौ योजन गहरा है। इसकी चौडाई एव परिधि चुल्ल-हिमवत के समान है। प्रासाद आदि भी वैसे ही हैं। यहाँ पद्मोत्तर देव है। इसकी राजधानी उत्तर-पूर्व मे हैं। इसी प्रकार नीलवन्त दिक्हस्तिकूट मेरु के दक्षिण-पूर्व मे तथा पूर्वी शीता नदी के दक्षिण मे है। इसका देव नीलवन्त है और राजधानी दक्षिण-पूर्व मे है।

इसी प्रकार सुहस्ती दिक्हस्तिकूट मेरु के दक्षिण-पूर्व मे तथा दक्षिणी शीतोदा नदी के पूर्व मे है। यहा सुहस्ती देव है। राजधानी दक्षिण-पूर्व मे है।

इसी प्रकार अजनगिरि दिक्हस्तिकूट मेरु के दक्षिण-पश्चिम मे तथा दक्षिणी शीतोदा के पश्चिम मे है। यहाँ अजनगिरि देव है व राजधानी दक्षिण-पश्चिम मे है।

इसी प्रकार कुमुद विदिक्हस्तिकूट मेरु के दक्षिण-पश्चिम मे तथा पश्चिमी शीतोदा नदी के उत्तर मे है। यहाँ कुमुद देव है। राजधानी दक्षिण-पश्चिम मे है।

इसी प्रकार पलास विदिक्हस्तिकूट मेरु के उत्तर-पश्चिम मे तथा शीतोदा नदी के उत्तर मे है। यहाँ पलास देव है। राजधानी उत्तर-पश्चिम मे है।

इसी प्रकार अवतमक विदिक्हस्तिकूट मेरु के उत्तर-पश्चिम मे तथा शीता महानदी के मे है। यहाँ अवतसक देव है और उत्तर-पश्चिम मे राजधानी है।

इसी प्रकार रोचनगिरि दिक्हस्तिकूट मेरु के उत्तर-पूर्व मे तथा शीता महानदी के पूर्व मे है। यहाँ रोचनगिरि देव है। राजधानी उत्तर-पूर्व मे है।*

नन्दनवन

[२०][१] प्र०—कहि ण भते ! मदरे पव्वए णदणवणे णाम वणे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! भद्दसालवणस्स बहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ पचजोयणसयाइ उड्ढ उप्पइत्ता एत्थ ण मदरे पव्वए णदणवणे णाम वणे पण्णत्ते[1]।

पचजोयणसयाइ चक्कवालविक्खमेण वट्टे वलयाकारसठाणसठिए,

जे ण मदर पव्वय सव्वओ समता सपरिक्खित्ताण चिट्ठइ त्ति।

णवजोयणसयाइ णव य चउप्पण्णे जोअणसए छच्चेगारसभाए जोअणस्स बाहिं गिरिविक्खभो,

एगत्तीस जोयणसहस्साइ चत्तारि अ अउणासीए जोअणसए किंचि विसेसाहिए बाहिं गिरिपरिरएण,

अट्ठ जोअणसहस्साइ णव य चउप्पण्णे जोअणसए छच्चेगारसभाए जोअणस्स अतो गिरिविक्खभो,

अट्ठावीस जोअणसहस्साइ तिण्णि य सोलसुत्तरे जोअणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोअणस्स अंतो गिरिपरिरएण।

सेण एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसडेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते।

वण्णओ-जाव-देवा आसयति।

मदरस्स ण पव्वयस्स पुरत्थिमेण

---

* मूल पाठ मे, आठ मे से पाच को दिक्हस्तिकूट और तीन को विदिक्हस्तिकूट कहा गया है, जबकि विदिक्हस्तिकूट चार होने चाहिए। सभवत प्रथमकूट पद्मोत्तर भी विदिक्हस्तिकूट है, जैसा कि टीकाकार के इस उल्लेख से ज्ञात होता है—'पद्मोत्तरऽत्र देव, तस्य राजधानी उत्तरपूर्वस्या उक्तविदिग्वर्त्तिकूटाधिपत्वादस्येति।'

१ नदणवणस्स णं हेट्ठिल्लाओ चरमताओ सोगंधियस्स कडस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस ण पचासीइ जोयणसहस्साइं अबाहाए अतरे पण्णत्ते। —सम० ८५, सूत्र ४.
—नदणवणस्स ण उवरिल्लाओ चरमताओ पडुयवणस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस ण अट्ठाणउइ जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। —सम० ९८ सूत्र १
—नदणवणस्स ण पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ पच्चत्थिमिल्ले चरमते एस ण नवनउइ जोयणसयाइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। —सम० ९९ सूत्र २

एव चउद्दिसि चत्तारि सिद्धाययणा,
विदिसासु पुक्खरिणीओ
त चेव पमाण सिद्धाययणाण पुक्खरिणीण च ।
पासायवडिसगा तह चेव सक्केसाणाण, तेण चेव पमाणेणं ।

[२०][१] प्र०—भगवन् ! मेरु पर्वत पर नन्दन नामक वन कहा है ?

उ०—गौतम ! भद्रशाल वन के अत्यन्त सम और रमणीय भूमिभाग से पाच सौ योजन ऊँचा जाने पर मेरु पर्वत पर नन्दन नामक वन आता है। यह पाँच सौ योजन चक्राकार विस्तार वाला, वर्तुल एव वलयाकार है। इसने मेरु पर्वत को सभी ओर से घेरा हुआ है। बाहर का गिरिविष्कम (मेरु पर्वत की चौडाई) ९९५४ $\frac{६}{११}$ योजन है। बाहर की गिरिपरिधि ३१४७९ योजन से किंचित् अधिक है। अन्दर का गिरिविष्कम ८९५४ $\frac{६}{११}$ योजन है अन्दर की गिरिपरिधि २८३१६ $\frac{८}{११}$ योजन है। इस (नन्दनवन) के चारो ओर एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड है। यहाँ इनका वर्णन समझ लेना चाहिए-यावत्-यहाँ देव बैठते है। मेरु पर्वत के पूर्व मे एक विशाल सिद्धायतन है, इसी प्रकार चारो दिशाओ मे चार सिद्धायतन हैं। विदिशाओ मे पुष्करिणिया हैं। सिद्धायतनो, पुष्करिणियो एव शक्र-ईशान के प्रासादावतसको का प्रमाण पूर्ववत् ही है।

नन्दनवन के कूट

[२१][१] प्र०—णंदणवणे ण भते ! कइ कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! णव[1] कूडा पण्णत्ता, तजहा—णंदणवणकूडे १, मदरकूडे २, णिसहकूडे ३, हिमवय-कूडे ४, रययकूडे ५, रुअगकूडे ६, सागरचित्तकूडे ७, वइरकूडे ८, बलकूडे[2] ९।

[२] प्र०—कहि ण भते ! णंदणवणे णंदणवणकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमिल्लसिद्धाययणस्स उत्तरेणं,
उत्तर-पुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसयस्स दक्खिणेण,
एत्थ ण णदणवणे णदणवणे णाम कूडे पण्णत्ते।
पंचसइआ कूडा पुव्ववण्णिआ भाणिअव्वा।
देवी मेहकरा,
रायहाणी विदिसाए त्ति १।
एआहि चेव पुव्वाभिलावेण णेअव्वा
इमे कूडा इमाहि दिसाहि
पुरत्थिमिल्लस्स भवणस्स दाहिणेणं,
दाहिण—पुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स उत्तरेणं,
मंदरे कूडे, मेहवई देवी, रायहाणी पुव्वेणं २।
दक्खिणिल्लस्स भवणस्स पुरत्थिमेण,
दाहिण-पुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पच्चत्थिमेण,
णिसहे कूडे, सुमेहा देवी, रायहाणी दक्खिणेणं ३।
दक्खिणिल्लस्स भवणस्स पच्चत्थिमेणं,
दक्खिण-पच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पुरत्थिमेणं,
हेमवए कूडे, हेममालिनी देवी, रायहाणी दक्खिणेण ४।
एत्थ ण महं एगे सिद्धाययणे पण्णत्ते।

---

१. ठा० ९, सूत्र ६८९ प्र० ४३०।
२. सम ११३, सूत्र ६

पच्चत्थिमिल्लस्स भवणस्स दक्खिणेण,
दाहिण-पच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स उत्तरेण,
रयए कूडे, सुवच्छा देवी, रायहाणी पच्चत्थिमेण ५।
पच्चत्थिमिल्लस्स भवणस्स उत्तरेण
उत्तरपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स दक्खिणेण,
रुअगे कूडे, वच्छमित्ता देवी, रायहाणी पच्चत्थिमेण ६।
उत्तरिल्लस्स भवणस्स पच्चत्थिमेण
उत्तरपच्चत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पुरत्थिमेण
सागरचित्ते कूडे, वइरसेना देवी, रायहाणी उत्तरेण ७।
उत्तरिल्लस्स भवणस्स पुरत्थिमेण
उत्तरपुरत्थिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स पच्चत्थिमेण
वइरकूडे, वलाहया देवी, रायहाणी उत्तरेणत्ति ८।

[३] प्र०—कहि ण भते ! णदणवणे वलकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! मदरस्स पव्वयस्स उत्तरपुरत्थिमेण
एत्थ ण णदणवणे बलकूडे णाम कूडे पण्णत्ते।
एव ज चेव हरिस्सहकूडस्स पमाण रायहाणी अ त चेव वलकूडस्स वि।
णवर वलो देवो, रायहाणी उत्तरपुरत्थिमेणत्ति।

—जम्बू. वक्ष ४ सूत्र१०४ पृ १६६–७

[२१][१] प्र०—भगवन् ! नन्दनवन मे कितने कूट हैं ?
उ०—गौतम ! नौ कूट हैं, यथा—(१) नन्दनवनकूट (२) मन्दरकूट (३) निषधकूट (४) हिमवतकूट (५) रजतकूट (६) रुचककूट (७) सागरचित्तकूट (८) वज्रकूट और (९) वलकूट।

[२] प्र०—भगवन् ! नन्दनवन मे नन्दनवनकूट कहाँ है ?
उ०—गौतम ! मन्दर पर्वत के पूर्वीय सिद्धायतन के उत्तर मे तथा उत्तरपूर्वीय प्रासादावतसक के दक्षिण मे नन्दनवन नामक कूट है। यहा पाच सौ कूट पूर्ववर्णित (विदिक्-हस्तिकूट प्रकरण मे कथित) कह लेने चाहिए। यहा की देवी मेघकरा है। राजधानी विदिशा (उत्तर-पूर्व) मे है। इस पूर्वोक्त कथन के साथ आगे कहे जाने वाले कूट इन आगे कही जाने वाली दिशाओ मे समझ लेना चाहिए।

पूर्वीय भवन के दक्षिण मे तथा दक्षिणपूर्वीय प्रासादावतसक के उत्तर मे मदर कूट है। यहा की देवी मेघवती है। इसकी राजधानी पूर्व मे है।

दक्षिणी भवन के पूर्व मे तथा दक्षिण-पूर्व के प्रासादावतसक के पश्चिम मे निषधकूट है। देवी सुमेघा है और राजधानी दक्षिण मे है।

दक्षिणी भवन के पश्चिम मे तथा दक्षिण-पश्चिम के प्रासादावतसक के पूर्व मे हैमवतकूट है। देवी हेममालिनी है। उसकी राजधानी दक्षिण मे है।

पश्चिम के भवन के दक्षिण मे तथा दक्षिण-पश्चिम के प्रासादावतसक के उत्तर मे रजतकूट है। सुवत्सा देवी है। राजधानी पश्चिम मे है।

पश्चिमी भवन के उत्तर मे तथा उत्तर-पश्चिम के प्रासादावतसक के दक्षिण में रुचककूट है। वत्स-मित्रा देवी है। राजधानी पश्चिम मे है।

उत्तरीय भवन के पश्चिम मे तथा उत्तर-पश्चिम के प्रासादावतसक के पूर्व मे सागरचित्तकूट है। वज्रसेना देवी है। राजधानी उत्तर मे है।

उत्तरीय भवन के पूर्व मे तथा उत्तर-पूर्वीय प्रासादावतसक के पश्चिम मे वज्रकूट है। वलाहका देवी है। राजधानी उत्तर मे है।

[३] प्र०—भगवन् ! नन्दनवन मे बलकूट नामक कूट कहा है ?

उ०—गौतम ! मन्दर पर्वत से उत्तर-पूर्व मे नन्दनवन मे बलकूट नामक कूट है ।
हरिस्सहकूट का जो प्रमाण और राजधानी है वही बलकूट का प्रमाण और राजधानी समझना चाहिए । विशेषता यह है कि बलकूट मे देव बल नामक है और राजधानी उतर-पूर्व मे है ।

सौमनस वन

[२२][१] प्र०—कहि णं भते ! मदरए पव्वए सोमणसवणे णाम वणे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णदणवणस्स बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ अद्धतेवट्ठिं जोअणसहस्साइं उड्ढं उप्पइत्ता
एत्थ ण मदरे पव्वए सोमणसवणे णाम वणे पण्णत्ते ।
पच जोयणसयाइ चक्कवालविक्खमेण
वट्टे वलयागारसठाणसठिए
जे ण मदरं पव्वय सव्वओ समता सपरिक्खित्ताणं चिट्ठइ ।
चत्तारि जोयणसहस्साइ दुण्णि य बावत्तरे जोअणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोअणस्स
बाहिं गिरिविक्खभेण ।
तेरस जोअणसहस्साइं पंच य एक्कारे जोअणसए छच्च इक्कारसभाए जोअणस्स बाहिं गिरिपरिरएणं ।
तिण्णि जोअणसहस्साइ दुण्णि अ बावत्तरे जोअणसए अट्ठ य इक्कारसभाए जोयणस्स अंतो गिरिविक्खंभेण ।
दस जोअणसहस्साइ तिण्णि य अउणापण्णे जोअणसए तिण्णि अ इक्कारसभाए जोअणस्स
अंतो गिरिपरिरएणति ।
से ण एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते ।
वण्णओ । किण्हे किण्होभासे—जाव—आसयंति ।
एव कूडवज्जा सच्चेव णदणवणवत्तव्वया भाणियव्वा ।
तं चेव ओगाहिऊण—जाव—पासायवडेंसगा सक्कीसाणाणंति ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०५ पृ ३६९

[२२][१] प्र०—भगवन् ! मेरु पर्वत पर सौमनस वन नामक वन कहा है ?

उ०—गौतम ! नन्दनवन के अति सम एव रमणीय भूमिभाग से ६२५०० योजन ऊपर जाने पर मेरु पर्वत पर सौमनस नामक वन आता है । यह ५०० योजन चक्राकार चौडा, वर्तुल, वलयाकार एवं मेरु पर्वत को चारो ओर से घेरे हुए है । इसके बाहर का गिरिविष्कभ ४२७२ $\frac{८}{११}$ योजन है । गिरिपरिधि १३५११ $\frac{६}{११}$ योजन है । अदर का गिरि-विष्कभ ३२७२ $\frac{८}{११}$ योजन है । अदर की गिरि-परिधि १०३४९ $\frac{३}{११}$ योजन है । सौमनस वन के सब ओर एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड है । यहा उनका वर्णन समझ लेना चाहिए । यह कृष्ण और कृष्णावभास है—यावत्—(यहा देव क्रीडा करते और) बैठते है ।

इस प्रकार कूटो को छोडकर शेष वर्णन नन्दनवन के समान कर लेना चाहिए । उतनी ही दूरी पर यावत्—शक्र-ईशानेन्द्र के प्रासादावतसक हैं ।

पंडकवन

[२३][१] प्र०—कहि ण भते ! मदरपव्वए पडगवणे णाम वणे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सोमणसवणस्स वहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ छत्तीस जोअणसहस्साइ उड्ढ उप्पइत्ता
एत्थ ण मदरे पव्वए सिहरतले पडगवणे णाम वणे पण्णत्ते ।
चत्तारि चउणउए जोयणसए चक्कवालविक्खभेण
वट्टे वलयाकारसठिए ।
जे ण मदरचूलिअ सव्वओ समता सपरिविखत्ताण चिट्ठइ ।
तिण्णि जोअणसहस्साइ एग च वावट्ठ जोअणसय किंचिविसेसाहिअ परिक्खेवेण ।
से ण एगाए पउमवरवेइयाए, एगेण य वणसडेण—जाव—किण्हे, देवा आसयति ।
पडगवणस्स वहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण मदरचूलिआ णाम चूलिआ पण्णत्ता,
चत्तालीस जोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेण,[1]
मूले वारस जोअणाइ विक्खभेण,[2]
मज्झे अट्ठ जोअणाइ विक्खभेण,[3]
उप्पि चत्तारि जोअणाइ विक्खभेण ।
मूले साइरेगाइ सत्तत्तीस जोयणाइ परिक्खेवेण,
मज्झे साइरेगाइ पणवीस जोयणाइ परिक्खेवेण,
उप्पि साइरेगाइ वारस जोयणाइ परिक्खेवेण ।
मूले विच्छिन्ना, मज्झे सखित्ता, उप्पि तणुआ ।
गोपुच्छसठाणसठिआ, सव्ववेरुलिआमई, अच्छा ।
सा ण एगाए पउमवरवेइयाए—जाव—सपरिविखत्ता इति ।
उप्पि वहुसमरमणिज्जे भूमिभागे—जाव—सिद्धाययण ।
वहुमज्झदेसभाए कोस आयामेण, अद्धकोस विक्खभेण, देसूणग कोस उड्ढ उच्चत्तेणं ।
अणेगखभसय—जाव—धूवकडुच्छुगा ।
मदरचूलिआए ण पुरत्थिमेण पडगवण पण्णास जोअणाइ ओगाहित्ता
एत्थ ण मह एगे भवणे पण्णत्ते ।
एव जच्चेव सोमणसे पुव्ववण्णिओ गमो
भवणाण पुक्खरिणीण पासायवडेंसगाण य सो चेव णेअव्वो
—जाव—सक्कीसाणवडेंसगा तेण चेव परिमाणेण ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०६ पृ ३७०

[२३][१] प्र०—भगवन् ! मेरु पर्वत पर पडक नामक वन कहाँ है ?

उ०—गौतम ! सौमनस वन के अति सम एव रमणीय भूमिभाग से छत्तीस हजार योजन ऊपर जाने पर मेरुपर्वत के शिखरतल पर पडक नामक वन है । यह ४९४ योजन चक्राकार चौडा, वर्तुल, वलयाकार एव मेरुचूलिका को सभी ओर से घेरे हुए है । इसकी परिधि ३१६२ योजन से कुछ अधिक है । यह एक पद्मवरवेदिका से और एक वनखण्ड से (सब ओर घिरा है)—यावत्—कृष्ण है । देव यहा बैठते हैं ।

१—सम. ४०, सूत्र २
२— „ १२, सूत्र ६
३—ठा. ८, उ. ३ सूत्र ६४० पृ. ४१३

पडकवन के मध्य मे मदरचूलिका नामक चूलिका है। यह चालीस योजन ऊँची, मूल मे बारह योजन चौडी, मध्य मे आठ योजन चौडी, ऊपर चार योजन चौडी, मूल मे साधिक सैंतीस योजन की परिधि वाली, मध्य मे साधिक पच्चीस योजन की परिधि वाली, ऊपर साधिक बारह योजन की परिधि वाली, मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त, ऊपर पतली, गोपुच्छाकार, सर्ववैडूर्यमय एव स्वच्छ है। यह एक पद्मवरवेदिका से—यावत्—घिरी है। इस पर अति सम और रमणीय भूमि-भाग है—यावत्—मध्य मे सिद्धायतन है। यह एक कोस लबा, आधा कोश चौडा, कुछ कम एक कोस ऊँचा, सैंकडो स्तम्भो (से सन्निविष्ट)—यावत्—धूपदानियो से युक्त है।

मदरचूलिका से पूर्व मे पडकवन को पचास योजन पार करने पर एक विशाल भवन आता है। इस प्रकार जो वर्णन सौमनसवन के प्रकरण मे किया गया है, वह सब यहा के भवनो, पुष्करणियो एव प्रासादावतसको के विषय मे समझ लेना चाहिए—यावत्—शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र के अवतसक उसी परिमाण के हैं।

अभिषेक शिलाएं

पाण्डुशिला

[२४][१] प्र०—पण्डकवणे णं भंते ! कइ अभिसेअसिलाओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि अभिसेअसिलाओ पण्णत्ताओ[1], तंजहा—
पंडुसिला, पंडुकंबलसिला, रत्तसिला, रत्तकंबलसिलेत्ति ।

[२] प्र०—कहि ण भते ! पंडगवणे पंडुसिला णामं सिला पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! मंदरचूलिआए पुरत्थिमेण पडगवणपुरत्थिमपेरंते
एत्थ णं पडगवणे पंडुसिला णाम सिला पण्णत्ता ।
उत्तर-दाहिणायया, पाईण-पडीणविच्छि(त्थि)ण्णा,
अद्धचदसठाणसठिया ।
पंचजोअणसयाइं आयामेणं,
अड्ढाइज्जाइ जोअणसयाइं विक्खंभेण,
चत्तारि जोअणाइं बाहल्लेणं,
सव्वकणगामई अच्छा ।
वेइआ-वणसंडेण सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता वण्णओ ।
तीसे णं पंडुसिलाए चउद्दिसिं चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता-जाव-तोरणा । वण्णओ ।
तीसे णं पंडुसिलाए उप्पिं बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते-जाव-देवा आसयति ।
तस्स णं बहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए उत्तर-दाहिणेणं
एत्थ णं दुवे सीहासणा पण्णत्ता,
पंचधणुसयाइं आयाम-विक्खंभेण,
अड्ढाइज्जाइं धणुसयाइं बाहल्लेण ।
सीहासणवण्णओ भाणिअव्वो विजयदूसवज्जो त्ति ।
तत्थ ण जे से उत्तरिल्ले सीहासणे

१. ठा० ४ उ० २ सूत्र० ३०२ पृ० २१२

तत्थ ण बहूहिं भवणवइ-वाणमतर-जोइसिय-वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि अ कच्छाइया तित्थयरा अभिसिच्चति ।

तत्थ ण जे से दाहिणिल्ले सीहासणे

तत्थ ण बहूहि भवण-जाव वेमाणिएहिं देवेहिं देवीहि अ वच्छाईया तित्थयरा अभिसिच्चति ।

[२४][१] प्र०—भगवन् ! पडकवन मे अभिषेक-शिलाए कितनी हैं ?

उ०—गौतम ! चार अभिषेक-शिलाए हैं, यथा—

(१) पाण्डुशिला (२) पाण्डुकवलशिला (३) रक्तशिला (४) रक्तकवलशिला ।

[२] प्र०—भगवन् ! पडकवन मे पाण्डुशिला कहाँ है ?

उ०—गौतम ! मदरचूला से पूर्व मे और पडकवन के पूर्वान्त मे पडकवनस्थित पाडुशिला है। यह उत्तर-दक्षिण मे लम्बी, पूर्व-पश्चिम मे चौडी, अर्द्धचन्द्राकार, पांच सौ योजन लम्बी, अढाई सौ योजन चौडी, चार योजन मोटी, सर्वकनकमयी, स्वच्छ एव वेदिका तथा वनखण्ड से सब ओर से घिरी हुई है ।

इस पाडुशिला की चारो दिशाओ मे चार प्रतिरूप त्रिसोपान (पक्तियाँ) है,—यावत्-तोरण पर्यन्त सब वर्णन समझ लेना चाहिए ।

इस पाण्डुशिला पर अतिशय सम और रमणीय भूभाग है जहाँ देव बैठते हैं, आदि ।

इस सम एव रमणीय भूमाग के बीच मे उत्तर-दक्षिण की ओर दो सिंहासन हैं । ये पाँच सौ धनुप लम्बे-चौडे और अढाई सौ धनुप मोटे है । यहाँ सिंहासन का वर्णन कह लेना चाहिए किन्तु विजयदूष्य का कथन नही करना चाहिए ।

इनमे से जो उत्तर की ओर का सिंहासन है वहा अनेक भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देव-देवियाँ कच्छ आदि (आठ विजयो) के तीर्थकरो का अभिषेक करते हैं ।

इनमे जो दक्षिण की ओर का सिंहासन है वहाँ भवनपति-यावत्-वैमानिक देव वत्स आदि (आठ विजयो) के तीर्थकरो का अभिषेक करते हैं ।

पाण्डुकंबलशिला

[२५][१] प्र०—कहि ण भते ! पडगवणे पडुकवलासिलाणाम सिला पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! मदरचूलिआए दक्खिणेण, पडगवणदाहिणपेरते

एत्थ ण पडगवणे पडुकवलसिलाणाम सिला पण्णत्ता ।

पाईण-पडीणाययया, उत्तर-दाहिणवित्यिन्ना ।

एव त चेव पमाण वत्तव्वया य भाणिअव्वा—जाव—तस्स ण बहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए

एत्थ ण मह एगे सीहासणे पण्णत्ते ।

त चेव सीहासणप्पमाण ।

तत्थ ण बहूहि भवण—जाव—भारहगा तित्थयरा अहिसिच्चति ।

[२५][१] प्र०—भगवन् ! पडकवन मे पाण्डुकम्बल नामक शिला कहा है ?

उ०—गौतम ! मेरु पर्वत के दक्षिण मे एव पण्डक वन के दक्षिणी चरमान्त मे पडकवनस्थित पाण्डुकवल नामक शिला है । यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बी और उत्तर-दक्षिण मे चौडी है । इसका सम्पूर्ण प्रमाण पूर्ववत् समझना चाहिए—यावत्—इसके समतल रमणीय भूमिभाग के बीचो बीच एक विशाल सिंहासन है । इस सिंहासन का प्रमाण वही (पूर्वोक्त) है । यहा अनेक भवनपति—यावत्—भरत क्षेत्र के तीर्थंकरो का अभिषेक करते हैं ।

रक्तशिला

[२६][१] प्र०—कहि णं भंते ! पंडगवणे रत्तसिलाणामं सिला पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! मदरचूलिआए पच्चत्थिमेण पंडगवणपच्चत्थिमपेरंते
एत्थ णं पडगवणे रत्तसिलाणाम सिला पण्णत्ता ।
उत्तर-दाहिणायया, पाईण-पडीणविच्छिन्ना—जाव—
त चेव पमाणं, सव्वतवणिज्जमई, अच्छा,
उत्तर-दाहिणेण एत्थ ण दुवे सीहासणा पण्णत्ता ।
तत्थ ण जे से दाहिणिल्ले सीहासणे
तत्थ ण बहूहिं भवण—जाव— पम्हाइआ तित्थयरा अहिसिच्चंति ।
तत्थ ण जे से उत्तरिल्ले सीहासणे
तत्थ ण बहूहिं भवण—जाव—वप्पाइआ तित्थयरा अहिसिच्चंति ।

[२६][१] प्र०—भगवन् ! पडकवन मे रक्तशिला कहा है ?

उ०—गौतम ! मेरु पर्वत के पश्चिम मे एव पडकवन के पश्चिमी चरमान्त मे पडकवनस्थित रक्तशिला नामक शिला है । यह उत्तर-दक्षिण की ओर लम्बी और पूर्व-पश्चिम मे चौडी है ।—यावत्—इसका प्रमाण भी वही है । यह सर्वात्मना तपनीय स्वर्णमयी और स्वच्छ है ।
इसके उत्तर-दक्षिण मे दो सिहासन हैं । इनमे से जो दक्षिण का सिंहासन है वहा अनेक भवनपति आदि पद्मादि (आठ विजयो) के तीर्थंकरो का अभिषेक करते हैं । इनमे जो उत्तर का सिंहासन है वहा अनेक भवनपति आदि वप्र आदि (आठ विजयो) के तीर्थंकरो का अभिषेक करते है ।

रक्तकंबलशिला

[२७][१] प्र०—कहि ण भंते ! पंडगवणे रत्तकंबलसिला णाम सिला पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! मदरचूलिआए उत्तरेणं, पडगवणउत्तरचरिमते एत्थ णं पडगवणे रत्तकंबलसिला णाम सिला पण्णत्ता ।
पाईण-पडीणायया, उदीण-दाहिणविच्छिन्ना,
सव्वतवणिज्जमई, अच्छा—जाव—
मज्झदेसभाए सीहासणं ।
तत्थ णं बहूहिं भवणवइ—जाव—देवेहिं देवीहि य एरावयगा तित्थयरा अहिसिच्चंति ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०७ पृ ३७२

[२७][१] प्र०—भगवन् ! पडकवन मे रक्तकबल नामक शिला कहा है ?

उ०—गौतम ! मेरु पर्वत के उत्तर मे एव पडकवन के उत्तरीय चरमान्त मे पडकवन स्थित रक्तकंवल-शिला नामक शिला है । यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बी, उत्तर-दक्षिण मे चौडी, सर्वसुवर्णमय एव स्वच्छ है,—यावत्—इसके मध्य मे सिंहासन है । यहा अनेक भवनपति आदि देव-देविया ऐरावत (वर्ष) के तीर्थंकरो का अभिषेक करते हैं ।

मंदर पर्वत के काण्ड

[२८][१] प्र०—मंदरस्स णं भंते ! पव्वयस्स कइ कंडा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! तओ कंडा पण्णत्ता, तंजहा—
हिट्ठिल्ले कडे, मज्झिल्ले कंडे, उवरिल्ले कडे ।
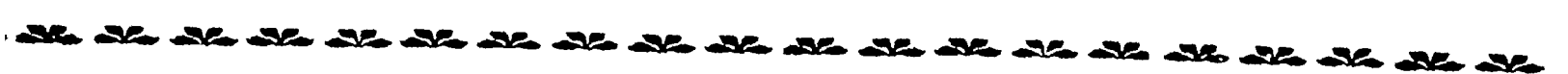
[२] प्र०—मंदरस्स ण भंते ! पव्वयस्स हिट्ठिल्ले कंडे कतिविहे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—पुढवी १, उवले २, वइरे ३, सक्करा ४।

[३] प्र०—मज्झिमिल्ले ण भंते ! कंडे कतिविहे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा—
अंके १, फलिहे २, जायरूवे ३, रयए ४।

[४] प्र०—उवरिल्ले कंडे कतिविहे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! एगागारे पण्णत्ते—सव्वजंवूणयामए।

[५] प्र०—मंदरस्स ण भंते ! पव्वयस्स हेट्ठिल्ले कंडे केवइअं बाहल्लेण पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! एगं जोअणसहस्सं बाहल्लेण पण्णत्ते[1]।

[६] प्र०—मज्झिमिल्ले कंडे पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! तेवट्ठिं जोअणसहस्साइं बाहल्लेण पण्णत्ते[2]।

[७] प्र०—उवरिल्ले पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! छत्तीसं जोअणसहस्साइं बाहल्लेण पण्णत्ते[3]।
एवामेव सपुव्वावरेण मंदरे पव्वए [4]एगं जोयणसयसहस्सं सव्वग्गेण पण्णत्ते।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०८

[२८][१] प्र०—भगवन् ! मेरुपर्वत पर कितने काण्ड है ?
उ०—गौतम ! तीन काण्ड हैं, यथा–(१) निचला काण्ड (२) मझला काण्ड और (२) ऊपरला काण्ड।

[२] प्र०—भगवन् ! मेरुपर्वत का निचला काण्ड कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! चार प्रकार का है—पृथ्वी, उपल (पाषाण), वज्र और शर्करा।

[३] प्र०—भगवन् ! मझला काण्ड कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! चार प्रकार का है, यथा–अंक, स्फटिक, जातरूप (स्वर्ण) और रजत।

[४] प्र०—भगवन् ! ऊपरला काण्ड कितने प्रकार का है ?
उ०—गौतम ! एक ही प्रकार का है अर्थात् पूर्णरूपेण जाम्बूनदमय है।

[५] प्र०—भगवन् ! मेरुपर्वत का अध काण्ड कितना ऊंचा है ?
उ०—गौतम ! एक हजार योजन ऊंचा है।

[६] प्र०—मध्यकाण्ड की ऊंचाई ?
उ०—गौतम ! त्रेसठ हजार योजन है।

[७] प्र०—ऊपरले काण्ड की ऊंचाई ?
उ०—गौतम ! छत्तीस हजार योजन है।
इस प्रकार सब मिलाकर मेरुपर्वत की ऊंचाई एक लाख योजन की है।

---

१. ठा. १०, सूत्र ७१९ पृ० ४५३
२. मंदरस्स णं पव्वयस्स पढमे कंडे एगसट्ठिजोयणसहस्साइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ते। —सम० ६१ सूत्र २
३. अत्थस्स णं पव्वयरण्णो बितिए कंडे अट्ठतीसं जोयणसहस्साइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ते। सम० ३८ सूत्र ३
४ ठा १०, सूत्र ७१९ पृ० ४५३

मंदरपर्वत के नाम

[२६][१] प्र०—मदरस्स ण भंते पव्वयस्स कति णामधेज्जा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! सोलस णामधेज्जा पण्णत्ता, [1] तजहा-गाहाओ—

(१) मंदर (२) मेरु (३) मणोरम (४) सुदसण (५) सयंपभे य (६) गिरिराया ।
(७) रयणोच्चय (८) सिलोच्चय (६) मज्झे लोगस्स (१०) णाभी य ॥१॥
(११) अच्छे अ (१२) सूरियावत्ते, (१३) सूरिआवरणेति आ ।
(१४) उत्तमे अ (१५) दिसादी अ (१६) वडेंसेति अ सोलसे ॥२॥

[२] प्र०—से केणट्ठे ण भते ! एवं वुच्चइ—मदरे पव्वए २ ?

उ०—गोअमा ! मदरे पव्वए मदरे णाम देवे परिवसइ महिड्ढिए—जाव—पलिओवमट्ठिइए ।
से तेणट्ठे ण गोअमा ! एव वुच्चइ—मदरे पव्वए २ । अदुत्तर त चेवत्ति ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०६ पृ ३७५

[२६][१] प्र०—भगवन् ! मेरुपर्वत के कितने नाम है ?

उ०—गौतम ! सोलह नाम है, यथा—

(१) मन्दर (२) मेरु (३) मनोरम (४) सुदर्शन (५) स्वयप्रभ (६) गिरिराज (७) रत्नोच्चय (८) शिलोच्चय (६) लोकमध्य (१०) लोकनाभि (११) अच्छ (१२) सूर्यावर्त्त (१३) सूर्या-वरण (१४) उत्तम (१५) दिशादि (१६) अवतसक ।

[२] प्र०—भगवन् ! इसे मदर पर्वत क्यो कहते है ?

उ०—गौतम ! मन्दर पर्वत पर मन्दर नामक देव निवास करता है जो महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला है । इस कारण गौतम ! मन्दर पर्वत, मन्दर पर्वत कहलाता है । अथवा वही पूर्वोक्त, अर्थात् यह नाम शाश्वत है, इत्यादि ।

कच्छविजय

[३०][१] प्र०—कहि णं भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे कच्छे णामं विजए पण्णत्ते [2] ?

उ०—गोअमा ! सीआए महाणईए उत्तरेणं,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेण,
चित्तकूडस्स ववखारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं,
मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ णं जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे कच्छे णाम विजए पण्णत्ते ।
उत्तर-दाहिणायए, पाईण-पडीणविच्छिण्णे,
पलिअकसंठाणसंठिए
गगा-सिंधूहि महाणईहि वेयड्ढे ण य पव्वएणं छब्भागपविभत्ते,
सोलस जोयणसहस्साइं पच य वाणउए जोअणसए दोण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणं,
दो जोअणसहस्साइं दोण्णि अ तेरसुत्तरे जोअणसए किंचिविसेसूणे विक्खंभेणति ।

१—सम. १६, सूत्र ३.
२—(क) सम. ३४, सूत्र २
(ख) ठा. ८ सूत्र ६३७ पृ० ४१३

कच्छस्स ण विजयस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण वेअड्ढे णाम पव्वए पण्णत्ते,
जे ण कच्छ विजयं दुहा विभयमाणे-विभयमाणे चिट्ठइ, तजहा—
दाहिणद्धकच्छ च उत्तरद्धकच्छ चेति ।

[३०][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष मे कच्छ नामक विजय कहाँ है ?
उ०—गौतम ! सीता महानदी से उत्तर मे, नीलवन्त वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत से पश्चिम मे एव माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत से पूर्व मे जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे कच्छ नामक विजय है । यह उत्तर-दक्षिण मे लम्बा, पूर्व-पश्चिम मे चौडा एव पलग के आकार का है । गगा और सिन्धु महानदियो तथा वैताढ्य पर्वत से यह छह भागो मे विभक्त है । इसकी लम्बाई १६५९२ योजन $\frac{2}{19}$ और चौडाई २२१३ योजन से कुछ कम है ।
कच्छ विजय के मध्य मे वैताढ्य नामक पर्वत है जो इसे दो भागो मे विभक्त करता है, यथा—दक्षिणार्धकच्छ और उत्तरार्धकच्छ ।

दक्षिणार्ध कच्छ

[३१][१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दाहिणद्धकच्छे णाम विजए पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! वेयड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेण,
सीआए महाणईए उत्तरेण,
चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेण,
मालवंतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे,
दाहिणड्ढकच्छे णाम विजए पण्णत्ते ।
उत्तर-दाहिणायए, पाईण-पडीणविच्छिन्ने,
अट्ठ जोअणसहस्साइ दोण्णि अ एगसत्तरे जोअणसए एक्क च एगूणवीसइभाग जोअणस्स आयामेण,
दो जोअणसहस्साइ दोण्णि अ तेरसुत्तरे जोअणसए किंचिविसेसूणे विक्खभेण,
पलिअकसठाणसठिए ।

[२] प्र०—दाहिणद्धकच्छस्स ण भते ! विजयस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, तजहा—जाव—कत्तिमेहिं चेव अकत्तिमेहिं चेव ।

[३] प्र०—दाहिणद्धकच्छे ण भते ! विजए मणुआण केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! तेसि णं मणुआण छव्विहे संघयणे—जाव—सव्वदुक्खाणमत करेंति ।

[३१][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष मे दक्षिणार्ध कच्छ नामक विजय कहा है ?
उ०—गौतम ! वैताढ्य पर्वत से दक्षिण मे, सीता महानदी से उत्तर मे, चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत से पश्चिम मे एव माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत से पूर्व मे जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष मे दक्षिणार्ध कच्छ नामक विजय है । यह उत्तर–दक्षिण मे लम्बा, पूर्व-पश्चिम मे चौडा है । ८२७१ $\frac{1}{19}$ योजन लम्बा है, २२१३ योजन से कुछ कम चौडा है और पलग के आकार का है ।

[२] प्र०—भगवन् ! दक्षिणार्धकच्छ विजय का स्वरूप कैसा है ?
उ०—गौतम ! यह अत्यन्त सम एव रमणीय भूभाग वाला है—यावत् कृत्रिम तथा अकृत्रिम (मणि-तृणो) से (सुशोभित है) ।

[३] प्र०—भगवन् ! दक्षिणार्ध कच्छ विजय के मनुष्यो का स्वरूप कैसा है ?
उ०—गौतम ! यहाँ के मनुष्य छह प्रकार के सहनन वाले—यावत्—सर्व दु खो का अन्त करने वाले हैं ।

कच्छविजय का वैताढय पर्वत

[३२][१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे कच्छे विजए वेअड्ढे णामं पव्वए ?

उ०—गोअमा ! दाहिणड्ढकच्छविजयस्स उत्तरेण,
उत्तरद्धकच्छस्स दाहिणेण,
चित्तकूडस्स पच्चत्थिमेणं,
मालवतस्सवक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ णं कच्छे विजए वेअड्ढे णाम पव्वए पण्णत्ते, तंजहा—
पाडीण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविच्छिण्णे,
दुहा वक्खारपव्वए पुट्ठे,
पुरत्थिमिल्लाए कोडिए–जाव–दोहिवि पुट्ठे,
भरहवेअड्ढसरिसए ।
णवर दो बाहाओ जीवा, धणुपट्ठ च ण कायव्व ।
विजयविक्खभसरिसे आयामेण,
विक्खभो उच्चत्त उव्वेहो तहेव च ।
विज्जाहरआभिओगसेढीओ तहेव ।
णवरं पणपण्ण—पणपण्णं विज्जाहरणगरावासा पण्णत्ता ।
आभिओगसेढीए उत्तरिल्लाओ सेढीओ ।
सीआए ईसाणस्स, सेसाओ सक्कस्स त्ति ।
गाहा—
कूडा सिद्धे १, कच्छे २, खंडग ३, माणी ४, वेअड्ढ ५, पुण्ण ६, तिमिसगुहा ७ ।
कच्छे ८, वेसमणे ९, वेअड्ढे होंति [1]कूडाइ ॥१॥

[३२][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष के कच्छ विजय मे वैताढच नामक पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! दक्षिणार्ध कच्छ विजय के उत्तर मे, उत्तरार्ध कच्छ (विजय) के दक्षिण मे, चित्रकूट के पश्चिम मे एव माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत के पूर्व मे कच्छ विजयस्थित वैताढच नामक पर्वत है । यह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा एव दो ओर से वक्षस्कार पर्वत से स्पृष्ट है । पूर्व की ओर से पूर्वी वक्षस्कार एव पश्चिम की ओर से पश्चिमी वक्षस्कार से स्पृष्ट है । यह भरत-वर्ष के वैताढच के समान है । अन्तर इतना है कि इसके दो भुजाएं व जीवा है किन्तु धनुपृष्ठ नही है । यह विजय के समान ही लम्बा, चौडा, ऊंचा और गहरा है । इस पर भी उसी प्रकार विद्याधरो एव आभियोगिक देवो की श्रेणिया हैं । विशेषता यह है कि यहा विद्याधरो के पचपन-पचपन नगरावास हैं । आभियोगिक श्रेणियो मे से उत्तर की श्रेणियो का स्वामी ईशानेन्द्र तथा शेष का (स्वामी) शक्रेन्द्र है । (इस पर) कूट (इस प्रकार) हैं—

गाथार्थ—
(१) सिद्धायतन (२) दक्षिणार्धकच्छ (३) खण्ड (प्रपात) (४) माणि (भद्र) (५) वैताढच (६) पूर्ण (भद्र) (७) तमिस्रगुफा (८) (उत्तरार्ध) कच्छ और (९) वैश्रमण । वैताढच पर ये कूट है ।

1—ठा. ९, सूत्र ६८९ पृ. ४३०

उत्तरार्धकच्छ

[३३][१] प्र०—कहि ण भते ! जवुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे उत्तरद्धकच्छे णाम विजए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! वेअड्डस्स पव्वयस्स उत्तरेण,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,
मालवतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेण,
चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेण,
एत्थ ण जवुद्दीवे दीवे–जाव–सिज्झति ।
तहेव णेअव्व सव्व ।

[३३][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित महाविदेहवर्ष मे उत्तरार्धकच्छ नामक विजय कहा है ?

उ०—गौतम ! वैताढ्य पर्वत से उत्तर मे, नीलवन्त वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत से पूर्व मे एव चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत से पश्चिम मे जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष मे उत्तरार्धकच्छ नामक विजय है । –यावत्–(वहा के कोई–कोई मनुष्य) सिद्ध होते हैं । इस प्रकार सब कथन पूर्ववत् जान लेना चाहिए ।

उत्तरार्ध कच्छ का सिन्धु कूट

[३४][१] प्र०—कहि ण भते ! जवुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे उत्तरड्ढकच्छे विजए सिंधुकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! मालवतस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेण,
उसभकूडस्स पच्चत्थिमेण,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले नितवे,
एत्थ ण जवुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे उत्तरड्ढकच्छविजए सिंधुकूडे णाम कूडे पण्णत्ते ।
सट्ठि जोअणाणि आयाम-विक्खभेण—जाव—भवण अट्ठो । रायहाणी अ णेअव्वा ।
भरहसिंधुकुडसरिस सव्व णेअव्व—जाव—
तस्स णं सिंधुकुडस्स दाहिणिल्लेण तोरणेण सिंधुमहाणई पवूढा समाणी
उत्तरड्ढकच्छविजय एज्जमाणी-एज्जमाणी,
सत्तहि सलिलासहस्सेहि आपूरेमाणी-आपूरेमाणी,
अहे तिमिसगुहाए वेअड्डपव्वय दालयित्ता दाहिणकच्छविजय एज्जमाणी-एज्जमाणी,
चोद्दसहि सलिलासहस्सेहि समग्गा दाहिणेण सीय महाणइ समप्पेइ ।
सिंधुमहाणई पवहे अ मूले अ भरहसिंधुसरिसा पमाणेण—जाव—दोहि वणसडेहि सपरिक्खित्ता ।

[३४][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष के उत्तरार्धकच्छ विजय मे सिन्धुकुड नामक कुड कहाँ है ?

उ०—गौतम ! माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत के पूर्व मे, ऋषभकूट के पश्चिम मे तथा नीलवन्त वर्षधर पर्वत के दक्षिणी नितम्ब मे जम्बूद्वीप के महाविदेह क्षेत्र के उत्तरार्धकच्छ विजय मे सिन्धुकुड नामक कुड है । यह आठ योजन लम्बा-चौडा है—यावत्—भवन तथा राजधानी पर्यन्त पूर्ववत् समझ लेना चाहिए । भरत क्षेत्र के सिन्धुकुड के समान सब वर्णन जानना चाहिए—यावत्—इस सिन्धुकुड के दक्षिणी द्वार से सिन्धु महानदी निकल कर उत्तरार्ध कच्छविजय मे आती हुई, सात हज़ार नदियो

से आपूरित होती हुई तिमिस्रगुफा के नीचे वैताढ्य पर्वत को भेद कर दक्षिणार्ध कच्छविजय मे होती हुई, चौदह हजार नदियो सहित दक्षिण मे सीता महानदी मे मिलती है। सिन्धु महानदी का प्रवाह व गिरते समय के मुख का प्रमाण भरतक्षेत्र की सिन्धु नदी के समान है—यावत्—यह दो वनखण्डो से घिरी हुई है।

ऋषभकूट पर्वत

[३५][१] प्र०—कहि णं भते ! उत्तरड्ढकच्छविजए उसभकूडे णामं पव्वए पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! सिंधुकु डस्स पुरत्थिमेण,
गगाकु डस्स पच्चत्थिमेण,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणे नितंबे,
एत्थ ण उत्तरड्ढकच्छविजए उसहकूडे णाम पव्वए पण्णत्ते।
अट्ठ जोयणाइं उड्ढ उच्चत्तेण,
त चेव पमाण—जाव—रायहाणी।
से णवर उत्तरेण भाणिअव्वा।

[३५][१] प्र०—भगवन् ! उत्तरार्ध कच्छ विजय मे ऋषभकूट नामक पर्वत कहाँ है ?
उ०—गौतम ! सिन्धुकुड के पूर्व मे, गगाकुड के पश्चिम मे तथा नीलवन्त नामक वर्षधर पर्वत के दक्षिणी नितम्व मे उत्तरार्ध कच्छ विजय मे ऋषभकूट नामक पर्वत है।
यह आठ योजन ऊँचा है, इत्यादि प्रमाण उसी प्रकार है। अन्तर यह है कि राजधानी उत्तर मे है।

गंगा कुंड

[३६][१] प्र०—कहि णं भते ! उत्तरड्ढकच्छे विजए गगाकुंडे णामं कुंडे पण्णत्ते ?
उ०—गोअमा ! चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं,
उसहकूडस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णितबे,
एत्थ णं उत्तरड्ढकच्छे गंगाकुंडे णामं कुडे पण्णत्ते।
सट्ठि जोअणाइं आयाम-विक्खभेणं,
तहेव जहा सिंध—जाव—वणसडेण य संपरिक्खित्ता।

[३६][१] प्र०—भगवन् ! उत्तरार्व कच्छ विजय मे गगाकुंड नामक कुड कहाँ है ?
उ०—गौतम ! चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम मे, ऋषभकूट पर्वत के पूर्व मे तथा नीलवन्त वर्षधर पर्वत के दक्षिणी नितम्ब मे, उत्तरार्ध कच्छ मे गगाकुड नामक कुड है।
यह साठ योजन लम्बा-चौडा है, इत्यादि वर्णन सिन्धु कुड के समान है।—यावत्—वनखण्ड से घिरा है।

'कच्छ' संज्ञा का कारण

[३७][१] प्र०—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चई-कच्छे विजए कच्छे विजए ?
उ०—गोयमा ! कच्छे विजए वेअड्ढस्स पव्वयस्स दाहिणेणं,
सीआए महाणईए उत्तरेण,
गंगाए महाणईए पच्चत्थिमेणं,
सिंधूए महाणईए पुरत्थिमेणं,
दाहिणड्ढकच्छविजयस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण खेमा णामं रायहाणी पण्णत्ता।

विणीआरायहाणीसरिसा भाणिअव्वा।
तत्थ ण खेमाए रायहाणीए कच्छे णाम राया समुप्पज्जइ।
महयाहिमवत—जाव—सव्व भरहोअवण भाणियव्व निक्खमणवज्ज,
सेस सव्व भाणिअव्व—जाव—भु जए माणुस्सए सुहे।
कच्छणामधेज्जे अ कच्छे इत्थ देवे महिड्ढिए—जाव—पलिओवमट्ठिइए परिवसइ।
एएणट्ठे ण गोअमा! एव वुच्चइ—
कच्छे विजए कच्छे विजए—जाव—णिच्चे।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ९३ पृ ३४१

[३७][१] प्र०—भगवन्! कच्छ विजय को कच्छ विजय क्यो कहते हैं?

उ०—गौतम! कच्छ विजय मे वैताढ्य पर्वत से दक्षिण मे, सीता महानदी से उत्तर मे, गगा महानदी से पश्चिम मे तथा सिन्धु महानदी से पूर्व मे दक्षिणार्ध कच्छ विजय के मध्य मे क्षेमा नामक राजधानी है। इसका वर्णन विनीता राजधानी के समान समझ लेना चाहिए।

क्षेमा राजधानी मे कच्छ नामक राजा उत्पन्न होता है। वह महाहिमवन्त पर्वत के समान होता है—यावत्—निष्क्रमण (दीक्षा) को छोडकर उसका सब वर्णन भरत (चक्रवर्ती) के समान समझना चाहिए।—यावत्—वह मानवीय सुखो का उपभोग करता हुआ रहता है।

यहाँ कच्छ नामक महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला देव रहता है। इस कारण गौतम! कच्छ विजय को कच्छ विजय कहते हैं।—यावत्—(यह नाम) नित्य है।

चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत

[३८][१] प्र०—कहि ण भते! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे चित्तकूडे णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते[1]?

उ०—गोअमा! सीआए महाणईए उत्तरेण,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,
कच्छविजयस्स पुरत्थिमेण,
सुकच्छविजयस्स पच्चत्थिमेण,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे चित्तकूडे णाम वक्खारपव्वए पण्णत्ते।
उत्तर-दाहिणायए, पाईण-पडीणविच्छिण्णे,
सोलसजोअणसहस्साइ पच य बाणउए जोअणसए दुण्णि य एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेण,
पच जोअणसयाइ विक्खमेण,
नीलवतवासहरपव्वयतेण चत्तारि जोअणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण,
चत्तारि गाउअसयाइ उव्वेहेण,
तयणतर च ण मायाए-मायाए उस्सेहोव्वेहपरिवुड्ढीए परिवड्ढमाणे-परिवड्ढमाणे
सीआमहाणई-अतेण पच जोअणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण,
पच गाउअसयाइ उव्वेहेण,[2]
अस्सखधसठाणसठिए, सव्वरयणामए, अच्छे सण्हे—जाव—पडिरूवे,
उभओ पासि दोहि पउमवरवेइयाहि दोहि अ वणसडेहि सपरिक्खित्ते।
वण्णओ दुण्ह वि।
चित्तकूडस्स ण वक्खारपव्वयस्स उप्पि बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
—जाव—आसयति।

१—ठा ४ उ २ सूत्र ३०२ पृ २१२
२—सम ११३ सूत्र ३

[३८][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप स्थित महाविदेह वर्ष मे चित्रकूट नामक वक्षस्कार पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! सीता महानदी के उत्तर मे, नीलवन्त वर्षधर पर्वत के दक्षिण मे, कच्छ विजय के पूर्व मे तथा सुकच्छ विजय के पश्चिम मे जम्बूद्वीप स्थित महाविदेह क्षेत्र मे चित्रकूट नामक वक्षस्कार पर्वत है।

यह उत्तर-दक्षिण मे लम्बा, पूर्व-पश्चिम मे चौडा, १६५९२ $\frac{२}{१९}$ योजन लम्बा और ५०० योजन चौडा है। नीलवन्त वर्षधर पर्वत के पास इसकी ऊँचाई चार सौ योजन तथा गहराई चार सौ कोस की है। तदनन्तर अनुक्रम से ऊँचाई और गहराई बढती बढती सीता महानदी के पास पाच सौ योजन की ऊँचाई व पाच सौ कोस की गहराई हो जाती है।

यह (वक्षस्कार पर्वत) अश्व के स्कध के आकार का, सर्वात्मना रत्नमय, स्वच्छ, चिकना—यावत्—प्रतिरूप है।

इसके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाए और दो वनखण्ड हैं। इन दोनो का यहाँ वर्णन समझ लेना चाहिए।

चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के ऊपर अति सम एव रमणीय भूमिभाग है, जहां (देव-देवियाँ क्रीड़ा करते हैं)—यावत्—बैठते है।

चित्रकूट के कूट

[३९][१] प्र०—चित्तकूडे ण भंते ! वक्खारपव्वए कति कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा—

सिद्धाययणकूडे चित्तकूडे कच्छकूडे सुकच्छकूडे।

समा उत्तर-दाहिणेण परुप्परं ति।

पढम सीआए उत्तरेण, चउत्थए नीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,

एत्थ णं चित्तकूडे णाम देवे महिड्ढीए—जाव—रायहाणी सेत्ति।

—जम्बु, वक्ष. ४ सूत्र ९४, पृ०३४४

[३९][१] प्र०—भगवन् ! चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत पर कितने कूट हैं ?

उ०—गौतम ! चार कूट है, यथा—सिद्धायतनकूट, चित्रकूट, कच्छकूट और सुकच्छकूट। (चारो कूट) उत्तर-दक्षिण मे सम है। प्रथम कूट शीता (महानदी) के उत्तर मे तथा चतुर्थ (कूट) नीलवत वर्षधर पर्वत के दक्षिण मे है।

यहा चित्रकूट नामक महर्द्धिक देव रहता है,—यावत्—राजधानी पर्यन्त सब वर्णन समझ लेना चाहिए।

सुकच्छ विजय

[४०][१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सुकच्छे णाम विजए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! सीआए महाणईए उत्तरेण,

णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,

गाहावईए महाणईए पच्चत्थिमेणं,

चित्तकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेण,

एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सुकच्छे णाम विजए पण्णत्ते।

उत्तर-दाहिणायए,

जहेव कच्छे विजए तहेव सुकच्छे विजए।

णवरं खेमपुरा रायहाणी, सुकच्छे राया समुप्पज्जइ, तहेव सव्वं।

[४०][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष मे सुकच्छ नामक राजधानी कहा है ?

उ०—गौतम ! सीता महानदी के उत्तर मे, नीलवन्त वर्षधर पर्वत के दक्षिण मे, ग्राहावती महानदी के पश्चिम मे एव चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत के पूर्व मे जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह क्षेत्र मे सुकच्छ नामक विजय है ।

यह उत्तर–दक्षिण मे लम्बा है । जैसा कच्छ विजय का वर्णन किया, वैसा ही सुकच्छ विजय का समझना चाहिए । विशेषता यह है कि यहा की राजधानी खेमपुरा है तथा यहा सुकच्छ नामक राजा होता है ।

ग्राहावती कुण्ड

[४१][१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे गाहावइकुडे णाम कुडे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सुकच्छविजयस्स पुरत्थिमेण,
महाकच्छस्स विजयस्स पच्चत्थिमेण,
णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणिल्ले णितवे,
एत्थ ण जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे गाहावइकुडे णाम कुडे पण्णत्ते ।
जहेव रोहिअसाकुडे तहेव—जाव—गाहावइदीवे भवणे ।
तस्स ण गाहावइस्स कुडस्स दाहिणिल्लेण तोरणेण गाहावई महाणई पवूढा समाणी
सुकच्छ-महाकच्छविजए दुहा विभयमाणी २
अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा दाहिणेण सीअ महाणइ समप्पेइ ।
गाहावई ण महाणई पवहे अ मुहे अ सव्वत्थ समा पणवीस जोअणसय विक्खभेण,
अड्ढाइज्जाइ जोअणाइ उव्वेहेण,
उभओ पासि दोहि अ पउमवरवेइयाहि दोहि अ वणसडेहि—जाव—दुण्ह वि वण्णओ इति ।

[४१][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह क्षेत्र मे ग्राहावती कुड कहा है ?

उ०—गौतम ! सुकच्छ विजय के पूर्व मे, महाकच्छ विजय के पश्चिम मे तथा नीलवन्त वर्षधर पर्वत के दक्षिणी नितम्ब के निकट जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष मे ग्राहावती नामक कुड है । इसका स्वरूप रोहिताशा कुड के समान—यावत्—ग्राहावती द्वीप तथा भवन पर्यन्त समझ लेना चाहिए ।

इस ग्राहावती कुड के दक्षिणी तोरण से ग्राहावती महानदी निकल कर सुकच्छ और महाकच्छ विजयो को दो भागो मे विभक्त करती हुई, अट्ठाईस हजार नदियो के साथ दक्षिण दिशा मे शीता महानदी मे मिलती है ।

ग्राहावती नदी का प्रारभिक प्रवाह और मुख-मिलने के स्थान अर्थात् सगम पर सर्वत्र समान है । यह एक सौ पच्चीस योजन चौडी एव अढाई योजन गहरी है । इस (कुड) के दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाए और दो वनखण्ड हैं । यहाँ दोनो का कथन समझ लेना चाहिए ।

महाकच्छ विजय

[४२][१] प्र०—कहि ण भते ! महाविदेहे वासे महाकच्छे णाम विजए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णीलवतस्स वासहरपव्वयस्स दाहिणेण,
सीआए महाणईए उत्तरेण,
पम्हकूडस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेण,
गाहावईए महाणईए पुरत्थिमेण,
एत्थ ण महाविदेहे वासे महाकच्छे णाम विजए पण्णत्ते ।
सेस जहा कच्छविजयस्स—जाव—
महाकच्छे इत्थ देवे महिड्ढीए, अट्ठो अ भाणिअव्वो ।

[४२][१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह क्षेत्र मे महाकच्छ नामक विजय कहाँ है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त वर्षधर पर्वत के दक्षिण मे, शीता महानदी के उत्तर मे ब्रह्मकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम मे एव ग्राहावती महानदी के पूर्व मे महाविदेह वर्ष स्थित महाकच्छ नामक विजय है। शेष वर्णन कच्छ विजय के समान है।—यावत्—यहाँ महाकच्छ नामक महर्द्धिक देव रहता है। इसका वर्णन पूर्ववत् कर लेना चाहिए।

ब्रह्मकूट वक्षस्कार पर्वत

[४३][१] प्र०—कहि ण भते ! महाविदेहे वासे पम्हकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णीलवतस्स दक्खिणेणं,
सीआए महाणईए उत्तरेणं,
महाकच्छस्स पुरत्थिमेणं,
कच्छावईए पच्चत्थिमेण,
एत्थ णं महाविदेहे वासे पम्हकूडे णामं वक्खारपव्वए पण्णत्ते।
उत्तर–दाहिणायए, पाईण–पडीणविच्छिण्णे,
सेसं जहा चित्तकूडस्स—जाव—आसयति।
पम्हकूडे चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा—
सिद्धाययणकूडे, पम्हकूडे, महाकच्छकूडे, कच्छावइकूडे।
एवं—जाव—अट्ठो।
पम्हकूडे इत्थ देवे महिड्ढिए पलिओवमट्ठिइए परिवसइ, से तेणट्ठेण गोयमा ! एवं वुच्चइ०।

[४३][१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष मे ब्रह्मकूट नामक वक्षस्कार पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त (वर्षधर पर्वत) के दक्षिण मे, सीता महानदी के उत्तर मे, महाकच्छ (विजय) के पूर्व मे एव कच्छवती (विजय) के पश्चिम मे महाविदेह स्थित ब्रह्मकूट नामक वक्षस्कार पर्वत है। यह उत्तर–दक्षिण मे लम्बा और पूर्व–पश्चिम मे चौडा है। शेष वर्णन चित्रकूट (वक्षस्कार पर्वत) के समान समझना चाहिए—यावत्—यहा देवादि बैठते हैं।
ब्रह्मकूट पर्वत पर चार कूट हैं यथा—सिद्धायतनकूट, ब्रह्मकूट, महाकच्छकूट और कच्छवतीकूट। इनका वर्णन पूर्ववत् है। यहा ब्रह्मकूट नामक महर्द्धिक एव पल्योपम की स्थिति वाला देव रहता है। इस कारण गौतम ! इसे (ब्रह्मकूट) कहते हैं।

कच्छगावती विजय

[४४][१] प्र०—कहि ण भते ! महाविदेहे वासे कच्छगावती णामं विजए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णीलवतस्स दाहिणेणं,
सीआए महाणईए उत्तरेण,
दहावतीए महाणईए पच्चत्थिमेणं,
पम्हकूडस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ ण महाविदेहे वासे कच्छगावती णाम विजए पण्णत्ते।
उत्तर–दाहिणायए, पाईण-पडीणविच्छिण्णे,
सेस जहा कच्छस्स विजयस्स—जाव—
कच्छगावई अ इत्थ देवे।

[४४][१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष मे कच्छगावती नामक विजय कहा है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त पर्वत के दक्षिण मे, सीता महानदी के उत्तर मे, द्रहावती महानदी के पश्चिम मे एव ब्रह्मकूट (पर्वत) के पूर्व मे महाविदेहस्थित कच्छगावती विजय है।
यह उत्तर–दक्षिण मे लम्बा और पूर्व–पश्चिम के चौडा, है। शेष वर्णन कच्छ विजय के समान है। —यावत्—यहा कच्छगावती नामक देव है।

[२] प्र०—णलिणकूडे णं भंते ! कति कूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! चत्तारि कूडा पण्णत्ता, तंजहा—

सिद्धाययणकूडे, णलिणकूडे, आवत्तकूडे, मंगलावत्तकूडे ।

एए कूडा पचसइआ, रायहाणीओ उत्तरेणं ।

[४७][१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष मे नलिनकूट नामक वक्षस्कार पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त पर्वत से दक्षिण मे, सीता से उत्तर में, मगलावती विजय से पश्चिम मे तथा आवर्त्त विजय से पूर्व मे महाविदेह वर्ष मे नलिनकूट नामक वक्षस्कार पर्वत है ।

यह उत्तर–दक्षिण मे लम्बा और पूर्व–पश्चिम मे चौडा है । शेष वर्णन चित्रकूट के समान है—यावत्—(यहा देव–देविया) बैठते हैं ।

[२] प्र०—भगवन् ! नलिनकूट (पर्वत) पर कितने कूट हैं ?

उ०—गौतम ! चार कूट हैं, यथा–सिद्धायतनकूट, नलिनकूट, आवर्त्तकूट और मगलावर्त्तकूट ।

ये कूट पाच सौ योजन (ऊचे) हैं । इनकी राजधानिया उत्तर में हैं ।

मंगलावर्त विजय

[४८][१] प्र०—कहि ण भते ! महाविदेहे वासे मंगलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णीलवतस्स दक्खिणेणं, सीआए उत्तरेणं,

णलिणकूडस्स पुरत्थिमेण, पंकावईए पच्चत्थिमेण,

एत्थ ण मंगलावत्ते णामं विजए पण्णत्ते ।

जहा कच्छस्स विजए तहा एसो भाणिअव्वो—जाव—मंगलावत्ते अ इत्थ देवे परिवसइ ।

से एएणट्ठे णं० ।

[४८][१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष मे मगलावर्त्त नामक विजय कहा है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त से दक्षिण मे सीता से उत्तर मे, नलिनकूट से पूर्व मे और पकावती से पश्चिम मे मगलावर्त्त नामक विजय है । कच्छ विजय की भाति इसका भी वर्णन जान लेना चाहिए—यावत्—यहा मगलावर्त्त नामक देव रहता है । इस कारण (गौतम! इसका नाम मगलावर्त्त विजय है) ।

पंकावती कुंड

[४९][१] प्र०—कहि ण भंते ! महाविदेहे वासे पंकावई कुंडे णामं कुडे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! मंगलावत्तस्स पुरत्थिमेणं,

पुक्खलविजयस्स पच्चत्थिमेणं,

णीलवंतस्स दाहिणे णितंबे,

एत्थ णं पंकावई—जाव—कुंडे पण्णत्ते ।

तं चेव गाहावइकुंडप्पमाणं—जाव—

मंगलावत्त—पुक्खलावत्तविजए दुहा विभयमाणी२,

अवसेसं तं चेवं जं चेव गाहावईए ।

[४९][१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष मे पकावती नामक कुड कहा है ?

उ०—गौतम ! मगलावर्त्त के पूर्व मे, पुष्कल विजय के पश्चिम मे तथा नीलवन्त के दक्षिणी नितम्ब मे पकावती नामक कुड है । इसका प्रमाण ग्राहावती कुड के बराबर है । —यावत्—(पकावती नदी) मगलावर्त्त तथा पुष्कलावर्त्त विजयो को दो भागो मे विभक्त करती हुई ग्राहावती महानदी के समान ही (सीता नदी मे मिलती है) ।

एत्थ ण महाविदेहे वासे पुक्खलावई णामं विजए पण्णत्ते।
उत्तर-दाहिणायए,
एवं जहा कच्छ विजयस्स—जाव—पुक्खलावई अ इत्थ देवे परिवसइ।
एएणट्ठेणं०।

[५२][१] प्र०—भगवन्! महाविदेह वर्ष मे पुष्कलावती नामक चक्रवर्ती—विजय कहा है?

उ०—गौतम! नीलवन्त के दक्षिण मे, शीता के उत्तर मे, उत्तरी शीतामुख वन के पश्चिम मे तथा एकशैल वक्षस्कार पर्वत के पूर्व मे महाविदेहस्थित पुष्कलावती नामक विजय है। यह उत्तर-दक्षिण मे लम्बा है। शेष वर्णन कच्छ विजय के समान है—यावत्—यहा पुष्कलावती देव रहता है। इस कारण (इसका नाम पुष्कलावती विजय है)।

उत्तरीय शीतामुखवन

[५३][१] प्र०—कहि ण भंते! महाविदेहे वासे सीआए महाणईए उत्तरिल्ले सीआमुहवणे णामं वणे पण्णत्ते?

उ०—गोअमा! णीलवंतस्स दक्खिणेणं,
सीआए उत्तरेणं,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेणं,
पुक्खलावइचक्कवट्टिविजयस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ ण सीआमुहवणे णामं वणे पण्णत्ते।
उत्तर-दाहिणायए, पाईण-पडीणविच्छिण्णे,
सोलस जोअणसहस्साइं पंच य बाणउए जोअणसए दोण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेणं,
सीआए महाणईए अंतेण दो जोअणसहस्साइं नव य बावीसे जोयणसए विक्खंभेणं।
तयाणंतरं च ण मायाए २ परिहायमाणे २ णीलवंतवासहरपव्वयंतेण एगं एगूणवीसइभागं जोअणस्स विक्खंभेणंति।
से ण एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसंडेण संपरिक्खित्ते। वण्णओ सीआमुहवणस्स—जाव—देवा आसयंति।
एवं उत्तरिल्ल पासं समत्तं।
विजया भणिआ, रायहाणीओ इमाओ—
गाहा—
(१) खेमा (२) खेमपुरा चेव, (३) रिट्ठा (४) रिट्ठपुरा तहा।
(५) खग्गी (६) मंजूसा अवि अ, (७) ओसही (८) पुंडरीगिणी।[1]

[५३][१] प्र०—भगवन्! महाविदेह क्षेत्र मे शीता महानदी के उत्तर मे शीतामुख नामक वन कहा है?

उ०—गौतम! नीलवन्त से दक्षिण मे, शीता नदी से उत्तर मे, पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे तथा पुष्कलावती चक्रवर्ती विजय से पूर्व मे शीतामुख नामक वन है। यह उत्तर—दक्षिण मे लम्बा और पूर्व—पश्चिम मे चौडा है। १६५९२ $\frac{2}{19}$ योजन लम्बा तथा शीता महानदी के पास २९२२ योजन चौडा है। तदनन्तर क्रमश कम होता-होता नीलवन्त वर्षधर पर्वत के पास $\frac{1}{19}$ योजन चौडा रह गया है। यह एक पद्मवरवेदिका तथा एक वनखण्ड से घिरा है।

१—ठा० ८, उ० ३ सूत्र ६३७ पृ० ४१३

शीतामुख वन का देवो के बैठने तक का वर्णन कर लेना चाहिए। इसी प्रकार सब उत्तरीय विजयो का वर्णन समझ लेना चाहिए। इनकी राजधानिया इस प्रकार है —

गाथार्थ—(१) क्षेमा (२) क्षेमपुरा (३) अरिष्टा (४) अरिष्टपुरा (५) खड्गी (६) मञ्जूषा (७) औषधि और (८) पुण्डरीगिणी

उत्तर की शेष वक्तव्यता

[५४] सोलस विज्जाहरसेढीओ तावइयाओ, अभिओगसेढीओ,
सव्वाओ इमाओ ईसाणस्स ।
सव्वेसु विजएसु कच्छवत्तव्वया—जाव—अट्ठो ।
रायाणो सरिसणामगा ।
विजएसु सोलसण्हं वक्खारपव्वयाणं चित्तकूडवत्तव्वया—जाव—कूडा चत्तारि-चत्तारि,
बारसण्हं णईणं गाहावइवत्तव्वया—जाव—उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं वणसंडेहिं अ वण्णओ ।

—जम्बू० वक्ख० ४ सूत्र ९५ पृ० ३४७

[५४] यहां सोलह विद्याधर श्रेणिया तथा सोलह आभियोगिक श्रेणिया है। ये सब ईशानेन्द्र की हैं। इन सब विजयो की वक्तव्यता कच्छ विजय के समान है। उनके राजाओं के नाम विजयो के समान समझने चाहिए।
विजयो के सोलह वक्षस्कार पर्वतो का वर्णन चित्रकूट के सदृश है—यावत्—प्रत्येक पर चार—चार कूट है।
बारह नदियो का वर्णन गाहावती के समान है—यावत्—प्रत्येक के दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाएं एव दो वनखण्ड हैं।

दक्षिणी शीतामुख वन

[५५][१] प्र०—कहि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सीआए महाणईए दाहिणिल्ले सीयामुहवणे णामं वणं पण्णत्ते ?
उ०—एवं जह चेव उत्तरिल्लं सीआमुहवणं तह चेव दाहिणं पि भाणिअव्वं ।
णवरं णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेण,
सीआए महाणईए दाहिणेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
वच्छस्स विजयस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे सीआए महाणईए दाहिणिल्ले सीआमुहवणे णामं वणे पण्णत्ते ।
उत्तर-दाहिणायए, तहेव सव्वं,
णवरं णिसहवासहरपव्वयंतेणं एगूणवीसइभागं जोअणस्स विक्खंभेणं,
किण्हे किण्होभासे—जाव—महया गंधद्धाणिं मुअंते—जाव—आसयंति ।
उभओ पासिं दोहिं पउमवरवेइयाहिं, वणवण्णओ इति ।

[५५][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप स्थित महाविदेह वर्ष मे शीता महानदी के दक्षिण मे शीतामुख नामक वन कहाँ है ?
उ०—उत्तरीय शीतामुख वन की ही भांति दक्षिणी (शीतामुख वन) का भी वर्णन कर लेना चाहिए। विशेषता इतनी है कि जम्बूद्वीपस्थित महाविदेह वर्ष की शीता महानदी का दक्षिणी शीतामुख वन

निषध वर्षधर पर्वत से उत्तर मे, शीता महानदी से दक्षिण मे, पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे एव वत्स विजय से पूर्व मे है। यह उत्तर-दक्षिण मे लम्बा है, इत्यादि।

निषध वर्षधर पर्वत के पास इसकी चौडाई १ १/८ योजन की है। यह कृष्ण और कृष्णावभास है—यावत्—इससे गध का समूह निकलता है।—यावत्—यहाँ (देव) बैठते हैं।

इसके दोनो ओर दो पद्मवरवेदिकाएँ और दो वनखण्ड हैं।

वत्स आदि विजय

[५६][१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे वच्छे णामं विजए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं,
सीआए महाणईए दाहिणेण,
दाहिणिल्लस्स सीआमुहवणस्स पच्चत्थिमेणं,
तिउडस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ ण जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे वच्छे णामं विजए पण्णत्ते।
तं चेव पमाण,
सुसीमा रायहाणी। (१)
तिउडे वक्खारपव्वए, सुवच्छे विजए कुंडला रायहाणी। (२)
तत्तजला णई, महावच्छे विजए, अपराजिता रायहाणी (३)
वेसमणकूड वक्खारपव्वए, वच्छावई विजए, पभंकरा रायहाणी। (४)
मत्तजला णई, रम्मे विजए, अकावई रायहाणी। (५)
अंजणे वक्खारपव्वए, रम्मगे विजए, पम्हावई रायहाणी। (६)
उम्मत्तजला महाणई, रमणिज्जे विजए, सुभा रायहाणी। (७)
मायंजले वक्खारपव्वए, मंगलावई विजए, रयणसंचया रायहाणीति। (८)
एव जह चेव सीआए महाणईए उत्तरं पासं
तह चेव दक्खिणिल्लं भाणिअव्वं।

दाहिणिल्लसीआमुहवणाइ, इमे वक्खारकूडा, तंजहा—
तिऊडे १, वेसमणकूडे २, अंजणे ३, मायंजणे ४।
णईउ—तत्तजला १, मत्तजला २, उम्मत्तजला ३।

विजया तंजहा—
गाहा—
वच्छे[1] सुवच्छे[2] महावच्छे[3], चउत्थे वच्छगावई[4]।
रम्मे[5] रम्मए[6] चेव रमणिज्जे[7] मगलावई[8] ॥१॥

रायहाणीओ, तंजहा—
गाहा—
सुसीमा[1] कुंडला[2] चेव, अवराइअ[3] पहंकरा।[4]
अंकावई[5] पम्हावई[6] सुभा[7] रयणसंचया[8] ॥२॥

वच्छस्स विजयस्स णिसहे दाहिणेणं, सीआ उत्तरेणं।
दाहिणिल्लसीयामुहवणे पुरत्थिमेणं, तिऊडे पच्चत्थिमेणं।
सुसीमा रायहाणी, पमाणं तं चेवेति।
वच्छाणंतर तिऊडे तओ सुवच्छे विजए।

एएण कमेण तत्तजला णई महावच्छे विजए ।
वेसमणकूडे वक्खारपव्वए, वच्छावई विजए ।
मत्तजला णई, रम्मे विजए ।
अजणे वक्खारपव्वए रम्मए विजए ।
उम्मत्तजला णई, रमणिज्जे विजए ।
मायजणे वक्खारपव्वए, मगलावई विजए ।

—जम्बू वक्ष, ४ सूत्र ९६ पृ ३५२

[५६][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे वत्स (वच्छ) नामक विजय कहा है ?

उ०—गौतम ! निषध वर्षधर पर्वत से उत्तर मे, शीता महानदी से दक्षिण मे, दक्षिणी शीतामुख वन से पश्चिम मे एव त्रिकूट वक्षस्कार पर्वत से पूर्व मे जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे वत्स नामक विजय है। इसका प्रमाण पूर्ववत् (कच्छ विजय के समान) समझना चाहिए। इसकी राजधानी का नाम सुसीमा है। (आगे) त्रिकूट वक्षस्कार पर्वत, सुवत्स विजय और कुण्डला राजधानी है, तप्तजला नदी, महावत्स विजय और अपराजिता राजधानी, वैश्रमणकूट वक्षस्कार पर्वत, वत्सावती विजय और प्रभकरा राजधानी, मत्तजला नदी, रम्य विजय और अकावती राजधानी, अजन वक्षस्कार पर्वत, रम्यक विजय और पक्ष्मावती राजधानी, उन्मत्तजला महानदी, रमणीय विजय और शुभा राजधानी, मातजन वक्षस्कार पर्वत, मगलावती विजय और रत्नसचया राजधानी है।

इस प्रकार जैसे शीता महानदी के उत्तर भाग मे कहा वैसा ही कथन दक्षिण भाग मे भी समझ लेना चाहिए—दाक्षिणात्य शीतामुखवन आदि ।
गाथार्थ—त्रिकूट, वैश्रमणकूट, अजन और मातजन (ये वक्षस्कार पर्वत हैं) ।
नदियो के नाम ये हैं—तप्तजला, मत्तजला, और उन्मत्तजला ।
विजयो के नाम—वत्स, सुवत्स, महावत्स, वत्सकावती, रम्य, रम्यक, रमणीय और मगलावती ।
राजधानियो के नाम इस प्रकार हैं—

गाथार्थ—

सुसीमा, कुडला, अपराजिता, प्रभकरा, अकावती, पद्मावती, सुभा और रत्नसचया ।
निषध के दक्षिण मे, शीता नदी के उत्तर मे, दक्षिणी सीतामुख वन के पूर्व मे एव त्रिकूट वक्षस्कार पर्वत के पश्चिम मे वत्स विजय की सुसीमा राजधानी है। इसका प्रमाण पूर्ववत् ही है। वत्स के बाद त्रिकूट पर्वत, सुवत्स विजय, तप्तजला नदी, महाकच्छ विजय, वैश्रमण कूट वक्षस्कार पर्वत, वत्सावती विजय, मत्तजला नदी, रम्य विजय, अजन वक्षस्कार पर्वत, रम्यक विजय, उन्मत्तजला नदी, रमणीय विजय, मातजन वक्षस्कार पर्वत एव मगलावती विजय की अनुक्रम से वक्तव्यता समझ लेनी चाहिए।

शेष विजयादि वक्तव्यता

[५७] एव पम्हे विजए, अस्सपुरा रायहाणी, अकावई पक्खारपव्वए [१]
सुपम्हे विजए, सीहपुरा रायहाणी, खीरोदा महाणई (२)
महापम्हे विजए, महापुरा रायहाणी, पम्हावई वक्खारपव्वए [३]
पम्हगावई विजए, विजयपुरा रायहाणी, सीअसोआ महाणई [४]
सखे विजए, अपराइआ रायहाणी, आसीविसे वक्खारपव्वए [५]
कुमुदे विजए, अरजा रायहाणी, अतोवाहिणी महाणई (६)
णलिणे विजए, असोगा रायहाणी, सुहावहे वक्खारपव्वए [७]
णलिणावई विजए, वीयसोगा रायहाणी [८] दाहिणिल्ले साओआमुखवणसंडे ।
उत्तरिल्ले वि एमेव भाणियव्वे जहा सीआए ।

वप्पे विजए, विजया रायहाणी, चन्दे वक्खार पव्वए [१]
सुवप्पे विजए, जयती रायहाणी, ओम्मिमालिणी णई [२]
महावप्पे विजए, जयती रायहाणी, सूरे वक्खारपव्वए [३]
वप्पावई विजए, अपराइआ रायहाणी, फेणमालिणी णई [४]
वग्गू विजए, चक्कपुरा रायहाणी, णागे वक्खारपव्वए [५]
सुवग्गू विजए, खग्गपुरा रायहाणी, गभीरमालिणी अ तरणई [६]
गंधिले विजए, अवज्झा रायहाणी, देवे वक्खारपव्वए [७]
गंधिलावई विजए, अओज्झा रायहाणी
एव मदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमिल्ल पास भाणिअव्व ।
तत्थ ताव सीओआए णईए दक्खिणिल्ले ण कूले इमे विजया, तजहा—
गाहा—
पम्हे सुपम्हे महापम्हे, चउत्थे पम्हगावई ।
सखे कुमुए णलिणे, अट्ठमे णलिणावई ।।१।।
इमाओ रायहाणीओ, तजहा—
गाहा—
आसपुरा सीहपुरा महापुरा चेव हवइ विजयपुरा ।
अवराइआ य अरया, असोगा तह वीअसोगा अ ।।२।।
इमे वक्खारा, तजहा—
अके पम्हे आसीविसे सुहावहे एवं इत्थ परिवाडीए दो दो विजया कूडसरिसणामया भाणिअव्वा,
दिसा—विदिसाओ य भाणिअव्वाओ ।
सीओआमुहवण च भाणिअव्व, सीओआए दाहिणिल्ल उत्तरिल्लं च ।
सीओआए उत्तरिल्ले पासे इमे विजया, तजहा—
गाहा—
वप्पे सुवप्पे महावप्पे, चउत्थे वप्पयावई ।
वग्गू अ सुवग्गू अ, गंधिले गंधिलावई ।।१।।
रायहाणीओ इमाओ, तजहा—
गाहा—
विजया वेजयंती जयती अपराजिया ।
चक्कपुरा खग्गपुरा, हवइ अवज्झा अउज्झा य ।।२।।
इमे वक्खारा, तंजहा—
चंदपव्वए १, सूरपव्वए २, नागपव्वए ३, देवपव्वए ४,
इमाओ णईओ सीओआए महाणईए दाहिणिल्ले कूले खीरोआ, सीअसोया अंतरवाहिणीओ
णईओ, उम्मिमालिणी फेणमालिणी गभीरमालिणी
उत्तरिल्लविजयाणतराउ त्ति ।
इत्थ परिवाडीए दो दो कूडा विजयसरिसणामया भाणिअव्वा ।
इमे दो दो कूडा अवट्ठिया, तंजहा—
सिद्धायणकूडे, पव्वयसरिसणामकूडे ।

जम्बू. वक्ष. ४ सूत्र १०२ पृ० ३५७

[५७] (महाविदेह वर्ष के तीसरे दाक्षिणत्य–पश्चिम विभाग मे विजयादि के नाम इस प्रका हैं–)

१—पक्ष्म विजय, अश्वपुरी राजधानी, अकावती वक्षस्कार पर्वत ।
२—सुपक्ष्म विजय, सिंहपुरा राजधानी, क्षीरोदा महानदी

३—महापक्ष्म विजय, महापुरी राजधानी, पक्ष्मावती वक्षस्कारपर्वत ।

४—पक्ष्मावती विजय विजयपुरी राजधानी, शीतस्रोता महानदी ।

५—शख विजय, अपराजिता राजधानी, आशीविष वक्षस्कारपर्वत ।

६—कुमुद विजय, अरजा राजधानी, अन्तर्वाहिनी महानदी ।

७—नलिन विजय, अशोका राजधानी, सुखावह वक्षस्कारपर्वत ।

८—नलिनावती विजय, वीतशोका राजधानी । दाक्षिणात्य सीतोदामुखवनखण्ड ।

(चतुर्थ विभाग के विजय आदि इस प्रकार हैं—)

१—वप्र विजय, विजया राजधानी, चन्द्र वक्षस्कारपर्वत ।

२—सुवप्र विजय, वैजयन्ती राजधानी, ऊर्मिमालिनी नदी ।

३—महावप्र विजय, जयन्ती राजधानी, सूर्य वक्षस्कार पर्वत ।

४—वप्रावती विजय, अपराजिता राजधानी, फेनमालिनी नदी ।

५—वल्गु विजय, चक्रपुरा राजधानी, नाग वक्षस्कार पर्वत ।

६—सुवल्गु विजय, खड्गपुरी राजधानी, गभीरमालिनी अन्तर नदी ।

७—गधिल विजय, अवध्या राजधानी, देव वक्षस्कार पर्वत ।

८—गधिलावती विजय, अयोध्या राजधानी

इसी प्रकार मेरु के पश्चिमी पार्श्व का वर्णन करना चाहिए । सीतोदा नदी के दक्षिणी किनारे पर ये विजय हैं—

गाथार्थ—
पक्ष्म, सुपक्ष्म, महापक्ष्म, पक्ष्मावती, शख, कुमुद, नलिन और नलिनावती ।
राजधानिया इस प्रकार हैं—
अश्वपुरी, सिंहपुरी, महापुरी, विजयपुरी, अपराजिता, अरजा, अशोका और वीतशोका ।
वक्षस्कार पर्वत ये हैं—
अक, पक्ष्म, आशीविष और सुखावह ।

यहा दो-दो विजय कूटसदृश नाम वाले जानने चाहिए । दिशा और विदिशा का भी कथन कर लेना चाहिए । तथा सीतोदामुखवन का भी कथन समझ लेना चाहिए । सीतोदा के दक्षिणी व उत्तरी (किनारे) हैं । उसके उत्तरी किनारे पर ये विजय हैं—

गाथार्थ—
वप्र, सुवप्र, महावप्र, वप्रावती, वल्गु, सुवल्गु, गधिल और गधिलावती ।
राजधानिया ये हैं—
गाथार्थ—
विजया, वैजयन्ती, जयन्ती, अपराजिता, चक्रपुरा, खड्गपुरी, अवध्या और अयोध्या ।

वक्षस्कार पर्वत ये हैं—चन्द्रपर्वत, सूर्य पर्वत, नाग पर्वत और देव पर्वत ।

सीतोदा महानदी के दक्षिणी किनारे पर ये नदिया हैं—क्षीरोदा, शीतस्रोता और अन्तर्वाहिनी ।

ऊर्मिमालिनी, फेनमालिनी और गभीरमालिनी, ये उत्तरीय विजयो की अन्तरनदिया हैं ।

यहां परिपाटी मे दो-दो कूट विजयसदृश नाम वाले हैं तथा दो-दो कूट अवस्थित-नियत हैं—सिद्धायतनकूट तथा पर्वतसदृश नाम वाला कूट । (इस प्रकार प्रत्येक पर्वत पर चार कूट हैं ।)

हैमवत वर्ष

[१] [१] प्र०—कहि ण भंते ! जंबुद्दीवे दीवे हेमवए णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! महाहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं,
चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
एत्थ ण जंबुद्दीवे दीवे हेमवए णाम वासे पण्णत्ते,
पाईण-पडीणायए, उदीह-दाहिणविच्छिण्णे,
पलिअंकसंठाणसंठिए,
दुहा लवणसमुद्द पुट्ठे
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे,
पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे,
दोण्णि जोअणसहस्साइं एगं च पंचुत्तरं जोअणसयं पंच य एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं।
तस्स बाहा[1] पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण छज्जोयणसहस्साइं सत्त य पणवण्णे जोअणसए तिण्णी अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स आयामेण।
तस्स जीवा उत्तरेण पाईण-पडीणायया,
दुहओ लवणसमुद्दं पुट्ठा,
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठा,
पच्चत्थिमिल्लाए—जाव—पुट्ठा।
सत्ततीसं जोअणसहस्साइं[2] छच्च चउवत्तरे जोअणसए सोलस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स किंचिविसेसूण आयामेण,
तस्स धणुं दाहिणेण अट्ठतीसं जोअणसहस्साइं[3] सत्त य चत्ताले जोअणसए दस य एगूणवीस-भाए जोअणस्स परिक्खेवेण।

[२] प्र०—हेमवयस्स ण भंते ! वासस्स केरिसए आयारभाव-पडोयारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते।
एवं तइअसमाणुभावो णेअव्वोत्ति।

—जम्बू, वक्ष, ४ सूत्र ७६ पृ० २९८

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे हैमवत नामक वर्ष कहाँ है ?

उ०—गौतम ! महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, चुल्ल हिमवन्त पर्वत से उत्तर मे, पूर्वी लवण-समुद्र से पश्चिम मे तथा पश्चिमी लवणसमुद्र से पूर्व मे जम्बूद्वीप का हैमवत नामक वर्ष है। यह पूर्व और पश्चिम मे लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण मे चौडा है। पलग के आकार का है तथा दो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। पूर्व की ओर पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है, पश्चिम की ओर पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। यह २१०५$\frac{५}{१९}$ योजन चौडा है। इसकी बाहु पूर्व-पश्चिम मे ६७५५$\frac{३}{१९}$ योजन लम्बी है। इसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी एव दोनो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। पूर्व की ओर से पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। पश्चिम की ओर से पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है। यह ३७६७४$\frac{१६}{१९}$ योजन से कुछ कम लम्बी है। इसका धनु पृष्ठ दक्षिण मे ३८७४०$\frac{१०}{१९}$ योजन की परिधि वाला है।

१—सम. ६७ सूत्र २
२— „ ३७ सूत्र २
३— „ ३८ सूत्र २

[२] प्र०—भगवन् ! हैमवत वर्ष का स्वरूप कैसा है ?

उ०—गौतम ! इसका भूमिभाग अति सम एवं रमणीय है। इसका वर्णन (भरत क्षेत्र के) तीसरे आरे के स्वरूपवर्णन जैसा जानना चाहिए।

शब्दापाती पर्वत

[२] [१] प्र०—कहि ण भंते ! हेमवए वासे सद्दावई णाम वट्टवेयड्डपव्वए पण्णत्ते[1] ?

उ०—गोअमा ! रोहिआए महाणईए पच्चत्थिमेण,
रोहिअसाए महाणईए पुरत्थिमेण,
हेमवयवासस्स बहुमज्झदेसभाए,
एत्थ ण सद्दावई णाम वट्टवेयड्डपव्वए पण्णत्ते[1]।
एग जोअणसहस्स उड्ढ उच्चत्तेण,
अड्ढाइज्जाइ जोअणसयाइ उव्वेहेण,
सव्वत्थ समे, पल्लगसठाणसठिए,
एग जोअणसहस्स आयाम-विक्खभेण,
तिण्णि जोअणसहस्साइ एग च बावट्ठ जोअणसय किंचिविसेसाहिअ परिक्खेवेण पण्णत्ते[2]।
सव्वरयणामए अच्छे,
से ण एगाए पउमवरवेइआए एगेण य वणसडेण सव्वओ समता सपरिक्खित्ते,
वेइआ-वणसडवण्णओ भाणिअव्वो।
सद्दावइस्स ण वट्टवेयड्डपव्वयस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते।
तस्स ण बहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण महं एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते।
बावट्ठि जोअणाइ अद्धजोअण च उड्ढ उच्चत्तेण,
इक्कतीस जोअणाइ कोस च आयाम-विक्खभेण,
—जाव—सीहासण सपरिवार।

[२] प्र०—से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ-सद्दावईवट्टवेअड्डपव्वए ?

उ०—गोअमा ! सद्दावईवट्टवेयड्डपव्वए ण खुड्डा खुड्डियासु वावीसु—जाव—बिलपंतिआसु बहवे उप्पलाइ पउमाइ सद्दावइप्पभाइ सद्दावइवण्णाइ सद्दावई अ इत्थ देवे महिड्ढीए—जाव—महाणुभावे पलिओवमट्ठिइए परिवसइ त्ति।
से ण तत्थ चउण्ह सामाणियसाहस्सीण—जाव—रायहाणी मदरस्स पव्वयस्स दाहिणेण अण्णमि जबुद्दीवे दीवे०।[3]

—जम्बू वक्ष. ४ सूत्र ७७ पृ० २९९

---

१. सव्वेसि ण वट्टवेयड्डपव्वयाण सिहरतलाओ सोगधिककडस्स हेट्ठिल्ले चरमते एस ण नउइजोयणसयाइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। —सम ९० सूत्र ५

२ (क) ठा. २ उ ३ सूत्र ८७ पृ. ६५
(ख) सम. ११३
(ग) ठा. १० सूत्र ७२२ पृ ४५३

३. वृत्त वैताढ्य पर्वतो की सख्या ४ है, यह निर्विवाद है। उनके नामों के सबध मे भी कोई मतभेद नहीं है। किन्तु उनकी अवस्थिति स्थानाग और जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में कुछ भिन्न प्रकार की है, यथा—

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति के अनुसार	स्थानाग के अनुसार
हैमवत में—शब्दापाती	हैमवत मे—शब्दापाती
हरिवर्ष मे—विकटाती	हरिवर्ष मे—गधापाती
रम्यक मे—गधापाती	रम्यक मे माल्यवन्त (पर्याय)
हैरण्यवत में—माल्यवन्त	हैरण्यवत मे—शब्दापाती

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति के टीकाकार के समक्ष भी यह मतभेद रहा है, उन्होने 'तत्व तु केवलिगम्यम्' लिखकर छोड़ दिया है।

—सम्पादक

[२] [१] प्र०—भगवन् ! हैमवत वर्ष मे शब्दापाती नामक वृत्त (गोल) वैताढ्य पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! रोहिता नदी से पश्चिम मे तथा रोहितासा महानदी से पूर्व मे हैमवत वर्ष के मध्य मे शब्दापाती नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत है।

यह एक हजार योजन ऊँचा, अढाई सौ योजन गहरा, सर्वत्र सम (बराबर) पल्य के आकार का, एक हजार योजन लम्बा-चौडा, तीन हजार एक सौ बासठ योजन से किंचित् विशेष अधिक परिधि वाला है। यह सर्वात्मना रत्नमय एव स्वच्छ है। इसके सभी ओर एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड है। यहाँ वेदिका और वनखण्ड का वर्णन कह लेना चाहिए।

शब्दापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत के ऊपर अति सम और रमणीय भूमिभाग है। इस सम एव रमणीय भूमिभाग के मध्य मे एक विशाल प्रासादावतसक है। यह प्रासाद साडे बासठ योजन ऊँचा, सवा इकतीस योजन लबा-चौडा—यावत्—सपरिवार सिंहासन से युक्त है।

[२] प्र०—भगवन् ! इसे शब्दापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत क्यो कहते हैं ?

उ०—गौतम ! शब्दापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत पर छोटी-बडी वापिकाओ मे—यावत्—बिलपक्तियो मे अनेक उत्पल और पद्म हैं, जो शब्दापाती के समान प्रभा वाले, शब्दापाती के समान वर्ण वाले एव शब्दापाती के समान आभा वाले है। यहाँ पल्योपम की स्थिति वाला शब्दापाती नामक महर्द्धिक —यावत्—महान् प्रभाववान् देव रहता है। यहाँ वह चार हजार सामानिक (देवो आदि का अधिपतित्व करता विचरता है)—यावत्—मेरु पर्वत से दक्षिण मे अन्य जम्बूद्वीप मे (उसकी) राजधानी है।

'हैमवत' संज्ञा का हेतु

[३] [१] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ-हेमवए वासे २ ?

उ०—गोअमा ! चुल्लहिमवत-महाहिमवतेहिं वासहरपव्वएहिं दुहओ समवगूढे।

णिच्चं हेमं दलइ, णिच्चं हेम पगासइ,

हेमवए य इत्थ देवे महिड्ढीए पलिओवमट्ठिइए परिवसइ,

से तेणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ—हेमवए वासे हेमवए वासे।

—जम्बू. वक्ष ४ सूत्र ७८ पृ० ३००

[३] [१] प्र०—भगवन् ! (हैमवत वर्ष को) हैमवत वर्ष क्यो कहते है ?

उ०—गौतम ! यह चुल्लहिमवन्त और महाहिमवन्त नामक वर्षधर पर्वतो से समवगूढ-सश्लिष्ट अर्थात् मर्यादित है। यह सदैव (आसनप्रदान आदि द्वारा) हेम-स्वर्ण देता है, सदैव हेम को प्रकाशित करता है तथा हैमवत नामक महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला देव यहाँ निवास करता है। इस कारण, गौतम ! हैमवत वर्ष हैमवत वर्ष कहलाता है।

हैरण्यवत वर्ष

[१] [१] प्र०—कहि ण भंते ! जबुद्दीवे दीवे हेरण्णवए वासे णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—रुप्पिस्स उत्तरेण, सिहरिस्स दक्खिणेणं,

पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,

पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,

एत्थ ण जंबुद्दीवे दीवे हिरण्णवए वासे पण्णत्ते।

एव जह चेव हेमवयं तह चेव हेरण्णवयं पि भाणियव्वं।

णवरं जीवा दाहिणेणं, उत्तरेणं धणुं अवसिट्ठं तं चेवत्ति।

—जम्बू, वक्ष, ४ सूत्र १११ पृ. ३७८–७९.

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे हैरण्यवत वर्ष नामक वर्ष कहाँ है ?

उ०—रुक्मि पर्वत से उत्तर मे, शिखरि पर्वत से दक्षिण मे, पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे और पश्चिमी लवणसमुद्र से पूर्व मे, जम्बूद्वीप मे हैरण्यवत वर्ष है।

जैसा हैमवत वर्ष का कथन किया वैसा ही हैरण्यवत वर्ष भी कह लेना चाहिए। विशेषता यह है कि इसकी जीवा दक्षिण मे और धनु पृष्ठ उत्तर मे है। शेष कथन वही है।

माल्यवन्तपर्याय पर्वत

[२] [१] प्र०—कहि णं भंते ! हेरण्णवए वासे मालवतपरिआए णाम वट्टवेयड्डपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! सुवण्णकूलाए पच्चत्थिमेण,
रुप्पकूलाए पुरत्थिमेण,
एत्थ ण हेरण्णवयस्स वासस्स वहुमज्झदेसभाए
मालवतपरिआए णाम वट्टवेअड्ढे पण्णत्ते।
जह चेव सद्दावई तह चेव मालवतपरिआए वि।
अट्ठो–उप्पलाइ पउमाइ मालवतप्पभाइ, मालवत–वण्णाइ, मालवत-वण्णाभाइं,
पभासे अ इत्थ देवे महिड्ढीए पलिओवमट्ठिइए परिवसइ,
से एएणट्ठेण०
रायहाणी उत्तरेणति।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! हैरण्यवत वर्ष मे माल्यवन्तपर्याय नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! सुवर्णकूला (महानदी) से पश्चिम मे, रुप्यकूला (महानदी) से पूर्व मे, हैरण्यवत वर्ष के ठीक मध्य मे माल्यवन्तपर्याय नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत है। जैसा शब्दापाती का वर्णन है वैसा ही माल्यवन्त पर्याय का भी है।

माल्यवन्तपर्याय नाम का कारण–यहा माल्यवत की प्रभा वाले, माल्यवन्त के वर्ण के, एव माल्यवन्त की आभा वाले उत्पल-पद्म हैं। यहा पल्योपम की स्थिति वाला प्रभास नामक महर्धिक देव निवास करता है। इस कारण (इसका नाम माल्यवन्तपर्याय) है।
राजधानी उत्तर मे है।

'हैरण्यवत' संज्ञा का हेतु

[३] [१] प्र०—से केणट्ठेण भंते ! एव वुच्चइ–हेरण्णवए वासे हेरण्णवए वासे ?

उ०—गोअमा ! हेरण्णवए ण वासे रुप्पी–सिहरीहिं वासहरपव्वएहिं दुहओ समवगूढे।
णिच्च हिरण्ण हिरण्ण दलइ, णिच्च हिरण्ण मु चइ, णिच्च हिरण्ण पगासइ,
हेरण्णवए अ इत्थ देवे परिवसइ,
से एएणट्ठेणति।

[३] [१] प्र०—भगवन् ! हैरण्यवत वर्ष हैरण्यवत वर्ष क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! हैरण्यवत वर्ष रुक्मि और शिखरी नामक वर्षधर पर्वतो से मर्यादित है। यह नित्य हिरण्य को प्रदान करता है, हिरण्य को त्यागता तथा प्रकाशित करता है। यहा हैरण्यवत देव निवास करता है। इस कारण (इसका नाम हैरण्यवत वर्ष) है।

हरिवर्ष

[१] [१] प्र०—कहि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे हरिवासे णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेणं,
महाहिमवतवासहरपव्वयस्स उत्तरेणं,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेण,
पच्चत्थिमलवणसमुद्दस्स पुरत्थिमेणं,
एत्थ णं जंबुद्दीवे दीवे हरिवासे णामं वासे पण्णत्ते ।
एवं—जाव—पच्चत्थिमिल्लाए कोडीए पच्चत्थिमिल्लं लवणसमुद्दं पुट्ठे,
अट्ठ जोअणसहस्साइं[1] चत्तारि अ एगवीसे जोयणसए एगं च एगूणवीसइभागं जोअणस्स विक्खम्भेणं,
तस्स बाहा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं तेरस जोअणसहस्साइं, तिण्णि अ एगसट्ठे जोअणसए, छच्च एगूण वीसइभाए जोअणस्स, अद्धभाग च आयामेणंति ।
तस्स जीवा उत्तरेण पाईण-पडीणायया,
दुहा लवणसमुद्दं पुट्ठा,
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्ल-जाव-लवणसमुद्दं पुट्ठा,
तेवत्तरिं जोअणसहस्साइं[2] णव अ एगुत्तरे जोअणसए सत्तरस य एगूणवीसइभाए जोअणस्स अद्ध-भाग च आयामेण ।
तस्स धणुं दाहिणेणं चउरासीइं जोअणसहस्साइं[3] सोलस जोअणाइं चत्तारि एगूणवीसइभाए जोअणस्स परिक्खेवेण ।

[२] प्र०—हरिवासस्स ण भंते ! वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते-जाव-मणीहिं तणेहिं अ उवसोभिए ।
एव मणीणं तणाण य वण्णो गंधो फासो सद्दो भाणिअव्वो ।
हरिवासे णं तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे खुड्डा खुड्डियाओ
एव जो सुसमाए अणुभावो सो चेव अपरिसेसो वत्तव्वोत्ति ।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे हरिवर्ष नामक वर्ष कहा है ?

उ०—गौतम ! निषध वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, महाहिमवन्त वर्षधर पर्वत से उत्तर मे, पूर्वी लवण-समुद्र से पश्चिम मे और पश्चिमी लवणसमुद्र से पूर्व मे जम्बूद्वीपस्थित हरिवर्ष नामक वर्ष है । यह —यावत्—पश्चिम की ओर से पश्चिमी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है इसकी चौडाई ८४२१ $\frac{१}{१९}$ योजन की है ।
इसकी बाहु पूर्व-पश्चिम मे १३३६१ + $\frac{१७}{१९}$ योजन लम्बी है ।
इसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी है और दोनो ओर से लवणसमुद्र से स्पृष्ट है । पूर्व की ओर से पूर्वी लवणसमुद्र से स्पृष्ट है, इत्यादि । यह ७३९०१ $\frac{१७}{१९}$ + $\frac{१}{२}$ योजन लम्बी है ।
इसकी धनु पीठिका दक्षिण मे ८४०१६ $\frac{४}{१९}$ योजन की परिधि मे है ।

१—सम. १२१
२— " ७३ सूत्र १
३— " ८४ सूत्र ८

[२] प्र०—भगवन् ! हरिवर्ष का स्वरूप कैसा है ?

उ०—गौतम ! यह अत्यन्त सम और रमणीय भूमिभाग वाला—यावत्—मणियो तथा तृणो से सुशोभित है। मणियो और तृणो के वर्ण, गध, (रस) और स्पर्श तथा शब्द का वर्णन कर लेना चाहिए। हरिवर्ष मे जगह—जगह—यत्र—तत्र छोटी—वडी वापिकाए आदि हे।

इस प्रकार सुषमा काल (द्वितीय आरे) की भाति वर्णन कह लेना चाहिए।

विकटापाती पर्वत

[२] [१] प्र०—कहि ण भते ! हरिवासे वासे विअडावई णाम वट्टवेअड्ढपव्वए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! हरीए महाणईए पच्चत्थिमेण,
हरिकताए महाणईए पुरत्थिमेण,
हरिवासस्स वासस्स बहुमज्भदेसभाए
एत्थ ण विअडावई णाम वट्टवेअड्ढपव्वए पण्णत्ते।
एव जो चेव सद्दावइस्स विक्खभुच्चत्तुव्वेहपरिक्खेव-सठाणवण्णावासे अ सो चेव विअडावइस्स वि भाणिअव्वो।
णवर अरुणो देवो, पउमाइ —जाव— विअडावइण्णाभाइ,
अरुणे अ इत्थ देवे महिड्ढीए
एव—जाव—दाहिणेण रायहाणी णेअव्वा।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! हरिवर्ष मे विकटापाती नामक वृत्त (गोल) वैताढच पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! हरित महानदी से पश्चिम मे एव हरितकान्ता महानदी से पूर्व मे, हरिवर्ष के मध्य मे विकटापाती नामक वृत वैताढच पर्वत है।

शब्दापाती (वृत्त वैताढच पर्वत) की जो चौडाई, ऊचाई, गहराई, परिधि, आकृति आदि है वही विकटापाती की भी कह लेनी चाहिए।

विशेष यह है कि यहा अरुण नामक महर्द्धिक देव है तथा विकटापाती पर्वत के समान वर्ण वाले पद्म—यावत्—हैं। इस प्रकार—यावत्—दक्षिण मे (देव की) राजधानी जाननी चाहिए।

'हरिवर्ष' संज्ञा का हेतु

[३] [१] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ—हरिवासे हरिवासे ?

उ०—गोअमा ! हरिवासे ण वासे मणुआ अरुणा अरुणोभासा सेआ ण सखदलसण्णिकासा
हरिवये अ इत्थ देवे महिड्ढीए—जाव—पलिओवमट्ठिइए परिवसइ।
से तेणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ—हरिवासे हरिवासे।

—जम्बू० वक्ष० ४ सूत्र ८२ पृ ३०४

[३] [१] प्र०—भगवन् ! हरिवर्ष, हरिवर्ष क्यों कहलाता है ?

उ०—गौतम ! हरिवर्ष में (कुछ) मनुष्य अरुण वर्ण वाले एव अरुण कान्ति वाले हैं। (कुछ) मनुष्य शखखण्ड के समान श्वेत वर्ण वाले हैं। यहा हरिवर्ष नामक महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला देव रहता है। इस कारण गौतम ! हरिवर्ष, हरिवर्ष कहलाता है।

रम्यकवर्ष

[१] [१] प्र०—कहि ण भंते ! जंबुद्दीवे दीवे रम्मए णाम वासे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! णीलवतस्स उत्तरेण,
रुप्पिस्स दक्खिणेण,
पुरत्थिमलवणसमुद्दस्स पच्चत्थिमेण,
एवं जह चेव हरिवास तह चेव रम्मयं वासं भाणिअव्वं ।
णवरं दक्खिणेण जीवा, उत्तरेण धणुं, अवसेसं त चेव ।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे रम्यकवर्ष कहा है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त (वर्षधर पर्वत) से उत्तर मे, रुक्मि (पर्वत) से दक्षिण मे पूर्वी लवणसमुद्र से पश्चिम मे और पश्चिमी लवणसमुद्र से पूर्व मे (रम्यकवर्ष) है। हरिवर्ष का जैसा कथन किया गया है वैसा ही रम्यकवर्ष का कह लेना चाहिए। विशेषता यह है कि इसकी जीवा दक्षिण मे है, धनु पृष्ठ उत्तर मे। शेष वक्तव्यता वही है।

गन्धापाती पर्वत

[२] [१] प्र०—कहि ण भंते ! रम्मए वासे गंधावई णाम वट्टवेअड्ढपव्वए पण्णत्ते ? ।

उ०—गोअमा ! णरकताए पच्चत्थिमेण,
णारीकताए पुरत्थिमेण,
रम्मगवासस्स बहुमज्झदेसभाए
एत्थ ण गंधावईणाम वट्टवेअड्ढे पव्वए पण्णत्ते ।
जं चेव विअडावइस्स त चेव गंधावइस्स वि वत्तव्वं, अट्ठो बहवे उप्पलाइ—जाव—
गंधावईवण्णाइ गंधावइप्पभाइ,
पउमे अ इत्थ देवे महिड्ढिए—जाव—पलिओवमट्ठिइए परिवसइ ।
रायहाणी उत्तरेण ति ।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! रम्यकवर्ष मे गधापाती नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत कहा है ?

उ०—गौतम ! नरकान्ता (महानदी) से पश्चिम मे, नारीकान्ता (महानदी) से पूर्व मे, रम्यकवर्ष के बीचो बीच गधापाती नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत है।
विकटापाती पर्वत का जो कथन है वही गधापाती का भी कहना चाहिए।
गधापाती का अर्थ—वहा के उत्पल—यावत्— गधापाती के वर्ण के, गंधापाती जैसी प्रभा वाले हैं, पद्म भी (ऐसे ही हैं) यहा महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला देव निवास करता है।
(उसकी) राजधानी उत्तर मे है।

'रम्यकवर्ष' संज्ञा का हेतु

[३] [१] प्र०—से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ—रम्मएवासे रम्मए वासे ?

उ०—गोअमा ! रम्मए वासे ण रम्मे रम्मए रमणिज्जे,
रम्मए अ इत्थ देवे—जाव—परिवसइ ।
से तेणट्ठेणं० ।

[३] [२] प्र०—भगवन् ! रम्यकवर्ष किस कारण से रम्यकवर्ष कहलाता है ?

उ०—गौतम ! रम्यकवर्ष अत्यन्त रम्य एवं रमणीय है तथा यहा रम्यक नामक देव—यावत्—निवास करता है। इस कारण से (यह रम्यक वर्ष कहा जाता है।)

उत्तरकुरु की अवस्थिति

[१] [१] प्र०—कहि ण भते ! महाविदेहे वासे उत्तरकुरा णाम कुरा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! मदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण,
णीलवन्तस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेण,
गधमायणस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेण,
मालवन्तस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेण,
एत्थ ण उत्तरकुरा णाम कुरा पण्णत्ता,
पाईण-पडीणायया उदीण-दाहिणविच्छिन्ना अद्ध चदसठाणसठिया,
इक्कारस जोअणसहस्साइ अट्ठ य बायाले जोअणसए दोण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खभेणति, तीसे जीवा उत्तरेण पाईण-पडीणायया, दुहा वक्खारपव्वय पुट्ठा, तजहा—
पुरत्थिमिल्लाए कोडीए पुरत्थिमिल्ल वक्खारपव्वयं पुट्ठा,
एव पच्चत्थिमिल्लाए—जाव—पच्चत्थिमिल्ल वक्खारपव्वय पुट्ठा,
तेवण्ण जोअणसहस्साइ आयामेणति,
तीसे ण धणु दाहिणेण सट्ठिं जोअणसहस्साइ चत्तारि अ अट्ठारसे जोअणसए दुवालस य एगूणवीसइभागे जोअणस्स परिक्खेवेण ।[1]

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ८७ पृ ३१३

[१] [१] प्र०—भगवन् ! महाविदेह वर्ष मे उत्तरकुरु नामक कुरु कहाँ है ?

उ०—गौतम ! मन्दर पर्वत से उत्तर में, नीलवन्त नामक वर्षधर पर्वत से दक्षिण मे, गधमादन वक्षार पर्वत से पूर्व मे और माल्यवन्त वक्षार पर्वत से पश्चिम मे उत्तर-कुरु नामक कुरु है।

वह पूर्व-पश्चिम मे लबा, उत्तर-दक्षिण मे विस्तीर्ण तथा अर्धचन्द्राकार है वह ११८४२$\frac{२}{१९}$ विष्कम वाला है। उसकी जीवा उत्तर मे पूर्व-पश्चिम मे लम्बी है और दोनो ओर से वक्षार पर्वत से स्पृष्ट है, यथा—पूर्वीय किनारे से पूर्वी वक्षार पर्वत से स्पृष्ट है तथा पश्चिमी किनारे से पश्चिमी वक्षार पर्वत से स्पृष्ट है।

उसकी लम्बाई ५३ हजार योजन है। धनुपृष्ठ दक्षिण मे ६०४१८$\frac{१२}{१९}$ योजन की परिधि वाला है।

उत्तरकुरु का स्वरूप

प्र०—उत्तरकुराए ण भते ! कुराए केरिसए आयारभावपडोआरे पण्णत्ते ?

[२] [१] उ०—गोयमा ! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
एव पुव्ववण्णिआ जच्चेव सुसमसुसमावत्तव्वया सच्चेव णेअव्वा—जाव—पउमगधा मिअगधा अममा सहा तेतली सणिचारी ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ८७ पृ ३१३

[२] [१] प्र०—भगवन् ! उत्तरकुरु नामक कुरु का स्वरूप कैसा है।

उ०—गौतम ! वहाँ भूमिभाग बहुत सम एव रमणीय है। इस प्रकार पूर्ववर्णित सुषमासुषमा की जो वक्तव्यता है वही यहाँ समझ लेनी चाहिए—यावत्—वहाँ छह प्रकार के मनुष्य होते हैं—पद्मगध, मृगगध, अमम, सह, तेतली और शनैश्चारी।

१—जीवा. सूत्र १४७ पृ. २६२

उत्तरकुरु में यमक पर्वत

[३] [१] प्र०—कहि णं भंते ! उत्तरकुराए जमगाणाम दुवे पव्वया पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! णीलवंतस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणिल्लाओ चरिमन्ताओ अट्ठ जोअणसए चोत्तीसे चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अवाहाए सीआए महाणईए उभओ कूले एत्थ णं जमगा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता ।

जोअणसहस्स उड्ढ उच्चत्तेण,[1]
अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं उव्वेहेणं,
मूले एगं जोअणसहस्स आयाम-विक्खंभेण,
मज्झे अद्धट्ठमाणि जोअणसयाइं आयाम-विक्खभेणं,
उवरिं पच जोअणसयाइं आयाम-विक्खंभेणं,
मूले तिण्णि जोअणसहस्साइ एग च बावट्ठं जोअणसय किंचिविसेसाहिअं परिक्खेवेण,
मज्झे दो जोअणसहस्साइं तिण्णि बावत्तरे जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण,
उवरिं एग जोअणसहस्स पच य एकासीए जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण,
मूले विच्छिण्णा, मज्झे सखित्ता, उप्पिं तणुआ,
जमगसंठाणसठिया सव्वकणगामया अच्छा सण्हा,
पत्तेअ २ पउमवरवेइयापरिक्खित्ता,
पत्तेअ २ वणसडपरिक्खित्ता ।
ताओ ण पउमवरवेइआओ दो गाऊआइ उद्ध उच्चत्तेणं, पच धणुसयाइं विक्खभेण,
वेइआ-वणसण्डवण्णओ भाणिअव्वो ।
तेसि णं जमगपव्वयाण उप्पिं बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते—जाव—
तस्स ण बहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं दुवे पासायवडेंसगा पण्णत्ता,
ते ण पासायवडेंसगा बावट्ठिं जोअणाइं अद्धजोयणं च उद्धं उच्चत्तेण,
इक्कतीसं जोअणाइं कोसं च आयाम-विक्खभेणं,
पासायवण्णओ भाणिअव्वो, सीहासणा सपरिवारा,
—जाव—एत्थ णं जमगाणं देवाण सोलसण्ह आयरक्खदेवसाहस्सीणं सोलस भद्दासणसाहस्सीओ पण्णत्ताओ ।[2]

[३] [१] प्र०—भगवन् ! उत्तरकुरु मे यमक नामक दो पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त नामक वर्षधर पर्वत के दक्षिणी चरमान्त से लेकर ८३४४/७ योजन के अन्तराल में, शीता महानदी के दोनो तटो पर यमक नामक दो पर्वत है । उनकी ऊँचाई एक हजार योजन की एव गहराई अढाई सौ योजन की है । उनकी लम्बाई-चौडाई मूल मे एक हजार योजन, मध्य मे साढे सात सौ योजन और ऊपर पाच सौ योजन की है । उनकी परिधि मूल मे ३१६२ योजन से कुछ अधिक है, मध्य मे २३७२ योजन से कुछ अधिक और ऊपर १५८१ से कुछ अधिक है ।

ये मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त और ऊपर पतले है । वे यमको (एक साथ उत्पन्न दो भाइयो) की आकृति के समान है अर्थात् दोनो का आकार एक समान है । सर्वकनकमय, स्वच्छ एव चिकने है । प्रत्येक पद्मवरवेदिका से घिरा है और प्रत्येक एक-एक वनखण्ड से घिरा है ।

वे पद्मवरवेदिकाएँ दो गव्यूति ऊँची एव पाच सौ धनुष चौडी है । यहाँ पद्मवरवेदिका तथा वनखण्ड का वर्णन समझ लेना चाहिए ।

१—सम, ११३ सूत्र २
२—जीवा सूत्र १४८, पृ. २८६-८७

उन यमक पर्वतो के ऊपर अत्यन्त सम और रमणीय भूमिभाग हैं,—यावत्—उस सम और रमणीय भूमिभाग के वीचोवीच दो प्रासादावतसक हैं। वे प्रासादावतसक ६२।। योजन ऊँचे हैं। ३१। योजन लम्बे-चौडे हैं।

यहाँ प्रासाद का वर्णन समझ लेना चाहिऐ। वहाँ सपरिवार सिंहासन हैं—यावत्—वहाँ यमक देवो के सोलह हजार आत्मरक्षक देवो के सोलह हजार भद्रासन हैं।

'यमक पर्वत' संज्ञा का हेतु

[४] [१] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ-जमगा पव्वया २ ?

उ०—गोअमा ! जमगपव्वएसु ण तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं वहवे खुड्डाखुड्डियासु वावीसु—जाव—विलपतियासु वहवे उप्पलाइं—जाव—जमगवण्णाभाइ,
जमगा य इत्थ दुवे देवा महिड्ढीया,
ते ण तत्थ चउण्ह सामाणियसाहस्सीण—जाव—भुंजमाणा विहरति,
से तेणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ-जमगपव्वया २।
अदुत्तर च ण सासए णामधिज्जे—जाव—जमगपव्वया २।

[४] [१] प्र०—भगवन् ! यमक पर्वत यमक पर्वत क्यो कहलाते हैं ?

उ०—गौतम ! यमक पर्वतो पर स्थान-स्थान पर वहुत-सी छोटी-छोटी वापियो मे—यावत्—विलपक्तियो मे बहुत-से उत्पल—यावत्—यमक के वर्ण की आभा वाले हैं। वहाँ यमक नामक दो महर्द्धिक देव निवास करते हैं। वे चार हजार सामानिक देवो का आधिपत्य करते हुए—यावत्—भोग भोगते हुए रहते हैं। गौतम ! इस कारण यमक पर्वत, यमक पर्वत कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त 'यमक पर्वत' यह (उनका) शाश्वत नाम है।

यमक देवों की राजधानियाँ

[५] [१] प्र०—कहि ण भते ! जमगाण देवाण जमिगाओ रायहाणीओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोअमा ! जम्बुद्दीवे दीवे मन्दरस्स पव्वयस्स उत्तरेण अण्णमि जम्बुद्दीवे दीवे बारस जोअणसहस्साइ ओगाहित्ता एत्थ ण जमगाण देवाण जमिगाओ रायहाणीओ पण्णत्ताओ,
बारस जोअणसहस्साइ आयाम-विक्खमेणं,
सत्तत्तीस जोअणसहस्साइ णव अ अडयाले जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण,
पत्तेअं २ पायार परिक्खित्ता,
ते ण पागारा सत्तत्तीस जोअणाइ अद्धजोयण च उद्ध उच्चत्तेण,
मूले अद्धतेरस जोअणाइ विक्खभेण,
मज्झे छसकोसाइ जोअणाइ विक्खभेण,
उवरिं तिण्णि सअद्धकोसाइ, जोअणाइं विक्खभेण,
मूले विच्छिण्णा, मज्झे सखित्ता, उप्पिं तणुआ,
बाहिं वट्टा, अंतो चउरंसा, सव्वरयणामया अच्छा।
ते ण पागारा णाणामणिपचवण्णेहिं कविसीसएहिं उवसोहिआ,
तंजहा-किण्हेहिं—जाव—सुक्किल्लेहिं।
ते ण कविसीसगा अद्धकोस आयामेण, देसूण अद्धकोस उद्ध उच्चत्तेण, पच धणुसयाइं बाहल्लेणं,
सव्वमणिमया अच्छा।
जमिगाण रायहाणीण एगमेगाए बाहाए पणवीस-पणवीस वारसय पण्णत्त।
ते ण दारा बावट्ठिं जोअणाइ अद्धजोयण च उद्ध उच्चत्तेण,
तेसि ण पेच्छाघरमडवाण पुरओ मणिपेढिआओ पण्णत्ताओ,
अद्धजोअण बाहल्लेण, सव्वमणिमईआ, सीहासणा भाणिअव्वा।

इक्कतीसं जोअणाइं कोसं च विक्खंभेणं,
तावइअं चेव पवेसेणं,
सेआ वरकणग थूभिआगा,
एवं रायप्पसेणइज्जविमाणवत्तव्वयाए दारवण्णओ—जाव—अट्ठट्ठमंगलगाइं ति।
जमियाण रायहाणीणं चउद्दिसिं पंच-पच जोअणसए अबाहाए चत्तारि वणसण्डा पण्णता, तंजहा—
असोगवणे, सत्तिवण्णवणे, चंपगवणे, चूअवणे ।
ते ण वणसंडा साइरेगाइं बारसजोअणसहस्साइं आयामेणं,
पंच जोअणसयाइ विक्खभेणं,
पत्तेअं २ पागार परिक्खित्ता, किण्हा,
वणसण्डवण्णओ, भूमीओ, पासायवडेंसगा य भाणिअव्वा,
जमिगाण रायहाणीण अंतो बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, वण्णगोत्ति ।
तेसि ण बहुसम-रमणिज्जाणं भूमिभागाण बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण दुवे उवयारियालयणा पण्णत्ता,
बारस जोअणसयाइं आयाम-विक्खंभेण,
तिण्णि जोअणसहस्साइ सत्त य पंचाणउए जोअणसए परिक्खेवेण,
अद्धकोसं च बाहल्लेणं,
सव्व जम्बूणयामया, अच्छा, पत्तेअं २ पउमवरवेइआपरिक्खित्ता,
पत्तेअ २ वणसडवण्णओ भाणिअव्वो, तिसोवाणपडिरूवगा तोरण चउद्दिसिं भूमिभागा य भाणिअव्वत्ति,
तस्स ण बहुमज्झ देसभाए एत्थ ण एगे पासायवडेंसए पण्णत्ते,
बावट्ठि जोअणाइं अद्धजोअण च उद्ध उच्चत्तेणं,
इक्कतीस जोअणाइ कोस च आयाम-विक्खभेण,
वण्णओ, उल्लोआ, भूमिभागा, सीहासणा सपरिवारा,
एवं पासायपतीओ, (एत्थ पढमा पंती ते ण पासायवडिसगा) एक्कतीसं जोअणाइं कोसं च उद्धं उच्चत्तेण,
साइरेगाइं अद्धसोलसजोअणाइं आयाम-विक्खंभेण
बिइअपासायपती ते णं पासायवडेंसया साइरेगाइं अद्धसोलस जोअणाइं उद्धं उच्चत्तेणं,
साइरेगाइं अद्धट्ठमाइं जोअणाइं आयाम-विक्खभेण,
तइयपासायपंती ते णं पासायवडेंसया साइरेयाइं अद्धट्ठमाइं जोअणाइं उद्धं उच्चत्तेण,
साइरेगाइं अद्धुट्ठजोअणाइ आयाम-विक्खंभेणं,
वण्णओ, सीहासणा सपरिवारा,
तेसि ण मूलपासायवडिसयाणं उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं जमगाणं देवाणं सहाओ सुहम्माओ पण्णत्ताओ,
अद्धतेरस जोयणाइं आयामेण,
छस्सकोसाइं जोअणाइं विक्खभेणं,
णव जोअणाइं उद्ध उच्चत्तेण,
अणेगखंभसयसण्णिविट्ठा, सभावण्णओ,
तासि ण सभाए सुहम्माणं तिदिसिं तओ दारा पण्णत्ता,
ते णं दारा दो जोअणाइ उद्ध उच्चत्तेण, जोअणं विक्खभेण, तावइअं चेव पवेसेणं,
सेआ वण्णओ—जाव—वणमाला ।
तेसि णं दाराणं पुरओ पत्तेअ २ तओ मुहमंडवा पण्णत्ता,
ते णं मुहमंडवा अद्धतेरस जोअणाइ आयामेण, छस्सकोसाइं जोयणाइं विक्खंभेणं, साइरेगाइ दो जोअणाइं उद्ध उच्चत्तेण—जाव—दारा—भूमिभागा य त्ति,
पेच्छाघरमंडवाण त चेव पमाण, भूमिभागो, मणिपेढियाओत्ति,
ताओ ण मणिपेढिआओ जोअण आयाम-विक्खभेण,

ताओ ण मणिपेढिआओ दो जोअणाइ आयाम-विक्खभेण,
जोअण वाहल्लेण, सव्वमणिमईओ,
तासि ण उप्पि पत्तेअ २ तओ थूभा,
ते ण थूभा दो जोअणाइ उद्ध उच्चत्तेण, दो जोअणाइ आयाम-विक्खभेण,
सेआ सखदल—जाव—अट्ठट्ठमगलया,
तेसि ण थूभाण चउद्दिसि चत्तारि मणिपेढिआओ पण्णत्ताओ,
ताओ ण मणिपेढिआओ जोअण आयाम–विक्खभेण,
अद्धजोअण वाहल्लेण,
जिणपडिमाओ वत्तव्वाओ,
चेइअरुक्खाण मणिपेढिआओ दो जोअणाइ आयामविक्खभेण, जोअण वाहल्लेण, चेइअरुक्ख–वण्णओत्ति,
तेसि ण चेइअरुक्खाण पुरओ ताओ मणिपेढिआओ पण्णत्ताओ,
ताओ ण मणिपेढिआओ जोयण आयाम–विक्खभेण,
अद्धजोअण बाहल्लेण,
तासि ण उप्पि पत्तेअ २ महिंदज्झया पण्णत्ता,
ते ण अद्धट्ठमाइ जोअणाइ उद्ध उच्चत्तेण, अद्धकोस उव्वेहेण, अद्धकोस बाहल्लेण, वइरामयवट्ट वण्णओ, वेइआ–वणसड–तिसोवाण–तोरणा य भाणियव्वा,
तासि ण सभाण सुहम्माण छच्चमणोगुलियासाहसीओ पण्णत्ताओ, तजहा—
पुरत्थिमेण दो साहस्सीओ पण्णत्ताओ, पच्चत्थिमेण दो साहस्सीओ, दक्खिणेण एगा साहस्सी, उत्तरेण एगा,–जाव–दामा चिट्ठ तित्ति ।
एव गोमाणसिआओ, णवर धूवघडिआओत्ति ।
तासि ण सुहम्माण सभाण अतो बहुसम–रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते,
मणिपेढिआ दो जोअणाइ आयाम–विक्खभेण, जोअण बाहल्लेण,
तासि ण मणिपेढिआण उप्पि माणवए चेइअखभे महिंदज्झयप्पमाणे,
उवरिं छक्कोसे ओगाहित्ता, हेट्ठा छक्कोसे वज्जित्ता जिणसकहाओ पण्णत्ताओत्ति ।
माणवगस्स पुव्वेण सीहासणा सपरिवारा,
पच्चत्थिमेण सयणिज्जवण्णओ,
सयणिज्जाण उत्तर-पुरत्थिमे दिसिभाए खुड्डगमहिंदज्झया मणिपेढिआ विहूणा महिंदज्झयप्पमाणा,
तेसिं अवरेण चोप्फाला पहरणकोसा,
तत्थ ण बहवे फलिहरयणपामुक्खा–जाव– चिट्ठ ति ।
सुहम्माण उप्पि अट्ठट्ठमगलगा,
तासि ण उत्तरपुरत्थिमेण सिद्धाययणा,
एस चेव जिणघराणवि गमोत्ति ।
णवर इम णाणत्त–एतेसि ण बहुमज्झदेसभाए पत्तेअ २ मणिपेढिआओ दो जोअणाइं आयाम–विक्खभेण, जोअण बाहल्लेण,
तासिं उप्पि पत्तेअ २ देवच्छदया पण्णत्ता
दो जोअणाइं आयामविक्खभेण,
साइरेगाइ दो जोयणाइ उद्ध उच्चत्तेण,
सव्वरयणामया, जिणपडिमावण्णओ–जाव–धूवकडुच्छुगा,
एव अवसेसाणवि सभाण–जाव–उववायसभाए,
सयणिज्ज हरओ य अभिसेअसभाए बहुआभिसेक्के भडे,
अलकारिअसभाए बहु अलकारिअ भडे चिट्ठइ,
ववसायसभासु पुत्थयरयणा,

णंदा पुक्खरिणीओ, वलिपेढा दो जोअणाइं आयामविक्खभेणं, जोअण वाहल्लेण जावत्ति—

गाहाओ—उववाओ संकप्पो, अभिसेअविहूसणा य ववसाओ ।
अच्चणिअसुधम्मगमो, जहा य परिवारणाइद्धी ।।१।।
जावइयंमि पमाणमि, हुंति जमगाओ णीलवंताओ ।
तावइअमतरं खलु, जमगदहाणं दहाणं च ।।२।।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ८८, पृ. ३१८

[५] [१] प्र०—भगवन् ! यमक देवो की यमिका राजधानियाँ कहाँ हैं ?

उ०—गोतम ! जम्वूद्वीप मे स्थित मन्दर पर्वत के उत्तर मे, दूसरे जम्वूद्वीप मे वारह हजार योजन जाने पर वहाँ यमक देवो की यमिका राजधानियाँ हैं ।

वे वारह हजार योजन लम्वी-चौडी है । उनकी परिधि ३७९४८ योजन से किंचित् अधिक है । (दोनो मे से) प्रत्येक प्राकार से घिरी है ।

वे प्राकार साढे सैंतीस योजन ऊँचे है । मूल मे साढे वारह योजन विस्तार वाले, मध्य मे सवा छह योजन विस्तार वाले और ऊपर तीन योजन एव आधा कोस विस्तार वाले हैं । मूल मे विस्तीर्ण मध्य मे सक्षिप्त और ऊपर पतले है । वाहर से वृत्ताकार एव अन्दर से चौकोर है । सर्वात्मना रत्नमय और स्वच्छ है । वे प्राकार नाना प्रकार की पचरगी मणियो के कगूरो से शोभित है । वह इस प्रकार—कृष्ण—यावत्—शुक्ल वर्ण के हैं ।

वे कगूरे अर्ध कोस लम्वे, कुछ कम अर्ध कोस ऊँचे और पाँच सौ धनुप मोटाई वाले हैं, सर्वमणिमय और स्वच्छ हैं ।

यमिका राजधानियो की एक-एक वाहु मे पच्चीस—पच्चीस सौ द्वार है । वे द्वार ६२।। योजन ऊँचे हैं । ३१। योजन चौडे है और उतने ही प्रवेश वाले है । श्वेतवर्ण तथा श्रेष्ठ स्वर्णमय स्तूपिकाओ वाले है । इस प्रकार राजप्रश्नीय मे कथित विमान की वक्तव्यता के अनुसार द्वारो का वर्णन समझ लेना चाहिए—यावत्-आठ-आठ मगलद्रव्य है ।

यमिका राजधानियो की चारो दिशाओ मे पाँच-पाँच सो योजन पर चार वनखण्ड है, यथा—अशोकवन, सप्तपर्णवन, चपकवन, चूतवन । ये वन किंचित् अधिक वारह हजार योजन लम्वे, पाँचसौ योजन चौडे है । इनमे से प्रत्येक प्राकार से घिरा है । वे कृष्ण हैं, इत्यादि वनखण्ड की वक्तव्यता समझ लेनी चाहिए और भूमियो तथा प्रासादावतसको का भी कथन कर लेना चाहिए ।

यमिका राजधानियो के अन्दर अत्यन्त सम एव रमणीय भूमिभाग है, उसका वर्णन समझ लेना चाहिए । उन अतिसम एव रमणीय भूमिभागो के वीचो वीच दो अवतारिकालयन हैं, जो वारह सौ योजन लम्वे—चौडे है, ३७९५ योजन की परिधि वाले, आधा कोस की मोटाई वाले, सर्वात्मना जम्वूनदमय और स्वच्छ है । (उनमे से) प्रत्येक पद्मवर वेदिका से घिरा है ।

प्रत्येक के वनखण्ड का वर्णन कह लेना चाहिए, तीन सोपान प्रतिरूपक, तोरण, चारो ओर भूमि-भाग भी कह लेने चाहिए ।

उसके ठीक मध्यभाग मे एक प्रासादावतसक कहा गया है । वह ६२।। योजन ऊँचा एव ३१। योजन लम्वा-चौडा है । उसके छत, भूमिभाग तथा सपरिवार सिंहासन का वर्णन कह लेना चाहिए । इसी प्रकार (मूल प्रासादावतसक के चारो ओर अन्य) प्रासादो की पक्तियाँ हैं । उनमे प्रथम पक्ति के प्रासादो की ऊँचाई ३१। योजन की, लम्वाई-चौडाई किंचित् अधिक साढे पन्द्रह योजन की है । दूसरी पक्ति के प्रासादो की ऊँचाई कुछ अधिक साढे पन्द्रह योजन की है तथा लम्वाई-चौडाई साडे सात योजन से कुछ अधिक है । तीसरी पक्ति के प्रासादो की ऊँचाई कुछ अधिक साडे सात योजन की तथा लम्वाई-चौडाई कुछ अधिक साढे तीन योजन की है । इन का वर्णन समझ लेना चाहिए । वहा सपरिवार सिंहासन हैं ।

उन मूल प्रासादावतसकों के उत्तर पूर्व दिक्कोण में यमक देवो की सुधर्मा सभाएँ हैं। वे साढे बारह योजन लम्बी, सवा छह योजन विस्तृत और नौ योजन ऊँची हैं। वे अनेक सैंकडो स्तभो पर सन्निविष्टि है, इत्यादि सभा का वर्णन कर लेना चाहिए।

सुधर्मा सभाओ की तीन दिशाओ मे तीन द्वार हैं वे द्वार दो योजन ऊँचे, एक योजन चौडे और उतने ही प्रवेश वाले हैं श्वेत वर्ण वाले हैं। वन माला पर्यन्त उनका वर्णन समझ लेना चाहिए।

उन द्वारो के सामने अलग—अलग तीन मुखमडप हैं। वे मुखमडप साडे बारह योजन लम्बे, सवा छह योजन चौडे और कुछ अधिक दो योजन ऊँचे हे—यावत्—द्वार एव भूमिभाग समझ लेना चाहिए।

प्रेक्षागृहमडपो का भी वही प्रमाण है। भूमिभाग तथा मणिपीठिकाओ का कथन कर लेना चाहिए।

वे मणिपीठिकाएँ एक योजन लम्बी-चौडी, आधा योजन मोटी, सर्वमणिमय हैं। (उन पर) सिंहासनो का कथन कह लेना चाहिए।

उन प्रेक्षागृहमडपो के सामने मणिपीठिकाएँ है। वे मणिपीठिकाएँ दो योजन लम्बी–चौडी, एक योजन मोटी एव सर्वमणिमयी हैं। उनके ऊपर अलग २ तीन स्तूप हैं। वे स्तूप दो योजन ऊँचे और दो योजन लम्बे-चौडे है। वे शखखण्ड के समान श्वेत हैं—यावत्—आठ-आठ मगल-द्रव्य है।

उन स्तूपो के चारो ओर चार मणिपीठिकाएँ हैं। वे एक योजन लम्बी–चौडी और आधा योजन मोटी हैं। (यहाँ) जिन प्रतिमाओ का कथन समझ लेना चाहिए। चैत्यवृक्षो का भी कथन कर लेना चाहिए। (वहाँ की) मणिपीठिकाएँ दो योजन लम्बी–चौडी, एक योजन मोटी हैं।

चैत्यवृक्षो के सामने मणिपीठिकाएँ हैं जो एक योजन लम्बी–चौडी और आधा योजन मोटी हैं। उनके ऊपर अलग–अलग महेन्द्रध्वजाएँ हैं जो साढे बारह योजन ऊँची, आधा कोस गहरी, आधा कोस मोटी एवं वज्रमय पट्ट वाली हैं, इत्यादि वर्णन कहना चाहिए। वेदिका, वनखण्ड, त्रिसोपान और तोरण कह लेने चाहिए।

सुधर्मा सभाओ मे छह हजार मनोगुलिकाएँ–पीठिकाएँ हैं। वे इस प्रकार–पूर्व मे दो हजार पश्चिम मे दो हजार, दक्षिण मे एक हजार और उत्तर मे एक हजार–यावत्–वहाँ दाम (मालाएँ) हैं। इसी प्रकार गोमानसिकाएँ (शय्यारूप स्थान विशेष) भी हैं। विशेष यह कि वहाँ धूपघटिकाएँ हैं।

उन सुधर्मा सभाओ के अन्दर अति सम एव रमणीय भूमिभाग है। वहाँ की मणिपीठिका दो योजन लम्बी–चौडी और एक योजन मोटी है। उन मणिपीठिकाओ पर माणवक चैत्यस्तभ हैं जो महेन्द्रध्वज के बरावर प्रमाण वाला है। (उसके) ऊपर छह कोस अवगाहन करने पर और नीचे छह कोस छोड कर जिन की अस्थिया हैं। माणवक (चैत्यस्तभ) के पूर्व मे सपरिवार सिंहासन हैं। पश्चिम मे शय्याओ का वर्णन करना चाहिए। शय्याओ के उत्तर–पूर्व कोण मे छोटे महेन्द्रध्वज हैं। वे मणिपीठिका से रहित है और महेन्द्रध्वज के बरावर प्रमाण वाले हैं। पश्चिम मे चोप्पाल नामक शस्त्रागार है। उनमे परिघरत्न आदि–यावत्–शस्त्र रक्खे है।

सुधर्मा सभाओ के ऊपर आठ–आठ मगलद्रव्य हैं। उनके उत्तर-पूर्व मे सिद्धायतन हैं। जिनगृहों का भी यही गम है। विशेषता यह है कि–इनके ठीक मध्यभाग मे अलग–अलग मणिपीठिकाएँ है जो दो योजन लम्बी–चौडी और एक योजन मोटी हैं। उनके ऊपर अलग२ देवच्छदक हैं। वे दो योजन लम्बे–चौडे, कुछ अधिक दो योजन ऊँचे, सर्वरत्नमय हैं। यहाँ जिन प्रतिमाओ का वर्णन धूपदानी पर्यन्त कह लेना चाहिए।

इसी प्रकार शेष सभाओ का–यावत्–उपपातसभा का वर्णन समझना चाहिए। ह्रदो का भी वर्णन कर लेना चाहिए।

अभिषेकसभा मे बहुत-से अभिषेक के योग्य भाण्ड रखे है। अलंकारिकसभा मे अलकार योग्य बहुत-से भाण्ड है। व्यवसायसभाओ मे पुस्तकरत्न है। नन्दा पुष्करिणी है। वलिपीठ है जो दो योजन लम्बे-चौडे एव एक योजन मोटे है।-यावत्-

(दोनो यमक देवो का) उपपात, सकल्प, अभिषेक, विभूषणा, व्यवसाय, (सिद्धायतन आदि की) अर्चा, सुधर्मा सभा मे गमन तथा परिवार का स्थापन (इन सब का वर्णन करना चाहिए) ॥१॥

जितने प्रमाण वाले नीलवन्त के यमक पर्वत कहे गए है, निश्चित रूप से उतना ही प्रमाण यमकद्रहो का एव द्रहो का समझना चाहिए ॥२॥

उत्तरकुरु में नीलवन्त द्रह

[६] [१] प्र०—कहि ण भते ! उत्तरकुराए णीलवन्तद्दहे णाम दहे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! जमगाण दक्खिणिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठसए चोत्तीसे चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अबाहाए सीआए महाणईए बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं णीलवन्तद्दहे णामं दहे पण्णत्ते।

दाहिण-उत्तरायए पाईण-पडीणवित्थिण्णे, जहेव पउमद्दहे तहेव वण्णओ णेअव्वो,

णाणत्तं-दोहिं पउमवरवेइयाहिं दोहि य वणसडेहिं सपरिक्खित्ते,

णीलवन्ते णाम णागकुमारे देवे, सेस तं चेव णेअव्व।

णीलवन्तद्दहस्स पुव्वावरे पासे दस २ जोआणाइं अबाहाए एत्थ ण वीसं कचणगपव्वया पण्णत्ता[1],

एग जोअणसय उद्ध उच्चत्तेणं—

गाहाओ—मूलमि जोअणसयं, पण्णत्तरि जोअणाइ मज्झंमि।
उवरितले कचणगा, पण्णासं जोअणा हुंति ॥१॥
मूलमि तिण्णि सोले, सत्तत्तीसाइं दुण्णि मज्झंमि।
अट्ठावण्णं च सय, उवरितले परिरओ होइ[2] ॥२॥
पढमित्थ णीलवन्तो, बितिओ उत्तरकुरु मुणेअव्वो।
चदद्दहोत्थ तइओ, एरावय माालवन्तो[3] अ ॥३॥
एव वण्णओ अट्ठो पमाणं पलिओवमट्ठिइआ देवा[4]।

—जम्बू, वक्ष० ४ सूत्र ८९ पृ० ३२९

[६] [१] प्र०—भगवन् ! उत्तरकुरु मे नीलवन्तद्रह नामक द्रह कहाँ है ?

उ०—यमक पर्वतो के दक्षिणी चरमान्त से ८३४$\frac{4}{7}$ योजन छोड़ कर शीता महानदी के बहुमध्य देशभाग मे नीलवन्तद्रह नामक द्रह कहा गया है। वह दक्षिण-उत्तर लम्बा एव पूर्व-पश्चिम मे चौड़ा है। पद्मद्रह के समान उसका वर्णन समझ लेना चाहिए।

भिन्नता इसमे यह है कि-यह दो पद्मवरवेदिकाओ से और दो वनखण्डो से घिरा है।

यहाँ नीलवन्त नामक नागकुमार देव है, शेष वर्णन वही समझना चाहिए।

नीलवन्तद्रह के पूर्व और पश्चिम पार्श्व मे दस-दस योजन पर वीस कचनक पर्वत है। वे एक सौ योजन ऊंचे हैं। इनका विस्तार मूल मे एक सौ योजन, मध्य मे पचहत्तर योजन और ऊपर पचास योजन है। परिधि मूल मे ३१६ योजन, मध्य मे २३७ योजन और ऊपर १८५ योजन है। प्रथम नीलवन्त, दूसरा उत्तरकुरु, तीसरा चन्द्रद्रह, चौथा ऐरावत और पाचवा माल्यवन्त द्रह है। नीलवन्त द्रह के समान उनके नाम का कारण, प्रमाण एव पल्योपम स्थिति वाले देव, इत्यादि वर्णन समझ लेना चाहिए।

१—सम० १०२ सूत्र ३
२(क) सम० ५०, सूत्र ३
 (ख) सम० १०० सूत्र ८
३—ठा० ५ उ० २ सूत्र ४३४ पृ० ३१०
४—जीवा० सूत्र १४०-१५० पृ० २८८-९१

'उत्तरकुरु' संज्ञा का हेतु

[७] [१] प्र०—से केणट्ठे ण भंते ! एवं वुच्चइ—उत्तरकुरा २ ?

उ०—गोअमा ! उत्तरकुराए उत्तरकुरु णाम देवे परिवसइ,
महिड्ढीए–जाव–पलिओवमट्ठिइए,
से तेणट्ठे ण गोअमा ! एवं वुच्चइ उत्तरकुरा २ !
अदुत्तरं च ण ति–जाव–सासए ।

[७] [१] प्र०—भगवन् ! उत्तरकुरु को उत्तरकुरु क्यों कहते हैं ?

उ०—गौतम ! उत्तरकुरु मे उत्तरकुरु नामक महर्द्धिक–यावत्–पल्योपम की स्थिति वाला देव निवास करता है इस कारण उत्तरकुरु, उत्तरकुरु कहलाता है। इसके अतिरिक्त यह नाम—यावत्—शाश्वत है ।

जम्बूपीठ

[८] [१] प्र०—कहिं ण भंते ! उत्तरकुराए २ जम्बूपेढे णाम पेढे पण्णत्ते !

उ०—गोअमा ! णीलवन्तस्स वासहरपव्वयस्स दक्खिणेण,
मन्दरस्स उत्तरेण,
मालवन्तस्स वक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेण,
सीआए महाणईए पुरत्थिमिल्ले कूले,
एत्थ ण उत्तरकुराए कुराए जम्बूपेढे णाम पेढे पण्णत्ते,
पंच जोयणसयाइं आयाम-विक्खम्भेण,
पण्णरस एक्कासीयाइं जोअणसयाइं किंचिविसेसाहिआइं परिक्खेवेण,
बहुमज्झदेसभाए बारस जोयणाइं बाहल्लेण,
तयणन्तरं च ण मायाए २ पदेसपरिहाणीए २ सव्वेसु ण चरिमपेरंतेसु दो दो गाउआइं बाहल्लेणं,
सव्वजम्बूणयामए अच्छे,
से ण एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेण सव्वओ समन्ता संपरिक्खित्ते,
दुण्हंपि वण्णओ,
तस्स ण जम्बूपेढस्स चउद्दिसिं एए चत्तारि तिसोवाणपडिरूवगा पण्णत्ता, वण्णओ—जाव—तोरणाइं,
तस्स ण जम्बूपेढस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण मणिपेढिआ पण्णत्ता,
अट्ठ जोअणाइं उद्धं उच्चत्तेण,[1] अद्धजोयणं उव्वेहेण,
तीसे ण खंधो दो जोअणाइं उद्धं उच्चत्तेण, अद्धजोयणं बाहल्लेण,

[८] [१] प्र०—भगवन् ! उत्तरकुरु नामक कुरु मे जम्बूपीठ नामक पीठ कहाँ है ?

उ०—गौतम ! नीलवन्त वर्षधर से दक्षिण मे, मन्दर पर्वत से उत्तर मे, माल्यवन्त वक्षस्कार पर्वत से पश्चिम मे और शीता महानदी के पूर्वी तट पर उत्तरकुरु नामक कुरु का जम्बूपीठ कहा गया है। वह पाच सौ योजन लम्बा-चौडा, १५८१ योजन से कुछ अधिक परिक्षेप वाला एव बीचो बीच बारह योजन मोटा है । तदनन्तर अनुक्रम से प्रदेशो की हानि होते-होते—अन्तिम प्रदेशो मे दो-दो गव्यूति मोटा है । सर्वजम्बूनदमय है । स्वच्छ है । वह एक पद्मवरवेदिका और एक वनखड से सब ओर से घिरा है । यहाँ दोनो का वर्णन समझ लेना चाहिए ।

उस जम्बूपीठ के चारो ओर चार त्रिसोपानप्रतिरूपक हैं। तोरणो पर्यन्त सब वर्णन समझ लेना चाहिए ।

उस जम्बूपीठ के बीचो बीच एक मणिपीठिका है । वह आठ योजन ऊँची है, आधा योजन मोटी है, उसका स्कन्ध (कन्द से ऊपर का भाग) दो योजन ऊँचा और आधा योजन मोटा है ।

१—सम. ८ सूत्र. ५

जम्बूसुदर्शना

[६] तीसे ण मणिपेढिआए उप्पि एत्थ णं जम्बूसुदंसणा पण्णत्ता,
अट्ठ जोअणाइं उद्धं उच्चत्तेण, अद्धजोअण उव्वेहेण,
तीसे ण खंधो दो जोअणाइं उद्धं उच्चत्तेणं, अद्धजोयणं बाहल्लेणं,
तीसे ण साला छ जोअणाइं उद्धं उच्चत्तेण, बहुमज्झदेसभाए अट्ठ जोअणाइं आयाम-विक्खंभेणं,
साइरेगाइ अट्ठ जोअणाइं सव्वग्गेणं,
तीसे णं अयमेयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते—
वइरामया मूला, रययसुपइट्ठियविडिमा—जाव—अहिअमणणिव्वुइकरी पासाईआ दरिसणिज्जा ।
जवूए सुदसणाए चउद्दिसि चत्तारि साला पण्णत्ता,
तेसि ण सालाण बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण सिद्धाययणे पण्णत्ते,
कोसं आयामेण, अद्धकोस विक्खभेण, देसूणग कोसं उद्ध उच्चत्तेणं, अणेगखंभसयसण्णिविट्ठे—
जाव—दारा पचधणुसयाइ उद्ध उच्चत्तेणं—जाव—वणमालाओ ।
मणिपेढिआ पचधणुसयाइं आयाम-विक्खभेण, अद्धाइज्जाइ धणुसयाइं बाहल्लेणं,
तीसे ण मणिपेढिआए उप्पि देवच्छन्दए पचधणुसयाइं आयाम-विक्खभेण,
साइरेगाइं पचधणुसयाइ उद्ध उच्चत्तेण,
जिणपडिमावण्णओ णेअव्वोत्ति ।
तत्थ ण जे से पुरत्थिमिल्ले साले एत्थ ण भवणे पण्णत्ते कोसं आयामेणं,
एवमेव णवरमित्थ सयणिज्जं, सेसेसु पासायवडेंसया सीहासणा य सपरिवारा इति ।
जम्बू ण बारसहिं पउमवरवेइआहिं सव्वओ समन्ता सपरिक्खित्ता,
वेइआण वण्णओ ।
जम्बू ण अण्णेणं अट्ठसएण जम्बूण तदद्धुच्चत्ताणं सव्वओ समन्ता संपरिक्खित्ता,
तासि णं वण्णओ,
ताओ ण जम्बू छहिं पउमवरवेइयाहिं संपरिक्खित्ता,
जम्बूए णं सुदसणाए उत्तर-पुरत्थिमेण उत्तरेणं उत्तरपच्चत्थिमेणं एत्थ णं अणाढिअस्स देवस्स चउण्हं
सामाणियसाहस्सीण चत्तारि जम्बूसाहस्सीओ पण्णत्ताओ,
तीसे ण पुरत्थिमेण चउण्हं अग्गमहिसीण चत्तारि जवूओ पण्णत्ताओ—

गाहाओ—दक्खिणपुरत्थिमे दक्खिणेण तह अवरदक्खिणेणं च ।
अट्ठ दस बारसेव य भवन्ति जम्बूसहस्साइं ॥१॥
अणिआहिवाण पच्चत्थिमेण सत्तेव होंति जवूओ ।
सोलस साहस्सीओ चउद्दिसि आयरक्खाण ॥२॥

जंबूए णं तिहिं सइएहिं वणसंडेहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता,
जवूए णं पुरत्थिमेण पण्णास जोअणाइं पढमं वणसंड ओगाहित्ता एत्थ णं भवणे पण्णत्ते,
कोसं आयामेणं, सो चेव वण्णओ सयणिज्ज च,
एवं सेसासु वि दिसासु भवणा ।
जम्बूए ण उत्तरपुरत्थिमेणं पढमं वणसडं पण्णास जोयणाइं ओगाहित्ता एत्थ णं चत्तारि पुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तंजहा-पउमा, पउमप्पभा, कुमुदा, कुमुदप्पभा ।
ताओ णं कोसं आयामेण, अद्धकोस विक्खंभेणं, पचधणुसयाइं उव्वेहेणं, वण्णओ,
तासि ण मज्झे पासायवडेंसगा कोस आयामेणं, अद्धकोसं विक्खंभेणं, देसूणं कोसं उद्ध उच्चत्तेणं,
वण्णओ, सीहासणा सपरिवारा,
एव सेसासु विदिसासु,

गाहाओ—पउमा पउमप्पभा चेव, कुमुदा कुमुदप्पभा ।
उप्पलगुम्मा णलिणा, उप्पला उप्पलुज्जला ॥१॥

भिगा भिगप्पभा चेव, अजणा कज्जलप्पभा ।
सिरिकता सिरिमहिआ, सिरिचदा चेव सिरिनिलया ।।२।।

जवूए ण पुरत्यिमिल्लस्स भवणस्स उत्तरेण उत्तरपुरत्यिमिल्लस्स पासायवडेंसगस्स दक्खिणेण एत्थ ण कूडे पण्णत्ते,

अट्ठ जोअणाइ उद्ध उच्चत्तेण, दो जोअणाइ उव्वेहेण, मूले अट्ठ जोअणाइ आयाम-विक्खभेण, बहुमज्झदेसभाए छ जोअणाइ आयाम-विक्खभेण, उवरि चत्तारि जोअणाइ आयाम-विक्खभेण—

गाहा—पणवीसट्ठारस बारसेव मूले अ मज्झि उवरि च ।
　　सविसेसाइ परिरओ, कूडस्स इमस्स बोद्धव्वो ।।१।।

मूले विच्छिण्णे, मज्झे सखित्ते, उवरि तणुए, सव्वकणगामए अच्छे, वेइया-वणसडवण्णओ, एव सेसावि कूडा इति ।

[६] उस मणिपीठिका के ऊपर सुदर्शना नामक जम्बू (जामुन) है। वह आठ योजन ऊचा, आधा योजन गहरा है। उसका स्कध दो योजन ऊँचा और आधा योजन मोटा है। उसकी शाखा छह योजन ऊँची हैं। मध्य भाग मे आठ योजन लम्बी–चौडी है और उमका सर्वाग्र कुछ अधिक आठ योजन का है।

उसका वर्णन इस प्रकार है—उसके मूल वज्रमय हैं। उसकी विडिमा रजतमयी और सुप्रतिष्ठित है। वह—यावत्–मन को अत्यन्त आनन्द उत्पन्न करने वाली है। प्रमादजनक एव दर्शनीय है।

सुदर्शना जम्बू की चारो दिशाओ मे चार शाखाए कही गई हैं। उन शाखाओ के बीचोबीच सिद्धायतन है। वह एक कोस लम्बा, आधा कोस चौडा, कुछ कम एक कोस ऊँचा, कई सौ खभो पर खडा हुआ है—यावत्–द्वारो का कथन समझ लेना चाहिए। वे पाच सौ धनुप ऊचे हैं—यावत्–वनमालाए हैं। मणिपीठिका पाच सौ धनुप लम्बी-चौडी है एव अढाई सौ धनुप मोटी है। उस मणिपीठिका के ऊपर देवच्छन्दक है जो पांच सौ धनुप लम्बा-चौडा है, किंचित् अधिक पांच सौ धनुप ऊचा है। यहाँ जिनप्रतिमा का वर्णन समझ लेना चाहिए।

उसकी जो पूर्वी शाखा है, उस पर एक भवन है जो एक कोस लम्बा है। उसका वर्णन इसी प्रकार–सिद्धायतन के समान समझना चाहिए। विशेप यह है कि यहाँ शय्या का कथन करना चाहिए।

शेप शाखाओ पर प्रासादावतसक हैं। सपरिवार सिंहासन भी समझ लेने चाहिए।

यह (सुदर्शना) जम्बू सब ओर से बाहर पद्मवरवेदिकाओ से परिवृत है। यहाँ वेदिका का वर्णन समझ लेना चाहिए।

यह जम्बू अन्य एक सौ आठ जम्बूओ से सब ओर से घिरा है, जिनकी ऊँचाई इससे आधी है। उन सबका वर्णन कह लेना चाहिए। वे (जम्बू) छह पद्मवरवेदिकाओ से घिरे हैं।

इस सुदर्शना जम्बू से उत्तर--पूर्व मे, उत्तर मे तथा उत्तर--पश्चिम मे अनादृत देव के चार हजार सामानिक देवो के चार हजार जम्बू हैं। उस (सुदर्शना जम्बू) से पूर्व मे (अनादृत देव की) चार अग्रमहिपियो की चार जम्बू हैं।

दक्षिण--पूर्व मे दक्षिण मे तथा दक्षिण--पश्चिम मे क्रमश आठ हजार, दस हजार और बारह हजार जम्बू हैं। (अनादृत देव के अनीकाधिपतियो के) पश्चिम दिशा मे सात ही जम्बू हैं। चारो दिशाओ मे आत्मरक्षक देवो के (चार--चार के हिसाब से) सोलह हजार जम्बू हैं।

वह जम्बू सौ योजन प्रमाण तीन वनखण्डो से सब ओर से घिरी हैं।

जम्बू से पूर्व दिशा से पचास योजन प्रथम वनखण्ड मे जाने पर एक भवन कहा गया है। वह एक कोस लम्बा है। उसका वर्णन वही (पूर्ववत्) है। शय्या का भी कथन कर लेना चाहिए। इसी प्रकार शेष दिशाओ मे भी भवन हैं। जम्बू से उत्तर--पूर्व दिशा मे, प्रथम वनखण्ड मे पचास

योजन अवगाहन करने पर चार पुष्करिणियां हैं, वे इस प्रकार हैं—पद्मा, पद्मप्रभा, कुमुदा और कुमुदप्रभा। वे एक कोस लम्बी, आधा कोस चौडी और पाच सौ धनुष गहरी हैं। उनका वर्णन समझ लेना चाहिए।

उनके मध्य मे प्रासादावतसक हैं, जो एक कोस लम्बे, आधा कोस चौडे और देशोन एक कोस ऊचे हैं। सपरिवार सिंहासन आदि का वर्णन समझ लेना चाहिए। इसी प्रकार शेष विदिशाओ मे भी प्रासाद और भवन कह लेना चाहिए)।

गाथार्थ इस प्रकार है—

पद्मा, पद्मप्रभा, कुमुदा, कुमुदप्रभा, उत्पलगुल्मा, नलिना, उत्पला, उत्पलोज्ज्वला, भृगा, भृगप्रभा, अजना, कज्जलप्रभा, श्रीकान्ता, श्रीमहिता, श्रीचन्द्रा और श्रीनिलया (ये सब पुष्करिणियो के नाम हैं)।

जम्बू के पूर्वीय प्रासाद के उत्तर मे, उत्तर-पूर्व दिशा के प्रासाद के दक्षिण मे कूट है। वह आठ योजन ऊचा और दो योजन गहरा है। मूल मे आठ योजन लम्बा–चौडा है, मध्यभाग मे छह योजन लम्बा–चौडा है और ऊपर चार योजन लम्बा-चौडा है। इस कूट की परिधि मूल मे कुछ अधिक पच्चीस योजन, मध्य मे अठारह योजन और ऊपर बारह योजन की है। यह मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त और ऊपर पतला है। सर्वकनकमय एव स्वच्छ है। यहाँ वेदिका और वनखण्ड का वर्णन कर लेना चाहिए। इसी प्रकार शेष (सात) कूट भी समझ लेने चाहिए।

जम्बू सुदर्शना के नाम

[१०][१] जबूए णं सुदसणाए दुवालस णामधेज्जा पण्णत्ता, तजहा—

गाहाओ—सुदंसणा अमोहा य, सुप्पबुद्धा जसोहरा।
विदेहजम्बू सोमणसा, णिअया णिच्चमडिआ ॥१॥
सुभद्दा य विसाला य सुजाया सुमणा वि आ।
सुदंसणाए जबूए, णामधेज्जा दुवालस ॥२॥

जबूए णं अट्ठट्ठमगलगा०

[१०][१] सुदर्शना जम्बू के बारह नाम कहे गए है, वे इस प्रकार हैं—

(१) सुदर्शना (२) अमोघा (३) सुप्रबुद्धा (४) यशोधरा (५) विदेहजम्बू (६) सौमनस्या (७) नियता (८) नित्यमण्डिता (९) सुभद्रा (१०) विशाला (११) सुजाता और (१२) सुमना।

जम्बू के (आगे) आठ–आठ मगल आदि (ध्वजा, छत्र आदि) हैं।

'जम्बू सुदर्शना' संज्ञा का कारण

[११][१] प्र०—से केणट्ठेणं भते ! एव वुच्चइ–जम्बू सुदसणा २ ?

उ०—गोअमा ! जबूए ण सुदसणाए अणाढिए णाम जबुद्दीवाहिवई परिवसइ, महिड्ढीए,
से ण तत्थ चउण्ह सामाणिअसाहस्सीण–जाव–आयरक्खदेवसाहस्सीण, जबुद्दीवस्स णं दीवस्स जम्बूए सुदसणाए अणाढियाए रायहाणीए अण्णेसिं च बहूण देवाणं य देवीण य–जाव–विहरइ,
से तेणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ,
अदुत्तरा च ण गोअमा ! जम्बूसुदंसणा–जाव–भुविं च, ३ धुवा णियया सासया अक्खया जाव–अवट्ठिया।

[११][१] प्र०—भगवन् ! जम्बू सुदर्शना को जम्बू सुदर्शना क्यों कहते हैं ?

उ०—सुदर्शना जम्बू पर जम्बूद्वीप का अधिपति अनादृत देव निवास करता है। वह महान् ऋद्धि का धारक है। वह चार हजार सामानिक देवों का—यावत्—सहस्रों आत्मरक्षक देवों का, जम्बूद्वीप का, सुदर्शना जम्बू का अनादृता राजधानी का तथा बहुत-से देवों और देवियों का (अधिपतित्व करता हुआ)—यावत्—रहता है। गौतम ! इस कारण ऐसा कहा जाता है।

इसके अतिरिक्त, गौतम ! सुदर्शना जम्बू—यावत्—सदा था, वह ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय—यावत्—अवस्थित है।

अनादृत देव की राजधानी

[१२][१] प्र०—कहि ण भंते ! अणाढिअस्स देवस्स अणाढिआ णाम रायहाणी पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! जम्बुद्दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण, ज चेव पुव्ववण्णिअ जमिगापमाण त चेव णेअव्व, —जाव—उववाओ अभिसेओ अ निरवसेसोत्ति[1]।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ९० पृ ३३०–३३२

[१२][१] प्र०—भगवन् ! अनादृत देव की अनादृता नामक राजधानी कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मंदर पर्वत से उत्तर में है, यमिका राजधानी का जो वर्णन पहले किया गया है वही प्रमाण यहा समझ लेना चाहिए,—यावत्—उपपात एव अभिषेक पूरा कह लेना चाहिए।

देवकुरु

[१] [१] प्र०—कहि ण भंते ! महाविदेहे वासे देवकुराणाम कुरा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेण,
णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं,
विज्जुप्पहस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं,
सोमणसवक्खारपव्वयस्स पच्चत्थिमेणं,
एत्थ ण महाविदेहे वासे देवकुराणाम कुरा पण्णत्ता।
पाईण-पडीणायया, उदीण-दाहिणवित्थिण्णा
इक्कारस जोअणसहस्साइ अट्ठ य बायाले जोअणसए दुण्णि अ एगूणवीसइभाए जोअणस्स विक्खंभेणं।
जहा उत्तरकुराए वत्तव्वया[2]—जाव—अणुसज्जमाणा
पम्हगंधा मिअगंधा अममा सहा तेतली सणिचारीति ६।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र ९७

[१] [१] प्र०—भगवन् ! महाविदेहवर्ष मे देवकुरु नामक कुरु कहाँ है ?

उ०—गौतम ! मेरुपर्वत से दक्षिण में, निषध वर्षधर पर्वत से उत्तर में, विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत से पूर्व में तथा सौमनस वक्षस्कार पर्वत से पश्चिम में, महाविदेह वर्ष में देवकुरु नामक कुरु है।

यह पूर्व-पश्चिम में लम्बा और उत्तर-दक्षिण में चौड़ा है। इसकी चौड़ाई ११८४२ $\frac{2}{19}$ योजन है। इसका वर्णन उत्तरकुरु के समान—यावत्—प्रवाह रूप से रहने वाले (१) पद्मगंध (२) मृगगंध (३) अमम (४) सह (५) तेतलिन और (६) शनैश्चारी (जाति के मनुष्य वहाँ रहते हैं।)

१—जीवा. सूत्र १४१–४२ पृ. २६२–६३.

२—जीवा प्र ३ सूत्र १४७ पृ, २६२

चित्रकूट-विचित्रकूट पर्वत

[२] [१] प्र०—कहि ण भते ? देवकुराए चित्त-विचित्त कूडा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरिल्लाओ चरिमताओ अट्ठ चोत्तीसे जोअणसए चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अवाहाए सीओआए महाणईए पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं उभओ कूले एत्थ ण चित्त-विचित्तकूडा णामं दुवे पव्वया पण्णत्ता[1] ।

एवं जच्चेव जमगपव्वयाणं सच्चेव एएसिं,

रायहाणीओ दक्खिणेणंति ।

—जम्बू. वक्ष ४ सूत्र ६८

[२] [१] प्र०—भगवन् ! देवकुरु मे चित्र-विचित्रकूट नामक दो पर्वत कहा हैं ?

उ०—गौतम ! निषध वर्षधर पर्वत के उत्तरीय चरमान्त से ८३४$\frac{4}{7}$ योजन दूर सीतोदा महानदी के पूर्व-पश्चिम के दोनो किनारो पर चित्र-विचित्रकूट नामक दो पर्वत हैं। इनका सब वर्णन यमक पर्वतो की ही भाति जानना चाहिए। (इनके अधिपति चित्रविचित्र देवो की) राजधानिया दक्षिण मे है।

निषधादि पांच द्रह

[३] [१] प्र०—कहि ण भते ! देवकुराए कुराए णिसढद्दहे णामं दहे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! तेसिं चित्त-विचित्तकूडाणं पव्वयाणं उत्तरिल्लाओ चरिमंताओ अट्ठ चोत्तीसे जोअणसए चत्तारि अ सत्तभाए जोअणस्स अवाहाए सीओआए महाणईए बहुमज्झदेसभाए त्थ णं णिसहद्दहे णामं दहे पण्णत्ते ।

एवं जच्चेव नीलवंत-उत्तरकुरु-चंद-एरावय-मालवंताणं वत्तव्वया सच्चेव णिसह-देवकुरु-सूर-सुलस विज्जुप्पभाण णेअव्वा[2] ।

रायहाणीओ दक्खिणेणंति ।

—जम्बू वक्ष. ४ सूत्र ६६

[३] [१] प्र०—भगवन् ! देवकुरु मे निषधद्रह नामक द्रह कहा है ?

उ०—गौतम ! उन चित्र-विचित्रकूट पर्वतो के उत्तरीय चरमान्त से ८३४$\frac{4}{7}$ की दूरी पर सीतोदा महानदी के बीचो बीच निषधद्रह नामक द्रह हैं। इस प्रकार पूर्वोक्त नीलवन्त, उत्तरकुरु चन्द्र, ऐरावत और माल्यवन्त (नामक उत्तर कुरु के पाच द्रहो) की वक्तव्यता के समान निषध, देवकुरु, सूर्य, सुलस तथा विद्युत्प्रभ द्रह की वक्तव्यता जान लेनी चाहिए। (इनके अधिपति देवो की) राजधानियाँ दक्षिण मे है।

कूटशाल्मली पीठ

[४] [१] प्र०—कहि णं भंते ! देवकुराए कुराए कूडसामलिपेढे णामं पेढे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! मंदरस्स पव्वयस्स दाहिण-पच्चत्थिमेण,

णिसहस्स वासहरपव्वयस्स उत्तरेणं,

---

१. ठा० अ० १० सूत्र ७६८ पृ० ४६१
२. ठा० अ० ५ उ० २ सूत्र ४३४ पृ० ३१०

विज्जुप्पभस्स वक्खारपव्वयस्स पुरत्थिमेणं,

सीओआए महाणईए पच्चत्थिमेण,

देवकुरुपच्चत्थिमद्धस्स वहुमज्झदेसभाए

एत्थ ण देवकुराए कुराए कूडसामलीपेढे णाम पेढे पण्णत्ते[1] ।

एव जच्चेव जबूए सुवसणाए[2] वत्तव्वया सच्चेव सामलीए वि भाणिअव्वा णामविहूणा ।

गरुलदेवे, रायहाणी दक्खिणेण ।

अवसिट्ठ त चेव–जाव–देवकुरु अ इत्य देवे पलिओवमट्ठिइए परिवसइ ।

से तेणट्ठेण गोअमा ! एव वुच्चइ–देवकुरा देवकुरा ।

अदुत्तर च ण देवकुराए० ।

—जम्बू वक्ष ४ सूत्र १०० पृ ३५५

[४] [१] प्र०—भगवन् ! देवकुरु मे कूटशालमली पीठ नामक पीठ कहा है ?

उ०—गौतम ! मेरु पर्वत से दक्षिण–पश्चिम मे, निपध वर्षधर पर्वत से उत्तर मे, विद्युत्प्रभ वक्षस्कार पर्वत से पूर्व मे, शीतोदा महानदी से पश्चिम मे तथा देवकुरु के पश्चिमार्ध के मध्य मे देवकुरु स्थित कूटशाल्मली नामक पीठ है । जम्बूसुदर्शन (वृक्ष) की भाति शालमली का भी, नाम को छोड कर समस्त वर्णन कर लेना चाहिए ।

यहा गरुड नामक देव रहता है । (इस देव की) राजधानी दक्षिण मे है । शेष वर्णन पूर्ववत् है । —यावत्—यहा (देवकुरु मे) देवकुर नामक पल्योपम की स्थिति वाला देव रहता है । इस कारण, गौतम ! देवकुरु, देवकुरु कहलाता है । इस के अतिरिक्त देवकुरु का यह नाम शाश्वत है ।

जम्बूद्वीपवर्त्ती पदार्थ

सग्रह गाथा—खडा जोअण वासा, पव्वय कूडा य तित्य सेढीओ ।
विजय-द्दह-सलिलाओ, पिंडए होइ सगहणी ॥१॥

[१] [१] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे भरहप्पमाणमेत्तेहि खडेहि केवइअ खडगणिएण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णउअ खडसय खडगणिएण पण्णत्ते ।

[२] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइअ जोअणगणिएण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा !

सत्तेव य कोडिसया, णउआ छप्पण्ण सयसहस्साइ ।
चउणवइ च सहस्सा, सय दिवड्ढ च गणिअपय ॥१॥

[३] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे कति वासा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! सत्त वासा, तजहा—भरहे एरवए हेमवए हिरण्णवए हरिवासे रम्मगवासे महाविदेहे ।

[४] प्र०—जम्बुद्दीवे ण भते ! दीवे कति केवइआ वासहरा पण्णत्ता ?

केवइआ मदरा पव्वया पण्णत्ता ? केवइआ चित्तकूडा, केवइआ विचित्तकूडा, केवइआ जमगपव्वया, केवइया कचणपव्वया, केवइआ वक्खारा, केवइआ दीहवेअड्ढा, केवइआ वट्टवेअड्ढा पण्णत्ता ?

---

१ ठा० अ० १० सूत्र ७६४ पृ० ४६० ।
२ „ „ „

उ०—गोअमा ! जंबुद्दीवे छ वासहरपव्वया, एगे मदरे पव्वए, एगे चित्तकूडे, एगे विचित्तकूडे, दो जमगपव्वया, दो कंचणगपव्वयसया,[1] वीस वक्खारपव्वया,[2] चोत्तीसं दीहवेअड्ढा,[3] चत्तारि वट्टवेअड्ढा,[4] एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे दीवे दुण्णि अउणत्तरा पव्वयसया भवतीतिमक्खायंति ।

[५] प्र०—जंबुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइया वासहरकूडा, केवइया वक्खारकूडा, केवइआ वेअड्ढकूडा, केवइआ मंदरकूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! छप्पण्ण वासहरकूडा, छण्णउइ वक्खारकूडा, तिण्णि छलुत्तरा वेअड्ढकूडसया, नव मदरकूडा पण्णत्ता ।

एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे चत्तारि सत्तसट्ठा कूडसया भवन्तीतिमक्खायं ।

[६] प्र०—जबुद्दीवे दीवे भरहे वासे कति तित्था ?

उ०—गोयमा ! तओ तित्था पण्णत्ता, तंजहा--मागहे, वरदामे, पभासे ।[5]

[७] प्र०—जबुद्दीवे दीवे एरवए वासे कति तित्था पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! तओ तित्था पण्णत्ता, तंजहा-मागहे, वरदामे, पभासे ।

[८] प्र०—एवामेव सपुव्वावरेणं जबुद्दीवे २ महाविदेहे वासे एगमेगे चक्कवट्टिविजए कति तित्था पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! तओ तित्था पण्णत्ता, तजहा-मागहे, वरदामे, पभासे ।

एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे २ एगे बिउत्तरे तित्थसए भवतीतिमक्खायति ।

[९] प्र०—जंबुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइआ विज्जाहरसेढीओ,
केवइआ आभिओगसेढीओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोअमा ! जंबुद्दीवे दीवे अट्ठसट्ठी विज्जाहरसेढीओ, अट्ठसट्ठी आभिओगसेढीओ पण्णत्ताओ ।

एवामेव सपुव्वावरेणं जबुद्दीवे दीवे छत्तीसे सेढिसए भवतीतिमक्खायं ।

[१०] प्र०—जबुद्दीवे दीवे केवइआ चक्कवट्टिविजया, केवइयाओ रायहाणीओ, केवइआओ तिमिसगुहाओ, केवइआओ खंडप्पवायगुहाओ, केवइआ कयमालया देवा, केवइया णट्टमालया देवा, केवइआ उसभकूडा पण्णत्ता ?

उ०—गोअमा ! जबुद्दीवे दीवे चोत्तीसं चक्कवट्टिविजया,
चोत्तीसं रायहाणीओ, चोत्तीसं तिमिसगुहाओ, चोत्तीसं खंडप्पवायगुहाओ, चोत्तीसं कयमालया देवा, चोत्तीस णट्टमालया देवा, चोत्तीसं उसभकूडा पव्वयापण्णत्ता ।

[११] प्र०—जबुद्दीवे णं भते ! दीवे केवइआ महद्दहा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! सोलस महद्दहा पण्णत्ता ।[6]

१—सम० १०२ सूत्र ३
२—(क) ठा० २, उ० ३ सूत्र ८७ पृ० ६५
(ख) ,, ४, उ० २ ,, ३०२ पृ० ३१२
(ग) ठा० ५ उ० २ सूत्र ४३४ पृ० ३१०
(घ) ,, ८ सूत्र ६३७ पृ० ४१२–१३
(ङ) ,, १० सूत्र ७६८. ४६१
३—सम० ३४ सूत्र ३
४—ठा० ४ उ० २ सूत्र ३०२ पृ० २१२–१३
५—ठा. ३ उ १ सूत्र १४२ पृ. ११६
६—ठा. ६ सूत्र ५२२ पृ. ३५०

संग्रहगाथा का अर्थ—

खण्ड, योजन, वर्ष, पर्वत, कूट, तीर्थ, श्रेणियाँ, विजय, द्रह, नदियाँ—इन सब पदार्थों का सामान्य निर्देश करने वाली यह संग्रहगाथा है।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भरत क्षेत्र के बराबर खण्डों से खण्डों की गणना कितनी है ?
उ०—खण्ड गणना से १९० खण्ड कहे गए हैं।

[२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप योजन गणना से अर्थात् योजनप्रमाण सम चौरस खण्डों से कितना है ?
उ०—गौतम ! ७९०५६९४१५० योजन जम्बूद्वीप का गणितपद—क्षेत्र है।

[३] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में कितने वर्ष हैं ?
उ०—गौतम ! सात वर्ष हैं—(१) भरत (२) ऐरवत (३) हैमवत (४) हैरण्यवत (५) हरिवर्ष रम्यकवर्ष (७) महाविदेह।

[४] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप में कितने वर्षधर (पर्वत) हैं ? कितने मन्दर पर्वत हैं ? कितने चित्रकूट, कितने विचित्रकूट, कितने यमकपर्वत, कितने कांचनपर्वत, कितने वक्षस्कार, कितने दीर्घवैताढ्य और कितने वृत्तवैताढ्य (पर्वत) हैं ?
उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप में छह वर्षधर पर्वत हैं, एक मन्दर पर्वत है, एक चित्रकूट है, एक विचित्रकूट है, दो यमक पर्वत हैं, दो सौ कांचनक पर्वत हैं, बीस वक्षस्कार पर्वत हैं, चौंतीस दीर्घ वैताढ्य हैं, चार वृत्त वैताढ्य हैं, इस प्रकार जम्बूद्वीप में मिलाकर सब २६९ पर्वत हैं।

[५] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप में कितने वर्षधरकूट हैं, कितने वक्षस्कारकूट हैं ?
उ०—गौतम ! छप्पन वर्षधरकूट हैं, छियानवे वक्षस्कारकूट हैं, तीन सौ छह वैताढ्यकूट हैं, नौ मन्दर-कूट हैं।
इस प्रकार सब मिलाकर जम्बूद्वीप में चार सौ सड़सठ कूट हैं।

[६] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के भरत वर्ष में कितने तीर्थ हैं ?
उ०—गौतम ! तीन तीर्थ हैं, वे इस प्रकार—मागध, वरदाम और प्रभास।

[७] प्र०—जम्बूद्वीप के ऐरवत वर्ष में कितने तीर्थ हैं ?
उ०—गौतम ! तीन तीर्थ हैं, वे इस प्रकार—मागध, वरदाम, प्रभास।

[८] प्र०—इस प्रकार सब मिलाकर जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष में प्रत्येक चक्रवर्ती-विजय में कितने तीर्थ हैं ?
उ०—गौतम ! तीन तीर्थ हैं, वे इस प्रकार—मागध, वरदाम और प्रभास।
इस प्रकार सब मिलाकर जम्बूद्वीप में १०२ तीर्थ हैं।

[९] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप में कितनी विद्याधरश्रेणियां हैं और कितनी आभियोगिकश्रेणियां हैं ?
उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप में ६८ विद्याधर श्रेणियां और ६८ आभियोगिकश्रेणियां हैं।
इस प्रकार सब मिलाकर जम्बूद्वीप में एक सौ छत्तीस श्रेणियां हैं।

[१०] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप में कितने चक्रवर्ती-विजय हैं, कितनी राजधानियां हैं, कितनी तमिस्रगुफाएँ हैं, कितनी खण्डप्रपात गुफाएँ हैं, कितने कृतमाल देव हैं, कितने नृत्तमाल देव हैं, और कितने ऋषभ-कूट हैं ?
उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप में चौंतीस चक्रवर्ती-विजय हैं, चौंतीस राजधानियां हैं, चौंतीस तमिस्र गुफाएँ हैं, चौंतीस खण्डप्रपात गुफाएँ हैं, चौंतीस कृतमाल देव और चौंतीस नृत्तमाल देव हैं। चौंतीस ऋषभकूट हैं।

[११] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप में कितने महाह्रद हैं।
उ०—गौतम ! सोलह महाह्रद हैं।

जम्बूद्वीप में नदियाँ

[१२] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे केवइयाओ महाणईओ वासहरपवहाओ, केवइयाओ महाणईओ कुंडप्पवहाओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे चोद्दस महाणईओ वासहरपवहाओ,[1]
छावत्तरि महाणईओ कुंडप्पवहाओ,
एवामेव सपुव्वावरेण जंबुद्दीवे दीवे णउतिं महाणईओ भवतीतिमक्खायं ।

[१३] प्र०—जंबुद्दीवे दीवे भरहेर[2]वएसु[3] वासेसु कइ महाणईओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा—
गंगा, सिंधू, रत्ता, रत्तवई ।
तत्थ णं एगमेगा महाणई चउद्दसहिं सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ,
एवामेव सपुव्वावरेण जंबुद्दीवे दीवे भरह-एरवएसु वासेसु छप्पण्णं सलिलासहस्सा भवंतीतिमक्खायंति ।

[१४] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! हेमवय[4]हेरण्णवएसु[5] वासेसु कति महाणईओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा—
रोहिता, रोहिअसा, सुवण्णकूला, रुप्पकूला ।
तत्थ णं एगमेगा महाणई अट्ठावीसाए-अट्ठावीसाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ।
एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे हेमवय-हेरण्णवएसु वासेसु बारसुत्तरे सलिलासयसहस्से भवंतीतिमक्खाय इति ।

[१५] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे हरिवास[6]-रम्मगवासेसु[7] कइ महाणईओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा—
हरी, हरिकंता, नरकंता, णारिकंता ।
तत्थ णं एगमेगा महाणई छप्पण्णाए-छप्पण्णाए सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ,
एवामेव सपुव्वावरेण जंबुद्दीवे दीवे हरिवास-रम्मगवासेसु दो चउवीसा सलिलासयसहस्सा भवंतीतिमक्खायं ।

[१६] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे महाविदेहे वासे कइ महाणईओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! दो महाणईओ पण्णत्ताओ, तंजहा—
सीआ य सीओआ य [8]।
तत्थ णं एगमेगा महाणई पर्चाहिं २ सलिलासयसहस्सेहिं बत्तीसाए अ सलिलासहस्सेहिं समग्गा पुरत्थिम पच्चत्थिमेणं लवणसमुद्दं समप्पेइ,
एवामेव सपुव्वावरेण जंबुद्दीवे दीवे महाविदेहे वासे दस सलिलासयसहस्सा चउसट्ठिं च सलिलासहस्सा भवंतीतिमक्खायं ।

१—(क) ठा. ६ सूत्र ५२२ पृ ३५०
(ख) ठा ७ सूत्र ५५५ पृ. ३७७
२-७-ठा २ उ. ३ सूत्र ८८ पृ. ६५
८—ठा० २ उ० सूत्र ८८ पृ० ६५

[१७] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स दक्खिणेण केवइया सलिलासयसहस्सा पुरत्थिम-पच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्द समप्पेति ?

उ०—गोयमा ! एगे छण्णउए सलिलासयसहस्से पुरत्थिमपच्चत्थिमाभिमुहे लवणसमुद्द समप्पेतित्ति ।

[१८] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण केवइआ सलिलासयसहस्सा पुरत्थिम-पच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्द समप्पेंति ?

उ०—गोयमा ! एगे छण्णउए सलिलासयसहस्से पुरत्थिम-पच्चत्थिमाभिमुहे—जाव— समप्पेइ ।

[१९] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइआ सलिलासयसहस्सा पुरत्थाभिमुहा लवणसमुद्द समप्पेंति ?

उ०—गोयमा ! सत्त सलिलासयसहस्सा अट्ठवीस च सहस्सा—जाव—समप्पेंति ।

[२०] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइआ सलिलासयसहस्सा पच्चत्थिमाभिमुहा लवणसमुद्द समप्पेंति ?

उ०—गोयमा ! सत्त सलिलासयसहस्सा अट्ठावीस च सहस्सा—जाव—समप्पेंति ।
एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे दीवे चोद्दस सलिलासयसहस्सा छप्पण्ण च सहस्सा भवतीति—मक्खाय इति ।

—जम्बू० वक्ष० ६ सूत्र १२५ पृ० ४२५—४२७

[१२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे कितनी महानदियाँ वर्षधर पर्वतो से उद्गत होने वाली और कितनी महानदियाँ कु डो से उद्गत होने वाली हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप मे चौदह महानदियाँ वर्षधर पर्वतो से उद्गत होती-निकलती हैं और ७६ महानदियाँ कु डो से उद्गत होती हैं । इस प्रकार सब मिलाकर जम्बूद्वीप मे नव्वे महानदियाँ हैं ।

[१३] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के भरत और ऐरवत वर्ष मे कितनी महानदियाँ हैं ?

उ०—गौतम ! चार महानदियाँ हैं, यथा–गगा, सिन्धु, रक्ता और रक्तवती ।
इनमे से प्रत्येक महानदी चौदह हजार नदियों से युक्त होकर पूर्व और पश्चिम लवणसमुद्र मे मिलती हैं । इस प्रकार सब मिलकर जम्बूद्वीप के भरत और ऐरवत वर्ष मे छप्पन हजार नदियाँ हैं ।

[१४] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे हैमवत और हैरण्यवत वर्षो मे कितनी महानदियाँ हैं ?

उ०—गौतम ! चार महानदियाँ कही हैं, यथा—रोहिता, रोहितास्या, स्वर्णकूला और रूप्यकूला ।
इनमे से प्रत्येक नदी अट्ठाईस-अट्ठाईस हजार नदियो से युक्त होकर पूर्व और पश्चिम लवणसमुद्र मे मिलती हैं ।

इस प्रकार सब मिलकर जम्बूद्वीप के हैमवत और हैरण्यवत वर्षो मे एक लाख बारह हजार नदियाँ हैं ।

[१५] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के हरिवर्ष और रम्यकवर्ष मे कितनी नदियाँ कही गई हैं ?

उ०—गौतम ! चार महानदियाँ कही हैं, यथा—हरि, हरिकान्ता, नरकान्ता और नारीकान्ता ।
इनमे से प्रत्येक नदी छप्पन छप्पन हजार नदियो मे युक्त होकर पूर्व और पश्चिम लवणसमुद्र मे मिलती हैं ।

इस प्रकार सब मिलकर जम्बूद्वीप के हरिवर्ष और रम्यकवर्ष मे दो लाख चौबीस हजार नदियाँ हैं ।

[१६] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे कितनी महानदियां हैं ?

उ०—गौतम ! दो महानदियां हैं, यथा-शीता और शीतोदा ।

इनमे से प्रत्येक नदी पाच लाख बत्तीस नदियो से युक्त होकर पूर्व और पश्चिम लवणसमुद्र मे मिलती है। इस प्रकार सब मिलकर जम्बूद्वीप के महाविदेह वर्ष मे दस लाख चौंसठ हजार नदियाँ है ।

[१७] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे, मन्दर पर्वत के दक्षिण मे कितनी लाख नदियाँ पूर्व और पश्चिम लवण-समुद्र मे मिलती है ?

उ०—गौतम ! एक सौ छ्यानवे लाख नदियाँ पूर्व और पश्चिम लवणसमुद्र मे मिलती है।

[१८] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे मन्दर पर्वत के उत्तर मे कितनी लाख नदियाँ पूर्व और पश्चिम लवणसमुद्र मे मिलती है ?

उ०—गौतम ! एक सौ छ्यानवे लाख नदियाँ पूर्व और पश्चिम लवणसमुद्र मे मिलती है ।

[१९] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे कितनी लाख नदियाँ पूर्वाभिमुख होकर लवणसमुद्र मे मिलती है ?

उ०—गौतम ! सात लाख अट्ठाईस हजार नदियाँ—यावत्—मिलती है ।

[२०] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे कितनी लाख नदियाँ पश्चिमाभिमुख होकर लवणसमुद्र मे मिलती हैं ?

उ०—गौतम ! सात लाख अट्ठाईस हजार नदियाँ—यावत्—मिलती है ।

इस प्रकार सब मिलकर जम्बूद्वीप मे चौदह लाख छप्पन हजार नदियाँ हैं, ऐसा कहा गया है।

जम्बूद्वीप-लवणसमुद्र के प्रदेशों का स्पर्श

[१] [१] प्र०—जंबुद्दीवस्स णं भंते ! दीवस्स पदेसा लवणसमुद्दं पुट्ठा ?

उ०—हंता पुट्ठा ।

[२] प्र०—ते ण भते ! किं जबुद्दीवे दीवे, लवणसमुद्दे ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवे ण दीवे, णो खलु लवणसमुद्दे ।

एव लवणसमुद्दस्सवि पएसा जबुद्दीवे पुट्ठा भाणिअव्वा इति[1] ।

—जम्बू० व० ६ सूत्र १२४ पृ० १२४

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के प्रदेश क्या लवणसमुद्र से स्पृष्ट हैं ?

उ०—हाँ, स्पृष्ट है ।

[२] प्र०—भगवन् ! वे (प्रदेश) क्या जम्बूद्वीप है या लवणसमुद्र ?

उ०—गौतम ! (वे) जम्बूद्वीप है, लवणसमुद्र नही ।

इसी प्रकार लवणसमुद्र के प्रदेश जम्बूद्वीप मे स्पृष्ट कह लेने चाहिए ।

१—जीवा० सूत्र १४६ पृ० २६१

लवणसमुद्रवर्णन

[१] जबुद्दीव णाम दीव
लवणे णाम समुद्दे वट्टे वलयागारसठाणसठिते
सव्वतो समता सपरिक्खित्ता ण चिट्ठति ।

[१] प्र०—लवणे ण भते ! समुद्दे किं समचक्कवालसठिते विसमचक्कवालसठिते ?
उ०—गोयमा ! समचक्कवालसठिए, नो विसमचक्कवालसठिए ।

[२] प्र०—लवणे ण भते समुद्दे केवतिय चक्कवालविक्खमेण केवतिय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! लवणे ण समुद्दे दो जोयणसतसहस्साइ चक्कवालविक्खमेण,[1]
पन्नरसजोयणसयसहस्साइ एगासीइसहस्साइ सयमेगोणचत्तालीसे किंचिविसेसाहिए लवणोदधिणो चक्कवालपरिक्खेवेण, [2] ।
से ण एक्काए पउमवरवेइयाए
एगेण य वणसडेण सव्वतो समता सपरिक्खित्ते चिट्ठइ ।
दोण्ह वि वण्णओ ।
सा ण पउमवर० अद्धजोयण उड्ढ ० [3]
पचधणुसयविक्खमेण लवणसमुद्दसमियपरिक्खेवेण, सेस तहेव,
से ण वणसडे देसूणाइ दो जोयणाइ-जाव-विहरइ ।

[१] लवण समुद्र नामक समुद्र, जो वृत्त एव वलयाकार है, जम्बूद्वीप नामक द्वीप को सभी ओर से घेर कर स्थित है ।

[१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र सम चक्रवाल आकार का है, या विषमचक्रवाल आकार का ?
उ०—गौतम ! समचक्रवाल-आकार का है, विषमचक्रवाल-आकार का नही ।

[२] प्र०—भगवन् ! लवण समुद्र का चक्राकार कितना विस्तृत और कितनी परिधि वाला है ?
उ०—गौतम ! लवण समुद्र का चक्राकार दो लाख योजन चौडा है एव १५८११३९ योजन से कुछ अधिक की परिधि वाला है ।

इसके चारो ओर एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड है । इन दोनो का वर्णन समझ लेना चाहिए । यह पद्मवरवेदिका आधा योजन ऊची, पाच सौ धनुष चौडी एव लवणसमुद्र के बराबर परिधि वाली है । शेष वर्णन उसी प्रकार है । वनखण्ड कुछ कम दो योजन है-यावत्-(यहाँ देव) विचरता है ।

---

१. (क) ठा. २ उ० ३ सूत्र ९१ पृ० ७४ ।
(ख) सम. सूत्र १२५ पृ० ११८ ।
२ लवणस्समुद्दस्स ण पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ पच्चत्थिमिल्ले चरमते एस ण पच जोयणसयसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते । स० १२८
३. ठा २, उ ३ सूत्र ९१ पृ ७४

लवणसमुद्र की गहराई

[२] [१] प्र०—लवणे ण भंते ! समुद्दे केवतिय उव्वेहपरिवुड्ढीते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! लवणस्स[1] णं समुद्दस्स उभओ पासिं पचाणउति २ पदेसे गंता पदेसं उव्वेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ।

पंचाणउति २ वालग्गाइं गंता वालग्ग उव्वेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ।

पंचाणउति २ लिक्खाओ गंता लिक्खा उव्वेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ।

एव जूया जवाओ जवमज्झे अगुल-विहत्थि-रयणी-कुच्छी-धणुउव्वेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ।

गाउय-जोयण-जोयणसत-जोयणसहस्साइ गता जोयणसहस्स उव्वेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ।

[२] प्र०—लवणे ण भते ! समुद्दे केवतियं उस्सेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! लवणस्स ण समुद्दस्स उभओ पासिं पचाणउतिं पदेसे गता सोलसपदेसे उस्सेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ।

गोयमा ! लवणस्स ण समुद्दस्स एएणेव कमेणं-जाव-पचाणउतिं २ जोयणसहस्साइं गंता सोलस[2] जोयणसहस्साइं उस्सेधपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ।

[२] [१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र मे गहराई की वृद्धि कितनी है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के दोनों ओर (जम्बूद्वीप की वेदिका एव लवणसमुद्र की वेदिका के अन्त से आरम्भ करके) पचानवे-पचानवे प्रदेश जाने पर एक प्रदेश की गहराई की वृद्धि होती है। पचानवे-पचानवे वालाग्र जाने पर एक वालाग्र की गहराई की वृद्धि होती है, पचानवे-पचानवे लिक्षा (लीख) जाने पर एक लिक्षा की गहराई की वृद्धि होती है। इसी प्रकार पचानवे यव, यवमध्य, अगुल, वितस्ति, रत्नि, कुक्षि, धनुष आदि की वृद्धि समझ लेनी चाहिए। गव्यूति, योजन, सौ योजन और हजार योजन जाने पर गव्यूति, योजन, सौ योजन और हजार योजन की गहराई की वृद्धि होती है।

[२] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र की शिखावृद्धि कितनी है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के दोनो ओर पचानवे-पचानवे प्रदेश जाने पर सोलह प्रदेशो की शिखावृद्धि होती है। गौतम ! इसी क्रम से-यावत्-पचानवे हजार योजन पर्यन्त जाने पर सोलह हजार योजन की शिखावृद्धि समझ लेनी चाहिए।

लवणसमुद्र के जल की हानि-वृद्धि

[३] [१] प्र०—कम्हा णं भंते ! लवणसमुद्दे चाउद्दस-ट्ठमु-द्दिट्ठ-पुण्णिमासिणीसु अतिरेगं २ वड्ढति वा हायति वा ?

उ०—गोयमा ! जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स चउद्दिसिं बाहिरिल्लाओ वेइयंताओ लवणसमुद्दं पंचाणउतिं २ जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता[3] एत्थ णं चत्तारि महालिंजरसठाणसंठिया महइमहालया महापायाला पण्णत्ता, तंजहा—

वलयामुहे १ केतूए २ जूवे ३ ईसरे[4] ४।

ते णं महापायाला एगमेगं जोयणसयसहस्सं उव्वेहेणं,

१—सम ९५ सूत्र ३ (सक्षिप्त)
२— „ १६ सू. २ („)
३—सम. ९५ सूत्र २
४—ठा ४, उ. २ सूत्र ३०५ पृ. २१५।

मूले दस जोयणसहस्साइं विक्खभेण,
मज्झे एगपदेसियाए सेढीए जोयणसतसहस्स विक्खमेणं,
उवरिं मुहमूले दस जोयणसहस्साइं विक्खमेणं,[1]
तेसि ण महापायालाण कुड्डा सव्वत्थ समा,
दस जोयणसतबाहल्ला पण्णत्ता,
सव्ववइरामया अच्छा-जाव-पडिरूवा !
तत्थ ण बहवे जीवा पोग्गला य अवक्कमति विउक्कमति चयति उवचयति,
सासया ण ते कुड्डा दव्वट्ठयाए,
वण्णपज्जवेहिं ० असासया ।
तत्थ णं चत्तारि देवा महिड्ढीया-जाव-पलिओवमट्ठितीया परिवसति, तंजहा—
काले १ महाकाले २ वेलंबे ३ पभजणे ४
तेसि ण महापायालाणं तओ तिभागा पण्णत्ता, तजहा—
हेट्ठिल्ले तिभागे, मज्झिल्ले तिभागे, उवरिमे तिभागे ।
ते ण तिभागा तेत्तीस जोयणसहस्सा तिण्णि य तेत्तीस जोयणसत जोयणतिभाग च बाहल्लेण,
तत्थ ण जे से हेट्ठिल्ले तिभागे एत्थ ण वाउकाओ सचिट्ठति,
तत्थ ण जे से मज्झिल्ले तिभागे एत्थ णं वाउकाए य आउकाए य सचिट्ठति,
तत्थ ण जे से उवरिल्ले तिभागे एत्थ ण आउकाए सचिट्ठति ।
अदुत्तर च ण गोयमा ! लवणसमुद्दे तत्थ २ देसे बहवे खुड्डालिजरसंठाणसठिया खुड्डपायालकलसा पण्णत्ता ।
ते ण खुड्डा पाताला एगमेगं जोयणसहस्स उव्वेहेण,
मूले एगमेग जोयणसत विक्खभेण,
मज्झे एगपदेसियाए सेढीए एगमेग जोयणसहस्स विक्खमेणं,
उप्पि मुहमूले एगमेग जोयणसत विक्खमेणं ।
तेसि ण खुड्डागपायालाण कुड्डा सव्वत्थ समा,
दस जोयणाइ बाहल्लेण पण्णत्ता
सव्ववइरामया अच्छा-जाव-पडिरूवा ।
तत्थ णं बहवे जीवा पोग्गला य जाव-असासया वि ।
पत्तेयं २ अद्धपलिओवमट्ठितीयाहिं देवताहिं परिग्गहिया ।
तेसि ण खुड्डगपातालाणं ततो तिभागा पण्णत्ता, तजहा—
हेट्ठिल्ले तिभागे, मज्झिल्ले तिभागे, उवरिल्ले तिभागे ।
ते णं तिभागा तिण्णि तेत्तीसे जोयणसते जोयणतिभाग च बाहल्लेणं पण्णत्ते ।
तत्थ ण जे से हेट्ठिल्ले तिभागे एत्थ णं वाउकाओ, मज्झिल्ले तिभागे वाउआए आउयाए य, उवरिल्ले आउकाए ।
एवामेव सपुव्वावरेण लवणसमुद्दे सत्त पायालसहस्सा अट्ठ य चुलसीता पातालसता भवतीति मक्खाया ।
तेसि ण महापायालाण खुड्डगपायालाण य हेट्ठिममज्झिमिल्लेसु तिभागेसु बहवे ओराला वाया,
ससेयति समुच्छिमति एयति चलति कपति खुब्भति घट्ट ति फदति त त भाव परिणमति,
तया ण से उदए उण्णामिज्जति ।
जया ण तेसिं महापायालाणं खुड्डागपायालाण य हेट्ठिल्लमज्झिल्लेसु तिभागेसु नो बहवे ओराला-जाव-त त भाव न परिणमति ।

१—ठा. अ १० सूत्र ७२० पृ. ४५३ (सामान्य पाठभेद)

तया णं से उदए नो उन्नामिज्जइ ।
अंतरा वि य णं ते वाय उदीरेंति ।
अंतरा वि य णं से उदगे उण्णामिज्जइ ।
अंतरा वि य ण ते वाया नो उदीरति ।
अंतरा वि य णं से उदगे णो उण्णामिज्जइ ।
एव खलु गोयमा ! लवणसमुद्दे चाउद्दस-ट्ठमु-द्दिट्ठ-पुण्णमासिणीसु अइरेगं २ वड्ढति वा हायति वा ।

—जीवा सूत्र १५६ पृ ३०४-५

[३ [१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र (का पानी) चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा को अधिकाधिक बढता व घटता क्यो है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के चारो ओर की बाहरी वेदिकाओ के अन्त से लवणसमुद्र मे ६५ हजार योजन आगे जाने पर महा आलिंजर (विशाल कुम्भ) के आकार के चार बड़े-बडे महापाताल कहे गये है। उनके नाम ये हैं—(१) वलयमुख (२) केतुक (३) यूप और (४) ईश्वर । ये महापाताल एक लाख योजन गहरे एव मूल मे दस हजार योजन चौडे है। एक-एक प्रदेश की श्रेणी से (बढते-बढते) मध्य मे एक लाख योजन चौडे हो गए है। ऊपर के मुखमूल मे (एक-एक प्रदेश की श्रेणी से कम होते-होते) दस हजार योजन रह गए हैं। इन महापातालो की कुडय (दीवार) सर्वत्र समान है। यह एक हजार योजन मोटी, सर्ववज्रमय, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप है।

यहा अनेक जीव और पुद्गल जाते है, उत्पन्न होते है, चय और उपचय को प्राप्त होते है। यह कुड्य द्रव्य दृष्टि से शाश्वत तथा वर्णपर्याय आदि की दृष्टि से अशाश्वत है।

यहाँ महर्द्धिक—यावत्—एव पल्योपम की स्थिति वाले चार देव रहते है, यथा—(१) काल (२) महाकाल (३) वेलम्ब और (४) प्रभजन ।

इन महापातालो के तीन त्रिभाग है, यथा—नीचे का त्रिभाग, मध्य का त्रिभाग और ऊपर का त्रिभाग ।

त्रिभाग ३३३३३$\frac{1}{3}$ योजन मोटे है। इनमे से जो नीचे का त्रिभाग है उसमे वायुकाय है। इनमे जो मध्य का त्रिभाग है उसमे वायुकाय और अप्काय है। इन मे जो ऊपर का त्रिभाग है उसमे अप्काय है। इसके अतिरिक्त, गौतम ! लवणसमुद्र मे यत्र-तत्र छोटे कुम्भ के आकार के क्षुद्र पातालकलश है।

ये क्षुद्र पाताल एक हजार योजन गहरे एव मूल मे सौ योजन चौडे है। मध्य मे एक-एक प्रदेश बढते बढते एक हजार योजन चौडे हो गए है। ऊपर के मुखमूल मे (एक-एक प्रदेश घटते-घटते) सौ योजन चौडे रह गए हैं।

इन क्षुद्र पातालो की कुड्य (दीवार) सर्वत्र समान है। इसकी मोटाई दस योजन है। यह सर्व-वज्रमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप है। यहाँ बहुत-से जीव और पुद्गल (जाते, उत्पन्न होते हैं) यावत् (यह वर्णादि पर्यायो से) अशाश्वत है। यहाँ पृथक्-पृथक् अर्घ पल्योपम की स्थिति वाले देव रहते हैं।

इन क्षुद्र पातालो के तीन त्रिभाग है, यथा—निचला त्रिभाग, विचला त्रिभाग और ऊपरला त्रिभाग ।

ये त्रिभाग ३३३$\frac{1}{3}$ योजन मोटे हैं। इनमे जो निचला त्रिभाग है उसमे वायुकाय है, विचले त्रिभाग मे वायुकाय और अप्काय हैं और ऊपरले त्रिभाग मे अप्काय है।

इस प्रकार सब मिलकर लवणसमुद्र मे ७८८४ पाताल हैं।

इन महापातालो और क्षुद्रपातालो के निचले और विचले त्रिभागो मे अनेक उदार (ऊर्ध्व गमन करने वाले) वायुकाय (के जीव) उत्पन्न होते है, सम्मूर्छित होते हैं, हिलते हैं, चलते हैं, कम्पित

होते है, क्षुब्ध होते हैं, रगडते हैं, घर्षित होते हैं और अनेक प्रकार की क्रियाएं करते हैं। तब वहाँ का पानी ऊँचा उछलता है। जब इन महापातालो एव क्षुद्र पातालो के निचले और बिचले त्रिभागो मे अनेक उदार (वायुकाय के जीव) यावत्—विविध प्रकार की क्रियाएँ नही करते, तब पानी ऊँचा नही उछलता है। इसके अतिरिक्त समय मे भी जब वायुकाय की उदीरणा होती है तो पानी उछलता है और जब वायुकाय की उदीरणा नही होती तो पानी नही उछलता। इस प्रकार गौतम ! लवणसमुद्र मे चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा को पानी अधिकाधिक बढता है और घटता है।

[४] [१] प्र०—लवणे ण भते ! समुद्दे तीसाए मुहुत्ताण कतिखुत्तो अतिरेग २ वड्ढति वा हायति वा ?

उ०—गोयमा ! लवणे ण समुद्दे तीसाए मुहुत्ताण दुक्खुत्तो अतिरेग २ वड्ढति वा हायति वा।

[२] प्र०—से केणट्ठेण भंते एवं वुच्चइ—
लवणे ण समुद्दे तीसाए मुहुत्ताण दुक्खुत्तो अइरेग २ वड्ढइ वा हायइ वा ?

उ०—गोयमा ! उड्ढमतेसु पायालेसु वड्ढइ,
आपूरितेसु पायालेसु हायइ,
से तेणट्ठेण गोयमा ! लवणे ण समुद्दे तीसाए मुहुत्ताण दुक्खुत्तो अइरेग २ वड्ढइ, वा हायइ वा।

[३] प्र०—लवणसिहा णं भते ! केवतिय चक्कवालविक्खभेणं,
केवतिय अइरेग २ वड्ढति वा हायति या ?

उ०—गोयमा ! लवणसिहाए ण दस जोयणसहस्साइं चक्कवालविक्खभेण,
अद्धजोयण अतिरेग वड्ढति वा हायति वा।

[४] [१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र मे तीस मुहूर्त्त (अहोरात्रि) मे कितनी वार पानी अधिकाधिक बढता व घटता है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र मे तीस मुहूर्त्त में दो बार पानी अधिकाधिक बढता व घटता है।

[२] प्र०—भगवन् ! किस कारण ऐसा कहा गया है कि लवणसमुद्र मे तीस मुहूर्त्त मे दो वार पानी अधिकाधिक बढता व घटता है ?

उ०—गौतम ! पातालो मे (पानी) ऊचा आने पर बढता है और पातालो मे (वायु) भर जाने पर घटता है। इस कारण गौतम ! लवणसमुद्र मे तीस मुहूर्त्त मे दो वार पानी अधिकाधिक बढता व घटता है।

[३] प्र०—भगवन् ! लवणशिखा की चक्राकार चौडाई कितनी है तथा यह कितनी अधिकाधिक बढती और घटती है ?

उ०—गौतम ! लवणशिखा दस हजार योजन चक्राकार चौडी है व आधा योजन से कुछ कम अधिकाधिक बढती और घटती है।

लवणसमुद्र का वेलाधारण

[५] [१] प्र०—लवणस्स ण भते ! समुद्दस्स कति णागसाहस्सीओ अब्भितरियं वेल धरेंति ?
कइ नागसाहस्सीओ बाहिरिय वेल धरति ?
कइ नागसाहस्सीओ अग्गोदयं धरेंति ?

उ०—गोयमा ! लवणसमुद्दस्स वायालीसं णागसाहस्सीओ अब्भितरियं वेलं धारेंति,[1]
वावत्तरिं णागसाहस्सीओ बाहिरियं वेल धारेंति[2],
सट्ठि णागसाहस्सीओ अग्गोदयं धारेंति[3],
एवामेव सपुव्वावरेणं एगा णागसतसाहस्सी
चोवत्तरिं च णागसहस्सा भवतीति मक्खाया ।

जीवा. सूत्र १५६ पृ. ३०४-५

[५] [१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र की आभ्यन्तर वेला को कितने हजार नाग धारण करते हैं ? बाह्य वेला को कितने हजार नाग धारण करते हैं ? और अग्रोदक को कितने हजार नाग धारण करते है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र की आभ्यन्तर वेला को ४२ हजार नाग धारण करते हैं, बाह्य वेला को ७२ हजार नाग धारण करते हैं और अग्रोदक को ६० हजार नाग धारण करते है । इस प्रकार सब मिलकर एक लाख, चौहत्तर हजार नाग है ।

लवणसमुद्र में वेलंधर आदि

[६] [१] प्र०—अत्थि णं भंते ! लवणसमुद्दे वेलधराति वा णागराया, खन्नाति वा, अग्घाति वा, सिंहाति वा, विजाती वा, हासवट्टीति वा ?

उ०—हंता अत्थि ।

[२] प्र०—जहा णं भंते ! लवणसमुद्दे अत्थि वेलधराति वा णागराया, अग्घा सिंहा विजाती वा, हासवट्टीति वा, तहा णं बाहिरएसु समुद्देसु अत्थि वेलधराइ वा णागरायाति वा अग्घाति वा सीहाति वा विजातीति वा हासवट्टीति वा ?

उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

—जीवा० सूत्र १६८ पृ० ३२०

[६]]१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र मे वेलधर नागराज हैं ? खन्न, अग्घ, सीह, विजाति तथा हासवट्टी मच्छ, कच्छ हैं ?

उ०—हाँ है ।

[२] प्र०—भगवन् ! जिस प्रकार लवणसमुद्र मे नागराज वेलधर, अग्घ, सिंह, विजाति एव हासवट्टी हैं, उसी प्रकार क्या बाह्य समुद्रो मे वेलधर नागराज, अग्घ, सिंह, विजाति एव हासवट्टी (मच्छ–कच्छ) हैं ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही, अर्थात् नही हैं ।

वेलंधर नागराज

[७] [१] प्र०—कति ण भंते वेलंधरा णागराया पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि वेलधरा णागराया पण्णत्ता, तजहा—
गोथूभे, सिवए, संखे, मणोसिलए ।

[२] प्र०—एतेसि ण भते ! चउण्ह वेलधरणागरायाणं कति आवासपव्वता पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि आवासपव्वता पण्णत्ता, तंजहा—
गोथूभे, उदगभासे, संखे, दगसीमाए ।

१—सम. ४२ सूत्र ७
२—सम. ७२ सूत्र २·
३—सम. ६० सूत्र २.

[३] प्र०—कहि ण भंते ! गोथूभस्स वेलधरणागरायस्स गोथूभे णाम आवासपव्वते पण्णत्ते[1] ?

उ०—गोयमा ! जंबूदीवे दीवे मन्दरस्स पुरत्थिमेण,

लवण समुद्द बायालीस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता,

एत्थ ण गोथूभस्स वेलधरणागरायस्स गोथूभे णाम आवासपव्वते पण्णत्ते[2],

सत्तरसएक्कवीसाइ जोयणसताइ उड्ढ उच्चत्तेण[3],

१—जबुद्दीवस्स ण दीवस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ गोथूभस्स ण आवासपव्वयस्स पच्चत्थिमिल्ले चरमते एस ण बायालीस जोयणसहस्साइ अबाहातो अतरे पण्णत्ते। एव चउद्दिसि पि दओभासे, सखे, दयसीमे य।

—सम० ४२ सूत्र २–३

जबुद्दीवस्स ण दीवस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ गोथूभस्स ण आवासपव्वयस्स पुरच्छिमिल्ले चरमते एस ण तेयालीस जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। एव चउद्दिसि पि दगभासे सखे दयसीमे य।

—सम० ४३ सूत्र ३–४

गोथूभस्स ण आवासपव्वयस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ वलयामुहस्स महापायालस्स पच्चच्छिमिल्ले चरमते एस ण बावन्न जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। एव दगभासस्स केउगस्स, सखस्स जूयगस्स, दगसीमस्स ईसरस्स।

—सम० ५२ सूत्र० २–३

गोथूभस्स ण आवासपव्वयस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ वलयामुहस्स महापायालस्स बहुमज्झदेसभाए एस ण सत्तावन्न जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। एव दगभासस्स केउयस्स य, सखस्स जूयस्स य, दयसीमस्स ईसरस्स य।

सम० ५७ सूत्र० २–३

गोथूभस्स ण आवासपव्वयस्स पच्चत्थिमिल्लाओ चरमताओ वलयामुहस्स महापायालस्स बहुमज्झदेसभाए एस ण अट्ठावन्न जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। एव चउदिसि पि नेयव्व।

—सम० ५८ सूत्र० ३–४

मंदरस्स ण पव्वयस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ गोथूभस्स आवासपव्वयस्स पच्चत्थिमिल्ले चरमते एस ण सत्तासीइ जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते।

मंदरस्स ण पव्वयस्स दक्खिणिल्लाओ चरमताओ दगभासस्स आवासपव्वयस्स उत्तरिल्ले चरमंते एस ण सत्तासीइ जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते।

एव मदरस्स पच्चत्थिमिल्लाओ चरमताओ संखस्स आवासपव्वयस्स पुरत्थिमिल्ले चरमते एस ण सत्तासीइ जोयणसहस्साइ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

एव चेव मदरस्स उत्तरिल्लाओ चरमताओ दगसीमस्स आवासपव्वयस्स दाहिणिल्ले चरमते एस ण सत्तासीई जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते।

—सम० ८७ सूत्र १–४

मंदरस्स ण पव्वयस्स बहुमज्झदेसभागाओ गोथुभस्स आवासपव्वयस्स पच्चत्थिमिल्ले चरमते एस ण बाणउइं जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। एवं चउण्हपि आवासपव्वयाण।

—सम० ९२ सूत्र० ३–४

मंदरस्स णं पव्वयस्स पच्चत्थिमिल्लाओ चरमताओ गोथुभस्स ण आवासपव्वयस्स पच्चत्थिमिल्ले चरमंते एस णं सत्ताणउइ जोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। एव चउदिसि पि।

—सम० ९७ सूत्र० १–२

मदरस्स ण पव्वयस्स पच्चत्थिमिल्लाओ चरमताओ गोथूभस्स आवासपव्वयस्स पुरत्थिमिल्ले चरमते एस ण अट्ठाणउइजोयणसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते। एव चउदिसिपि।

—सम० ९८ सूत्र० २ ३

२— ठाणा० ४ उ० २ सूत्र० ३०५ पृ० ३१५

३— सम० १७ सूत्र० ४

चत्तारि तीसे जोयणसते कोसं च उव्वेघेणं,
मूले दस बावीसे जोयणसते आयाम-विक्खभेणं,
मज्झे सत्ततेवीसे जोयणसते,
उवरिं चत्तारि चउवीसे जोयणसए आयाम-विक्खभेणं,
मूले तिण्णि जोयणसहस्साइ दोण्णि य बत्तीसुत्तरे जोयणसए किंचिविसेसूणे, परिक्खेवेणं,
मज्झे दो जोयणसहस्साइ दोण्णि य छलसीते जोयणसते किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण,
उवरि एग जोयणसहस्स तिण्णि य ईयाले जोयणसते किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं,
मूले वित्थिण्णे, मज्झे सखित्ते, उप्पि तणुए, गोपुच्छ—संठाणसठिए, सव्वकणकामए, अच्छे—जाव पडिरूवे ।
से णं एगाए पउमवरवेदियाए एगेण य वणसंडेण सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, दोण्हवि वण्णओ ।
गोथूभस्स ण आवासपव्वयस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते—जाव—आसयंति ।
तस्स ण बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ ण एगे महं पासायवडेंसए बावट्ठं जोयणद्ध च उड्ढं उच्चत्तेणं,
त चेव पमाण, अद्ध आयाम-विक्खभेणं, वण्णओ-जाव-सीहासण सपरिवारं ।

[४] प्र०—से केणट्ठेणं भते ! एव वुच्चइ गोथूभे आवासपव्वए २ ?

उ०—गोयमा ! गोथूभे ण आवासपव्वते तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहुओ खुड्डाखुड्डियाओ-जाव-गोथूभ-वण्णाइ बहूइ उप्पलाइ, तहेव-जाव-गोथूभे तत्थ देवे महिड्ढीए -जाव-पलिओवमट्ठितीए परिवसति,
से ण तत्थ चउण्ह सामाणियसाहस्सीण-जाव-गोथूभयस्स आवासपव्वयस्स, गोथूभाए रायहाणीए-जाव-विहरति ।
से तेणट्ठेणं-जाव-णिच्चे ।

[५] प्र०—रायहाणि-पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! गोथूभयस्स आवासपव्वतस्स पुरत्थिमेणं तिरियमसंखेज्जे दीव-समुद्दे वीतिवइत्ता अण्णंसि लवणसमुद्दे, तं चेव पमाण, तहेव सव्वं ।

[६] प्र०—कहि णं भंते ! सिवगस्स वेलधरणागरायस्स दओभासणामे आवासपव्वते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे ण दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दक्खिणेण, लवणसमुद्दं बायालीसं जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता, एत्थ ण सिवगस्स वेलंधरणागरायस्स दओभासे णामं आवासपव्वते पण्णत्ते ।
त चेव पमाण जं गोथूभस्स, णवरि सव्वअकामए अच्छे-जाव-पडिरूवे-जाव-अट्ठो भाणियव्वो ।
गोयमा ! दओभासे णं आवासपव्वते लवणसमुद्दे अट्ठजोयणियखेत्ते दगं सव्वतो समता ओभासेति उज्जोवेति तवति पभासेति ।
सिवए इत्थ देवे महिड्ढीए-जाव- रायहाणी से दक्खिणेणं सिविगा दओभासस्स, सेस त चेव ।

[७] प्र०—कहि णं भते ! सखस्स वेलधरणागरायस्स सखे णाम आवासपव्वते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा! जबुद्दीवे णं दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमेण बायालीस जोयणसहस्साइं एत्थ णं संखस्स वेलधरणागरायस्स सखे णाम आवासपव्वते,
त चेव पमाण, णवर सव्वरययामए अच्छे ।
से णं एगाए पउमवरवेदियाए एगेण य वणसंडेण-जाव-अट्ठो,
बहूओ खुड्डाखुड्डिआओ-जाव- बहूइ उप्पलाइं सखाभाइं संखवण्णाइं संखवण्णाभाताइं,
सखे एत्थ देवे महिड्ढीए-जाव-रायहाणीए पच्चत्थिमेण सखस्स आवासपव्वयसस्स सखा नाम रायहाणी तं चेव पमाण,

[८] प्र०—कहि ण भते ! मणोसिलकस्स वेलधरणागरायस्स उदगसीमाए णाम आवासपव्वते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स उत्तरेण लवणसमुद्द बायालीस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता, एत्थ ण मणोसिलगस्स वेलधरणागरायस्स उदगसीमाए णाम आवासपव्वते पण्णत्ते,
त चेव पमाण, णवरि सव्वफलिहामए अच्छे-जाव-अट्ठो ।
गोयमा ! दगसीमते ण आवासपव्वते सीता-सीतोदगाण महाणदीण तत्थ गतो सोए पडिहम्मति, से तेणट्ठेण-जाव- णिच्चे ।
मणोसिलए एत्थ देवे महिड्ढीए-जाव-से ण तत्थ चउण्ह सामाणियसाहस्सीण-जाव-विहरति ।

[९] प्र०—कहि ण भते ! मणोसिलगस्स वेलधरणागरायस्स मणोसिला णाम रायहाणी ?

उ०—गोयमा ! दगसीमस्स आवासपव्वयस्स उत्तरेण तिरिय० अण्णमि लवणे, एत्थ ण मणोसिलिया णाम रायहाणी पण्णत्ता, त चेव पमाण-जाव-मणोसिलाए देवे ।

गाहा—कणगकरययफालियमया य वेलधराणमावासा ।
अणुवेलधरराईण पव्वया होति रयणमया ।।१।।

—जीवा सूत्र १५९ पृ ३०९-१०

[७] [१] प्र०—भगवन् ! वेलधर नागराज कितने हैं ?

उ०—गौतम ! वेलधर नागराज चार हैं, यथा—गोस्तूप, शिवक, शख और मन शिलाक ।

[२] प्र०—भगवन् ! इन वेलधर नागराजो के कितने आवास-पर्वत हैं ?

उ०—गौतम ! चार आवास-पर्वत हैं, यथा—गोस्तूप, उदकमास, शख और दकसीम ।

[३] प्र०—भगवन् ! गोस्तूप वेलधर नागराज का गोस्तूप नामक आवास-पर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीपस्थित मन्दर (पर्वत) से पूर्व मे, बयालीस हजार योजन लवणसमुद्र मे अवगाहन करने पर, यहाँ गोस्तूप वेलधर नागराज का गोस्तूप नामक आवास-पर्वत है। वह १७२१ योजन ऊँचा, ४३० योजन और एक कोस गहरा, मूल मे १०२२ योजन लम्बा-चौडा, मध्य मे ७२३। योजन और ऊपर ४२४ योजन लम्बा-चौडा है ।

उसकी परिधि मूल मे ३२३२ योजन से कुछ कम, मध्य मे २२८६ योजन से कुछ अधिक और ऊपर १३४१ योजन से कुछ कम है। अतएव वह मूल मे विस्तीर्ण, मध्य मे सक्षिप्त और ऊपर पतला है । गोपुच्छ के आकार का, सर्वकनकमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप है ।

वह पर्वत एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से सब ओर से घिरा है। यहाँ दोनो का वर्णन समझ लेना चाहिए ।

गोस्तूप आवास पर्वत के ऊपर अत्यन्त सम एवं रमणीय भूमिभाग है—यावत्—देवगण वहाँ बैठते हैं ।

उस सम एव रमणीय भूमिभाग के बीचोबीच एक महान् प्रासादावतसक है जो ६२।। योजन ऊँचा है । उसका वही प्रमाण है । आधा (३२।) योजन लम्बा-चौड़ा है । उसका वर्णन समझ लेना चाहिए—यावत—सपरिवार सिंहासन है ।

[४] प्र०—भगवन् ! गोस्तूप आवास पर्वत, गोस्तूप आवास पर्वत क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! गोस्तूप आवास पर्वत के ऊपर स्थान-स्थान पर छोटी-छोटी वापियाँ—यावत्—गोस्तूप के वर्ण के बहुत उत्पल हैं, इत्यादि ।—यावत्—वहाँ गोस्तूप देव रहता है जो महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला है । वह वहाँ चार हजार सामानिक देवो का—यावत्—गोस्तूप आवास पर्वत का, गोस्तूपा राजधानी का (आधिपत्य करता हुआ)—यावत्—रहता है । इस कारण से (इसका नाम गोस्तूप) है—यावत्—(यह नाम) नित्य है ।

[५] प्र०—राजधानी सबधी प्रश्न ?

उ०—गौतम ! गोस्तूप आवास-पर्वत से पूर्व मे, तिर्छे असंख्यात द्वीप-समुद्रो को लाघने पर दूसरे लवण-समुद्र मे है। वही उसका प्रमाण है, सब उसी प्रकार समझ लेना चाहिए।

[६] प्र०—भगवन् ! शिवक वेलधर नागराज का दकभास नामक आवासपर्वत कहाँ है ?

गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से दक्षिण मे, बयालीस हजार योजन लवणसमुद्र मे जाने पर शिवक वेलधर नागराज का दकभास नामक आवासपर्वत है। गोस्तूप पर्वत का जो प्रमाण है वही इसका है। विशेष यह कि यह पर्वत सर्वअकरत्नमय है, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप है।—यावत्—इसके नाम का कारण कह लेना चाहिए। गौतम ! दकभास आवासपर्वत लवणसमुद्र मे आठ योजन क्षेत्र मे जल को दिशाओ और विदिशाओ मे अवभासित, उद्योतित, तप्त और प्रभासित करता है। यहाँ शिवक नामक महर्द्धिक देव निवास करता है।—यावत्—उसकी शिविका राजधानी दक्षिण मे है। शेष सब वर्णन वही है।

[७] प्र०—शख वेलधर नागराज का शख नामक आवासपर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से पश्चिम मे, लवणसमुद्र मे बयालीस हजार योजन जाने पर वेलधर नागराज शख का शख नामक आवास पर्वत है। उसका प्रमाण वही है। विशेष यह कि यह पर्वत सर्वरजतमय है, स्वच्छ है। वह एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से (घिरा है)—यावत्—उसके नाम का हेतु समझ लेना चाहिए। वहाँ बहुतेरी छोटी-छोटी (वापिकाएँ हैं)—यावत्—शख की आभा वाले, शख के वर्ण के, शख के वर्ण की आभा वाले बहुत-से उत्पल (कमल) हैं। यहाँ शख नामक महर्द्धिक देव है—यावत्—शंख आवासपर्वत से पश्चिम मे शखा नामक राजधानी है। उसका प्रमाण वही है।

[८] प्र०—भगवन् ! मन शिलाक वेलंधर नागराज का उदकसीम नामक आवासपर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से उत्तर मे, लवणसमुद्र मे बयालीस हजार योजन जाने पर मन शिलाक वेलधर नागराज का उदकसीम नामक आवासपर्वत है। उमका प्रमाण वही है। विशेषता यह कि यह पर्वत सर्वस्फटिकमय, स्वच्छ है—यावत्—उसके नाम का कारण समझ लेना चाहिए।

गौतम ! उदकसीम आवासपर्वत वहाँ के शीता और शीतोदा महानदियो के जलप्रवाह को प्रतिहत करता है, इस कारण (यह पर्वत दकसीम कहलाता है)—यावत्—(इसका यह नाम) नित्य है। यहाँ मन शिलाक नामक महर्द्धिक देव है जो—यावत्—चार हजार सामानिक देवों का अधिपतित्व करता हुआ विहार करता है।

[९] प्र०—मन शिलाक वेलधर नागराज की मन शिला नामक राजधानी कहाँ है ?

उ०—गौतम ! दकसीम आवासपर्वत से उत्तर मे, तिर्छे, अन्य लवणसमुद्र मे मन शिला नामक राजधानी है। उसका प्रमाण वही है—यावत्—वहाँ मन शिलाक देव है। (गाथार्थ) वेलधरो के आवास-(पर्वत) कनकमय, अकरत्नमय, रजत और स्फटिकमय है। अनुवेलधरराजो के पर्वत रत्नमय होते हैं ॥१॥

अनुवेलंधर नागराज

[८] [१] प्र०—कइ णं भंते ! अणुवेलंधररायाणो पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि अणुवेलधरणागरायाणो पण्णत्ता, तजहा–कक्कोडए, कद्दमए, केलासे, अरुणप्पभे।

[२] प्र०—एतेसि णं भंते ! चउण्हं अणुवेलधरणागरायाणं कति आवासपव्वया पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि आवासपव्वया पण्णत्ता तजहा—कक्कोडए, विज्जुप्पभे, कइलासे, अरुणप्पभे।

[३] प्र०—कहि ण भते ! कक्कोडगस्स अणुवेलंधरणागरायस्स कक्कोडए णाम आवासपव्वते पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जवुद्दीवे २ मदरस्स पव्वयस्स उत्तर-पुरच्छिमेण लवणसमुद्द बायालीस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता,

एत्थ ण कक्कोडगस्स नागरायस्स कक्कोडए णाम आवासपव्वते पण्णत्ते,

सत्तरस एक्कवीसाइ जोयणसताइ-त चेव पमाण ज गोथूभस्स, णवरि सव्वरयणामए अच्छे-जाव-निरवसेस-जाव-सपरिवार,

अट्ठो से वहूइ उप्पलाइ कक्कोडप्पभाइ, सेस त चेव,

णवरि कक्कोडगपव्वयस्स उत्तर-पुरच्छिमेण,

एव त चेव सव्व ।

कद्दमस्सवि सो चेव गमओ अपरिसेसो, णवरि दाहिणपुरच्छिमेण आवासो, विज्जुप्पभा रायहाणी दाहिणपुरच्छिमेण, कइलासेवि एव चेव, णवरि दाहिणपच्चत्थिमेण, कइलासावि रायहाणी ताए चेव दिसाए, अरुणप्पभेवि उत्तरपच्चत्थिमेण, रायहाणीवि ताए चेव दिसाए ।

चत्तारि विगप्पमाणा सव्वरयणामया य ।

—जीवा सूत्र १६० पृ ३१३

[८] [१] प्र०—अनुवेलधर नागराज कितने हैं ?

उ०—गौतम ! अनुवेलधरनागराज चार हैं, यथा—कर्कोटक, कर्दम, कैलाश और अरुणप्रभ ।

[२] प्र०—इन चार अनुवेलधर नागराजो के आवासपर्वत कितने हैं ?

उ०—गौतम ! चार आवासपर्वत हैं, यथा—कर्कोटक, विद्युत्प्रभ, कैलाश और अरुणप्रभ ।

[३] प्र०—कर्कोटक अनुवेलधर नागराज का कर्कोटक नामक आवासपर्वत कहाँ है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे मन्दर पर्वत से उत्तर-पूर्व मे, बयालीस हजार योजन लवण-समुद्र मे जाने पर, यहाँ कर्कोटक नागराज का कर्कोटक नामक आवासपर्वत है । यह पर्वत १७२१ योजन ऊचा है, इत्यादि प्रमाण गोस्तूप पर्वत के बराबर ही है । विशेष यह है कि यह पर्वत सर्व-रत्नमय है, स्वच्छ है, इत्यादि वक्तव्यता पूर्ववत् समझ लेना चाहिए—यावत्—सपरिवार सिंहासन है । उसके नाम का कारण भी कह लेना चाहिए । वहाँ बहुत-से उत्पल कर्कोटक की आभा वाले हैं । कर्कोटक नागराज की राजधानी उत्तर-पूर्व मे है, शेष सब पूर्ववत् ।

कर्दम के विषय मे भी वही पूरा गम समझना चाहिए । विशेष—दक्षिण-पूर्व मे आवास है और दक्षिण-पूर्व मे विद्युत्प्रभा राजधानी है ।

कैलाश का वर्णन भी ऐसा ही है । विशेष—इसका आवास दक्षिण-पश्चिम मे है और कैलाश राज-धानी भी उसी दिशा मे है ।

अरुणप्रभ की वक्तव्यता भी वैसी ही है । आवास उत्तर-पश्चिम मे है, राजधानी भी उसी दिशा मे है । चारो पर्वत सर्वरत्नमय हैं ।

लवणसमुद्र का आकार-विस्तार

[९] [१] प्र०—लवणे णं भते ! समुद्दे किसठिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! गोतित्यसठिते, नावासठाणसठिते, सिप्पिसपुडसठिते, आसखधसठिते, वलभिसठिते, वट्टे, वलयागारसठाणसठिते पण्णत्ते ।

[२] प्र०—लवणे ण भते ! समुद्दे

केवतिय चक्कवालविक्खभेण,

केवतिय परिक्खेवेण,

केवतिय उव्वेहेण,

केवतिय उस्सेहेणं,

केवतिय सव्वग्गेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! लवणे णं समुद्दे दो जोयणसयसहस्साइं चक्कवालविक्खभेणं,
पण्णरस जोयणसयसहस्साइ एकासीतिं च सहस्साइ,
सत च इगुयाल किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं,
एग जोयणसहस्सं उव्वेधेण,
सोलस जोयणसहस्साइ उस्सेहेणं,[1]
सत्तरस जोयणसहस्साइ सव्वग्गेणं पण्णत्ते[2] ।

[६] [१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र का सस्थान (आकार) कैसा है ?
उ०—गौतम ! लवणसमुद्र गोतीर्थ के सस्थान का, नौका के सस्थान का, शुक्तिका (सीप) के सपुट के आकार का, अश्व के स्कध के आकार का, वलभीगृह के आकार का, गोल एव वलयाकार है ।

[२] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र की चक्राकार चौडाई कितनी, परिधि कितनी, गहराई कितनी, ऊचाई (शिखा) कितनी और सर्वपरिमाण कितना है ?
उ०—गौतम ! लवणसमुद्र का चक्रवाल विष्कभ (चौडाई) दो लाख योजन की, परिधि १५ लाख ८१ हजार १३९ योजन से कुछ कम, गहराई एक हजार योजन की, ऊचाई सोलह हजार योजन की और सर्वप्रमाण सत्तरह हजार योजन का है ।

जम्बूद्वीप को जलमग्न न करने के हेतु

[१०][१] प्र०—जइ णं भते ! लवणसमुद्दे दो जोयणसतसहस्साइ चक्कवालविक्खभेणं,
पण्णरसजोयणसयसहस्साइं एकासीतिं च सहस्साइं
सत इगुयाल किंचिविसेसूणे परिक्खेवेण,
एग जोयणसहस्स उव्वेहेणं,
सोलस जोयणसहस्साइ उस्सेधेणं,
सत्तारस जोयणसहस्साइं सव्वग्गेणं पण्णत्ते,
कम्हा णं भंते ! लवणसमुद्दे जबुद्दीवं दीव नो उवीलेति, नो उप्पीलेति, नो चेव णं एक्कोदगं करेति ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे ण दीवे भरहेरवएसु वासेसु अरहंत-चक्कवट्टि-बलदेवा वासुदेवा चारणा विज्जाधरा समणा समणीओ सावया सावियाओ पगतिभद्दया पगतिविणीया पगतिउवसंता पगतिपयणुकोह-माण-माया-लोभा, मिउमद्दवसपन्ना अल्लीणा भद्दगा विणीता, तेसि णं पणिहाते लवणे समुद्दे जंबुद्दीव दीव नो उवीलेति, नो उप्पीलेति, नो चेव णं एगोदगं करेति ।
गंगा-सिधु-रत्ता-रत्तवईसु सलिलासु देवया महिड्ढियाओ-जाव-पलिओवमट्ठितीयाओ परिवसंति,
तेसि णं पणिहाए लवणसमुद्दे-जाव-नो चेव णं एगोदगं करेति ।
चुल्लहिमवत-सिहरेसु वासहरपव्वतेसु देवा महिड्ढिया, तेसि णं पणिहाए०
हेमवते-रण्णवतेसु वासेसु मणुया पगतिभद्दया०,
रोहितंस-सुवण्णकूल-रुप्पकूलासु सलिलासु देवयाओ महिड्ढियाओ, तासिं पणि०,
सद्दावति-वियडावति-वट्टवेयड्ढपव्वतेसु देवा महिड्ढिया-जाव-पलिओवमट्ठितीया०,
हरिवास-रम्मयवासेसु मणुया पगतिभद्दगा०,
गधावति-मालवंतपरिताएसु वट्टवेयड्ढपव्वतेसु देवा महिड्ढिया०,
णसढ-नीलवतेसु वासधरपव्वतेसु देवा महिड्ढिया० ।

१—सम. १६ सूत्र ७
२—सम, १७ सूत्र ३

सव्वाओ दहदेवयाओ भाणियव्वा,
पउमद्दह-तिगिच्छ-केसरिदहावसाणेसु देवा महिड्ढियाओ, तासिं पणिहाए० ।
पुव्वविदेहा-वरविदेहेसु वासेसु अरहत-चक्कवट्टि-बलदेव-वासुदेवा
चारणा विज्जाहरा समणा समणीओ सावगा सावियाओ मणुया पगति०, तेसिं पणिहाए लवण० ।
सीया-सीतोदगासु सलिलासु देवता महिड्ढिया० ।
देवकुरु-उत्तरकुरुसु मणुया पगतिभद्दगा० मदरे पव्वते देवता महिड्ढीया० ।
जबूए य सुदसणाए जबूदीवाहिवती अणाढिए णाम देवे महिड्ढीए-जाव-पलिओवमठितीए परिवसति,
तस्स पणिहाए लवणसमुद्दे नो उवीलेति, नो उप्पीलेति नो चेव ण एकोदग करेति ।
अदुत्तर च ण गोयमा ! लोगट्ठिती[1] लोगाणुभावे जण्ण लवणसमुद्दे जबुद्दीव दीव नो उवीलेति, नो उप्पीलेति, नो चेव णमेगोदग करेति ।

—जीवा सूत्र १५४-१७३ पृ ३००-३२५

[१०][१] प्र०—भगवन् ! यदि लवणसमुद्र का चक्रवालविष्कभ दो लाख योजन का, परिधि १५८११३९ योजन से कुछ कम, गहराई एक हजार योजन की, ऊचाई सोलह हजार योजन की और सर्वप्रमाण सत्तरह हजार योजन का है तो लवणसमुद्र जम्बूद्वीप को वहाता क्यो नही ? उत्पीडित क्यो नही करता ? जलमग्न क्यो नही कर देता ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के भरत और ऐरावत क्षेत्रो मे अर्हत् (तीर्थंकर) चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव, चारण (मुनि), विद्याधर, श्रमण, श्रमणिया, श्रावक, श्राविकाएँ एव अन्य भद्रप्रकृति, विनीतप्रकृति, उपशान्तप्रकृति, स्वभाव से ही प्रतनु (पतले) क्रोध मान माया लोभ वाले, मृदुतासम्पन्न, आलीन (अलिप्त), भद्र एव विनीत मनुष्य रहते हैं। इनके प्रणिधान (प्रभाव) से लवणसमुद्र जम्बूद्वीप को नही वहाता, नही उत्पीडित करता और नही जलप्लावित करता है।

गगा, सिन्धु, रक्ता और रक्तवती नदियो मे महर्द्धिक,—यावत्–पल्योपम की स्थिति वाली देवता रहती हैं। इनके प्रभाव के कारण भी लवणसमुद्र—यावत्—जम्बूद्वीप को जलमग्न नही करता।
चुल्लहिमवन्त और शिखरी वर्षधर पर्वतो पर महर्द्धिक देव हैं जिनके प्रभाव के कारण भी (लवण-समुद्र का जल जम्बूद्वीप को प्लावित नही करता)

हैमवत एव हैरण्यवत वर्षों मे भद्रप्रकृति के मनुष्य रहते हैं।

रोहितास्या, सुवर्णकूला और रूप्यकूला आदि नदियो मे महर्द्धिक देवता हैं। इनके प्रणिधान के कारण भी (लवणसमुद्र जम्बूद्वीप को जलमग्न नही करता)

इसी प्रकार शब्दापाति एव विकटापाति वृत्त वैताढ्य पर्वतो पर महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाले देव रहते हैं। हरिवर्ष और रम्यकवर्ष मे भद्र प्रकृति के मनुष्य हैं। गधापाति और माल्यवन्त वृत्त वैताढ्य पर्वतो पर महर्द्धिक देव हैं। निषध एव नीलवन्त वर्षधर पर्वतो पर महर्द्धिक देव हैं, सब द्रहो मे देविया हैं, पद्मद्रह, तिगिछ द्रह और केसरी द्रहो के अवसान-भागो मे महर्द्धिक देव हैं। पूर्वविदेह और अपरविदेह मे अर्हत्, चक्रवर्त्ती, वलदेव, वासुदेव, चारण, विद्याधर, श्रमण, श्रमणिया, श्रावक, श्राविकाए एव प्रकृतिभद्र अन्य मनुष्य है। सीता एव सीतोदा नदियो मे महर्द्धिक देवता हैं। देवकुरु और उत्तरकुरु मे प्रकृतिभद्र मनुष्य है। मेरु पर्वत पर महान् ऋद्धि के धारक देव हैं। जम्बू-सुदर्शन मे जम्बूद्वीपाधिपति अनादृत देव रहता है, जो महर्द्धिक–

१–(क) विवा० भाग २ श. ३ उ ३ पृ ८२ प्र. १८
(ख) विवा० भाग २ श. ५ उ २ पृ. १६३ प्र १६

यावत्—पल्योपम की स्थिति वाला है। इन सब के प्रभाव से लवणसमुद्र (जम्बूद्वीप को) नही बहाता, उत्पीडित या जलमग्न नही करता। अथवा गौतम ! लोकस्थिति एव लोकानुभाव ही ऐसा है जिसके कारण लवणसमुद्र जम्बूद्वीप को नही बहाता, नही उत्पीडित करता और नही जल-मग्न करता है।

गोतीर्थ

[११][१] प्र०—लवणस्स ण भते ! समुद्दस्स के महालए गोतित्थे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! लवणस्स ण समुद्दस्स उभओ पासिं पचाणउति २ जोयणसहस्साइं गोतित्थं पण्णत्तं।

[२] प्र०—लवणस्स ण भते ! समुद्दस्स केमहालए गोतित्थविरहिते खेत्ते पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! लवणस्स ण समुद्दस्स दस जोयणसहस्साइं[1] गोतित्थविरहिते खेत्ते पण्णत्ते।

[३] प्र०—लवणस्स ण भते ! समुद्दस्स केमहालए उदगमाले पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! दस जोयणसहस्साइ उदगमाले पण्णत्तं[2]।

[११][१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र का गोतीर्थ (क्रमश निम्न, निम्नतर अर्थात् ढालू भाग) कितना है ?
उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के दोनो ओर से—जम्बूद्वीप की वेदिकान्त से और लवणसमुद्र की वेदिका के अन्त से—पचानवे-पचानवे हजार योजन जाने पर गोतीर्थ आता है।

[२] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र का गोतीर्थ विरहित (विना उतार-चढाव का) क्षेत्र कितना है ?
उ०—गौतम ! लवणसमुद्र का दस हजार योजन का क्षेत्र गोतीर्थ-विरहित है।

[३] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र की उदकमाला कितनी है ?
उ०—गौतम ! दस हजार योजन की उदकमाला है।

छप्पन अन्तरद्वीप

[१२] जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं,
चुल्लहिमवतस्स वासहरपव्वयस्स चउसु विदिसासु,
तिन्नि २ जोयणसयाइ ओगाहित्ता एत्थ णं चत्तारि अन्तरदीवा पण्णत्ता, तंजहा—
एगूरुयदीवे, आभासियदीवे, वेसाणियदीवे, णगोलियदीवे।
तेसु ण दीवेसु चउव्विहा मणुस्सा परिवसति, तजहा—
एगूरूया, आभासिया, वेसाणिया, णगोलिया।
तेसि ण दीवाण चउसु विदिसासु लवणसमुद्दं चत्तारि २ जोयणसयाइ ओगाहेत्ता एत्थ णं चत्तारि अतरदीवा पण्णत्ता,
तजहा-हयकण्णदीवे, गयकण्णदीवे, गोकण्णदीवे, सकुलिकण्णदीवे,
तेसु णं दीवेसु चउव्विधा मणुस्सा परिवसति, तंजहा—
हयकन्ना, गयकन्ना, गोकन्ना, सकुलिकन्ना।
तेसि ण दीवाण चउसु विदिसासु लवणसमुद्दं पच २ जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ ण चत्तारि अंतर-दीवा पण्णत्ता,
तजहा-आयसमुहदीवे, मेढमुहदीवे, अओमुहदीवे, गोमुहदीवे।

---

१. ठाणा १० उ. १ सूत्र ७२० पृ. ४५३
२ " " "

तेसु ण दीवेसु चउव्विहा मणुस्सा भाणियव्वा ।
तेसि ण दीवाण चउसु विदिसासु लवणसमुद्द छ छ जोयणसयाइ ओगाहेत्ता एत्थ ण चत्तारि अतर-दीवा पण्णत्ता, तंजहा-आसमुहदीवे, हत्थिमुहदीवे, सीहमुहदीवे, वग्घमुहदीवे ।
तेसु ण दीवेसु मणुस्सा भाणियव्वा ।
तेसि ण दीवाण चउसु विदिसासु लवणसमुद्द सत्त-सत्त जोयणसयाइ ओगाहेत्ता एत्थ ण चत्तारि अतर-दीवा पण्णत्ता, तजहा-आसकन्नदीवे, हत्थिकन्नदीवे, अकन्नदीवे, कन्नपाउरणदीवे ।
तेसु ण दीवेसु मणुया भाणियव्वा ।
तेसि ण दीवाण चउसु विदिसासु लवणसमुद्द अट्ठट्ठ जोयणसयाइ ओगाहेत्ता एत्थ ण चत्तारि अन्तर-दीवा पण्णत्ता,
तजहा—
उक्कामुहदीवे, मेहमुहदीवे, विज्जुमुहदीवे, विज्जुदतदीवे ।
तेसु ण दीवेसु मणुस्सा भाणियव्वा ।[1]
तेसि ण दीवाण चउसु विदिसासु लवणसमुद्द णव-णव जोयणसयाइ ओगाहेत्ता एत्थ ण चत्तारि अन्तर-दीवा पण्णत्ता, तजहा—
घणदन्तदीवे, लट्ठदन्तदीवे, गूढदन्तदीवे, सुद्धदन्तदीवे ।
तेसु ण दीवेसु चउव्विहा मणुस्सा परिवसति, तजहा—
घणदन्ता, लट्ठदन्ता, गूढदन्ता, सुद्धदन्ता ।[2]
जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण सिहरिस्स वासहरपव्वयस्स चउसु विदिसासु लवणसमुद्द तिन्नि-तिन्नि जोयणसयाइ ओगाहेत्ता एत्थ ण चत्तारि अन्तरदीवा पण्णत्ता, तजहा—
एगूरुयदीवे, सेस तहेव निरवसेस भाणियव्व—जाव—सुद्धदता ।[3]

—ठा० ४ उ २ सूत्र ३०४ पृ २१४-१५

[१२] जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे मन्दर पर्वत के दक्षिण मे, चुल्लहिमवन्त वर्षधर पर्वत की चारो विदिशाओ मे तीन-तीन सौ योजन आगे जाने पर चार अन्तरद्वीप कहे हैं, यथा—एकोरुकद्वीप, आभाषिकद्वीप, वैषाणिक द्वीप और लागूलिकद्वीप ।

उन द्वीपो मे चार प्रकार के मनुष्य निवास करते हैं, यथा—एकोरुक, आभाषिक, वैषाणिक और लागूलिक ।

इन द्वीपो से चारो विदिशाओ मे लवणसमुद्र मे चार-चार सौ योजन आगे जाने पर वहा चार अन्तरद्वीप कहे हैं, यथा—हयकर्णद्वीप, गजकर्णद्वीप, गोकर्णद्वीप और शष्कुलिकर्णद्वीप । उन द्वीपो मे चार प्रकार के मनुष्य निवास करते हैं, यथा—हयकर्ण, गजकर्ण, गोकर्ण और शष्कुलिकर्ण ।
इन द्वीपो से चारो विदिशाओ मे लवणसमुद्र मे पाच-पाच सौ योजन आगे जाने पर वहा चार अन्तरद्वीप कहे हैं, यथा—आदर्शमुखद्वीप, मेढमुखद्वीप, अजामुखद्वीप और गोमुखद्वीप । इन द्वीपो मे चार प्रकार के मनुष्य कहने चाहिए ।

इन द्वीपो से चारो विदिशाओ मे लवणसमुद्र मे छह-छह सौ योजन आगे जाने पर वहा चार अन्तरद्वीप हैं, यथा—अश्वमुखद्वीप हस्तिमुखद्वीप, सिहमुखद्वीप और व्याघ्रमुखद्वीप । इन द्वीपो मे (इन्ही नामो वाले चार प्रकार के) मनुष्य कह लेने चाहिए ।

१—ठा. ८ सूत्र ६३० पृ ४११
२—ठा ९ सूत्र ६९८ पृ. ४४४
३—(क) जीवा, प्रति० ३ सूत्र १०९-११२ पृ० १४४-१५६.
(ख) विवा भाग ३ श ९ उ. ३-३० पृ० १२७
(ग) „ „ श १० उ ७-३४ पृ० २०५

इन द्वीपो से चारो विदिशाओ मे लवणसमुद्र मे सात-सात सौ योजन आगे जाने पर वहा चार अन्तरद्वीप हैं, यथा—अश्वकर्णद्वीप, हस्तिकर्णद्वीप अकर्णद्वीप और कर्णप्रावरणद्वीप। इन द्वीपो मे (चार प्रकार के) मनुष्य कह लेने चाहिए।

इन द्वीपो से चारो विदिशाओ मे लवणसमुद्र मे आठ-आठ सौ योजन अवगाहन करने पर वहा चार अन्तरद्वीप हैं, यथा—उल्कामुखद्वीप, मेघमुखद्वीप, विद्युन्मुखद्वीप और विद्युद्दन्तद्वीप। इन द्वीपो मे मनुष्यो का कथन कर लेना चाहिए।

इन द्वीपो से चारो विदिशाओ मे लवणसमुद्र मे नौ-नौ सौ योजन आगे जाने पर वहाँ चार अन्तरद्वीप कहे हैं, यथा-घनदन्तद्वीप, लष्टदन्तद्वीप, गूढदन्तद्वीप और शुद्धदन्तद्वीप। इन द्वीपो मे चार प्रकार के मनुष्य निवास करते है, यथा-घनदन्त, लष्टदन्त, गूढदन्त और शुद्धदन्त।

जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से उत्तर मे शिखरि वर्षधर पर्वत की चारो विदिशाओ मे, लवणसमुद्र मे तीन-तीन सौ योजन आगे जाने पर वहाँ चार अन्तरद्वीप हैं, यथा—एकोरुकद्वीप (आदि पूर्ववत्)। शेष सब वक्तव्यता (उसी प्रकार) कह लेनी चाहिए—यावत्—शुद्धदन्त मनुष्य रहते है।

गौतमद्वीप

[१३][१] प्र०—कहि ण भते ! सुट्ठियस्स लवणाहिवइस्स गोयमदीवे णामं दीवे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमेण,
लवणसमुद्द बारस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता,

एत्थ ण सुट्ठियस्स लवणाहिवइस्स गोयमदीवे २ पण्णत्ते।[1]

बारस जोयणसहस्साइ आयाम-विक्खभेणं, सत्ततीस जोयणसहस्साइं नव य अडयाले जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेण,

जबूदीवंतेणं अद्धेकोणणउते जोयणाइं चत्तालीसं पंचणउतिभागे जोयणस्स ऊसिए, जलंताओ लवणसमुद्दतेणं दो कोसे ऊसिते जलंताओ।

से ण एगाए य पउमवरवेइयाए, एगेणं वणसंडेण सव्वतो समंता तहेव, वण्णओ दोण्ह वि।
गोयमदीवस्स ण दीवस्स अतो—जाव—बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते, से जहानामए आलिंग०-जाव-आसयति।

तस्स ण बहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं सुट्ठियस्स लवणाहिवइस्स एगे मह अइक्कीलावासे नामं भोमेज्जविहारे पण्णत्ते,
बावट्ठि जोयणाइं अद्धजोयणं उड्ढं उच्चत्तेण, एक्कतीसं जोयणाइं कोसं च विक्खभेण,
अणेगखभसतसण्णिविट्ठे, भवणवण्णओ भाणियव्वो।
अइक्कीलावासस्स णं भोमेज्जविहारस्स अतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते—जाव—मणीणं भासो।

१—(क) मदरस्स णं पव्वयस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरमताओ गोयमदीवस्स पुरच्छिमिल्ले चरमते एस णं सत्तसट्ठिं जोयणसहस्साइ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

—सम ६७ सूत्र ३

(ख) मदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमिल्लाओ चरमंताओ गोयमद्दीवस्स पच्चत्थिमिल्ले चरमंते एस णं एगूणसत्तरिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

—सम. ६९ सूत्र ३

तस्स ण बहुसम-रमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ एगा मणिपेढिया पण्णत्ता । सा ण मणिपेढिया दो जोयणाइ आयाम-विक्खभेण, जोयण बाहल्लेण, सव्वमणिमयी अच्छा —जाव— पडिरूवा ।

तीसे ण मणिपेढियाए उवरिं एत्थ ण देवसयणिज्जे पण्णत्ते, वण्णओ ।

[२] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चति-गोयमदीवे ण दीवे ?

उ०—तत्थ-तत्थ तहिं-तहिं बहूइ उप्पलाइ —जाव— गोयमप्पभाइ से एएणट्ठेण गोयमा ! —जाव— णिच्चे ।

[३] प्र०—कहि ण भते ! सुट्ठियस्स लवणाहिवइस्स सुट्ठिया णाम रायहाणी पण्णत्ता ?

उ०—गोयमदीवस्स पच्चत्थिमेण तिरियमसखेज्जे—जाव—अण्णमि लवणसमुद्दे बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता,

एव तहेव सव्व णेयव्व—जाव—सुत्थिए देवे ।

—जीवा सूत्र १६१ पृ ११४

[१३][१] प्र०—भगवन् ! लवणाधिपति सुस्थित (देव) का गौतमद्वीप नामक द्वीप कहा है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मन्दर पर्वत से पश्चिम मे, लवणसमुद्र मे बारह हजार योजन जाने पर यहाँ लवणाधिपति सुस्थित देव का गौतमद्वीप है ! वह बारह हजार योजन लम्बा-चौडा है । ३७९४८ योजन से कुछ कम परिधि वाला है । जम्बूद्वीप की ओर ८८।। $\frac{४०}{९५}$ योजन जलपर्यन्त से ऊँचा है, अर्थात् इतना जल से बाहर निकला हुआ है । लवणसमुद्र की ओर जलान्त से दो कोस ऊँचा है ।

वह एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से सब ओर से घिरा है । दोनो का वर्णन कर लेना चाहिए ।

गौतम द्वीप के अन्दर बहुत सम एव रमणीय भूमिभाग है । वह आलिंगपुष्कर आदि के समान है—यावत्—देवगण वहा बैठते-विहार करते हैं । उस सम एव रमणीय भूमिभाग के ठीक मध्य मे लवणाधिपति सुस्थित का अति क्रीडावास नामक भौमेय विहार है । वह ६२।। योजन ऊँचा, ३१। योजन चौडा, अनेक सैकडो स्तभो पर टिका हुआ है । यहा भवन का वर्णन कह लेना चाहिए । अतिक्रीडावास भौमेयविहार के अन्दर अति सम एव रमणीय भूमिभाग है—यावत्—मणियो का भास है । उस सम एव रमणीय भूमाग के ठीक मध्य मे एक मणिपीठिका है । वह मणिपीठिका दो योजन लम्बी-चौडी, एक योजन मोटी, सर्वमणिमयी, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप है । उस मणिपीठिका के ऊपर एक देवशय्या है, उसका वर्णन समझ लेना चाहिये ।

[२] प्र०—भगवन् ! गौतमद्वीप किस हेतु से गौतमद्वीप कहलाता है ?

उ०—वहा स्थान-स्थान पर बहुत-से उत्पल—यावत्—गौतम-प्रभा वाले हैं । इस कारण से, गौतम ! (यह गौतमद्वीप कहा जाता है)—यावत्—(यह नाम) नित्य है ।

[३] प्र०—भगवन् ! लवणाधिपति सुस्थित देव की सुस्थिता नामक राजधानी कहाँ है ?

उ०—गौतमद्वीप के पश्चिम मे, तिर्छे, असख्यात (द्वीप-समुद्र छोड कर) अन्य लवणसमुद्र मे बारह हजार योजन अवगाहन करने पर है । इस प्रकार सब कथन उसी प्रकार समझना चाहिए—यावत्—सुस्थित देव (विचरता है ।)

लवणसमुद्र के द्वार

[१४][१] प्र०—लवणस्स णं भंते ! समुद्दस्स कति दारा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि दारा पण्णत्ता, तंजहा—
विजए, वेजयंते, जयंते, अपराजिते ।[1]

[२] प्र०—कहि ण भंते ! लवणसमुद्दस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! लवणसमुद्दस्स पुरत्थिमपेरंते
धायइखंडस्स दीवस्स पुरत्थिमद्धस्स पच्चत्थिमेणं सीओदाए महानदीए उप्पि एत्थ णं लवणस्स समुद्दस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते,
अट्ठ जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेण, चत्तारि जोयणाइं विक्खंभेण ।
एव त चेव सव्व जहा जबुद्दीवस्स विजयस्सरिसे वि (दारसरिसमेयपि) रायहाणी पुरत्थिमेणं अण्णमि लवणसमुद्दे ।

[३] प्र०—कहि ण भंते ! लवणसमुद्दे वेजयते नाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! लवणसमुद्दे दाहिणपेरंते धातइसडदीवस्स दाहिणद्धस्स उत्तरेण,
सेसं त चेव ।
एव जयते वि ।
णवरिं सीयाए महाणदीए उप्पि भाणियव्वे,
एव अपराजिते वि,
णवर दिसीभागो भाणियव्वो ।

[४] प्र०—लवणस्स णं भंते ! दारस्स य २ एस णं केवतियं अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा !

गाहा—तिण्णेव सतसहस्सा पचाणउतिं भवे सहस्साइं ।
दो जोयणसत असिता कोसं दारंतरे लवणे ।।१।।
—जाव—अबाधाए अंतरे पण्णत्ते

[१४][१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र के कितने द्वार हैं ?

उ०—गौतम ! चार द्वार है, यथा–विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित ।

[२] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र का विजय नामक द्वार कहाँ है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के पूर्वान्त मे, धातकीखण्ड द्वीप के पूर्वार्ध के पश्चिम मे एव सीतोदा महानदी के ऊपर लवणसमुद्र का विजय नामक द्वार है । यह आठ योजन ऊचा और चार योजन चौडा है । इसका सम्पूर्ण वर्णन जम्बूद्वीप के विजय द्वार के समान है । इसकी राजधानी भी पूर्व की ओर अन्य लवणसमुद्र मे है ।

[३] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र मे वैजयन्त नामक द्वार कहाँ है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के दक्षिणान्त मे एव धातकीखण्ड द्वीप के दक्षिणार्ध के उत्तर मे (वैजयन्त द्वार) है । शेष सब वर्णन उसी प्रकार है ।
इसी प्रकार जयन्त द्वार के विषय मे भी कहना चाहिए । विशेषता यह है कि यह सीता महानदी के ऊपर है । इसी प्रकार अपराजित द्वार भी समझना चाहिए । अन्तर यह है कि यहाँ दिग्भाग कहना चाहिए ।

१—ठा. ४ उ. २ सूत्र ३०५ पृ. २१५ ।

[२] प्र०—जहा णं भंते ! लवणसमुद्दे
उस्सितोदगे, नो पत्थडोदगे,
खुभियजले, नो अक्खुभियजले,
तहा णं बाहिरगा समुद्दा
किं उस्सिओदगा, पत्थडोदगा, खुभियजला, अक्खुभियजला ?

उ०—गोयमा ! बाहिरगा समुद्दा
नो उस्सिओदगा, पत्थडोदगा,
नो खुभियजला, अक्खुभियजला,
पुण्णा, पुण्णप्पमाणा, वोलट्टमाणा, वोसट्टमाणा,
समभरघडत्ताए चिट्ठ ति ।[1]

लवणादि समुद्रों में मेघ

[१८][१] प्र०—अत्थि णं भंते ! लवणसमुद्दे बहवो ओराला बलाहका ससेयति संमुच्छति वा वास वासति वा ?

उ०—हता अत्थि ।

[२] प्र०—जहा ण भते ! लवणसमुद्दे बहवे ओराला बलाहका ससेयति समुच्छंति वास वासति वा,
तहा ण बाहिरिएसु वि समुद्देसु बहवे ओराला बलाहका ससेयति संमुच्छंति वासं वासंति ?

उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[३] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ—
बाहिरगा णं समुद्दा पुण्णा पुण्णप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडियाए चिट्ठंति ?

उ०—गोयमा ! बाहिरएसु णं समुद्देसु
बहवे उदगजोणिया जीवा य पोग्गला य
उदगत्ताए वक्कमति विउक्कमंति चयति उवचयंति,
से तेणट्ठेण एव वुच्चति—
बाहिरगा समुद्दा पुण्णा पुण्णप्पमाणा—जाव—समभरघडत्ताए चिट्ठंति ।

[१७][१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र ऊर्ध्वोदक (ऊँचे जल वाला) है या प्रस्तट (सर्वत्र समान) जल वाला है ? क्षुभित जल वाला है या अक्षुभित जल वाला है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र ऊर्ध्वोदक है, प्रस्तट जल वाला नही, क्षुभित जल वाला है, अक्षुभित जल वाला नही ।

[२] प्र०—भगवन् ! जिस प्रकार लवणसमुद्र ऊर्ध्वोदक है, प्रस्तुटोदक नही तथा क्षुब्ध जल वाला है, अक्षुब्ध जल वाला नही, उसी प्रकार क्या बाह्य समुद्र भी ऊर्ध्वोदक, प्रस्तटोदक, क्षुभितजल या अक्षुभितजल हैं ?

उ०—गौतम ! बाह्य समुद्र ऊर्ध्वोदक नही हैं किन्तु प्रस्तट अर्थात् सर्वत्र सम न जल वाले हैं, क्षुब्ध जल वाले नही हैं किन्तु अक्षुब्ध जल वाले हैं। ये (जल से) पूर्ण, अपने प्रमाण तक जल से परिपूर्ण, लबालब भरे हुए, ऊपर से बहते हुए जैसे तथा पूरी तरह भरे हुए घट के समान है ।

[१८][१] प्र०—भगवन् ! क्या लवणसमुद्र मे बहुत-से उदार मेघ बनने लगते हैं, बनते हैं और वर्षा वरसाते है ?

उ०—हाँ ऐसा होता है ।

१—विवा. श. ६ उ. ८ प्र. १६ पृ. ३३३–३३४

[२] प्र०—भगवन् ! जिस प्रकार लवण समुद्र से उदार मेघ बनने लगते हैं बनते हैं और वर्षा बरसाते हैं, उसी प्रकार क्या बाह्य समुद्रों में भी अनेक उदार मेघ बनने लगते हैं, बनते हैं और वर्षा बरसाते हैं ?

उ०—नहीं, ऐसी बात नहीं है ।

[३] प्र०—भगवन् ! बाह्य समुद्र पूर्ण, अपने प्रमाण तक जल से परिपूर्ण, लबालब भरे हुए, ऊपर से बहते जैसे हैं, ऐसा क्यों कहा जाता है ?

उ०—गौतम ! बाह्य समुद्रों में बहुत-से जलयोनिक जीव तथा पुद्गल जल रूप से जाते हैं, उत्पन्न होते हैं, च्युत होते हैं, उपचय को प्राप्त होते हैं । इस कारण ऐसा कहा जाता है कि बाह्य समुद्र पूर्ण, पूर्ण-प्रमाण–यावत्–परिपूर्ण भरे हुए घट के समान हैं ।

धातकीखण्ड द्वीप

[१] लवणसमुद्द धायइसडे नाम दीवे वट्टे वलयागारसठाणसठिए सव्वतो समता सपरिक्खित्ता ण चिट्ठइ ।

[१] प्र०—धायतिसडे ण भते ! दीवे किं समचक्कवालसठिते, विसमचक्कवालसठिते ?

उ०—गोयमा ! समचक्कवालसठिते, नो विसमचक्कवालसठिते ।

[२] प्र०—धायइसडे ण भते ! दीवे केवतिय चक्कवाल–विक्खभेण, केवइय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि जोयणसतसहस्साइं चक्कवालविक्खभेण,[1]
एगयालीस जोयणसतसहस्साइ दसजोयणसहस्साइ णवएगट्ठे जोयणसते किंचिविसेसूणे परिक्खेवेण पण्णत्ते ।
से ण एगाए पउमवरवेदियाए, एगेण वणसंडेणं सव्वतो समता संपरिक्खित्ते ।
दोण्ह वि वण्णओ दीवसमिया परिक्खेवेण ।[2]

[३] प्र०—धायइसडस्स ण भते ! दीवस्स कति दारा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि दारा पण्णत्ता – विजए, वेजयते, जयते, अपराजिए ।

[४] प्र०—कहि ण भते ! धायइसडस्स दीवस्स विजए णाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! धायइसडपुरत्थिमपेरते, कालोयसमुद्द–पुरत्थिमद्धस्स पच्चत्थिमेणं, सीयाए महाणदीए उप्पि, एत्थ ण धायइसडस्स दीवस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते ।
त चेव पमाण, रायहाणीओ अण्णमि धायइसडे दीवे,
दीवस्स वत्तव्वया भाणियव्वा ।
एव चत्तारि वि दारा भाणियव्वा ।

[५] प्र०—धायइसडस्स ण भते ! दीवस्स दारस्स य २ एस ण केवइयं अबाहाए अतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! दस जोयणसयसहस्साइ, सत्तावीस च जोयणसहस्साइ, सत्तपणतीसे जोयणसए, तिन्नि य कोसे दारस्स य २ अबाहाए अतरे पण्णत्ते ।

१—(क) सम० स० ४ सूत्र १२७ पृ० ११८
(ख) ठा० अ० ४ उ० २ सूत्र० ३०६ पृ० २१५ ।
२—ठा० अ० २ उ० ३ सूत्र ९२ पृ० ७५ ।

[६] प्र०—धायइसंडस्स णं भंते ! दीवस्स पदेसा कालोयगं समुद्दं पुट्ठा ?

उ०—हंता पुट्ठा ।

[७] प्र०—ते णं भते ! किं धायइसडे दीवे कालोए समुद्दे ?

उ०—ते धायइसडे, नो खलु ते कालोयसमुद्दे । एव कालोयस्स वि ।

[८] प्र०—धायइसंडदीवे जीवा उद्दाइत्ता २ कालोए समुद्दे पच्चायति ?

उ०—गोयमा ! अत्थेगतिया पच्चायति, अत्थेगतिया नो पच्चायंति ।
एव कालोए वि अत्थेगतिया पच्चायति अत्थेगतिया नो पच्चायंति ।

[९] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एवं वुच्चति-धायइसडे दीवे २ ?

उ०—गोयमा ! धायइसडे णं दीवे तत्थ तत्थ देसे तहिं २ पएसे धायइरुक्खा धायइवणा धायइसंडा णिच्चं कुसुमिया—जाव—उवसोभेमाणा २ चिट्ठंति, धायड-महाधायइरुक्खेसु सुदंसण–पियदंसणा दुवे देवा महिड्ढिया—जाव—पलिओवमट्ठितीया परिवसंति से एएणट्ठेणं०,
अदुत्तरं च ण गोयमा ! —जाव—णिच्चे ।[1]

—जीवा प्रति. ३ उ २. सू. १७४

[१] वर्त्तुल एव वलयाकार धातकीखण्ड नामक द्वीप लवणसमुद्र को चारो ओर से घेर कर रहा हुआ है ।

[१] प्र०—भगवन् ! धातकीखण्ड द्वीप सम चक्राकार है अथवा विषम चक्राकार है ?

उ०—गौतम ! सम चक्राकार है, विषम चक्राकार नही ।

[२] प्र०—भगवन् ! धातकीखण्ड की चक्राकार चौडाई एव परिधि कितनी है ?

उ०—गौतम ! चार लाख योजन की चक्राकार चौडाई एव ४११०९६१ योजन से कुछ कम की परिधि है ।
इसके चारो ओर एक पद्मवरवेदिका व एक वनखण्ड है । इन दोनो का वर्णन यथावत् समझ लेना चाहिए । (इनकी) परिधि द्वीप के समान ही है ।

[३] प्र०—भगवन् ! धातकीखण्ड द्वीप के कितने द्वार है ?

उ०—गौतम ! चार द्वार है–विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित ।

[४] प्र०—भगवन् ! धातकीखण्ड द्वीप का विजय नामक द्वार कहाँ है ?

१–(क) ठा० अ० २ उ० ३ सूत्र ९२ पृ० ७५
(ख) ठा० अ० ३ उ० १ सूत्र १४२ पृ० ११६
(ग) ठा० अ० ३ उ० ३ सूत्र १८३ पृ० १४०
(घ) ठा० अ० ३ उ० ४ सूत्र १९७ पृ० १५०
(ङ) ठा० अ० ४ उ० २ सूत्र ३०२ पृ० २१३
(च) ठा० अ० ५ उ० २ सूत्र ४३४ पृ० ३०९
(छ) ठा० अ० ७ सूत्र ५५५ पृ० ३७७
(ज) ठा० अ० ८ सूत्र ६४१ पृ० ४१३
(झ) ठा० अ० १० सूत्र ७६८ पृ० ४९१
(ञ) सम० ६८ सूत्र ४
(ट) सम० ३७ सूत्र ३

उ०—गौतम ! धातकीखण्ड के पूर्वान्त मे, कालोद समुद्र के पूर्वार्ध के पश्चिम मे एव सीता महानदी के ऊपर धातकीखण्ड द्वीप का विजय नामक द्वार है। इसका प्रमाण वही है। राजधानी अन्य धातकीखण्ड द्वीप मे है।

द्वीप का वर्णन समझ लेना चाहिए। इसी प्रकार चारो द्वारो का वर्णन भी समझ लेना चाहिए।

[५] प्र०—भगवन् ! धातकीखण्ड द्वीप के एक द्वार से दूसरे द्वार की कितनी दूरी है ?

उ०—गौतम ! प्रत्येक द्वार मे १०२७७३५ योजन तथा तीन कोस का अन्तर है।

[६] प्र०—भगवन् ! धातकीखण्ड द्वीप के प्रदेश क्या कालोद समुद्र मे स्पृष्ट हैं ?

उ०—हा स्पृष्ट हैं।

[७] प्र०—भगवन् ! वे (प्रदेश) धातकीखण्ड द्वीप के हैं अथवा कालोद समुद्र के ?

उ०—वे धातकीखण्ड के हैं, कालोद समुद्र के नही।

इसी प्रकार कालोद समुद्र के (प्रदेशो के) विषय मे भी कहना चाहिए।

[८] प्र०—क्या धातकीखण्ड द्वीप के जीव मर कर कालोद समुद्र मे उत्पन्न होते हैं ?

उ०—गौतम ! कोई–कोई उत्पन्न होते हैं, कोई–कोई नही उत्पन्न होते।

इसी प्रकार कालोद समुद्र के भी कोई–कोई जीव मर कर धातकीखण्ड द्वीप मे उत्पन्न होते हैं और कोई–कोई उत्पन्न नही होते।

[९] प्र०—भगवन् ! इसे धातकीखण्ड द्वीप क्यो कहते हैं ?

उ०—गौतम ! धातकीखण्ड द्वीप मे जगह–जगह धातकी वृक्ष, धातकी वन और धातकी खण्ड हैं जो नित्य कुसुमित–यावत्–सुशोभित रहते हैं। धातकी और महाधातकी वृक्षो पर सुदर्शन और प्रियदर्शन नामक दो देव रहते हैं। वे महर्द्धिक–यावत्–पल्योपम की स्थिति वाले हैं। (इस कारण इसे धातकीखण्ड द्वीप कहते हैं)।

अथवा गौतम ! (यह नाम)–यावत्–नित्य है।

कालोद समुद्र

[१] **धायइसड ण दीव कालोदे णाम समुद्दे वट्टे वलयागारसठाणसठिते सव्वतो समता सपरिक्खित्ता णं चिट्ठइ।**

[१] **प्र०—कालोदे ण समुद्दे कि समचक्कवालसंठाणसठिते, विसम० ?**

उ०—गोयमा ! समचक्कवाल०, णो विसमचक्कवालसठिते।

[२] **प्र०—कालोदे ण भते ! समुद्दे केवतिय चक्कवालविक्खभेण, केवतिय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?**

उ०—गोयमा ! अट्ठजोयणसयसहस्साइ चक्कवालविक्खभेण,[1]

एकाणउति जोयणसयसहस्साइ, सत्तरि सहस्साइ छच्च पचुत्तरे जोयणसते किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण पण्णत्ते[2]।

से ण एगाए पउमवरवेदियाए, एगेण वणसडेण-दोण्ह वि वण्णओ[3]।

---

१. ठा अ. ८ सूत्र ६३१ पृ ४११

२ सम ९१ सूत्र २ पृ १०३

३. ठा २ उ ३ सूत्र ९३ पृ ७५

[३] प्र०—कालोयस्स णं भंते ! समुद्दस्स कति दारा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि दारा पण्णत्ता, तंजहा-विजए, वेजयंते, जयंते, अपराजिए ।

[४] प्र०—कहि णं भंते ! कालोदस्स समुद्दस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! कालोदे समुद्दे पुरत्थिमपेरंते पुक्खरवरदीवपुरत्थिमद्धस्स पच्चत्थिमेणं, सीतोदाए महाणदीए उप्पिं, एत्थ णं कालोदस्स समुद्दस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते ।
अट्ठेव जोयणाइं, तं चेव पमाणं-जाव-रायहाणीओ ।

[५] प्र०—कहि णं भंते ! कालोयस्स समुद्दस्स वेजयते णाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! कालोयसमुद्दस्स दक्खिणपेरंते, पुक्खरवरदीवस्स दक्खिणद्धस्स उत्तरेणं, एत्थ णं कालोय-समुद्दस्स वेजयते नामं दारे पन्नत्ते ।

[६] प्र०—कहि ण भंते ! कालोयसमुद्दस्स जयंते नाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! कालोयसमुद्दस्स पच्चत्थिमपेरंते, पुक्खरवरदीवस्स पच्चत्थिमद्धस्स पुरत्थिमेणं, सीताए महाणदीए उप्पिं जयंते नाम दारे पण्णत्ते ।

[७] प्र०—कहि ण भंते ! अपराजिए नाम दारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! कालोयसमुद्दस्स उत्तरद्धपेरंते, पुक्खरवरदीवोत्तरद्धस्स दाहिणओ, एत्थ णं कालोयसमुद्दस्स अपराजिए णामं दारे०
सेसं तं चेव ।

[८] प्र०—कालोयस्स णं भंते ! समुद्दस्स दारस्स य २ एस णं केवतियं २ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा !

गाहा–बावीससयसहस्सा, बाणउत्ति खलु भवे सहस्साइं ।
छच्च सया बायाला, दारंतर तिन्नि कोसा य ॥१॥
दारस्स य २ अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।
कालोयस्स णं भंते ! समुद्दस्स पएसा पुक्खरवरदीव० तहेव,
एवं पुक्खरवरदीवस्स वि जीवा उद्दाइत्ता २ तहेव भाणियव्वं ।

[९] प्र०—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति-कालोए समुद्दे २ ?

उ०—गोयमा ! कालोयस्स णं समुद्दस्स उदके आसले मासले पेसले कालए मासरासिवण्णाभे पगतीए उदगरसेणं पण्णत्ते ।

काल-महाकाला एत्थ दुवे देवा महिड्ढीया-जाव-पलिओवमट्ठितीया परिवसंति,
से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव-णिच्चे ।

—जीवा. प्रति ३ उ २ सूत्र १७५

[१] कालोद नामक समुद्र, जो वृत्त और वलयाकार है, धातकीखण्ड द्वीप को सभी ओर से घेर कर स्थित है ।

[१] प्र०—कालोद समुद्र सम चक्राकार है अथवा विषम चक्राकार है ?

उ०—गौतम ! सम चक्राकार है, विषम चक्राकार नहीं ।

[२] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र की चक्राकार चौडाई व परिधि कितनी है ?

उ०—गौतम ! आठ लाख योजन की चक्राकार चौडाई व ९१ लाख १७ हजार ६७५ योजन से कुछ

विशेष अधिक की परिधि है।

इसके चारो ओर एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड है। इन दोनो का वर्णन यथावत् कर लेना चाहिए।

[३] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र के कितने द्वार हैं ?

उ०—गौतम ! चार द्वार हैं, यथा-विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित।

[४] प्र०—भगवान् ! कालोद समुद्र का विजय नामक द्वार कहा है ?

उ०—गौतम ! कालोद समुद्र के पूर्वान्त मे, पुष्करवरद्वीप के पूर्वार्ध के पश्चिम मे, एव सीतोदा महानदी के ऊपर कालोद समुद्र का विजय नामक द्वार है। यह आठ योजन (ऊचा) है, इत्यादि प्रमाण पूर्ववत् ही है-यावत्-राजधानी है।

[५] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र का वैजयन्त द्वार कहाँ है ?

उ०—गौतम ! कालोद समुद्र के दक्षिणान्त मे एव पुष्करवर द्वीप के दक्षिणार्ध के उत्तर मे कालोद समुद्र का वैजयन्त नामक द्वार है।

[६] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र का जयन्त नामक द्वार कहाँ है ?

उ०—गौतम ! कालोद समुद्र के पश्चिमान्त मे, पुष्करवरद्वीप के पश्चिमार्ध के पूर्व मे एव सीता महानदी के ऊपर जयन्त नामक द्वार है।

[७] प्र०—भगवन् ! अपराजित नामक द्वार कहाँ है ?

उ०—गौतम ! कालोद समुद्र के उत्तरार्ध के अन्त मे एव पुष्करवर द्वीप के उत्तरार्ध के दक्षिण मे कालोद समुद्र का अपराजित नामक द्वार है। शेष वर्णन पूर्ववत् है।

[८] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र के प्रत्येक द्वार मे कितना अन्तर है ?

उ०—गौतम !

गाथार्थ—प्रत्येक द्वार मे बाईस लाख, बानवे हजार, छह सौ बयालीस योजन तथा तीन कोस का अन्तर होता है।

भगवन् ! कालोद समुद्र के प्रदेश क्या पुष्करवर द्वीप से स्पृष्ट हैं ? एव पुष्करवर द्वीप के जीव मर कर क्या—(कालोद समुद्र मे उत्पन्न होते है ?) इत्यादि कथन पूर्ववत् जानना चाहिए।

[९] प्र०—भगवन् ! इसे कालोद समुद्र क्यो कहते हैं ?

उ०—गौतम ! कालोद समुद्र का पानी आस्वादनीय, पुष्टिकारक, पेशल (बढिया) कृष्ण, माष (उडद) की राशि के वर्ण का एव स्वाभाविक पानी के रस वाला है। यहाँ काल और महाकाल नामक महर्द्धिक-यावत्-पल्योपम की स्थिति वाले दो देव रहते हैं। इस कारण गौतम ! इसे कालोद समुद्र कहते हैं। (अथवा यह नाम) नित्य है।

पुष्करवर द्वीप

[१] कालोय णं समुद्द पुक्खरवरे णाम दीवे वट्टे वलयागारसंठाणसठिए सव्वतो समंता संपरि० तहेव —जाव—समचक्कवालसठाणसंठिते, नो विसमचक्कवालसंठाणसठिए।

[१] प्र०—पुक्खरवरे णं भते ! दीवे केवतियं चक्कवालविक्खभेण, केइवय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सोलस जोयणसतसहस्साइ चक्कवालविक्खभेण।

गाहा—एगा जोयणकोडी बाणउतिं खलु भवे सयसहस्सा ।
अउणाणउतिं अट्ठ सया चउणउया य (परिरओ) पुक्खरवरस्स ।।१।।
से णं एगाए पउमवरवेदियाए एगेण य वणसडेण संपरि०, दोण्ह वि वण्णओ ।

[२] प्र०—पुक्खरवरस्स ण भते ! कति दारा पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! चत्तारि दारा पण्णत्ता, तंजहा—
विजए, वेजयते, जयते, अपराजिते ।

[३] प्र०—कहि ण भंते ! पुक्खरवरस्स दीवस्स विजए णामं दारे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा ! पुक्खरवरदीवपुरच्छिमपेरते, पुक्खरोदसमुद्दपुरच्छिमद्धस्स पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं पुक्खर-वरदीवस्स विजए णाम दारे पण्णत्ते ।
त चेव सव्व, एव चत्तारि वि दारा,
सीया-सीओदा णत्थि भाणितव्वाओ ।

[४] प्र०—पुक्खरवरस्स ण भते ! दीवस्स दारस्स य २ एस ण केवतियं अवाधाए अतरे पण्णत्ते ?
उ०—गोयमा !

गाहा—अडयालसयसहस्सा बावीस खलु भवे सहस्साइं ।
अगुणुत्तरा य चउरो दारतर पुक्खरवरस्स ।।१।।
पदेसा दोण्ह वि पुट्ठा, जीवा दोसु भाणियव्वा ।

[५] प्र०—से केणट्ठेणं भते ! एव वुच्चति-पुक्खरवरदीवे २ ?
उ०—गोयमा ! पुक्खरवरे ण दीवे तत्थ-तत्थ देसे तहिं-तहिं बहवे पउमरुक्खा, पउमवणसंडा णिच्चं कुसुमिता—जाव—चिट्ठंति,
पउम-महापउमरुक्खे एत्थ णं पउम-पुंडरीया णामं दुवे देवा महिड्ढिया—जाव—पलिओवमट्ठितीया परिवसंति,
से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति-पुक्खरवरदीवे २—जाव—निच्चे[1] ।

—जीवा. प्रति. ३ उ. २ सूत्र १७६

१– (क) ठा. अ. ८ सूत्र ६३२ पृ. ४११
(ख) ठा. अ. २, उ. ३ सूत्र ९३ पृ, ७५
(ग) ठा. अ. ३, उ. १ सूत्र १४२–१४३ पृ. ११६
(घ) ठा. अ. ३ उ. ३ सूत्र १८३ पृ. १४०
(ङ) ठा. अ. ३ उ. ४ सूत्र १९७ पृ. १५०
(च) ठा. अ. ५ उ. २ सूत्र ४३४ पृ. ३०९
(छ) ठा. अ. ६ सूत्र ५२२ पृ. ३५०
(ज) ठा. अ. ७ सूत्र ५५५ पृ. ३७७
(झ) ठा. अ. ८ सूत्र ६४१ पृ. ४१३
(ञ) ठा. अ. १० सूत्र ७६८ पृ. ४९१
(ट) ,, ,, ,, ७२१ पृ. ४५३
(ठ) सम. ६८ सूत्र १ पृ. ९०
(ड) सम. ३७ सूत्र ३ पृ. ७५

[२] प्र०—भगवन् ! मानुषोत्तर पर्वत मानुषोत्तर पर्वत क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! मानुषोत्तर पर्वत के अन्दर (अढाई द्वीप के अन्तर्गत भाग मे) मनुष्य हैं, ऊपर सुवर्णकुमार देव हैं, और बाहर देव है। अथवा गौतम ! मानुषोत्तर पर्वत को मनुष्यो ने न कभी उल्लघन किया है, न कभी उल्लघन करते है, न कभी उल्लघन करेंगे। केवल चारणो, विद्याधरो अथवा देवकर्म के कारण (मनुष्य मानुषोत्तर पर्वत का उल्लघन करते हैं) इस कारण गौतम ! यह मानुषोत्तर पर्वत कहलाता है। अथवा (यह नाम)-यावत्-नित्य है।

पुष्करोद समुद्र

[१] पुक्खरवरण्ण दीव पुक्खरोदे समुद्दे वट्टे वलयागारसठाण-सठिते-जाव-सपरिक्खित्ताण चिट्ठति।

[१] प्र०—पुक्खरोदे ण भंते ! समुद्दे केवतिय चक्कवालविक्खमेणं, केवतिय परिक्खेवेणं पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइ चक्कवालविक्खमेण सखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइं परिक्खेवेण पण्णत्ते।

[२] प्र०—पुक्खरोदस्स ण समुद्दस्स कति दारा पणत्ता ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि दारा पण्णत्ता, तहेव सव्व, पुक्खरोदसमुद्दपुरत्थिमपेरंते, वरुणवरदीवपुरत्थिमद्धस्स पच्चत्थिमेण, एत्थ णं पुक्खरोदस्स विजए नाम दारे पण्णत्ते,
एव सेसाण वि।
दारतरमि सखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइ अबाहाए अतरे पण्णत्ते, एव सेसाण वि।
पदेसा जीवा य तहेव।

[३] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ-पुक्खरोदे समुद्दे २ ?

उ०—गोयमा ! पुक्खरोदस्स ण समुद्दस्स उदगे अच्छे पत्थे जच्चे तणुए फलिहवण्णाभे पगतीए उदगरसेणं, सिरिधर-सिरिप्पभा य दो देवा-जाव-महिड्ढीया-जाव-पलिओवमट्ठितीया परिवसंति, से एतेणट्ठेणं -जाव-णिच्चे।

—जीवा प्रति ३ उ २ सूत्र १८०

[१] पुष्करवर द्वीप को वर्त्तुल एव वलयाकार पुष्करोद समुद्र सभी ओर से घेरे हुए है।

[१] प्र०—भगवन् ! पुष्करोद समुद्र का चक्रवाल-विष्कभ और परिक्षेप (परिधि) कितना है ?

उ०—गौतम ! सख्यात लाख योजन का विष्कभ है और सख्यात लाख योजन का परिक्षेप है।

[२] प्र०—पुष्करोद समुद्र के द्वार कितने है ?

उ०—गौतम ! चार द्वार है। ये सब उसी प्रकार (पूर्ववत्) हैं। पुष्करोद समुद्र के पूर्वान्त मे एव वरुणवर द्वीप के पूर्वार्ध के पश्चिम मे पुष्करोद का विजय नामक द्वार है। इसी प्रकार शेष द्वारो का भी कथन करना चाहिए।
द्वारो का पारस्परिक अन्तर सख्येय लाख योजन का है। प्रदेशो के स्पर्श का तथा जीवो (के उत्पन्न होने) का कथन भी उसी प्रकार है।

[३] प्र०—भगवन् ! पुष्करोद समुद्र पुष्करोद समुद्र क्यो कहलाता है ?

उ०—गौतम ! पुष्करोद समुद्र का जल स्वच्छ, पथ्य, उत्तम जाति का, हल्का, स्फटिक के वर्ण का, एव स्वभाव से ही पानी जैसा स्वाद वाला है। यहा श्रीधर एव श्रीप्रभ नामक दो देव रहते हैं जो महर्द्धिक-यावत्-पल्योपम की स्थिति वाले हैं। इस कारण (इसे पुष्करोद समुद्र कहते हैं) अथवा (यह नाम) -यावत्-नित्य है।

वरुणवर द्वीप

[१] पुक्खरोदे ण समुद्दे वरुणवरे ण दीवे ण सपरि० वट्टे वलयागारे—जाव—चिट्ठति। तहेव समचक्कवालसठिते।

[१] प्र०—केवतिय चक्कवालविक्खभेण, केवइय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! सखेज्जाइ जोयणसयसहस्साइं चक्कवालविक्खभेण, सखेज्जाइ जोयणसतसहस्साइं परिक्खेवेण पण्णत्ते।

पउमवरवेदिया–वणसडवण्णओ, दारतर, पदेसा, जीवा तहेव सव्व।

[२] प्र०—से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ–वरुणवरे दीवे २ ?

उ०—गोयमा ! वरुणवरे ण दीवे तत्थ २ देसे २ तहिं २ बहुओ खुड्डाखुड्डियाओ—जाव—विलपतियाओ अच्छाओ पत्तेय २ पउमवरवेइयापरि० वण० वारुणिवरोदगपडिहत्थाओ पासातीताओ ४, तासु ण खुड्डाखुड्डियासु—जाव—विलपतियासु बहवे उप्पायपव्वता—जाव—खडहडगा सव्व-फलिहामया अच्छा, तहेव वरुण-वरुणप्पभा य एत्थ दो देवा महिड्ढीया परिवसति, से तेणट्ठेण —जाव—णिच्चे।

—जीवा, प्रति ३ उ २ सू १८०

[१] पुष्करोद समुद्र के चारो ओर वरुणवर नामक द्वीप वृत्त वलयाकार रूप मे स्थित है। यह उसी प्रकार सम चक्राकार है।

[१] प्र०—उसकी चक्राकार चौडाई और परिधि कितनी है ?

उ०—गौतम ! सख्येय लाख योजन की चक्राकार चौडाई एव सख्येय लाख योजन की परिधि है। पद्मवरवेदिका, वनखण्ड, द्वारो का परस्पर अन्तर, प्रदेश, जीव आदि का वर्णन उसी प्रकार समझना चाहिए।

[२] प्र०—भगवन् ! इसे वरुणवर द्वीप क्यों कहते हैं ?

उ०—गौतम ! वरुणवर द्वीप मे यत्र-तत्र अनेक छोटी-बडी—यावत्—विलपक्तिया है जो स्वच्छ है। इनमे से प्रत्येक के चारो ओर पद्मवरवेदिका आदि हैं। ये वारुणी के समान पानी से परिपूर्ण हैं—यावत्—प्रसादजनक हैं।

इन छोटी-बडी—यावत्—विलपक्तियो मे अनेक उत्पात पर्वत—यावत्—खडहडग हैं जो उसी प्रकार सर्वस्फटिकमय एव स्वच्छ हैं। यहाँ वरुण और वरुणप्रभ नामक दो महर्धिक देव रहते हैं। इस कारण (इसे वरुणवर द्वीप कहते हैं। अथवा यह नाम)—यावत्—नित्य है।

वरुणोद समुद्र

[१] वरुणवरण्ण दीव वरुणोदे णाम समुद्दे वट्टे वलयागार०—जाव—चिट्ठति। समचक्क० विसम-चक्क० तहेव सव्व भाणियव्व।

विक्खभ–परिक्खेवो सखिज्जाइ जोयणसहस्साइ दारतर च पउमवर०, वणसडे, पएसा, जीवा, अट्ठो।

गोयमा ! वारुणोदस्स ण समुद्दस्स उदए से जहानामए चदप्पभाइ वा, मणिसिलागाइ वा, वरसीधु-वरवारुणीइ वा, पत्तासवेइ वा, पुप्फासवेइ वा, चोयासवेइ वा, फलासवेइ वा, महु-मेरएइ वा, जातिप्पसन्नाइ वा, खज्जूरसारेइ वा, मुद्दियासारेइ वा, कापिसायणाइ वा, सुपक्कखोयरसेइ वा, पभूतसभारसचिता पोसमाससतभिसयजोगवत्तिता निरुवहतविसिट्ठदिन्नकालोवयारा सुधोता उक्को-

सगअट्ठपिट्ठपुट्ठा (पिट्ठनिट्ठिज्जा) आसला मांसला पेसला वण्णेणं उववेया, गंधेणं उववेया, रसेणं उववेया, फासेण उववेया, भवे एयारूवे सिया ?
गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे ।
वारुणस्स ण समुद्दस्स उदए एत्तो इट्ठतरे—जाव—उदए आसाएणं पण्णत्ते ।
तत्थ णं वारुणि-वारुणकंता देवा महिड्ढीया०—जाव—परिवसति,
से एएणट्ठेणं—जाव—णिच्चे ।

—जीवा. प्रति ३ उ. २ सू १८०

[१] वरुणवर द्वीप के चारो ओर वरुणोद नामक समुद्र गोल वलयाकार रूप मे रहा हुआ है ।

वह सम चक्राकार है, विषम चक्राकार नही, इत्यादि सब वर्णन पूर्ववत् कर लेना चाहिए । इसकी चक्रवाल चौडाई एव परिधि सख्यात योजन की है ।

द्वारो का अन्तर (फासला), पद्मवरवेदिका, वनखण्ड, प्रदेश, जीवो (का जन्म) इत्यादि वर्णन पूर्ववत् कर लेना चाहिए ।

गौतम ! वरुणोद समुद्र का पानी क्या चन्द्रप्रभा, मणिशिला, प्रधान सीधु, श्रेष्ठ वारुणी, पत्रासव, पुष्पासव, चोयासव, फलासव, मधुमेरक, जातिप्रसन्ना, खजूर के सार, मुद्रिकासार (द्राक्षारस), कापिशयन नामक मद्य, सुपक्व इक्षुरस, अथवा अति सभार पूर्वक सचित, पौष मास के पूरे योग से युक्त, निरुपहत विशिष्ट उपचार से निर्मित, सुधा के समकक्ष, आठ वार पिष्ट प्रदान से निष्पन्न, आस्वादनीय, मासल (वहल), मनोज्ञ, वर्णयुक्त, गधयुक्त, रसयुक्त एव स्पर्शयुक्त (सुरा) के समान है ?

गौतम ! ऐसी वात नही है । वरुणोद समुद्र का जल इससे भी अधिक इष्ट आस्वाद वाला कहा गया है ।

यहाँ वारुणि और वारुणकान्त नामक दो महर्द्धिक—यावत्—देव निवास करते है । इस कारण (इसे वरुणोद समुद्र कहते हैं, अथवा यह नाम)—यावत्—नित्य है ।

क्षीरवर द्वीप

[१] वारुणोदण्ण समुद्द खीरवरे णामं दीवे वट्टे—जाव—चिट्ठति,
सव्वं सखेज्जगं विक्खभे य परिक्खेवो य—जाव—अट्ठो,
वहूओ खुड्डा० वावीओ—जाव—सरसरपतियाओ खीरोदगपडिहत्थाओ पासातीयाओ ४,
तासु ण खुड्डियासु—जाव—विलपतियासु वहवे उप्पायपव्वयगा० सव्वरयणामया—जाव पडिरूवा ।
पुंडरीग-पुप्फदता एत्थ दो देवा महिड्ढीया—जाव—परिवसति,
से एतेणट्ठेण—जाव—निच्चे,
जोतिस सव्वं सखेज्ज ।

—जीवा प्रति ३ उ २ सूत्र १८१

[१] वृत्त-वलयाकार क्षीरवर नामक द्वीप वारुणोद समुद्र को सभी तरफ से घेरे हुए स्थित है । इसका विस्तार और परिक्षेप सव सख्यात योजन का है, आदि अर्थ तक सव कथन पूर्ववत् कह लेना चाहिए ।

यहाँ वहुत-सी छोटी-वडी वावडियाँ—यावत्—सरसर पक्तियां हैं जो क्षीरोदक (दूध के समान जल) से परिपूर्ण हैं—यावत्—प्रसादजनक हैं । इन छोटी-वडी वापियो—यावत्—विल-पक्तियो मे वहुत से उत्पात पर्वत आदि हैं जो सर्वरत्नमय—यावत्—प्रतिरूप हैं । यहाँ पुण्डरीक और पुष्पदन्त नामक दो महर्द्धिक देव रहते हैं । इस कारण—यावत्—अथवा इसका यह नाम नित्य है । यहाँ सव ज्योतिष्क (चन्द्र सूर्य आदि) सख्यात हैं ।

क्षीरोद समुद्र

[१] **खीरवरण्ण दीव० खीरोए नाम समुद्दे वट्टे वलयागारसठाणसठिते—जाव—परिक्खिवित्ता ण चिट्ठति,**
समचक्कवालसठित, नो विसमचक्कवालसठिते,
सखेज्जाइ जोयणस० विक्खभ-परिक्खेवो, तहेव सव्व—जाव—अट्ठो ।
गोयमा ! खीरोयस्स ण समुद्दस्स उदग खड-गुड-मच्छडितोववेते रण्णो चाउरतचक्कवट्टिस्स उवट्ठविते आसायणिज्जे विस्सायणिज्जे पीणणिज्जे—जाव—सव्विदिय-गातपल्हातणिज्जे—जाव—वण्णेण उवचिते—जाव फासेण, भवे एयारूवे सिया ?
णो इणट्ठे समट्ठे । खीरोदस्स ण से उदए एत्तो इट्ठयराए चेव—जाव—आसाएण पण्णत्ते, विमल-विमलप्पभा एत्थ दो देवा महिड्ढीया—जाव—परिवसति से तेणट्ठेण,
सखेज्ज चदा—जाव—तारा ।

—जीवा प्रति ३ उ २ सूत्र १८१

[१] वृत्त एव वलयाकार क्षीरोद नामक समुद्र क्षीरवर द्वीप को सभी ओर से घेरे हुए स्थित है । सम चक्राकार है, विषम चक्राकार नही । इसका विस्तार और परिक्षेप सख्येय योजन का है । इसी प्रकार सब वर्णन पूर्ववत् समझ लेना चाहिए ।

गौतम ! क्षीरोद समुद्र का पानी क्या खाँड, गुड या मत्स्याडिका (दानेदार मिस्री शक्कर) डालकर चतु स्थान परिणाम को प्राप्त गोक्षीर के समान है जो चक्रवर्ती राजा के लिए तैयार किया जाता है, आस्वादनीय, विशेष रूप से आस्वादनीय, पुष्टिकारक—यावत्—सर्वेन्द्रिय-गात्र को आह्लाद देने वाले—यावत्—प्रशस्त वर्ण से युक्त—यावत्—स्पर्श, से युक्त होता है ?

नही, ऐसा नही है । क्षीरोद समुद्र का जल इससे भी इष्टतर—यावत्—आस्वाद युक्त है । यहा विमल और विमलप्रभ नामक दो महर्द्धिक देव रहते है । इस कारण इसे क्षीरोद समुद्र कहते हैं ।—यावत्—यहाँ सख्येय चन्द्र—यावत्—तारे हैं ।

घृतवर द्वीप

[१] **खीरोवण्ण समुद्द घयवरे णामं दीवे वट्टे वलयागारसठाणसठिते—जाव—परिचिट्ठति ।**
समचक्कवाल० नो विसम० सखेज्जविक्खभ-परि०पदेसा—जाव—अट्ठो ।
गोयमा ! घयवरे ण दीवे तत्थ-तत्थ बहवे खुड्डाखुड्डीओ वावीओ—जाव—घयोदगपडिहत्थाओ उप्पायपव्वगा—जाव—खडहड० सव्वकचणमया अच्छा—जाव—पडिरूवा,
कणय-कणयप्पभा एत्थ दो देवा महिड्ढीया, चदा सखेज्जा ।

—जीवा प्रति ३ उ. २ सूत्र १८२

[१] क्षीरोद समुद्र के चारो ओर घृतवर नामक द्वीप वर्तुल एव वलयाकार रूप मे स्थित है । यह सम चक्राकार है, विषम चक्राकार नही । इसकी चौडाई एव परिधि सख्यात योजन की है । प्रदेशो का स्पर्श—यावत्—अर्थ यहाँ कह लेना चाहिए ।

गौतम ! घृतवर द्वीप मे यत्र-तत्र अनेक छोटी-बडी वापिकाएँ—यावत्—घृतोदक (घृत के समान पानी) से परिपूर्ण हैं । इनमें उत्पात पर्वत—यावत्—खडहड हैं जो सर्वकाचनमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप हैं । यहाँ कनक एव कनकप्रभ नामक महान् ऋद्धि के धारक दो देव रहते हैं । सख्यात चन्द्र आदि हैं ।

घृतोद समुद्र

[१] घयवरण्ण दीव च घतोदे णाम समुद्दे वट्टे वलयागारसठाणसठिते—जाव—चिट्ठति,
समचक्क० तहेव दार-पदेसा जीवा य अट्ठो।
गोयमा! घयोदस्स ण समुद्दस्स उदए से जहा० पप्फुल्लसल्लइ-विमुकुलकण्णियार-सरसव-सुविबुद्धकोरेंट-दामपिंडितत्तरस्स निद्धगुणतेयदीवियनिरुवहयविसिट्ठसुंदर-तरस्स सुजायदहिमहिय-तद्दिवसगहियनवणीयपड्डवणाविय-मुक्कड्डियउद्दावसज्जवीसदियस्स अहियं पीवरसुरहिगंध-मणहरमहुरपरिणामदरिसणिज्जस्स पत्थनिम्मलसुहोवभोगस्स सरयकालमि होज्ज गोघतवरस्स मंडए, भवे एतारूवे सिया?
णो इणट्ठे समट्ठे, गोयमा! घतोदस्स ण समुद्दस्स एत्तो इट्ठतर—जाव—अस्साएण प०, कत-सुकता एत्थ दो देवा महिड्ढीया—जाव—परिवसति।
सेसं त चेव—जाव—तारागणकोडीकोडीओ।

—जीवा प्रति ३ उ २ सू १८२

[१] घृतवर द्वीप के चारो ओर घृतोद नामक समुद्र गोल एव वलयाकार मे रहा हुआ है। यह सम चक्राकार है एव उसी प्रकार द्वारो, प्रदेश, जीव आदि का कथन समझ लेना चाहिए।
गौतम! घृतोद समुद्र का जल क्या विकसित शल्लकी, विकसित कनेर, सरसो, खिले हुए कोरट पुष्पो की गुथी माला के वर्ण के समान वर्ण वाले, स्निग्ध गुण वाले, अग्नि पर पकाए हुए किन्तु निरुपहत एव विशिष्ट सुन्दर, दधि को मथ कर निकाले हुए उसी दिन के नवनीत को तपाकर तैयार किए हुए, ताजा, अतिश्रेष्ठ, सुगन्धयुक्त, मनोहर, मधुर परिणमन से युक्त, दर्शनीय, पथ्य, निर्मल, सुखोपभोग्य, शरत्कालीन गोघृत के सार के समान है?
नही, ऐसा नही है। गौतम! घृतोद समुद्र का जल इससे भी अधिक इष्ट—यावत्—आस्वादनीय हैं। यहाँ कान्त और सुकान्त नामक दो महर्धिक देव रहते हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है,—यावत्—यहाँ कोटि-कोटि तारे हैं।

क्षोदवर द्वीप

[१] घतोदण्णं समुद्दं खोदवरे णाम दीवे वट्टे वलयागारे—जाव—चिट्ठति, तहेव—जाव—अट्ठो।
खोतवरे णं दीवे तत्थ २ देसे २ तहिं २ खुड्डा वावीओ—जाव—खोदोदगपडिहत्थाओ, उप्पाय-पव्वयता सव्ववेरुलियामया—जाव—पडिरूवा,
सुप्पभ—महप्पभा य दो देवा महिड्ढीया—जाव—परिवसति।
से एतेणं ०,
सव्व जोतिसं तं चेव—जाव—तारा०।

—जीवा० प्रति० ३ उ० २ सूत्र० १८२

[१] घृतोद समुद्र को सब तरफ से घेरे हुए वृत्त एव वलयाकार क्षोदवर द्वीप स्थित है। इसका वर्णन पूर्ववत् ही अर्थ पर्यन्त समझ लेना चाहिए।
क्षोदवर द्वीप मे जगह—जगह छोटी-बडी वापिया हैं जो—यावत्—इक्षुरस से परिपूर्ण हैं। यहाँ उत्पात पर्वत सर्ववैडूर्यमय—यावत्—प्रतिरूप है। सुप्रभ और महाप्रभ नामक दो महर्द्धिक देव रहते हैं। (इस कारण इसे क्षोदवर द्वीप कहते हैं)। सर्वज्योतिष्क—यावत्—तारे उसी प्रकार कह लेने चाहिए।

खोदोद समुद्र

[१] खोयवरण्ण दीव खोदोदे नाम समुद्दे वट्टे वलया०—जाव—सखेज्जाइ जोयणसतपरिक्खेवेण—जाव—अट्ठे ।

गोयमा ! खोदोदस्स ण समुद्दस्स उदए जहा से० आसलमासलपसत्थवीसंतनिद्धसुकुमाल-भूमिभागे सुच्छिन्ने सुकट्ठलट्ठविसिट्ठनिरुवहयाजीयवावीतसुकासजपयत्तनियणपरिकम्मअणु-पालियसुवुड्ढिवुड्ढाण सुजाताण लवणतणदोसवज्जियाण णयायपरिवड्ढियाण निम्मातसु दराण तिभायणिच्छोडियवाडिगाण अवणितमूलाण गठिपरिसोहिताण कुसलणरकप्पियाण—जाव—पोंडियाण वलवगणरजत्तजन्तपरिगालितमेत्ताण खोयरसे होज्जा वत्थपरिपूए चाउज्जातगसुवासिते अहियपत्थलहुके वण्णोववेते तहेव, भवे एयारूवे सिया ? णो तिणट्ठे समट्ठे । खोयरसस्स ण समुद्दस्स उदए एत्तो इट्ठतरए चेव—जाव—आसाएण प० । पुण्णभद्द-माणिभद्दा य इत्य दुवे देवा—जाव परिवसति सेस तहेव, जोइस सखेज्ज चदा०[1] ।

—जीवा० प्रति० ३ उ० २ सूत्र १८२

[१] क्षोदवर द्वीप के चारो ओर क्षोदवर नामक समुद्र वृत्त एव वलयाकार रूप मे स्थित है । परिधि आदि उसी प्रकार सख्यात योजन की है ।

गौतम ! क्या क्षोदवर समुद्र का जल ऐसा है जैसे सुस्वादु मस्त प्रशस्त विश्रान्त स्निग्ध एव सुकुमाल भूमिभाग को कोई निपुण कृषिकार सुकाष्ठ के सुन्दर एव विशिष्ट हल से जोत कर ईख वोये, निपुण रक्षक उसकी रक्षा करे, अच्छी तरह निदाण करने से वह ईख सुवृद्धि से बढे, निष्पन्न हो, तृण आदि के दोष से रहित हो, निर्मल रूप से परिवर्धित हो, पूर्ण सुन्दर जिसका ऊपर का तीसरा भाग हटा दिया गया है, नीचे का भाग निकाल दिया गवा है, गाठें साफ कर दी गई हैं, कुशल पुरुष द्वारा काटा गया है, वलवान् पुरुष द्वारा यत्र मे पीला गया है, वस्त्र से छाने हुए, इलायची आदि से सुवासित, पथ्यकर एव उत्तम वर्ण आदि वाले, क्या क्षोदवर समुद्र का पानी इस प्रकार (के इक्षुरस के समान) है ?

नही यह बात नही है । क्षोदवर समुद्र का जल इससे भी इष्टतर है—यावत्—आस्वादपूर्ण है । यहा पूर्णभद्र और मणिभद्र नामक दो देव रहते हैं । शेष वर्णन उसी प्रकार है । यहाँ च द्र आदि ज्योतिष्क सख्यात हैं ।

नन्दीश्वरवर द्वीप

[१] खोदोदण्ण समुद्द णदीसरवरे णाम दीवे वट्टे वलयागारसठिते तहेव[2]—जाव—परिक्खेवो ।
पउमवर० वणसडपरि० दारा दारतरप्पदेसे जीवा तहेव ।
स केणट्ठे ण भते ?
गोयमा ! देसे '२ वहुओ खुड्डा० वावीओ—जाव—विलपतियाओ खोदोदग-पडिहत्याओ उप्पायपव्वगा सव्ववइरामया अच्छा—जाव—पडिरूवा ।
अदुत्तर च णं गोयमा ! णदीसरदीवचक्कवालविक्खभवहुमज्झदेसभागे एत्थ ण चउद्दिसि चत्तारि अजणपव्वता पण्णत्ता ।
ते णं अंजणपव्वयगा चतुरसीति जोयणसहस्साइ उड्ढ उच्चत्तेण,[3]

---

१. कुछ प्रतियो मे यह पाठ अधिक देखा जाता है—
रसेण परिणयमउपीणपोरभगुरसुजायमधुररसपुप्फविरिइयाण उवद्दवविवज्जियाण सीयपरिफासियाण अभिणव-तवग्गाण अपालिताण ।

२—ठा० ७ सूत्र० ५८० पृ० ३८५

३—सम० स० ८४ सूत्र ७ पृ० ६६

एगमेग जोयणसहस्सं उव्वेहेणं,
मूले साइरेगाइं दस जोयणसहस्साइ,
धरणियले दस जोयणसहस्साइं आयामविक्खभेण,[१]
ततोणंतर च ण माताए २ पदेसपरिहाणीए परिहायमाणा २
उवरिं एगमेगं जोयणसहस्सं आयाम-विक्खभेण,
मूले एक्कतीस जोयणसहस्साइं छच्च तेवीसे जोयणसते किंचिविसेसाहिया परिक्खेवेणं,
धरिणियले एक्कतीस जोयणसहस्साइ छच्च तेवीसे जोयणसते देसूणे परिक्खेवेणं,
सिहरतले तिण्णि जोयणसहस्साइं एकं च बा (छा) वट्ठ जोयणसत किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं पण्णत्ता ।
मूले विच्छि (त्थि) न्ना, मज्झे संखित्ता, उप्पि तणुया,
गोपुच्छसठाणसठिता, सव्वजणामया अच्छा—जाव-पत्तेयं २ पउमवरवेदियापरि०, पत्तेय २ वणसडपरिविखत्ता, वण्णओ ।
तेसि ण अजणपव्वयाण उवरि पत्तेय २ बहुसमरमणिज्जो भूमिभागो पण्णत्तो, से जहाणामए आलिंग-पुक्खरेति वा —जाव— सयति ।
तेसि णं बहुसमरमणिज्जाण भूमिभागाण बहुमज्झदेसभाए पत्तेय २ सिद्धायतणा एकमेक जोयणसतं आयामेण, पण्णासं जोअणाइ विक्खंभेण, बावत्तरिं जोयणाइं उड्ढ उच्चत्तेणं, अणेगखंभसत-सनिविट्ठा, वण्णओ ।
तेसि ण सिद्धायतणाण पत्तेय २ चउद्दिसिं चत्तारि दारा पण्णत्ता—देवद्दारे असुरद्दारे णागद्दारे सुवण्णद्दारे ।
तत्थ णं चत्तारि देवा महिड्ढीया—जाव—पलिओवमट्ठितीया परिवसति,
तंजहा—देवे असुरे णागे सुवण्णे ।
ते ण दारा सोलस जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अट्ठ जोयणाइ विक्खभेण, तावतियं चेव पवेसेणं, सेतावरकणग० वन्नओ—जाव—वणमाला ।
तेसि ण दाराण चउद्दिसिं चत्तारि मुहमंडवा पण्णत्ता ।
ते ण मुहमडवा एगमेग जोयणसत आयामेणं, पचासजोयणाइं विक्खंभेणं, साइरेगाइं सोलस जोयणाइं उड्ढ उच्चत्तेण, वण्णओ ।
तेसि ण मुहमडवाण चउद्दिसिं चत्तारि दारा पण्णत्ता,
ते ण दारा सोलस जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, अट्ठ जोयणाइ विक्खभेणं, तावतियं चेव पवेसेण, सेस तं चेव —जाव—वणमालाओ ।
एवं पेच्छाघरमंडवा वि, तं चेव पमाण जं मुहमडवाणं, दाराविं तहेव ।
णवरि बहुमज्झदेसे पेच्छाघरमडवाण अक्खाडगा, मणिपेढियाओ अट्ठजोयणप्पमाणाओ सीहासणा अपरिवारा—जाव—दामा थूभाई चउद्दिसिं तहेव, णवरि सोलसजोयणप्पमाणा सातिरेगाइं सोलस जोयणाइं उच्चा, सेसं तहेव, —जाव—जिणपडिमा ।
चेइयरुक्खा तहेव चउद्दिसि त चेव पमाण जहा विजयाए रायहाणीए णवरि मणिपेढियाए सोलस जोयणप्पमाणाओ ।
तेसि ण चेइयरुक्खाण चउद्दिसिं चत्तारि मणिपेढियाओ अट्ठजोयणविक्खंभाओ चउजोयणबाहल्लाओ महिंदज्झया चउसट्ठिजोयणुच्चा जोयणोव्वेधा जोयणविक्खभा, सेसं तं चेव ।
एव चउद्दिसिं चत्तारि णंदापुक्खरिणीओ,
णवरि खोयरसपडिपुण्णाओ, जोयणसत आयामेणं, पण्णस पण्णासं जोयणाइ विक्खभेण, दस जोयणाइ उव्वेधेण, सेस तं चेव ।

१—ठा० अ० १० सूत्र ७२५ पृ० ४५४ ।

मणुगुलियाण गोमाणसीण य अडयालीस २ सहस्साइ-पुरच्छिमेणवि सोलस, पच्चत्यिमेणवि सोलस, दाहिणेणवि अट्ठ, उत्तरेणवि अट्ठ साहस्सीओ, तहेव सेस उल्लोया भूमिभागा—जाव—बहुमज्झदेस-भागे मणिपेढिया सोलसजोयणा आयामविक्खभेण, अट्ठ जोयणाइ बाहल्लेण, तारिस मणिपीढियाणं उप्पि देवच्छदगा सोलस जोयणाइ आयामविक्खमेण सातिरेगाइ सोलस जोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेणं, सव्वरयणमया, अट्ठसय जिणपडिमाण सव्वो चेव गमो जहेव वेमाणियसिद्धायतणस्स ।

तत्य ण जे से पुरच्छिमिल्ले अजणपव्वते तस्स ण चउद्दिसि चत्तारि णदाओ पुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तजहा—'णदुत्तरा य णदा आणदा णदिवद्धणा ।'

ताओ णदा पुक्खरिणीओ एगमेग जोयणसतसहस्स आयाम-विक्खभेण, दस जोयणाइ उव्वेहेण, अच्छाओ, सण्हाओ, पत्तेय पत्तेय पउमवरवेइयापरिक्खित्ता, पत्तेय पत्तेय वणसडपरिक्खित्ता, तत्थ—तत्थ—जाव—सोवाणपडिरूवगा तोरणा ।

तासि ण पुक्खरिणीण बहुमज्झदेसभाए पत्तेय पत्तेय दहिमुहपव्वया चउसट्ठि जोयणसहस्साइ उड्ढं उच्चत्तेण,[1] एग जोयणसहस्स उव्वेहेण, सव्वत्य समा पल्लगसठाणसठिता, दस जोयणसहस्साइं विक्खभेण, एक्कतीस जोयणसहस्साइ छच्च तेवीसे जोयणसए परिक्खेवेण पण्णत्ता, सव्वरयणामया अच्छा—जाव—पडिरूवा । तहा पत्तेय-पत्तेय पउमवरवेइयावण्णओ वणसडवण्णओ बहुसम०–जाव –आसयंति सयति । सिद्धायतण त चेव पमाण, अजणपव्वएसु सच्चेव वत्तव्वया णिरवसेस भाणि-यव्व—जाव—उप्पि अट्ठट्ठमगलगा ।

तत्थ ण जे से दक्खिणिल्ले अजणपव्वते तस्स ण चउद्दिसि चत्तारि णदाओ पुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ, तजहा–'भद्दा य विसाला य कुमुया पु डरीगिणी ।'

त चेव पमाण, त चेव दहिमुहा पव्वया, त चेव पमाण—जाव—सिद्धायतणा ।

तत्थ ण जे से पच्चत्यिमिल्ले अजणगपव्वए तस्स ण चउदिसि चत्तारि णदा पुक्खरिणीओ पण्णत्ताओ तजहा—'णदिसेणा अमोहा य गोत्यूभा य सुदसणा ।' तं चेव सव्व भाणियव्व–जाव–सिद्धायतणा ।

तत्थ ण जे से उत्तरिल्ले अजणपव्वते तस्स ण चउद्दिसि चत्तारि णदा पुक्खरिणीओ, तजहा–'विजया वेजयती जयती अपराजिया ।' सेस तहेव—जाव—सिद्धायतणा, सव्वा ते चिय वण्णणा णातव्वा ।[2]

१–सम. ६४ सूत्र ४ पृ ८६

२ स्थानागसूत्र मे नि लि पाठ अधिक है—

णदीसरवरस्स ण दीवस्स चक्कवालविक्खभस्स बहुमज्झदेमभाए चउसु विदिसासु चत्तारि रतिकरगपव्वता पण्णत्ता, तंजहा—

उत्तरपुरच्छिमिल्ले रइकरगपव्वए, दाहिणपुरच्छिमिल्ले रइकरगपव्वए, दाहिणपच्चत्थिमिल्ले रइकरगपव्वते, उत्तर-पच्चित्थिमिल्ले रतिकरगपव्वए ।

ते ण रतिकरगपव्वता दस जोयणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण, दस गाउतसताइ उव्वेहेण, सव्वत्थ समा, झल्लरिसठाण-सठिया, दस जोयणसहस्साइ विक्खभेण, एक्कतीस जोयणसहस्साइ छच्च तेवीसे जोयणसते परिक्खेवेण, सव्वरय-णामया, अच्छा—जाव—पडिरूवा ।

तत्थ ण जे से उत्तरपुरच्छिमिल्ले रतिकरगपव्वते, तस्स ण चउद्दिसि ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो चउण्हमग्गमहि-सीण जवूदीवपमाणाओ चत्तारि रायहाणीओ पण्णत्ताओ, तजहा-णदुत्तरा, णदा, उत्तरकुरा, देवकुरा, कण्णाए कण्हराईए रामाए रामरक्खियाए ।

तत्थ ण जे से दाहिणपुरच्छिमिल्ले रतिकरगपव्वते-तस्स ण चउद्दिसि सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो चउण्हमग्गमहिसीणं जवूदीवपमाणाओ चत्तारि रायहाणीओ पण्णत्ताओ, तजहा—समणा, सोमणसा, अच्चिमाली, मणोरमा, पउमाए सिवाए, सतीए, अजूए ।

तत्थ ण जे से दाहिणपच्चत्थिमिल्ले रतिकरगपव्वते, तत्थ ण चउद्दिसि सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो चउण्हमग्गम-हिसीण जवुद्दीवपमाणमेत्ताओ चत्तारि रायहाणीओ पण्णत्ताओ, तजहा—भूता, भूतवडेंसा, गोथूभा, सुदसणा; अमलाए, अच्छराए, णवमियाए, रोहिणीए ।

तत्थ णं बहवे भवणवइ--वाणमंतर-जोतिसिय-वेमाणिया देवा चाउम्मासियापडिवएसु संवच्छरिएसु वा अण्णेसु बहुसु जिणजम्मण-णिक्खमण-णाणुप्पत्ति-परिनिव्वाणमादिएसु य देवकज्जेसु य देवसमुदएसु य देवसमितिसु य देवसमवाएसु य देवपओयणेसु य एगतओ सहिता समुवागता समाणा पमुदित-पक्कीलिया अट्ठाहियाओ महामहिमाओ करेमाणा पालेमाणा सुहं सुहेणं विहरंति ।

कइलास--हरिवाहणा य तत्थ दुवे देवा महिड्ढीया-जाव-पलिओवमट्ठितीया परिवसंति,

से एतेणट्ठेण गोयमा !-जाव-णिच्चा, जोतिसं सखेज्जं ।

—जीवा० प्रति० ३ उ० २ सूत्र १८३

[१] खोदवर समुद्र को वृत्त एव वलयाकार नन्दीश्वरवर द्वीप सब ओर से घेरे हुए स्थित है। पद्मवरवेदिका, वनखण्ड, द्वार, द्वारो का अन्तर, प्रदेशो का स्पर्श और जीवो का मर कर उत्पन्न होना, इत्यादि वर्णन पूर्ववत् है।

प्र०—भगवन् ! इसे नन्दीश्वर द्वीप क्यो कहते है ?

उ०—गौतम ! (इस द्वीप मे) यत्र-तत्र छोटी-बडी वापिकाएँ-यावत्-बिलपक्तिया इक्षुरस के समान जल से परिपूर्ण है। यहा के उत्पात पर्वत सर्वरत्नमय, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप हैं।

इसके अतिरिक्त, गौतम ! नन्दीश्वर द्वीप की चक्राकार चौडाई के मध्य भाग मे चारो दिशाओ मे चार अजन पर्वत है। ये अजन पर्वत ८४ हजार योजन ऊचे, एक-एक हजार योजन गहरे, मूल मे दस हजार योजन से कुछ अधिक एव धरणीतल पर दस हजार योजन लम्बे-चौडे हैं। तदनन्तर अनुक्रम से एक-एक प्रदेश कम होते-होते ऊपर एक हजार योजन लम्बे-चौडे रह गए है।

मूल मे इन की परिधि इकतीस हजार छह सौ तेईस (३१६२३) योजन से कुछ अधिक है। धरणीतल पर परिधि ३१६२३ योजन से कुछ कम है। शिखरतल पर परिधि तीन हजार एक सौ बासठ योजन से कुछ विशेषाधिक है।

ये मूल मे विस्तृत, मध्य मे सक्षिप्त, ऊपर पतले, गोपुच्छ के आकार के, सर्व अंजनमय एव स्वच्छ हैं—यावत्—प्रत्येक पर्वत के चारो ओर पद्मवरवेदिका और वनखण्ड है। यहाँ इनका वर्णन कर लेना चाहिए।

इन अजन पर्वतो पर पृथक्-पृथक् अति रमणीय भूमिभाग हैं जो आलिंगपुष्कर के समान है,—यावत्— (यहा देवादि आकर) शयन करते हैं।

इन अतिरमणीय भूमिभागो के मध्य मे, प्रत्येक मे पृथक्-पृथक् सिद्धायतन है। ये सौ योजन लम्बे, पचास योजन चौडे, बहत्तर योजन ऊचे एव सैंकडो स्तभो से सन्निविष्ट है। इनका वर्णन यथावत् कर लेना चाहिए।

इन सिद्धायतनो के पृथक्-पृथक् (प्रत्येक के) चार दिशाओ मे चार द्वार हैं—देवद्वार, असुरद्वार, नागद्वार और सुवर्णद्वार। यहाँ (द्वारो पर) चार महर्धिक-यावत्-एक पल्योपम की स्थिति वाले देव निवास करते है, यथा-देव, असुर, नाग और सुवर्ण।

ये द्वार सोलह योजन ऊचे, आठ योजन चौडे, उतने ही (आठ योजन के) प्रवेश वाले, श्वेत, कनकमय आदि हैं—यावत्—वनमालाओ से युक्त हैं।

तत्थ ण जे से उत्तरपच्चत्थिमिल्ले रतिकरगपव्वते, तत्थ ण चउदिसिमीसाणस्स देविंदस्स देवरन्नो चउण्हमग्गम--हिसीणं जबुद्दीवप्पमाणमित्ताओ चत्तारि रायहाणीओ पण्णत्ताओ, तजहा—रयणा, रयणुच्चया, सव्वरयणा, रतण-सचया ; वसूए, वसुगुत्ताए, वसुमित्ताए, वसुंधराए ।

—स्थानाग ४ उ २ सूत्र ३०७

इन द्वारो के चारो ओर मुखमण्डप हैं। ये मुखमण्डप सौ योजन लम्बे, पचास योजन चौडे एव साधिक सोलह योजन ऊँचे हैं। इनका वर्णन कर लेना चाहिए।

इन मुखमण्डपो की चारो दिशाओ मे चार द्वार हैं। ये द्वार सोलह योजन ऊँचे, आठ योजन चौडे एव उतने ही प्रवेश वाले हैं। शेष वर्णन वनमाला पर्यन्त उसी प्रकार है।

इसी प्रकार प्रेक्षागृह-मडपो का भी वर्णन समझना चाहिए। इनके प्रमाण, द्वार आदि का वर्णन मुखमडपो के समान है। विशेष यह है कि प्रेक्षागृह-मडपो के मध्य मे अक्षाटक (अखाडे) हैं, आठ योजन प्रमाण मणिपीठिकाएँ हैं, इन पर विना परिवार के सिंहासन हैं—यावत्—मालाएँ हैं। चारो दिशाओ मे उसी प्रकार स्तूप हैं। अन्तर यह है कि ये (स्तूप) सोलह योजन प्रमाण हैं एव कुछ अधिक सोलह योजन ऊचे हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है—यावत्—यहा जिनप्रतिमाएँ हैं।

यहाँ चारो दिशाओ मे चैत्यवृक्ष उसी प्रकार हैं। इनका प्रमाण विजया राजधानी (के वर्णन मे कथित प्रमाण) के ही समान है। अन्तर यह कि यहाँ मणिपीठिकाएँ सोलह योजन प्रमाण हैं।

चैत्यवृक्षो के चारो ओर चार मणिपीठिकाएँ हैं। ये आठ योजन चौडी, चार योजन मोटी है। पृथक्-पृथक् मणिपीठिका पर (एक-एक) महेन्द्रध्वज चौसठ योजन ऊँचे, एक योजन गहरे और एक योजन विस्तार वाले हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है।

(महेन्द्रध्वजो के आगे) चारो दिशाओ मे चार नन्दा पुष्करिणिया हैं। विशेषता यह है कि ये इक्षुरस (के समान जल) से परिपूर्ण हैं। इनकी लम्बाई सौ योजन, चौडाई पचास योजन और गहराई पचास योजन की है। शेष वर्णन उसी प्रकार है।

उन सिद्धायतनो मे पृथक्-पृथक् ४८ हजार मनोगुलिकाएँ (पीठिकाएँ) हैं और इतनी ही गोमानुषिया (शय्या जैसे स्थान) हैं। वे सोलह हजार पूर्व मे, सोलह हजार पश्चिम मे, आठ हजार दक्षिण मे और आठ हजार उत्तर मे हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है—यावत्—(सिद्धायतनो के) छतभाग, भूमिभाग आदि का कथन समझ लेना चाहिए। उनके मध्यभाग मे सोलह योजन लबी-चौडी और आठ योजन मोटी मणिपीठिकाएँ हैं।

इस प्रकार की मणिपीठिकाओ पर एक-एक देवच्छदक है। ये देवच्छदक सोलह योजन लबे-चौडे, कुछ अधिक सोलह योजन ऊँचे, सर्वरत्नमय हैं। इन पर (प्रत्येक पर) एक सौ आठ जिनप्रतिमाए हैं। इनका समस्त वर्णन वैमानिक सिद्धायतन के समान है।

इनमे पूर्व का जो अजन पर्वत है उसकी चारों दिशाओ मे चार नन्दा पुष्करिणिया हैं, यथा—नन्दोत्तरा, नन्दा, आनन्दा और नन्दिवर्धना।

ये नन्दा पुष्करिणिया एक लाख योजन लम्बी-चौडी, दस योजन गहरी, स्वच्छ और चिकनी हैं। प्रत्येक के चारो ओर पद्मवरवेदिका और वनखण्ड है। वहाँ—यावत्—त्रिसोपान-पक्तिया एव तोरण आदि हैं।

इन पुष्करिणियो के मध्य मे पृथक्-पृथक् दधिमुख पर्वत हैं। ये चौसठ हजार योजन ऊँचे, एक हजार योजन गहरे, सर्वत्र सम, पल्यक के आकार के, दस हजार योजन चौडे, ३१६२३ योजन की परिधि वाले, सर्वरत्नमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप हैं। प्रत्येक के चारो ओर पद्मवरवेदिका एव वनखण्ड उसी प्रकार हैं। यहा की भूमि अतिरमणीय है—यावत्—यहा (देवगण) बैठते-सोते है। सिद्धायतनो का प्रमाण वही है। अजन पर्वतो का सम्पूर्ण वर्णन यहा समझ लेना चाहिए, —यावत्—ऊपर आठ-आठ मगल हैं।

इनमे जो दक्षिण दिशा का अजन पर्वत है, उसकी चारो दिशाओ मे चार नन्दा पुष्करिणिया है, यथा—भद्रा, विशाला, कुमुदा और पुण्डरीकिणी।

इनका प्रमाण वही है। दधिमुख पर्वत भी उसी प्रकार है, उनका प्रमाण वही है। सिद्धायतनो तक का वर्णन यहा समझ लेना चाहिए।

इनमे जो पश्चिम दिशा का अजन पर्वत है, उसकी चारो दिशाओ मे चार नन्दा पुष्करिणिया है, यथा—नन्दिसेना, अमोघा, गोस्तूपा और सुदर्शना। यहा भी सिद्धायतन पर्यन्त समस्त पूर्वोक्त वर्णन समझ लेना चाहिए।

इनमे जो उत्तर का अजन पर्वत है उसकी चारो दिशाओ मे चार नन्दा पुष्करिणिया है, यथा—विजया, वैजयन्ती, जयन्ती और अपराजिता। शेष वर्णन सिद्धायतन पर्यन्त उसी प्रकार जानना चाहिए।

यहा अनेक भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देव चौमासी प्रतिपदा, सवत्सरी तथा अनेक तीर्थंकरजन्म, दीक्षा, केवलज्ञानोत्पत्ति, निर्वाण आदि के अवसरो पर देवकार्य, देव-समुदाय, देवसमिति, देवसमवाय, देवप्रयोजन आदि के निमित्त एकत्र होते है, आनन्द-क्रीडा करते है, अठाई महोत्सव करते हुए, पालते हुए सुखपूर्वक विचरते है।

यहा कैलाश और हरिवाहन नामक महर्धिक एव पल्योपम की स्थिति वाले दो देव निवास करते है। इस कारण से गौतम! (यह द्वीप नन्दीश्वर कहलाता है)—यावत्—(इसका यह नाम) नित्य है। यहा सख्येय ज्योतिष्क हैं।

नन्दीश्वरोद समुद्र

[१] **णंदिस्सरवरण्ण दीव णदीसरोदे णाम समुद्दे वट्टे वलयागारसंठाणसंठिते—जाव—सव्वं तहेव, अट्ठो जो खोदोदगस्स—जाव—सुमण-सोमणसभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया—जाव—परिवसंति, सेस तहेव—जाव—तारग्गं।**

—जीवा प्रति ३ उ २ सूत्र १८४

[१] नन्दीश्वरवर द्वीप के चारो ओर नन्दीश्वरोद नामक समुद्र वर्तुल एव वलयाकार मे स्थित है, —यावत्—सब वर्णन उसी प्रकार है जैसा क्षोदोद समुद्र का है—यावत्—यहाँ सुमन और सौमनसभद्र नामक दो महर्द्धिक देव रहते हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है,—यावत्—(सख्येय) तारे है।

अरुण द्वीप

[१] **णंदीसरोदं समुद्दं अरुणे णामं दीवे वट्टे वलयागार—जाव—संपरिक्खित्ताण चिट्ठति।**

[१] **प्र०—अरुणे णं भंते! दीवे किं समचक्कवालसठिते विसमचक्कवालसंठिए?**
उ०—गोयमा! समचक्कवालसंठिते, नो विसमचक्कवालसठिते।

[२] **प्र०—केवतियं चक्कवालविक्खभेण सठिते?**
उ०—संखेज्जाइं जोयणसयसहस्साइं चक्कवालविक्खभेण,
संखेज्जाइं जोयणसयसहस्साइं परिक्खेवेण पण्णत्ते।
पउमवर-वणसंड-दारा दारतरा य तहेव, सखेज्जाइं जोयणसतसहस्साइं दारतर—जाव—अट्ठो, वावीओ खोतोदगपडिहत्थाओ, उप्पातपव्वयका सव्ववइरामया अच्छा, असोग-वीतसोगा य एत्थ दुवे देवा महिड्ढीया—जाव—परिवसंति से तेणट्ठेणं—जाव—संखेज्जं सव्वं।

[१] नन्दीश्वरोद समुद्र के चारो ओर अरुण नामक द्वीप वृत्त एव वलयाकार रूप मे स्थित है।

[१] प्र०—भगवन्! अरुणद्वीप सम चक्राकार है अथवा विषम चक्राकार है?
उ०गौतम—! सम चक्राकार है, विषम चक्राकार नही।

२] प्र०—इसकी चक्राकार चौडाई आदि कितनी है ?

उ०—सख्येय लाख योजन की चक्राकार चौडाई एव सख्येय लाख योजन की परिधि है।

पद्मवरवेदिका, वनखण्ड, द्वार, द्वारो का अन्तर आदि उसी प्रकार है। सख्यात लाख योजन का एक द्वार से दूसरे द्वार का अन्तर है, आदि सब वर्णन उसी प्रकार है। यहाँ की वापिकाएँ इक्षुरस के समान जल से परिपूर्ण है। उत्पात पर्वत सर्वरत्नमय एव स्वच्छ हैं। यहाँ अशोक और वीतशोक नामक महर्धिक—यावत्—दो देव हैं। इस कारण (यह अरुणद्वीप कहलाता है)—यावत्—सब सख्येय है।

अरुणोद समुद्र

[१] अरुणण्ण दीव अरुणोदे णाम समुद्दे, तस्सवि तहेव परिक्खेवो, अट्ठो, खोतोदगे, णवरि सुभद्द-सुमणभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया, सेस तहेव।

[१] अरुणद्वीप के चारो ओर अरुणोद समुद्र है। इसकी परिधि आदि भी उसी प्रकार है। इसका जल इक्षुरस के समान है। विशेषता यह है कि यहाँ सुभद्र और सुमनभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है।

शेष द्वीप और समुद्र

[१] अरुणोदग समुद्द अरुणवरे णाम दीवे वट्टे वलयागारसठाणसठिते, तहेव सखेज्जग सव्व—जाव अट्ठो, खोयोदगपडिहत्थाओ, उप्पायपव्वतया सव्ववइरामया अच्छा, अरुणवरभद्द-अरुणवरमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया।

[२] एव अरुणोदवरोदे वि समुद्दे—जाव—देवा अरुणवर-अरुणमहावरा य एत्थ दो देवा महिड्ढीया।

[३] अरुणवरोदण्ण समुद्द अरुणवरावभासे णाम दीवे वट्टे—जाव—देवा अरुणवरावभासभद्दारुणवरावभासमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया।

[४] एव अरुणवरावभासे समुद्दे, णवरि देवा अरुणवरावभासारुणवरावभासमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया।

[५] कुडले दीवे कुडलभद्द-कुडलमहाभद्दा दो देवा महिड्ढीया।

[६] कुंडलोदे समुद्दे चक्खुसुभ-चक्खुकता एत्थ दो देवा महिड्ढीया।

[७] कुंडलवरे दीवे[1] कुडलवरभद्द-कुडलवरमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया।

[८] कुडलवरोदे समुद्दे कुडलवर-कुडलवरमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया।

[९] कुडलवरावभासे दीवे कुंडलवरावभासभद्द-कुडलवरावभासमहाभद्दा एत्थ दो देवा०।

[१०] कुंडलवरोभासोदे समुद्दे कुडलवरोभासवर-कुडलवरोभासमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया—जाव—पलिओवमट्ठितीया परिवसति।

[११][१] प्र०—कुडलवरोभास ण समुद्द रुचगे णाम दीवे वट्टे वलयागारसठाणसठिए—जाव—चिट्ठति। किं समचक्कवालसठाणसठिते, विसमचक्कवालसठाणसठिते ?

उ०—गोयमा ! समचक्कवालसठाणसठिते, नो विसमचक्कवालसठाणसठिते।

[२] केवतिय चक्कवालविक्खमेण पण्णत्ते ?

सव्वट्ठ-मणोरमा एत्थ दो देवा, सेस तहेव।

---

१ ठा० अ. १० सूत्र ७२६ पृ. ४५२।

[१२] रुयगोदे नाम समुद्दे जहा खोदोदे समुद्दे; सखेज्जाइ जोयणसतसहस्साइं चक्कवालविक्खंभेणं, सखेज्जाइ जोयणसतसहस्साइ परिक्खेवेणं, दारा, दारतरपि सखेज्जाइं, जोतिसपि सव्वं सखेज्जं भाणियव्व ।

अट्ठोवि जहेव खोदोदस्स, नवरि सुमण-सोमणसा एत्थ दो देवा महिड्ढीया, तहेव रुयगाओ आढत्त असखेज्ज विक्खभा परिक्खेवो दारा दारतर च, जोइस च सव्व असखेज्ज भाणियव्वं ।

[१३] रुयगोदण्ण समुद्द रुयगवरे ण दीवे वट्टे[1], रुयगवरभद्द-रुयगवरमहाभद्दा एत्थ दो देवा,

[१४] रुयगवरोदे रुयगवर-रुयगवरमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[१५] रुयगवरावभासे दीवे रुयगवरावभासभद्द-रुयगवरावभासमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[१६] रुयगवरावभासे समुद्दे रुयगवरावभासवर-रुयगवरावभासमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[१७] हारद्दीवे हारभद्द-हारमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[१८] हारसमुद्दे हारवर-हारवरमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[१९] हारवरदीवे हारवरभद्द-हारवरमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[२०] हारवरोए समुद्दे हारवर-हारवरमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[२१] हारवरावभासे दीवे हारवरावभासभद्द-हारवरावभासमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[२२] हारवरावभासोए समुद्दे हारवरावभासवर-हारवरावभासमहावरा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[२३] एव सव्वेवि तिपडोयारा णेतव्वा—जाव—सूरवरोभासोए समुद्दे ।
दीवेसु भद्दनामा वरनामा होंति उदहीसु ।
—जाव—पच्छिमभावं च खोतवरादीसु सयभूरमणपज्जतेसु, वावीओ खोओदगपडिहत्थाओ, पव्वयका य सव्ववइरामया ।

[२४] देवदीवे दीवे दो देवा महिड्ढीया देवभद्द-देवमहाभद्दा एत्थ० ।

[२५] देवोदे समुद्दे देववर-देवमहावरा एत्थ दो देवा—जाव—सयंभूरमणे दीवे सयभूरमणभद्द-सयंभूरमणमहाभद्दा एत्थ दो देवा महिड्ढीया ।

[२६] सयंभुरमणण्ण दीवं सयभुरमणोदे नाम समुद्दे वट्टे वलयागारसठाणसठिए—जाव—असखेज्जाइं जोयणसतसहस्साइं परिक्खेवेण—जाव—अट्ठो ।
गोयमा ! सयभुरमणोदए उदए अच्छे पत्थे जच्चे तणुए फलिहवण्णाभे पगतीए उदगरसेण पण्णत्ते ।
सयभुरमणवर-सयंभुरमणमहावरा इत्थ दो देवा महिड्ढीया ।
सेसं तहेव—जाव—असखेज्जाओ तारागणकोडिकोडीओ सोभेंसु वा ३ ।[2]

जीवा प्रति ३ उ. २ सूत्र १८५

[१] अरुणोद समुद्र के चारो ओर अरुणवर नामक द्वीप वर्तुल एव वलयाकार रूप मे स्थित है । यह भी उसी प्रकार सख्येय (योजन की परिधि वाला) है, इत्यादि सब वर्णन समझ लेना चाहिए । यहाँ भी (वापिकाएँ आदि) इक्षुरस के समान पानी से परिपूर्ण है । उत्पातपर्वत सर्ववज्रमय एव स्वच्छ है । यहाँ अरुणवरभद्र और अरुणवरमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं ।

[२] इसी प्रकार अरुणवरोद समुद्र मे भी—यावत्—अरुणवर और अरुणमहावर नामक दो महर्द्धिक देव हैं ।

१– ठा. १० सूत्र ७२६ पृ. ४५२ ।
२– (क) सूर्य० सूत्र १०३
(ख) जीवा सूत्र १२३, पृ १७६

[३] अरुणवरोद समुद्र के चारो ओर अरुणवरावभास नामक द्वीप वर्तुल (आदि रूप मे स्थित) है, —यावत्—यहाँ अरुणवरावभासभद्र और अरुणवरावभासमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[४[इसी प्रकार अरुणवरावभास नामक समुद्र के विषय मे समझना चाहिए। अन्तर यह है कि यहाँ अरुणवरावभासवर और अरुणवरावभासमहावर नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[५] कु डल द्वीप मे कु डलभद्र और कु डलमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[६] कु डलोद समुद्र मे चक्षुशुभ और चक्षुकान्त नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[७] कु डलवर द्वीप मे कु डलवरभद्र और कु डलवरमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[८] कु डलवरोद समुद्र मे कु डलवर और कु डलमहावर नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[९] कु डलवरावभास द्वीप मे कु डलवरावभासभद्र और कु डलवरावभासमहाभद्र नामक दो देव हैं।

[१०] कु डलवरावभासोद समुद्र मे कु डलवरावभासवर और कु डलवरावभासमहावर नामक दो महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाले देव रहते हैं।

११][१] प्र०—कु डलवरावभास समुद्र के चारो ओर रुचक नामक द्वीप वर्तुल एव वलयाकार रूप मे स्थित है। यह समचक्राकार है अथवा विषमचक्राकार है ?

उ०—गौतम ! यह सम चक्राकार है, विषम चक्राकार नही।

[२] प्र०—इस चक्राकार की चौडाई आदि कितनी है ?

उ०—(इत्यादि उसी प्रकार समझना चाहिए।) यहाँ सर्वार्थ और मनोरम नामक दो देव हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है।

[१२] रुचकोद नामक समुद्र क्षोदवरोद समुद्र के समान है। इसकी चक्राकार चौडाई सख्यात लाख योजन, परिधि सख्यात लाख योजन तथा द्वार एव द्वारो का सख्यात योजन का अन्तर तथा ज्योतिष्क सख्यात (पूर्ववत्) कह लेना चाहिए। इसके नाम का अर्थ भी क्षोदोद समुद्र के सदृश है। अन्तर यह है कि यहाँ सुमना और सौमनस नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

रुचक से प्रारम्भ करके (द्वीप-समुद्रो का) विस्तार और परिक्षेप, द्वार, द्वारो का अन्तर तथा ज्योतिष्क-सब असख्यात कहना चाहिए।

[१३] रुचकोद समुद्र के चारो ओर रुचकवर नामक द्वीप वर्तुल (रूप मे स्थित) है। यहाँ रुचकवर-भद्र और रुचकवरमहाभद्र नामक दो देव हैं।

[१४] रुचकवरोद (समुद्र) मे रुचकवर और रुचकमहावर नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[१५] रुचकवरावभास द्वीप मे रुचकवरावभासभद्र और रुचकवरावभासमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[१६] रुचकवरावभास समुद्र मे रुचकवरावभासवर और रुचकवरावभासमहावर (नामक दो देव) हैं।

[१७] हार द्वीप मे हारभद्र और हारमहाभद्र देव हैं।

[१८] हार समुद्र मे हारवर और हारमहावर नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[१९] हारवरद्वीप मे हारवरभद्र और हारवरमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[२०] हारवरोद समुद्र मे हारवर (वर) और हारवरमहावर (नामक) देव हैं।

[२१] हारवरावभास द्वीप मे हारवरावभासभद्र और हारवरावभासमहाभद्र (नामक देव) हैं।

[२२] हारवरावभासोद समुद्र मे हारवरावभासवर और हारवरावभासमहावर (नामक देव) हैं।

[२३] इस प्रकार सब (द्वीप-समुद्र) त्रिपदावतार हैं अर्थात् तीन-तीन पदो मे उनके नाम है—यावत्—सूर्यवरावभासोद समुद्र तक वर्णन करना चाहिए।
द्वीपो मे (देवो के नाम) 'भद्र' (और महाभद्र) है तथा समुद्रो मे वर (और महावर) हैं।
सब के पीछे (द्वीप एव समुद्र का नाम) है।
स्वयभूरमण पर्यन्त वापिकाएँ इक्षुरस के समान जल से परिपूर्ण है। पर्वत सर्व वज्रमय हैं।

[२४] देवद्वीप मे देवभद्र और देवमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[२५] देवोद समुद्र मे देववर और देवमहावर (नामक देव) है।
—यावत्—स्वयभूरमण द्वीप मे स्वयभूरमणभद्र और स्वयभूरमणमहाभद्र नामक दो महर्द्धिक देव हैं।

[२६] स्वयभूरमण द्वीप के चारो ओर स्वयभूरमणोद नामक समुद्र वर्तुल एव वलयाकार है—यावत्—असख्यात लाख योजन की परिधि आदि हैं।
गौतम ! स्वयभूरमणोद समुद्र का जल स्वच्छ, पथ्य, उत्तम जाति का, हलका, स्फटिक वर्ण का एव स्वाभाविक पानी के स्वाद वाला है। यहाँ स्वयभूरमणवर और स्वयभूरमणमहावर नामक दो महर्द्धिक देव हैं। शेष वर्णन उसी प्रकार है—यावत्—यहाँ असख्येय कोटि-कोटि तारागण सुशोभित हुए, होते हैं और होगे।

समुद्रों के जल का स्वाद

[१] [१] प्र०—लवणस्स णं भते ! समुद्दस्स उदए केरिसए अस्साएण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! लवणस्स उदए आइले रइले लिंदे लवणे कडुए अपेज्जे बहूण दुपय-चउप्पय-मिग-पसु-पक्खि-सरिसवाण, णण्णत्थ तज्जोणियाणं सत्ताण।

[२] प्र०—कालोयस्स णं भते ! समुद्दस्स उदए केरिसए अस्साएणं पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! आसले पेसले मांसले कालए मासरासिवण्णाभे पगतीए उदगरसेण पण्णत्ते।

[३] प्र०—पुक्खरोदस्स ण भते ! समुद्दस्स उदए केरिसए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अच्छे जच्चे तणुए फालियवण्णाभे पगतीए उदगरसेण पण्णत्ते।

[४] प्र०—वरुणोदस्स ण भंते ?

उ०—गोयमा ! से जहाणामए पत्तासवेति वा चोयासवेति वा खज्जूरसारेतिवा, सुपिक्कखोतरसेति वा मेरएति वा काविसायणेति वा चदप्पभाति वा मणसिलाति वा वरसीधूति वा पवर वारुणी वा अट्ठपिट्ठपरिणिट्ठिताति वा जवूफलकालिया वरप्पसण्णा उक्कोसमदपत्ता ईसिउट्ठावलंबिणी ईसितबच्छिकरणी ईसिवोच्छेयकरणी आसला मांसला पेसला वण्णेण उववेता—जाव—णो तिणट्ठे समट्ठे, वारुणोदए इत्तो इट्ठतरए चेव—जाव—अस्साएण पण्णत्ते।

[५] प्र०—खीरोदस्स ण भते ! उदए केरिसए अस्साएणं पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! से जहाणामए रन्नो चाउरतचक्कवट्टिस्स चाउरक्के गोखीरे पयत्तमंदग्गिसुकढ्ढिते आउत्तरखडमच्छडितोववेते वण्णेण उववेते —जाव—फासेण उववेते, भवे एयारूवे सिया ?
णो तिणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! खीरोदस्स उदए एत्तो इट्ठ—जाव—अस्साएणं पण्णत्ते।

[६] प्र०—घतोदस्स णं से जहाणामए सारतिकस्स गोघयवरस्स मडे सल्लइ-कण्णियारपुप्फवण्णाभे सुकड्ढितउदारसज्झवीसदिते वण्णेणं उववेते—जाव—फासेण य उववेए, भवे एयारूवे सिया ?

उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे, इत्तो इट्ठयरो०।

[७] प्र०—खोदोदस्स से जहाणामए उच्छूण जच्चपु डकाण हरियालपिंडराणं मेरुडच्छणाण वा कालपोराण तिभागनिव्वाडियवाडगाण वलवगणरजतपरिगालियमित्ताण जे य से रसे होज्जा वत्थपरिपूए चाउज्जातगसुवासिते अहियपत्थे लहुए वण्णेण उववेए—जाव—भवेयारूवे सिया ?
नो तिणट्ठे समट्ठे, एत्तो इट्ठयराए चेव० ।
एव सेसगाणवि समुद्दाण भेदो—जाव—सयंभुरमणस्स ।

[८] प्र०—कति ण भते ! समुद्दा पत्तेगरसा पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! चत्तारि समुद्दा पत्तेगरसा पण्णत्ता, तजहा-लवणे वरुणोदे खीरोदे घयोदे ।

[९] प्र०—कति ण भते ! समुद्दा पगतीए उदगरसेण पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! तओ समुद्दा पगतीए उदगरसेण पण्णत्ता, तजहा—
कालोदे पुक्खरोए सयभुरमणे ।
अवसेसा समुद्दा उस्सण्ण खोतरसा पण्णत्ता समणाउसो ! ।

—जीवा० प्रति० ३ उ० २ सूत्र १८७

[१] [१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र के पानी का कैसा स्वाद है ?
उ०—गौतम ! लवणसमुद्र का पानी मलीन, कीचड वाला, गोवर जैसा, लवण जैसा, कटुक, अनेक द्विपदो, चतुष्पदो, मृगो, पशुओ, पक्षियो एव सरीसृपो आदि के पीने के अयोग्य है । केवल उसमे उत्पन्न होने वाले प्राणियो के लिए ही पेय है ।

[२] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र का पानी कैसे स्वाद वाला है ?
उ०—गौतम ! आस्वादनीय, पेशल, पुष्टिकारक, कृष्ण, माषराशि (उडदो की राशि) के वर्ण का एव स्वभावत पानी जैसे स्वाद वाला है ।

[३] प्र०—भगवन् ! पुष्करोद समुद्र के पानी का स्वाद कैसा है ?
उ०—स्वच्छ, उत्तम जाति का, हल्का, स्फटिक के वर्ण का एव प्रकृति से पानी जैसे स्वाद वाला है ।

[४] प्र०—भगवन् ! वरुणोद समुद्र का (पानी कैसा है) ?
उ०—गौतम ! क्या यह पत्रासव, चोयासव, खजूरसार, सुपक्व इक्षुरस, मेरक, कापिशायन चन्द्रप्रभा, मणिशिला, उत्तम मीधु, श्रेष्ठ वारुणी अथवा आठ वार पिष्ट प्रदान से निष्पन्न, आस्वादनीय, जामुन के समान कृष्णवर्ण एव श्रेष्ठ रस से युक्त, उत्कृष्ट मद वाली, ईषत् ओष्ठावलंबिनी, ईषत् रक्त नेत्र करने वाली, ईषत् व्युच्छेदकारी, आस्वादयुक्त, पुष्टिकर, पेशल एव सुन्दर वर्ण वाली (मदिरा) के समान है ?
नही, यह वात नही है । वरुणोद समुद्र का पानी इससे भी इष्टतर—यावत्—आस्वादयुक्त है ।

[५] प्र०—भगवन् ! क्षीरोद समुद्र के पानी का स्वाद कैसा है ?
उ०—गौतम ! क्या यह चातुरत चक्रवर्ती के लिए तैयार किए गए चतुस्थान परिणाम को प्राप्त एव प्रयत्नपूर्वक मद अग्नि मे उकाले हुए तथा शक्कर और मिश्री डालकर तैयार किए वर्णोपेत—यावत्—स्पर्शोपपेत गोक्षीर के समान है ?
नही, ऐसा नही है । क्षीरोद समुद्र का जल इससे भी इष्टतर—यावत्—आस्वादयुक्त है ।

[६] प्र०—घृतोद समुद्र का पानी सल्लकी तथा कनेर के पुष्प के वर्ण वाले, अच्छी तरह तपा कर निकाले हुए, ताजा, वर्णोपेत—यावत्—स्पर्शोपेत श्रेष्ठ शरत्कालिक गोघृत के समान है ?
उ०—नहीं, ऐसा नही है । यह इससे भी इष्टतर है ।

[७] प्र०—उत्तम जाति की एव हडताल के समान पीत-वर्ण की ईख के टुकडे के ऊपर व नीचे के भाग को काट कर, बीच के भाग की गाठो को निकालकर बलवान् पुरुष द्वारा प्रयत्नपूर्वक यत्र से ताजा रस निकाला जाय एव उसे वस्त्र से छानकर चातुर्जातक–इलायची कालीमिर्च आदि–सुगंधित द्रव्यो से सुवासित किया जाय, अत्यन्त पथ्ययुक्त, हल्का और वर्णोपेत बनाया जाय, तो क्या इक्षुवर समुद्र का पानी इस प्रकार (के रस के समान) है ?

उ०—नही, ऐसा नही है। इसका पानी इससे भी इष्टतर है।

इसी प्रकार स्वयभूरमण समुद्र पर्यन्त शेष समुद्रो के विषय मे भी समझना चाहिए। विशेष यह है कि (स्वयभूरमण का जल) पुष्करोद के समान स्वच्छ, जातिमान् एव पथ्य है।

[८] प्र०—भगवन् ! कितने समुद्र ऐसे है जिनका जल असाधारण प्रकार का है ?

उ०—गौतम ! चार समुद्रो का पानी असाधारण रसवाला है, यथा—लवणोद, वरुणोद, क्षीरोद और घृतोद।

[९] प्र०—भगवन् ! कितने समुद्रो का पानी स्वाभाविक (पानी के) स्वाद वाला है ?

उ०—गौतम ! तीन समुद्रो का पानी स्वाभाविक (पानी के) स्वाद वाला है, यथा—कालोद, पुष्करोद और स्वयभूरमण। आयुष्मान् श्रमणो ! शेष समुद्रो का पानी बहुल रूप से इक्षुरस के समान है।

द्वीप–समुद्रों की संख्या

[१] [१] प्र०—केवतिया ण भंते ! दीव-समुद्दा नामधेज्जेहिं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! जावतिया लोगे सुभा णामा, सुभा वण्णा—जाव—सुभा फासा, एवतिया दीव-समुद्दा नामधेज्जेहिं पण्णत्ता।

[२] प्र०—केवतिया णं भते ! दीव-समुद्दा उद्धारसमएणं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! जावतिया अड्डाइज्जाण सागरोवमाणं उद्धारसमया एवतिया दीव-समुद्दा पन्नत्ता।

—जीवा० प्रति० ३ उ० २ सूत्र १८९

[१] [१] प्र०—भगवन् ! द्वीप–समुद्रों के कितने नाम हैं ? अर्थात् कितने नाम वाले द्वीप–समुद्र हैं ?

उ०—गौतम ! लोक मे जितने शुभनाम, शुभ वर्ण—यावत्—शुभ स्पर्श हैं, उतने ही द्वीप–समुद्रो के नाम हैं, अर्थात् उतने ही नामो वाले द्वीप–समुद्र हैं।

[२] प्र०—भगवन् ! अद्धासमय से द्वीप-समुद्र कितने हैं ?

उ०—गौतम ! अढाई सागरोपम के जितने अद्धासमय होते हैं, उतने ही (असख्यात) द्वीप-समुद्र हैं।

एक नाम के अनेक द्वीप–समुद्र

[१] [१] प्र०—केवइया णं भते ! जबुद्दीवा दीवा णामधेज्जेहिं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! असखेज्जा जंबुद्दीवे दीवे नामधेज्जेहिं पण्णत्ता।

[२] प्र०—केवतिया णं भते ! लवणसमुद्दा २ पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! असखेज्जा लवणसमुद्दा नामधेज्जेहिं पण्णत्ता।

एवं धायइसडा वि।

एवं—जाव—असंखेज्जा सूरदीवा नामधेज्जेहि य।

एगे देवोदे समुद्दे पण्णत्ते,

एवं णागे जक्खे—जाव—एगे सयभूरमणे दीवे।

एगे सयभूरमणसमुद्दे णामधेज्जेण पण्णत्ते।

—जीवा प्रति ३ उ. २ सूत्र १८६.

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप नाम के कितने द्वीप हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नाम के असख्य द्वीप हैं।

[२] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र नाम के कितने समुद्र हैं ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र नाम के असख्य समुद्र हैं।

इसी प्रकार घातकीखण्ड के विषय मे भी समझना चाहिए। इस प्रकार सूर्य द्वीप पर्यन्त एक-एक नाम के असख्य (द्वीप–समुद्र) हैं। देव नामक द्वीप एक ही है। देवोद समुद्र भी एक ही है। इसी प्रकार नाग, यक्ष, भूत,—यावत्—स्वयभूरमण पर्यन्त एक ही द्वीप है। स्वयभूरमण समुद्र भी एक ही है।

द्वीप–समुद्रों का उपादान

[१] [१] प्र०—दीव-समुद्दा ण भते ! किं पुढविपरिणामा, आउपरिणामा, जीवपरिणामा, पुग्गलपरिणामा ?

उ०—गोयमा ! पुढविपरिणामा वि, आउपरिणामा वि, जीवपरिणामा वि, पुग्गलपरिणामा वि।

—जीवा प्रति ३ उ २ सूत्र १९०

[१] [१] प्र०—भगवन् ! द्वीप और समुद्र क्या पृथ्वी के परिणाम हैं, अप् के परिणाम हैं, जीव के परिणाम हैं अथवा पुद्गल के परिणमन हैं ?

उ०—गौतम ! (द्वीप-समुद्र) पृथ्वी परिणाम भी हैं, अप्परिणाम भी हैं, जीवपरिणाम भी हैं एव पुद्गलपरिणाम भी हैं।

जम्बूद्वीपवर्त्ती चन्द्रों के चन्द्रद्वीप

[१] [१] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवगाण चदाण चंददीवा णाम दीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरच्छिमेण लवणसमुद्द बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता, एत्थ ण जबूदीवगाण चदाण चददीवा णामं दीवा पण्णत्ता।

जबुद्दीवतेण अद्धेकोणणउइ जोयणाइ चत्तालीस पचाणउति भागे जोयणस्स ऊसिया जलताओ, लवणसमुद्दतेण दो कोसे ऊसिया जलताओ, बारस जोयणसहस्साइ आयाम-विक्खभेण, सेस त चेव जहा गोतमदीवस्स परिक्खेवो।

पउमवरवेइया पत्तेय २ वणसडपरिक्खित्ता, दोण्हवि वण्णओ, बहुसमरमणिज्जा भूमिभागा—जाव—जोइसिया देवा आसयति।

तेसि णं बहुसम-रमणिज्जे भूमिभागे पासायवडेंसगा बावट्ठि जोयणाइं, बहुमज्झदेसभाए मणिपेढियाओ दो जोयणाइ—जाव—सीहासणा सपरिवारा भाणियव्वा।

तहेव अट्ठो, गोयमा ! बहुसु खुड्डासु खुड्डियासु बहूइ उप्पलाइं चदवण्णाभाइ, चदा एत्थ देवा महिड्ढीया—जाव—पलिओवमट्ठितीया परिवसति।

ते ण तत्थ पत्तेय २ चउण्ह सामाणियसाहस्सीण—जाव—चददीवाण चदाण य रायहाणीणं अन्नेसिं च बहूण जोतिसियाण देवाण देवीण य आहेवच्च—जाव—विहरति।

से तेणट्ठेण गोयमा ! चदद्दीवा—जाव—णिच्चा।

[२] प्र०—कहि ण भते ! जबुद्दीवगाण चंदाण चदाओ नाम रायहाणीओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! चंददीवाण तिरिय—जाव—अण्णमि जंबूदीवे २ बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता, त चेव पमाणं—जाव—एमहिड्ढीया चदा देवा २।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपवर्ती चन्द्रो के चन्द्रद्वीप नामक द्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मदर पर्वत से पूर्व मे, लवणसमुद्र मे वारह हजार योजन अवगाहन करने पर यहाँ जम्बूद्वीपवर्ती चन्द्रो के चन्द्रद्वीप नामक द्वीप हैं ।

वे द्वीप जम्बूद्वीप की ओर ८८।।$\frac{४०}{९५}$ योजन जलान्त से ऊपर हैं और लवणसमुद्र की ओर जलान्त से दो कोस ऊँचे हैं । उनकी लम्वाई-चौडाई वारह हजार योजन की है । शेष सब वर्णन वही है । परिधि गौतमद्वीप के वरावर है। पद्मवरवेदिकाएँ अलग-अलग वनखण्डो से घिरी हैं । दोनो का वर्णन समझ लेना चाहिए । वहाँ अतिसम एव रमणीय भूमाग है—यावत्—ज्योतिष्क देव विहार करते है ।

उन अतिसम एव रमणीय भूमिभाग मे प्रासादावतसक हैं, (साढे) वासठ योजन (ऊँचे हैं) । मध्य मे मणिपीठिकाएँ दो योजन की हैं—यावत्—वहाँ सपरिवार सिंहासन कहने चाहिए । अर्थ (नाम का कारण) उसी प्रकार है । गौतम ! वहाँ बहुत-सी छोटी-छोटी (वापियो मे) चन्द्र-वर्ण जैसे उत्पल है, महर्द्धिक—यावत्—पल्योपम की स्थिति वाले चन्द्र देव निवास करते हैं । वे देव पृथक्-पृथक् चार हजार सामानिक देवो का—यावत्—चन्द्रद्वीपो, चन्द्रा राजधानियो तथा अन्य वहुतेरे ज्योतिष्क देवो एव देवियो का अधिपतित्व करते हुए—यावत् विहार करते हैं ।

गौतम ! इस कारण चन्द्रद्वीप (कहलाते हैं, इसके अतिरिक्त उनके ये नाम) —यावत्—नित्य हैं ।

[२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपवर्त्ती चन्द्रो की चन्द्रा नामक राजधानियाँ कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! चन्द्रद्वीपो से पूर्व मे तिर्छे—यावत्—वारह हजार योजन अवगाहन करने पर अन्य जम्बूद्वीप मे हैं । उनका प्रमाण वही है—यावत्—चन्द्रदेव इतने महर्द्धिक हैं ।

जम्बूद्वीपवर्ती सूर्यों के सूर्यद्वीप

[२] [१] प्र०—**कहि णं भते ! जंबुद्दीवगाण सूराणं सूरदीवा णामं दीवा पण्णत्ता ?**

उ०—**गोयमा ! जंबुद्दीवे मदरस्स पव्वयस्स पच्चत्थिमेणं,**
लवणसमुद्द वारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता,
तं चेव उच्चत्तं, आयाम-विक्खभेण, परिक्खेवो, वेदिया, वणसंडा, भूमिभागा —जाव—आसयंति ।
पासायवर्डेसगाणं तं चेव पमाणं, मणिपेढिया, सीहासणा सपरिवारा,
अट्ठो, उप्पलाइं सूरप्पभाइं, सूरा एत्थ देवा—जाव—रायहाणीओ सकाणं दीवाणं पच्चत्थिमेणं अण्णमि जंबूदीवे दीवे, सेसं त चेव—जाव—सूरा देवा ।

—जीवा० सूत्र० १६२ पृ० ३१६

[२] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के सूर्यो के सूर्यद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप मे स्थित मन्दर पर्वत से पश्चिम मे, लवणसमुद्र मे वारह हजार योजन जाने पर (सूर्यद्वीप है ।)उन की ऊँचाई, लम्वाई, चौडाई, परिधि, वेदिका, वनखण्ड, भूमिभाग उसी प्रकार हैं,—यावत्—वहाँ देवगण विहार करते हैं ।
प्रासादावतसको का प्रमाण वही है । मणिपीठिका, सिंहासन सपरिवार (कह लेना चाहिए ।)
नाम (का हेतु भी समझ लेना) । वहाँ सूर्य जैसी प्रभा वाले उत्पल हैं, सूर्य नामक देव है—यावत् —उनकी राजधानिया अपने-अपने द्वीपो के पश्चिम मे अन्य जम्बूद्वीप मे हैं । सूर्य देवो तक शेष वर्णन वही (पूर्ववत्) है ।

लवणसमुद्रवर्ती चन्द्र-सूर्यों के द्वीप

[३] [१] प्र०—कहि ण भते ! अब्भितरलावणाण चदाण चददीवा णाम दीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! जबूदीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेण,

लवणसमुद्द बारस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता, एत्थ ण अब्भितर-लावणगाण चदाण चददीवा णाम दीवा पण्णत्ता ।

जहा जबूद्दीवगा चदा तहा भाणियव्वा, णवरि रायहाणीओ अण्णमि लवणे, सेस त चेव ।

एव अब्भितरलावणगाण सूराणवि लवणसमुद्द बारस जोयणसहस्साइ तहेव सव्व—जाव—रायहाणीओ ।

[२] प्र०—कहि ण भते ! बाहिरलावणगाण चदाण चददीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! लवणस्स समुद्दस्स पुरत्थिमिल्लाओ वेदियताओ लवणसमुद्द पच्चत्थिमेण बारस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता, एत्थ ण बाहिरलावणगाण चददीवा नाम दीवा पण्णत्ता,

धायतिसडदीवतेण अद्धेकोणणवतिजोयणाइ चत्तालीस च पचणउतिभागे जोयणस्स ऊसिता जलताओ,

लवणसमुद्द तेण दो कोसे ऊसिता,

बारस जोयणसहस्साइ आयाम-विक्खभेण,

पउमवरवेइया, वणसडा, बहुसमरमणिज्जा भूमिभागा, मणिपेढिया, सीहासणा सपरिवारा, सो चेव अट्ठो,

रायहाणीओ सगाण दीवाण पुरत्थिमेण तिरियमसखेज्जे०

अण्णमि लवणसमुद्दे, तहेव सव्व ।

[३] [१] प्र०—भगवन् ! अभ्यन्तर लावणिक (लवणसमुद्र की शिखा के अन्दर चलने वाले) चन्द्रो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से पूर्व मे, लवणसमुद्र मे बारह हजार योजन अवगाहन करने पर, यहाँ अभ्यन्तर लावणिक चन्द्रो के चन्द्रद्वीप हैं। इनका वर्णन जम्बूद्वीप के चन्द्रो के द्वीपो के समान कह लेना चाहिए। विशेष यह कि राजधानियाँ अन्य लवणसमुद्र मे हैं। शेष सब कथन वही।

इसी प्रकार अभ्यन्तर लावणिक सूर्यों के द्वीप भी समझ लेना चाहिए। ये द्वीप इसी लवणसमुद्र मे बारह हजार योजन (अवगाहन करने पर हैं) शेष सब वर्णन—यावत्—राजधानी उसी प्रकार है।

[२] प्र०—भगवन् ! बाह्य लावणिक चन्द्रो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के पूर्वी वेदिकान्त से लवणसमुद्र मे पश्चिम की ओर बारह हजार योजन अवगाहन करने पर बाह्य लावणिक (चन्द्र देवो) के चन्द्रद्वीप हैं।

वे घातकीखण्ड द्वीप की ओर ८८।।$\frac{४०}{९५}$ योजन जलान्त से ऊपर हैं और लवणसमुद्र की ओर दो कोस ऊँचे हैं। उनका आयाम-विष्कम्भ बारह हजार योजन का है।

पद्मवरवेदिका, वनखण्ड, अतिसम एव रमणीय भूमिभाग, मणिपीठिका, सपरिवार सिंहासन आदि का कथन वही पूर्ववत् जान लेना चाहिए और नाम का कारण भी। इनकी राजधानियाँ अपने-अपने द्वीपो के पूर्व मे, तिर्छे, असख्यात द्वीप-समुद्र लाघ कर अन्य लवणसमुद्र मे हैं। शेष सब वर्णन वही है।

[४] [१] प्र०—कहि णं भते ! वाहिरलावणगाणं सूराणं सूरदीवा णामं दीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! लवणसमुद्दपच्चत्थिमिल्लाओ वेदियताओ लवणसमुद्दं पुरत्थिमेणं बारस जोयणसहस्साइं, धायतिसडदीवंतेणं अद्धेकूणणउतिं जोयणाइं चत्तालीसं च पंचनउतिभागे जोयणस्स, दो कोसे ऊसिया, सेस तहेव—जाव—रायहाणीओ सगाण दीवाण पच्चत्थिमेण तिरियमसखेज्जे लवणे चेव, बारस जोयणा, तहेव सव्वं भाणियव्वं।

—जीवा० प्रति० ३ उ० २ सूत्र १६३ पृ० ३१६

[४] [१] प्र०—भगवन् ! वाह्य लावणिक सूर्यों के सूर्यद्वीप कहाँ है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के पश्चिमी वेदिकान्त से, लवणसमुद्र मे पूर्व की ओर बारह हजार योजन जाने पर (ये सूर्यद्वीप है) उनकी ऊँचाई धातकीखण्ड द्वीप की ओर ८८।।४०/९५ योजन (और लवण-समुद्र की ओर) दो कोस की है। शेष सब उसी प्रकार—यावत्—राजधानियाँ अपने द्वीपो के पश्चिम मे, तिर्छे असख्यात (द्वीप-समुद्र लाघने पर) लवणसमुद्र मे हैं। बारह योजन विस्तीर्ण हैं। सब वर्णन उसी प्रकार समझ लेना चाहिए।

धातकीखण्डवर्ती चन्द्र-सूर्यो के द्वीप

[५] [१] प्र०—कहि णं भते ! धायतिसडदीवगाणं चंदाणं चददीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! धायतिसंडस्स दीवस्स पुरत्थिमिल्लाओ वेदियंताओ कालोयं णं समुद्दं बारस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता, एत्थ णं धायतिसडदीवगाण चदाणं चंददीवा णामं दीवा पण्णत्ता।

सव्वतो समता दो कोसा ऊसिता जलताओ, बारस जोयणसहस्साइं तहेव विक्खंभ-परिक्खेवो, भूमिभागो, पासायवडिंसया, मणिपेढिया, सीहासणा सपरिवारा, अट्ठो, तहेव रायहाणीओ सकाण दीवाणं पुरत्थिमेणं अण्णमि धायतिसंडे दीवे,

सेसं त चेव, एव सूरदीवावि, नवरं-धायइसंडस्स दीवस्स पच्चत्थिमिल्लातो वेदियंताओ कालोयं णं समुद्दं बारस जोयण० तहेव सव्वं—जाव—रायहाणीओ सूराणं दीवाणं पच्चत्थिमेणं अण्णमि धायइसडे दीवे, सव्वं तहेव।

—जीवा प्रति. ३ उ २ सूत्र १६४ पृ ३१७

[५] [१] प्र०—भगवन् ! धातकीखड द्वीप के चन्द्रो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! धातकीखड द्वीप के पूर्वी वेदिकान्त से कालोद समुद्र मे बारह हजार योजन जाने पर, यहाँ धातकीखड द्वीप के चन्द्र देवो के चन्द्रद्वीप है।

वे सब ओर से जल से दो कोस ऊचे हैं। लवाई-चौडाई पूर्ववत् है। भूमिभाग, प्रासादावतंसक, मणिपीठिका, सपरिवार सिंहासन और अर्थ (नाम का कारण) उसी प्रकार है। इनकी राजधानियाँ अपने-अपने द्वीपो के पूर्व मे अन्य धातकीखड द्वीप मे हैं। शेष सब वही।

इसी प्रकार सूर्यद्वीप भी समझना। विशेष यह कि धातकीखडद्वीप के पश्चिमी वेदिकान्त से कालोद समुद्र मे बारह हजार योजन जाने पर, आदि कथन पूर्ववत् है।—यावत्—राजधानियाँ सूर्यद्वीपो के पश्चिम मे अन्य धातकीखड द्वीप मे है। शेष वर्णन वही पूर्ववत् है।

कालोदवर्त्ती आदि चन्द्र-सूर्यो के द्वीप

[६] [१] प्र०—कहि णं भते ! कालोयगाण चंदाणं चददीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! कालोयसमुद्दस्स पुरच्छिमिल्लाओ वेदियताओ कालोयण्णं समुद्दं पच्चत्थिमेणं बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता, एत्थ णं कालोयगचंदाण चददीवा,

सव्वतो समंता दो कोसा ऊसिता जलताओ, सेसं तहेव—जाव—रायहाणीओ सगाणं दीवाणं पुरच्छिमेण अण्णमि कालोयगसमुद्दे, बारस जोयणा, त चेव सव्वं—जाव—चदा देवा २।

एव सूराणवि, णवर-कालोयगपच्चत्थिमिल्लाओ वेदियताओ कालोयसमुद्दपुरच्छिमेणं बारस जोयण-सहस्साइ ओगाहित्ता,

तहेव रायहाणीओ सगाण दीवाण पच्चत्थिमेण अण्णमि कालोयगसमुद्दे, तहेव सव्व ।

एव पुक्खरवरगाण चदाण पुक्खरवरस्स दीवस्स पुरत्थिमिल्लाओ वेदियताओ पुक्खरसमुद्द बारस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता चददीवा,

अण्णमि पुक्खरवरे दीवे रायहाणीओ तहेव ।

एव सूराणवि दीवा पुक्खरवरदीवस्स पच्चत्थिमिल्लाओ वेदियताओ पुक्खरोद समुद्द बारस जोयण-सहस्साइ ओगाहित्ता,

तहेव सव्व—जाव—रायहाणीओ दीविल्लगाण दीवे, समुद्दगाण समुद्दे चेव,

एगाण अब्भितरपासे, एगाण बाहिरपासे,

रायहाणीओ दीविल्लगाण दीवेसु, समुद्दगाण समुद्देसु सरिणामएसु ।

इमे णामा अणुगतव्वा—

जबुद्दीवे लवणे धायइ कालोद पुक्खरे वरुणे ।

खीर-घय-इक्खु (वरो य) णदी अरुणवरे कु डले रुयगे ॥१॥

आभरण-वत्थ-गधे, उप्पल-तिलए य पुढवि णिहि-रयणे ।

वासहर-दह-नईओ, विजया वक्खार-कप्पिदा ॥२॥

पुर-मदर-मावासा, कूडा णक्खत्त-चद-सूरा य ॥

एव भाणियव्व ।

—जीवा प्रति ३ उ २ सूत्र १६५-६६, पृ ३१७

[६] [१] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र के चन्द्रो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! कालोद समुद्र के पूर्वी वेदिकान्त से, कालोद समुद्र के पश्चिम में बारह हजार योजन अवगाहन करने पर कालोदवर्ती चन्द्रो के चन्द्रद्वीप हैं। वे सब ओर से जलान्त से दो कोस ऊचे हैं। शेष वर्णन वही—पूर्ववत्। राजधानियाँ अपने द्वीपो के पूर्व मे अन्य कालोदक समुद्र मे, बारह योजन विस्तृत हैं। शेष सब वर्णन वही है—यावत्—चन्द्रदेव हैं।

इसी प्रकार सूर्यो के द्वीप समझने चाहिए। विशेष यह कि कालोदक के पश्चिमी वेदिकान्त से, कालोद समुद्र के पूर्व मे बारह हजार योजन जाने पर हैं। उसी प्रकार राजधानियाँ अपने-अपने द्वीपो के पश्चिम मे अन्य कालोद समुद्र मे हैं। सब वर्णन वही है। इसी प्रकार पुष्करवरद्वीपवर्ती चन्द्रो के चन्द्रद्वीप पुष्करवर द्वीप के पूर्वी वेदिकान्त से पुष्करवर समुद्र मे बारह हजार योजन जाने पर हैं। अन्य पुष्करवर द्वीप मे राजधानियाँ हैं।

इसी प्रकार सूर्य देवो के द्वीप, पुष्करवर द्वीप के पश्चिमी वेदिकान्त से पुष्करोद समुद्र मे बारह हजार योजन जाने पर हैं। सब वर्णन उसी प्रकार है। राजधानियाँ द्वीपवर्ती देवो की अन्य द्वीप मे हैं और समुद्रवर्ती देवो की समुद्रो मे हैं। किन्हीं की अभ्यन्तर पार्श्व मे, किन्ही की बाह्य पार्श्व मे। राजधानियाँ द्वीपवर्ती देवो की द्वीपो मे, समुद्रवर्ती देवो की समुद्रो मे हैं।

(द्वीप समुद्रो के) ये नाम जानने चाहिए—

जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र, घातकीखड, कालोद, पुष्करवर, वरुणवर, क्षीरवर, घृतवर, नन्दीश्वर, अरुण-वर, कु डलवर, रुचकवर, आभरण, वस्त्र, गध, उत्पल, पृथ्वी, निधि, रत्न, वर्षधर, द्रह, नदियाँ, विजय, वक्षार, कल्प, इन्द्र, पुर, मदर, आवास, कूट, नक्षत्र, चन्द्र और सूर्य, (इन सभी के नामो वाले द्वीप-समुद्र हैं।) ऐसा कहना चाहिए।

देवद्वीप-समुद्र आदि के चन्द्र-सूर्य देवों के द्वीप

[७] [१] प्र०—कहि ण भते ! देवद्दीवगाण चदाण चंददीवा णाम दीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! देवदीवस्स देवोद समुद्द' वारस जोयणसहस्साइ' ओगाहित्ता तेणेव कमेण पुरत्थिमिल्लाओ वेइयताओ—जाव—रायहाणीओ सगाणं दीवाणं पुरत्थिमेण देवद्दीवं समुद्दं असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ' ओगाहित्ता, एत्थ ण देवदीवयाण चदाण चदाओ णामं रायहाणीओ पण्णत्ताओ। सेसं त चेव, देवदीवचदा दीवा।

एव सूराण वि, णवरं पच्चत्थिमिल्लाओ वेदियताओ पच्चत्थिमेण च भाणितव्वा, तमि चेव समुद्दे।

[२] प्र०—कहि ण भते ! देवसमुद्दगाण चदाण चददीवा णाम दीवा पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! देवोदगस्स समुद्दस्स पुरत्थिमिल्लाओ वेदियताओ देवोदग समुद्दं पच्चत्थिमेणं वारस जोयणसहस्साइं, तेणेव कमेण—जाव—रायहाणीओ सगाणं दीवाण पच्चत्थिमेण देवोदगं समुद्द असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता, एत्थ ण देवोदगाणं चंदाण चंदाओ णामं रायहाणीओ पण्णत्ताओ।

तं चेव सव्वं, एव सूराण वि,

णवरि देवोदगस्स पच्चत्थिमिल्लाओ वेदियताओ देवोदगसमुद्द' पुरत्थिमेणं वारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता रायहाणीओ सगाण २ दीवाण पुरत्थिमेण देवोदग समुद्द' असखेज्जाइ जोयणसहस्साइं। एव णागे जक्खे भूते वि चउण्ह दीव-समुद्दाण।

[७] [१] प्र०—भगवन् ! देवद्वीपवर्त्ती चन्द्र देवो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! देवद्वीप से देवोद समुद्र मे बारह हजार योजन जाने पर, उसी (पूर्वोक्त) क्रम से पूर्वी वेदिकान्त से—यावत्—अपने-अपने द्वीपो से पूर्व मे, देवद्वीप से असख्यात हजार योजन आगे जाकर देवद्वीप के चन्द्रो की चन्द्रा नामक राजधानियाँ हैं। शेष सब वक्तव्यता वही पूर्वोक्त है।

सूर्य देवो के द्वीपो का कथन भी ऐसा ही समझना। विशेष यह है कि यहाँ पश्चिमी वेदिकान्त से और पश्चिम मे कहना चाहिए। उनकी राजधानियाँ उसी समुद्र मे हैं।

[२] प्र०—भगवन् ! देवसमुद्रवर्त्ती चन्द्रो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—गौतम ! देवोद समुद्र के पूर्वी वेदिकान्त से, देवोद समुद्र के पश्चिम मे बारह हजार योजन अवगाहन करने पर हैं। इसी क्रम से—यावत्—अपने-अपने द्वीपो के पश्चिम मे देवोद सागर मे असख्य हजार योजन जाकर यहाँ देवोदवर्त्ती चन्द्रदेवो की चन्द्रा नामक राजधानियाँ हैं।

पूर्ववत् ही सब कह लेना चाहिए। सूर्यदेवो के द्वीपो के विषय मे भी यही समझना चाहिए। विशेषता यह कि देवोद समुद्र के पश्चिमी वेदिकान्त से, देवोदक के पूर्व मे बारह हजार योजन आगे जाने पर राजधानियाँ है, जो अपने-अपने द्वीपो के पूर्व मे देवोदक से असख्यात हजार योजन पर हैं।

इसी प्रकार नागद्वीप, यक्षद्वीप और भूतद्वीप मे भी चारो द्वीप-समुद्रो (द्वीपवर्त्ती चन्द्र-सूर्यो तथा समुद्रवर्त्ती चन्द्र-सूर्यो) के सम्बन्ध मे समझ लेना चाहिए।

[८] [१] प्र०—कहि ण भंते ! सयभूरमणदीवगाण चंदाण चंददीवा पण्णत्ता ?

उ०—सयंभूरमणस्स दीवस्स पुरत्थिमिल्लातो वेदियंतातो सयंभूरमणोदगं समुद्द' वारस जोयणसहस्साइं, तहेव रायहाणीओ सगाण २ दीवाणं पुरत्थिमेणं सयंभूरमणोदग समुद्द' पुरत्थिमेणं असखेज्जाइं जोयणसहस्साइं, त चेव,

एव सूराण वि, सयभूरमणस्स पच्चत्थिमिल्लातो वेदियंताओ रायहाणीओ सकाणं २ दीवाण पच्चत्थिमिल्लाण सयभूरमणोदगं समुद्दं असखेज्जाइं ० सेस तं चेव।

[२] प्र०—कहि ण भते ! सयभूरमणसमुद्दकाण चदाणं ० ?

उ०—सयभुरमणस्स समुद्दस्स पुरत्थिमिल्लाओ वेदियताओ सयभुरमण समुद्द पच्चत्थिमेण बारस जोयण-सहस्साइ ओगाहित्ता, सेस त चेव ।

एव सूराण वि, सयभुरमणस्स पच्चत्थिमिल्लाओ सयभुरमणोद समुद्द पुरत्थिमेण बारस जोयणस-हस्साइ ओगाहित्ता,

रायहाणीओ सगाण दीवाण पुरत्थिमेण सयभूरमण समुद्द असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता, एत्थ ण सयभुरमण—जाव—सूरा देवा

—जीवा प्रति ३ उ २ सूत्र १६७, पृ ३२०

[८] [१] प्र०—भगवन् ! स्वयभूरमण द्वीप के चन्द्र देवो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—(गौतम !) स्वयभूरमण द्वीप के पूर्वी वेदिकान्त से स्वयभूरमण समुद्र मे बारह हजार योजन जाने पर—इत्यादि पूर्ववत् । राजधानियाँ अपने-अपने द्वीपो के पूर्व मे स्वयभूरमणोद समुद्र मे, पूर्व मे असख्यात हजार योजन जाने पर—इत्यादि पूर्ववत् समझ लेना चाहिए ।

सूर्यदेवो के सूर्यद्वीप भी इसी प्रकार समझना । विशेष—'स्वयभूरमण के पश्चिमी वेदिकान्त से' ऐसा कहना । राजधानियाँ अपने-अपने द्वीपो के पश्चिम मे स्वयभूरमण समुद्र मे असख्यात हजार योजन जाने पर हैं, शेष सब पूर्ववत् ।

[२] प्र०—भगवन् ! स्वयभूरमण समुद्र के चन्द्रदेवो के चन्द्रद्वीप कहाँ हैं ?

उ०—स्वयभूरमण समुद्र के पूर्वी वेदिकान्त से स्वयभूरमण समुद्र मे पश्चिम मे बारह हजार योजन अवगा-हन करके हैं । शेष सब वही समझना ।

इसी प्रकार सूर्यो के भी कह लेना । स्वयभूरमण के पश्चिमी वेदिकान्त से स्वयभूरमण समुद्र के पूर्व मे बारह हजार योजन अवगाहन करने पर हैं । राजधानियाँ अपने द्वीपो के पूर्व स्वयभूरमण समुद्र मे असख्यात हजार योजन अवगाहन करने पर हैं ।

भूकम्प के कारण

तिहिं ठाणेहिं देसे पुढवीए चलेज्जा, तजहा—

[१] १—अहे ण इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उराला पोग्गला णिवतेज्जा,
तते ण उराला पोग्गला णिवतमाणा देस पुढवीए चलेज्जा,

२—महोरगे वा महिड्डीए—जाव—महेसक्खे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे उम्मज्जणिमज्जिय करेमाणे देस पुढवीए चलेज्जा,

३—णाग-सुवण्णाण वा सगामसि वट्टमाणसि देस पुढवीए चलेज्जा । इच्चेतेहिं तिहिं. ......

तिहिं ठाणेहिं केवलकप्पा पुढवी चलेज्जा, तजहा—

[२] १—अहे ण इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए घणवाते गुप्पेज्जा,
तए ण से घणवाते गुविते समाणे घणोदहिमेएज्जा,
तए ण से घणोदही एइए समाणे केवलकप्प पुढविं चालेज्जा,

२—देवे वा महिड्डीए—जाव—महेसक्खे तहारूवस्स समणस्स माहणस्स वा इड्ढि जुतिं जस बलं वीरिय पुरिसक्कारपरक्कम उवदसेमाणे केवलकप्प पुढविं चालिज्जा,

३—देवासुरसंगामसि वा वट्टमाणसि केवलकप्पा पुढवी चलेज्जा,
इच्चेतेहिं तिहिं ठाणेहिं .....

—ठा ३ उ ४ सूत्र १९८ पृ १५१

तीन कारणो से पृथ्वी का एक देश (भाग) चलायमान होता है, वे इस प्रकार हैं—

[१] इस रत्नप्रभा पृथ्वी के स्थूल पुद्गल अलग हों अथवा (कहीं से आकर) लगें तो उन स्थूल पुद्गलो के बिछुडने या मिलने से पृथ्वी का एक भाग चलायमान होता है ।

[२] कोई महोरग (व्यन्तर देव) जो महर्द्धिक—यावत्—महेश आख्या वाला हो, वह इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे उत्पतन या निपतन करे तो पृथ्वी का एक भाग चलायमान होता है ।

[३] अथवा नागकुमारो और सुपर्णकुमारो का सग्राम होने पर पृथ्वी का एक भाग चलायमान होता है ।
इन तीन कारणो से पृथ्वी का एक भाग चलायमान होता है ।

तीन कारणो से सम्पूर्ण पृथ्वी चलायमान होती है, यथा—

[१] इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे घनवात क्षुब्ध हो जाय तो क्षुब्ध हुआ घनवात घनोदधि को कम्पित करता है और कम्पित हुआ घनोदधि सम्पूर्ण पृथ्वी को चलायमान करता है ।

[२] कोई महर्द्धिक—यावत्—महेश कहलाने वाला देव तथारूप श्रमण अथवा माहन को अपनी ऋद्धि, द्युति, यश, वल वीर्य एव पुरुषकार-पराक्रम प्रदर्शित करता हुआ सम्पूर्ण पृथ्वी को चलायमान करता है।

[३] अथवा देव-असुरसग्राम के होने पर सम्पूर्ण पृथ्वी चलायमान होती है ।
इन तीन कारणो से सम्पूर्ण पृथ्वी चलायमान होती है ।

ज्योतिष्कनिरूपण

ज्योतिष्कों के भेद

[१] [१] प्र०—से किं त जोइसिया ?

उ०—जोइसिया पचविहा पन्नत्ता, तजहा—
चदा, सूरा, गहा, नक्खत्ता, तारा ।

—पन्न. पद १ पृ २१२
—ठा ५, उ० १ सूत्र ४०१ पृ० २८७
—भग शत ५ उ ९ प्र १७ पृ० २५२

[१] [१] प्र०—ज्योतिष्क कितने प्रकार के हैं ?

उ०—ज्योतिष्क पाच प्रकार के हैं, यथा—(१) चन्द्र (२) सूर्य (३) ग्रह (४) नक्षत्र और (५) तारे ।

ज्योतिष्क देवों के स्थान

[२] [१] प्र०—कहि ण भते ! जोइसियाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ?
कहि ण भते ! जोइसिया देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसम–रमणिज्जाओ भूमिभागाओ सत्तणउए जोयणसए उड्ढ उप्पइत्ता दसुत्तरजोयणसयबाहल्ले तिरियमसखेज्जे जोइसविसए ।
एत्थ ण जोइसियाण देवाण [१]तिरियमसखेज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा भवतीति मक्खाय ।
ते ण विमाणा अद्धकविट्ठसठाणसठिया,[२] सव्वफलिहामया, अब्भुग्गय–मूसिअ–पहसिया इव, विविहमणिकणग–रयणभत्तिचित्ता,
वाउद्धूयविजयवेजयती-पडागा-छत्ताइछत्तकलिया, तुगा, गगणतलमहिलघमाणसिहरा, जालतर-रयणपजरुम्मिलियव्व,
मणि–कणगथूभियागा, वियसियसयवत्त-पुडरीया, तिलय–रयणड्ढचदचित्ता, नानामणिमयदामालकिया, अतो बहि च सण्हा,
तवणिज्जरुइलवालुयापत्थडा, सुहफासा,
सस्सिरिया, सुरूवा, पासाइया, दरिसणिज्जा, पडिरूवा ।
एत्थ ण जोइसियाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ।
तीसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे ।

—पण्ण पद २ पृ० २९४
—सम सूत्र १५०
—ठा २, उ ३ सूत्र ९४ पृ० ८०
—जीवा. सूत्र १२२ पृ० १७४

१–भग भाग ४ शत १९ उ ८ प्र ५ पृ० ९०
२–जीवा सूत्र १९७ पृ. ३७८ (एव सूरविमाणे वि, गहविमाणे वि, नक्खत्तविमाणे वि, ताराविमाणे वि अद्धकविट्ठ-सठाणसठिते) सूर सूत्र ९४ पृ २९२

[२] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त ज्योतिष्क देवो के स्थान कहा हैं ?
भगवन् ! ज्योतिष्क देव कहां रहते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अति सम एव रमणीय भूमिभाग से ७९० योजन की ऊंचाई पर ११० योजन के विस्तार मे तिर्यक् ज्योतिष्को के असख्य (स्थान हैं) यहा ज्योतिष्क देवो के तिर्यक् असख्यात लाख ज्योतिष्क–विमानावास हैं। ये विमान अर्धकपित्थ (आधे कवीठ–कैथ) के आकार के, सर्वस्फटिकमय, ऊंचे उन्नत एव अपनी प्रभा से हँसते हुए से, विविध मणियो, कनक एव रत्नो की रचना से चित्र-विचित्र, वायु से उडती हुई विजय–वैजयती, पताकाओ तथा छत्रातिछत्रो से सुशोभित, तु ग, गगनचुम्बी शिखरो वाले, जालियो मे लगे हुए रत्नो वाले, मणि एव कनकमय स्तूपिकाओ से युक्त, विकसित शतपत्र और पुण्डरीक कमलो वाले, तिलक एव रत्नमय अर्धचन्द्रो से विचित्र, नाना मणिमय मालाओ से अलकृत, अन्दर और बाहर चिकने, मुलायम तपनीय (लाल स्वर्ण) की वालुका वाले, सुखद स्पर्श वाले, शोभायुक्त, सुरूप, प्रासादिक, दर्शनीय एव प्रतिरूप है।

यहा पर्याप्त–अपर्याप्त ज्योतिष्क देवो के स्थान हैं। ये स्वस्थान, उत्पत्ति एव विक्रिया—तीनो दृष्टियो से लोक के असख्यातवें भाग मे है।

ज्योतिष्कविमानों का संस्थान

[३] [१] प्र०—ता कह ते मंडलसठिती आहिताति वदेज्जा ?
उ०—तत्थ खलु इमातो अट्ठ पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ

१—तत्थेगे एवमाहंसु—
ता सव्वावि मडलवता समचउर ससंठाणसठिता पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु।

२—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वावि ण मडलवता विसमचउरससठाण-सठिता पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु।

३—एगे पुण एवमाहसु—
सव्वावि ण मंडलवया समचदुक्कोणसठिता पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु।

४—एगे पुण एवमाहसु—
सव्वावि मडलवता विसमचउक्कोणसठिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु।

५—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वावि मंडलवया समचक्कवालसठिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु।

६—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वावि मंडलवया विसमचक्कवालसंठिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु।

७—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वावि मडलवया चक्कद्धचक्कवालसठिया पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु।

८—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वावि मंडलवता छत्तागारसंठिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु।
तत्थ जे ते एवमाहंसु–ता सव्वावि मंडलवता छत्ताकारसठिता पण्णत्ता,
एतेणं णएणं णायव्वं, णों चेव णं इतरेहिं, (पाहुडगाहाओ भाणियव्वाओ[1])।

—सूर्य० सूत्र १९ पृ. ३६
—चन्द्र० सूत्र १९

१–ये गाथाएँ उपलब्ध नहीं हैं।

[३] [१] प्र०—(भगवन् !) मडलो का (चन्द्रादि के विमानो का) आकार किस प्रकार कहा गया है ?

उ०— एतद्विषयक (परतीर्थिको की) आठ मान्यताएँ हैं—

१—एक मान्यता यह है कि ये सभी चन्द्रादि विमान समचतुरस्र हैं।

२—एक मान्यता यह है कि ये सभी चन्द्रादि विमान विषमचतुरस्र हैं।

३—एक मान्यता यह है कि ये सभी चन्द्रादि विमान समचतुष्कोण हैं।

४—एक मान्यता ऐसी है कि सभी विमान विषमचतुष्कोण हैं।

५—एक मान्यता ऐसी है कि सभी विमान समचक्राकार हैं।

६—एक मान्यता ऐसी है कि ये सभी विमान विषमचक्राकार हैं।

७—एक मान्यता ऐसी है कि ये सभी विमान अर्धचक्राकार हैं।

८—एक मान्यता ऐसी है कि ये सभी विमान छत्राकार हैं।

इनमे से जो ऐसा कहते हैं कि सभी विमान छत्र के आकार के है, वह इस नय-विशेष से (यथार्थ) समझना चाहिए, अन्य नयो से नही। (यहाँ प्राभृतगाथाएँ कह लेनी चाहिए)

जम्बूद्वीप में ज्योतिष्क

[४] [१] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे कइ चदा पभासिसु पभासति पभासिस्सति ?

कइ सूरिया तवइसु तवति तविस्सति ?

केवइया णक्खत्ता जोग जोइसु जोअति जोइस्सति ?

केवइया महग्गहा चार चरिसु चरति चरिस्सति ?

केवइयाओ तारागणकोडाकोडीओ सोभिसु सोभति सोभिस्सति ?

उ०—गोयमा ! दो चदा पभासिसु ३,

दो सूरिया तवइसु ३,

छप्पण्ण णक्खत्ता जोग जोइसु ३,

छावत्तर महग्गहसय चार चरिसु ३,

गाहाओ—

दो चदा दो सूरा णक्खत्ता खलु हवति छप्पण्णा।

छावत्तार गहसतं जबुद्दीवे विचारीण ॥१॥

एग च सयसहस्स, तित्तीस खलु भवे सहस्साइ।

णव य सता पण्णासा, तारागणकोडिकोडीण[1] ॥२॥

—सूर्य० सूत्र १०० पृ० २६८

—चन्द्र० सूत्र १०० पृ० ७४१

—जबू० सूत्र १२६ पृ० ४३३

—जीवा० सूत्र १५३ पृ० ३००

—भग० भा० ३ श० ६ उ० १ पृ० १२६

१–प्र०—ता एगमेगस्स ण चदस्स देवस्स केवतिया गहा परिवारो पण्णत्तो ?

केवतिया णक्खत्ता परिवारो पण्णत्तो ? केवतिया तारा परिवारो पण्णत्तो ?

उ०—ता एगमेगस्स ण चदस्स देवस्स अट्ठासीति गहा परिवारो पण्णत्तो, अट्ठावीस णक्खत्ता परिवारो पण्णत्तो—

छावट्ठिसहस्साइ णव चेव सताइ पचुत्तराइ (पचसयराइ)।

एगससीपरिवारो, तारागणकोडिकोडीण ॥१॥

परिवारो पण्णत्तो।

—सूर्य० सूत्र ९१ पृ० २५९,

—जम्बू० सूत्र १६३ पृ० ५२१

—जीवा० सूत्र १९४ पृ० ३७५

[४] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे कितने चन्द्र प्रभासित हुए, प्रभासित होते है और प्रभासित होगें ?
कितने सूर्य तपे हैं, तपते हैं और तपेंगे ?
कितने नक्षत्र योगयुक्त हुए है, योगयुक्त होते हैं और योगयुक्त होंगे ?
कितने महाग्रह चले, चलते हैं और चलेंगे ?
कितने कोडाकोडी तारागण शोभित हुए, शोभित होते है और शोभित होंगे ?

उ०—गौतम ! दो चन्द्र प्रभासित हुए (होते हैं, होगे) । दो सूर्य तपे है (तपते हैं तपेंगे) ।
छप्पन नक्षत्र योगयुक्त हुए है (होते हैं, होंगे) ।
एक सौ छहत्तर महाग्रहो ने चार किया (करते हैं और करेंगे) ।
गाथार्थ—
जम्बूद्वीप मे दो चन्द्र, दो सूर्य, छप्पन नक्षत्र, एक सौ छहत्तर ग्रह एव एक लाख तेतीस हजार नौ सौ पचास कोडाकोडी तारागण विचरते है ।

लवणसमुद्र में ज्योतिष्क

[५] [१] प्र०—लवणे ण भते ! समुद्दे कति चंदा पभासिंसु वा पभासिंति वा पभासिस्सति वा ?
एव पचण्ह वि पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! लवणसमुद्दे[1] चत्तारि चदा पभासिंसु वा ३,
चत्तारि सूरिया तविंसु वा ३,
बारसुत्तर नवखत्तसय जोग जोएंसु वा ३,
तिण्णि वावण्णा महग्गहसया चार चरिंसु वा ३,
दुण्णि सयसहस्सा सत्तट्ठि च सहस्सा नव य सया तारागणकोडाकोडीण सोभ सोभिंसु वा ३,

—जीवा. सू १५५ पृ ३०३

गाहाओ—

चत्तारि चेव चदा, चत्तारि सूरिया लवणतोए ।
बारसणक्खत्तसतं, गहाण तिण्णेव वावण्णा ।।१।।
दो च्चेव सतसहस्सा, सत्तट्ठि खलु भवे सहस्साइं ।
णव य सता लवणजले, तारागणकोडिकोडीणं ।।२।।

[५] [१] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र मे कितने चन्द्र प्रकाशित हुए, प्रकाशित है एव प्रकाशित होगे ? (इसी प्रकार सूर्य आदि के विषय मे भी प्रश्न समझना चाहिए ।)

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र मे चार चन्द्र प्रकाशित हुए, प्रकाशित है एव प्रकाशित होगे ।
चार सूर्य तपे, तपते हैं और तपेंगे ।
एक सौ बारह नक्षत्र (चन्द्रादि के साथ) युक्त हुए, युक्त होते है, युक्त होगे ।
तीन सौ बावन ग्रह चले, चलते है, चलेंगे ।
दो लाख सडसठ हजार नव सौ कोटाकोटी (२६७९०००००००००००००००) तारे शोभित हुए, शोभित होते हैं, शोभित होगे ।
गाथार्थ—
लवणसमुद्र मे चार चन्द्र, चार सूर्य, एक सौ बारह नक्षत्र, तीन सौ बावन ग्रह और दो लाख सडसठ हजार नव सौ कोडाकोडी तारागण हैं ।

१– ठा० ४, उ० २ सूत्र ३०५ पृ० २२५ ।

धातकीखण्ड में ज्योतिष्क

[६] [१] प्र०—धायइसडे ण भते ! दीवे कति चदा पभासिसु वा ३, ?
कति सूरिया तविसु वा ३ ?
कइ महग्गहा चार चरिसु वा ३ ?
कइ णक्खत्ता जोग जोइसु ३ ?
कइ तारागणकोडाकोडीओ सोभेंसु वा ३ ?
उ०—गोयमा ! बारस चदा पभासिसु वा ३ ?
गाहाओ—एव—
चउवीस ससि-रविणो णक्खत्तसता य तिन्नि छत्तीसा ।
एग च गहसहस्स छप्पन्न धायईसडे ॥१॥
अट्ठेव सयसहस्सा तिण्णि सहस्साइ सत्त य सयाइ ।
धायईसडे दीवे तारागणकोडिकोडीण ॥२॥
सोभेंसु वा ३ ।

—जीवा सू १७४ पृ. ३२७
—सूय सू १०० पृ २६६
—चन्द्र सू १००
—भग भा ३ श ६ उ २ प्र २ पृ १२६

[६] [१] प्र०—भगवन् ! धातकीखण्ड द्वीप मे कितने चन्द्र प्रभासित हुए हैं, इत्यादि ? कितने सूर्य तपे हैं, आदि ? कितने महाग्रह चले हैं, आदि ? कितने नक्षत्र योगयुक्त हुए हैं, आदि ? कितने कोडा-कोडी तारागण शोभित हुए हैं, आदि ?

उ०—गौतम ! धातकीखण्ड मे बारह चन्द्र प्रभासित हुए हैं (होते हैं और होगे) ।
गाथार्थ—
इसी प्रकार चौवीस चन्द्र-सूर्य (बारह चन्द्र और बारह सूर्य) तीन सौ छत्तीस नक्षत्र, एक हजार छप्पन ग्रह एव आठ लाख तीन हजार सात सौ कोडाकोडी तारागण शोभित हुए हैं, आदि ।

कालोद समुद्र में ज्योतिष्क

[७] [१] प्र०—कालोए ण भते ! समुद्दे कति चदा पभासिसु वा ३ ?
एव पचण्ह वि पुच्छा ।
उ०—गोयमा ! कालोए ण समुद्दे बायालीस चदा पभासेंसु वा ३ ।
गाहाओ—
बायालीस चदा बायालीस च दिणयरा दित्ता ।
कालोदधिम्मि एते चरति सबद्धलेसागा ॥१॥
णक्खत्ताण सहस्स एग बावत्तर च सतमण्ण ।
छच्च सता छण्णउया महागहा तिण्णि य सहस्सा ॥२॥
अट्ठावीस कालोवहिम्मि बारस य सयसहस्साइ ।
नव य सया पन्नासा तारागणकोडिकोडीण ॥३॥
सोभेंसु वा ३ ।

—जीवा सू १७५ पृ ३३०
—सूर्य सू १०० पृ २६६
—चन्द्र सू १००
—भग भा ३, श ६ उ २ प्र २ पृ १२६
—सम ४२ सूत्र ४

[७] [१] प्र०—भगवन् ! कालोद समुद्र मे कितने चन्द्र प्रभासित हुए हैं, इत्यादि। (इसी प्रकार सूर्यादि के विषय मे भी प्रश्न समझना चाहिए।)

उ०—गौतम ! कालोद समुद्र मे बयालीस चन्द्र प्रभासित हुए हैं (होते हैं और होंगे।)

गाथार्थ—

कालोदधि समुद्र मे सम्बद्ध लेश्या वाले बयालीस चन्द्र, बयालीस सूर्य, एक हजार एक सौ वहत्तर नक्षत्र, तीन हजार छह सौ छयानवे महाग्रह एव अट्ठाईस लाख बारह हजार नौ सौ पचास कोडाकोडी तारागण शोभित हुए हैं, इत्यादि।

पुष्करवरद्वीप में ज्योतिष्क

[८] [१] प्र०—पुक्खरवरे णं भंते ! दीवे केवइया चंदा पभासिंसु वा ३ ?

एवं पचण्हवि पुच्छा।

उ०—गाहाओ—

चोयाल चंदसयं चउयाल चेव सूरियाण सयं।
पुक्खरवरदीवंमि चरंति एते पभासेंता ॥१॥
चत्तारि सहस्साइं बत्तीसं चेव होंति णक्खत्ता।
छच्च सया बावत्तर महग्गहा बारह सहस्सा ॥२॥
छण्णउइ सयसहस्सा चत्तालीसं भवे सहस्साइं।
चत्तारि सया पुक्खरवर तारागणकोडिकोडीणं ॥३॥
सोभेंसु वा ३।

—जीवा सू. १७६ पृ. ३३२
—सूर्य सू. १०० पृ २६६
—चन्द्र सू. १००
—भग भा. ३ श ६ उ २ प्र. २ पृ. १३६
—सम. ७२ सूत्र ५ पृ ६२

[८] [१] प्र०—भगवन् ! पुष्करवरद्वीप मे कितने चन्द्र प्रभासित हुए हैं, इत्यादि।
इसी प्रकार पाचो (सूर्यादि) के विषय मे प्रश्न समझना चाहिए।

उ०—गाथार्थ—

पुष्करवर द्वीप मे एक सौ चवालीस चन्द्र, एक सौ चवालीस सूर्य, चार हजार बत्तीस नक्षत्र, बारह हजार छह सौ महाग्रह एव छियानवे लाख चवालीस हजार चार सौ कोडाकोडी तारे शोभित हुए हैं (होते हैं और होंगे)।

आभ्यन्तर पुष्करार्ध में ज्योतिष्क

[९] [१] प्र०—अब्भितरपुक्खरद्धे णं भंते ! केवतिया चंदा पभासिंसु वा ३ ?

सा चेव पुच्छा—जाव—तारागणकोडाकोडीओ ?

उ०—गोयमा !

गाहाओ—

बावत्तरिं च चदा बावत्तरिमेव दिणकरा दित्ता ।
पुक्खरवरदीवड्ढे चरति एते पभासेंता ॥१॥
तिन्नि सया छत्तीसा छच्च सहस्सा महग्गहाण तु ।
णक्खत्ताण तु भवे सोलाइ दुवे सहस्साइ ॥२॥
अडयाल सयसहस्सा बावीस खलु भवे सहस्साइं ।
दोन्निसया पुक्खरद्धे तारागणकोडिकोडीण ॥३॥
सोभेंसु वा ३ ।

—जीवा सू, १७६ पृ ३३२
—सूर्य सू १०० पृ २६६
—चन्द्र सू १००
—भग भा ३ श ६ उ २ प्र २ पृ १२६
—सम ७२ सूत्र ४ पृ ६२

[६] [१] प्र०—भगवन् ! आभ्यन्तर पुष्करार्ध द्वीप मे कितने चन्द्र प्रभासित हुए हैं, आदि ।
इसी प्रकार—यावत्—कोडाकोडी तारागणो के विषय मे प्रश्न समझना चाहिए ।

उ०—गौतम !

गाथार्थ—

पुष्करवर द्वीपार्ध मे बहत्तर चन्द्र, बहत्तर सूर्य, छह हजार तीन सौ छत्तीस महाग्रह, दो हजार सोलह नक्षत्र एव अडतालीस लाख बाईस हजार दो सौ कोडाकोडी तारागण शोभित हुए हैं (होते हैं, होंगे) ।

मनुष्यक्षेत्र में ज्योतिष्क

[१०][१] प्र०—माणुसखेत्ते ण भते ! कति चदा पभासेंसु वा ३ ?
कइ सूरा तवइंसु वा ३ ?
एव पचण्ह वि ?

उ०—गोयमा !

बत्तीसं चदसय बत्तीसं चेव सूरियाण सय ।
सयल मणुस्सलोय, चरेंति एता पभासेंता ॥१॥
एक्कारस य सहस्सा छप्पि य सोला महग्गहाणं तु ।
छच्च सया छण्णउया णक्खत्ता तिण्णि य सहस्सा ॥२॥
अडसीइ सयसहस्सा चत्तालीस सहस्स मणुयलोगमि ।
सत य सता अणूणा तारागणकोडकोडीण ॥३॥
सोभ सोभेंसु[1] वा ३ ।

—जीवा. सू, १७७ पृ ३३४
—सूर्य सू १०० पृ २७०
—चन्द्र, सू, १००
—भग भा ३ शत. ६ उ २ प्र. २ पृ १२६

[१०][१] प्र०—भगवन् ! मनुष्य क्षेत्र मे कितने चन्द्र प्रभासित हुए हैं, इत्यादि ?
कितने सूर्य तपे हैं, इत्यादि ?

उ०—गौतम !

गाथार्थ—

मनुष्यलोक मे एक सौ वत्तीस चन्द्र, एक सौ वत्तीस सूर्य, ग्यारह हजार छह सौ सोलह महाग्रह, तीस हजार छह सौ छियानवे नक्षत्र एव अठासी लाख चालीस हजार सात सौ कोडाकोडी तारागण सुशोभित हुए हैं (सुशोभित है, सुशोभित होगे) ।

ज्योतिष्कों की ऊंचाई

[११][१] प्र०—ता कह ते उच्चत्ते आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ पणवीस पडवित्तीओ—

१—तत्थेगे एवमाहसु—
ता एग जोयणसहस्स सूरे उड्ढं उच्चत्तेण दिवड्ढं चदे, एगे एवमाहसु ।

२—एगे पुण एवमाहसु—
ता दो जोयणसहस्साइ सूरे उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढातिज्जाइ चदे, एगे एवमाहसु ।

३—एगे पुण एवमाहंसु—
ता तिन्नि जोयणसहस्साइं सूरे उड्ढ उच्चत्तेणं अद्धट्ठाइं चदे, एगे एवमाहसु ।

४—एगे पुण एवमाहसु—
ता चत्तारि जोयणसहस्साइ सूरे उड्ढ उच्चत्तेणं अद्धपंचमाइं चदे, एगे एवमाहंसु ।

५—एगे पुण एवमाहसु—
ता पंच जोयणसहस्साइ सूरे उड्ढं उच्चत्तेण अद्धछट्ठाइ चदे, एगे एवमाहंसु ।

६—एगे पुण एवमाहंसु—
ता छ जोयणसहस्साइं सूरे उड्ढ उच्चत्तेण अद्धसत्तमाइं चदे, एगे एवमाहंसु ।

१—दाहिणड्ढमाणुस्सखेत्ता ण छावट्ठि चंदा पभासिसु वा ३,
छावट्ठि सूरिया तविसु वा ३ ।
उत्तरड्ढमाणुस्सखेत्ता णं छावट्ठि चदा पभासिसु वा ३ ।
छावट्ठि सूरिया तविसु वा ३ ।

—सम ६६, सूत्र १-४ पृ. ८९-९०

दक्षिणार्ध मनुष्य क्षेत्र मे छयासठ चन्द्र प्रभासित हुए हैं, प्रभासित होते है प्रभासित होंगे ।
छयासठ सूर्य तपे है, आदि ।
उत्तरार्ध मनुष्यक्षेत्र मे छयासठ चन्द्र प्रभासित हुए हैं, प्रभासित होते हैं, प्रभासित होगे ।
छयासठ सूर्य तपे है, आदि ।

७—एगे पुण एवमाहसु–
ता सत्त जोयणसहस्साइं सूरे उड्ढं उच्चत्तेण अद्धअट्ठमाइं चंदे, एगे एवमाहसु।

८—एगे पुण एवमाहसु–
ता अट्ठ जोयणसहस्साइ सूरे उड्ढ उच्चत्तेण अद्धनवमाइ चदे, एगे एवमाहसु।

९—एगे पुण एवमाहसु–
ता नव जोयणसहस्साइ सूरे उड्ढ उच्चत्तेण अद्धदसमाइ चदे, एवमाहसु।

१०—एगे पुण एवमाहसु–
ता दस जोयणसहस्साइ सूरे उड्ढ उच्चत्तेण अद्धएक्कारस चदे, एगे एवमाहसु।

११—एगे पुण एवमाहसु–
एक्कारस जोयणसहस्साइ सूरे उड्ढ उच्चत्तेण अद्धवारस चदे।
एतेण अभिलावेण णेतव्व—

१२—वारस सूरे अद्धतेरस चदे।

१३—तेरस सूरे अद्धचोद्दस चदे।

१४—चोद्दस सूरे अद्धपण्णरस चदे।

१५—पण्णरस सूरे अद्धसोलस चदे।

१६—सोलस सूरे अद्धसत्तरस चदे।

१७—सत्तरस सूरे अद्धअट्ठारस चदे।

१८—अट्ठारस सूरे अद्धएकूणवीस चदे।

१९—एकोणवीस सूरे अद्धवीस चदे।

२०—वीस सूरे अद्धएक्कवीस चदे।

२१—एक्कवीस सूरे अद्धवावीस चदे।

२२—वावीस सूरे अद्धतेवीस चदे।

२३—तेवीस सूरे अद्धचउवीस चदे।

२४—चउवीस सूरे अद्धपण्णवीस चदे, एगे एवमाहसु।

२५—एगे एवमाहसु–
पणवीसंजोयणसहस्साइ सूरे उड्ढं उच्चत्तेण अद्धछव्वीस चदे, एगे एवमाहसु।

वयं पुण एवं वदामो

ता इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए वहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ
सत्तणउइ जोयणसए उड्ढं उप्पतित्ता हिट्ठिल्ले ताराविमाणे चारं चरति,
अट्ठ जोयणसते उड्ढ उप्पतित्ता सूरविमाणे चार चरति।
अट्ठअसीए जोयणसए उड्ढ उप्पइत्ता चदविमाणे चार चरति।

णवजोयणसताइं उड्ढं उप्पतित्ता उवरिं ताराविमाणे चारं चरंति ।
हेट्ठिल्लातो ताराविमाणातो दसजोयणाइं उड्ढं उप्पइत्ता सूरविमाणा चारं चरंति ।
नउतिं जोयणाइं उड्ढं उप्पइत्ता चंदविमाणा चारं चरंति ।
दसोत्तरं जोयणसत उड्ढं उप्पइत्ता उवरिल्ले ताराख्वे चारं चरंति ।
सूरविमाणातो असीतिं जोयणाइं उड्ढं उप्पइत्ता चंदविमाणे चारं चरंति ।
जोयणसत उड्ढं उप्पइत्ता उवरिल्ले ताराख्वे चारं चरंति ।
ता चंदविमाणातो णं वीसं जोयणाइं उड्ढं उप्पतित्ता उवरिल्ले ताराख्वे चारं चरंति ।
एवमेव सपुव्वावरेणं दसुत्तर जोयणसत बाहल्ले तिरियमसखेज्जे जोतिसविसए जोतिसं चारं चरंति, आहितेति वदेज्जा ।[1]

— सूर्य सू ८९ पृ. २५८-२५९
— चन्द्र सू ८९
— जीवा सू १९५ पृ ३७६-३७७
— जंबू सू १६४ पृ ५२१

[११] [१]प्र०—भगवन् ! आपने चन्द्र आदि की कितनी ऊँचाई कही है, ऐसा कहना चाहिए ?

उ०—इस विषय मे ये पच्चीस मान्यताए है—

१—कोई कहते हैं कि एक हजार योजन ऊचा सूर्य और डेढ हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

२—कुछ इस प्रकार कहते है कि दो हजार योजन ऊँचा सूर्य और अढाई हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

३—कुछ ऐसा कहते है कि तीन हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे तीन हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

४—कोई कहते हैं कि चार हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे चार हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

५—कुछ इस प्रकार कहते हैं कि पाच हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे पाच हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

६—कोई यो कहते हैं कि छह हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे छह हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

७—किसी का कहना है कि सात हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे सात हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

८—कुछ इस प्रकार कहते हैं कि आठ हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे आठ हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

९—किसी का कथन है कि नव हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे नौ हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

१०—कुछ ऐसा कहते हैं कि दस हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे दस हजार योजन ऊँचा चन्द्र है ।

१—(क) भग. भा ३ श १४ उ ८ प्र. ४ पृ. ३५८
(ख) ठा. अ. ९ सूत्र ६७० पृ. ४२४
(ग) सम. सू १११, ११२
(घ) पन्न. पद २ सू. ४२ पृ. २९४

११—कुछ इस प्रकार कहते हैं कि ग्यारह हजार योजन ऊँचा सूर्य और साढे ग्यारह हजार योजन ऊँचा चन्द्र है।

पूर्वोक्त अभिलाप के साथ आगे यो समझना चाहिए—

१२—बारह हजार योजन सूर्य, साढे बारह हजार चन्द्र।

१३—तेरह हजार योजन सूर्य, साढे तेरह हजार चन्द्र।

१४—चौदह हजार सूर्य, साढे चौदह हजार चन्द्र।

१५—सूर्य पन्द्रह, चन्द्र साढे पन्द्रह।

१६—सूर्य सोलह, चन्द्र साढे सोलह।

१७—सूर्य सत्तरह, चन्द्र साढे सत्तरह।

१८—सूर्य अठारह, चन्द्र साढे अठारह।

१९—सूर्य उन्नीस, चन्द्र साढे उन्नीस।

२०—सूर्य वीस, चन्द्र साढे वीस।

२१—सूर्य इक्कीस, चन्द्र साढे इक्कीस।

२२—सूर्य बाईस, चन्द्र साढे बाईस

२३—सूर्य तेईस, चन्द्र साढे तेईस।

२४—सूर्य चौवीस, चन्द्र साढे चौवीस।

२५—कुछ इस प्रकार कहते हैं कि सूर्य पच्चीस हजार योजन और चन्द्र साढे पच्चीस हजार योजन ऊँचा है।

हम इस प्रकार कहते हैं कि इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अति सम-रमणीय भूमाग से ७९० योजन ऊपर नीचे का तारा विमान चलता है। ८०० योजन ऊपर सूर्य विमान चलता है। ८८० योजन ऊपर चन्द्रमा-विमान चलता है। ९०० योजन ऊपर ऊपर का तारा विमान सचार करता है। नीचे के तारा विमान से दस योजन ऊपर सूर्य विमान विचरता है। ९० योजन ऊपर जाने पर चन्द्रविमान चलता है। ११० योजन ऊपर ऊपर का तारा विचरता है।

सूर्यविमान से ८० योजन ऊपर जाने पर चन्द्रविमान विचरता है। ११० योजन ऊपर ऊपरला तारा विचरण करता है।

चन्द्रविमान से २० योजन ऊपर ऊपरला तारा विचरण करता है।

इस प्रकार सब मिलाकर ११० योजन के विस्तार मे तिर्यक् असख्य ज्योतिष्क मनुष्यलोक मे विचरण करते हैं।

मेरु और लोकान्त से ज्योतिष्कों की दूरी

[१२][१] प्र०—मदरस्स णं भते ! पव्वयस्स केवइआए अबाहाए जोइस चार चरइ ?

उ०—गोयमा ! इक्कारसहिं इक्कवीसेहिं जोअणसएहिं अबाहाए जोइस चार चरइ।

प्र०—लोगताओ ण भते ! केवइआए अबाहाए जोइसे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एक्कारस एक्कारसेहिं जोअणसएहिं अबाहाए जोइसे पण्णत्ते[1]।

—जबू सू. १६४ पृ ५२१
—सूर्य सू ९२ पृ २५६
—चन्द्र सू ९२
—जीवा सूत्र १९६ पृ ३७६

---

१ सम ११ सूत्र २

[१२][१] प्र०—भगवन् ! मेरु पर्वत से कितनी दूरी पर ज्योतिष्क विचरण करते हैं ?

उ०—गौतम ! (मेरु पर्वत से) ग्यारह सौ इक्कीस योजन की दूरी पर ज्योतिष्क विचरण करते हैं।

प्र०—भगवन् ! लोकान्त से कितनी दूरी पर ज्योतिष्क है ?

उ०—गौतम ! (लोकान्त से) ग्यारह सौ ग्यारह योजन की दूरी पर ज्योतिष्क हैं।

चन्द्रविमान का परिवहन

[१३][१] प्र०—चंदविमाणे णं भंते ! कतिदेवसाहस्सीओ परिवहंति ?

उ०—गोयमा ! चंदविमाणस्स ण पुरच्छिमेण

सेयाण सुभगाण सुप्पभाणं सखतलविमल-निम्मलदधिघण-गोखीर-फेण-रययणिगरप्पगासाणं,
महुगुलियपिंगलक्खाण,
थिर-लट्ठ-वट्ट-पीवर-सुसिलिट्ठ-सुविसिट्ठ-तिक्खदाढा-विडंबितमुहाणं,
रत्तुप्पल-पत्त-मउय-सुकुमालतालु-जीहाणं,
पसत्थसत्थवेरुलियभिसतकक्कडनहाण,
विसाल-पीवरोरु-पडिपुण्ण-विउलखधाणं,
मिउ-विसय-पसत्थ-सुहुम-लक्खण-विच्छिण्ण-केसर-सडोवसोभिताण
चकमित-ललिय-पुलित-धवल-गव्वितगतीण,
उस्सिय-सुणिम्मिय-सुजाय-अप्फोडियणगूलाण,
वइरामयणक्खाण, वइरामयदताण, वइरामयदाढाण,
तवणिज्जजीहाण, तवणिज्जतालुयाण, तवणिज्जजोतगसुजोतिताणं,
कामगमाण पीतिगमाणं मणोगमाणं मणोरमाणं मणोहराणं,
अमियगतीणं अमियबलवीरिय-पुरिसकार-परक्कमाण, महता अप्फोडिय-सीहनातीय-बोल-कलकल-
रवेणं महुरेण मणहरेण य पूरिंता अबर दिसाओ य सोभयंता,
चत्तारि देवसाहस्सीओ सीहरूवधारिण देवाण पुरच्छिमिल्ल बाहं परिवहंति।

—जीवा सू १९८ पृ ३८०
—सूर्य सू ९४ पृ २६२–२६३
—चन्द्र सू. ९४

[१३][१] प्र०—भगवन् ! चन्द्रविमान को कितने हजार देव वहन करते हैं ?

उ०—गौतम ! चन्द्रविमान को पूर्व की ओर से श्वेत, सुभग, सुप्रभ, शखदल के समान विमल, निर्मल दधिपिण्ड, गोदुग्ध, समुद्रफेन एव रजतपिण्ड के समान आभा वाले, मधु की गुलिका के समान पीली आखो वाले, स्थिर, लष्ट, पुष्ट, गोल, स्थूल, सुश्लिष्ट, सुविशिष्ट एव तीक्ष्ण दाढो से युक्त मुख वाले, लाल कमल के पत्र के समान मृदुल एव सुकुमाल तालु और जिह्वा वाले, प्रशस्त शस्त्र के समान वैडूर्यमय कर्कश नाखूनो वाले, विशाल व स्थूल उरु वाले, प्रतिपूर्ण एव विशाल स्कध वाले, मृदु विशद प्रशस्त सूक्ष्म लक्षणयुक्त एव फैली हुई केसर समूह से सुशोभित, चक्रमित, ललित, पुलित, धवल एव गर्वित गति वाले, ऊपर उठी हुई, सुनिर्मित एव सुजात पूछ वाले, वज्रमय नख वाले, वज्रमय दात वाले, वज्रमय दाढो वाले, तपनीय-स्वर्ण के समान जिह्वा वाले, तपनीय-स्वर्ण के समान तालु वाले, तपनीयमय जोतो से जुते हुए, इच्छानुसार गमन करने वाले,

प्रीतिकर गति वाले, मन के समान (तीव्र) गति वाले, मनोरम, मनोहर, अमित गति वाले, अमित वल वीर्य पौरुप एव पराक्रम वाले, महान्, मधुर, मनोहर, आस्फोटित, सिंहनाद, बोल, एव कलरव से आकाश को पूरित करते हुए, दिशाओ को शोभित करते हुए चार हजार सिंह का रूप धारण करने वाले देव पूर्वी बाहु को उठाते हैं।

[१४] चंदविमाणस्स ण दक्खिणेण सेयाण सुभगाण सुप्पभाणं सखतलविमल-निम्मल-दधिघण-गोखीर-फेण-रययणियरप्पगासाण,
वइरामयकु भजुयल सुट्ठित-पीवर-वर-वइरसोडवट्टियदित्त-सुरत्तपउमप्पकासाण,
अब्भुण्णयगुणा (मुहा) ण,
तवणिज्ज-विसाल-चचल-चलत-चवल-कण्ण-विमलुज्जलाण,
मधुवण्ण-भिसत-णिद्ध-पिंगल-पत्तल तिवण्णमणि-रयण-लोयणाण,
अब्भुग्गतमउलि-मल्लियाण,
धवल-सरिस-सठित-णिव्वण-दढ-कसिण-फालियामयसुजाय-दतमुसलोवसोभिताण,
कचणकोसीपविट्ठदतग्ग-विमलमणिरयणमुद्धगेवेज्जवद्धगलयवरभूसणाण,
वेरुलियविचित्तदड-णिम्मलवइरामय-तिक्ख-लट्ठ-अकुस-कु भ-जुगलतरोदियाण
तवणिज्ज-सुवद्ध-कच्छ-दप्पियवलुद्धराण,
जबूणय-विमलघणमडल-वइरामय-लालाललिय-तालणाणा मणिरयण-घण्ट-पासग-रययामय-रज्जुबद्ध-लबित-घटाजुयल-महुर-सरमणहराण,
अल्लीण-पमाणजुत्त-वट्टिय-सुजात-लक्खणपसत्य-तवणिज्जवालगत्तपरिपुच्छणाण,
उवचिय-पडिपुण्ण-कुम्मचलण-लहुविक्कमाण,
अकामयणक्खाण, तवणिज्जतालुयाण, तवणिज्जजीहाण, तवणिज्जजोतगसुजोतियाण,
कामकमाण, पीतिकमाण,
मणोगमाण, मणोरमाण, मणोहराण,
अमियगतीण, अमियबल-वीरिय-पुरिसकार-परक्कमाण,
महया गभीरगुलगुलाइयरवेण महुरेणं मणहरेण पूरेंता अबर, दिसाओ य सोभयता,
चत्तारि देवसाहस्सी गयरूवधारीण देवाण दक्खिणिल्ल बाहू परिवहति ।

—जीवा सू १९८ पृ० ३८०

[१४] चन्द्रविमान के दक्षिण मे श्वेत, सुभग, सुप्रभ, शखदल के समान विमल, निर्मल दधिपिण्ड, गोदुग्ध, समुद्रफेन व रजतपिण्ड के समान आभा वाले, वज्रमय कु भयुगल से सुस्थित एव पुष्ट वज्रमय शुण्ड से देदीप्यमान रक्त कमल के समान मुख वाले, तपनीयमय, विशाल, चचल, चलायमान, चपल, विमल एव उज्ज्वल कर्ण वाले, मधु के समान वर्ण के, देदीप्यमान स्निग्ध, पिंगल, बरौनियो से युक्त एव त्रिवर्ण के मणि-रत्नमय लोचन वाले, उन्नत मौलि-मल्लिका वाले, धवल, एक समान, सुन्दराकार, व्रणरहित, दृढ, सर्वस्फटिकमय एव सुजात दन्तमुसलो से शोभित, स्वर्णमय कोसी मे प्रविष्ट दन्ताग्र वाले, विमल मणि-रत्न निर्मित उत्कृष्ट आभूषणो से बद्ध गले वाले, वैडूर्यमय विचित्र दड वाले, निर्मल, वज्रमय, तीक्ष्ण एव लष्ट अकुश से युक्त गण्डस्थल वाले, तपनीयमय सुवद्ध कटिबन्ध वाले, वलिष्ठ, जम्बूनदमय निर्मल निविड मडल वाले, वज्रमय लालाओ से ललित ताडन वाली एव नाना मणि-रत्नमय पार्श्ववर्ती घटा वाली रजतमय रज्जु से बधे हुए एव लटकते हुए घटायुगल के मधुर स्वर से मनोहर, चिपकी हुई, प्रमाणयुक्त, गोल, सुन्दर, लक्षणो से प्रशस्त एव तपनीयमय गुच्छ से युक्त पू छ वाले, पुष्ट, प्रतिपूर्ण, कूर्म के समान पैरो वाले, विक्रमवान्, अकरत्नमय नाखूनो वाले, तपनीयमय तालु वाले, तपनीयमय जिह्वा वाले, तपनीयमय जोत से

जुते हुए, इच्छानुसार चलने वाले, प्रीतिकर चार वाले, मन के समान गति वाले, मनोरम, मनोहर, अमित गति वाले, अमित बल, वीर्य, पुरुषार्थ एव पराक्रम वाले, चार हजार गजरूपधारी देव महान गभीर मधुर एव मनोहर गुलगुलाइत (गुड-गुड) शब्द से आकाश को पूरित तथा दिशाओ को शोभित करते हुए दक्षिणी बाहु को वहन करते है ।

[१५] चंदविमाणस्स ण पच्चत्थिमेण सेताण सुभगाण सुप्पभाण,
चकमिय-ललिय-पुलित-चल-चवल-ककुदसालीण,
सण्णयपासाण, संगयपासाण, सुजायपासाणं, मियमाइत-पीणरइतपासाण,
झस-विहग-सुजातकुच्छीणं,
पसत्थ-णिद्ध-मघुगुलित-भिसंत-पिंगलक्खाण,
विसाल-पीवरोरु-पडिपुण्ण-विपुलखधाण,
वट्ट-पडिपुण्ण-विपुलकवोलकलिताण,
घण-निचित-सुबद्ध-लक्खणुन्नत-ईसिआणयवसभोट्ठाण,
चकमित-ललित-पुलिय-चक्कवाल-चवल-गव्वितगतीणं,
पीवरोरु-वट्टिय-सुसठितकडीण,
ओलब-पलब-लक्खण-पमाणजुत्त-पसत्थ-रमणिज्ज-वालगंडाण,
समखुर-वालधाणीण, समलिहित-तिक्खग्गसिगाण,
तणु-सुहुम-सुजात-णिद्ध-लोमच्छविघराण,
उवचित-मसल-विसाल-पडिपुण्ण-खंधपएससु दराण,
वेरुलियभिसतकडक्खसुणिरिक्खणाणं,
जुतप्पमाण-प्पधाण-लक्खणपसत्थ-रमणिज्ज-गग्गर-गलसोभिताण,
घग्घरग-सुबद्ध-कंठपरिमडियाण,
नाणामणि-कणग-रयण-घट-वेयच्छग-सुकय-रतिय-मालियाण,
वरघटा-गलगलिय-सोभंतसस्सिरीयाण,
पउमुप्पल-भसल-सुरभिमालाविभूसिताणं,
वइरखुराण, विविधविखुराणं
फालियामयदताणं, तवणिज्जजीहाण, तवणिज्जतालुयाण,
तवणिज्जजोतसुजोतियाणं,
कामकमाण पीतिकमाण, मणोगमाणं, मणोरमाणं, मणोहराण, अमितगतीण,
अमियबल-वीरिय-पुरिसयार-परक्कमाणं,
महया गभीरगज्जियरवेण मधुरेण मणहरेण य पूरेता अंबरं दिसाओ य सोभयता
चत्तारि देवसाहस्सीओ वसभरूवधारीण देवाण
पच्चत्थिमिल्ल बाहु परिवहंति ।

—जीवा सू १९८ पृ ३८०-३८१

[१५] चन्द्रविमान के पश्चिम मे श्वेत, सुभग, सुप्रभ, चक्रमित, ललित, पुलित गति (गतिविशेष) वाले, चलायमान एव चपल ककुद (काधले) से सुशोभित, सन्नत और सगत पार्श्व वाले, सुजात पार्श्व वाले, प्रमाणोपेत, सुन्दर, पुष्ट एव सुरचित पार्श्व वाले, मत्स्य एव पक्षी के समान सुजात कुक्षि वाले, प्रशस्त, स्निग्ध एव मधुगुलिका के सदृश देदीप्यमान पीली आखो वाले; विशाल स्थूल, पुष्ट प्रतिपूर्ण एव विपुल स्कध वाले, गोल, प्रतिपूर्ण एव विपुल कपोलो से सुशोभित,

सघन, निचित, सुबद्ध, सुलक्षणयुक्त, किंचित् अवनत वृषभ-ओष्ठ वाले, चक्रमित, ललित, पुलित, चक्रवाल-चपल एव गर्वित गति वाले, पुष्ट, गोल एव सुसस्थित कटि वाले, अवलम्ब-प्रलम्ब, सुलक्षणो तथा प्रमाण से युक्त, प्रशस्त एव रमणीय पूछ वाले, समान खुरो और क्षौरों वाले, एक से आलिखित एव तीक्ष्ण शृगाग्र वाले, तनु, सूक्ष्म, सुजात एव स्निग्ध रोमराजि वाले, उपचित, मासल, विशाल, प्रतिपूर्ण एव सुन्दर स्कध-प्रदेश वाले, वैडूर्य के समान चमकदार कटाक्ष एव निरीक्षण वाले, युक्त, प्रमाणप्रधान, लक्षणप्रशस्त एव रमणीय गलगलियों से शोभित गले वाले, सुबद्ध घू घरमालो से परिमडित कठ वाले, नाना भाति की मणि, कनक एव रत्नमय सुकृत सुरचित घटो से, वैकक्ष से सुशोभित, श्रेष्ठ घटा एव गलगलियो से सुशोभित एव सश्रीक. पद्मोत्पल की भ्रमरयुक्त सुगधित माला से विभूषित, वज्रमय खुरो वाले, विविध खुरो वाले, स्फटिकमय दातो वाले, तपनीयमय जिह्वा वाले, तपनीमय तालुवाले, तपनीयमय जोतो से जुते हुए, इच्छानुसार चलने वाले, प्रीतिकर गति वाले, मन के समान चपल गति वाले, मनोरम मनोहर एव अमित गति वाले, अपरिमित वल, वीर्य, पुरुषार्थ एव पराक्रम वाले, चार हजार वृषभरूपधारी देव महान् गभीर मधुर एव मनोहर गर्जित शब्दो से आकाश को पूरित करते हुए तथा दिशाओ को सुशोभित करते हुए पश्चिम की वाहु को उठाते हैं।

[१६] **चदविमाणस्स ण उत्तरेण सेयाण, सुभगाण, सुप्पभाण,**
जच्चाण तरमल्लिहायणाण, हरिमेला-मउल-मल्लियच्छाण,
(घण-णिचित सुबद्ध-लक्खणुण्णताचकमि) चचुच्चियललिय-पुलिय-चल-चवल-चचलगतीण,
लवण-वग्गण-धावण-धोरण-तिवइ-जइण-सिक्खिनगईण, ललतलामगललायवरभूसणाण,
सण्णतपासाण, सगतपासाण, सुजायपासाण, मितमायित-पीण-रइयपासाण,
झस-विहगसुजातकुच्छीण, पीण-पीवर-वट्टित-सुसठित-कडीण,
ओलव-पलव-लक्खण-पमाणजुत्त-पसत्थ-रमणिज्ज-वालगडाण,
तणु-सुहुम-सुजाय-णिद्ध-लोमच्छविधराण,
मिउ-विसय-पसत्थ-सुहुम-लक्खण-विकिण्ण-केसर-वालिधराण,
ललिय-सविलासगति ललतथासगल लाड-वरभूसणाण,
मुहमड-गोचूल-चमर-थासग-परिमडियकडीण,
तवणिज्जखुराण, तवणिज्जजीहाण, तवणिज्जतालुयाणं,
तवणिज्जजोतगसुजोतियाण,
कामगमाण, पीतिगमाण, मणोगमाण, मणोरमाण,
मनोहराण, अमितगतीण, अमियवल-वीरिय-पुरिसयार-परक्कमाण,
महया हयहेसिय-किलकिलाइ-रवेण महुरेण मणोहरेण य पूरेंता अवरं दिसाओ य सोभयत्ता
चत्तारि देवसाहस्सीओ हयरूवधारीणं
उत्तरिल्ल बाह परिवहति।

—जीवा सू १९८ पृ ३८१

[१६] चन्द्रविमान को उत्तर की ओर से श्वेत, सुभग, सुन्दर प्रभा वाले, जातिमान्, यौवनवान्, हरिमेलक वनस्पति के मुकुल तथा मल्लिका के समान (श्वेत) नेत्रो वाले, ललित, पुलित एव वायु के सदृश अत्यन्त चचल गति वाले, लघन, वल्गन (कूदना) धावन (दौड), धोरण (गतिकौशल), त्रिपदी (भूमि पर तीन पैर टेकना) तथा वेगवती गति की जिन्होने शिक्षा प्राप्त की है, जिनके गले मे उत्तम आभूषण लटक रहे हैं, सन्नत, सगत, सुजात, प्रमाणोपेत, सुन्दर, पुष्ट एव सुरचित पार्श्व वाले, मछली एव विहग के समान सुन्दर कुक्षि वाले, मोटी, पुष्ट, गोलाकार एव सुन्दराकार कटि से युक्त, आलवनस्थानों पर लटकते हुए सुलक्षणो तथा प्रमाण से युक्त, प्रशस्त एव रमणीय भौंरे

वाले, बारीक, सूक्ष्म, सुन्दर, चिकने रोमो वाले, मृदु, विशद, प्रशस्त, सूक्ष्म, लक्षणयुक्त एवं फैली हुई अयाल वाले, सुन्दर स्थासक (आमरणविशेष) जिनके ललाट के उत्तम आभूषण है, मुखमड (मुख का आभूषण), गोचूल, चमर तथा स्थासक से सुशोभित कटि वाले, तपनीयमय खुर जिह्वा तथा तालु वाले, तपनीयमय जोतो से जुते हुए, इच्छानुसार गति करने वाले, प्रीति से गति करने वाले, मन के समान गमन करने वाले, मनोरम, मनोहर, अपरिमित गति वाले, अपरिमित बल, वीर्य पुरुषकार-पराक्रम से सम्पन्न, मधुर एव मनोहर हिनहिनाहट, और कल-कल ध्वनि से आकाश को व्याप्त करते हुए तथा दिशाओ को सुशोभित करते हुए अश्व रूपधारी चार हजार देव उत्तर की बाहु को वहन करते हैं ।

गाहाओ—

सोलस देवसहस्सा हवंति चदेसु चेव सूरेसु ।
अट्ठेव सहस्साइ एक्केक्कमि गहविमाणे ।।१।।

चत्तारि सहस्साइ णक्खत्तमि अ हवंति इक्किक्के ।
दो चेव सहस्साइं तारारूवेक्कमेक्कमि ।।२।।

एव सूरविमाणाण—जाव—तारारूवविमाणाण,
णवर एस देवसघाएत्ति ।

—जवू सू १६६ पृ ५२५-५२६
—जीवा सू १९८ पृ ३८१-३८२
—सूर्य. सू ९४ पृ २६२-२६३

सोलह हजार देव चन्द्रविमानो को और इतने ही सूर्यविमानो को वहन करते हैं । एक-एक ग्रह-विमान को आठ-आठ हजार देव उठाते है । प्रत्येक नक्षत्रविमान को चार-चार हजार देव वहन करते है । प्रत्येक तारारूप विमान को दो-दो हजार देव वहन करते हैं । इसी प्रकार सूर्यविमानो—यावत्—तारारूप विमानो के विषय मे समझना चाहिए ।
यह देवसघात है ।

[१७][१] प्र०—ता गहविमाणे णं कति देवसाहस्सीओ परिवहंति ?
उ०—ता अट्ठ देवसाहस्सीओ परिवहंति, तंजहा—
पुरच्छिमेण सिंहरूवधारीणं देवाणं दो देवसाहस्सीओ हरिवहंति,
एवं-जाव-उत्तरेणं तुरगरूवधारीणं ।

[२] प्र०—ता णक्खत्तविमाणे णं कति देवसाहस्सीओ परिवहंति ?
उ०—ता चत्तारि देवसाहस्सीओ परिवहंति, तंजहा—
पुरच्छिमेणं सीहरूवधारीण देवाणं एक्का देवसाहस्सी परिवहंति,
एवं-जाव-उत्तरेण तुरगरूवधारीण देवाण ।

[३] प्र०—ता ताराविमाणे णं कति देवसाहस्सीओ परिवहंति, तंजहा—
उ०—ता दो देवसाहस्सीओ परिवहंति, तजहा—
पुरच्छिमेणं सीहरूवधारीणं देवाण पंच देवसता परिवहंति,
एव-जाव-त्तरेण तुरगरूवधारीण ।

—सूर्यं पृ ९४ पृ २६३
—चन्द्र सू. ९४
—जम्बू सू १६६ पृ ५२५-५२६

[१७][१] प्र०—ग्रहविमानो को कितने हजार देव वहन करते हैं ?

उ०—इन्हे आठ हजार देव वहन करते हैं, यथा—पूर्व मे सिहरूपधारी दो हजार देव वहन करते हैं । इसी प्रकार-यावत्-उत्तर मे अश्वरूपधारी (दो हजार देव वहन करते हैं) ।

[२] प्र०—नक्षत्रविमानो को कितने हजार देव वहन करते हैं ?

उ०—इन्हे चार हजार देव वहन करते हैं, यथा-पूर्व मे सिहरूपधारी एक हजार देव वहन करते हैं । इसी प्रकार-यावत्-उत्तर मे अश्वरूपधारी (एक हजार देव वहन करते हैं) ।

[३] प्र०—ताराविमानो को कितने हजार देव वहन करते हैं ?

उ०—इन्हे दो हजार देव वहन करते हैं, यथा-पूर्व मे सिहरूपधारी पाच सौ देव वहन करते हैं । इसी प्रकार-यावत्-उत्तर मे अश्वरूपधारी (पाच सौ देव वहन करते हैं) ।

ज्योतिष्कविमानों का परिमाण

[१८][१] प्र०—चदविमाणे ण भते ! केवतिय आयाम-विक्खभेण ?
केवतिय परिक्खेवेण ?
केवतिय बाहल्लेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! छप्पन्ने एगसट्ठिभागे जोयणस्स आयाम-विक्खभेण,[1]
त तिगुण सविसेस परिक्खेवेण,
अट्ठावीस एगसट्ठिभागे जोयणस्स बाहल्लेण पण्णत्ते ।

२] प्र०—सूरविमाणस्स वि सच्चेव पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! अडयालीस एगसट्ठिभागे जोयणस्स आयाम-विक्खभेण,[2]
त तिगुण सविसेस परिक्खेवेण,
चउवीस एगसट्ठिभागे जोयणस्स बाहल्लेण पन्नत्ते ।
एव गहविमाणे वि अद्धजोयण आयाम-विक्खभेण,
सविसेस परिक्खेवेण,
कोस बाहल्लेण ।
णक्खत्तविमाणे ण कोस आयाम-विक्खभेण,
त तिगुण सविसेस परिक्खेवेण,
अद्धकोस बाहल्लेण पण्णत्ते ।
ताराविमाणे अद्धकोस आयाम-विक्खभेण,
त तिगुण सविसेस परिक्खेवेण,
पच धणुसयाइ बाहल्लेण पण्णत्ते ।

—जीवा सू १६७. पृ. ३७८
—जबू सू १६५ पृ ५२४
—सूर्य सू ६४ पृ २६२
—चन्द्र सू ६४

१– सम० ६१ सूत्र ३
२– (क) सम० ६१ सूत्र ४
(ख) ,, १३ सूत्र ८

[१८][१] प्र०—भगवन् ! चन्द्रविमान कितना लम्बा-चौडा, कितनी परिधि वाला एवं कितना मोटा है ?

उ०—गौतम ! (चन्द्रविमान) $\frac{५६}{६१}$ योजन लवा-चौडा, इससे तिगुनी से अधिक परिधि वाला एव $\frac{२८}{६१}$ योजन मोटा है,

[२] प्र०—सूर्यविमान के विषय मे पृच्छा ?

उ०—गौतम ! (सूर्यविमान) $\frac{४८}{६१}$ योजन लवा-चौडा, इससे तिगुनी से अधिक परिधि वाला एव $\frac{२४}{६१}$ योजन मोटा है ।

इसी प्रकार ग्रहविमान भी आधा योजन लवा-चौडा, इससे तिगुनी से भी अधिक परिधि वाला एव एक कोस मोटा है ।

नक्षत्रविमान एक कोस लवा-चौडा, इससे तिगुनी से अधिक परिधि वाला एव आधा कोस मोटा है । ताराविमान आधा कोस लवा-चौडा, इससे तिगुनी से अधिक परिधि वाला एव पाच सौ धनुष मोटा है ।

ज्योतिष्कों की गति

[१९][१] प्र०—ता एगमेगेण मुहुत्तेण चदे केवतियाइ भागसताइ गच्छति ?

उ०—ता ज ज मडल उवसकमित्ता चार चरति

तस्स २ मंडलपरिक्खेवस्स सत्तरस अडसट्ठि भागसते गच्छति ।

मडल सतसहस्सेण अट्ठाणउतिसतेहिं छेत्ता ।

[२] प्र०—ता एगमेगेण मुहुत्तेण सूरिए केवतियाइ भागसयाइं गच्छति ।

उ०—ता ज जं मडल उवसकमित्ता चार चरति,

तस्स तस्स मडलपरिक्खेवस्स अट्ठारस तीसे भागसते गच्छति ।

मडल सतसहस्सेहिं अट्ठाणउतिसतेहिं छेत्ता ।

[३] प्र०—ता एगमेगेण मुहुत्तेणं णक्खत्ते केवतियाइं भागसताइं गच्छति ?

उ०—ता ज जं मंडल उवसकमित्ता चार चरति,

तस्स २ मडलपरिक्खेवस्स अट्ठारस्स पणतीसे भागसते गच्छति ।

मडल सतसहस्सेणं अट्ठाणउतीसतेहिं छेत्ता ।

[४] प्र०—ता जया ण चंदं गतिसमावण्ण सूरे गतिसमावण्णे भवति,

से णं गतिमाताए केवतियं विसेसेति ?

उ०—बावट्ठिभागे विसेसेति ।

[५] प्र०—ता जया णं चंद गतिसमावण्ण णक्खत्ते गतिसमावण्णे भवइ,

से ण गतिमाताए केवतियं विसेसेइ ?

उ०—ता सतट्ठि भागे विसेसेति ।

[६] प्र०—ता जता णं सूर गतिसमावण्ण णक्खत्ते गतिसमावण्णे भवति,

से णं गतिमाताए केवतियं विसेसेति ?

उ०—ता पच भागे विसेसेति ।

ता जता ण चद गतिसमावण्ण अभीयीणक्खत्ते ण गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुरच्छिमाते भागाते समासादित्ता णव मुहुत्ते सतवीसं च सत्तट्ठिभागे मुहुत्तस्स चदेण सिद्धि जोएति । जोअं जोएत्ता जोय अणुपरियट्टति, जोअं जोएत्ता विप्पजहाति विगतजोई यावि भवति ।

ता जता ण चद गतिसमावण्ण सवणे णक्खत्ते गतिसमावण्णे
पुरच्छिमाति भागादे समासादेति, पुरच्छिमाते भागाते समासादेत्ता तीस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोअ जोएति, जोएत्ता जोयं अणुपरियट्टति, जोएत्ता विप्पजहाति विगतजोई यावि भवइ ।
एव एएण अभिलावेण णेतव्व,
पण्णरसमुहुत्ताइ, तीसतिमुहुत्ताइ, पणयालीसमुहुत्ताइ भाणियव्वाइ—जाव—उत्तरासाढा ।
ता जता ण चद गतिसमावण्ण गहे गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुरच्छिमाते भागाते समासादित्ता चदेण सद्धि जोग जु जति, जु जित्ता जोगं अणुपरियट्टति, २ त्ता विप्पजहाति, विगयजोई यावि भवति ।

ता जता ण सूर गतिसमावण्ण अभीयीणक्खत्ते गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुरच्छिमाते भागाते समासादेत्ता चत्तारि अहोरत्ते छच्च मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति, २ त्ता अणुपरियट्टति २ त्ता विजेति विगयजोगी यावि भवति ।
एव अहोरत्ता छ एक्कवीस मुहुत्ता य तेरस अहोरत्ता बारस मुहुत्ता य वीस अहोरत्ता तिण्णि मुहुत्ता य सव्वे भाणियव्वा—जाव—
जता ण सूर गतिसमावण्णं उत्तरासाढणक्खत्ते गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुर० त्ता वीस अहोरत्ते तिण्णि य मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति, जोयं जोइत्ता जोयं अणुपरियट्टति जोय अणुपरियट्टइत्ता विजेति विजहति, विप्पजहति विगतजोगी यावि भवति,
ता जता ण सूर गतिसमावण्ण णक्खत्ते (गहे) गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पु० २ त्ता सूरेण सद्धि जोय जुजति २ त्ता जोय अणुपरियट्टति २ त्ता—जाव—विजेति विगतजोगी यावि भवति ।

[१९][१] प्र०—एक मुहूर्त्त मे चन्द्र कितने सौ भाग चलता है ?

उ०—वह जिस-जिस मडल का उपसक्रमण कर चलता है उस-उस मडल की परिधि का १७६८ भाग (एक मुहूर्त्त मे) चलता है । यह मडल १०९८०० भागो मे विभक्त किया जाता है । (अर्थात् १०९८०० भागो मे से १७६८ भाग एक मुहूर्त्त मे चलता है ।

[२] प्र०—एक मुहूर्त्त मे सूर्य कितने सौ भाग चलता है ?

उ०—वह जिस–जिस मडल का उपसक्रमण कर चलता है उस-उस मडल की परिधि का १८३० भाग (एक मुहूर्त्त मे) चलता है । यह मडल भी १०९८०० भागो मे विभक्त होता है ।

[३] प्र०—एक मुहूर्त्त मे नक्षत्र कितने सौ भाग चलता है ?

वह जिस-जिस मडल का उपसक्रमण कर चलता है उस-उस मडल की परिधि का १८३५ भाग (एक मुहूर्त्त मे) चलता है । यह मडल भी १०९८०० भागो मे विभक्त है ।

[४] प्र०—जब चन्द्र अपनी गति पूरी करता है तब सूर्य भी अपनी गति पूरी करता है । इन दोनो गतियो मे क्या विशेषता है ?

उ०—इनमे ६२ भागो की विशेषता है, अर्थात् सूर्य, चन्द्र से एक मुहूर्त्त मे ६२ भाग आगे चलता है ।

[५] प्र०—जब चन्द्र अपनी गति पूरी करता है तब नक्षत्र भी अपनी गति पूरी करता है । इन दोनो गतियो मे क्या विशेषता है ?

उ०—इनमे ६७ भागो की विशेषता है, अर्थात् नक्षत्र चन्द्र से एक मुहूर्त्त मे ६७ भाग आगे निकल जाता है ।

[६] प्र०—जब सूर्य अपनी गति पूर्ण करता है तब नक्षत्र भी अपनी गति पूर्ण करता है । इन दोनो गतियो मे क्या विशेषता है ?

उ०—इनमे पाच भागो की विशेषता है, अर्थात् नक्षत्र सूर्य से एक मुहूर्त्त मे पाच भाग आगे चलता है।

जव चन्द्र गतिसमापन्न होता है और अभिजित नक्षत्र भी गतिसमापन्न होता है तव उसका पूर्व दिशा के भाग से योग होता है। पूर्व दिशा के भाग से योग ग्रहण कर ९ २७/६७ मुहूर्त्त तक वह चन्द्र के साथ योगयुक्त रहता है। योगयुक्त होकर उसी के साथ विचरता है। विचर कर उसके योग का त्याग करता है एव विगतयोगी (वियुक्त) हो जाता है।

जव चन्द्र गतिसमापन्न होता है और श्रवण नक्षत्र भी गतिसमापन्न होता है तव उसका पूर्व दिशा के भाग से योग होता है। पूर्व दिशा के भाग से योग ग्रहण कर ३० मुहूर्त्त पर्यन्त चन्द्र के साथ योगयुक्त रहता है। योगयुक्त होकर उसी के साथ विचरता है, विचर कर उसके योग का त्याग करता है एव विगतयोगी होता है।

इसी प्रकार शेष नक्षत्रो के विषय मे भी समझना चाहिए,—यावत्—उत्तराषाढापर्यन्त १५ मुहूर्त्त, ३० मुहूर्त्त एव ४५ मुहूर्त्त का समय ग्रहण करना चाहिए।

जव चन्द्र गतिसमापन्न होता है एव ग्रह भी गतिसमापन्न होता है तव उसका पूर्व दिशा के भाग से योग होता है। पूर्व दिशा के भाग से योग ग्रहण कर चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है, योगयुक्त होकर उसके साथ पर्यटन करता है, पर्यटन कर उसके योग का त्याग करता है एव विगतयोगी हो जाता है।

जव सूर्य गतिसमापन्न होता है एव अभिजित नक्षत्र भी गतिसमापन्न होता है तव उसका पूर्व दिशा के भाग से योग होता है। पूर्व दिशा के भाग से योग ग्रहण कर चार अहोरात्र व छह मुहूर्त्त पर्यन्त सूर्य के साथ योगयुक्त रहता है। योगयुक्त होकर उसी के साथ पर्यटन करता है। पर्यटन करके उसके योग का त्याग करता है एव विगतयोग होता है।

इस प्रकार (शेष नक्षत्रो के लिए) ६ अहोरात्र व २१ मुहूर्त्त, १२ अहोरात्र व १२ मुहूर्त्त तथा २० अहोरात्र व ३ मुहूर्त्त का समय समझना चाहिए—यावत्—जव सूर्य गतिसमापन्न होता है एव उत्तराषाढा नक्षत्र भी गतिसमापन्न होता है तव उसका पूर्व दिशा के भाग से योग होता है। पूर्व दिशा के भाग से योग ग्रहण कर २० अहोरात्र व ३ मुहूर्त्त पर्यन्त सूर्य के साथ योगयुक्त रहता है, योगयुक्त होकर उसी के साथ भ्रमण करता है, भ्रमण कर उसका त्याग करता है, परित्याग करता है और विगतयोगी होता है।

जव सूर्य गतिसमापन्न होता है एव नक्षत्र (ग्रह) भी गतिसमापन्न होता है तव उसका पूर्व दिशा के भाग से योग होता है। पूर्व दिशा के भाग से योग ग्रहण कर वह सूर्य के साथ योगयुक्त होता है। योगयुक्त होकर उसी के साथ भ्रमण करता है,—यावत्—उसका त्याग कर विगतयोग हो जाता है।

नक्षत्र मास में ज्योतिष्कों की गति

[२०][१] प्र०—ता णक्खत्तेण मासेण चंदे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता तेरस मडलाइ चरति, तेरस य सत्तट्ठिभागे मडलस्स।

[२] प्र०—ता णक्खत्तेणं मासेण सूरे कति मंडलाइ चरति ?
उ०—तेरस मडलाइ चरति, चोतालीस च सत्तट्ठिभागे मडलस्स।

[३] प्र०—ता णक्खत्तेणं मासेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता तेरस मडलाइं चरति, अद्धसीतालीस च सत्तट्ठिभागे मंडलस्स।

[२०][१] प्र०—नक्षत्रमास मे चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—(नक्षत्रमास मे चन्द्र) $१३\frac{१३}{६७}$ मडल चलता है ।

[२] प्र०—नक्षत्रमास मे सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—(नक्षत्रमास मे सूर्य) $१३\frac{४४}{६७}$ मडल चलता है ।

[३] प्र०—नक्षत्रमाम मे नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—(नक्षत्रमाम मे नक्षत्र) $१३\frac{६३}{१३४}$ मडल चलता है ।

चन्द्रमास में ज्योतिष्कों की गति

[२१][१] प्र०—ता चदेण मासेण चदे कति मडलाइ चरति ?
उ०—चोद्दस चउभागाइ मडलाइ चरति, एग च चउव्वीससत भाग मडलस्स

[२] प्र०—ता चदेण मासेण सूरे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागूणाइ मडलाइ चरति, एग च चउवीससयभाग मडलस्स ।

[३] प्र०—ता चदेण मासेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागूणाइ मडलाइ चरति, छच्च चउवीससतभागे मडलस्स ।

[२१][१] प्र०—चन्द्रमास मे चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—(चन्द्रमास मे चन्द्र) $१४\frac{१}{४}+\frac{१}{१२४}$ मडल चलता है ।

[२] प्र०—चन्द्रमास मे सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—$१४\frac{३}{४}+\frac{१}{१२४}$ मडल चलता है ।

[३] प्र०—चन्द्रमास मे नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—$१४\frac{३}{४}+\frac{६}{१२४}$ मडल चलता है ।

ऋतुमास में ज्योतिष्कों की गति

[२२][१] प्र०—ता उडुणा मासेण चदे कति भागाइ चरति ?
उ०—ता चोद्दस मडलाइ चरति, तीस च एगट्ठिभागे मडलस्स ।

[२] प्र०—ता उडुणा मासेण सूरे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस मडलाइ चरति ।

[३] प्र०—ता उडुणा मासेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस मडलाइं चरति, पच य बावीससतभागे मडलस्स ।

[२२][१] प्र०—ऋतुमास मे चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—(ऋतुमास मे चन्द्र) $१४\frac{३०}{६१}$ मडल चलता है ।

[२] प्र०—ऋतुमास मे सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—१५ मडल चलता है ।

[३] प्र०—ऋतुमास मे नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—$१५\frac{५}{१२२}$ मण्डल चलता है ।

आदित्यमास में ज्योतिष्कगति

[२३][१] प्र०—ता आइच्चेणं मासेण चंदे कति मंडलाइं चरति ?
उ०—ता चोद्दस मंडलाइ चरति, एक्कारसभागे मंडलस्स ।

[२] प्र०—ता आइच्चेण मासेणं सूरे कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागाहिगाइं मंडलाइं चरति ।

[३] प्र०—ता आइच्चेणं मासेणं णक्खत्ते कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागाहियाइ मडलाइं चरति, पणतीसं च चउवीससतभागमडलाइं चरति ।

[२३][१] प्र०—आदित्यमास मे चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—(आदित्यमास मे चन्द्र) १४ $\frac{१}{११}$ मडल चलता है ।

[२] प्र०—आदित्यमास मे सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—१५ $\frac{१}{४}$ मडल चलता है ।

[३] प्र०—आदित्यमास मे नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१५ $\frac{१}{४}+\frac{३५}{१२४}$ मडल चलता है ।

अभिवर्द्धित मास में ज्योतिष्कगति

[२४][१] प्र०—ता अभिवड्ढिएण मासेण चदे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पणरस मडलाइ तेसीतिं छलसीयसतभागे मडलस्स ।

[२] प्र०—ता अभिवड्ढितेण मासेण सूरे कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता सोलस मडलाइ चरति, तिहिं भागेहिं ऊणगाइं दोहिं अडयालेहिं सएहिं मडल छित्ता ।

[३] प्र०—ता अभिवड्ढितेण मासेण नक्खत्ते कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता सोलस मडलाइ चरति, सीतालीसएहिं भागेहिं अहियाइं चोद्दसहिं अट्ठासीएहिं मडल छेत्ता ।

२४][१] प्र०—अभिवर्द्धित मास मे चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—(अभिवर्द्धित मास मे चन्द्र) १५ $\frac{८३}{१८६}$ मडल चलता है ।

[२] प्र०—अभिवर्द्धित मास मे सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—१५ $\frac{२४५}{२४८}$ मडल चलता है ।

[३] प्र०—अभिवर्द्धित मास मे नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१६ $\frac{४७}{१४८८}$ मडल चलता है ।

एक अहोरात्र में ज्योतिष्कगति

[२५][१] प्र०—ता एगमेगेण अहोरत्तेण चदे कति मंडलाइं चरति ?
उ०—ता एगं अद्धमडल चरति, एक्कतीसाए भागेहिं ऊण णवहिं पण्णरसेहिं अद्धमंडलं छेत्ता ।

[२] प्र०—ता एगमेगेण अहोरत्तेण सूरिए कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता एग अद्धमडल चरति ।

[३] प्र०—ता एगमेगेणं अहोरत्तेणं णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता एग अद्धमडल चरति, दोहि भागेहिं अधियं सत्तहि बत्तीसेहिं सएहिं अद्धमंडल छेत्ता ।

[२५][१] प्र०—एक अहोरात्र मे चन्द्र कितने मडल चलता है ?

उ०—(एक अहोरात्र मे चन्द्र) $\frac{४४२}{९१५}$ मडल चलता है ।

[२] प्र०—एक अहोरात्र मे सूर्य कितने मडल चलता है ?

उ०—(एक अहोरात्र मे सूर्य) $\frac{१}{२}$ मडल चलता है ।

[३] प्र०—एक अहोरात्र मे नक्षत्र कितने मडल चलता है ?

उ०—(एक अहोरात्र मे नक्षत्र) $\frac{३६७}{७३२}$ मडल चलता है ।

एक-एक मंडल में ज्योतिष्क-चार

[२६][१] प्र०—ता एगमेग मडल चदे कतिहि अहोरत्तेहि चरति ?

उ०—ता दोहि अहोरत्तेहि चरति एक्कतीसाए भागेहि अधितेहि चउहि चोतालेहि सतेहि राइ दिएहि छेत्ता ।

[२] प्र०—ता एगमेग मडल सूरे कतिहि अहोरत्तेहि चरति ?

उ०—ता दोहि अहोरत्तेहि चरति ।

[३] प्र०—ता एगमेग मडल णक्खत्ते कतिहि अहोरत्तेहि चरति ?

उ०—ता दोहि अहोरत्तेहि चरति,

दोहि ऊणेहि तिहि सतसट्ठेहि सतेहि राइदिएहि छेत्ता ।

[२६][१] प्र०—चन्द्र प्रत्येक मण्डल कितने अहोरात्र मे चलता है ?

उ०—(चन्द्र प्रत्येक मण्डल) २$\frac{३१}{४४}$ अहोरात्र मे चलता है ।

[२] प्र०—सूर्य प्रत्येक मण्डल कितने अहोरात्र मे चलता है ?

उ०—(सूर्य प्रत्येक मण्डल) दो अहोरात्र मे चलता है ।

[३] प्र०—नक्षत्र प्रत्येक मण्डल कितने अहोरात्र मे चलता है ?

उ०—(नक्षत्र प्रत्येक मण्डल) १$\frac{३६५}{३६७}$ अहोरात्र मे चलता है ।

एक युग में ज्योतिष्क-चार

[२७][१] प्र०—ता जुगेण चदे कति मडलाइं चरति ?

उ०—ता अट्ठ चुल्लसीते मडलसते चरति ।

[२] प्र०—ता जुगेणं सूरे कति मडलाइ चरति ।

उ०—ता णवपण्णर मडलसते चरति ।

[३] प्र०—ता जुगेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता अट्ठारस पणतीसे दुभाग मडलसते चरति ।

इच्चेसा मुहुत्तगती रिक्खातिमास-राइ दिय-जुग-मंडलपविभत्ता सिग्घगती वत्यु आहेतेत्तिवेमि ।

—सूर्य सू ८३-८६ पृ २४५-२५४

—चन्द्र सू ८३-८६

[२७][१] प्र०—चन्द्र एक युग मे कितने मण्डल चलता है।

उ०—(चन्द्र एक युग मे) ८८४ मण्डल चलता है।

[२] प्र०—सूर्य एक युग मे कितने मण्डल चलता है ?

उ०—(सूर्य एक युग मे) ६१५ मण्डल चलता है।

[३] प्र०—नक्षत्र एक युग मे कितने मण्डल चलता है ?

उ०—(नक्षत्र एक युग मे) ६१७½ मण्डल चलता है। यह (पूर्वोक्त) मुहूर्त गति नक्षत्रादि-मास, अहोरात्र, युग को लेकर मण्डलप्ररूपणा तथा शीघ्रगति रूप वस्तु कही गई है, ऐसा मैं कहता हू।

ज्योतिष्कगति का तारतम्य

[२८][१] प्र०—एतेसि ण भते! चदिम–सूरिअ–गहगण–नक्खत्त–ताराख्वाण कयरे सव्वसिग्घगई, कयरे सव्व-सिग्घतराए चेव ?

उ०—गोयमा! चदेहितो सूरा सव्वसिग्घगई, सूरेहितो गहा सिग्घगई, गहेहितो णक्खत्ता सिग्घगई, णक्खत्तेहितो ताराख्वा सिग्घगई,
सव्वप्पगई चदा, सव्वसिग्घगई ताराख्वा इति।

[२८][१] प्र०—भगवन्! इन चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारागण मे कौन शीघ्र गति वाले है एव कौन शीघ्रतर गति वाले हैं ?

उ०—गौतम! चन्द्रो से सूर्य शीघ्र गति वाले हैं। सूर्यों से ग्रह शीघ्र गति वाले हैं। ग्रहो से नक्षत्र शीघ्र गति वाले है। नक्षत्रो से तारागण शीघ्र गति वाले हैं।
सव से मन्द गति वाले चन्द्र है। सव से शीघ्र गतिवाले तारागण है।

—जबू सू. १६७ पृ ५३१
—जीवा सू १६६ पृ ३८२
—सूर्य सू. ८३ पृ. २४५
—चन्द्र सूत्र ८३

[२] ता जया णं इमे चदे गतिसमावण्णए भवति,
तता णं इतरेवि चंदे गतिसमावण्णए भवति,
जता णं इतरेवि चदे गतिसमावण्णए भवति,
तता ण इमेवि चदे गतिसमावण्णए भवति।
ता जया णं इमे सूरिए गइसमावण्णे भवति,
तया णं इतरे सूरिए गइसमावण्णे भवति,
जया णं इतरे सूरिए गइसमावण्णे भवति,
तया णं इमेवि सूरिए गइसमावण्णे भवति,
एव गहेवि, णक्खत्तेवि।

[२] जव यह (भरतक्षेत्र को प्रकाशित करने वाला) चन्द्र गतियुक्त होता है तव दूसरा (ऐरावत क्षेत्र को प्रकाशित करने वाला) चन्द्र भी गतियुक्त होता है। जव दूसरा चन्द्र गतियुक्त होता है तव यह चन्द्र भी गतियुक्त होता है।
जव यह सूर्य गतिसमापन्न होता है, तव दूसरा सूर्य भी गतिसमापन्न होता है। जव दूसरा सूर्य गतिसमापन्न होता है, तव यह सूर्य भी गतिसमापन्न होता है।
इसी प्रकार ग्रहो और नक्षत्रो के विषय मे भी समझना चाहिए।

[३] ता जया ण इमे चदे जुत्ते जोगेण भवति,
तता ण इतरेवि चदे जुत्ते जोगेण भवति,
जया ण इयरे चदे जुत्ते जोगेण भवति,
तया ण इमेवि चदे जुत्ते जोगेण भवति ।
एव सूरेवि, गहेवि, णक्खत्तेवि ।

[३] जब यह चन्द्र योगयुक्त होता है तब दूसरा चन्द्र भी योगयुक्त होता है ।
जब दूसरा चन्द्र योगयुक्त होता है तब यह चन्द्र भी योगयुक्त होता है ।
इसी प्रकार सूर्य, ग्रह और नक्षत्र के विषय मे भी समझना चाहिए ।

[४] सतावि ण चदा जुत्ता जोएहि,
सतावि ण सूरा जुत्ता जोगेहि,
सयावि ण गहा जुत्ता जोगेहि,
सयावि ण नक्खत्ता जुत्ता जोगेहि ।
दुहतोवि ण चदा जुत्ता जोगेहि,
दुहतोवि ण सूरा जुत्ता जोगेहि,
दुहतोवि ण गहा जुत्ता जोगेहि,
दुहतोवि ण णक्खत्ता जुत्ता जोगेहि ।
मडल सतसहस्सेण अट्ठाणउताए सतेहि छेत्ता,

—सूर्य सूत्र ६४-७० पृ १८१-१९७
—चन्द्र "

[४] सदैव चन्द्र योगयुक्त होते है । सदैव सूर्य योगयुक्त होते है । सदैव ग्रह योगयुक्त होते हैं । सदैव नक्षत्र योगयुक्त होते हैं ।

चन्द्र दोनो ओर से (उत्तर-दक्षिण या पूर्व-पश्चिम से) योगयुक्त होते हैं । दोनो ओर से सूर्य योगयुक्त होते हैं । दोनो ओर से ग्रह योगयुक्त होते है । दोनो ओर से नक्षत्र योगयुक्त होते हैं । मडल के १०९८०० भाग करने पर नक्षत्र का क्षेत्रपरिमाग आता है ।

ज्योतिष्कों का अल्प-बहुत्व

[२९][१] प्र०—ता एएसि ण चदिम-सूरिय-गह-णक्खत्त-तारारूवाण कतरे कतरेहितो अप्पा वा, बहुया वा, तुल्ला वा, विसेसाहिया वा ?

उ०—ता चदा य सूरा य एत्ते ण दोवि तुल्ला,
सव्वत्थोवा णक्खत्ता,
सखिज्जगुणा गहा,
सखिज्जगुणा तारा ।

— सूर्य सू ९९ पृ २९६
—चन्द्र सू ९९
—जबू सू १७२ पृ ५३९
—जीवा सू २०६ पृ ३८५

[२९][१] प्र०—इन चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र एव तारागण मे मे कौन किससे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं ?

उ०—इनमे से चन्द्र और सूर्य-ये दोनो तुल्य हैं, नक्षत्र सब से कम है । ग्रह इनसे सख्यातगुणा अधिक हैं और तारे इनसे भी सख्यातगुणा अधिक हैं ।

ज्योतिष्कों की ऋद्धि का अल्पबहुत्व

[३०][१] प्र०—एतेसि ण भते ! चदिम-सूरिअ-गह-णक्खत्त-ताराख्वाण कयरे सव्वमहिड्ढिया कयरे सव्वप्पड्डिया ?

उ०—गोयमा ! ताराख्वेहिंतो णक्खत्ता महिड्ढिया,

णक्खत्तेहिंतो गहा महिड्ढिया, गहेहिंतो सूरिआ महिड्ढिया, सूरेहिंतो चंदा महिड्ढिया,

सव्वप्पिड्ढिआ ताराख्वा, सव्वमहिड्ढिया चंदा ।

—जबू सू १६८ पृ ५३१

—जीवा सू २०० पृ ३८२

—ठा अ ३ उ ४ सू २१४ पृ १६१

—सूर्य सू ९५ पृ २६३

—चन्द्र सू ९५

[३०][१] प्र०—भगवन् ! इन चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र एव तारागण मे से कौन सब से महर्द्धिक है एव कौन सब से अल्पर्धिक है ?

उ०—गौतम ! तारागण से नक्षत्र महर्द्धिक है । नक्षत्रो से ग्रह महर्द्धिक है । ग्रहो से सूर्य महर्द्धिक है । सूर्यो से चन्द्र महर्द्धिक हैं ।

तारागण सब से अल्प ऋद्धि वाले है और चन्द्र सब से अधिक ऋद्धि वाले है ।
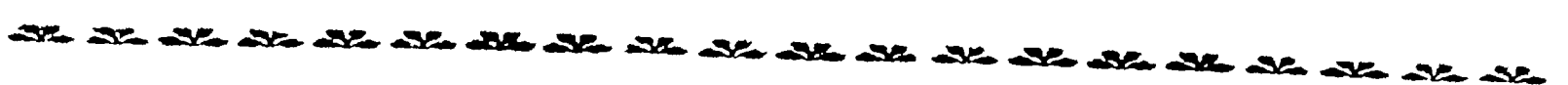
चन्द्रवर्णन

चन्द्रमा का उदय-अस्तमन

[१] जबुद्दीवे ण भते ! दीवे चदिमा उदीण-पाईणमुग्गच्छ पाईण-दाहिणमागच्छति,
जहा सूरवत्तव्वया—जाव—अवट्ठिए ण तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो !

—जबू सूत्र १५० पृ ४८०
—भग भाग २ श ५ उ १० प्र १ पृ २५३

[१] भगवन् ! क्या जम्बूद्वीप मे चन्द्रमा उत्तर-पूर्व मे उदित होकर पूर्व-दक्षिण मे अस्त होता है ? इत्यादि वर्णन सूर्य के ही समान समझना चाहिए,—यावत्—हे आयुष्मन् श्रमणो ! वहा (मनुष्य-लोक से वाहर) काल अवस्थित है ।

चन्द्रमा की वृद्धि-हानि

[२] [१] प्र०—ता कह ते चदमसो वड्ढोवड्ढी आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता अट्ठ पचासीते मुहुत्तसते तीस च बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स,
ता दोसिणापक्खाओ अधयारपक्खमयमाणे चदे चत्तारि वायालसते छत्तालीस च बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स जाइ चदे रज्जति,[1] तजहा—
पढमाए पढम भाग, वितियाए वितिय भाग—जाव—पण्णरसीए पण्णरसम भागं,
चरिमसमए चदे रत्ते भवति,
अवसेसे समए चदे रत्ते य विरत्ते य भवति,
इयण्ण अमावासा,
एत्थ ण पढमे पक्खे अमावासे, ता अधारपक्खो,
तो णं दोसिणापक्ख अयमाणे चदे चत्तारि वाताले मुहुत्तसते छातालीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स जाइ चदे विरज्जति, तजहा—
पढमाए पढम भाग, वितियाए वितिय भाग—जाव—पण्णरसीए पण्णरसम भाग,
चरिमे समए चदे विरत्ते भवति ।
अवसेससमए चदे रत्ते य विरत्ते य भवति,
इयण्ण पुण्णिमासिणी, एत्थ ण दोच्चे पक्खे पुण्णिमासिणी ।

—सूर्य सू ७९ पृ २३४
—चन्द्र सू ७९

१—सुक्कपक्खस्स ण चदे वासट्ठि भागे दिवसे-दिवसे परिवड्ढइ, त चेव बहुलपक्खे दिवसे-दिवसे परिहायइ ।

—सम ६२

शुक्लपक्ष मे चन्द्र ६२ वा भाग प्रतिदिन वढता है । कृष्णपक्ष मे उतना ही प्रतिदिन कम होता है ।

[२] [१] प्र०— चन्द्रमा की वृद्धि-हानि किस प्रकार वतलाई गई है ?

उ०—यह ८८५ $\frac{३०}{६२}$ मुहूर्त्त की (वतलाई गई है) । शुक्लपक्ष से अधकार पक्ष मे आता हुआ चन्द्र ४४२ $\frac{४६}{६२}$ मुहूर्त्त रक्त रहता हैं, यथा—प्रतिपदा के दिन प्रथम भाग, द्वितीया के दिन द्वितीय भाग, —यावत्—अमावस्या के दिन पन्द्रहवां भाग (रक्त होता है) । (इस प्रकार) चरम समय मे चन्द्र रक्त होता है । अवशेष समय मे चन्द्र रक्त और विरक्त (दोनो) होता है । यही (अन्धकार पक्ष की पन्द्रहवी तिथि) अमावस्या हैं । यह प्रथम पक्ष अमावस्या का है । यह अन्धकार पक्ष (कहलाता) है । शुक्लपक्ष मे आता हुआ चन्द्र ४४२ $\frac{४६}{६२}$ मुहूर्त्त विरक्त रहता है, यथा—प्रतिपदा के दिन प्रथम भाग, द्वितीया के दिन द्वितीय भाग,—यावत्—पूर्णिमा के दिन पन्द्रहवा भाग (विरक्त होता है) । (इस प्रकार) चरम समय मे चन्द्र विरक्त होता है । अवशेष समय मे चन्द्र रक्त एव विरक्त (दोनो) होता है । यही (शुक्लपक्ष की पन्द्रहवी तिथि) पूर्णिमा है । यह द्वितीय पक्ष पूर्णिमा का है ।

ज्योत्स्ना का अल्प-बहुत्व

[३] [१] प्र०—ता कता ते दोसिणा बहू आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता दोसिणापक्खे ण दोसिणा बहू आहितेति वदेज्जा ।

[२] प्र०—ता कह ते दोसिणापक्खे दोसिणा बहू आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता अधकारपक्खओ ण दोसिणा वहू आहियाति वदेज्जा ।

[३] प्र०—ता कह ते अधकारपक्खातो दोसिणापक्खे दोसिणा बहू आहिताति वदेज्जा ?

उ०—ता अधकारपक्खात्तो ण दोसिणापक्ख अयमाणे चदे चत्तारि बायाले मुहुत्तसते छत्तालीसं च बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स जाइ चदे विरज्जति, तंजहा-पढमाए पढमं भागं, बिदियाए बिदियं भाग-जाव-पण्णरसीए पण्णरसं भाग,

एव खलु अधकारपक्खातो दोसिणापक्खे दोसिणा बहू आहिताति वदेज्जा ।

[४] प्र०—ता केवतिया णं दोसिणापक्खे दोसिणा बहू आहिताति वदेज्जा ?

उ०—ता परित्ता असखेज्जा भागा ।

[५] प्र०—ता कता ते अंधकारे बहू आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता अधयारपक्खे ण अंधकारे आहिताति वदेज्जा ।

[६] प्र०—ता कह ते अधकारपक्खे बहू अधकारे आहिताति वदेज्जा ?

उ०—ता दोसिणापक्खातो अंधकारपक्खे अधकारे बहू आहितेति वदेज्जा ।

[७] प्र०—ता कहं ते दोसिणापक्खातो अधकारपक्खे अधकारे वहू आहिताति वदेज्जा ?

उ०—ता दोसिणापक्खातो ण अंधकारपक्ख अयमाणे चदे चत्तारि बाताले मुहुत्तसते छायालीसं च बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स जाइ चदे रज्जति, तजहा—

पढमाए पढम भाग, बिदियाए बिदिय भाग-जाव-पण्णरसीए पण्णरसमं भागं,

एव खलु दोसिणापक्खातो अधकारपक्खे अधकारे बहू आहिताति वदेज्जा ।

[८] प्र०—ता केवतिएण अधकारपक्खे अधकारे बहू आहियाति वदेज्जा ?

उ०—परित्ता असखेज्जा भागा ।

—सूर्य सूत्र ८२ पृ २४४

—चन्द्र सूत्र ८२

[३] [१] प्र०—उद्योत अधिक किस (पक्ष) मे कहा गया है ?

उ०—उद्योतपक्ष मे उद्योत अधिक कहा गया है ।

[२] प्र०—उद्योतपक्ष मे उद्योत अधिक कैसे कहा गया है ?

उ०—अधकारपक्ष की अपेक्षा से (उद्योतपक्ष मे) उद्योत अधिक बतलाया गया है ।

[३] प्र०—अधकारपक्ष से उद्योतपक्ष मे उद्योत अधिक क्यो बतलाया गया है ?

उ०—अधकारपक्ष से उद्योतपक्ष मे आता हुआ चन्द्र ४४२ ४६/६२ मुहूर्त्त विरक्त रहता है, यथा-प्रतिपदा के दिन प्रथम भाग, द्वितीया के दिन द्वितीय भाग,—यावत्—पूर्णिमा के दिन पन्द्रहवा भाग (विरक्त होता है) । इस कारण अधकारपक्ष से उद्योतपक्ष मे उद्योत अधिक बतलाया गया है ।

[४] प्र०—उद्योतपक्ष मे उद्योत कितना अधिक कहा गया है ?

उ०—परिमित असख्यात भाग ।

[५] प्र०—अन्धकार अधिक किस (पक्ष) मे कहा गया है ?

उ०—अन्धकारपक्ष मे अन्धकार अधिक कहा गया है ।

[६] प्र०—अन्धकारपक्ष मे अन्धकार अधिक कैसे कहा गया है ?

उ०—उद्योतपक्ष की अपेक्षा से अन्धकारपक्ष मे अन्धकार अधिक कहा गया है ।

[७] प्र०—उद्योतपक्ष से अन्धकारपक्ष मे अन्धकार अधिक क्यो कहा गया है ?

उ०—उद्योतपक्ष से अन्धकारपक्ष मे आता हुआ चन्द्र ४४२ ४६/६२ मुहूर्त्त रक्त रहता है, यथा—प्रतिपदा के दिन प्रथम भाग, द्वितीया के दिन द्वितीय भाग, —यावत्—अमावस्या के दिन पन्द्रहवा भाग (रक्त होता है) । इस कारण उद्योतपक्ष से अन्धकारपक्ष मे अन्धकार अधिक कहा गया है ।

[८] प्र०—अन्धकारपक्ष मे अन्धकार कितना अधिक कहा गया है ?

उ०—परिमित असख्यात भाग (अधिक कहा गया है) ।

चन्द्रमण्डलों की संख्या

[४] [१] प्र०—कइ ण भते ! चदमडला पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! पण्णरस चदमंडला पण्णत्ता ।

—सूर्य सूत्र ४५ पृ १३८
—चन्द्र सूत्र ४५
जम्बू. सूत्र १४२ पृ ४६५

[४] [१] प्र०—भगवन् ! चन्द्र-मडल कितने हैं ?

उ०—गौतम ! चन्द्र-मडल पन्द्रह हैं ।

[५] [१] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइय ओगाहित्ता केवइआ चदमडला पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे दीवे असीय जोअणसय ओगाहित्ता पच चदमडला पण्णत्ता ।

[२] प्र०—लवणे ण भते ! पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! लवणे ण समुद्दे तिण्णि तीसे जोयणसए ओगाहित्ता एत्थ णं दस चदमंडला पण्णत्ता । एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे दीवे लवणे य समुद्दे पण्णरस चदमडला भवतीतिमक्खायं ।

[५] [१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे कितना अवगाहन करने पर कितने चन्द्र-मडल हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप मे एक सौ अस्सी योजन अवगाहन करने पर पाच चन्द्रमण्डल हैं।

[२] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र मे (कितना अवगाहन करने पर कितने चन्द्रमण्डल है) ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र मे तीन सौ तीस योजन अवगाहन करने पर दस चन्द्र-मण्डल है। इस प्रकार सब मिलाकर जम्बूद्वीप और लवणसमुद्र मे पन्द्रह चन्द्रमण्डल है।

चन्द्रमंडलों का अन्तर

[६] [१] प्र०—सव्वब्भंतराओ ण भंते ! चदमडलाओ णं केवइआए अबाहाए सव्वबाहिरए चदमंडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पंच दसुत्तरे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरए चदमडले पण्णत्ते ।

—जम्बू सूत्र १४३ पृ ४६५

[६] [१] प्र०—भगवन् ! सर्वाभ्यन्तर चन्द्र-मडल से सर्वबाह्य चन्द्र-मडल कितना दूर है ?

उ०—गौतम ! (सर्वाभ्यन्तर चन्द्र-मडल से) सर्वबाह्य चन्द्र-मडल ५१० योजन दूर है।

चन्द्रमंडलों का विस्तार

[७] [१] प्र०—चदमडले ण भंते ! केवइय आयाम-विक्खभेण, केवइय परिक्खेवेण, केवइय बाहल्लेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! छप्पण्ण एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयाम-विक्खभेण,

त तिगुण सविसेस परिक्खेवेण,

अट्ठावीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स बाहल्लेण ।

—जम्बू सूत्र १४५ पृ ४६५

[७] [१] प्र०—भगवन् ! (प्रत्येक) चन्द्रमण्डल कितना लम्बा-चौडा, कितनी परिधि वाला और कितना मोटा है ?

उ०—गौतम ! (प्रत्येक चन्द्रमण्डल) ५६/६१ योजन लम्बा-चौडा, इससे तिगुनी से कुछ अधिक परिधि वाला एव २८/६१ योजन मोटा है ।

आभ्यन्तर और बाह्य चन्द्र-मंडलों का विस्तार

[८] [१] प्र०—सव्वब्भतरे ण भंते ! चदमडले केवइअ आयामविक्खभेण, केवइअ परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णवणउइ जोअणसहस्साइ छच्च चत्ताले जोअणसए आयाम-विक्खभेणं,

तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइ पण्णरस जोअणसहस्साइ अउणाणउतिं च जोअणाइ किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण पण्णत्ते ।

[२] प्र०—अब्भतराणतरे सा चेव पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! णवणउइ जोअणसहस्साइ सत्त य बारसुत्तरे जोअणसए एगावण्ण च एगट्ठिभागे जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णिआभाग आयामविक्खभेण,

तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइ पन्नरसहस्साइ तिण्णि अ एगूणवीसे जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण ।

[३] प्र०—अब्भंतरतच्चे ण—जाव—पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णवणउइ जोअणसहस्साइ सत्त य पचासीए जोअणसए इगलातीसं च एगट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता दोण्णि अ चुण्णिआभाए आयाम–विक्खभेण,

तिण्णि अ जोयणसयसहस्साइ पण्णरस जोअणसहस्साइ पच य इगुणापण्णे जोअणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणति ।

एव खलु एएण उवाएण णिक्खममाणे चदे—जाव—सकममाणे २ बावत्तरि २ जोअणाइ एगावण्ण च एगट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता एग च चुण्णिआभाग एगमेगे मडले विक्खभवुड्ढि अभिवड्ढेमाणे २ दो दो तीसाइ जोयणसयाइ परिरयवुड्ढि अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिर मडलं उवसकमित्ता चार चरइ ।

[४] प्र०—सव्ववाहिरए ण भते ! चदमडले केवइय आयाम–विक्खभेण केवइय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एग जोयणसयसहस्स छच्च सट्ठे जोअणसए आयाम–विक्खभेण,

तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइ अट्ठारस सहस्साइ तिण्णि अ पण्णरसुत्तरे जोअणसए परिक्खेवेण ।

[५] प्र०—वाहिराणतरे ण पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! एग जोअणसयसहस्स पच सत्तासीए जोअणसए णव य एगट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता छ चुण्णिआभाए आयाम–विक्खभेण ।

तिण्णि य जोअणसयसहस्साइं अट्ठारस सहस्साइ पचासीइ च जोअणाइ परिक्खेवेण ।

[६] प्र०—वाहिरतच्चे ण भते ! चदमडले . पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एग जोअणसयसहस्स पच य चउदसुत्तरे जोअणसए एगूणवीस च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता पच चुण्णिआभाए आयाम–विक्खभेण,

तिण्णि अ जोयणसयसहस्साइ सत्तरस सहस्साइ अट्ठ य पणवण्णे जोअणसए परिक्खेवेण ।

एव खलु एएण उवाएण पविसमाणे चदे—जाव—सकममाणे २ बावत्तरि २ जोअणाइ एगावण्ण च एगट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता एग चुण्णिआभाग

एगमेगे मडले विक्खभवुड्ढि णिव्वुड्ढेमाणे २ दो दो तीसाइ जोयणसयाइ परिरयवुड्ढि णिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरइ ।

—जबू सूत्र १४७ पृ ४६८–४६९

[८] [१] प्र०—भगवन् ! सर्वाभ्यन्तर चन्द्र–मडल कितना लवा–चौडा एव कितनी परिधि वाला है ।

उ०—गौतम ! (सर्व–अभ्यन्तर चन्द्र–मडल) ९९६४०, योजन लवा–चौडा है एव ३१५०८९ योजन से किंचित् विशेप अधिक परिधि वाला है ।

[२] प्र०—इसी प्रकार आभ्यन्तर के वाद के मडल के विपय मे पूछना चाहिए ?

उ०—गौतम ! आभ्यन्तर के वाद का अर्थात् दूसरा मडल ९९७१२ $\frac{५१}{६१}$ + ($\frac{१}{६१}$ × $\frac{१}{७}$) योजन लम्वा–चौडा एव ३१५३१९ योजन से किंचित् अधिक परिधि वाला है ।

[३] प्र०—इसी प्रकार आभ्यन्तर से तीसरे मण्डल के विपय मे प्रश्न करना चाहिए ?

उ०—गौतम ! (आभ्यन्तर–तृतीय मण्डल) ९९७८५ $\frac{४१}{६१}$ + ($\frac{१}{६१}$ × $\frac{१}{७}$ × $\frac{१}{२}$) योजन लम्वा–चौडा है एव ३१५५४९ योजन से किंचित् अधिक परिधि वाला है । इस प्रकार क्रम से निष्क्रमण करता हुआ चन्द्र–यावत्–सक्रमण करता हुआ ७२ $\frac{५१}{६१}$ + ($\frac{१}{६१}$ × $\frac{१}{७}$) योजन प्रत्येक मण्डल मे लम्वाई–चौडाई मे वढता हुआ एव २३० योजन परिधि मे वढता हुआ सर्ववाह्य मण्डल पर उपसक्रमण करता हुआ गति करता है ।

[४] प्र०—भगवन् ! सर्ववाह्य मडल कितना लम्बा–चौडा एव कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! १००६६० योजन लम्बा–चौडा एव ३१८३१५ योजन की परिधि वाला है ।

[५] प्र०—इसी प्रकार वाह्य के वाद के मडल के विषय मे प्रश्न करना चाहिए ?

उ०—गौतम ! (वाह्य के वाद का मण्डल) १००५८७ ६/६१ + (१/६१ × १/७ × ६/१) योजन लम्बा–चौडा एव ३१८०८५ योजन की परिधि वाला है ।

[६] प्र०—इसी प्रकार वाह्यतृतीय अर्थात् द्वितीय के वाद के मण्डल के विषय मे प्रश्न करना चाहिए ?

उ०—गौतम ! (वाह्यतृतीय मण्डल) १००५१४ १६/६१ + (१/६१ × १/७ × ५/१) योजन लवा–चौडा एव ३१७८५५ योजन की परिधि वाला है ।

इस प्रकार इस क्रम से प्रविष्ट होता हुआ चन्द्र—यावत्—सक्रमण करता हुआ ७२ ५१/६१ + (१/६१ × १/७) योजन प्रत्येक मण्डल मे (लम्वाई) चौडाई मे कम होता हुआ एव २३० योजन परिधि मे कम होता हुआ सर्व–आभ्यन्तर मण्डल पर उपसक्रमण करता हुआ गति करता है ।

चन्द्रमण्डलों का अंतर

[८] [१] प्र०—चदमंडलस्स ण भते ! चदमडलस्स केवइआए अन्तरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पणतीसं २ जोअणाइं तीस च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णिआभाए चंदमडलस्स चदमडलस्स अवाहाए अतरे पण्णत्ते ।

—जम्वू सूत्र १४४ पृ ४६५

[६] [१] प्र०—भगवन् ! एक चन्द्र-मण्डल से दूसरे चन्द्र-मण्डल का कितना अन्तर है ?

उ०—गौतम ३५ ३०/६१ + (१/६१ × १/७ × ४/७) योजन का एक चन्द्र-मण्डल से दूसरे चन्द्र-मण्डल का अन्तर है ।

[२] प्र०—एगमेगे ण भते ! मुहुत्तेण चदे केवइआइ भागसयाइ गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! जं जं मडलं उवसकमित्ता चार चरइ तस्स २ मंडलपरिक्खेवस्स सत्तरस अट्ठे (अट्ठट्ठे ?) भागसए गच्छइ,
मडलं सयसहस्सेण अट्ठाणउइए अ सएहिं छेत्ता इति ।

—जम्वू सूत्र १४६ पृ ४७४

[२] प्र०—भगवन् ! चन्द्र प्रतिमुहूर्त्त (मडल का) कितना भाग चलता है ?

उ०—गौतम ! जिस-जिस मडल पर आरूढ होकर गति करता है, उस-उस मडल की परिधि का १७०८/१०९८८०० भाग चलता है ।

एक मुहूर्त्त में चन्द्र की गति

[१०][१] प्र०—जया णं भते ! चदे सव्वब्भंतरमडलं उवसंकमित्ता चार चरइ तया एगमेगेण मुहुत्तेणं केवइयं खेत्त गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! पंच जोअणसहस्साइ तेवत्तरिं च जोअणाइ सत्तत्तरिं च चोआले भागसए गच्छइ,
मडल तेरसहिं सहस्सेहिं सत्तहि अ पणवीसेहिं सएहिं छेत्ता इति ।
तया ण इहगयस्स मणूसस्स सीआलीसाए जोअणसहस्सेहिं दोहिं अ तेवट्ठेहिं जोअणसएहिं एगवीसाए अ सट्ठिभाएहिं जोअणस्स चदे चक्खुप्फास हव्वमागच्छइ ।

[२] प्र०—जया ण भते ! चदे अब्भतराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरइ
—जाव—केवइय खेत्त गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! पच जोयणसहस्साइ सत्तत्तरिं च जोअणाइ छत्तीस च चोअत्तरे भागसए गच्छइ,
मडल तेरसहिं सहस्सेहिं—जाव–छेत्ता ।

[३] प्र०—जया ण भते ! चदे अब्भतरतच्च मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तया ण एगमेगेण मुहुत्तेण केवइअ खेत्त गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! पच जोयणसहस्साइ असीइ च जोयणाइ तेरस य भागसहस्साइ तिण्णि अ एगूणवीसे भागसए गच्छइ

मडल तेरसहिं—जाव–छेत्ता इति ।

एव खलु एएण उवाएण णिक्खममाणे चदे तयाणतराओ-जाव-सकममाणे २ तिण्णि २ जोअणाइं छण्णउइ च पचावण्णे भागसए मडले मुहुत्तगइ अभिवद्धेमाणे २ सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरइ ।

[४] प्र०—जया ण भते ! चदे सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरइ
तया ण एगमेगेण मुहुत्तेण केवइअ खेत्त गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! पच जोअणसहस्साइ एग च पणवीस जोअणसय अउणत्तरिं च णउए भागसए गच्छइ,
मडल तेरसहिं भागसहस्सेहिं सत्तहिं अ-जाव-छेत्ता इति ।
तया ण इहगयस्स मणूसस्स एक्कतीसाए जोअण सहस्सेहिं अट्ठहिं अ एगत्तीसेहिं जोअणसएहिं चदे चक्खुप्फास हव्वमागच्छइ ।

[५] प्र०—जया ण बाहिराणतर पुच्छा ?

उ०—गोअमा ! पच जोअणसहस्साइ एक्के च एक्कवीस जोअणसय एक्कारस य सट्ठे भागसहस्से गच्छइ,
मडल तेरसहिं-जाव-छेत्ता ।

[६] प्र०—जया ण बाहिरतच्च पुच्छा ?

उ०—गोयमा ! पच जोअणसहस्साइ एग च अट्ठारसुत्तर जोअणसय चोद्दस य पचुत्तरे भागसए गच्छइ,
मडल तेरसहिं सहस्सेहिं सत्तहिं पणवीसेहिं सएहिं छेत्ता ।
एव खलु एएण उवाएण-जाव-सकममाणे २ तिण्णि २ जोअणाइ छण्णउतिं च पचावण्णे भागसए एगमेगे मडले मुहुत्तगइ णिवुद्धेमाणे २ सव्वब्भतर मण्डल उवसकमित्ता चार चरइ ।

—जम्बू, सूत्र १४८ पृ ४७०–४७१

[१०][१] प्र०—भगवन् ! जब चन्द्र सर्वाभ्यन्तर मण्डल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है तब एक-एक मुहूर्त मे कितना क्षेत्र चलता है ?

उ०—गौतम ! ५०७३ $\frac{७७४४}{१३७२५}$ योजन चलता है। उस समय यहा रहे हुए मनुष्य को ४६२६३ $\frac{२१}{६०}$ योजन मे चन्द्र दिखाई देता है।

[२] प्र०—भगवन् ! जब चन्द्र आभ्यन्तर के बाद के मण्डल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है तब वह एक-एक मुहूर्त मे कितना क्षेत्र चलता है ?

उ०—गौतम ! ५०७७ $\frac{३६७४}{१३७२५}$ योजन चलता है।

[३] प्र०—भगवन् ! जब चन्द्र आभ्यन्तर-तृतीय मडल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है तब एक-एक मुहूर्त्त मे कितना क्षेत्र चलता है ?

उ०—गौतम ! ५०८० $\frac{१३३१६}{१३७२५}$ योजन चलता है। इस प्रकार इस क्रम से निष्क्रान्त होता हुआ चन्द्र एक के वाद-यावत्-सक्रान्त होता हुआ ३ $\frac{६६५५}{१३७२५}$ योजन की प्रत्येक मुहूर्त्त की गति मे वृद्धि करता हुआ सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

[४] प्र०—भगवन् ? जब चन्द्र सर्ववाह्य मडल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है तब वह एक-एक मुहूर्त्त मे कितना क्षेत्र चलता है ?

उ०—गौतम ! ५१२५ $\frac{६६६०}{१३७२५}$ योजन चलता है।
उस समय यहा स्थित मनुष्य को ३१८३१ योजन से चन्द्र दृष्टिगोचर होता है।

[५] प्र०—भगवन् ! जब चन्द्र वाह्य के वाद के मडल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है तब ?

उ०—गौतम ! तब ५१२१ $\frac{११६०}{१३७२५}$ योजन चलता है।

[६] प्र०—भगवन् ! जब चन्द्र वाह्यतृतीय मडल मे उपसक्रान्त होकर चलता है तब ?

उ०—गौतम ! तब ५११८ $\frac{१४०५}{१३७२५}$ योजन चलता है। इस प्रकार इस क्रम से-यावत्-सक्रान्त होता हुआ ३ $\frac{६६५५}{१३७२५}$ योजन की प्रत्येक मुहूर्त्त की गति मे कमी करता हुआ सर्वाभ्यन्तर मडल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है।

मेरु से चन्द्रमंडलों का अंतर

[११][१] प्र०—जबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइआए अवाहाए सव्वब्भतरए चदमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चोआलीस जोयणसहस्साइ अट्ठ य वीसे जोयणसए अबाहाए सव्वब्भंतरे चंदमडले पण्णत्ते।

[२] प्र०—जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइआए अवाहाए अब्भतराणतरे चदमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चोआलीसं जोयणसहस्साइं अट्ठ य छप्पण्णे जोयणसए पणवीस च एगसट्ठिमाए जोयणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णिआभागे अवाहाए अब्भंतराणतरे चंदमंडले पण्णत्ते।

[३] प्र०—जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अवाहाए अब्भतरतच्चे मडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चोआलीसं जोअणसहस्साइ अट्ठ य वाणउए जोअणसए एगावण्णं च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता एगं चुण्णिआभाग अवाहाए अब्भंतरतच्चे मंडले पण्णत्ते। एव खलु एएणं उवाएण णिक्खममाणे चदे तयाणंतराओ मंडलाओ तयाणतरं मडल सकममाणे २ छत्तीसं छत्तीसं जोअणाइं पणवीसं च एगट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभागं च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णिआभागे एगमेगे मडले अवाहाए वुड्ढि अभिवड्ढेमाणे २ सव्ववाहिरं मडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ।

[११][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से सर्वाभ्यन्तर चन्द्र–मडल कितनी दूर है ?

उ०—गौतम ! सर्वाभ्यन्तर चन्द्रमण्डल ४४८२० योजन दूर है।

[२] प्र०—जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से आभ्यन्तर के वाद का चन्द्रमण्डल कितनी दूर है ?

उ०—गौतम ! ४४८५६ $\frac{२५}{६१} \times (\frac{१}{६१} \times \frac{१}{७} \times \frac{४}{१})$ योजन दूर है।

[३] प्र०—जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से आभ्यन्तर-तृतीय चन्द्रमण्डल कितनी दूर है ?

उ०—गौतम ! आभ्यन्तर-तृतीय मण्डल ४४८९२$\frac{५१}{६१}$ + ($\frac{१}{६१} \times \frac{१}{७}$) योजन दूर है।

इस प्रकार इस क्रम से निष्क्रान्तन होता हुआ चन्द्र एक मण्डल के वाद दूसरे मण्डल मे सक्रान्त होता हुआ ३६$\frac{२५}{६१}$ + ($\frac{१}{६१} \times \frac{१}{७} \times \frac{४}{१}$) योजन की प्रत्येक मण्डल मे वृद्धि करता हुआ सर्ववाह्य मण्डल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है।

[१२][१] प्र०—जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइआए अवाहाए सव्ववाहिरे चदमडले पण्णत्ते ?

उ०—पणयालीस जोयणसहस्साइ तिण्णि अ तीसे जोअणसए अवाहाए सव्ववाहिरए चदमडले पण्णत्ते।

[२] प्र०—जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइआए अवाहाए वाहिराणतरे चदमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पणयालीस जोअणसहस्साइ दोण्णि अ तेणउए जोअणसए पणतालीस च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगसट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता तिण्णि चुण्णिआभाए वाहिराणतरे चदमडले पण्णत्ते।

[३] प्र०—जबुद्दीवे ण दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइआए अवाहाए वाहिरतच्चे चदमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पणयालीस जोअणसहस्साइ दोण्णि अ सत्तावण्णे जोअणसए णव य एगट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता छ चुण्णिआभाए अवाहाए वाहिरतच्चे चदमडले पण्णत्ते।

एव खलु एएण उवाएण पविसमाणे चदे तयाणतराओ मडलाओ तयाणतर मडल सकममाणे २ छत्तीस २ जोअणाइ पणवीस च एगसट्ठिभाए जोअणस्स एगट्ठिभाग च सत्तहा छेत्ता चत्तारि चुण्णिआभाए एगमेगे मडले अवाहाए वुद्धि णिव्वुड्ढेमाणे २ सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरइ।

—जम्बू सूत्र १४६ पृ ४६६-६७

[१२][१] प्र०—जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से सर्ववाह्य चन्द्र-मण्डल कितनी दूर है ?

उ०—सर्ववाह्य चन्द्र-मण्डल ४५३३० योजन दूर है।

[२] प्र०—जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से वाह्य के वाद का चन्द्र-मण्डल कितनी दूर है ?

उ०—गौतम ! वाह्य के वाद का चन्द्र-मण्डल ४५२९३$\frac{३५}{६१}$ ($\frac{१}{६१} \times \frac{१}{७} \times \frac{३}{१}$) योजन दूर है।

[३] प्र०—जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से वाह्यतृतीय चन्द्र-मण्डल कितनी दूर है ?

उ०—गौतम ! वाह्यतृतीय चन्द्रमण्डल ४५२५७$\frac{६}{६१}$ + ($\frac{१}{६१} \times \frac{१}{७} \times \frac{६}{१}$) योजन दूर है।

इस प्रकार इस क्रम से प्रविष्ट होता हुआ चन्द्र एक के वाद दूसरे मण्डल मे सक्रान्त होता हुआ ३६$\frac{२५}{६१}$ + ($\frac{१}{६१} \times \frac{१}{७} \times \frac{४}{१}$) योजन दूरी की प्रत्येक मडल मे कमी करता हुआ सर्वाभ्यन्तर मण्डल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है।

पक्ष में चन्द्र-मंडल गति

[१३][१] प्र०—ता चदेण अद्धमासेण चदे कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता चोद्दस चउब्भागमडलाइ चरति एग च चउवीस-सतभाग मडलस्स।

[२] प्र०—ता आइच्चेण अद्धमासेण चदे कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता सोलस मडलाइ चरति।

सोलसमडलचारी तदा अवराइ खलु दुवे अट्ठकाइ जाइ चदे केणइ असामण्णकाइ सयमेव पविट्ठित्ता २ चार चरति,

[३] प्र०—कतराइं खलु दुवे अट्ठकाइं जाइं चंदे केणइ असामण्णकाइं सयमेव पविट्ठित्ता २ चारं चरति ?

उ०—इमाइं खलु ते दुवे अट्ठगाइं जाइं चंदे केणइ असामण्णगाइं सयमेव पविट्ठित्ता २ चारं चरति, तंजहा-निक्खममाणे चेव, अमावासंतेणं, पविसमाणे चेव पुण्णिमासितेणं,

एताइं खलु दुवे अट्ठगाइं जाइं चंदे केणइ

असामण्णगाइं सयमेव पविट्ठित्ता २ चारं चरति ।

ता पढमायणगते चंदे दाहिणाते भागाते पविसमाणे सत्त अद्धमंडलाइं जाइं चंदे दाहिणाते भागाते पविसमाणे चारं चरति ।

[४] प्र०—कतराइं खलु ताइं सत्त अद्धमंडलाइं जाइं चंदे दाहिणाते भागाते पविसमाणे चारं चरति ?

उ०—इमाइं खलु ताइं सत्त अद्धमंडलाइं जाइं चंदे दाहिणाते भागाते पविसमाणे चारं चरति, तंजहा-बिदिए अद्धमंडले, चउत्थे अद्धमंडले, छट्ठे अद्धमंडले, अट्ठमे अद्धमंडले, दसमे अद्धमंडले, बारसमे अद्धमंडले, चउदसमे अद्धमंडले ।

एताइं खलु ताइं सत्त अद्धमंडलाइं जाइं चंदे दाहिणाते भागाते पविसमाणे चारं चरति ।

छ अद्धमण्डलाइं तेरस य सत्तट्ठि भागाइं अद्धमंडलस्स जाइं चंदे उत्तराते भागाए पविसमाणे चारं चरति ।

[५] प्र०—कतराइं खलु ताइं छ अद्धमंडलाइं तेरस य सत्तट्ठि-भागाइं अद्धमण्डलस्स जाइं चंदे उत्तराते भागाते पविसमाणे चारं चरति ?

उ०—इमाइं खलु ताइं छ अद्धमंडलाइं तेरस य सत्तट्ठिभागाइं अद्धमण्डलाइं जाइं चंदे उत्तराते भागाते पविसमाणे चारं चरति, तंजहा—

तईए अद्धमंडले, पंचमे अद्धमण्डले, सत्तमे अद्धमंडले, नवमे अद्धमण्डले, एक्कारसमे अद्धमंडले, तेरसमे अद्धमंडले, पन्नरसमंडलस्स तेरस सत्तट्ठिभागाइं,

एताइं खलु ताइं छ अद्धमंडलाइं तेरस य सत्तट्ठिभागाइं जाइं चंदे उत्तराते भागाते पविसमाणे चारं चरति,

एतावया च पढमे चंदायणे समत्ते भवति,

ता णक्खत्ते अद्धमासे नो चंदे अद्धमासे,

नो चंदे अद्धमासे णक्खत्ते अद्धमासे ।

[१३] [१] प्र०—अर्ध चन्द्रमास मे चन्द्र कितने मंडल चलता है ?

उ०—$१४\frac{१}{४}+\frac{१}{१२४}$ मंडल चलता है ।

[२] प्र०—अर्ध सूर्यमास मे चन्द्र कितने मंडल चलता है ?

उ०—सोलह मंडल चलता है ।

उस समय अन्य दो अष्टकों मे चन्द्र स्वयमेव असामान्यतया प्रविष्ट होकर गति करता है ।

[३] प्र०—वे अन्य दो अष्टक कौन से है जिनमे चन्द्र स्वयमेव असामान्यतया प्रविष्ट होकर गति करता है ?

उ०—वे दो अष्टक ये है जिनमे चन्द्र स्वयमेव असामान्यतया प्रविष्ट होकर गति करता है, यथा—निष्क्रमण करता हुआ अमावस्या के दिन एवं प्रविष्ट होता हुआ पूर्णिमा के दिन ।

इन दो अष्टक मे चन्द्र स्वयमेव असामान्यतया प्रविष्ट होकर गति करता है ।

प्रथमायनगत चन्द्र दक्षिण भाग से प्रविष्ट होता हुआ सात अर्ध मंडलो मे जाकर दक्षिण भाग मे प्रविष्ट होकर गति करता है ।

[४] प्र०—वे सात अर्ध मडल कौन-से हैं जिनमे जाकर चन्द्र दक्षिणी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ गति करता है ?

उ०—वे सात अर्ध मडल ये हैं जिनमे होकर चन्द्र दक्षिणी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ गति करता है, यथा—द्वितीय अर्धमडल, चतुर्थ अर्धमडल, षष्ठ अर्धमडल, अष्टम अर्धमडल, दशम अर्धमडल, द्वादश अर्धमडल एव चतुर्दश अर्धमडल। ये सात अर्ध मडल हैं जिनमे होकर चन्द्र दक्षिणी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ गति करता है। प्रथमायनगत चन्द्र उत्तरी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ ६+$\frac{१३}{६७}$ अर्धमडलो मे होकर उत्तरी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ गति करता है।

[५] प्र०—वे ६+$\frac{१३}{६७}$ अर्धमडल कौन-से हैं जिनमे होकर चन्द्र उत्तरी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ गति करता है ?

उ०—वे ६+$\frac{१३}{६७}$ अर्ध मडल ये है जिनमे होकर चन्द्र उत्तरी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ गति करता है, यथा—तृतीय अर्धमडल, पचम अर्धमडल, सप्तम अर्ध मडल, नवम अर्ध मडल, एकादश अर्धमडल, त्रयोदश अर्ध मडल एव पचदश अर्धमडल का $\frac{१३}{६७}$ भाग।

ये ६$\frac{१३}{६७}$ अर्धमडल हैं जिनमे होकर चन्द्र उत्तरी भाग मे प्रविष्ट होता हुआ गति करता है। इस ढग से प्रथम चन्द्रायण समाप्त होता है। इसमे नक्षत्र-अर्धमास मे चन्द्र-अर्धमास नही होता और न चन्द्र-अर्धमास मे नक्षत्र-अर्धमास ही होता है।

[१४][१] प्र०—ता नक्खत्ताओ अद्धमासातो ते चदे चदेण अद्धमासेण किमधिय चरति ?

उ०—एग अद्धमडल चरति चत्तारि य सत्तट्ठिभागाइ अद्धमडलस्स सत्तट्ठिभाग एकतीसाए छेत्ता णव भागाइ,

ता दोच्चायणगते चदे पुरच्छिमाते भागाते णिक्खममाणे सचउप्पण्णाइ जाइ चदे परस्स चिण्णं पडिचरति,

सत्त तेरसकाइ जाइ चदे अप्पणा चिण्ण चरति,

ता दोच्चायणगते चदे पच्चत्थिमाए भागाए णिक्खममाणे चउप्पणाइं जाइ चदे परस्स चिण्णं पडिचरति,

छ तेरसगाइ चदे अप्पणो चिण्ण पडिचरति,

अवरगाइ खलु दुवे तेरसगाइ जाइ चदे केणइ असामण्णगाइ सयमेव पविट्ठित्ता २ चार चरति।

[२] प्र०—कतराइ खलु दुवे तेरसगाइ जाइ चदे केणइ असामण्णगाइ सयमेव पविट्ठित्ता २ चार चरति ?

उ०—इमाइं खलु ताइ दुवे तेरसगाइ जाइं चंदो केणइ असामण्णगाइं सयमेव पविट्ठित्ता २ चार चरति सव्वब्भतरे चेव मडले, सव्ववाहिरे चेव मडले,

एयाणि खलु ताणि दुवे तेरसगाइ जाइ चदे केणइ—जाव—चार चरति।

एतावता दोच्चे चदायणे समत्ते भवति।

ता णक्खत्ते मासे नो चदमासे, चदे मासे णो णक्खत्ते मासे।

[३] प्र०—णक्खत्ताते मासाए चदेण मासेण किमधिय चरति ?

उ०—ता दो अद्धमडलाइं चरति,

अट्ठ य सत्तट्ठिभागाइ अद्धमडलस्स सत्तट्ठिभाग च एक्कतीसधा छेत्ता अट्ठारस भागाइं,

ता तच्चायणगते चदे पच्चत्थिमाते भागाए पविसमाणे

बाहिराणतरस्स पच्चत्थिमिल्लस्स अद्धमडलस्स ईतालीस सत्तट्ठिभागाइ जाइ चदे अप्पणो परस्स य चिण्ण पडिचरति,

तेरस सत्तट्ठिभागाइ जाइ चदे परस्स चिण्ण पडिचरति,
तेरस सत्तट्ठिभागाइ चदे अप्पणो परस्स य चिण्ण पडिचरति,
एतावया वाहिराणतरे पच्चत्थिमिल्ले अद्धमडले समत्ते भवति ।
तच्चायणगते चदे पुरच्छिमाए भागाए पविसमाणे वाहिरतच्चस्स पुरच्छिमिल्लस्स अद्धमंडलस्स
ईतालीस सत्तट्ठिभागाइं जाइं चदे अप्पणो परस्स चिण्णं पडिचरति,
तेरस सत्तट्ठिभागाइं जाइ चंदे परस्स चिण्णं पडिचरति,
तेरस सत्तट्ठिभागाइ जाइ चदे अप्पणो परस्स य चिण्ण पडियरति,
एतावता वाहिरतच्चे पुरच्छिमिल्ले अद्धमडले समत्ते भवति ।
ता तच्चायणगते चदे पच्चत्थिमाते भागाते पविसमाणे वाहिर चउत्थस्स पच्चत्थिमिल्लस्स अद्ध-
मडलस्स अद्धसत्तट्ठि भागाइं सत्तट्ठिभाग च एक्कतीसधा छेत्ता,
अट्ठारस भागाइं जाइ चदे अप्पणो परस्स य चिण्ण पडिचरति,
एतावता वाहिर चउत्थपच्चत्थिमिल्ले अद्धमडले सम्मत्ते भवइ ।
एव खलु चदेण मासेण चदे तेरस चउप्पण्णगाइं दुवे तेरसगाइ जाइ चदे परस्स चिण्ण पडिचरति,
तेरस २ गाइ जाइं चदे अप्पणो चिण्ण पडिचरति,
दुवे ईतालीसगाइ अट्ठ सत्तट्ठिभागाइ सत्तट्ठिभाग च एक्कतीसधा छेत्ता,
अट्ठारसभागाइ जाइ चदे अप्पणो परस्स य चिण्णं पडिचरति,
अवराइ खलु दुवे तेरसगाइं जाइ चदे केणइ असामन्नगाइ सयमेव पविट्ठित्ता २ चार चरति,
इच्चेसो चदमासोऽभिगमण-णिक्खमण-वुड्ढिणिवुड्ढि-अणवट्ठित-सठाणसठिती-विउव्वणगिड्ढिपत्ते रूवी
चदे देवे २ आहितेति वदेज्जा ।

—सूर्य सूत्र ८१ पृ २३६-२३८
—चन्द्र सूत्र ८१

[१४][१] प्र०—नक्षत्र-अर्घमास से चन्द्र-अर्घमास मे चन्द्र कितना अधिक चलता है ?

उ०—$1\frac{4}{67}+(\frac{1}{67}\times\frac{1}{31}\times\frac{6}{1})$ अर्घमडल अधिक चलता है ।

द्वितीयायनगत चन्द्र पूर्वी भाग से निकलता हुआ $\frac{54}{67}$ भाग चलकर अन्य (चन्द्रमण्डल) के क्षेत्र मे गति करता है । $\frac{13}{67}$ भाग चलकर चन्द्र अपने क्षेत्र मे गति करता है ।

द्वितीयायनगत चन्द्र पश्चिमी भाग से निकलता हुआ $\frac{54}{67}$ भाग चल कर अन्य (चन्द्रमण्डल) के क्षेत्र मे गति करता है ! $\frac{13}{67}$ भाग चलकर चन्द्र अपने क्षेत्र मे गति करता है । दूसरे (नक्षत्र-अर्घ-मास) में चन्द्र $\frac{13}{67}+\frac{2}{1}=\frac{26}{67}$ भाग मे असामान्यतया स्वयमेव प्रविष्ट होकर गति करता है ।

[२] प्र०—वह $\frac{26}{67}$ भाग कौन-सा है जिसमे चन्द्र असामान्यतया स्वयमेव प्रविष्ट होकर गति करता है ?

उ०—यह वह $\frac{26}{67}$ भाग है जिसमे चन्द्र असामान्यतया स्वयमेव प्रविष्ट होकर गति करता है—सर्वाभ्यन्तर मडल और सर्ववाह्य मडल । ($\frac{13}{67}$ सर्वाभ्यन्तर मण्डल व $\frac{13}{67}$ सर्ववाह्य मडल) यह वह $\frac{26}{67}$ भाग है जिसमे चन्द्र—यावत्—गति करता है । इस ढग से द्वितीय चन्द्रायण समाप्त होता है । इसमे नक्षत्रमास मे चन्द्रमास नही होता और न चन्द्रमास मे नक्षत्रमास ही होता है ।

[३] प्र०—नक्षत्रमास मे चन्द्रमास मे चन्द्र कितना अधिक चलता है ?

उ०—$2\frac{8}{67}+(\frac{1}{67}\times\frac{1}{31}\times\frac{18}{1})$ अर्घमडल अधिक चलता है ।

तृतीयायनगत चन्द्र पश्चिमी भाग से प्रविष्ट होता हुआ वाह्य के वाद के पश्चिमी अर्धमडल का $\frac{41}{67}$ भाग चलकर अपने व अन्य के क्षेत्र मे गति करता है । $\frac{13}{67}$ भाग चलकर चन्द्र अन्य के क्षेत्र मे गति करता है । $\frac{13}{67}$ भाग चलकर चन्द्र अपने व पर के क्षेत्र मे गति करता है । इस प्रकार वाह्य के वाद का पश्चिमी अर्धमडल समाप्त होता है । तृतीयायनगत चन्द्र पूर्वी भाग से प्रविष्ट होता हुआ

वाह्यतृतीय के पूर्वी अर्धमडल का $\frac{41}{67}$ भाग चल कर अपने व दूसरे के क्षेत्र मे गति करता है। $\frac{13}{37}$ भाग चलकर चन्द्र पर के क्षेत्र मे विचरता हैं। $\frac{13}{67}$ भाग चलकर चन्द्र अपने व पराये क्षेत्र मे विचरता है। इस ढग से वाह्य-तृतीय का पूर्वी अर्धमडल समाप्त होता है।
तृतीयायनगत चन्द्र पश्चिमी भाग से प्रविष्ट होता हुआ वाह्य-चतुर्थ के पश्चिमी अर्धमडल का $\frac{1}{2}+\frac{1}{67}+(\frac{1}{67}\times\frac{1}{31}\times\frac{18}{1})$ भाग चलकर अपने व पर के क्षेत्र मे विचरता है। इस ढग से वाह्य-चतुर्थ का पश्चिमी अर्धमडल समाप्त होता है ।

इस प्रकार चन्द्रमास मे चन्द्र $\frac{134}{213}$ भाग चल कर पर के क्षेत्र मे विचरता है।
$\frac{13}{67}$ भाग चल कर चन्द्र अपने क्षेत्र मे विचरता है। $\frac{241}{867}+(\frac{1}{67}\times\frac{1}{31}\times\frac{18}{1})$ भाग चलकर चन्द्र अपने व पर के क्षेत्र मे गति करता है। अन्य $\frac{13}{67}\times\frac{2}{1}$ भाग चल कर चन्द्र असामान्यतया स्वयमेव प्रविष्ट होकर गति करता है ।

इस प्रकार चन्द्रमास मे गमन, निष्क्रमण, वृद्धि, निर्वृद्धि से अनवस्थित सस्थान वाला सस्थिति एव विकुर्वणा ऋद्धिप्राप्त, अतिशय रूपवान् चन्द्र देव कहा गया है (दिखाई देने वाला विमान चन्द्र देव नही है) ऐसा कहना चाहिए।

विभिन्न मासों में चन्द्रादि का मंडल-चार

[१५][१] प्र०—ता णक्खत्तेण मासेण चदे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता तेरस मडलाइ चरति, तेरस य सत्तट्ठिभागे मडलस्स ।

[२] प्र०—ता णक्खत्तेण मासेण सूरे कति मडलाइ चरति ?
उ०—तेरस मडलाइ चरति, चोत्तालीस च सत्तट्ठिभागे मडलस्स ।

[३[प्र०—ता णक्खत्तेण मासेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता तेरस मडलाइ चरति, अद्धसीतालीस च सत्तट्ठिभागे मडलस्स ।

[४] प्र०—ता चदेण मासेण चदे कति मडलाइ चरति ?
उ०—चोद्दस चउभागाइ मडलाइ चरति, एगं च चउव्वीससत भाग मडलस्स ।

[५] प्र०—ता चदेण मासेण सूरे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागूणाइ मडलाइ चरति, एग च चउवीससतभाग मडलस्स ।

[६] प्र०—ता चदेण मासेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागूणाइ मडलाइ चरति, छच्च चउवीससतभागे मडलस्स ।

[७] प्र०—ता उडुणा मासेण चदे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता चोद्दस मडलाइ चरति, तीसं च एगट्ठिभागे मडलस्स ।

[८] प्र०—ता उडुणा मासेण सूरे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस मडलाइ चरति,

[९] प्र०—ता उडुणा मासेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता पण्णरस मडलाइ चरति, पच य बावीससतभागे मडलस्स ।

[१०] प्र०—ता आदिच्चेण मासेण चदे कति मडलाइ चरति ?
उ०—ता चोद्दस मडलाइ चरति, एक्कारस भागे मडलस्स ।

[११] प्र०—ता आदिच्चेणं मासेण सूरे कति मंडलाइं चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागाहिगाइ मंडलाइं चरति ।

[१२] प्र०—ता आदिच्चेणं मासेण णक्खत्ते कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता पण्णरस चउभागाहिगाइ मडलाइं चरति, पचतीस च चउवीससतभागमंडलाइं चरति ।

[१३] प्र०—ता अभिवड्ढिएण मासेण चदे कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता पण्णरस मडलाइं तेसीतिं छलसीयसतभागे मंडलस्स ।

[१४] प्र०—ता अभिवड्ढिएण मासेण सूरे कति मडलाइं चरति ?
उ०—ता सोलस मंडलाइं चरति, तिहिं भागेहिं ऊणगाइ दोहिं अडयालेहिं सएहिं मंडलं छित्ता ।

[१५] प्र०—अभिवड्ढिएणं मासेण णक्खत्ते कति मंडलाइं चरति ?
उ०—ता सोलस मडलाइं चरति, सीतालीसएहिं भागेहिं अहियाइ चोद्दसहिं अट्ठासीएहिं मंडलं छेत्ता ।

[१५][१] प्र०—नक्षत्रमास से चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—तेरह मडल और एक मडल का १३/६७ भाग चलता है ।

[२] प्र०—नक्षत्रमास से सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—१३ ४४/६७ मडल चलता है ।

[३] प्र०—नक्षत्रमास से नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१३ ४६॥/६७ मडल चलता है ।

[४] प्र०—चन्द्रमास से चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१४ ३२/१२४ मडल चलता है ।

[५] प्र०—चन्द्रमास से सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—१४ ६४/१२४ मडल चलता है ।

[६] प्र०—चन्द्रमास से नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१४ ६६/१२४ मडल चलता है ।

[७] प्र०—ऋतुमास से चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१४ ३०/६१ मडल चलता है ।

[८] प्र०—ऋतुमास से सूर्य कितने मडल चलता है ?
उ०—१५ मडल चलता है ।

[९] प्र०—ऋतुमास से नक्षत्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१५ ५/१२२ मडल चलता है ।

[१०] प्र०—आदित्यमास से चन्द्र कितने मडल चलता है ?
उ०—१४ ११/१५ मडल चलता है ।

[११] प्र०—आदित्यमास से सूर्य कितने मडल चलता है ?

उ०—$१५\frac{१५}{६०}$ मडल चलता है ।

[१२] प्र०—आदित्यमास से नक्षत्र कितने मडल चलता है ?

उ०—$१५\frac{३५}{१२०}$ मडल चलता है ।

[१३] प्र०—अभिवर्द्धितमास से चन्द्र कितने मडल चलता है ?

उ०—$१५\frac{८३}{१८६}$ मडल चलता है ।

[१४] प्र०—अभिवर्द्धितमास से सूर्य कितने मडल चलता है ?

उ०—$१६\frac{३४५}{२४८}$ मडल चलता है ।

[१५] प्र०—अभिवर्द्धितमास से नक्षत्र कितने मडल चलता है ?

उ०—$१६\frac{४७}{१४८८}$ मडल चलता है ।

अहोरात्र आदि में चन्द्रादि का मंडलचार

[१६][१] प्र०—ता एगमेगेण अहोरत्तेण चदे कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता एग अद्धमडल चरति, एक्कतीसाए भागेहिं ऊण णवहिं पन्नरसेहिं अद्धमडल छेत्ता ।

[२] प्र०—ता एगमेगेण अहोरत्तेण सूरिए कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता एग अद्धमडल चरति ।

[३] प्र०—ता एगेण अहोरत्तेण णक्खत्ते कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता एग अद्धमडल चरति, दोहिं भागेहिं अधिय सत्तहिं बत्तीसेहिं सएहिं अद्धमडल छेत्ता ।

[४] प्र०—ता एगमेग मडल चदे कतिहिं अहोरत्तेहिं चरति ?

उ०—ता दोहिं अहोरत्तेहिं चरति, एक्कतीसाए भागेहिं अधिएहिं चउहिं चोतालेहिं सतेहिं राइदिएहिं छेत्ता ।

[५] प्र०—ता एगमेग मडल सूरे कतिहिं अहोरत्तेहिं चरति ?

उ०—ता दोहिं अहोरत्तेहिं चरति।

[६] प्र०—ता एगमेगं मडल णक्खत्ते कतिहिं अहोरत्तेहिं चरति ?

उ०—ता दोहिं अहोरत्तेहिं चरति, दोहिं ऊणेहिं तिहिं सत्तासट्ठेहिं सतेहिं राइएहिं छेत्ता ।

[७] प्र०—ता जुगेण चदे कति मडलाइं चरति ?

उ०—ता अट्ठ चुल्लसीते मडलसते चरति ।

[८] प्र०—ता जुगेण सूरे कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता णवपण्णर मडल सते चरति ।

[९] प्र०—ता जुगेण णक्खत्ते कति मंडलाइ चरति ?

उ०—ता अट्ठारस पणतीसे दुभागमडलसते चरति ।

इच्चेसा मुहुत्तगती रिक्खातिमास-राइंदिय-जुग-मडलपविभत्ता सिग्घगती वत्थु आहितेत्ति बेमि ।

—सूर्य सूत्र ८६ पृ २५४

[१६][१] प्र०—चन्द्र एक-एक अहोरात्र मे कितने मडल चलता है ?
उ०—एक अर्धमडल के ६१५ भाग वैसे ४४२ भाग चलता है ।

[२] प्र०—सूर्य एक-एक अहोरात्र मे कितने मडल चलता है ?
उ०—एक अर्द्ध मडल चलता है ।

[३] प्र०—नक्षत्र एक-एक अहोरात्र में कितने मडल चलता है ?
उ०—एक मडल के ७३२ भाग मे से ३६७ भाग चलता है ।

[४] प्र०—चन्द्र एक-एक मडल मे कितने अहोरात्र चलता है ?
उ०—$२\frac{३१}{४४२}$ अहोरात्र चलता है ।

[५] प्र०—सूर्य एक-एक मडल मे कितने अहोरात्र चलता है ?
उ०—दो अहोरात्र चलता है ।

[६] प्र०—नक्षत्र एक-एक मडल मे कितने अहोरात्र चलता है ?
उ०—$१\frac{३६५}{३६७}$ अहोरात्र चलता है ।

[७] प्र०—चन्द्र एक युग मे कितने मडल चलता है ?
उ०—८८४ मडल चलता है ।

[८] प्र०—सूर्य एक युग मे कितने मडल चलता है ?
उ०—६१५ मडल चलता है ।

[६] प्र०—नक्षत्र एक युग मे कितने मडल चलता है ?
उ०—१८३५ अर्धमडल चलता है ।

यह अनन्तरोक्त मुहुर्त्त गति है, नक्षत्रमास आदि अहोरात्र एव युग को लेकर मडलो की सख्या का निरूपण किया गया तथा शीघ्रगति रूप वस्तु का कथन किया गया है, ऐसा मैं कहता हूँ ।

चन्द्रादि की गति की विशेषता

[१७][१] **प्र०—ता जया णं चंदं गतिसमावण्णं सूरे गतिसमावण्णे भवति, से ण गतिमाताए केवतिय विसेसेति ?**
उ०—ता बावट्ठिभागे विसेसेति ।

[२] **प्र०—ता जया णं चंदं गतिसमावण्ण णक्खत्ते गतिसमावण्णे भवइ, से णं गतिमाताए केवतिय विसेसेइ ?**
उ०—ता सत्तट्ठि भागे विसेसेति ।

[३] **प्र०—ता जया णं सूरं गतिसमावण्ण णक्खत्ते गतिसमावण्णे भवति, से णं गतिमाताए केवतिय विसेसेति ?**
उ०—ता पच भागे विसेसेति ।

ता जया णं चंद गतिसमावण्ण अभीयीणक्खत्ते ण गतिसमावण्णे पुरच्छिमाए भागाए समासादेति, पुरच्छिमाए भागाए समासादित्ता नव मुहुत्ते सत्तावीसं च सत्तट्ठिभागे मुहुत्तस्स चदेण सद्धिं जोएति जोअं जोएत्ता अणुपरियट्टति, जोय जोएत्ता विप्पजहाति, विगयजोई यावि भवति ।

ता जया ण चद गतिसमावण्णं सवणे णक्खते गतिसमावण्णे पुरच्छिमाइ भागाए समासादेति, पुरच्छिमाए भागाए समासादेत्ता तीसं मुहुते चदेणं सद्धिं जोयं जोएति, जोयं जोएत्ता अणुपरियट्टति, जोय जोएत्ता विप्पजहति, विगयजोई यावि भवइ ।

एव एएण अभिलावेण णेतव्व—
पण्णरसमुहुत्ताइ, तीसतिमुहुत्ताइ, पणयालीसमुहुत्ताइ, भाणितव्वाइ–जाव–उत्तरासाढा ।
ता जया ण चद गतिसमावण्ण गहे गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुरच्छिमाते भागाते समासादेत्ता चदेण सद्धि जोग जु जति, जु जित्ता जोग अणुपरियट्टइ, अणुपरियट्टित्ता विप्पजहति, विगतजोई यावि भवति ।

ता जया ण सूर गतिसमावण्ण अभीयीणवखत्ते गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुरच्छिमाए भागाए समासादित्ता चत्तारि अहोरत्ते छच्च मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति, जोएत्ता जोय अणुपरियट्टति, अणुपरियट्टित्ता विजेति, विगयजोगी यावि भवति ।

एव अहोरत्ता छ एक्कवीस मुहुत्ता य, तेरस अहोरत्ता, वारस मुहुत्ता य, वीस अहोरत्ता तिण्णि मुहुत्ता य सव्वे भणितव्वा—जाव—जया ण सूर गतिसमावण्ण ।

उत्तरासाढाणवखत्ते गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुरच्छिमाते भागाते समासादेत्ता वीस अहोरत्ते तिण्णि य मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति, जोय जोएत्ता जोय अणुपरियट्टति, जोय अणुपरियट्टित्ता विजेति, विजहति, विप्पजहति, विगयजोगी यावि भवइ
ता जता ण सूर गतिसमावण्ण णवखत्ते (गहे) गतिसमावण्णे पुरच्छिमाते भागाते समासादेति, पुरच्छिमाते भागाते समासादेत्ता सूरेण सद्धि जोय जु जति, जु जित्ता जोय अणुपरियट्टति, अणुपरियट्टित्ता —जाव—विजेति, विगतजोगी यावि भवति ।

—सूर्य० सूत्र ८४ पृ २४८

[१७][१] प्र०—जब चन्द्र को गतिसमापन्न विवक्षित करके सूर्य को गतिसमापन्न विवक्षित किया जाता है अर्थात् प्रति मुहूर्त्त चन्द्रगति की अपेक्षा से सूर्यगति का विचार किया जाता है तब सूर्य एक मुहूर्त्त के गतिपरिमाण से कितने भागो को आक्रान्त करता है ?

उ०—बासठ भागो को आक्रान्त करता है ।

[२] प्र०—जब चन्द्र को गतिसमापन्न विवक्षित करके नक्षत्र को गतिसमापन्न विवक्षित किया जाता है तब वह एक मुहूर्त्त के गतिपरिमाण से कितने भागो को आक्रान्त करता है ?

उ०—सढसठ भागो को आक्रान्त करता है ।

[३] प्र०—जब सूर्य को गतिसमापन्न विवक्षित करके नक्षत्र को गतिममापन्न विवक्षित किया जाता है तब वह गतिपरिमाण से कितने भागो को आक्रान्त करता है ?

उ०—पाच भागो को आक्रान्त करता है ।

जब चन्द्र को गतिसमापन्न विवक्षित करके अभिजित नक्षत्र को गतिसमापन्न विवक्षित किया जाता है तब वह पूर्वी भाग से चन्द्रमा को प्राप्त करता है । प्राप्त करके ९ $\frac{२७}{६७}$ मुहूर्त्त तक चन्द्रमा के साथ योगयुक्त रहता है, योगयुक्त रहकर योग को बदल देता है और योग का त्याग कर देता है, योगरहित हो जाता है ।

जब चन्द्र को गतिसमापन्न विवक्षित करके श्रवण नक्षत्र गतिसमापन्न विवक्षित किया जाता है, तब वह पूर्वी भाग से चन्द्रमा को प्राप्त करता है, पूर्वी भाग से प्राप्त करके तीस मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहता है, तत्पश्चात् योग को बदल देता है और योग को त्याग करके योगरहित हो जाता है ।

इसी प्रकार इन्ही शब्दो मे तीस मुहूर्त्त और पैंतालीस मुहूर्त्त कहना चाहिए–यावत्–उत्तराषाढा ।
जब चन्द्र को गतिसमापन्न विवक्षित करके ग्रह की गति का विचार किया जाता है तब वह उसे पूर्वी भाग से प्राप्त करता है, पूर्वी भाग से प्राप्त करके चन्द्रमा के साथ योग करता है, तत्पश्चात् उस योग को बदल देता है, बदल कर त्याग देता है और योगरहित हो जाता है ।

जब सूर्य को गतिसमापन्न विवक्षित करके अभिजित नक्षत्र के गतिपरिमाण का विचार किया जाता है तब वह अभिजित नक्षत्र सूर्य को पूर्वभाग से प्राप्त करता है। पूर्वभाग से प्राप्त करके चार अहोरात्र और छह मुहूर्त तक सूर्य के साथ योग करता है, तत्पश्चात् योग को बदल देता है और त्याग देता है तथा योगरहित हो जाता है।

इस प्रकार छह अहोरात्र और इक्कीस मुहूर्त, तेरह अहोरात्र और बारह मुहूर्त, बीस अहोरात्र और तीन मुहूर्त (क्रम से) सब कह लेने चाहिए—यावत्—उत्तराषाढा।

चन्द्र का नक्षत्रों से योग

[१८] तत्थ खलु इमे दसविधे जोए पण्णत्ते, तजहा—

वसभाणुजोए १, वेणुयाणुजोए २, मचे ३, मचाइमचे ४, छत्ते ५, छत्तातिच्छत्ते ६, जुअणद्धे ७, घणसमद्दे ८, पीणिते ९, मण्डूकप्पुते १०, णाम दसमे।

[१] प्र०—एतासि ण पंचण्ह संवच्छराण छत्ताइच्छत्त जोय चदे कसि देससि जोएति ?

उ०—ता जबुद्दीवस्स दीवस्स पाईण-पडिणीआयताए उदीणदाहिणायताए जीवाए मण्डल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता, दाहिण-पुरच्छिमिल्लसि चउभागमण्डलसि सत्तावीस भागे उवादिणावेत्ता,

अट्ठावीसतिभागं वीसधा छेत्ता, अट्ठारसभागे उवादिणावेत्ता तिहिं भागेहिं दोहिं कलाहिं दाहिणपुरच्छिमिल्ल चउब्भागमडल असपत्ते

एत्थ ण से चदे छत्तातिच्छत्त जोय जोएति,

उप्पि चदो, मज्झे णक्खत्ते, हेट्ठा आइच्चे।

[२] प्र०—त समय च णं चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता चित्ताहिं चरमसमए।

—सूर्य. सूत्र. ७८ पृ २३३

—चन्द्र. सूत्र ७८

[१८] दस प्रकार के ये योग कहे गए हैं—(१) वृषभानुजात (२) वेणुकानुजात (३) मच (४) मचातिमच (५) छत्र (६) छत्रातिछत्र (७) युगनद्ध (८) घनसम्मर्द (९) प्रीणित और (१०) मडूकप्लुत।

[१] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे से चन्द्रमा छत्रातिछत्र योग से किस देश मे युक्त होता है ?

उ०—जम्बूद्वीप के ऊपर पूर्व-पश्चिम लम्बी और उत्तर-दक्षिण लम्बी जीवा से एक मण्डल के १२४ भाग किए जाएँ। [उसके चार भाग हो जाते है—एक भाग उत्तर-पूर्व मे, एक दक्षिण-पूर्व मे एक दक्षिण-पश्चिम मे, एक पश्चिम-उत्तर मे।] इनमे से दक्षिण-पूर्व के चतुर्भाग मडल के २७ भाग निकाल कर २८ वे भाग के २० भाग किए जाएँ। इनमे से १८ भाग निकाल कर (१९ वें भाग के) तीन भाग किये जाएँ। इनके दो भागो-कलाओ से दक्षिण-पूर्व के चतुर्भाग मण्डल को असप्राप्त होता हुआ चन्द्र छत्रातिछत्र योग से युक्त होता है (इस समय मे) ऊपर चन्द्र, मध्य मे नक्षत्र एव नीचे सूर्य होता है।

[२] प्र०—उस समय चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह चित्रा के साथ (चित्रा के) चरम समय मे (योग करता है)।

[१९] तत्थ खलु इमाओ पच वासिकीओ, पच हेमंताओ आउट्टिओ पण्णत्ताओ।

[१] प्र०—ता एएसि णं पचण्ह संवच्छराण पढम वासिक्कीं आउट्टिं चदे केणं णक्खत्तेणं जोएति ?

उ०—ता अभीयिणा, अभीयिस्स पढमसमएण,

[२] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पूसेण, पूस्स एगूणवीस मुहुत्ता तेतालीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता, तेत्तीस चुण्णिया भागा सेसा।

[३] प्र०—ता एएसि ण पचण्ह सवच्छराण दोच्च वासिक्क आउट्टि चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता सठाणाहि सठाणाण एक्कारस मुहुत्ते ऊतालीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, तेपण्ण चुण्णिया भागा सेसा।

[४] प्र०—त समय सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पूसेण, पूसस्स ण त चेव ज पढमया।

[५] प्र०—एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण तच्च वासिक्क आउट्टि चदे केण णक्खत्तेण जोएइ ?

उ०—ता विसाहाहि, विसाहाण तेरस मुहुत्ता चउप्पण्ण च बावट्ठिभागा मुहुत्तास्स, बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, चत्तालीस चुण्णिया भागा सेसा।

[६] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पूसेण, पूसस्स त चेव।

[७] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण चउत्थ वासिक्कि आउट्टि चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता रेवतीहि, रेवतीण पणवीस मुहुत्ता (दुवत्तीस च) वासट्ठिभागा मुहुत्तस्स वासट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, वत्तीस चुण्णिया भागा सेसा।

[८] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पूसेण, पूसस्स त चेव।

[९] प्र०—ता एएसि ण पचण्ह सवच्छराण पचम वासिक्कि आउट्टि चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पुव्वाहि फग्गुणीहि, पुव्वाफग्गुणीण बारस मुहुत्ता सत्तालीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, तेरस चुण्णिया भागा सेसा।

[१०] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पूसेण, पूसस्स त चेव।

—सूर्य सूत्र ७६ पृ २१९-२२०
—चन्द्र सूत्र ७६

[१६] यहा ये पाच वर्षाकाल सबधी एव पाच हेमन्तकाल सबधी आवृत्तिया कही गई हैं।

[१] प्र०—उक्त पाच सवत्सरो मे वर्षा सबधी प्रथम आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह अभिजित के साथ, अभिजित के प्रथम समय मे (योग करता है)।

[२] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह पुष्य के साथ, पुष्य के $१९ + \frac{४३}{६२} + (\frac{१}{६२} \times \frac{१}{६७} \times \frac{३३}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहने पर (योग करता है)।

[३] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे वर्षा सबधी द्वितीय आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह सस्थानो के साथ, सस्थानो के $११ + \frac{४६}{६२} + (\frac{१}{६२} \times \frac{१}{६७} \times \frac{५३}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहने पर (योग करता है।)

[४] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह पुष्य के साथ प्रथम आवृत्ति के समान ही (योग करता है।)

[५] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे वर्षा सबधी तृतीय आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह विशाखाओ के साथ, विशाखा के १३ + $\frac{५४}{६२}$ + ($\frac{१}{६२}$ × $\frac{१}{६७}$ × $\frac{४०}{१}$) मुहूर्त शेष रहने पर (योग करता है।)

[६] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह पुष्य के साथ उसी प्रकार (योग करता है।)

[७] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे वर्षा सबधी चतुर्थ आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह रेवती के साथ, रेवती के २५ + $\frac{३२}{६२}$ + ($\frac{१}{६२}$ × $\frac{१}{६७}$ × $\frac{२६}{१}$) मुहूर्त शेष रहने पर (योग करता है।)

[८] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह उसी प्रकार पुष्य के साथ (योग करता है।)

[९] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे वर्षा सबधी पचम आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह पूर्वाफाल्गुनी के साथ पूर्वाफाल्गुनी के १२ + $\frac{४७}{६२}$ + ($\frac{१}{६२}$ × $\frac{१}{६७}$ × $\frac{१३}{१}$) मुहूर्त शेष रहने पर (योग करता है।)

[१०] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह उसी प्रकार पुष्य के साथ (योग करता है।)

[२०][१] प्र०—ता एएसि ण पचण्ह सवच्छराणं पढम हेमंति आउट्टिं चदे केणं णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता हत्थेणं, हत्थस्स णं पंच मुहुत्ता पण्णास च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, ट्ठ चुण्णिया भागा सेसा।

[२] प्र०—त समयं च णं सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—उत्तराहिं आसाढाहिं, उत्तराणं आसाढाण चरिमसमए।

[३] प्र०—ता एएसि णं पचण्ह संवच्छराणं दोच्चं हेमंति आउट्टिं चदे केण णक्खत्तेणं जोएति ?

उ०—ता सतभिसयाहिं, सतभिसयाइ दुन्नि मुहुत्ता अट्ठावीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता, छत्तालीस चुण्णिया भागा सेसा।

[४] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता उत्तराहिं आसाढाहिं, उत्तराणं आसाढाणं चरिमसमए।

[५] प्र०—तेसिं ण पचण्ह सवच्छराण तच्च हेमंति आउट्टिं चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पूसेणं, पूसस्स एकूणवीस मुहुत्ता तेतालीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता, तेत्तीस चुण्णिया भागा सेसा।

[६] प्र०—त समय च णं सूरे केण णक्खत्तेणं जोएति ?

उ०—ता उत्तराहिं आसाढाहिं, उत्तराण आसाढाणं चरिमसमए।

[७] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण चउत्थि हेमंति आउट्टि चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता मूलेण, मूलस्स छ मुहुत्ता अट्ठावन्न च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, वीस चुण्णिया भागा सेसा ।

[८] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता उत्तराहि आसाढाहि, उत्तराण आसाढाण चरिमसमए ।

[९] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण पचम हेमंति आउट्टि चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—कत्तियाहि, कत्तियाण अट्ठारस मुहुत्ता छत्तीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, छ चुण्णिया भागा सेसा ।

[१०] प्र०—त समयं च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता उत्तराहि आसाढाहि, उत्तराण आसाढाण चरिमसमए ।

—सूर्य सूत्र ७७ पृ २२८–२९
—चन्द्र ,, ,,

[२०][१] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे हेमन्त सम्वन्धी प्रथम आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह हस्त नक्षत्र के साथ, हस्त नक्षत्र के $५+\frac{०}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६०}{१})$ मुहूर्त्त शेप रहने पर (योग करता है) ।

[२] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह उत्तराषाढा के साथ उत्तराषाढा के चरम समय मे (योग करता है) ।

[३] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे हेमन्त सम्वन्धी द्वितीय आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह शतभिषा के साथ, शतभिषा के $२+\frac{२५}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{४६}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहने पर (योग करता है) ।

[४] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह उत्तराषाढा के साथ उत्तराषाढा के चरम समय मे (योग करता है) ।

[५] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे हेमन्त सम्बन्धी तृतीय आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह पुष्य के साथ, पुष्य के $१९+\frac{४३}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{३३}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहने पर (योग करता है) ।

[६] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह उत्तराषाढा के साथ उत्तरषाढा के चरम समय मे (योग करता है) ।

[७] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे हेमन्त सम्बन्धी चतुर्थ आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह मूल नक्षत्र के साथ, मूल नक्षत्र के $६+\frac{५८}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{२०}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहने पर (योग करता है) ।

[८] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह उत्तराषाढा के साथ उत्तराषाढा के चरम समय मे (योग करता है) ।

[९] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे हेमन्त सम्वन्धी पचम आवृत्ति मे चन्द्र किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह कृत्तिका के साथ कृत्तिका के $१८ \times \frac{३६}{६२} + (\frac{१}{६२} \times \frac{१}{६७} \times \frac{६}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहने पर (योग करता है)।

[१०] प्र०—उस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—वह उत्तराषाढा के साथ उत्तराषाढा के चरम समय मे (योग करता है)।

पूर्णिमा में चन्द्र का नक्षत्रों के साथ योग

[१८][१] प्र०—ता एएसि णं पंचण्ह संवच्छराणं पढम पुण्णमासिणि चदे केणं णक्खत्तेणं जोएति ?

उ०—ता धणिट्ठाहिं, धणिट्ठाण तिण्णि मुहुत्ता एकूणवीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता, पण्णट्ठि चुण्णिया भागा सेसा।

[२] प्र०—तं समय च ण सूरिए केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पुव्वाफग्गुणीहिं, पुव्वाफग्गुणीण अट्ठावीसे मुहुत्ता अट्ठतीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता, दुवत्तीस चुण्णिया भागा सेसा।

[३] प्र०—ता एएसि ण पचण्ह सवच्छराण दोच्च पुण्णिमासिणि चंदे केणं णक्खत्तेणं जोएति ?

उ०—ता उत्तराहिं पोट्ठवताहिं, उत्तराण पोट्ठवताण सत्तावीसं मुहुत्ता चोद्स य बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स बावट्ठि-भाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, बावट्ठि चुण्णिया भागा सेसा।

[४] प्र०—तं समयं च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता उत्तराहिं फग्गुणीहिं, उत्तराफग्गुणीण सत्त मुहुत्ता तेत्तीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता, एक्कतीस चुण्णिया भागा सेसा।

[५] प्र०—ता एतेसि ण पचण्हं सवच्छराण तच्च पुण्णिमासिणि चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता अस्सिणीहिं, अस्सिणीणं इक्कवीसं मुहुत्ता णव य एगट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, तेवट्ठि चुण्णिया भागा सेसा।

[६] प्र०—त समयं च णं सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता चित्ताहिं,चित्ताण एक्को मुहुत्तो अट्ठावीस च बावट्ठि भागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता तीस चुण्णिया भागा सेसा।

[७] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराणं दुवालसमं पुण्णिमासिणि चंदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता उत्तराहिं आसाढाहिं, उत्तराण च आसाढाणं छदुवीसं मुहुत्ता छदुवीसं च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठि भाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता,
चउपण्ण चुण्णिया भागा सेसा।

[८] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेणं जोएति ?

उ०—ता पुणव्वसुणा, पुणव्वसुस्स सोलसमुहुत्ता अट्ठ य बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, वीस चुण्णिया भागा सेसा।

[९] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण चरम बावट्ठि पुण्णिमासिणि चंदे केणं णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—उत्तराहिं आसाढाहिं, उत्तराण आसाढाण चरमसमए,

[१०] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता पुस्सेण, पुस्सस्स एकूणवीस मुहुत्ता तेतालीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स, बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, तेतीस चुण्णिया भागा सेसा।

—सूर्य० सूत्र ६७ पृ० १८५-८६-
—चन्द्र ,, ,,

[१८][१] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे प्रथम पूर्णिमा को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—धनिष्ठा से (योग करता है)। इस समय धनिष्ठा $३\frac{१६}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६५}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहता है।

[२] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—पूर्वाफाल्गुनी से (योग करता है)। इस समय पूर्वाफाल्गुनी के $२८\frac{३५}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{३२}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[३] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे द्वितीय पूर्णिमा को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—उत्तरभाद्रपदा से (योग करता है)। इस समय उत्तरभाद्रपदा के $२७\frac{१४}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६४}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[४] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—उत्तरफाल्गुनी से (योग करता है)। इस समय उत्तरफाल्गुनी के $७\frac{३३}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{३१}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते है।

[५] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे तृतीय पूर्णिमा को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—अश्विनी से (योग करता है)। इस समय अश्विनी के $२१\frac{६}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६३}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[६] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—चित्रा से (योग करता है)। इस समय चित्रा के $१\frac{२८}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{३०}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[७] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे बारहवी पूर्णिमा को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—उत्तराषाढा से (योग करता है)। इस समय उत्तराषाढा के $२६\frac{२६}{६२}+(\frac{३}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{५४}{१})$ मुहुत्त शेष रहते हैं।

[८] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—पुनर्वसु से (योग करता है)। इस समय पुनर्वसु के $१६\frac{८}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६२}\times\frac{२०}{१})$ मुहुत्त शेष रहते हैं।

[९] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे अन्तिम बासठवी पूर्णिमा को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—उत्तराषाढा से (योग करता है)। इस समय उत्तराषाढा का अन्तिम समय होता है।

[१०] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र मे योग करता है ?

उ०—पुष्य से (योग करता है)। इस समय पुष्य के $१९\frac{४३}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{३३}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

अमावस्या में चन्द्र का नक्षत्रों के साथ योग

[१९][१] प्र०—एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण पढम अमावास चदे केण णक्खत्तेण जोएति ?

उ०—ता अस्सेसाहिं, अस्सेसाण एक्के मुहुत्ते चत्तालीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, बावट्ठि चुण्णिया सेसा।

[२] प्र०—तं समयं च णं सूरे केणं णक्खत्तेणं जोएति ?
उ०—ता अस्सेसाहिं चेव, अस्सेसाणं एक्को मुहुत्तो चत्तालीसं च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं सत्तट्ठिधा छेत्ता, बावट्ठि चुण्णिया भागा सेसा।

[३] प्र०—ता एएसि ण पंचण्हं संवच्छराणं दोच्चं अमावासं चदे केणं णक्खत्तेणं जोएति ?
उ०—ता उत्तराहिं फग्गुणीहिं, उत्तराण फग्गुणीणं चत्तालीसं मुहुत्ता पणतीस बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, पण्णट्ठि चुण्णिया भागा सेसा।

[४] प्र०—तं समय च णं सूरे केणं णक्खत्तेणं जोएति ?
उ०—ता उत्तराहिं चेव फग्गुणीहिं, उत्तराण फग्गुणीणं जहेव चंदस्स।

[५] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराणं तच्च अमावास चदे केण णक्खत्तेणं जोएति ?
उ०—ता हत्थेण, हत्थस्स चत्तारि मुहुत्ता तीस च बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठिभागं च सत्तट्ठिधा छेत्ता, बावट्ठि चुण्णिया भागा सेसा।

[६] प्र०—त समय च णं सूरे केणं णक्खत्तेण जोएति ?
उ०—ता हत्थेण चेव, हत्थस्स जहा चदस्स।

[७] प्र०—ता एएसि ण पंचण्ह सवच्छराण दुवालसमं अमावासं चदे केणं णक्खत्तेण जोएति ?
उ०—अद्दाहिं, अद्दाण चत्तारि मुहुत्ता दस य बावट्ठिभागा मुहुत्तस्स बावट्ठि च सत्तट्ठिधा छेत्ता, चउपण्ण चुण्णिया भागा सेसा।

[८] प्र०—त समय च ण सूरे केण णक्खत्तेण जोएति ?
उ०—ता अद्दाहिं चेव, अद्दाण जहा चदस्स।

[९] प्र०—ता एएसि णं पंचण्ह सवच्छराण चरिमं बावट्ठिं अमावास चदे केण णक्खत्तेणं जोएति ?
उ०—ता पुणव्वसुणा, पुणव्वसुस्स बावीस मुहुत्ता बायालीस च बासट्ठिभागा मुहुत्तस्स सेसा।

[१०] प्र०—त समयं च णं सूरे केण णक्खत्तेणं जोएति ?
उ०—ता पुणव्वसुणा चेव-जाव-पुणव्वसुस्स ण जहा चंदस्स।

—सूर्य० सूत्र ६८ पृ० १६०-६१
—चन्द्र० ,, ,,

[१६] [१] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे प्रथम अमावस्या को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?
उ०—आश्लेषा से (योग करता है)। इस समय आश्लेषा के $१\frac{४०}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६६}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[२] प्र०—इस सयय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?
उ०—आश्लेषा से (योग करता है)। इस समय आश्लेषा के $१\frac{४०}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६६}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[३] प्र०—इन पाचो सवत्सरो मे द्वितीय अमावस्या को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?
उ०—उत्तर फाल्गुनी से (योग करता है)। इस समय उत्तरफाल्गुनी के $४०\frac{३५}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[४] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?
उ०—उत्तरफाल्गुनी से (योग करता है)। इस समय उत्तरफाल्गुनी के चन्द्र के समान ही (मुहूर्त्त शेष रहते हैं)।

[५] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे तृतीय अमावस्या को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—हस्त नक्षत्र से (योग करता है)। इस समय हस्त के $४\frac{३०}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६४}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते हैं।

[६] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—हस्त से ही (योग करता है)। इस समय हस्त के चन्द्र के ही समान (मुहूर्त्त शेष रहते हैं)।

[७] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे बारहवी अमावस्या को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—आर्द्रा से (योग करता है)। इस समय आर्द्रा के $४\frac{१०}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{५४}{१})$ मुहूर्त्त शेष रहते है।

[८] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—आर्द्रा से ही (योग करता है)। इस समय आर्द्रा के चन्द्र के समान ही (मुहूर्त्त शेष रहते हैं)।

[९] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे अन्तिम बासठवी अमावस्या को चन्द्र किस नक्षत्र से योग करता है ?

उ०—पुनर्वसु से (योग करता है)। इस समय पुनर्वसु के $२२\frac{४३}{६२}$ मुहूर्त्त शेप रहते हैं।

[१०] प्र०—इस समय सूर्य किस नक्षत्र के साथ योग करता है ?

उ०—पुनर्वसु से ही (योग करता है)। इस समय पुनर्वसु के चन्द्र के ही समान (मुहूर्त्त शेष रहते हैं)।

[२०] **ता जेणं अज्ज णक्खत्तेण चदे जोय जोएति जसि देससि,**
से ण इमाणि अट्ठ एकूणवीसाणि मुहुत्तसताइ चउवीस च बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, छावट्ठि चुण्णिया भागे उवायिणावेत्ता,
पुणरवि से चदे अण्णेण सरिसएणं चेव णक्खत्तेण जोय जोएति अण्णसि देससि।

[२१] **ता जेण अज्ज णक्खत्तेण चदे जोय जोएति जसि देससि,**
से ण इमाइ सोलस अट्ठतीसे मुहुत्तसताइ अउणापण्ण च बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स बावट्ठिभाग च सत्तट्ठिधा छेत्ता, पण्णट्ठि चुण्णिया भागे उवायिणावेत्ता,
पुणरवि से ण चदे तेण चेव णक्खत्तेण जोय जोएति अण्णसि देससि।

[२२] **ता जेण अज्ज णक्खत्तेण चदे जोय जोएति जसि देससि,**
से ण इमाइ चउप्पण्णमुहुत्तसहस्साइ णव य मुहुत्तसताइ उवादिणावित्ता,
पुणरवि से चदे अण्णेण तारिसएण जोय जोएति तसि देससि।

[२३] **ता जेण अज्ज णक्खत्तेण चदे जोय जोएति, जसि देससि,**
से ण इमाइ एग लक्ख नव य सहस्से अट्ठ य मुहुत्तसए उवायिणावित्ता पुणरवि से चदे तेण णक्खत्तेण जोय जोएइ तसि देससि।

[२४] **ता जेण अज्ज णक्खत्तेण सूरे जोय जोएति जसि देससि,**
से ण इमाइ तिण्णि छावट्ठाइ राइदियसताइ उवादिणावेत्ता,
पुणरवि से सूरिए अण्णेण तारिसएण चेव णक्खत्तेण जोय जोएति तसि देससि।

[२५] **ता जेण अज्ज णक्खत्तेण सूरे जोय जोएति जसि देससि,**
से ण इमाइ सत्तदुतीस राइदियसताइ उवाइणावेत्ता,
पुणरवि से ण सूरे तेण चेव णक्खत्तेण जोय जोएति तसि देससि।

[२६] ता जेणं अज्ज णक्खत्तेण सूरे जोय जोएति जसि देससि,
से णं इमाइ अट्ठारस बीसाइं राइंदियसताइ उवादिणावेत्ता,
पुणरवि सूरे अण्णेणं चेव णक्खत्तेण जोय जोएति तसि देससि ।

[२७] ता जेण अज्ज णक्खत्तेण सूरे जोयं जोएति जसि देसंसि,
तेणं इमाइं छत्तीस सट्ठाइ राइदियसयाइं उवाइणाविता,
पुणरवि से सूरे तेण चेव णक्खत्तेणं जोय जोएति तसि देसंसि ।

—सूर्य० सूत्र ६९ पृ० १९४
—चन्द्र० ,, ,,

[२०] जिस नक्षत्र के साथ आज (किसी विवक्षित दिन मे) चन्द्र का जिस देश मे योग होता है, उस चन्द्र का $८१९\frac{२४}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६६}{१})$ मुहूर्त्त व्यतीत होने पर पुन उसी के समान (नाम वाले) अन्य नक्षत्र के साथ अन्य देश मे योग होता है ।

[२१] जिस नक्षत्र के साथ आज चन्द्र का जिस देश मे योग होता है, उस चन्द्र का $१६३८\frac{४६}{६२}+(\frac{१}{६२}\times\frac{१}{६७}\times\frac{६५}{१})$ मुहूर्त्त व्यतीत होने पर पुन उसी नक्षत्र के साथ अन्य देश मे योग होता है ।

[२२] आज जिस नक्षत्र के साय चन्द्र का जिस देश मे योग होता है, उस चन्द्र का ५४९०० मुहूर्त्त व्यतीत होने पर पुनः उसी के समान (नाम के) अन्य (नक्षत्र) के साथ उसी देश मे योग होता है ।

[२३] आज चन्द्रमा जिस नक्षत्र के साथ जिस देश मे योग करता है वही एक लाख, नौ हजार, आठ सौ मुहूर्त्त व्यतीत होने पर पुन उस नक्षत्र के साथ उस देश मे योगयुक्त होता है ।

[२४] आज जिस नक्षत्र के साथ सूर्य जिस देश मे योगयुक्त होता है, वही सूर्य ३६६ अहोरात्र व्यतीत होने पर पुनः उसके समान (नाम वाले) अन्य नक्षत्र के साथ उसी देश मे योगयुक्त होता है ।

[२५] आज जिस नक्षत्र के साथ सूर्य जिस देश मे योगयुक्त होता है, वही सूर्य ७३२ अहोरात्र व्यतीत होने पर पुन उसी नक्षत्र के साथ उसी देश मे योगयुक्त होता है ।

[२६] आज जिस नक्षत्र के साथ सूर्य जिस देश मे योगयुक्त होता है, वही सूर्य १८३० रात्रि-दिन व्यतीत होने पर पुनः (उसी के समान) अन्य नक्षत्र के साथ उसी देश मे योगयुक्त होता है ।

[२७] आज सूर्य जिस नक्षत्र के साथ जिस देश मे योग करता है वही सूर्य ३६६० रात्रि-दिन व्यतीत होने पर उसी नक्षत्र के साथ उसी देश मे योगयुक्त होता है ।

पूर्णिमा में चन्द्रयोग

[२८] तत्थ खलु इमाओ बावट्ठि पुण्णिमासिणीओ, बावट्ठि अमावासाओ पण्णत्ताओ—

[१] प्र०—ता एएसि ण पचण्ह सवच्छराण पढम पुण्णिमासिणि चदे कसि देससि जोएइ ?
उ०—ता जसि ण देससि चदे चरिमं बावट्ठि पुण्णिमासिणि जोएति,
ताए तेणं पुण्णिमासिणिट्ठाणातो मडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता
दुबत्तीस भागे उवातिणावित्ता एत्थ ण से चदे पढमं पुण्णिमासिणि जोएति ।

[२] प्र०—ता एएसि ण पचण्हं सवच्छराण दोच्च पुण्णिमासिणि चदे कसि देसंसि जोएति ?
उ०—ता जसि णं देससि चदे पढम पुण्णिमासिणि जोएति,
ता तेण पुण्णिमासिणिट्ठाणातो मंडल चउवीसेण सतेण छेत्ता दुबत्तोस भागे उवाइणावेत्ता
एत्थ ण से चदे दोच्चं पुण्णिमासिणि जोएति ।

[३] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह् सवच्छराण तच्च पुण्णिमासिणि चदे कसि देससि जोएति ?

उ०—ता जसि ण देससि चदो दोच्च पुण्णिमासिणि जोएति,
ताते पुण्णिमासिणीठाणातो मंडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता दुबत्तीसे भागे उवाइणावेत्ता
एत्थ ण तच्च चादे पुण्णिमासिणि जोएति ।

[४] प्र०—ता एतेण पचण्ह् सवच्छराण दुवालसम पुण्णिमासिणि चादे कसि देससि जोएति ?

उ०—ता जसि ण देससि चदे तच्च पुण्णिमासिणि जोएति,
ताते पुण्णिमासिणिट्ठाणाते मडल चउवीसेण सतेण छेत्ता दोण्णि अट्ठासीते भागसते उवायिणावेत्ता
एत्थ ण चदे दुवालसमं पुण्णिमासिणि जोएति ।
एव खलु एतेणुवाएण ताते २ पुण्णिमासिणिट्ठाणाते मडल चउवीसेण सतेण छेत्ता वुबत्तीस भागे
उवातिणावेत्ता तसि २ वेससि त त पुण्णिमासिणि चदे जोएति ।

[५] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह् सवच्छराण चरम बावट्ठि पुण्णिमासिणि चदे कसि देससि जोएति ?

उ०—ता जबुद्दीवस्स ण दीवम्स पाईण-पडीणायताए उदीण-दाहिणायताए जीवाए मडल चउव्वीसेण
सतेण छेत्ता दाहिणिल्लसि चउब्भागमडलसि सत्तावीस चउभागे उवायणावेत्ता अट्ठावीसतिभागे
वीसहा छेत्ता अट्ठारसभागे उवातिणावेत्ता तिहिं भागेहिं वोहि य कलाहिं पच्चत्थिमिल्ल चउब्भाग-
मडल असपत्ते,
एत्थ ण चादे चरिम वावट्ठि पुण्णिमासिणि जोएति ।

—सूर्य सूत्र ६३ पृ १८०
—चन्द्र ,, ,,

[२८] [१] प्र०—(एक युग मे) ६२ पूर्णिमाए एव ६२ अमावस्याए होती हैं । इन पाच सवत्सरो मे प्रथम पूर्णिमा
को चन्द्र किस देश (स्थान) मे योग करता है ?

उ०—जिस देश मे चन्द्र अन्तिम ६२ वी पूर्णिमा को योग करता है उस पूर्णिमास्थान से मडल के १२४
भाग करने पर प्राप्त होने वाले ६२ वें भाग मे पहुच कर चन्द्र प्रथम पूर्णिमा को योग करता है ।

[२] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे द्वितीय पूर्णिमा को चन्द्र किस देश मे योग करता है ।

उ०—जिस देश मे चन्द्र प्रथम पूर्णिमा को योग करता है उस पूर्णिमास्थान से मडल के १२४ भाग
करने पर प्राप्त होने वाले ३२ वें भाग मे पहुच कर चन्द्र द्वितीय पूर्णिमा को योग करता है ।

[३] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे तृतीय पूर्णिमा को चन्द्र किस देश मे योग करता है ?

उ०—जिस देश मे चन्द्र द्वितीय पूर्णिमा को योग करता है उस पूर्णिमास्थान से मडल के १२४ भाग
करने पर प्राप्त होने वाले ३२ वें भाग मे पहुच कर चन्द्र तृतीय पूर्णिमा को योग करता है ।

[४] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे वारहवी पूर्णिमा को चन्द्र जिस देश मे योग करता है ?

उ०—जिस देश मे चन्द्र तृतीय पूर्णिमा को योग करता है उस पूर्णिमास्थान से मण्डल के १२४ भाग
करने पर प्राप्त होने वाले (३२ × ९ =) २८८ वें भाग मे पहुच कर चन्द्र वारहवी पूर्णिमा को
योग करता है ।

इस प्रकार इसी क्रम से तत्-तत् पूर्णिमास्थान से मण्डल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले
३२ वें भाग मे पहुच कर चन्द्र तत्-तत् देश मे तत्-तत् पूर्णिमा को योग करता है ।

[५] प्र०—इन पांच सवत्सरो मे अन्तिम वासठवी पूर्णिमा को चन्द्र किस देश मे योग करता है ?

उ०—जम्बूद्वीप के पूर्व–पश्चिम मे लबी एव उत्तर–दक्षिण मे लम्बी जीवा से मण्डल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाला दक्षिण चतुर्भाग मण्डल का २७ वा भाग पूर्ण कर २८ वें भाग के कुल २० भागो मे से १८ वें भाग को समाप्त कर १९ वें भाग के तीन भागो तथा दो कलाओ से पश्चिम के चतुर्भाग मण्डल को असम्प्राप्त कर यही चन्द्र अन्तिम बासठवी पूर्णिमा को योग करता है ।

पूर्णिमा में सूर्ययोग

[२९][१] प्र०—ता एएसि ण पचण्ह सवच्छराण पढमं पुण्णिमासिणि सूरे कसि देससि जोएति ?

उ०—ता जसि णं देससि सूरे चरिम बावट्ठि पुण्णिमासिणि जोएति,
ताते पुण्णिमासिणिट्ठाणातो मडलं चउव्वीसेण सतेण छेत्ता चउणवति भागे उवातिणावेत्ता,
एत्थ ण सूरिए पढम पुण्णिमासिणि जोएइ ।

[२] प्र०—ता एएसि णं पंचण्हं सवच्छराण दोच्चं पुण्णिमासिणि सूरे कसि देसंसि जोएति ?

उ०—ता जसि णं देससि सूरे पढम पुण्णिमासिणि जोएइ,
ताए पुण्णिमासिणीठाणाओ मडल चउवीसं सएण छेत्ता चउणवइभागे उवाइणावित्ता,
एत्थ ण से सूरे दोच्चं पुण्णिमासिणि जोएइ ।

[३] प्र०—ता एएसि णं पंचण्ह संवच्छराण तच्च पुण्णिमासिणि सूरे कसि देससि जोएइ ?

उ०—ता जसि णं देससि सूरे दोच्च पुण्णिमासिणि जोएति,
ताते पुण्णिमासिणिट्ठाणाते मंडल चउव्वीसेण छेत्ता, चउणवतिभागे उवातिणावेत्ता, एत्थ णं सूरे तच्च पुण्णिमासिणि जोएति ।

४] प्र०—ता एतेसि णं पंचण्हं संवच्छराण दुवालस पुण्णिमासिणि सूरे कसि देससि जोएति ?

उ०—ता जसि देससि सूरे तच्च पुण्णिमासिणि जोएइ ताते पुण्णिमासिणिट्ठाणाते मंडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता, अट्ठछत्ताले भागसते उवाइणावेत्ता एत्थ णं से सूरे दुवालसमं पुण्णिमासिणि जोएति ।
एव खलु एतेणुवाएणं ताते २ पुण्णिमासिणिट्ठाणाते मडलं चउव्वीसेणं सतेणं छेत्ता,
चउणवति २ भागे उवातिणावेत्ता, तसि २ ण देससि त त पुण्णिमासिणि सूरे जोएति ।

५] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण चरिमं बावट्ठि पुण्णिमासिणि सूरे कंसि देससिं जोएति ?

उ०—ता जबुद्दीवस्स ण पाईण-पडीणायताए उदीण-दाहिणायताए जीवाए मडलं चउव्वीसेणं सएण छेत्ता, पुरच्छिमिल्लसि चउभागमडलसि सत्तावीस भागे उवातिणावेत्ता, अट्ठावीसतिभागं वीसधा छेत्ता, अट्ठारसभागे उवादिणावेत्ता, तिहिं भागेहिं दोहि य कलाहिं दाहिणिल्ल चउभागमंडलं असंपत्ते, एत्थ ण सूरे चरिमं बावट्ठि पुण्णिमं जोएति ।

—सूर्य० सूत्र ६४ पृ.
—चन्द्र० ,, ,, १८२

[२९][१] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे प्रथम पूर्णिमा के दिन सूर्य किस देश मे योग करता है ?

उ०—जिस देश मे सूर्य अन्तिम ६२ वी पूर्णिमा के दिन योग करता है, उस पूर्णिमास्थान से मडल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ९४ वें भाग मे पहु च कर यही सूर्य प्रथम पूर्णिमा के दिन योग करता है ।

[२] प्र०—इन पाच सवतसरो मे द्वितीय पूर्णिमा के दिन सूर्य किस देश से योग करता है ?

उ०—जिस देश मे सूर्य प्रथम पूर्णिमा के दिन योग करता है, उस पूर्णिमास्थान से मडल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ९४ वे भाग मे पहु च कर यही सूर्य द्वितीय पूर्णिमा के दिन योग करता है ।

[३] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे तृतीय पूर्णिमा के दिन सूर्य किस देश मे योग करता है ?

उ०—जिस देश मे सूर्य द्वितीय पूर्णिमा के दिन योग करता है, उस पूर्णिमास्थान से मडल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ९४ वें भाग मे पहु च कर यही सूर्य तृतीय पूर्णिमा के दिन योग करता है ।

[४] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे बारहवी पूर्णिमा के दिन सूर्य किस देश मे योग करता है ?

उ०—(जिस देश मे सूर्य तृतीय पूर्णिमा के दिन योग करता है) उस पूर्णिमास्थान से मडल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले (९४×९=) ८४६ वें भाग मे पहु च कर यही सूर्य बारहवी पूर्णिमा के दिन योग करता है ।

इस प्रकार इसी क्रम से तत्–तत् पूर्णिमास्थान से मडल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ९४ वें भाग मे पहु च कर तत्–तत् देश मे तत्–तत् पूर्णिमा के दिन सूर्य योग करता है ।

[५] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे अन्तिम बासठवी पूर्णिमा के दिन सूर्य किस देश मे योग करता है ?

जम्बूद्वीप की पूर्व-पश्चिम मे लबी एव उत्तर-दक्षिण मे लबी जीवा से मडल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाला पूर्वी चतुर्भाग मडल का २७ वा भाग पूर्ण कर २८ वें भाग के कुल २० भागो मे से १८ वें भाग को समाप्त कर १९ वें भाग के ३ भागो व दो कलाओ से दक्षिणी चतुर्भाग मडल को असप्राप्त कर यही सूर्य अन्तिम बासठवी पूर्णिमा के दिन योग करता है ।

अमावस्या में चन्द्रयोग

[३०][१] प्र०—ता एएसि ण पचण्ह सवच्छराण पढम अमावास चदे कसि देससि जोएति ?

उ०—ता जसि ण देससि चदे चरिमबासट्ठि अमावास जोएति,
ताते अमावासट्ठाणाते मडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता, दुबत्तीस भागे उवादिणावेत्ता,
एत्थ ण से चादे पढम अमावास जोएति ।
एव जेणेव अभिलावेण चादस्स पुण्णिमासिणीओ,
तेणेव अभिलावेणं अमावासाओ भाणितव्वाओ, बीइया, ततिया, दुवालसती ।
एंव खलु एतेणुवाएण ताते २ अमावासाठाणाते मडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता,
दुवीस २ भागे उवादिणावेत्ता, तसि २ देसंसि त त अमावास चदेण जोएति ।

[२] प्र०—ता एतेसि ण पचण्ह सवच्छराण चरम अमावास चादे कसि देससि जोएति ?
ता जसि ण देससि चदे चरिम बासट्ठि पुण्णिमासिणि जोएति,
ताते पुण्णिमासिणिट्ठाणाए मडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता सोलसभागे उक्कोवइत्ता,
एत्थ ण से चदे चरिम बावट्ठि अमावास जोएति ।

[३०][१] प्र०—इन पाच सवत्सरो मे प्रथम अमावस्या को चन्द्र किस देश मे योग करता है ?

उ०—जिस देश मे चन्द्र अन्तिम बासठवी अमावस को योग करता है, उस अमावस-स्थान से मण्डल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ३२ वें भाग मे पहुच कर यही चन्द्र प्रथम अमावस को योग करता है ।

इस प्रकार जिस ढग से चन्द्र की पूर्णिमाओ का कथन किया गया है, उसी ढग से चन्द्र की द्वितीय, तृतीय एव बारहवी–इन तीनो अमावस्याओ का भी कथन कर लेना चाहिए ।

इस प्रकार इसी क्रम से तत्–तत् अमावस्यास्थान से मण्डल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ३२ वें भाग मे पहुच कर तत्–तत् देश मे तत्–तत् अमावस को चन्द्र योग करता है ।

[२] प्र०—इन पांच संवत्सरों में अन्तिम अमावस को चन्द्र किस देश में योग करता है ?

उ०—जिस देश में चन्द्र अन्तिम बासठवीं पूर्णिमा को योग करता है, उस पूर्णिमास्थान से मण्डल के १२४ भागों में से १६ भाग पीछे जाकर यही चन्द्र अन्तिम बासठवीं अमावस को योग करता है।

अमावस्या में सूर्ययोग

[३१][१] **प्र०—ता एतेसि ण पंचण्ह सवच्छराण पढम (अमावास) सूरे कसि देससि जोएति ?**

उ०— ता जसि ण देसंसि सूरे चरिमं बावट्ठि अमावासं जोएति,
ताते अमावासट्ठाणाते मडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता चउणउतिभागे उवायिणावेत्ता,
एत्थ ण से सूरे पढम अमावास जोएति,
एव जेणेव अभिलावेणं सूरियस्स पुण्णिमासिणीओ, तेणेव अमावासाओ वि, तंजहा—
बिदिया, तइया, दुवालसमी।
एव खलु एतेणुवाएणं ताते अमावासट्ठाणाते मंडल चउव्वीसेण सतेण छेत्ता,
चउणउति २ भागे उवायिणावेत्ता, ता जसि ण देससि सूरे चरिम बावट्ठि पुण्णिमासिणं जोएति,
ताते पुण्णिमासिणिट्ठाणाते मडल चउव्वीसेणं सतेण छेत्ता, सत्तालीस भागे उक्कोवइत्ता,
एत्थ णं से सूरे चरिम बावट्ठि अमावास जोएति ।

—सूर्य सूत्र ६६ पृ० १८२
—चन्द्र „ „ „

[३२][१] प्र०—इन पाच संवत्सरों में प्रथम अमावस्या के दिन सूर्य किस देश में योग करता है ?

उ०—जिस देश में सूर्य अन्तिम बासठवीं अमावस्या के दिन योग करता है, उस अमावस्या-स्थान से मण्डल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ९४ वें भाग में पहुच कर यही सूर्य प्रथम अमावस्या के दिन योग करता है।

इस प्रकार जिस ढग से सूर्य की पूर्णिमाओं का कथन किया गया है, उसी ढग से अमावस्याओं का भी कथन कर लेना चाहिए, यथा-दूसरी, तीसरी और बारहवीं।

इस प्रकार इसी क्रम से तत्-तत् अमावस्या-स्थान से मण्डल के १२४ भाग करने पर प्राप्त होने वाले ९४ वे भाग में पहुच कर (चन्द्रमा योग करता है)।

जिस देश में सूर्य अन्तिम बासठवीं पूर्णिमा के दिन योग करता है, उस पूर्णिमास्थान से मण्डल के १२४ भागों में से ४७ भाग पीछे जाकर यही सूर्य अन्तिम बासठवीं अमावस्या को योग करता है।

सूर्यवर्णन

सूर्यदर्शन

[१] [१] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तसि दूरे अ मूले अ दीसति,
मज्झतिअमुहुत्तसि मूले अ दूरे अ दीसति,
अत्यमणमुहुत्तसि दूरे अ मूले अ दीसति, ?
उ०—हता, गोयमा ! त चेव—जाव—दीसति ।

[२] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! सूरिआ उग्गमणमुहुत्तसि अ, मज्झतिअमुहुत्तसि अ, अत्यमणमुहुत्तसि अ सव्वत्थ समा उच्चत्तेण ?
उ०—हता, त चेव—जाव—उच्चत्तेण ।

[३] प्र०—जइ ण भते ! जबुद्दीवे दीवे सूरिआ उग्गमणमुहुत्तसि अ, मज्झतिअमुहुत्तसि अ, अत्यमणमुहुत्तसि अ सव्वत्थ समा उच्चत्तेण,
कम्हा ण भते ! जबुद्दीवे दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तसि दूरे अ मूले अ दीसति ?
उ०—गोयमा ! लेसापडिघाएण उग्गमणमुहुत्तसि दूरे अ मूले अ दीसति इति,
लेसाहितावेण मज्झतिअमुहुत्तसि मूले अ दूरे अ दीसति,
लेसापडिघाएण अत्यमणमुहुत्तसि दूरे अ मूले अ दीसति,
एव खलु गोयमा ! त चेव—जाव—दीसति[1] ।

—जम्बू सु १३६ पृ ४५८

१–प्र०—जावइयाओ ण भते ! उवासतराओ उदयते सूरिए चक्खुप्फास हव्व आगच्छति, अत्यमते वि य ण सूरिए तावतियाओ चेव उवासतराओ चक्खुप्फास हव्व आगच्छति ?
उ०—हता, गोयमा ! जावइयाओ ण उवासतराओ उदयते सूरिए चक्खुप्फास० ।
अत्यमते वि सूरिए—जाव—हव्व आगच्छति ।
प्र०—जावइया ण भते ! खित्त उदयते सूरिए आयवेण सव्वओ समता ओभासेइ, उज्जोएइ, तवेइ, पभासेइ,
अत्यमते वि य ण सूरिए तावइय चेव खित्त आयवेण सव्वओ समता ओभासेइ, उज्जोएइ, तवेइ, पभासेइ, ?
उ०—हता, गोयमा ! जावतिय ण खेत्त—जाव—पभासेइ ।

—विवा० भाग १ श० १ उ० ६ प्र० १९७–१९८, पृ० १६१

प्र०—भगवन् ! जितने अवकाशान्तर से—आकाश के व्यवधान से उदित होता हुआ सूर्य दृष्टिगोचर होता है उतने ही अवकाशान्तर से क्या अस्त होता हुआ सूर्य भी दृष्टिगोचर होता है ?
उ०—हाँ, गौतम ! जितने अवकाशान्तर से उदित होता हुआ सूर्य दृष्टिगोचर होता है उतने ही अवकाशान्तर से अस्त होता हुआ सूर्य भी दृष्टिगोचर होता है ।

प्र०—भगवन् ! जितने क्षेत्र को उदित होता हुआ सूर्य अपने आतप से चारो ओर से प्रकाशित करता है, उद्योतित करता है, तप्त करता है, प्रभासित करता है, उतने ही क्षेत्र को क्या अस्त होता हुआ सूर्य भी अपने आतप से चारो ओर से प्रकाशित करता है, उद्योतित करता है, तप्त करता है, प्रभासित करता है ?
उ०—हाँ, गौतम ! जितने क्षेत्र को—यावत्—प्रभासित करता है

[१] [१] प्र०—भगवन् ! क्या जम्बूद्वीप मे सूर्य उदित होते समय दूर एव मूल मे दिखाई देते हैं, मध्याह्न मे मूल मे एव दूर दिखाई देते हैं तथा अस्त होते समय दूर एव मूल मे दिखाई देते हैं ?

उ०—हाँ, गौतम !—यावत्—वैसे ही दिखाई देते है।

[२] प्र०—भगवन् ! क्या जम्बूद्वीप मे सूर्य उदित होते समय, मध्याह्न मे एव अस्त होते समय सर्वत्र समान रूप से ऊँचे होते हैं ?

उ०—हाँ, इसी प्रकार ऊँचे होते हैं।

[३] प्र०—भगवन् ! यदि जम्बूद्वीप मे सूर्य उदयकाल मे, मध्याह्न मे एव अस्तकाल मे सर्वत्र समान रूप से ऊँचे होते हैं तो फिर क्यो जम्बूद्वीप मे सूर्य उदयकाल मे दूर एव मूल मे दिखाई देते हैं, इत्यादि ?

उ०—गौतम ! लेश्या—तेज के प्रतिघात से उदयकाल मे दूर एव मूल मे दिखाई देते हैं, लेश्या के अभिताप से मध्याह्न मे मूल मे एव दूर दिखाई देते हैं तथा लेश्या—तेज—के प्रतिघात से अस्तकाल मे दूर एव मूल मे दिखाई देते हैं। इस प्रकार हे गौतम ! ये इसी प्रकार दिखाई देते हैं।

[२] **जया ण सूरिए सव्वबाहिरिय मंडल उवसकमित्ता चार चरइ
तया ण इहगयस्स मणुस्सस्स एक्कतीसाए जोयणसहस्सेहिं अट्ठहि अ एक्कतीसेहिं जोयणसएहिं तीसाए सट्ठिभागे जोयणस्स सूरिए चक्खुप्फास हव्वमागच्छइ।**

—सम ३१ सूत्र ३

[३] **जया ण सूरिए बाहिराणतर तच्च मडल उवसकमित्ता ण चारं चरइ
तया ण इहगयस्स पुरिसस्स तेत्तीसाए जोयणसहस्सेहिं किंचि विसेसूणेहिं चक्खुप्फास हव्वमागच्छइ।**

—सम ३३, सूत्र ४

[४] **जया ण सूरिए सव्वब्भिंतरमडलं उवसकमित्ता ण चार चरइ
तया ण इहगयस्स मणूसस्स सत्तचत्तालीस जोयणसहस्सेहिं दोहि य तेवट्ठेहिं जोयणसएहिं एक्कवीसाए य सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सूरिए चक्खुफास हव्वमागच्छइ।**

—सम ४७, सूत्र १

[२] जब सूर्य सर्ववाह्य मडल मे उपसक्रान्त होकर गति करता है तब यहाँ स्थित मनुष्य को ३१८३१ $\frac{३०}{६०}$ योजन की दूरी से दिखाई देता है।

[३] जब सूर्य बाह्यानन्तर तीसरे मडल मे उपसक्रमण करके चलता है तब यहाँ स्थित पुरुष को ३३ हजार योजन से कुछ कम की दूरी से दृष्टिगोचर होता है।

[४] जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल मे उपसक्रान्त होकर चार करता है तब यहाँ के मनुष्य को ४७२६३ $\frac{२१}{६०}$ योजन से सूर्य दृष्टिगोचर होता है।

सूर्यविम्ब की लम्बाई-चौड़ाई

[५] [१] **प्र०—सूरमंडले ण भते ! केवइय आयामविक्खभेणं, केवइयं परिक्खेवेण, केवइयं बाहल्लेणं पण्णत्ते ?**

उ०—गोयमा ! अडयालीसं एकसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खभेणं, [1]

तं तिगुण सविसेसं परिक्खेवेण, चउवीसं एगसट्ठिभाए जोयणस्स बाहल्लेणं पण्णत्ते।

[५] [१] प्र०—भगवन् ! सूर्यमडल कितना लम्बा-चौडा, कितनी परिधि वाला एव कितना मोटा है ?

उ०—गौतम ! $\frac{४८}{६१}$ योजन लबा-चौडा, इससे तिगुनी से कुछ अधिक परिधि वाला और $\frac{२४}{६१}$ योजन मोटा है।

---

१ सम. ४८ सूत्र ३ पृ ८१

जया ण उत्तरड्ढे अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
तदा ण दाहिणड्ढे बारसमुहुत्ता राई भवति,
जया ण दाहिणड्ढे अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवति,
तदा ण उत्तरद्धे बारसमुहुत्ता राई भवति.
जया ण उत्तरद्धे अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवति,
तदा ण दाहिणद्धे बारसमुहुत्ता राई भवति,

एव णेतव्वे—
सगलेहि य अणतरेहि य एक्केक्के दो दो आलावका,
सव्वहि दुवालसमुहुत्ता राई भवति—जाव—
ता जया ण जबुद्दीवे २ दाहिणद्धे बारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति,
तदा ण उत्तरद्धे दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
जया ण उत्तरद्धे दुवालसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवति,
तदा ण दाहिणद्धे दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
तता ण जबुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स पुरच्छिम-पच्चत्थिमे ण णेवत्थि पण्णरसमुहुत्ते दिवसे,
णेवत्थि पण्णरसमुहुत्ता राई भवति,
वोच्छिण्णा ण तत्थ राइदिया पण्णत्ता समणाउसो ! एगे एवमाहंसु ।

—सूर्य सूत्र २६ पृ ८४–८५
—चन्द्र. सूत्र २६

[६] [१] प्र०—(सूर्य की) उदयसस्थिति कैसी कही गई है ?

उ०—इस विषय मे तीन प्रतिपत्तियाँ हैं—

एक मान्यता यह है कि जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब उत्तरार्ध मे भी अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है और जब उत्तरार्ध मे अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे भी अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है। जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे सत्तरह मुहूर्त्त का दिन होता है तब उत्तरार्ध मे भी सत्तरह मुहूर्त्त का दिन होता है और जब उत्तरार्ध मे सत्तरह मुहूर्त्त का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे भी सत्तरह मुहूर्त्त का दिन होता है।

इस प्रकार सोलह मुहूर्त्त का दिन, पन्द्रह मुहूर्त्त का दिन, चौदह मुहूर्त्त का दिन, तेरह मुहूर्त्त का दिन—यावत्—जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे (जब) बारह मुहूर्त्त का दिन (होता है) तब उत्तरार्ध मे भी बारह मुहूर्त्त का दिन होता है और जब उत्तरार्ध मे बारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे भी बारह मुहूर्त्त का दिन होता है, यह समझ लेना चाहिए। जब दक्षिणार्ध मे बारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब जम्बूद्वीपस्थित मेरुपर्वत के पूर्व-पश्चिम मे सदैव पन्द्रह मुहूर्त्त का दिन होता है एव सदैव पन्द्रह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। आयुष्मन् श्रमणो ! वहा रात्रि-दिन अवस्थित रहते हैं।

एक मान्यता ऐसी है।

एक (दूसरी) मान्यता ऐसी भी है कि जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर (अठारह मुहूर्त्त से कुछ न्यून) का दिन होता है तब उत्तरार्ध मे भी अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है। जब उत्तरार्ध मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे भी अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है। इस प्रकार सत्तरह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, सोलह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, पन्द्रह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, चौदह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तेरह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है—यावत्—जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे बारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब उत्तरार्ध मे भी बारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है। और जब उत्तरार्ध मे बारह मुहूर्त्ता-

न्तर का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे भी बारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, यह समझ लेना चाहिए। उस समय जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम मे न तो हमेशा पन्द्रह मुहूर्त्त का दिन होता है और न हमेशा पन्द्रह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। आयुष्मन् श्रमणो ! वहाँ रात्रि-दिन अनवस्थित रहते हैं। एक मान्यता ऐसी है।

एक (तीसरी) मान्यता ऐसी भी है कि जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब उत्तरार्ध मे बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है और जब उत्तरार्ध मे अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब दक्षिणार्ध मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब उत्तरार्ध मे बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है और जब उत्तरार्ध मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

इसी प्रकार एक-एक के बाद दो-दो आलापक (यथा—सत्तरह मुहूर्त्त तथा सत्तरह मुहूर्त्तानन्तर का दिन, इत्यादि) समझ लेने चाहिए।

रात्रि सर्वत्र बारह मुहूर्त्त की ही होती है,—यावत्—जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे बारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब उत्तरार्ध मे बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। और जब उत्तरार्ध मे बारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब दक्षिणार्ध मे बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। उस समय जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम मे न तो पन्द्रह मुहूर्त्त का दिन होता है और न पन्द्रह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। आयुष्मन् श्रमणो ! वहा रात्रि-दिन का व्यवच्छेद है।
एक (तीसरी) मान्यता ऐसी है।

वयं पुण एवं वदामो—
[तेणं कालेणं, तेणं समएणं चंपा नामं रायहाणी होत्था, वण्णओ।
तीसे णं चंपाए नयरीए पुण्णभद्दे नामं चेइए होत्था, वण्णओ।
सामी समोसढे—जाव—परिसा पडिगया।
तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे, गोयमगोत्ते णं—जाव—एवं वयासी—]

[२] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उदीण-पाईणमुग्गच्छ पाईण-दाहिणमागच्छंति,
पाईण-दाहिणमुग्गच्छ दाहिणपडीणमागच्छंति,
दाहिण-पडीणमुग्गच्छ पडीण-उदीण (चि) मागच्छंति,
पडीण-उदीणमुग्गच्छ उदीचि-पादीणमागच्छंति ?

उ०—हंता, गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उदीची-पाईणमुग्गच्छ—जाव—उदीचिपाईणमागच्छंति।

[३] प्र०—जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे दिवसे हवइ,
तया णं उत्तरड्ढे वि दिवसे भवइ,
जया णं उत्तरड्ढे वि दिवसे भवइ, तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमे णं राई हवइ ?

उ०—हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वि दिवसे—जाव—राई भवइ।

[४] प्र०—जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमे णं दिवसे भवइ,
तया णं पच्चत्थिमे वि दिवसे भवइ,
जया णं पच्चत्थिमे णं दिवसे भवइ,
तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणे णं राई भवइ ?

उ०—हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरपुरत्थिमे णं दिवसे—जाव—राई भवइ।

[५] प्र०—जदा णं भते ! जबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ,
तदा ण उत्तरड्ढे वि उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ,
जया ण उत्तरड्ढे उक्कोसए अट्ठासरमुहुत्ते दिवसे भवइ,
तया ण जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमे ण जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ?

उ०—हता, गोयमा ! जया ण जबुद्दीवे दीवे—जाव—दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ।

[६] प्र०—जया ण जंबुद्दीवे दीवे मदरस्स पुरत्थिमे उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ,
तया ण जबुद्दीवे दीवे पच्चत्थिमेण वि उक्कोसेण अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ,
जया ण पच्चत्थिमेण उक्कोसिए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ,
तया णं भते ! जबुद्दीवे दीवे उत्तरे दुवालसमुहुत्ता—जाव—राई भवइ ?

उ०—हता, गोयमा !—जाव—भवइ ।

[७] प्र०—जया ण भंते ! जबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवइ,
तया ण उत्तरे अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवइ,
जया ण उत्तरड्ढे अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवइ,
तया ण जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमे णं पच्चत्थिमे ण साइरेया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ ?

उ०—हता, गोयमा ! जया ण जबुद्दीवे दीवे—जाव—राई भवइ ।

[८] प्र०—जया णं भते ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमे ण अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवइ,
तया ण पच्चत्थिमे ण अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवइ,
जया ण पच्चत्थिमे णं अट्ठारसमुहुत्ताणतरे दिवसे भवइ,
तदा ण जंबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणे साइरेगदुवालसमुहुत्ता राई भवइ ?

उ०—हंता, गोयमा !—जाव—भवइ ।
एव एएणं कमेण ओसारेअव्व सत्तरसमुहुत्ते दिवसे तेरसमुहुत्ता राई भवइ,
सत्तरसमुहुत्ताणतरे दिवसे साइरेया तेरसमुहुत्ता राई,
सोलसमुहुत्ते दिवसे चोद्दसमुहुत्ता राई,
सोलसमुहुत्ताणतरे दिवसे साइरेगचउद्दसमुहुत्ता राई,
पण्णरसमुहुत्ते दिवसे पन्नरसमुहुत्ता राई,
पण्णरसमुहुत्ताणतरे दिवसे, साइरेगा पण्णरसमुहुत्ता राई,
चोद्दसमुहुत्ते दिवसे सोलसमुहुत्ता राई,
चोद्दसमुहुत्ताणतरे दिवसे, साइरेगा सोलसमुहुत्ता राई,
तेरसमुहुत्ते दिवसे, सत्तरसमुहुत्ता राई,
तेरसमुहुत्ताणतरे दिवसे, साइरेगा सत्तरसमुहुत्ता राई ।

[९] प्र०—जया ण जबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे अहच्चए दुवालसमुहुत्ते दिवसे, भवइ,
तया ण उत्तरड्ढे वि,
जया ण उत्तरड्ढे तया ण जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमे ण उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ ?

उ०—हंता, गोयमा ! एवं चेव उच्चारेअव्वं—जाव—राई भवइ ।

[१०] प्र०—जया ण भंते ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेण जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ तया ण पच्चत्थिमेण वि,
जया ण पच्चत्थिमेण वि तया ण जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तर-दाहिणेणं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ ?
उ०—हंता, गोयमा ! —जाव— राई भवइ ।
—विवा भाग २ श ५ उ १ प्र. १-६ पृ १४५-१४८

हम इस प्रकार कहते हैं—
(उस काल और उस समय मे चम्पा नामक राजधानी थी । उसका वर्णन समझ लेना चाहिए । उस चम्पा नगरी मे पूर्णभद्र नामक चैत्य था । उसका भी वर्णन समझ लेना चाहिए । समवसरण हुआ—यावत्—परिषद् लौट गई ।
उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी गौतमगोत्रीय इन्द्रभूति नामक अनगार—यावत्—इस प्रकार बोले–)

[२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे क्या सूर्य उत्तर-पूर्व मे उदित होकर पूर्व-दक्षिण मे आते हैं—अस्त होते हैं ?
पूर्व-दक्षिण मे उदित हो दक्षिण-पश्चिम मे आते हैं ?
दक्षिण-पश्चिम मे उदित हो पश्चिम-उत्तर मे आते हैं ?
एव पश्चिम-उत्तर मे उदित हो उत्तर-पूर्व मे आते हैं ?
उ०—हाँ, गौतम ! जम्बूद्वीप मे सूर्य उत्तर-पूर्व मे उदित हो—यावत्—उत्तर-पूर्व मे आते हैं ।

[३] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे दिन होता है तब क्या उत्तरार्ध मे भी दिन होता है ? एव जब उत्तरार्ध मे दिन होता है तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम मे रात्रि होती है ?
उ०—हाँ, गौतम ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे दिन—यावत्—रात्रि होती है ।

[४] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व मे दिन होता है तब क्या पश्चिम मे भी दिन होता है ? एव जब पश्चिम मे दिन होता है तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के उत्तर-दक्षिण मे रात्रि होती है ?
उ०—हाँ, गौतम ! जब जम्बूद्वीपस्थित मेरु के पूर्व मे दिन—यावत्—रात्रि होती है ।

[५] उ०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब क्या उत्तरार्ध मे भी उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है ? एव जब उत्तरार्ध मे उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम मे जघन्य बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?
उ०—हाँ, गौतम ! जब जम्बूद्वीप के—यावत्—बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ।

[६] प्र०—जब जम्बूद्वीपस्थित मेरु के पूर्व मे उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब क्या जम्बूद्वीप के पश्चिम मे भी उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है ? एव जब पश्चिम मे उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब क्या भगवन् ! जम्बूद्वीप के उत्तर मे बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?
उ०—हाँ, गौतम ! —यावत्—होती है ।

[७] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर (अठारह मुहूर्त्त से कुछ न्यून) का दिन होता है तब क्या उत्तरार्ध मे भी अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है ? एव जब उत्तरार्ध मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व तथा पश्चिम मे साधिक बारह मुहूर्त्त (बारह मुहूर्त्त से कुछ अधिक) की रात्रि होती है ?
उ०—हाँ, गौतम ! जब जम्बूद्वीप के–यावत्–रात्रि होती है ।

[८] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब क्या पश्चिम मे भी अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है ? एव जब पश्चिम मे अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है तब क्या मेरु पर्वत के उत्तर-दक्षिण मे साधिक बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती ?

उ०—हाँ, गौतम ! –यावत्–होती है ।

इस प्रकार पूर्वोक्त क्रम से सत्तरह मुहूर्त्त का दिन एव तेरह मुहूर्त्त की रात्रि, सत्तरह मुहूर्त्तानन्तर का दिन और साधिक तेरह मुहूर्त्त की रात्रि, सोलह मुहूर्त्त का दिन और चौदह मुहूर्त्त की रात्रि, सोलह मुहूर्त्तानन्तर का दिन एव साधिक चौदह मुहूर्त्त की रात्रि, पन्द्रह मुहूर्त्त का दिन एव पन्द्रह मुहूर्त्त की रात्रि, पन्द्रह मुहूर्त्तान्तर का दिन एव साधिक पन्द्रह मुहूर्त्त की रात्रि, चौदह मुहूर्त्त का दिन एव सोलह मुहूर्त्त की रात्रि, चौदह मुहूर्त्तानन्तर का दिन एव साधिक सोलह मुहूर्त्त की रात्रि, तेरह मुहूर्त्त का दिन एव सत्तरह मुहूर्त्त की रात्रि, तेरह मुहूर्त्तानन्तर का दिन और साधिक सत्तरह मुहूर्त्त की रात्रि होती है, यह समझ लेना चाहिए ।

[९] प्र०—जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे जघन्य बारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब क्या उत्तरार्ध मे भी (जघन्य बारह मुहूर्त्त का दिन होता है ?) एव जब उत्तरार्ध मे (बारह मुहूर्त्त का दिन होता है) तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम मे उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

उ०—हाँ, गौतम ! इसी प्रकार कहना चाहिए,–यावत्–रात्रि होती है ।

[१०] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व मे जघन्य बारह मुहूर्त्त का दिन होता है तब क्या पश्चिम मे भी (बारह मुहूर्त्त का दिन होता है ?) एव जब पश्चिम मे (बारह मुहूर्त्त का दिन होता है) तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के उत्तर-दक्षिण मे उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

उ०—हाँ, गौतम ! –यावत्–रात्रि होती है ।

[७] [१] प्र०—जया ण भते ! जबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाण पढमे समए पडिवज्जइ
तया ण उत्तरड्ढे वि वासाण पढमे समए पडिवज्जइ ?
जया ण उत्तरड्ढे वि वासाण पढमे समए पडिवज्जइ,
तया णं जंबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमे ण अणंतरपुरक्खडे समयसि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ ?

उ०—हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ, तह चेव—जाव—पडिवज्जइ ।

[२] प्र०—जया णं भते ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमे ण वासाण पढमे समए पडिवज्जइ तया णं पच्चत्थिमेण वि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ,
जया ण पच्चत्थिमेण वि वासाण पढमे समए पडिवज्जइ,
तया ण—जाव—मदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणे ण अणतरपच्छाकडसमयसि वासाण पढमे समए पडिवन्ने भवइ ?

उ०—हता, गोयमा ! जया ण जबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेण एव चेव उच्चारेयव्व—जाव—पडिवन्ने भवइ ।
एवं जहा समएण अभिलावो भणिओ वासाण तहा आवलियाए वि भाणियव्वो,
आणपाणूण वि, थोवेण वि, लवेण वि, मुहुत्तेण वि, अहोरत्तेण वि, पक्खेण वि, मासेण वि, उउणा वि, एएसि सव्वेसि जहा समयस्स अभिलावो तहा भाणियव्वो ।

[३] प्र०—जया ण भते ! जबुद्दीवे दीवे हेमताण पढमे समए पडिवज्जइ० ।

उ०—जहेव वासाण अभिलावो तहेव हेमताण वि, गिम्हाण वि भाणियव्वो—जाव-उऊए ।
एव तिण्णि वि, एएसिं तीस आलावगा भाणियव्वा ।

[४] प्र०—जया ण भते ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स दाहिणड्ढे अयणे पडिवज्जइ,
तया ण उत्तरड्ढे वि पढमे अयणे पडिवज्जइ ?

उ०—जहा समएण अभिलावो तहा अयणेण वि भाणियव्वो—जाव—अणतरपच्छाकडसमयसि पढमे अयणे पडिवण्णे भवइ ।
जहा अयणेण अभिलावो तहा सवच्छरेण वि भाणियव्वो,
जुएण वि, वाससएण वि, वाससहस्सेण वि, वाससयसहस्सेण वि, पुव्वगेण वि, पुव्वेण वि, तुडियगेण वि, तुडियेण वि,
एव पुव्वगे, पुव्वे, तुडिअगे, तुडिए, अडडगे, अडडे, अववगे, अववे, हूहूयगे, हूहूये, उप्पलगे, उप्पले, पउमगे, पउमे, नलिणगे, नलिणे, अत्थनिउरगे, अत्थणिउरे, अउअगे, अउए, णउअगे, णउए, पउअगे, पउए, चूलिअगे, चूलिए, सीसपहेलिया, पलिओवमेण, सागरोवमेण वि भाणियव्वो ।

[५] प्र०—जया ण भते ! जबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ,
तया ण उत्तरड्ढे वि पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ ?
जया ण उत्तरड्ढे वि पडिवज्जइ तया ण जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेण पच्चत्थिमेण णेवत्थि ओसप्पिणी, नेवत्थि उस्सप्पिणी,
अवट्ठिए ण तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो ! ?

उ०—हता, गोयमा ! त चेव—जाव—उच्चारेयव्व—जाव—समणाउसो !
जहा ओसप्पिणीए आलावओ भणिओ एव उस्सप्पिणीए वि भाणियव्वो ।

[७] [१] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे वर्षा का प्रथम समय होता है तब क्या उत्तरार्ध मे भी वर्षा का प्रथम समय होता है ? एव जब उत्तरार्ध मे वर्षा का प्रथम समय होता है तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम मे एक समय के अनन्तर वर्षा का प्रथम समय होता है ?

उ०—हाँ, गौतम ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे वर्षा का प्रथम समय होता है—यावत्—उसी प्रकार है ।

[२] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीप स्थित मेरु पर्वत के पूर्व मे वर्षा का प्रथम समय होता है तब क्या पश्चिम मे भी वर्षा का प्रथम समय होता है ? एव जब पश्चिम मे वर्षा का प्रथम समय होता है तब क्या —यावत्—मेरु पर्वत के उत्तर-दक्षिण मे एक समय पूर्व वर्षा का प्रथम समय प्रारभ होता है ?

उ०—हाँ, गौतम ! जब जम्बूद्वीप स्थित मेरु पर्वत के पूर्व मे—यावत्—इसी प्रकार प्रारभ होता है, ऐसा समझना चाहिए ।
जिस प्रकार वर्षा के प्रथम समय के लिए कहा गया है उसी प्रकार (वर्षारम की प्रथम), आवलिका, आनप्राण, स्तोक, लव, मुहूर्त्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु आदि सब के लिए समझना चाहिए ।

[३] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीप मे हेमन्त का प्रथम समय होता है ?

उ०—जिस प्रकार वर्षा के विषय मे कहा गया है, उसी प्रकार हेमन्त और ग्रीष्म के विषय मे भी कहना चाहिए—यावत्–तीनो के विषय मे कहना चाहिए । इस प्रकार तीस आलापक होते हैं ।

[४] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के दक्षिणार्ध मे प्रथम अयन होता है, उस समय क्या उत्तरार्ध मे भी प्रथम अयन होता है ?

उ०—जिस प्रकार समय के विषय मे कहा गया है, उसी प्रकार अयन के विषय मे भी समझना चाहिए, —यावत्—एक समय पूर्व प्रथम अयन प्रारभ होता है।
जिस प्रकार अयन के विषय मे कहा है उसी प्रकार सवत्सर, युग, शताब्दी, सहस्राब्दी, शतसहस्राब्दी, पूर्वांग, पूर्व, त्रुटिताग, त्रुटित, अटटाग, अटट, अववाग, अवव, हूहूकाग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्माग, पद्म, नलिनाग, नलिन, अर्थनिपूराग, अर्थनिपूर, अयुताग, अयुत, नयुताग, नयुत, प्रयुताग, प्रयुत, चूलिकाग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिका, पल्योपम, सागरोपम आदि के विषय मे भी कथन कर लेना चाहिए।

[५] प्र०—भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध मे प्रथम अवसर्पिणी होती है तब क्या उत्तरार्ध मे भी प्रथम अवसर्पिणी होती है ? एव जब उत्तरार्ध मे (प्रथम अवसर्पिणी) होती है तब क्या जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत के पूर्व एव पश्चिम मे अवसर्पिणी तथा उत्सर्पिणी नही होती ? एव श्रमणायुषो ! वहाँ क्या अवस्थित काल रहता है ?

उ०—हाँ, गौतम ! ऐसा ही है। जिस प्रकार अवसर्पिणी के विषय मे कथन किया गया, उसी प्रकार उत्सर्पिणी के विषय मे भी कह लेना चाहिए।

लवणसमुद्र में उदयास्तवर्णन

[८] [१] प्र०—लवणे ण भते ! समुद्दे सूरिया उदीचि-पाईणमुग्गच्छ० ?

उ०—जच्चेव जंबुद्दीवस्स वत्तव्वया भणिया सच्चेव सव्वा अपरिसेसिआ लवणसमुद्दस्स वि भाणियव्वा,
नवर अभिलावो इमो णेयव्वो—
जया ण भंते ! लवणे समुद्दे दाहिणड्ढे दिवसे भवइ,
त चेव—जाव—
तदा ण लवणसमुद्दे पुरत्थिम-पच्चत्थिमे ण राई भवति,
एएणं अभिलावेणं नेयव्व।

[२] प्र०—जया ण भते ! लवणसमुद्दे दाहिणड्ढे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ,
तया णं उत्तरड्ढे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ,
जया ण उत्तरड्ढे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ,
तया णं लवणसमुद्दे पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं नेवत्थि ओसप्पिणी नेवत्थि उस्सप्पिणी समणाउसो ?

उ०—हंता, गोयमा ! —जाव—समणाउसो !

[८] [१] प्र०—भगवन् ! क्या लवणसमुद्र मे सूर्य उत्तर-पूर्व मे उदित हो (पूर्व-दक्षिण मे अस्त होते हैं, इत्यादि) ?

उ०—(इस विषय मे) जो जम्बूद्वीप के सम्बन्ध मे कहा गया है वह सब अपरिशेष लवणसमुद्र के विषय मे भी समझ लेना चाहिए। विशेष यह कि शब्दो का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए—भगवन् ! जब लवणसमुद्र के दक्षिणार्ध मे दिन होता है—यावत्—उसी प्रकार, तब लवणसमुद्र के पूर्व-पश्चिम मे रात्रि होती है। इस प्रकार समझना चाहिए।

[२[प्र०—भगवन् ! जब लवणसमुद्र के दक्षिणार्ध मे प्रथम अवसर्पिणी (अवसर्पिणी का प्रथम विभाग) होती है तब क्या उत्तरार्ध मे भी प्रथम अवसर्पिणी होती है ? एव जब उत्तरार्ध मे प्रथम अवसर्पिणी होती है तब श्रमणायुषो ! क्या लवणसमुद्र के पूर्व-पश्चिम मे अवसर्पिणी तथा उत्सर्पिणी नही होती ?

उ०—हाँ, गौतम ! —यावत्—नही होती।

धातकीखण्ड आदि में उदयास्तवर्णन

[६] [१] प्र०—धायइसडे ण भते ! दीवे सूरिया उदीचि-पाईणमुग्गच्छ० ?

उ०—जहेव जवुद्दीवस्स वत्तव्वया भणिया सच्चेव धायइसडस्स वि भाणियव्वा ।

नवर—इमेण अभिलावेण सव्वा आलावगा भाणियव्वा—

[२[प्र०—जया ण भते ! धायइसडे दीवे दाहिणड्ढे दिवसे भवइ,

तदा ण उत्तरड्ढे वि ।

जया ण उत्तरड्ढे वि तया ण धायइसडे दीवे मदराण पव्वयाण पुरच्छिम-पच्चत्थिमे ण राई भवइ ?

उ०—हता गोयमा ! एव चेव—जाव—राई भवइ ।

[३] प्र०—जया ण भते ! धायइसडे दीवे मदराण पव्वयाण पुरत्थिमेण दिवसे भवइ

तया ण पच्चत्थिमेण वि ?

जया ण पच्चत्थिमेण वि तया ण धायइसडे दीवे मदराण पव्वयाण उत्तरेण दाहिणेण राई भवइ ?

उ०—हता, गोयमा ! —जाव—भवइ ।

एव एएण अभिलावेण नेयव्व—जाव०—

[४] प्र०—जया ण दाहिणड्ढे पढमा ओसप्पिणी तया ण उत्तरड्ढे ?

जया ण उत्तरड्ढे तया ण धायइसडे दीवे मदराण पव्वयाण पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण नत्थि ओसप्पिणी —जाव--समणाउसो ! ?

उ०—हता, गोयमा ! —जाव—समणाउसो !

जहा लवणसमुद्दस्स वत्तव्वया तहा कालोदस्स वि भाणियव्वा,

नवर—कालोदस्स नाम भाणियव्व ।

[५] प्र०—अब्भितरपुक्खरद्धे ण भते ! सूरिया उदीचि-पाईणमुग्गच्छ० ?

उ०—जहेव धायइसडस्स वत्तव्वया तहेव अब्भितरपुक्खरद्धस्स वि भाणियव्वा,

नवर—अभिलावो जा (भा) णियव्वो—जाव—तया ण अब्भितरपुक्खरद्धे मदराणं पुरत्थिम-पच्चत्थिमेण नेवत्थि अवसप्पिणी,

नेवत्थि उस्सप्पिणी—अवट्ठिए ण तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो !

सेव भते ! सेव भते ! ति ।

—भग भाग २ श ५ उ १ प्र १०–२१, पृ १५१–१५६
—जम्बू सूत्र १५० पृ ४८०
—सूर्य सूत्र २९ पृ ८५–८६
—चन्द्र सूत्र २९

[६] [१] प्र०—भगवन् ! क्या धातकीखण्ड द्वीप मे सूर्य उत्तर-पूर्व मे उदित हो (पूर्व-दक्षिण मे अस्त होते हैं, इत्यादि) ?

उ०—जिस प्रकार जम्बूद्वीप के विषय मे कथन किया गया है, उसी प्रकार धातकीखण्ड के विषय मे भी कह लेना चाहिए । वर्णन मे केवल धातकीखण्ड का नाम कहना चाहिए ।

[२] प्र०—भगवन् ! जब धातकीखण्ड द्वीप के दक्षिणार्ध मे दिन होता है तब क्या उत्तरार्ध मे भी (दिन होता है ?) एव जब उत्तरार्ध मे (दिन होता है) तब क्या धातकीखण्डस्थित मेरु पर्वतो के पूर्व-पश्चिम मे रात्रि होती है ?

उ०—हाँ, गौतम ! इसी प्रकार (होता है)—यावत्—रात्रि होती है ।

[३] प्र०—भगवन् ! जब धातकीखण्डस्थित मेरु पर्वतों के पूर्व मे दिन होता है तब क्या पश्चिम मे भी (दिन होता है ?) एव जब पश्चिम मे (दिन होता है) तब क्या धातकीखण्डस्थित मेरु पर्वतो के उत्तर-दक्षिण मे रात्रि होती है ?

उ०—हा, गौतम ! —यावत्—होती है। इसी प्रकार आगे भी समझ लेना चाहिए।

[४] प्र०—भगवन् ! जब दक्षिणार्ध मे प्रथम अवसर्पिणी होती है तब क्या उत्तरार्ध मे भी (प्रथम अवसर्पिणी होती है ?) एव जब उत्तरार्ध मे प्रथम अवसर्पिणी होती है, तब क्या श्रमणायुषो ! धातकीखण्ड-द्वीपस्थित मेरु पर्वतो के पूर्व-पश्चिम मे अवसर्पिणी आदि नही होती ?

उ०—हाँ, गौतम ! —यावत्—श्रमणायुषो ! (अवसर्पिणी आदि नही होती)।
जिस प्रकार लवणसमुद्र के विषय मे कहा गया है उसी प्रकार कालोदसमुद्र के विषय मे भी समझना चाहिए। अन्तर यही है कि वहाँ 'कालोद' नाम का प्रयोग करना चाहिए।

[५] प्र०—भगवन् ! क्या आभ्यन्तर पुष्करार्ध मे सूर्य उत्तर-पूर्व मे उदित होकर (पूर्व-दक्षिण मे अस्त होते हैं, इत्यादि) ?

उ०—जिस प्रकार धातकीखण्ड के विषय मे कहा गया है उसी प्रकार आभ्यन्तर पुष्करार्ध के विषय मे भी समझना चाहिए। अन्तर केवल नाम का है। —यावत्—उस समय आभ्यन्तर पुष्करार्धस्थित मेरु पर्वतो के पूर्व-पश्चिम मे न अवसर्पिणी होती है, न उत्सर्पिणी होती है। श्रमणयुषो ! वहाँ काल अवस्थित है।
भगवन् ! यह ऐसा ही है, भगवन् ! यह ऐसा ही है।

सूर्य के प्रकाश का वर्णन

[१०][१] प्र०—ता कह ते ओयसठिती आहिताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ पणवीस पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१—तत्थेगे एवमाहसु
ता अणुसमयमेव सूरियस्स ओया अण्णा उप्पज्जे, अण्णा अवेति, एगे एवमाहंसु।

२—एगे पुण एवमाहसु
ता अणुमुहुत्तमेव सूरियस्स ओया अण्णा उप्पज्जति, अण्णा अवेति।
एतेण अभिलावेण णेतव्वा—

३—ता अणुराइंदियमेव ४–ता अणुपक्खमे ५–ता अणुमासमेव ६–ता अणुउडुमेव ७–ता अणुअयणमेव ८–ता अणुसवच्छरमेव ९–ता अणुजुगमेव १०–ता अणुवाससयमेव ११–ता अणुवाससहस्समेव १२–ता अणुवाससयसहस्समेव १३–ता अणुपुव्वमेव १४–ता अणुपुव्वसयमेव १५–अणुपुव्वसहस्समेव १६–ता अणुपुव्वसतसहस्समेव १७–ता अणुपलितोवममेव १८–ता अणुपलितोवमसयमेव १९–ता अणुपलितोवमसहस्समेव २०–ता अणुपलितोवमसयसहस्समेव २१–ता अणुसागरोवममेव २२–ता अणुसागरोवमसतमेव २३–ता अणुसागरोवमसहस्समेव २४–ता अणुसागरोवमसयसहस्समेव एगे एवमाहंसु।
२५–ता अणुउस्सप्पिणी-ओसप्पिणिमेव सूरियस्स ओया अण्णा उप्पज्जति, अण्णा अवेति, एगे एव-माहसु।

वयं पुण एवं वदामो—

ता तीस २ मुहुत्ते सूरियस्स ओया अवट्ठिता भवति,
तेण पर सूरियस्स ओया अणवट्ठिता भवति,
छम्मासे सूरिए ओय णिवुड्ढेति,
छम्मासे सूरिए ओय अभिवड्ढेति,
णिक्खममाणे सूरिए देस णिवुड्ढेति,
पविसमाणे सूरिए देस अभिवुड्ढेइ ।

[२] प्र०—तत्थ को हेतूति वदेज्जा ?

उ०—ता अयण्ण जम्बुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्द०—जाव—परिक्खेवेण ।
जा जया ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसयए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति ।
से णिक्खममाणे सूरिए णव सवच्छर अयमाणे पढमसि अहोरत्तसि अब्भितराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
ता जया ण सूरिए अब्भितराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण एगेण राइदिएण एग भाग ओयाए दिवसखितस्स णिवुड्ढिता रतणिक्खेत्तस्स अभिवड्ढिता चार चरति,
मडल अट्ठारसहि तीसेहि सतेहि छित्ता,
तता ण अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
दोहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि ऊणे,
दुवालसमुहुत्ता राई भवति
दोहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अहिया ।
ता णिक्खममाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि अब्भितरतच्च मडल उवसकमित्ता चार
ता जया ण सूरिए अब्भितरतच्च मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण दोहि राइदिएहि दो भागे ओयाए दिवसखेतस्स णिवुड्ढित्ता,
रयणिखित्तस्स अभिवड्ढेत्ता चार चरति,
मडल अट्ठारसतीसेहि सएहि छेत्ता,
तता ण अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
चउहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि ऊणे दुवालसमुहुत्ता राई भवति
चउहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अहिया,
एव खलु एतेणुवाएण णिक्खममाणे सूरिए तयाणतराओ तयाणतर मडलाओ मडल सकममाणे
सकममाणे एगमेगे मडले एगमेगेण राइ दिएण एगमेगेण २ भाग ओयाए
दिवसखेत्तस्स णिवुड्ढेमाणे २ रयणिखेत्तस्स अभिवड्ढेमाणे २
सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए सव्वब्भतराओ मडलातो सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तता ण सव्वब्भतर मडल पणिधाय एगेण तेसीतेण राइ दियसतेण
एग तेसीत भागसतं ओयाए दिवसखेत्तस्स णिव्वुड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिवुड्ढेत्ता चार चरति मडल अट्ठारसहि तीसेहि छेत्ता,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति,
जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,

एस णं पढमछम्मासे,
एस ण पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।
ते पविसमाणे सूरिए दोच्च छम्मासे अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि
बाहिराणंतर मंडल उवसंकमित्ता चार चरति ।
ता जया णं सूरिए बाहिराणंतर मंडल उवसंकमित्ता चार चरति
तता ण एगेण राइ दिएण एग भाग ओयाए रयणिखेत्तस्स णिव्वुड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिवड्ढेत्ता चार चरति,
मंडल अट्ठारसहिं तीसेहिं छेत्ता,
तता ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति
दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा,
दुवालसमुहुत्तो दिवसे भवति
दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं अधिए,
से पविसमाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि बाहिरतच्च मंडल उवसंकमित्ता चार चरति,
ता जया ण सूरिए बाहिरतच्च मंडल उवसंकमित्ता चार चरति
तता ण दोहिं राइ दिएहिं दो भाए ओयाए
रयणिखेत्तस्स णिव्वुड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिवुड्ढेत्ता चार चरति,
मंडल अट्ठारसहिं तीसेहिं छेत्ता, तया ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, चउहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा,
दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति, चउहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं अधिए ।
एव खलु एतेणुवाएण पविसमाणे सूरिए तताणतरातो तदाणतर मंडलातो मंडल संकममाणे २
एगमेगेण राइदिएण एगमेगेण भाग ओयाए रयणिखेत्तस्स णिवुड्ढेमाणे २ दिवसखेत्तस्स अभिवड्ढेमाणे २
सव्वब्भतर मंडल उवसंकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए सव्वबाहिरातो मंडलातो सव्वब्भतर मंडल उवसंकमित्ता चार चरति
तता णं सव्वबाहिर मंडल पणिधाय एगेण तेसीतेण राइदियसएण
एग तेसीत भागसत ओयाए रयणिखित्तस्स णिव्वुड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिवड्ढेत्ता चार चरति,
मंडल अट्ठारसतीसेहिं सएहिं छेत्ता,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति ।[1]
एस ण दोच्चे छम्मासे, एस ण दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।
एस ण आदिच्चे सवच्छरे, एस आदिच्चस्स संवच्छरस्स पज्जवसाणे ।

—सूर्य सूत्र २७ पृ ७६–८०
—चन्द्र सूत्र २७

१०][१] प्र०—सूर्य की ओजसस्थिति किस प्रकार की कही गई है ?

उ०—एतद्विषयक (अन्यतीर्थिको की) निम्नोक्त पच्चीस मान्यताएँ हैं —

१—एक मान्यता इस प्रकार है—प्रतिसमय सूर्य का ओज-प्रकाश नया उत्पन्न होता है और नया नष्ट होता है ।

२—एक मान्यता इस प्रकार है—सूर्य का प्रकाश प्रतिमुहूर्त्त नया उत्पन्न होता है और नष्ट होता है । इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिए—

---

[1] — तेणउईमंडलगते ण सूरिए अतिवट्टमाणे वा निवट्टमाणे वा समं अहोरत्त विसम करेइ ।

—सम ६२ सूत्र ३

३—प्रति रात्रि-दिन, ४–प्रतिपक्ष, ५–प्रतिमास, ६–प्रतिऋतु, ७–प्रतिअयन, ८–प्रतिवर्ष, ९–प्रतियुग, १०–प्रति वर्षशताब्दी, ११–प्रति वर्षसहस्राब्दी, १२–प्रति वर्पशतसहस्राब्दी, १३–प्रतिपूर्व, १४–प्रति पूर्वशत, १५–प्रति पूर्वसहस्र, १६–प्रति पूर्वशतसहस्र, १७–प्रति पल्योपम, १८–प्रति पल्योपमशत, १९–प्रति पल्योपमसहस्र, २०–प्रति पल्योपमशतसहस्र, २१–प्रति सागरोपम, २२–प्रति सागरोपमशत, २३–प्रति सागरोपमसहस्र, २४–प्रति सागरोपमशतसहस्र, २५—(यावत्) एक मान्यता ऐसी है कि प्रति उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी मे सूर्य का प्रकाश नया उत्पन्न होता एव नष्ट होता है। हमारा कथन इस प्रकार है—

तीस मुहूर्त्त पर्यन्त सूर्य का प्रकाश अवस्थित रहता है। इसके पश्चात् सूर्य का प्रकाश अनवस्थित होता है। छह मास तक सूर्य का प्रकाश कम होता है एव छह मास तक सूर्य का प्रकाश वढता है। निष्क्रान्त होते हुए सूर्य का क्षेत्र (देश) कम होता है एव प्रविष्ट होते हुए सूर्य का क्षेत्र (देश) अधिक होता है।

[२] प्र०—इसका क्या कारण है ?

उ०—यह जम्वूद्वीप सर्व द्वीप-समुद्रो के (मध्य मे है)—यावत्—परिधि वाला है। इसमे जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। वहा से निष्क्रमित होता हुआ सूर्य नवीन सवत्सर मे आता हुआ प्रथम अहोरात्र मे आभ्यन्तरानन्तर (आभ्यन्तर के वाद के) मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है। इस प्रकार सूर्य आभ्यन्तरानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव एक रात्रि-दिन मे प्रकाश का एक भाग दिवस-क्षेत्र मे कम और रात्रि-क्षेत्र मे वढाता हुआ गति करता है। यह एक भाग मडल के १८३० भाग करने पर प्राप्त होता है। इस समय मुहूर्त्त के ६१ भागो मे से दो भाग कम ($१८—\frac{२}{६१}=१७\frac{५९}{६१}$) मुहूर्त्त का दिन होता है एव मुहूर्त्त के ६१ भागो मे से दो भाग अधिक वारह ($१२+\frac{२}{६१}$) मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

वहा से निष्क्रान्त होता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है। जब सूर्य आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव दो रात्रि-दिन मे एक मडल के १८३० भागो मे से प्रकाश के दो भाग दिवस-क्षेत्र मे कम कर रात्रि-क्षेत्र मे वढाता हुआ गति करता है। इस समय मुहूर्त्त के ६१ भागो मे से ४ भाग कम अठारह ($१८—\frac{४}{६१}$) मुहूर्त्त का दिन होता है एव मुहूर्त्त के ६१ भागो मे से ४ भाग अधिक वारह ($१२+\frac{४}{६१}$) मुहूर्त्त की रात्रि होती है। इस प्रकार निष्क्रान्त होता हुआ सूर्य एक मडल से दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक रात्रि-दिन मे प्रकाश का एक भाग दिवस-क्षेत्र मे कम कर रजनी-क्षेत्र मे वढाता हुआ सर्वबाह्य मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है। जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल से सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रमित होकर गति करता है तव १८३ रात्रि-दिन मे एक मडल के १८३० भागो मे से १८३ भाग प्रकाश दिवस-क्षेत्र मे कम कर रजनी-क्षेत्र मे वढाता हुआ गति करता है। इस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है। यह प्रथम छह मास एव प्रथम छह मास के पर्यवसान के विषय मे है। प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय छह मास मे आता हुआ प्रथम अहोरात्रि मे वाह्यानन्तर (वाह्य के वाद के) मण्डल पर उपसक्रमित होकर गति करता है। जव सूर्य वाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रमित हो गति करता है तव एक रात्रि-दिन मे मडल के १८३० भागो मे से एक भाग प्रकाश रजनी-क्षेत्र मे कम कर दिवस-क्षेत्र मे वढाता हुआ गति करता है। इस समय मुहूर्त्त के ६१ भागो मे से दो भाग कम अठारह ($१८—\frac{२}{६१}$) मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव मुहूर्त्त के ६१ भागो मे से दो भाग अधिक वारह ($११+\frac{२}{६१}$) मुहूर्त्त का दिन होता है।

प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्रि मे वाह्य-तृतीय मडल पर उपसक्रमित हो गति करता है। जव सूर्य वाह्यतृतीय मडल पर उपसक्रमित हो गति करता है तव दो रात्रि-दिन मे मडल के १८३०

भागो मे से दो भाग प्रकाश रजनी-क्षेत्र मे कम कर दिवस-क्षेत्र मे वढाता हुआ गति करता है। इस समय $\frac{४}{६१}$ भाग कम अठारह (१८—$\frac{४}{६१}$) मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव $\frac{४}{६१}$ भाग अधिक वारह (१२+$\frac{४}{६१}$) मुहूर्त्त का दिवस होता है।

इस प्रकार प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक मडल से दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक रात्रि-दिन मे एक भाग प्रकाश रजनी-क्षेत्र मे कम कर दिवस-क्षेत्र मे वढाता हुआ सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रमित हो गति करता है।

जव सूर्य सर्ववाह्य मण्डल से सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रमित हो गति करता है तव १८३ रात्रि-दिनो मे मडल के १८३० भागो मे से १८३ भाग प्रकाश रजनी-क्षेत्र मे कम कर दिवस-क्षेत्र मे वढाता हुआ गति करता है। इस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन और जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह मास के पर्यवसान के विषय मे है।
यह आदित्यसवत्सर (सौर वर्ष) एव आदित्यसवत्सर के पर्यवसान के विषय मे है।

सूर्य का वरण

[११][१] प्र०—ता के ते सूरियं वरति आहिताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ वीस पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

तत्थेगे एवमाहंसु—
ता मदरे ण पव्वते सूरिय वरयति आहितेति वदेज्जा, एगे एवमाहंसु।

एगे पुण एवमाहसु—
ता मेरू ण पव्वते सूरिय वरति आहितेति वदेज्जा,
एव एएणं अभिलावेण णेतव्वं—जाव[1]—
पव्वतराये ण पव्वते सूरिय वरयति आहितेति वदेज्जा, त एगे एवमाहंसु।

वय पुण एव वदामो—
ता मदरे वि पवुच्चति तहेव—जाव[2]—पव्वतराए वि पवुच्चति,
ता जे ण पोग्गला सूरियस्स लेस फुसति ते पोग्गला सूरियं वरयति,
अदिट्ठावि ण पोग्गला सूरिय वरयंति,
चरमलेसतरगता वि ण पोग्गला सूरियं वरयति।

—सूर्य० सूत्र २८ पृ० ८३
—चन्द्र० सूत्र २८

[११][१] प्र०—सूर्य को कौन वरण करता है ? अर्थात् स्वप्रकाशक रूप मे कौन स्वीकार करता है ?

उ०—इस विषय मे (अन्यतीर्थिको की) वीस मान्यताएँ हैं—एक मान्यता यह है कि मन्दर पर्वत सूर्य को (स्वप्रकाशक रूप मे) वरण करता है।
एक मान्यता ऐसी है कि मेरु पर्वत सूर्य को वरण करता है। इस प्रकार इन्ही शब्दो मे—यावत्—पर्वतराज सूर्य को वरण करता है, ऐसा कहना चाहिए।
हम ऐसा कहते हैं—

---

१. सूर्य सूत्र २६ पृ. ७७
२. ,, ,, ,, ,,

मन्दर पर्वत भी वही कहा जाता है—यावत्—पर्वतराज भी कहा जाता है।
जो पुद्‌गल सूर्य के प्रकाश का स्पर्श करते हैं वे पुद्‌गल सूर्य को (स्वप्रकाशक रूप मे) वरण करते हैं अर्थात् सूर्य द्वारा प्रकाशित होते हैं। अदृष्ट पुद्‌गल भी सूर्य को वरण करते हैं। चरमलेश्या को स्पर्श करने वाले पुद्गल भी सूर्य को वरण करते हैं।

सूर्य-प्रकाश का प्रतिरोध

[१२][१] प्र०—ता कसि ण सूरियस्स लेस्सा पडिहताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ वीस पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१—तत्थेगे एवमाहंसु—

ता मदरसि ण पव्वतसि सूरियस्स लेस्सा पडिहता आहिताति वदेज्जा, एगे एवमाहंसु।

२—एगे पुण एवमाहंसु—

ता मेरु सि ण पव्वतसि सूरियस्स लेस्सा पडिहता आहिताति वदेज्जा, एगे एवमाहंसु।

एव एतेण अभिलावेण भाणियव्व—

३—ता मणोरमसि ण पव्वयसि,

४—ता सुदसणसि ण पव्वयसि,

५—ता सयपभसि ण पव्वयसि,

६—ता गिरिरायसि ण पव्वयसि,

७—ता रतणुच्चयसि ण पव्वयसि,

८—ता सिलुच्चयसि ण पव्वयसि,

९—ता लोयमज्झसि ण पव्वयसि,

१०—ता लोयणाभिसि ण पव्वतसि,

११—ता अच्छसि ण पव्वतसि,

१२—ता सूरियावत्तसि ण पव्वतसि,

१३—ता सूरियावरणसि ण पव्वतसि,

१४—ता उत्तमसि ण पव्वयसि,

१५—ता दिसादिस्सि ण पव्वतसि,

१६—ता अवतससि ण पव्वतसि,

१७—ता धरणिखीलसि ण पव्वयसि,

१८—ता धरणिसिगसि ण पव्वयसि,

१९—ता पव्वतिदसि ण पव्वतसि,

२०—ता पव्वतरायसि ण पव्वयसि,

सूरियस्स लेसा पडिहता आहिताति वदेज्जा, एगे एवमाहंसु।

वय पुण एव वदामो—

ता मदरे वि पवुच्चति—जाव—पव्वयराया वुच्चति,
ता जे ण पोग्गला सूरियस्स लेस पडिहणति,
अदिट्ठावि ण पोग्गला सूरियस्स लेस्स पडिहणति,
चरिमलेसतरगतावि ण पोग्गला सूरियस्स लेस्स पडिहणति।

—सूर्य सूत्र २६ पृ ७६-७७
—चन्द्र सूत्र २६

[१२][१] प्र०—सूर्य के प्रकाश का प्रतिघात किस स्थान मे होता है ?

उ०—इस विषय मे (अन्य तीर्थिको की) ये बीस मान्यताए हैं—

१–एक मान्यता यह है कि मदर पर्वत मे सूर्य की लेश्या (प्रकाश) का प्रतिघात होता है।

२–एक मान्यता ऐसी भी है कि मेरु पर्वत मे सूर्य की लेश्या का प्रतिघात होता है।

इन्ही शब्दो के साथ आगे भी समझना चाहिए—

३– मनोरम पर्वत मे, ४–सुदर्शन पर्वत मे,
५– स्वयप्रभ पर्वत मे, ६–गिरिराज पर्वत मे,
७– रत्नोच्चय पर्वत मे, ८–शिलोच्चय पर्वत मे,
९– लोकमध्य पर्वत मे, १०–लोकनाभि पर्वत मे,
११–अच्छ पर्वत मे, १२–सूर्यावर्त पर्वत मे,
१३–सूर्यावरण पर्वत मे, १४–उत्तम पर्वत मे,
१५–दिगादि पर्वत मे, १६–अवतस पर्वत मे,
१७–धरणीकीलक पर्वत मे, १८–धरणीश्रृ ग पर्वत मे,
१९–पर्वतेन्द्र पर्वत मे, २०–पर्वतराज पर्वत मे,

सूर्य की लेश्या का प्रतिघात होता है।

हमारा कथन इस प्रकार है—

मदर पर्वत—यावत्—पर्वतराज पर्वत मे (सूर्य के प्रकाश का) प्रतिघात होता है। जो पुद्गल सूर्य के प्रकाश का स्पर्श करते हैं, वे पुद्गल सूर्य के प्रकाश का प्रतिघात करते हैं। अदृष्ट पुद्गल भी सूर्य के प्रकाश का प्रतिघात करते हैं। चरमलेश्यान्तर्गत पुद्गल भी सूर्य के प्रकाश का प्रतिघात करते है।

सूर्यगति का क्षेत्र

[१३][१] प्र०—जबुद्दीवे ण भंते ! दीवे सूरिआ किं तीयं खेत्त गच्छन्ति, पडुप्पण्ण खेत्त गच्छति, अणागयं खेत्तं गच्छति ?

उ०—गोयमा ! णो तीअं खेत्त गच्छति, पडुप्पण्ण खेत्त गच्छति, णो अणागय खेत्ता गच्छतित्ति।

[२] प्र०—त भते ! किं पुट्ठं गच्छंति ?

उ०— —जाव—नियमा छद्दिसिं

एव ओभासेंति,

[३] प्र०—त भते ! किं पुट्ठ ओभासेंति ?

एव आहारपयाइं णेअव्वाइं—पुट्ठो-गाढ-मणंतर-अणु-महआदिविसयाणुपुव्वी अ,

उ०— —जाव—णिअमा छद्दिसि,

एव उज्जोवेंति, तवेंति, पभासेंति।

[४] प्र०—जबुद्दीवे णं भते ! दीवे सूरिआणं किं तीते खित्ते किरिया कज्जइ, पडुप्पण्णे०, अणागए० ?

उ०—गोयमा ! णो तीए खित्ते किरिआ कज्जइ, पडुप्पण्णे०, अणागए०।

[५] प्र०—सा भते ! किं पुट्ठा कज्जइ० ?

उ०—गोयमा ! पुट्ठा ० णो अणापुट्ठा कज्जइ—जाव—णियमा छद्दिसि।

—जम्बू सूत्र १३७-३८, पृ ४५८-५९

[१३][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे सूर्य क्या अतीत क्षेत्र मे जाते हैं, वर्त्तमान क्षेत्र मे जाते हैं अथवा अनागत क्षेत्र मे जाते हैं ?

उ०—गौतम ! अतीत क्षेत्र मे नही जाते, वर्त्तमान क्षेत्र मे जाते हैं, अनागत क्षेत्र मे नही जाते ।

[२] प्र०—भगवन् ! क्या वे स्पृष्ट होकर जाते हैं ?

उ०—यावत्—नियमत छहो दिशाओ मे जाते हैं । इसी प्रकार अवभासित होते हैं ।

[३] प्र०—भगवन् ! क्या वे स्पृष्ट होकर प्रकाशित होते हैं ?

इस प्रकार आहारपद (प्रज्ञापनासूत्रोक्त) के समान स्पृष्ट, अवगाढ, अनन्तर, अणु, महत् आदि विषयानुपूर्वी समझ लेना चाहिए ।

उ०— –यावत्– नियमत छह दिशाओ मे स्पृष्ट को प्रकाशित करते हैं । इसी प्रकार उद्योतित करते हैं, तपाते हैं, प्रकाशित करते हैं ।

[४] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे क्या सूर्य अतीत क्षेत्र मे क्रिया करते हैं, वर्त्तमान क्षेत्र मे क्रिया करते हैं अथवा अनागत क्षेत्र मे क्रिया करते है ?

उ०—गौतम ! अतीत क्षेत्र मे क्रिया नही करते, वर्त्तमान क्षेत्र मे क्रिया करते हैं, अनागत क्षेत्र मे क्रिया नही करते ।

[५] प्र०—भगवन् ! यह क्रिया क्या स्पृष्ट होकर करते हैं ?

उ०—गौतम ! स्पृष्ट होकर करते हैं, अस्पृष्ट होकर नही, —यावत्—नियम से छहो दिशाओ मे ।

सूर्यो का परस्पर अन्तर

[१४][१] प्र०—ता केवइये एए दुवे सूरिया अण्णमण्णस्स अतर कट्टु चार चरति आहितति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमातो छ पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१– तत्थ एगे एवमाहसु—
ता एग जोयणसहस्स एग च तेत्तीम जोयणसत अण्णमण्णस्स अतर कट्टु सूरिया चार चरति आहितति वदेज्जा,एगे एवमाहसु ।

२– एगे पुण एवमाहसु—
ता एग जोयणसहस्स एग चउतीस जोयणसय अन्नमन्नस्स अतर कट्टु सूरिया चार चरति आहियाति वइज्जा, एगे एवमाहसु ।

३– एगे पुण एवमाहसु—
ता एग जोयणसहस्स एग च पणतीस जोयणसय अण्णमण्णस्स अतर कट्टु सूरिया चार चरति आहितति वदेज्जा, एगे एवमाहसु ।

४– एगे पुण एवमाहसु—
एग दीव, एग समुद्द अण्णमण्णस्स अतर कट्टु० ।

५– पुण एवमाहसु—
दो दीवे दो समुद्दे अण्णमण्णस्स अतर कट्टु सूरिया चार चरति आहियाति वदेज्जा, एगे एवमाहसु ।

६– एगे पुण एवमाहसु—
तिण्णि दीवे तिण्णि समुद्दे अण्णमण्णस्स अतरं कट्टु सूरिया चार चरति आहियाति वइज्जा, एगे एवमाहसु ।

अथ पुण एवं वदामो–

ता पंच पंच जोयणाइं पणतीसं च एगट्ठि भागे जोयणस्स एगमेगे मंडले अण्णमण्णस्स अंतरं अभिवड्ढेमाणा वा निवड्ढेमाणा वा सूरिया चारं चरंति ।

[२] प्र०—तत्थ णं को हेऊ आहिताति वदेज्जा ?

उ०—१–ता अयण्णं जंबुद्दीवे दीवे—जाव-परिक्खेवेणं पण्णत्ते,

ता जया णं एते दुवे सूरिया सव्वब्भंतरमंडलं उवसंकमित्ता चारं चरंति,

तदा णं णवणउतिं जोयणसहस्साइं छच्चचत्ताले जोयणसते अण्णमण्णस्स अंतरं कट्टु चारं चरंति आहिताति वदेज्जा ।

तता णं उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,

जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,

ते निक्खममाणा सूरिया णवं संवच्छरं अयमाणा पढमंसि अहोरत्तंसि अब्भिंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरंति ।

२–ता जया णं एते दुवे सूरिया अब्भिंतराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरंति

तदा णं नवनवतिं जोयणसहस्साइं छच्च पणताले जोयणसते पणतीसं च एगट्ठिभागे जोयणस्स अण्णमण्णस्स अंतरं कट्टु चारं चरंति आहिताति वदेज्जा ।

तता णं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे,

दुवालसमुहुत्ता राती भवति, दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं अधिया,

ते णिक्खममाणे सूरिया दोच्चंसि अहोरत्तंसि अब्भितरं तच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरंति ।

३–ता जता दुवे सूरिया अब्भितरं तच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरंति

तया णं नवनवइं जोयणसहस्साइं छच्च इक्कावणे जोयणसए नव य एगट्ठिभागे जोयणस्स अण्णमण्णस्स अंतरं कट्टु चारं चरंति आहियाति वइज्जा,

तदा णं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, चउहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे,

दुवालसमुहुत्ता राई भवति, चउहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं अधिया ।

४–एवं खलु एतेणुवाएणं णिक्खममाणा एते दुवे सूरिया ततोणंतरातो तदाणंतरं मंडलातो मंडलं संकममाणा २ पंच-पंच जोयणाइं पणतीसं च एगट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगे मंडले अण्णमण्णस्स अंतरं अभिवड्ढेमाणा २ सव्वबाहिरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरंति,

तता णं जोयणसतसहस्सं छच्च सट्ठे जोयणसते अण्णमण्णस्स अंतरं कट्टु चारं चरंति,

तता णं उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति,

जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,

एस णं पढमे छम्मासे,

एस णं पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।

१–ते पविसमाणा सूरिया दोच्चं छम्मासं अयमाणा पढमंसि अहोरत्तंसि बाहिराणंतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरंति [1] ।

१–पंचुत्तरस्स णं चउसट्ठिसहस्स हेमवताण पुव्वरत्ततीए राइंदिएहिं वीइक्कंतेहिं सव्वबाहिराओ मंडलाओ सूरिए आउट्टिं करेइ ।

—सम ८१, सुत्त १

२–ता जया ण एते दुवे सूरिया बाहिराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तदा ण एग जोयणसयसहस्स छच्च चउप्पण्णे जोयणसते छव्वीस च एकसट्ठिभागे जोयणस्स अण्णमण्णस्स अतर कट्टु चार चरति, आहिताति वदेज्जा,
तदा ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा,
दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिए,
ते पविसमाणा सूरिया दोच्चसि अहोरत्तसि बाहिर तच्च मडल उवसंकमित्ता चार चरति ।

३–ता जता ण एते दुवे सूरिया बाहिर तच्च मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण एग जोयणसयसहस्स छच्च अडयाले जोयणसते बावण्ण च एगट्ठिभागे जोयणस्स अण्णमण्णस्स अतर कट्टु चार चरति
तता ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति चउहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा,
दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति चउहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अहिए ।

४–एव खलु एतेणुवाएण पविसमाणा एते दुवे सूरिया
ततोणतराओ तदाणतर मडलातो मडल सकममाणा
पच-पच जोयणाइ पणतीसे एगट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगे मडले अण्णमण्णस्सतर णिवुड्ढेमाणा २ सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति ।

५–जया ण एते दुवे सूरिया सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण णवणउति जोयणसहस्साइ छच्च चत्ताले जोयणसते अण्णमण्णस्स अतर कट्टु चार चरति ।
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुते दिवसे भवति,
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
एस ण दोच्चे छम्मासे,
एस ण दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे,
एस ण आइच्चे सवच्छरे,
एस ण आइच्चसवच्छरस्स पज्जवसाणे ।

—सूर्य सूत्र १५ पृ २४–२५
—चन्द्र सूत्र १५

[१४[[१] प्र०—(जम्बूद्वीपस्थित) ये दोनो सूर्य परस्पर कितने अन्तर से गति करते हैं ?

उ०—एतद्विषयक ये छह (अन्यतीर्थिको की) मान्यताए हैं—

१–एक मान्यता यह है कि ये सूर्य परस्पर ११३३ योजन के अन्तर से गति करते हैं ।

२–एक मान्यता यह है कि ये सूर्य परस्पर ११३४ योजन के अन्तर से गति करते हैं ।

३–एक मान्यता यह है कि ये सूर्य परस्पर ११३५ योजन के अन्तर से गति करते हैं ।

४–इसी प्रकार (एक मान्यता यह है कि ये) परस्पर एक द्वीप व एक समुद्र का अन्तर रखकर (गति करते हैं) ।

५–एक मान्यता यह है कि ये सूर्य परस्पर दो द्वीपो व दो समुद्रो का अन्तर रखकर गति करते हैं ।

६–एक मान्यता यह है कि ये सूर्य परस्पर तीन द्वीपो व तीन समुद्रो का अन्तर रखकर गति करते हैं ।

हमारा कथन इस प्रकार है—
ये सूर्य परस्पर ५$\frac{३५}{६१}$ योजन का अन्तर रखकर प्रत्येक मडल पर बढते हुए अथवा घटते हुए गति करते हैं ।

[२] प्र०—इसका क्या कारण है ?

उ०—यह जम्बूद्वीप—यावत्—परिधि वाला है। जव ये दोनो सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते है तव इनमे परस्पर ९९६४० योजन का अन्तर होता है। इस समय अठारह मुहुर्त्त का दिन होता है और जघन्य वारह मुसूर्त्त की रात्रि होती है। (सर्वाभ्यन्तर मडल से) निकलते हुए सूर्य नये सवत्सर मे आते हुए प्रथम अहो-रात्र मे आभ्यन्तरानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करते हैं।

जव ये दोनो सूर्य आभ्यन्तरान्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते हैं तव इनमे परस्पर ९९६४५$\frac{३५}{६१}$ योजन का अन्तर होता है। इस समय १८–$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है एव १२+$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है। यहा से निकलते हुए सूर्य द्वितीय अहोरात्रि मे आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते हैं।

जव ये दोनो सूर्य आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते है तव इनमे परस्पर ९९६५१$\frac{९}{६१}$ योजन का अन्तर होता है। इस समय १८–$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है एव १२+$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

इस प्रकार निकलते हुए ये दोनो सूर्य एक मडल से दूसरे मडल पर उपसक्रान्त होते हुए प्रत्येक मडल मे परस्पर ५$\frac{३५}{६१}$ योजन के अन्तर की वृद्धि करते हुए सर्ववाह्य मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करते हैं। उस समय इनमे परस्पर १००६६० योजन का अन्तर होता है। इस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है। यह प्रथम छह मास एव प्रथम छह मास के पर्यवसान के विषय मे है।

प्रविष्ट होते हुए ये सूर्य द्वितीय छह मास मे आते हुए प्रथम अहोरात्रि मे वाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते है।

जव ये दोनो सूर्य वाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते है तव इनमे परस्पर १००६५४$\frac{२६}{६१}$ योजन का अन्तर होता है। इस समय १८–$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव १२+$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है। यहा से प्रविष्ट होते हुए सूर्य द्वितीय अहोरात्रि मे वाह्य-तृतीय मण्डल पर उपसक्रान्त हो गति करते है।

जव ये दोनो सूर्य वाह्य-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते हैं तव इनमे परस्पर १००६४८$\frac{५२}{६१}$ योजन का अन्तर होता है। इस समग १८–$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव १२+$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है।

इस प्रकार प्रविष्ट होते हुए ये दोनो सूर्य एक मडल से दूसरे मडल पर उपसक्रान्त होते हुए प्रत्येक मडल मे परस्पर ५$\frac{३५}{६१}$ योजन का अन्तर कम करते हुए सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करते हैं।

जव ये दोनो सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करते है तव इनमे परस्पर ९९६४० योजन का अन्तर होता है। इस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह मास के पर्यवसान के विषय मे है। यह आदित्य-सवत्सर एव आदित्य-सवत्सर के पर्यवसान के विषय मे है।

[१५][१[प्र०—ता कतिकट्ठ ते सूरिए पोरिसीच्छाय णिव्वत्तेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ तिण्णि पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–तत्थेगे एवमाहसु—

जे ण पोग्गला सूरियस्स लेस फुसंति, ते ण पोग्गला सतप्पति,

ते ण पोग्गला सतप्पमाणा तदणतराइ वायराइ पोग्गलाइ सतावेंतीति

एस ण से समिते तावक्खेत्ते एगे एवमाहसु।

२- एगे पुण एवमाहसु—
ता जे ण पोग्गला सूरियस्स लेस फुसति, ते ण पोग्गला नो सतप्पति,
ते ण पोग्गला असतप्पमाणा तदणतराइ बाहिराइ पोग्गलाइ णो सतावेंतीति
एस णं से समिते तावक्खेत्ते, एगे एवमाहसु ।

३—एगे पुण एवमाहसु—
ता जे ण पोग्गला सूरियस्स लेस फुसति,
ते ण पोग्गला अत्थेगतिया णो सतप्पति, अत्थेगतिया सतप्पति,
तत्थ अत्थेगइया सतप्पमाणा तदणतराइ बाहिराइ पोग्गलाइ अत्थेगतियाइं सतावेंति,
अत्थेगतियाइ णो सतावेंति,
एस ण समिते तावखेत्ते, एगे एवमाहसु ।

वयं पुण एवं वदामो—
ता जाओ इमाओ चदिम-सूरियाण देवाण विमाणेहिंतो लेसातो वहिता उच्छूढा अभिणिसट्ठाओ सतावेंति,
एतासि ण लेसाण अतरेसु अण्णतरीओ छिण्णलेसाओ समुच्छति,
तते ण ताओ छिण्णलेस्साओ संमुच्छियाओ समाणीओ तदणतराइ बाहिराइ पोग्गलाइ सतावेंतीति एस ण से समिते तावक्खेत्ते ।

—सूर्य० सूत्र ३० पृ० ९२-९३
—चन्द्र सूत्र ३०

[१५][१] प्र०—(भगवन्!) आपके मत मे सूर्य कितनी पौरुपी छाया का निर्माण करता है ?

उ०—इस विषय मे (अन्य तीर्थिको की) तीन मान्यताए हैं—

१—एक मान्यता यह है कि जो पुद्गल सूर्य के प्रकाश का स्पर्श करते हैं वे पुद्गल तपते हैं। वे तपते हुए पुद्गल अपने अनन्तरवर्ती वाह्य पुद्गलो को तपाते हैं। यह सूर्य का तापक्षेत्र है।

२—एक मान्यता यह है कि जो पुद्गल सूर्य के प्रकाश का स्पर्श करते हैवे पुद्गल नही तपते हैं। वे पुद्गल न तपते हुए अपने से बाद के (अनन्तरवर्ती) वाहर के पुद्गलो को नही तपाते हैं। यह सूर्य का तापक्षेत्र है।

३—एक मान्यता यह है कि जो पुद्गल सूर्य के प्रकाश का स्पर्श करते हैं उनमे से कुछ पुद्गल तपते हैं, कुछ नही तपते हैं। कुछ पुद्गल तपते हुए अपने अनन्तरवर्ती वाहर के कुछ पुद्गलो को तपाते हैं एव कुछ को नही तपाते। इस प्रकार सूर्य का तापक्षेत्र है।

हमारा कथन इस प्रकार है—

चन्द्र और सूर्य देवो के विमानो का जो यह प्रकाश (लेश्या) वाहर निकलकर वाह्य पदार्थों को प्रकाशित करता है, उन विमानो से निकली लेश्या के अपान्तरालो मे कुछ छिन्न लेश्याए उत्पन्न होती हैं, वे मूल-छिन्न लेश्याए अनन्तरवर्ती वाह्य पुद्गलो को प्रकाशित करती हैं। यह सूर्य का तापक्षेत्र है।

पुरुष की छाया का परिमाण

[१६][१] प्र०—ता कतिकट्ठे ते सूरिए पोरिसीच्छाय णिव्वत्तेति आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ पणवीस पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१—तत्थेगे एवमाहसु—
ता अणुसमयमेव सूरिए पोरिसिच्छाय णिव्वत्तेइ आहितेति वदेज्जा, एगे एवमाहसु ।

२—एगे पुण एवमाहंसु—

ता अणुमुहुत्तमेव सूरिए पोरिसिच्छाय णिव्वत्तेति आहितेति वदेज्जा,
एतेणं अभिलावेण णेतव्व ता जाओ चेव ओयसठितीए पणवीस पडिवत्तीओ,
ताउगे चेव णेतव्वाओ—जाव—अणुउस्सप्पिणीमेव सूरिए पोरिसीएच्छायं णिव्वत्तेति आहितातिं वदेज्जा, एगे एवमाहसु ।

वयं पुण एवं वदामो—

ता सूरियस्स ण उच्चत्त लेस च पडुच्च छाउद्देसे, उच्चत्त च छाय च पडुच्च लेसुद्देसे,
लेस च छाय च पडुच्च उच्चतोद्देसे,
तत्थ खलु इमाओ दुवे पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१—तत्थेगे एवमाहसु—

ता अत्थि ण से दिवसे, जसि ण दिवससि सूरिए चउपोरिसीच्छाय निव्वत्तेइ,
अत्थि ण से दिवसे, जसि ण दिवसंसि सूरिए दुपोरिसीच्छायं णिव्वत्तेति, एगे एवमाहंसु ।

२—एगे पुण एवमाहसु—

ता अत्थि ण से दिवसे, जसि ण दिवससि सूरिए दुपोरिसीच्छाय णिव्वत्तेति,
अत्थि ण से दिवसे, जसि दिवससि सूरिए नो किंचि पोरिसीच्छाय णिव्वत्तेति ।

१—तत्थ जे ते एवमाहंसु

ता अत्थि ण से दिवसे जसि ण दिवससि सूरिए चउपोरिसीयं छाय णिव्वत्तेति,
अत्थि णं से दिवसे जसि ण दिवससि सूरिए दो पोरिसिच्छाय निव्वत्तेइ,
ते एवमाहसु ।
ता जता ण सूरिए सव्वब्भतरं मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता णं उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसिए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
तेंसि च ण दिवससि सूरिए चउपोरिसीयं छाय निव्वत्तेति,
ता उग्गमणमुहुत्तसि य अत्थमणमुहुत्तंसि य लेसं अभिवड्ढेमाणे नो चेव णं निवुड्ढेमाणे ।
ता जता णं सूरिए सव्वबाहिरं मडलं उवसकमित्ता चारं चरति,
तता णं उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति,
जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,
तसि णं दिवससि सूरिए दुपोरिसियं छायं निव्वत्तेइ, तजहा—
उग्गमणमुहुत्तंसि य, अत्थमणमुहुत्तसि य,
लेसं अभिवड्ढेमाणे नो चेव णं णिवुड्ढेमाणे ।

२—तत्थ णं जे ते एवमाहसु—

ता अत्थि ण से दिवसे जसि णं दिवसंसि सूरिए दुपोरिसिय छायं णिव्वत्तेइ,
अत्थि ण से दिवसे जसि णं दिवसंसि सूरिए णो किंचि पोरिसियं छायं णिव्वत्तेति,
ते एवमाहसु ।

ता जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसंकमित्ता चारं चरति
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसिए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति
तसि च ण दिवसंसि सूरिए दुपोरिसिय छायं णिव्वत्तेति, तजहा—
उग्गमणमुहुत्तंसि, अत्थमणमुहुत्तसि य, लेसं अभिवड्ढेमाणे णो चेव ण णिवुड्ढेमाणे ।
ता जया ण सूरिए सव्ववाहिर मंडल उवसंकमित्ता चार चरति

तता ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति,
जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,
तसि च ण दिवससि सूरिए णो किंचि पोरिसिए छाय णिव्वत्तेति, तजहा—
उग्गमणमुहुतसि य, अत्थमणमुहुत्तसि य,
नो चेव ण लेस अभिवड्ढेमाणे वा निवुड्ढेमाणे वा ।

[२] प्र०—ता कइकट्ठ ते सूरिए पोरिसीच्छाय निव्वत्तेइ आहियाति वइज्जा ?

उ०—तत्थ इमाओ छण्णउइ पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१—तत्थेगे एवमाहसु—
अत्थि ण ते से देसे जसि ण देससि सूरिए एगपोरिसीय छाय निव्वत्तेइ, एगे एवमाहसु ।

२—एगे पुण एवमाहसु—
ता अत्थि ण से देसे जसि देससि सूरिए दुपोरिसिय छाय णिव्वत्तेति,
एव एतेण अभिलावेण णेतव्व—जाव—छण्णउति पोरिसिय छाय णिव्वत्तेति,

१—तत्थ जे ते एवमाहसु—
ता अत्थि ण से देसे, जसि ण देससि सूरिए एगपोरिसिय छाय णिव्वत्तेति,
ते एवमाहसु—
ता सूरियस्स ण सव्वहेट्ठिमातो सूरप्पडिहीतो वहिता अभिणिसट्ठाहि लेसाहि ताडिज्जमाणीहि
इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए वहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ जावतिय सूरिए उड्ढ उच्चत्तेण
एवतियाए एगाए अद्धाए
एगेण छायाणुमाणप्पमाणेण उमाए
तत्थ से सूरिए एगपोरिसीय छाय णिव्वत्तेति ।

२—तत्थ जे ते एवमाहसु—
ता अत्थि ण से देसे जसि ण देससि सूरिए दुपोरिसि छाय णिव्वत्तेति,
ते एवमाहसु,
ता सूरियस्स ण सव्वहेट्ठिमातो सूरियपडिधीतो वहिता अभिणिसट्ठिताहि लेसाहि ताडिज्जमाणीहि
इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए वहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागातो जावतिय सूरिए उड्ढ उच्चत्तेण
एवतियाहि दोहि अद्धाहि दोहि छायाणुमाणप्पमाणेहि उमाए
एत्थ ण से सूरिए दुपोरिसिय छाय णिव्वत्तेति, एव णेयव्व—जाव—
९६, तत्थ जे ते एवमाहसु—
ता अत्थि ण से देसे जसि ण देससि सूरिए छण्णउति पोरिसिय छाय णिव्वत्तेति,
ते एवमाहसु-
ता सूरियस्स ण सव्वहिट्ठिमातो सूरप्पडिधीओ वहिता अभिणिसट्ठाहि लेसाहि ताडिज्जमाणीहि इमीसे
रयणप्पभाए पुढवीए वहुसमरमणिज्जातो भूमिभागातो जावतिय सूरिए उड्ढ उच्चत्तेण एवतियाहि
छण्णवतीए छायाणुमाणप्पमाणेहि उमाए
एत्थ ण सूरिए छण्णउति पोरिसिय छाय णिव्वत्तेति, एगे एवमाहसु ।

वय पुण एव वदामो—

सातिरेगअउणट्ठिपोरिसीण सूरिए पोरिसीछाय णिव्वत्तेति,
अवड्ढपोरिसी ण छाया दिवसस्स कि गते वा सेसे वा ?
ता तिभागे गते वा सेसे वा ।

ता पोरिसी णं छाया दिवसस्स किं गते वा सेसे वा ?
ता चउब्भागे गते वा सेसे वा।
ता दिवड्ढपोरिसी ण छाया दिवसस्स किं गते वा सेसे वा ?
ता पचमभागे गते वा सेसे वा।
एवं ऽद्धपोरिसिं छोढुं पुच्छा,
दिवसस्स भाग छोढुं वा करण—जाव—ता अद्धअउणसट्ठिपोरिसी छाया दिवसस्सं क गते वा सेसे वा ?
ता एगूणवीससतभागे गते वा सेसे वा।
ता अउणसट्ठिपोरिसी ण छाया दिवसस्स किं गते वा सेसे वा ?
बावीससहस्सभागे गते वा सेसे वा।
ता सातिरेग अउणसट्ठिपोरिसी णं छाया दिवसस्स किं गते वा सेसे वा ?
ता णत्थि किंचि गते वा सेसे वा।
तत्थ खलु इमा पणवीसनिविट्ठ छाया पण्णत्ता,
तजहा—
खभछाया १, रज्जुछाया २, पागारछाया ३, पासायछाया ४, उवग्गछाया ५, उच्चत्तछाया ६, अणुलोमछाया ७, आरुभिता ८, समा ९, पडिहता १०, खीलच्छाया ११, पवखच्छाया १२, पुरतोउदया १३, पुरिसकठभाउवगता १४, पच्छिमकठभाउवगता १५, छायाणुवादिणी १६, किट्ठाणुवादिणी छाया १७, छाय-छाया १८, (गोलछाया—
तत्थ णं गोलच्छाया अट्ठविहा) पण्णत्ता, तजहा—
गोलच्छाया १, अवद्धगोलच्छाया २, गाढगोलछाया ३, अवद्धगाढगोलछाया ४, गोलावलिच्छाया ५, अवड्डगोलावलिच्छाया ६, गोलपुंजछाया ७, अवद्धगोलपुंजछाया ८।

—सूर्य सूत्र ३१ पृ ९४-९५
—चन्द्र सूत्र ३१

[१६][१] प्र०—सूर्य कितनी पौरुषी छाया का निर्माण करता है ?

उ०—इस विषय मे ये पच्चीस (अन्यतीर्थिको की) मान्यताएँ है—

१– एक मान्यता यह है कि प्रतिसमय सूर्य पौरुषी छाया का निर्माण करता है।

२– एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त पौरुषी छाया का निर्माण करता है। इस प्रकार ओजसस्थिति के समान यहा भी पच्चीस मान्यताए समझ लेनी चाहिए। —यावत्—प्रति-उत्सर्पिणी मे सूर्य पौरुषी छाया का निर्माण करता है।
हम इस प्रकार कहते है—
सूर्य का प्रकाश जब बढता है तब पौरुषी छाया कम होती है। छाया जब बढती है तब प्रकाश कम होता है। प्रकाश जब मध्य अवस्था मे होता है तब छाया भी मध्य अवस्था मे होती है। एतद्विपयक ये दो मान्यताएँ हैं—

१– एक मान्यता यह है कि ऐसा भी दिन होता है जिसमे सूर्य चतु पौरुषी छाया का निर्माण करता है और ऐसा भी दिन होता है जिसमे सूर्य द्विपौरुपी छाया का निर्माण करता है

२– एक मान्यता यह भी है कि—ऐसा भी दिन होता है जिसमे सूर्य द्विपौरुपी छाया बनाता है एव ऐसा भी दिन होता है जिसमे सूर्य किंचित् भी पौरुपी छाया नही बनाता।

१– इनमे से जो यह मानते हैं कि ऐसा भी दिन होता है जिसमे सूर्य चतु पौरुपी छाया बनाता है एव ऐसा भी दिन होता है जिसमे सूर्य द्विपौरुपी छाया का निर्माण करता है, उनका कथन

है कि जब सूय सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। उस दिन सूर्य चतु पौरुषी छाया का निर्माण करता है। (यह छाया) उदयकाल मे और अस्तकाल मे (होती है) (उदयकाल से) प्रकाश वढता है, न कि कम होता है। (अस्तकाल से प्रकाश कम होता है, न कि वढता है।)

जव सूर्य सर्ववाह्यमडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है और जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है। उम दिन सूर्य दोपौरुपी छाया का निर्माण करता है, यथा—उदयकाल मे एव अस्तकाल मे। (उदयकाल से) प्रकाश वढता है न कि कम होता है, इत्यादि।

२—जो यह मानते हैं कि ऐसा भी दिन होता है जिस दिन सूर्य द्विपौरुपी छाया का निर्माण करता है एव ऐसा भी दिन होता है जब कि सूर्य किंचित् भी पौरुपी—छाया का निर्माण नही करता, उनका कथन है कि जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपमक्रान्त हो गति करता है तव उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। उस दिन सूर्य द्विपौरुपी छाया का निर्माण करता है, यथा—उदयकाल मे एव अस्त- मे। (उदयकाल से) प्रकाश वढता है, न कि कम होता है, इत्यादि।

जव सूर्य सर्ववाह्यमडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है और जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है। उम दिन सूर्य किंचित् भी पौरुपी छाया का निर्माण नही करता, यथा—उदयकाल मे एव अस्तकाल मे। (इस समय) न तो प्रकाश की वृद्धि होती है, न हानि।

[२] प्र०—सूर्य कितनी पौरुपी छाया का निर्माण करता है ?

उ०—एतद्विषयक ये छियानवे मान्यताएँ हैं—

१—एक मान्यता यह है कि ऐसा भी देश (स्थान) है जिसमे सूर्य एक पौरुषी छाया का निर्माण करता है।

२—एक मान्यता यह है कि ऐसा भी देश है जिसमे सूर्य द्विपौरुषी छाया का निर्माण करता है। इस प्रकार छियानवे पौरुषी पर्यन्त समझना चाहिए।

१—इनमे से जिनकी मान्यता यह है कि ऐसा भी देश है जिसमे सूर्य एक पौरुपी छाया का निर्माण करता है, उनका कथन है कि सबसे नीचे रहा हुआ सूर्य वाहर निकलती हुई अपनी प्रभा से उद्योतित होता हुआ इस रत्नप्रभा पृथ्वी की अति सम एव रमणीय भूमि से जितना ऊपर उठता है उतना एक अर्थ से एक छायानुमान-प्रमाण होता है। इस प्रकार सूर्य एक पौरुषी छाया का निर्माण करता है।

२—जिनकी मान्यता यह है कि ऐसा भी देश है जिसमे सूर्य द्विपौरुपी छाया का निर्माण करता है, उनका कथन है कि सबसे नीचे रहा हुआ सूर्य वाहर निकलती हुई अपनी प्रभा से उद्योतित होता हुता इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अति सम एव रमणीय भूभाग से जितना ऊपर उठता है उतना दूसरे अर्थ से दो छायानुमान प्रमाण होता है। इस प्रकार सूर्य द्विपौरुपी छाया का निर्माण करता है। इस प्रकार छियानवे (छायानुमान प्रमाण) पर्यन्त समझना चाहिए। —यावत्—जिनकी मान्यता यह है कि ऐसा भी देश है जिसमे सूर्य छियानवे पौरुषी छाया का निर्माण करता है, उनका कथन है कि सबसे नीचे रहा हुआ सूर्य वाहर निकलनी हुई अपनी प्रभा से प्रकाशित होता हुआ इस रत्नप्रभा पृथ्वी की सम रमणीय भूमि से जितना

ऊंचा उठता है उतना छियानवे छायानुमान प्रमाण होता है। इस प्रकार सूर्य छियानवे पौरुषी छाया का निर्माण करता है।

हम इस प्रकार कहते हैं—

सूर्य उनसठ पौरुषी से अधिक पौरुषी-छाया का निर्माण करता है।

प्र०—अर्ध पौरुषी छाया आने पर दिन का कितना भाग व्यतीत हो जाता है एव कितना शेष रहता है ?

उ०—तृतीय भाग व्यतीत हो जाता है एव बाकी का शेष रहता है।

प्र०—पौरुषी छाया आने पर दिन का कितना भाग व्यतीत हो जाता है एव कितना शेष रहता है ?

उ०—चतुर्थ भाग व्यतीत हो जाता है एव आगे का शेष रहता है।

प्र०—डेढ पौरुषी छाया आने पर दिन का कितना भाग व्यतीत हो जाता है एव कितना शेष रहता है ?

उ०—पचम भाग व्यतीत हो जाता है एव बाद का शेष रहता है।

प्र०—इस प्रकार अर्ध पौरुषी बढा-बढा कर पूछना चाहिए एव दिन का भाग भी बढाते जाना चाहिए यावत्—साढे अठावन पौरुषी छाया आने पर दिन का कितना भाग व्यतीत हो जाता है एव कितना शेष रहता है ?

उ०—एक सौ उन्नीसवा भाग व्यतीत हो जाता है एव बाकी का शेष रहता है।

प्र०—उनसठ पौरुषी छाया आने पर दिन का कितना भाग व्यतीत हो जाता है एव कितना शेष रहता है ?

उ०—एक हजार बाईसवा भाग व्यतीत हो जाता है एव बाकी का शेष रहता है।

प्र०—उनसठ पौरुषी से अधिक छाया आने पर दिन का कितना भाग व्यतीत हो जाता है एव कितना शेष रहता है ?

उ०—कुछ भी व्यतीत नही होता। सब शेष रहता है।

छाया पच्चीस प्रकार की है, यथा[1]—

(१) स्तम्भछाया (२) रज्जुछाया (३) प्राकारछाया (४) प्रासादछाया (५) उगग्गा (उपाग्र) छाया (६) उच्चत्वछाया (७) अनुलोमछाया (८) आरुभितछाया (९) समछाया (१०) प्रतिहत-छाया (११) कीलछाया (१२) पक्षछाया (१३) पुरतोउदया छाया (१४) पुरिमकठभाउवगता छाया (१५) पच्छिमकठभाउवगता छाया (१६) छायानुवादिनी छाया (१७) किट्टाणुवादिनी छाया (१८) छाया-छाया, एव आठ प्रकार की गोलछाया—

(१) गोलछाया (२) अर्धगोलछाया (३) गाढगोलछाया (४) अर्धगाढलगोलछाया (५) गोलावलिछाया (६) अर्धगोलावलिछाया (७) गोलपु जछाया (८) अर्धगोलपु जछाया।

अर्धमंडल-भ्रमण-व्यवस्था

[१७][१] प्र०—ता कह ते अद्धमंडलसठिती आहितात्ति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमे दुवे अद्धमडलसठिती पण्णत्ता, तंजहा—दाहिणा चेव अद्धमडलसठिता, उत्तरा चेव अद्धमडलसठिती।

[२] प्र०—ता कह ते दाहिणअद्धमडलसठिती आहितात्ति वदेज्जा ?

उ०—ता अयण्ण जबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्द०—जाव—परिक्खेवेणं,

ता जया ण सूरिए सव्वब्भंतरदाहिण अद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चारं चरति,

---

१ छाया पच्चीस प्रकार की बतलाई गई है किन्तु भेदगणना करने पर छब्बीस भेद हो जाते हैं। टीकाकार ने भी इसी कारण कई व्यवीविध को स्पष्ट नही किया।

तदा ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राती भवति ।
से णिक्खममाणे सूरिए णव सवच्छर अयमाणे पढमसि अहोरत्तसि दाहिणाए अतराए भागाते तस्सादिपदेसाते अब्भितराणतर उत्तर अद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति,
तदा ण अट्ठारसमुहुत्तेहि दिवसे भवति, दोहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि ऊणे,
दुवालसमुहुत्ता राती, दोहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अधिया ।
से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि उत्तराए अतराए भागाते तस्सादिपदेसाए अब्भितरं तच्च दाहिण अद्धमडल सठिति उवसकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए अब्भितरतच्च दाहिण अद्धमडल सठिति उवसकमित्ता चार चरति,
तदा ण अट्ठारसमुहुत्तेहि दिवसे भवति, चउहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि ऊणे,
दुवालसमुहुत्ता राई भवति, चउहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अधिया ।

एव खलु एएण उवाएण णिक्खममाणे सूरिए तदणतराओऽणतरसि तसि २ देससि त त अद्धमडल-सठिति सकममाणे २ दाहिणाए २ अतराए भागाते तस्सादिपदेसाते,
सव्वबाहिर उत्तर अद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति ।

ता जया ण सूरिए सव्वबाहिर उत्तर अद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चारं चरति,
तदा ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,
एस ण पढमे छम्मासे, एम ण पढमछम्मासस्स पज्जवसाणे ।

से पविसमाणे सूरिए दोच्च छम्मास अयमाणे पढमसि अहोरत्तसि उत्तराते अतरभागाते तस्सादि-पदेसाते बाहिराणतर दाहिण अद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति,
ता जया ण सूरिए बाहिराणतर दाहिणअद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति,
तदा ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, दोहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि ऊणा,
दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति, दोहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अहिए ।

से पविसमाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि
दाहिणाते अतराए भागाते तस्सादिपदेसात
बाहिराणतर तच्च उत्तर अद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए बाहिर तच्च उत्तरअद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति
तदा ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, चउहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अधिया ।

एव खलु एतेण उवाएण पविसमाणे सूरिए तदाणतराउ तदाणतर तसि २ देससि त त अद्धमंडल-सठिति सकममाणे सकममाणे उत्तराए अतराभागाते तस्सादिपदेसाए सव्वब्भतर दाहिण अद्धमंडल-सठिति उवसकमित्ता चार चरति
ता जता णं सूरिए सव्वब्भतरदाहिण अद्धमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति,
तदा ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
एस ण दोच्चे छम्मासे, एस ण दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।

एस ण आदिच्चे सवच्छरे, एस ण आदिच्चसवच्छरस्स पज्जवसाणे ।

[३] प्र०—ता कह ते उत्तरा अद्धमडलसंठिती आहिताति वदेज्जा ?

उ०—ता अय ण जबुद्दीवे दीवे सव्वदीव–जाव–परिक्खेवेण,
ता जया ण सूरिए सव्वब्भतरउत्तरमडलसठिति उवसकमित्ता चार चरति,
तदा ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
जहा दाहिणा तहा चेव, णवरं उत्तरट्ठिओ अब्भितराणतर दाहिणं उवसकमइ ।

दाहिणातो अब्भिंतर तच्चं उत्तर उवसंकमति ।
एवं खलु एएण उवाएणं—जाव–सव्वबाहिर दाहिण उवसकमति,
सव्ववाहिणं दाहिण उवसंकमति २ त्ता दाहिणालो वाहिराणंतर उत्तरं उवसंकमति
उत्तरातो बाहिर तच्च दाहिणं, तच्चातो दाहिणातो सकममाणे २—जाव–सव्वब्भतर उवसंकमति,
तहेव ।
एस ण दोच्चे छम्मासे, एस ण दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।
एस णं आदिच्चे सवच्छरे, एस ण आदिच्चस्स संवच्छरस्स पज्जवसाणे । गाहाओ ।

—सूर्य सूत्र १२-१३ पृ १६-१७
—चन्द्र सूत्र १२-१३

[१७]]१] प्र०—(सूर्य की) अर्धमडलपरिभ्रमणव्यवस्था अर्थात् प्रत्येक अहोरात्र मे आधे मडल मे भ्रमण करने की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ०—अर्धमडलपरिभ्रमणव्यवस्था (अर्धमडलसस्थिति) दो प्रकार की है—
दक्षिणार्ध मडलसस्थिति और उत्तरार्ध मडलसस्थिति ।

[२] प्र०—दक्षिणार्ध मडलसस्थिति किस प्रकार की है ?

उ०—यह जम्बूद्वीप समस्त द्वीप-समुद्रो (के मध्य मे है)—यावत्—परिधियुक्त है। जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ।

वहा से निकलता हूआ सूर्य नये सवत्सर मे आता हुआ प्रथम अहोरात्र मे दक्षिण के अन्तर्भाग से उसके प्रथम प्रदेश से आभ्यन्तरान्तर उत्तरार्ध मडल-सस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है। जव सूर्य आभ्यन्तरानन्तर उत्तरार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव १८−$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है एव १२+$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है । वहा से निकलता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे उत्तर के अन्तर्भाग से उसके प्रथम प्रदेश से आभ्यन्तर-तृतीय दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है। जब सूर्य आभ्यन्तर-तृतीय दक्षिणार्ध मण्डल-सस्थिति पर सक्रान्त हो गति करता है तब १८−$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है एव १२+$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है ।

इस प्रकार निकलता हुआ सूर्य एक के बाद दूसरे तत्-तत् प्रदेश से तत्-तत् अर्धमडलसस्थिति पर सक्रान्त होता हुआ दक्षिण के अन्तर्भाग से उसके प्रथम प्रदेश से सर्ववाह्य उत्तरार्धमडल सस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है ।

जव सूर्य सर्ववाह्य उत्तरार्धमडल सस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है। यह प्रथम छह मास एव प्रथम छह मास के पर्यवसान के विषय मे है ।

वहां से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय छह मास मे आता हुआ प्रथम अहोरात्र मे उत्तर के अन्तर्भाग से उसके प्रथम प्रदेश से वाह्यानन्तर दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है। जब सूर्य वाह्यानन्तर दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव १८−$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव १२+$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है ।

वहा से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे दक्षिण के अन्तर्भाग से उसके प्रथम प्रदेश से वाह्य-तृतीय उत्तरार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है ।

जव सूर्य वाह्य-तृतीय उत्तरार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव १८−$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव १२+$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है ।

इस प्रकार प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक के बाद दूसरे तत्-तत् प्रदेश से तत्-तत् अर्धमडल-सस्थिति पर सक्रान्त होता हुआ उत्तर के अन्तर्भाग से उसके प्रथम प्रदेश से सर्वाभ्यन्तर दक्षिणार्ध मडल सस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है। जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो गति करता है तब उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य बारह मुहूर्त की रात्रि होती है। यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह मास के पर्यवसान के विषय मे है। यह आदित्यसवत्सर एव आदित्यसवत्सर के पर्यवसान के सम्बन्ध मे है।

[३] प्र०—उत्तरार्ध मडलसस्थिति कैसी है ?

उ०—यह जम्बूद्वीप सर्वद्वीप—यावत्—परिधि वाला है। जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर उत्तरार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। यह सब दक्षिणार्ध मडलसस्थिति के समान ही है। इतना अन्तर है कि इसमे सूर्य उत्तर से आभ्यन्तरानन्तर दक्षिणार्धसस्थिति पर उपसक्रमण करता है एव दक्षिण से आभ्यन्तर-तृतीय उत्तरार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रमण करता है।

इस प्रकार—यावत्—सर्वबाह्य दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रमण करता है। सर्वबाह्य दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर उपसक्रान्त हो दक्षिण से बाह्यानन्तर उत्तरार्ध मडल सस्थिति पर उपसक्रमण करता है। उत्तर से बाह्यतृतीय दक्षिणार्ध मडलसस्थिति पर (सक्रमण करता है)। तृतीय दक्षिणार्ध मडलसस्थिति से सक्रमित होता हुआ—यावत्—उसी प्रकार सर्वाभ्यन्तर पर उपसक्रान्त होता है। यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह मास के पर्यवसान के विषय मे है। यह आदित्यसवत्सर एव आदित्यसवत्सर के पर्यवसान के विषय मे है।

सूर्यमंडलों की संख्या

[१८][१] प्र०—**कइ ण भते ! सूरमडला पण्णत्ता ?**

उ०—**गोयमा ! एगे चउरासीए मडलसए पण्णत्ते इति।**

[१८][१] प्र०—भगवन् ! सूर्य के मडल कितने हैं ?

उ०—गौतम ! १८४ सूर्य-मण्डल हैं।

जम्बूद्वीप में सूर्यमंडलों की संख्या

[१९][१] प्र०—**जबुद्दीवे ण भते ! दीवे केवइय ओगाहित्ता केवइया सूरमडला पण्णत्ता ?**

उ०—**गोयमा ! जबुद्दीवे २ असीय जोयणसय ओगाहित्ता एत्थ ण पण्णट्ठी सूरमडला पण्णत्ता[1]।**

[१९][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे कितना अवगाहन करने पर कितने सूर्य-मण्डल हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप मे एक सौ अस्सी योजन क्षेत्र अवगाहन करके ६५ सूर्यमण्डल हैं।

लवणसमुद्र में सूर्यमंडलों की संख्या

[२०][१] प्र०—**लवणे ण भते ! समुद्दे केवइय ओगाहेत्ता केवइआ सूरमडला पण्णत्ता ?**

उ०—**गोयमा ! लवणसमुद्दे तिण्णि तीसे जोअणसए ओगाहित्ता एत्थ ण एगूणवीसे सूरमडलसए पण्णत्ते। एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे दीवे लवणे अ समुद्दे एगे चुलसीए सूरमडलसए भवतीतिमक्खायति।**

—जबू सूत्र १२७ पृ ४३४

१– सम. ६५ सूत्र १

[२] प्र०—भगवन् ! लवणसमुद्र में कितने क्षेत्र में कितने सूर्य-मण्डल हैं ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र में ३३० योजन के क्षेत्र में ११९ सूर्य-मण्डल हैं।

इस प्रकार सब मिल कर जम्बूद्वीप और लवणसमुद्र में १८४ सूर्य-मण्डल है।

निषध और नीलवंत पर्वत पर सूर्यमंडलों की संख्या

[२१] निसढे णं पव्वए तेवट्ठि सूरोदया पण्णत्ता।
एव नीलवंते वि।

—सम० ६३ सूत्र ३-४

[२१] निषध पर्वत पर ६३ सूर्योदय (सूर्यमण्डल) कहे गए हैं।
इसी प्रकार नीलवन्त पर्वत पर भी (६३ सूर्यमण्डल) हैं।

सूर्यमंडलों का क्षेत्र

[२२][१] प्र०—सव्वब्भंतराओ णं भंते सूरमंडलाओ केवइआए अबाहाए सव्वबाहिरए सूरमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पंचदसुत्तरे जोअणसए अबाहाए सव्वबाहिरए सूरमडले पण्णत्ते।

—जंबू सूत्र १२८ पृ ४३४

[२२][१] प्र०—भगवन् ! सर्वाभ्यन्तर सूर्यमण्डल से कितनी दूरी पर सर्वबाह्य सूर्यमण्डल है ?

उ०—गौतम ! ५१० योजन की दूरी पर सर्वबाह्य सूर्यमण्डल है।

मंडल का क्षेत्र

[२३][१] प्र०—ता के ते चिन्न पडिचरति आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमे दुवे सूरिया पण्णत्ता, तजहा—
भारहे चेव सूरिए, एरवए चेव सूरिए।
ता एते ण दुवे सूरिए पत्तेय पत्तेयं तीसाए-तीसाए मुहुत्तेहिं एगमेगं अद्धमंडल चरति,
सट्ठीए-सट्ठीए मुहुत्तेहि एगमेग मडल सघातति।
ता णिक्खममाणे खलु एते दुवे सूरिया णो अण्णमण्णस्स चिण्णं पडिचरति,
पविसमाणा खलु एते दुवे सूरिया अण्णमण्णस्स चिण्णं पडिचरंति,
त सतमेग चोताल।

[२] प्र०—तत्थ के हेऊ वदेज्जा ?

उ०—ता अयण्णं जंबुद्दीवे दीवे–जाव–परिक्खेवेण,
तत्थ ण अय भारहए चेव सूरिए जबुद्दीवस्स २ पाईण-पडीणायत-उदीण-दाहिणायताए जीवाय मंडल चउवीसएण सतेण छेत्ता
दाहिण-पुरत्थिमिल्लंसि चउभागमडलसि बाणउतिय-सूरियसताइ जाइ अप्पणा चेव चिण्णाइं पडिचरति,
उत्तर-पच्चत्थिमिल्लसि चउभागमडलसि एक्काणउतिं सूरियमताइ जाइ सूरिए अप्पणो चेव चिण्ण पडिचरति,
तत्थ अयं भारहे सूरिए एरवतस्स सूरियस्स
जंबुद्दीवस्स२ पाईण-पडिणीयायताए उदीणदाहिणायताए जीवाए मडल चउवीसएणं सतेणं छेत्ता
उत्तर-पुरत्थिमिल्लसि चउभागमडलसि बाणउतिं सूरियमताइ–जाव–सूरिए परस्स चिण्णं पडिचरति,
दाहिण-पच्चत्थिमिल्लंसि चउब्भागमडलसि
एकूणणउतिं सूरियमताइ जाइं सूरिए परस्स चेव चिण्ण पडिचरति।

तत्थ अय एरवए सूरिए जवुद्दीवस्स २ पाईण-पडीणायताए
उदीण-दाहिणायताए जीवाए मडल चउवीसएण सतेण छेत्ता
उत्तर-पुरत्थिमिल्लसि चउब्भागमडलसि वाणउर्ति सूरियमयाइ-जाव—
सूरिए अप्पणो चेव चिण्ण पडिचरति ।
दाहिण-पुरत्थिमिल्लसि चउभागम डलसि एक्काणउर्ति-सूरियमताइ-जाव—
सूरिए अप्पणो चेव चिण्ण पडिचरति ।
तत्थ ण एय एरवतिए सूरिए भारहस्स सूरियस्स जवुद्दीवस्स पाईण-पडीणायताए
उदीण-दाहिणायताए जीवाए म डल चउवीसएण सतेण छित्ता
दाहिण-पच्चत्थिमिल्लसि चउभागम डलसि बाणउर्ति सूरियमताइ-जाव—
सूरिए परस्स चिण्ण पडिचरति,
उत्तर-पुरत्थिमिल्लसि चउभागम डलसि एक्काणउर्ति सूरियमताइ जाइं
सूरिए परस्स चेव चिण्ण पडिचरति,
ता णिक्खममाणे खलु एते दुवे सूरिया णो अण्णमण्णस्स चिण्ण पडिचरति,
पविसमाणा खलु एते दुवे सूरिया अण्णमण्णस्स चिण्ण पडिचरति,
सतमेग चोताल । गाहाओ ।

—सूर्य० सूत्र १४ पृ० २१–२२
—चन्द्र० सूत्र १४

[२३][१] प्र०—भगवन् ! कौन-सा सूर्य (स्वय या पर के द्वारा) चीर्ण (क्षेत्र) मे प्रतिचार करता है ?

उ०—इस (जम्बूद्वीप) मे ये दो सूर्य हैं, यथा—भरत का सूर्य और ऐरावत का सूर्य । ये दोनो सूर्य भिन्न भिन्न तीस–तीस मुहूर्त्त मे प्रत्येक अर्ध मण्डल पर गमन करते हैं एव साठ–साठ मुहूर्त्त मे प्रत्येक मण्डल को पूरा करते हैं ।

निकलते हुए ये दोनो सूर्य एक–दूसरे के क्षेत्र मे नही चलते । प्रविष्ट होते हुए ये दोनो सूर्य एक-दूसरे के क्षेत्र मे चलते हैं । यह (प्रवेश-क्षेत्र) १८४ (मण्डल) है ।

[२] प्र०—इसका क्या कारण है ?

उ०—यह जम्बूद्वीप—यावत्—परिधि वाला है । यहा यह भरत का सूर्य जम्बूद्वीप की पूर्व–पश्चिम की लम्वाई व उत्तर–दक्षिण की चौडाई की जीवा से मण्डल के १२४ भाग करने पर दक्षिण-पूर्व के चतुर्भाग मण्डल मे जव ९२ वें मण्डल से निकलता है तव वह अपने ही क्षेत्र मे गमन करता है एव उत्तर–पश्चिम के चतुर्भाग मण्डल मे जव ९१ वें मण्डल से निकलता है तव वह सूर्य अपने ही क्षेत्र मे गमन करता है ।

यह भरत का सूर्य ऐरावत के सूर्यमण्डल के जम्बूद्वीप की पूर्व–पश्चिम की लम्वाई एव उत्तर-दक्षिण की चौडाई की जीवा से १२४ भाग करने पर उत्तर-पूर्व के चतुर्भाग मण्डल मे ९२ वें मण्डल से निकलने पर दूसरे के क्षेत्र मे चलता है एव दक्षिण-पश्चिम के चतुर्भाग मण्डल मे ९१ वें मण्डल से निकल कर दूसरे के क्षेत्र मे ही गमन करता है ।

यह ऐरावत का सूर्य जम्बूद्वीप की पूर्व-पश्चिम की लम्वाई एव उत्तर-दक्षिण की चौडाई की जीवा से मण्डल के १२४ भाग करने पर उत्तर-पूर्व के चतुर्भाग मण्डल मे जव ९२ वें मण्डल से निकलता है तव वह अपने ही क्षेत्र मे विचरण करता है एव दक्षिण-पूर्व के चतुर्भाग मण्डल, मे जव ९१ वें मण्डल से निकलता है तव वह अपने ही क्षेत्र मे विचरता है ।

यह ऐरावत का सूर्य जम्बूद्वीप की पूर्व-पश्चिम की लम्वाई एव उत्तर-दक्षिण की चौडाई की जीवा से १२४ भाग करने पर दक्षिण-पश्चिम के चतुर्भाग मण्डल मे ९२ वें मण्डल से निकलने

पर दूसरे के क्षेत्र मे गमन करता है एव उत्तर-पूर्व के चतुर्भाग मण्डल मे ९१ वें मण्डल से निकलने पर दूसरे के क्षेत्र मे ही गमन करता है।

इस प्रकार निकलते हुए ये दोनो सूर्य एक-दूसरे के क्षेत्र मे नही जाते। प्रविष्ट होते हुए ये दोनो सूर्य एक-दूसरे के क्षेत्र मे जाते है। यह प्रवेश (क्षेत्र) १८४ (मण्डल) है।

यहा गाथाए है[1]।

मंडलों का परिमाण

[२४][१] प्र०—ता सव्वाणि ण मडलवया केवतिय वाहल्लेणं केवतिय आयाम-विक्खभेण, केवतिय परिक्खेवेणं आहितातित वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमा तिण्णि पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–तत्थेगे एवमाहसु—
ता सव्वाणि ण मडलवता जोयण वाहल्लेणं,
एग जोयणसहस्स एग तेत्तीस जोयणसतं आयाम-विक्खभेण,
तिण्णि जोयणसहस्साइ तिण्णि य नवणउए जोयणसते परिक्खेवेणं पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु।

२–एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वाणि ण मडलवता जोयण वाहल्लेण,
एग जोयणसहस्स एग च चउतीस जोयणसतं आयाम-विक्खभेण,
तिण्णि जोयणसहस्साइ चत्तारि बिउत्तरे जोयणसते परिक्खेवेण पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु।

३–एगे पुण एवमाहसु—
ता जोयण वाहल्लेण, एग जोयणसहस्स एग च पणतीसं जोयणसत आयाम-विक्खंभेणं,
तिन्नि जोयणसहस्साइ चत्तारि पंचुत्तरे जोयणसते परिक्खेवेण पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु।

वयं पुण एवं वयामो—
ता सव्वावि मडलवता अडतालीस एगट्ठिभागे जोयणस्स वाहल्लेण,
अणियता आयाम-विक्खभेणं परिक्खेवेण आहितातित वदेज्जा।

[२] प्र०—तत्थ ण को हेऊत्ति वदेज्जा ?

उ०—ता अयण्णं जबुद्दीवे २—जाव—परिक्खेवेणं,
ता जया ण सूरिए सव्वब्भतरं मंडल उवसंकमित्ता चारं चरति
तया ण सा मंडलवता अडतालीस[2] एगट्ठिभागे जोयणस्स वाहल्लेणं,
णवणउइ जोयणसहस्साइं छच्च चत्ताले [3]जोयणसते आयामविक्खभेणं,
तिण्णि जोयणसतसहस्साइ पण्णरस जोयणसहस्साइं एगुणणउतिं जोयणाइं किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेण, तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
से णिक्खममाणे सूरिए णवं सवच्छरं अयमाणे पढमंसि अहोरत्तंसि अब्भितराणतरं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरति।
ता जया ण सूरिए अब्भितराणतर मडलं उवसंकमित्ता चारं चरति,
तदा ण सा मडलवता अडयालीसं एगट्ठिभागे जोयणस्स वाहल्लेण,

---

१. ये गाथाएँ उपलब्ध नही हैं।
२. सम० ४८ सूत्र ३।
३. सम० ९९ सूत्र ४-५-६.

णवणवई जोयणसहस्साइ छच्च पणताले जोयणसते पणतीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स आयामविक्ख-भेण,
तिण्णि जोयणसतसहस्साइ पन्नरस च सहस्साइ एग सत्तर जोयणसत किंचिविसेसूण परिक्खेवेण,
तदा ण दिवस-रातिप्पमाण तहेव,
से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि अब्भितरतच्च मडल उवसकमित्ता चार चरति,
ता जया ण सूरिए अब्भितरतच्च मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तया ण सा मडलवता अडतालीस एगट्ठिभागे जोयणस्स बाहल्लेण,
णवणवति जोयणसहस्साइ छच्च एक्कावण्णे जोयणसते णव य एगट्ठिभागा जोयणस्स आयामवि-क्खभेण ।
तिण्णि जोयणसयसहस्साइ पन्नरस य सहस्साइ एग च पणवीस जोयणसय परिक्खेवेण पण्णत्ते,
तता ण दिवस-राई तहेव ।

एव खलु एतेण णएण णिक्खममाणे सूरिए तताणतरातो तदाणतर मडलातो मडल उवसकमाणे २ पच २ जोयणाइ पणतीस च एकट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगे मडले विक्खभवुड्ढि अभिवड्ढेमाणे २ अट्ठारस २ जोयणाइ परिरयवुड्ढि अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तदा ण सा मडलवता अडतालीस एगट्ठिभागा जोयणसयसहस्स छच्च सट्ठे जोयणसते आयामवि-क्खभेण,
तिन्नि जोयणसयसहस्साइ अट्ठारससहस्साइ तिण्णि य पण्णरसुत्तरे जोयणसते परिक्खेवेण,
तदा ण उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,
एस ण पढमे छम्मासे, एस ण पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।

से पविसमाणे सूरिए दोच्च छम्मास अयमाणे पढमसि अहोरत्तसि बाहिराणतर मडलं उवसकमित्ता चार चरति
ता जया ण सूरिए बाहिराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति तता ण सा मडलवया अडतालीस एगट्ठिभागे जोयणस्स बाहल्लेण
एग जोयणसयसहस्स छच्च चउपण्णे जोयणसते छव्वीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स आयामविक्खभेण,
तिन्नि जोयणसतसहस्साइ अट्ठारससहस्साइ दोण्णि य सताणउते जोयसते परिक्खेवेण पण्णत्ता,
तता ण राइदिय तहेव ।
से पविसमाणे सूरिए दोच्चे अहोरत्तसि बाहिरतच्च मडल उवसकमित्ता चारं चरति,
ता जया ण सूरिए बाहिरतच्च मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तता ण सा मडलवता अडयालीस एगट्ठिभागे जोयणस्स बाहल्लेण,
एग जोयणसयसहस्स छच्च अडयाले जोयणसए बावण्ण च एगट्ठिभागे जोयणस्स आयामविक्खभेण,
तिण्णि जोयणसतसहस्साइ अट्ठारससहस्साइ दोण्णि अउयणासीते जोयणसते परिक्खेवेण पण्णत्ता,
दिवस-राई तहेव ।

एव खलु एतेणुवाएण पविसमाणे सूरिए तताणंतरातो तदाणतर मडलातो मडल सकममाणे २ पच २ जोयणाइ पणतीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगे मडले विक्खभवुड्ढि णिवुड्ढेमाणे २ अट्ठारस जोयणाइ परिरयवुड्ढि णिवुड्ढेमाणे सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति ।
ता जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तता ण सा मडलवया अडयालीस एगट्ठिभागे जोयणस्स बाहल्लेण,
णवणउति जोयणसहस्साइ छच्च चत्ताले जोयणसए आयामविक्खभेण,
तिण्णि जोयणसयसहस्साइ पण्णरस य सहस्साइ अउणाउति च जोयणाइ किंचिविसेसाहियाइ परिक्खेवेण पण्णत्ता,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,

जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
एस णं दोच्चे छम्मासे, एस ण दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे,
एस ण आदिच्चे सवच्छरे, एस ण आदिच्चस्स सवच्छरस्स पज्जवसाणे ।
ता सव्वावि ण मडलवता अडयालीसं एगसट्ठिभागे जोयणस्स बाहल्लेणं[1]
सव्वावि मडलतरिया दो जोयणाइं विक्खभेण,
एस णं अद्धा तेसीयसतपडुप्पणो पचदसुत्तरे जोयणसते आहितातिं वदेज्जा ।

[२] प्र०—ता अब्भितरातो मडलवताओ बाहिर मडलवतं, बाहिराओ वा अब्भितरं मडलवतं
एस ण अद्धा केवतियं आहितातिं वदेज्जा ?

उ०—ता पंचदसुत्तरे जोयणसते अडयालीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स आहितातिं वदेज्जा ।

[३] प्र०—ता अब्भतराओ मडलवतातो बाहिरमण्डलवता, बाहिरातो० अब्भतरमंडलवता
एस ण अद्धा केवतिय आहितातिं वदेज्जा ?

उ०—ता पंचणवुत्तरे जोयणसते तेरस य एगट्ठिभागे जोयणस्स आहितातिं वदेज्जा ।

[४] प्र०—अब्भितराते मडलवताए बाहिरा मडलवया, बाहिराते मंडलवताते अब्भंतरमंडलवया
एस ण अद्धा केवतिय आहितातिं वदेज्जा ?

उ०—ता पचदसुत्तरे जोयणसए आहियातिं वदेज्जा ?

—सूर्य सूत्र २० पृ ३७–३९
—चन्द्र सूत्र २०
—जबू सूत्र १३२ पृ. ४३८

[२४][१] प्र०—ये सब मण्डल (सूर्यमडल) कितने मोटे, कितने लबे-चौडे एव कितनी परिधि वाले है ?

उ०—एतद्विषयक (अन्यतीर्थिको की) निम्नलिखित तीन मान्यताए हैं—

१–कोई कहते हैं कि ये सब मडल एक योजन मोटे, ११३३ योजन लम्बे-चौडे एव ३३९९ योजन की परिधि वाले हैं ।

२–कोई-कोई कहते हैं कि ये सब मडल एक योजन मोटे, ११३४ योजन लम्बे-चौडे एव ३४०२ योजन की परिधि वाले है ।

३–किसी का कथन है कि ये एक योजन मोटे, ११३५ योजन लम्बे-चौडे एव ३४०५ योजन की परिधि वाले हैं ।

हमारा कथन इस प्रकार है—
ये सब मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटे, अनियत लम्बाई चौडाई एव परिधि वाले हैं ।

[२] प्र०—इसका क्या कारण है ?

उ०—यह जम्बूद्वीप-यावत्-परिधि वाला है । इसमे जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब वह मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटा, ९९६४० योजन लबा-चौडा एव ३१५०८९ योजन से किंचित् विशेषाधिक परिधि वाला होता है । उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता

१–सम. ४८ सूत्र

है एव जघन्य वारह मुहूर्त की रात्रि होती है। वहा से निकलता हुआ सूर्य नये सवत्सर मे आता हुआ प्रथम अहोरात्र मे आभ्यन्तरानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जव सूर्य आभ्यन्तरानन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव वह मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटा, ९९६४५$\frac{३५}{६१}$ योजन लम्वा-चौडा एव ३१५१०७ योजन से किंचित् विशेष न्यून परिधि वाला होता है। उस समय दिन-रात का प्रमाण भी उसी हिसाव से होता है।

वहा से निकलता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जव सूर्य आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव वह मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटा, ९९६५१ $\frac{९}{६१}$ योजन लम्वा-चौडा एव ३१५१२५ योजन की परिधि वाला होता है। उस समय दिन-रात उसी हिसाव से होता है।

इस प्रकार निकलता हुआ सूर्य एक मडल से दूसरे मडल पर उपसक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल मे ५$\frac{३५}{६१}$ योजन लवाई-चौडाई सहित एव १८ योजन परिधि मे वृद्धि करता हुआ सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है।

जव सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव वह मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटा, १००६६० योजन लवा-चौडा एव ३१८३१५ योजन की परिधि वाला होता है। उस समय, उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है। यह प्रथम छह मास एव प्रथम छह मास के पर्यवसान के सवध मे है।

वहा से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय छह मास मे आता हुआ प्रथम अहोरात्र मे वाह्यानन्तर मण्डल पर उपसक्रान्त हो गति करता है। जव सूर्य वाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव वह मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटा, १००६५४$\frac{२६}{६१}$ योजन लम्वा-चौडा एव ३१८२९७ योजन की परिधि वाला होता है। उस समय रात-दिन उसी हिसाव से होते हैं।

वहा से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे वाह्य-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है। जव सूर्य वाह्य-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव वह मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटा, १००६४८$\frac{५२}{६१}$ योजन लवा-चौडा एव ३१८२७९ योजन की परिधि वाला होता है। (उस समय) दिन-रात उसी हिसाव से होते हैं।

इस प्रकार प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक के वाद दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल मे ५$\frac{३५}{६१}$ योजन की चौडाई (लवाई सहित) मे एव १८ योजन की परिधि मे कमी करता हुआ सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव वह मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटा, ९९६४० योजन लम्वा-चौडा एव ३१५०८९ योजन से किंचित् विशेषाधिक की परिधि वाला होता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है और जघन्य वारह मुहूर्त की रात्रि होती है।

यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह मास के पर्यवसान के विषय मे है। यह आदित्यसवत्सर एव आदित्यसवत्सर के पर्यवसान के विषय मे समझना चाहिए।

ये सभी मडल $\frac{४८}{६१}$ योजन मोटे हैं। सभी मडलो का अन्तर दो योजन की चौडाई (लवाई सहित) का है। उक्त मार्ग १८३ दिन मे पूर्ण होने वाला ५१० योजन प्रमाण है।

[३] प्र०—अभ्यन्तर मडल (के अदर के अन्त) से वाह्य मडल (के अन्दर के अन्त) तक एव वाह्य मडल (के अन्दर के अन्त) से अभ्यन्तर मडल (के अन्दर के अन्त) तक का मार्ग कितना है?

उ०—५१० योजन है।

[४] प्र०—अभ्यन्तर मडल के (अन्दर के अन्त) से वाह्य मडल के (वाह्यान्त) तक एव वाह्य मडल (के वाह्यान्त) से अभ्यन्तर मडल (के अन्दर के अन्त) तक का मार्ग कितना है ?

उ०—५१०$\frac{४८}{६१}$ योजन है।

[५] प्र०—आभ्यन्तर मडल (के वाह्यान्त) से वाह्य मडल (के अन्दर के अन्त) तक एव वाह्य मडल (के अन्दर के अन्त) से अभ्यन्तर मडल (के वाह्यान्त) तक का मार्ग कितना है ?

उ०—५०९$\frac{१३}{६१}$ योजन है।

[६] प्र०—अभ्यन्तर मडल (के वाह्यान्त) से वाह्य मडल (के वाह्यान्त) तक एव वाह्य मडल (के वाह्यान्त) से अभ्यन्तर मडल (के वाह्यान्त) तक का मार्ग कितना है ?

उ०—५१० योजन है।

सूर्यमंडलों की लंबाई, चौड़ाई, हानि–वृद्धि

[२५][१] प्र०—जंबुद्दीवे दीवे सव्वब्भंतरे ण भते ! सूरमडले केवइय आयाम-विक्खमेण परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णवणउइं जोयणसहस्साइं छच्च चत्ताले जोयणसए आयामविक्खमेण,
तिण्णि य जोयणसयसहस्साइ पण्णरस य जोयणसहस्साइ एगूणणउइ च जोयणाइं किंचिविसेसाहिआइं परिक्खेवेणं ।

[२] प्र०—अब्भतराणतरे ण भते ! सूरमडले केवइय आयाम-विक्खंभेण, केवइय परिक्खेवेणं पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णवणउइ जोयणसहस्साइं छच्च पणयाले जोयणसए पणतीसं च एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयाम-विक्खभेण,
तिण्णि जोयणसयसहस्साइं पण्णरस य जोयणसहस्साइं एगं सत्तुत्तरं जोयणसयं परिक्खेवेण पण्णत्ते ।

[३] प्र०—अब्भंतरतच्चे णं भते ! सूरमडले केवइयं आयामविक्खमेण, केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णवणउइ जोयणसहस्साइं छच्च एकावण्णे जोयणसए णव य एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खमेण,
तिण्णि य जोयणसयसहस्साइं पण्णरस जोयणसहस्साइं एगं च पणवीस जोयणसयं परिक्खेवेण, एव खलु एतेण उवाएण णिक्खममाणे सूरिए तयाणंतराओ मडलाओ तयाणतरं मडलं उवसंकममाणे २ पच २ जोयणाइं पणतीस च एगसट्ठिभागा जोयणस्स एगमेगे मंडले विक्खंभवुड्ढि अभिवड्ढेमाणे २ अट्ठारस २ जोयणाइं परिरयवुड्ढि अभिवड्ढेमाणे २ सव्वबाहिर मंडलं उवसकमित्ता चार चरइ ।

[२५][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित सर्वाभ्यन्तर सूर्यमडल कितना लम्वा चौडा एव कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! ९९६४० योजन लवा-चौडा एव ३१५०८९ योजन से कुछ अधिक परिधि वाला है।

[२] प्र०—भगवन् ! अभ्यन्तरानन्तर (दूसरा) सूर्यमडल कितना लवा-चौडा और कितनी परिधि वाला है।

उ०—गौतम ! ९९६४५$\frac{३५}{६१}$ योजन लम्वा-चौडा और ३१५१०७ योजन की परिधि वाला है।

[३] प्र०—भगवन् ! अभ्यन्तरतृतीय सूर्यमडल कितना लम्वा-चौडा और कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! ९९६५१$\frac{९}{६१}$ योजन लम्वा-चौडा और ३१५१२५ योजन की परिधि वाला है।
इस क्रम से निकलता हुआ सूर्य एक के वाद दूसरे मडल पर उपसक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल मे ५$\frac{३५}{६१}$ योजन चौडाई (लम्वाई सहित) की वृद्धि करता हुआ एव १८ योजन परिधि मे वढाता हुआ सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

[४] प्र०—सव्ववाहिरए ण भते ! सूरमडले केवइय आयामविक्खभेण, केवइय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एग जोयणसयसहस्स छच्च सट्ठे जोयणसए आयामविक्खभेण
तिण्णि य जोयणसयसहस्साइ अट्ठारस य सहस्साइ तिण्णि य पण्णरसुत्तरे जोयणसए परिक्खेवेण ।

[५] प्र०—वाहिराणतरे ण भंते ! सूरमडले केवइय आयामविक्खभेण, केवइय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एग जोयणसयसहस्स छच्च चउप्पण्णे जोयणसए छव्वीस च एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खभेण,
तिण्णि य जोयणसयसहस्साइ अट्ठारस य सहस्साइ दोण्णि य सत्ताणउए जोअणसए परिक्खेवेणति ।

[६] प्र०—वाहिरतच्चे ण भते ! सूरमडले केवइय आयामविक्खभेण, केवइय परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एग जोयणसयसहस्स छच्च अडयाले जोयणसए वावण्ण च एगसट्ठिभाए जोयणस्स आयामविक्खभेण,
तिण्णि जोयणसयसहस्साइ अट्ठारस य सहस्साइ दोण्णि अ अउणासीए जोअणसए परिक्खेवेणं,
एव खलु एएण उवाएण पविसमाणे सूरिए तयाणतराओ मडलाओ तयाणतर मडल सकममाणे २ पच-पच जोयणाइ पणतीस च एगसट्ठिभाए जोयणस्स
एगमेगे मडले विक्खभवुद्धि णिव्वुड्ढेमाणे २ अट्ठारस २ जोयणाइ परिरयवुद्धि णिव्वुड्ढेमाणे २ सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरइ ।

—जवू० सूत्र १३२ पृ० ४३८
—सूर्य० सूत्र २० पृ० ३७-३९
—चन्द्र० " "

[४] प्र०—भगवन् ! सर्ववाह्य सूर्यमण्डल कितना लम्वा–चौडा एव कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! १००६६० योजन लम्वा–चौडा एव ३१८३१५ योजन की परिधि वाला है।

[५] प्र०—भगवन् ! वाह्यानन्तर (वाहर से दूसरा) सूर्यमण्डल कितना लम्वा–चौडा एव कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! १००६५४$\frac{२६}{६१}$ योजन लम्वा–चौडा, और ३१८२९७ योजन की परिधि वाला है ।

[६] प्र०—भगवन् ! (वाह्यतृतीय सूर्यमण्डल कितना लम्वा-चौडा और कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! १००६४८$\frac{५२}{६१}$ योजन लम्वा–चौडा और ३१८२७९ योजन की परिधि वाला है।
इस क्रम से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक के वाद दूसरे मण्डल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक मण्डल मे ५$\frac{३५}{६१}$ योजन चौडाई (लम्वाई सहित) की कमी करता हुआ एव १८ योजन परिधि मे घटाता हुआ सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है ।

सूर्यमंडलों का अन्तर

[२५][१] प्र०—सूरमडलस्स ण भते ! सूरमडलस्स य केवइय अवाहाए अतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोअमा ! दो जोयणाइ अवाहाए अतरे पण्णत्ते ।

—जम्बू० सूत्र १२९ पृ० ४३४

[२५][१] प्र०—भगवन् ! (एक) सूर्यमण्डल से (दूसरे) सूर्यमण्डल का कितना अन्तर है ?

उ०—गौतम ! दो योजन का अन्तर है ।

मेरु पर्वत से सूर्यमंडलों का अन्तर

[२६][१] प्र०—जबुद्दीवे णं भते ! दीवे मंदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वब्भंतरे सूरमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चोआलीस जोयणसहस्साइं अट्ठ य वीसे जोयणसए सव्वब्भंतरे सूरमडले पण्णत्ते ।

[२] प्र०—जबुद्दीवे ण भंते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइयाए सव्वब्भंतराणतरे सूरमंडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चोआलीस जोयणसहस्साइं अट्ठ य बावीसे जोयणसए अडयालीसं च एगसट्ठिभागे जोयणस्स अबाहाए अब्भतराणतरे सूरमडले पण्णत्ते ।

[३] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्य केवइयाए अबाहाए अब्भतरतच्चे सूरमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चोआलीसं जोयणसहस्साइ अट्ठ य पणवीसे जोयणसए पणतीसं च एगसट्ठिभागे जोयणस्स अबाहाए अब्भंतरतच्चे सूरमडले पण्णत्ते इति ।

एव खलु एतेणं उवाएण णिक्खममाणे सूरिए तयणतरातो मडलाओ तयणंतर मंडलं संकममाणे सकममाणे दो-दो जोयणाइं अडयालीस च एगसट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगे मडले अबाहाए बुड्ढि-अभिवड्ढेमाणे२ सव्वबाहिर मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइति ।

[४] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिरे सूरमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पणयालीस जोयणसहस्साइ तिण्ण य तीसे जोयणसए अबाहाए सव्वबाहिरे सूरमंडले पण्णत्ते ।

[५] प्र०—जंबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए सव्वबाहिराणतरे सूरमंडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पणयालीस जोयणसहस्साइं तिण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तेरस य एगसट्ठिभाए जोयणस्स अबाहाए बाहिराणतरे सूरमडले पण्णत्ते ।

[६] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइयाए अबाहाए बाहिरतच्चे सूरमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पणयालीस जोयणसहस्साइं तिण्णि य चउवीसे जोयणसए छव्वीस च एगसट्ठिभाए जोयणस्स अबाहाए बाहिरतच्चे सूरमडले पण्णत्ते,

एव खलु एएण उवाएण पविसमाणे सूरिए तयाणतराओ मडलाओ तयाणंतर मडलं सकममाणे-संकममाणे दो-दो जोयणाइं अडयालीस च एगसट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगे मडले अबाहा बुड्ढि णिवुड्ढेमाणे२ सव्वब्भतरं मडलं उवसकमित्ता चार चरइ ।

—जम्बू० सू० १३१ पृ० ४३६

[२६][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से सर्वाभ्यन्तर सूर्यमडल कितनी दूरी पर है ?

उ०—गौतम ! सर्वाभ्यन्तर सूर्यमंडल ४४८२० योजन की दूरी पर है ।

[२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से आभ्यतरानन्तर सूर्यमडल कितनी दूरी पर है ?

उ०—गौतम ! ४४८२२$\frac{४८}{६१}$ योजन की दूरी पर आभ्यन्तरानन्तर मडल है ।

[३] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से आभ्यन्तरतृतीय सूर्यमडल कितनी दूरी पर है ?

उ०—गौतम ! आभ्यन्तरतृतीय सूर्यमडल ४४८२५$\frac{३५}{६१}$ योजन की दूरी पर है ।

इस क्रम से निकलता हुआ सूर्य एक के पश्चात् दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल की दूरी मे २$\frac{४८}{६१}$ योजन की वृद्धि करता हुआ सर्वबाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है ।

[४] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से सर्ववाह्य सूर्यमडल कितनी दूरी पर है ?

उ०—गौतम ! ४५३३० योजन की दूरी पर सर्ववाह्य सूर्यमडल है।

[५] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से वाह्यानन्तर सूर्यमडल कितनी दूरी पर है ?

उ०—गौतम ! ४५३२७$\frac{१३}{६१}$ योजन की दूरी पर वाह्यान्तर सूर्यमडल है।

[६] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीपस्थित मेरु पर्वत से वाह्यतृतीय सूर्यमडल कितनी दूरी पर है ?

उ०—गौतम ! वाह्यतृतीय सूर्यमडल ४५३२४$\frac{२६}{६१}$ योजन की दूरी पर है।

इस क्रम से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक के वाद दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल की दूरी मे २$\frac{४८}{६१}$ योजन की कमी करता हुआ सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

मंडलों में सूर्यगति

[२७][१] प्र०—ता जया ण सूरिए सव्वब्भतरातो मडलातो सव्ववाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
सव्ववाहिरातो मडलातो सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चारं चरति,
एस ण अद्धा केवतिय रातिंदियग्गेण आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता तिण्णि छावट्ठे रातिंदियसए रातिंदियग्गेण आहितेति वदेज्जा।

[२] प्र०—ता एताए अद्धाए सूरिए कति मडलाइ चरति ?

उ०—ता चुलसीय मडलसत चरति, वासीति मडलसत दुक्खुत्तो चरति, तजहा—
णिक्खममाणे चेव, पवेसमाणे चेव।
दुवे य खलु मडलाइ सव्व चरति, तजहा—
सव्वब्भतर चेव मडल, सव्ववाहिर चेव मडल[1]।

—सूर्य सू ९–१० पृ ११
—चन्द्र ,, ,,

[२७][१] प्र०—जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल से सर्ववाहृय मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है एव सर्ववाह्य मण्डल से सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव वह काल रात्रि-दिन के परिमाण से कितना होता है ?

उ०—(तव) वह (काल) ३६६ रात्रि-दिन का होता है।

[२] प्र०—इस काल मे सूर्य कितने मण्डल चलता है ?

उ०—(इस काल मे सूर्य) १८४ मण्डल चलता है, जिनमे से १८२ वें मण्डल पर दो वार चलता है, यथा—निकलता हुआ एव प्रविष्ट होता हुआ। दो मण्डलो पर एक वार चलता है, यथा—सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर और सर्ववाहृय मण्डल पर।

सूर्य का मंडलसंक्रमण

[२८][१] प्र०—ता कह ते मडलातो मडल सकममाणे २ सूरिए चार चरति आहिताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमातो दुवे पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—
१–तत्थेगे एवमाहसु
ता मडलातो मडल सकममाणे २ सूरिए भेयघाएण सकामइ, एगे एवमाहसु।

---

१. सम० ८२ सूत्र १.

२–एगे पुण एवमाहंसु

ता मडलातो मडलं संकममाणे २ सूरिए कण्णकलं णिव्वेढेति, एगे एवमाहसु

१–तत्थ जे ते एवमाहसु

ता मडलातो मडल संकममाणे २ भेयघाएणं सकमइ तेसि ण अय दोसे—

ता जेणतरेण मडलातो मडल सकममाणे २ सूरिए भेयघाएण सकमति,

एवतिय च ण अद्ध पुरतो न गच्छति,

पुरतो अगच्छमाणे मडलकाल परिहवेति, तेसि ण अयं दोसे ।

२–तत्थ जे ते एवमाहसु—

ता मडलातो मडल सकममाणे सूरिए कण्णकलं णिव्वेढेति,

तेसि ण अय विसेसे-ता जेणतरेण मंडलातो मंडल सकममाणे सूरिए कण्णकलं णिव्वेढेति

एवतिय च ण अद्ध पुरतो गच्छति,

पुरतो गच्छमाणे मडलकाल ण परिहवेति, तेसि ण अय विसेसे ।

तत्थ जे ते एवमाहंसु,

मडलातो मडल सकममाणे सूरिए कण्णकल णिवेढेति,

एतेण णएण णेतव्व, णो चेव ण इतरेण ।

—सूर्य सूत्र २२ पृ ४८–४९
—चन्द्र ,, ,,

[२८][१] प्र०—एक मण्डल से दूसरे मण्डल पर संक्रमण करता हुआ सूर्य किस प्रकार गति करता है ?

उ०—एतद्विषयक दो मान्यताए है—

१–एक मान्यता यह है कि एक मण्डल से दूसरे मण्डल पर सक्रमण करता हुआ सूर्य भेदघात-पूर्वक गति करता है अर्थात् एक मण्डल को पूरा करके फिर अन्तराल मे गमन करके दूसरे मण्डल मे सक्रमण करता है ।

२–एक मान्यता यह है कि एक मण्डल से दूसरे मण्डल पर सक्रमण करता हुआ सूर्य कर्णकला (प्रथम कोटि भाग) का त्याग करता हुआ गति करता है ।

१–इनमे से जिनकी मान्यता यह है कि एक मण्डल से दूसरे मण्डल पर सक्रमण करता हुआ सूर्य भेदघातपूर्वक गति करता है, उसमे यह दोष है कि जिस अन्तर से एक मण्डल से दूसरे मण्डल पर सक्रमण करता हुआ सूर्य भेदघातपूर्वक गति करता है तो जब तक वह अपान्तराल मे गमन करता है तब तक दूसरे मण्डल मे गमन नही करता, अत उसका मण्डलकाल कम हो जाता है ।

२–जिन की मान्यता यह है कि एक मडल से दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ सूर्य कर्ण-कला की हानि करता हुआ गति करता है, उसमे यह विशेषता है कि जिस अन्तर से एक मडल से दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ सूर्य कर्ण-कला की हानि करता हुआ गति करता है, उससे अर्द्ध (मडल) पूर्ण करता हुआ चलता है एव दूसरे मडल मे गमन करता हुआ मडलकाल को कम नही करता ।

इनमे से जिनकी मान्यता यह है कि एक मडल से दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ सूर्य कर्णकला की हानि करता हुआ गति करता है, उसे ठीक समझना चाहिए, अन्य को नही ।

अहोरात्र में सूर्य द्वारा मंडलों का स्पर्श

[२९][१] प्र०—ता केवतिय ते एगमेगेण रातिदिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति आहितेत्ति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ सत्त पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–तत्थेगे एवमाहसु

ता दो जोयणाइ अद्धदुवत्तालीस तेसीतसयभागे जोयणस्स एगमेगेण रातिदिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु ।

२–एगे पुण एवमाहसु

ता अड्ढातिज्जाइ जोयणाइ एगमेगेण राइदिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु । ता तिभागूणाइ तिन्नि जोयणाइ एगमेगेण राइ दिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु ।

३–एगे पुण एवमाहसु

ता तिभागूणाइ तिन्नि जोयणाइ एगमेगेण राइ दिएण विकपइत्ता २ सूरिए चारं चरति, एगे एवमाहसु

४–एगे पुण एवमाहसु

ता तिण्णि जोयणाइ अद्धसीतालीस च तेसीतिसयभागे जोयणस्स एगमेगेण राइ दिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु ।

५–एगे पुण एवमाहसु

ता अद्धुट्ठाइ जोयणाइ एगमेगेण राइ दिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु ।

६–एगे पुण एवमाहसु

ता चउ०भागूणाइ चत्तारि जोयणाइ एगमेगेण राइ दिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु ।

७–एगे पुण एवमाहसु

ता चत्तारि जोयणाइ अद्धबावण्ण च तेसीतिसतभागे जोयणस्स एगमेगेण राइ दिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु ।

वय पुण एव वदामो—

ता दो जोयणाइ अडयालीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स एगमेग मडल एगमेगेण राइ दिएण विकपइत्ता २ सूरिए चार चरति ।
तत्थ ण को हेतु इति वदेज्जा ?
ता अयण्ण जबुद्दीवे २–जाव–परिक्खेवेण ।
ता जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
से णिक्खममाणे सूरिए णव सवच्छर अयमाणे पढमसि अहोरत्तसि अब्भितराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,

ता जया ण सूरिए अब्भितराणतर मडल उवसंकमित्ता चार चरति,
तदा णं दो जोयणाइं अडयालीसं च एगट्ठिभागे जोयणस्स एगेण राइदिएण विकंपइत्ता चारं चरति ।
तदा ण अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे,
दुवालसमुहुत्ता राई भवति, दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिया,
से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि
अब्भितरतच्च मडल उवसकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए अब्भितरतच्च मडल उवसंकमित्ता चार चरति
तदा ण पच जोयणाइं पणतीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स दोहिं राइदिएहिं विकपइत्ता चारं चरति,
तता ण अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, चउहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे,
दुवालसमुहुत्ता राई भवति, चउहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं अधिया ।
एव खलु एतेण उवाएण णिक्खममाणे सूरिए तताणंतराओ तदाणंतर मडलातो मडलं सकममाणे २
दो जोयणाइ अडयालीसं च एगट्ठिभागे जोयणस्स एगमेग मंडल एगमेगेण राइंदिएण विकंपमाणे २
सव्वबाहिरं मडल उवसकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए सव्वब्भतराओ मडलातो सव्वबाहिरं मडलं उवसकमित्ता चारं चरति,
तता ण सव्वब्भंतर मडलं पणिहाय एगेण तेसीतेणं राइदियसतेण पंचदसुत्तरजोयणसते विकंपइत्ता चारं चरति,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,
एस ण पढमछम्मासे, एस ण पढमछम्मासस्स पज्जवसाणे ।

से य पविसमाणे सूरिए दोच्च छम्मास अयमाणे
पढमसि अहोरत्तसि बाहिराणतर मडल उवसकमित्ता चारं चरति
ता जता णं सूरिए बाहिराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तया ण दो-दो जोयणाइ अडयालीसं च एगट्ठिभागे जोयणस्स एगेणं राइ दिएण विकपइत्ता चारं चरति,
तता ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे,
दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति, दोहिं एगट्ठिभागेहिं मुहुत्तेहिं अहिए ।
से पविसमाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि बाहिरतच्चसि मडलसि उवसकमित्ता चारं चरति,
ता जया ण सूरिए बाहिरतच्च मडल उवसकमिता चार चरति,
तया ण पच जोयणाइ पणतीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स दोहिं राइंदिएहिं विकपइत्ता चारं चरति, राइ दिए तहेव ।
एव खलु एतेणुवाएण पविसमाणे सूरिए ततोणतरातो तयाणतर च णं मडल सकममाणे २ दो जोयणाइ अडयालीस च एगट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेण राइंदिएण विकपमाणे २ सव्वब्भतरं मंडलं उवसंकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए सव्वबाहिरातो मडलातो सव्वब्भतर मडलं उवसंकमित्ता चार चरति,
तता ण सव्वबाहिर मडल पणिधाय एगेण तेसीतेण राइ दियसतेण पचदसुत्तरे जोयणसते विकंपइत्ता चार चरति,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति ।
एस ण दोच्चे छम्मासे, एस ण दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।
एस ण आदिच्चे सवच्छरे, एस ण आदिच्चस्स सवच्छरस्स पज्जवसाणे ।

—सूर्य० सूत्र १८ पृ० ३१–३३
—चन्द्र० ,, ,,

[२६][१] प्र०—प्रत्येक रात्रि-दिन मे सूर्य कितना क्षेत्र विकम्पित अर्थात् उल्लघित करके गति करता है ?

उ०—इस विषय मे निम्नोक्त सात मान्यताएँ हैं—

१–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे $२+\frac{४१\frac{१}{२}}{१८३}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन करके गति करता है।

२–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे $२\frac{१}{२}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है।

३–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे $२\frac{१}{३}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है।

४–एक मान्यता ऐसी है कि सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे $३+\frac{४६\frac{१}{२}}{१८३}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है।

५–एक मान्यता ऐसी है कि सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे $३\frac{१}{२}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है।

६–एक मान्यता ऐमी है कि सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे $४-\frac{१}{४}$ $(३\frac{३}{४})$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है।

७–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे $४+\frac{५१\frac{१}{२}}{१८३}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है।

हम इस प्रकार कहते हैं—

सूर्य प्रत्येक रात्रि-दिन मे प्रत्येक मडल के $२\frac{४८}{६१}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है।

इसमे क्या हेतु है ?

यह जम्बूद्वीप-यावत्-परिधि वाला है। इसमे जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है और जघन्य बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

यहा से निकलता हुआ सूर्य नवीन सवत्सर मे आता हुआ प्रथम अहोरात्र मे अभ्यन्तरानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जब सूर्य अभ्यन्तरानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब एक रात्रि-दिन मे $२\frac{४८}{६१}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गति करता है। उस समय $१८-\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है एव $१२+\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है। यहा से निकलता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे अभ्यन्तरतृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जब सूर्य अभ्यन्तरतृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब दो रात्रि-दिन मे $५\frac{३५}{६१}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन करके गतिशील होता है। उस समय $१८-\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है एव $१२+\frac{४}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

इस क्रम से निकलता हुआ सूर्य एक मडल से दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक रात्रि-दिन मे प्रत्येक मडल के $२\frac{४८}{६१}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन करता हुआ सर्वबाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल से सर्वबाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब सर्वाभ्यन्तर मडल से प्रारभ कर १८३ रात्रि-दिन मे ५१० योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गतिशील होता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है और जघन्य बारह मुहूर्त्त का दिन होता है। यह प्रथम छह मास के एव प्रथम छह मास के पर्यवसान के विषय मे है।

वहा से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय छह मास मे आता हुआ प्रथम अहो-रात्र मे बाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है। जब सूर्य बाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब एक रात्रि-दिन मे २$\frac{४८}{६१}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गमन करता है। उस समय १८−$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त की रात्रि होती है और १२+$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त्त का दिन होता है।

वहा से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे बाह्य-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब दो रात्रि-दिन मे ५$\frac{३५}{६१}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन कर गमन करता है। उस समय रात-दिन उसी हिसाब से होते हैं।

इस क्रम से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक के बाद दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ रात्रि-दिन मे २$\frac{४८}{६१}$ योजन क्षेत्र का उल्लघन करता हुआ सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जब सूर्य सर्वबाह्य मडल से सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब सर्वबाह्य मडल से प्रारभ कर १८३ रात्रि-दिन मे ५१० योजन क्षेत्र का उल्लघन करके गमन करता है। उस समय अठारह मुहूर्त्त का दिन और जघन्य बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह मास के पर्यवसान के विषय मे है।

यह आदित्यसवत्सर है एव आदित्यसवत्सर के पर्यवसान के विषय मे है।

द्वीप आदि में सूर्यगति का अन्तर

[३०][१] प्र०—ता केवतिय ते दीव समुद्द वा ओगाहित्ता सूरिए चारं चरति, आहिताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ पच पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–एगे एवमाहंसु

ता एग जोयणसहस्स एग च तेत्तीस जोयणसत दीवं वा समुद्दं वा ओगाहित्ता सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु।

२–एगे पुण एवमाहसु

ता एग जोयणसहस्स एग च उतीस जोयणसत दीवं वा समुद्द वा ओगाहित्ता सूरिए चार चरति, एगे एवमाहंसु।

३–एगे पुण एवमाहसु

ता एग जोयणसहस्स एग च पणतीसं जोयणसत दीव वा समुद्दं वा ओगाहित्ता सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु।

४–एगे पुण एवमाहसु

ता अवड्ढं दीव वा समुद्दं वा ओगाहित्ता सूरिए चार चरति, एगे एवमाहसु।

५–एगे पुण एवमाहसु

ता णो किंचि दीव वा समुद्दं वा ओगाहित्ता सूरिए चारं चरति।

१–तत्थ जे ते एवमाहसु–ता एग जोयणसहस्स एगं तेत्तीस जोयणसतं दीव वा समुद्दं वा उग्गा-हित्ता सूरिए चार चरति, ते एवमाहंसु—

जता णं सूरिए सव्वब्भतर मंडलं उवसंकमित्ता चार चरति

तया ण जंबुद्दीवं एग जोयणसहस्स एग च तेत्तीस जोयणसतं ओगाहित्ता सूरिए चारं चरति।

तता णं उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ,

ता जया ण सूरिए सव्वबाहिरं मडल उवसकमित्ता चार चरइ,
तया ण लवणसमुद्द एग जोयणसहस्स एग च तेत्तीस जोयणसयं ओगाहित्ता चार चरति,
जया ण लवणसमुद्द एग जोयणसहस्स एग च तेत्तीस जोयणसय ओगाहित्ता चार चरइ,
तया ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, जहण्णिए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ ।

२–एव चोत्तीस जोयणसत ।

३–एव पणतीस जोयणसत—पणतीसे वि एव चेव भाणियव्व ।

४–तत्थ जे ते एवमाहसु

ता अवड्ढ दीव वा समुद्द वा ओगाहित्ता सूरिए चार चरति,
ते एवमाहसु—
जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तता ण अवड्ढ जबुद्दीव २ ओगाहित्ता चार चरति,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
एव सव्वबाहिरए वि, णवर अवड्ढ लवणसमुद्द, तता ण राइदिय तहेव ।

५–तत्थ जे ते एवमाहसु

ता णो किंचि दीव वा समुद्द वा ओगाहित्ता सूरिए चार चरति,
ते एवमाहसु—
ता जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण णो किंचि दीव वा समुद्द वा ओगाहित्ता सूरिए चार चरति,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
तहेव, एव सव्वबाहिरए मडले, णवर णो किंचि लवणसमुद्द ओगाहित्ता चार चरति,
रातिंदिय तहेव, एगे एवमाहसु ।

वय पुण एव वदामो—

ता जया ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तता ण जबुद्दीवे असीत जोयणसत ओगाहित्ता चार चरति[1],
तदा ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
एव सव्वबाहिरेवि, णवर लवणसमुद्द तिण्णि तीसे जोयणसते ओगाहित्ता चार चरति,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति ।
(गाथाओ भाणियव्वाओ)

—सूर्य सूत्र १६–१७, पृ २९–३१
—चन्द्र ,, ,,

---

१ सम ८० सूत्र ७

[३०][१] प्र०—सूर्य द्वीप अथवा समुद्र का कितना क्षेत्र अवगाहित कर-व्याप्त कर-गति करता है ?

उ०—एतद्विषयक निम्नलिखित पांच मान्यताएँ है—

१–एक मान्यता यह है कि सूर्य द्वीप अथवा समुद्र का ११३३ योजन क्षेत्र व्याप्त कर गति करता है।

२–एक मान्यता यह है कि सूर्य द्वीप अथवा समुद्र का ११३४ योजन क्षेत्र व्याप्त कर गति करता है।

३–एक मान्यता यह है कि सूर्य द्वीप अथवा समुद्र का ११३५ योजन क्षेत्र व्याप्त कर गति करता है।

४–एक मान्यता यह है कि सूर्य अर्ध द्वीप अथवा समुद्र को व्याप्त कर गति करता है।

५–एक मान्यता यह है कि सूर्य किंचिन्मात्र द्वीप अथवा समुद्र को व्याप्त न करता हुआ गति करता है।

१–इनमे से जिनकी मान्यता यह है कि सूर्य द्वीप अथवा समुद्र का ११३३ योजन क्षेत्र व्याप्त कर गति करता है, उनका कथन है कि जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मंडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव जम्बूद्वीप का ११३३ योजन क्षेत्र व्याप्त करके गति करता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है और जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

जव सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव लवणसमुद्र का ११३३ योजन क्षेत्र व्याप्त कर गतिशील होता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एवं जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है।

२–इसी प्रकार ११३४ योजन क्षेत्र के विषय मे समझना चाहिए।

३–इसी प्रकार ११३५ योजन क्षेत्र के विषय मे समझना चाहिए।

४–जिनकी मान्यता यह है कि सूर्य अर्ध द्वीप अथवा समुद्र को व्याप्त कर गति करता है उनका कथन है कि जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव अर्ध जम्बूद्वीप को व्याप्त कर गतिशील होता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन और जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। इसी प्रकार सर्ववाह्य (मडल) के विषय मे भी समझना चाहिए। अन्तर यह है कि यहा अर्ध लवणसमुद्र ग्रहण करना चाहिए। उस समय रात्रि-दिन उसी हिसाब से होते हैं।

५–जिनकी मान्यता यह है कि सूर्य किंचिन्मात्र द्वीप अथवा समुद्र को व्याप्त न करते हुए गति करता है उनका कथन है कि जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है तव किंचिन्मात्र जम्बूद्वीप को व्याप्त न करते हुए गतिशील होता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। इसी प्रकार सर्ववाह्य मडल के विषय मे भी समझना चाहिए। विशेषता यह है कि यहा किंचिन्मात्र लवणसमुद्र को व्याप्त न करते हुए गति करता है (ऐसा समझना चाहिए)। उस समय रात्रि-दिन उसी हिसाब से होते है।

हमारा कथन इस प्रकार है—

जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव जम्बूद्वीप का १८० योजन क्षेत्र व्याप्त कर गतिशील होता है। उस समय अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एवं जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। इसी प्रकार सर्ववाह्य मडल के विषय मे भी समझना चाहिए। विशेषता यह है कि इस समय (सूर्य) लवणसमुद्र का ३३० योजन क्षेत्र व्याप्त कर गति करता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है।

सूर्य की तिर्छी गति का परिमाण

[३१][१] प्र०—ता कह तेरिच्छगती आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ अट्ठ पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–तत्थेगे एवमाहसु

ता पुरच्छिमातो लोगताओ पादो मरीची आगासंसि उत्तिट्ठति,
से ण इम लोय तिरिय करेइ, तिरिय करेत्ता पच्चत्थिमसि लोयसि सायमि राय आगासंसि विद्धसिस्सति, एगे एवमाहसु ।

२–एगे पुण एवमाहसु

ता पुरच्छिमातो लोअतालो पातो सूरिए आगासंसि उत्तिट्ठति,
से ण इम तिरिय लोय तिरिय करेति, करित्ता पच्चत्थिमसि लोयसि सूरिए आगासंसि विद्धसति, एगे एवमाहसु ।

३–एगे पुण एवमाहसु

ता पुरत्थिमाओ लोयतातो पादो सूरिए आगासंसि उत्तिट्ठति,
से इम तिरिय लोय तिरिय करेति करित्ता पच्चत्थिमसि लोयसि साय अहे पडियागच्छति,
अधे पडियागच्छेत्ता पुणरवि अवरभूपुरत्थिमातो लोग्नातो पातो सूरिए आगासंसि उत्तिट्ठति,
एगे एवमाहसु ।

४–एगे पुण एवमाहसु

ता पुरत्थिमाओ लोगताओ पाओ सूरिए पुढविकायंसि उत्तिट्ठति,
से ण इम तिरिय लोय तिरिय करेति करेत्ता पच्चत्थिमिल्लसि लोयतसि साय सूरिए पुढविकायसि विद्धसइ, एगे एवमाहसु ।

५–एगे पुण एवमाहसु

पुरत्थिमिल्लाओ लोयताओ पाओ सूरिए पुढविकायसि उत्तिट्ठइ,
से ण इम तिरिय लोय तिरिय करेइ, करेत्ता पच्चत्थिमिल्लसि लोयतसि साय सूरिए पुढविकायसि अणुपविसइ, अणुपविसित्ता अहे पडियागच्छइ २ पुणरवि अवरभूपुरत्थिमाओ लोगताओ पाओ सूरिए पुढविकायसि उत्तिट्ठइ, एगे एवमाहसु ।

६–एगे पुण एवमाहसु

ता पुरत्थिमिल्लाओ लोयताओ पाओ सूरिए आउकायसि उत्तिट्ठइ,
से ण इम तिरिय लोय तिरिय करेइ,
करेत्ता पच्चत्थिमिल्लसि लोयतसि पाओ सूरिए आउकायसि विद्धसति, ऐगे एवमाहसु ।

७–एगे पुण एवमाहसु

ता पुरत्थिमातो लोगतातो पाओ सूरिए आउकायसि उत्तिट्ठति,
से ण इम तिरिय लोय तिरिय करेति,
करेत्ता पच्चत्थिमिल्लसि लोयतसि साय सूरिए आउकायसि पविसइ,
पविसित्ता अहे पडियागच्छति २ त्ता पुणरवि अवरभूपुरत्थिमातो लोयतातो पादो सूरिए आउकायसि उत्तिट्ठति, एगे एवमाहसु ।

८–एगे पुण एवमाहंसु

ता पुरत्थिमातो लोयंताओ वहूइं जोयणाइ, वहूइं जोयणसताइं, बहूइं जोयणसहस्साइ उड्ढं दूरं उप्पतित्ता एत्थ ण पातो सूरिए आगाससि उत्तिट्ठति,

से ण इमं दाहिणड्ढ लोय तिरिय करेति, करेत्ता उत्तरड्ढलोयं तमेव रातो,

से ण इमाइं दाहिणुत्तरड्ढलोयाइं तिरियं करेइ, करित्ता पुरत्थिमाओ लोयताओ बहूइं जोयणाइं, वहूयाइं जोयणसताइं, बहूंइ जोयणसहस्साइं उड्ढं दूरं उप्पतित्ता एत्थ ण पातो सूरिए आगाससि उत्तिट्ठति, एगे एवमाहंसु ।

वयं पुण एवं वयामो

ता जंबुद्दीवस्स दीवस्स पाईण-पडीणायत-ओदीण-दाहिणायताए जीवाए मडल चउव्वीसेणं सतेण छेत्ता,

दाहिण-पुरच्छिमंसि उत्तर-पच्चत्थिमंसि य चउब्भागमंडलसि इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जातो भूमिभागाओ अट्ठ जोयणसताइ उड्ढं उप्पतित्ता एत्थ ण पादो दुवे सूरिया उत्तिट्ठ ति ।

ते ण इमाइं दाहिणुत्तराइ जबुद्दीवभागाइं तिरिय करेंति २ त्ता पुरत्थिम-पच्चत्थिमाइं जंबुद्दीव-भागाइं तामेव रातो,

ते ण इमाइं पुरच्छिम-पच्चत्थिमाइ जबुद्दीवभागाइ तिरिय करेंति २ त्ता दाहिणुत्तराइं जबुद्दीव-भागाइ तामेव रातो ।

ते ण इमाइं दाहिणुत्तराइ पुरच्छिम-पच्चत्थिमाणि य जबुद्दीवभागाइ तिरियं करेति २ त्ता जबुद्दीवस्स २ पाईण-पडीणायत-ओदीण-दाहिणायताए जीवाए मडल चउव्वीसेणं सतेण छेत्ता दाहिणपुरच्छिमिल्लसि उत्तरपच्चत्थिमिल्लसि य चउभागमंडलसि इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जातो भूमिभागातो अट्ठ जोयणसयाइं उड्ढ

एत्थ ण पादो दुवे सूरिया आगासंसि उत्तिट्ठ ति ।

—सूर्य सूत्र २१ पृ ४५-४६
—चन्द्र ,, ,,

[३१][१] प्र०—(सूर्य की) तिर्छी गति किस प्रकार की है ?

उ०—एतद्विषयक निम्नोक्त आठ मान्यताएँ है—

१–एक मान्यता यह है कि प्रात काल किरणसमूह पूर्वी लोकान्त (पूर्व दिशा) से आकाश मे निकलता है एव इस लोक को तिर्छा (प्रकाशित) करता है । प्रकाशित करके सायंकाल पश्चिमी लोकान्त मे आकाश मे विध्वस्त हो जाता हे ।

२–एक मान्यता ऐसी है कि (देवतारूप) सूर्य प्रात काल पूर्वी लोकान्त से आकाश मे उगता है एव इस तिर्यक् लोक (मे परिभ्रमण करता हुआ इस) को प्रकाशित करता है। प्रकाशित करके पश्चिमी लोकान्त मे आकाश मे विध्वस्त हो जाता है ।

३–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रात काल पूर्वी लोकान्त से आकाश मे उगता है एव इस तिर्यक् लोक (मे भ्रमण करता हुआ इस) को प्रकाशित करता है । प्रकाशित करके सायंकाल पश्चिमी लोकान्त मे नीचे चला जाता है । नीचे जाकर पुन दूसरे दिन प्रात पूर्वी लोकान्त से आकाश मे उदित होता है ।

४–एक मान्यता ऐसी है कि सूर्य प्रात काल पूर्वी लोकान्त से पृथ्वी मे से निकलता है एव इस तिर्यक् लोक को तिर्छा (प्रकाशित) करता है । प्रकाशित करके सायकाल पश्चिमी लोकान्त मे पृथ्वी मे विध्वस्त हो जाता है ।

५–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रात काल पूर्वी लोकान्त से पृथ्वी मे से निकलता है एव इस तिर्यक् लोक को प्रकाशित करता है। प्रकाशित करके सायकाल पश्चिमी लोकान्त मे पृथ्वी मे प्रविष्ट हो जाता है। प्रविष्ट होकर नीचे चला जाता है। नीचे जाकर पुन दूसरे दिन प्रात पूर्वी लोकान्त से पृथ्वी मे से निकलता है।

६–एक मान्यता ऐसी है कि सूर्य प्रात काल पूर्वी लोकान्त से अप्काय-समुद्र मे से निकलता है एव (तिर्यक् भ्रमण करके) तिर्यक् लोक को प्रकाशित करता है। प्रकाशित करके सायकाल पश्चिमी लोकान्त मे समुद्र मे विध्वस्त हो जाता है।

७–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रात काल पूर्वी लोकान्त से समुद्र मे से निकलता है एव इस तिर्यक् लोक को प्रकाशित करता है। प्रकाशित करके सायकाल पश्चिमी लोकान्त मे समुद्र मे प्रविष्ट हो जाता है। प्रविष्ट होकर नीचे चला जाता है। नीचे जाकर पुन. दूसरे दिन प्रात पूर्वी लोकान्त से समुद्र मे से निकलता है।

८–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रात काल पूर्वी लोकान्त से अनेक योजन, अनेक शत योजन, अनेक सहस्र योजन दूर ऊँचा जाकर आकाश मे उदित होता है एव इस दक्षिणार्ध लोक को प्रकाशित करता है। उस समय उत्तरार्ध लोक मे रात्रि होती है। इसके पश्चात् उत्तरार्ध लोक मे जाता है एव उत्तरार्ध लोक को प्रकाशित करता है। उस समय दक्षिणार्ध लोक मे रात्रि होती है। इस प्रकार दक्षिणार्ध एव उत्तरार्ध लोक को प्रकाशित करता हुआ सूर्य पूर्वी लोकान्त से अनेक योजन, अनेक शत योजन, अनेक सहस्र योजन दूर ऊँचा जाकर प्रात आकाश मे उदित होता है।

हम इस प्रकार कहते हैं—

जम्बूद्वीप की पूर्व-पश्चिम की लवाई एव उत्तर-दक्षिण की जीवा से सूर्यमडल के १२४ भाग करके उन्हे दक्षिण-पूर्व एव उत्तर-पश्चिम के चार भागो मे विभक्त किया जाय। इन चतुर्भाग मडलो मे इस रत्नप्रभा पृथ्वी की अति रमणीय भूमि से ८०० योजन ऊपर जाकर प्रात काल दो सूर्य उदित होते हैं। ये दक्षिण एव उत्तर के जम्बूद्वीप के भागो को प्रकाशित करते हैं। इस समय पूर्व एव पश्चिम के जम्बूद्वीप के भागो मे रात्रि होती है। इसके वाद पूर्व एव पश्चिम के जम्बूद्वीप के भागो को प्रकाशित करते हैं। उस समय दक्षिण एव उत्तर के जम्बूद्वीप के भागो मे रात्रि होती है। इस प्रकार जम्बूद्वीप के दक्षिण, उत्तर, पूर्व एव पश्चिम के भागो को प्रकाशित करते हुए दोनो सूर्य जम्बूद्वीप की पूर्व-पश्चिम की लवाई एव उत्तर-दक्षिण की जीवा से सूर्यमडल के १२४ भाग करके उन्हे दक्षिण-पूर्व एव उत्तर-पश्चिम के चार भागो मे विभक्त करने पर बनने वाले चतुर्भाग मडलो मे इस रत्नप्रभा पृथ्वी की अति रमणीय भूमि से ८०० योजन ऊचे जाकर प्रात काल आकाश मे उदित होते हैं।

सूर्य की प्रतिमुहूर्त्त गति

[३२][१] प्र०—ता केवतिय त खेत्त एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति आहिताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमातो चत्तारि पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ,

१–तत्थ एगे एवमाहसु

ता छ-छ जोयणसहस्साइ सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति, एगे एवमाहसु।

२–एगे पुण एवमाहंसु

ता पच-पच जोयणसहस्साइ सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति, एगे एवमाहसु।

३–एगे पुण एवमाहंसु
ता चत्तारि-चत्तारि जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति, एगे एवमाहंसु ।

४–एगे पुण एवमाहंसु
ता छवि पचवि चत्तारिवि जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेणं गच्छति, एगे एवमाहंसु ।

१–तत्थ जे ते एवमाहंसु ता छ-छ जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति, ते एवमाहंसु--
जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चरति,
तया ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसे अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति,
तेसिं च ण दिवससि एगं जोयणसतसहस्सं अट्ठ य जोयणसहस्साइं तावक्खेत्ते पण्णत्ते,
ता जया ण सूरिए सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तया ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,
तेसिं च ण दिवससि बावत्तरिं जोयणसहस्साइं तावक्खेत्ते पण्णत्ते,
तया ण छ-छ जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति ।

२–तत्थ जे ते एवमाहंसु—
ता पच-पंच जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,
ते एवमाहंसु—
ता जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति,
तहेव दिवस-राइप्पमाण,
तसि च ण तावखेत्ते नउइजोयणसहस्साइं,
ता जया ण सव्वबाहिरं मडल उवसकमित्ता चारं चरति,
तता ण तं चेव राइदियप्पमाण,
तसि च ण दिवससि सट्ठिं जोयणसहस्साइं तावक्खेत्ते पन्नत्ते,
तता ण पच-पच जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेणं मुहुत्तेण गच्छति ।

३–तत्थ ण जे ते एवमाहंसु—
ता जया ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसंकमित्ता चार चरति
तता णं दिवस-राई तहेव,
तसि ण दिवससि बावत्तरिं जोयणसहस्साइं तावक्खेत्ते पण्णत्ते,
ता जया ण सूरिए सव्वबाहिर मडल उवसंकमित्ता चार चरति,
तता ण राइ दिय तहेव,
तसि च ण दिवससि अडयालीस जोयणसहस्साइं तावक्खेत्ते पण्णत्ते,
तता ण चत्तारि-चत्तारि जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति ।

४–तत्थ जे ते एवमाहंसु —
छवि पचवि चत्तारि वि जोयणसहस्साइं सूरिए एगमेगेणं मुहुत्तेणं गच्छति
ते एवमाहंसु—
ता सूरिए ण उग्गमणमुहुत्तेण सिय अत्थमणमुहुत्तं सिग्घगता भवति,
तता ण छ-छ जोयणसहस्साइं एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,
मज्झिमतावखेत्त समासादेमाणे २ सूरिए मज्झिमगता भवति,
तता पच-पच जोयणसहस्साइं एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,
मज्झिम तावखेत्त सपत्ते सूरिए मदगती भवति,

तता ण चत्तारि जोयणसहस्साइ एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति ।
तत्थ को हेउत्ति वदेज्जा ?
ता अयण्ण जवुद्दीवे दीवे—जाव—परिक्खेवेण,
ता जया ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण दिवस-राई तहेव,
तसि च ण दिवससि एक्काणउतिं जोयणसहस्साइ तावक्खेत्ते पण्णत्ते,
ता जया ण सूरिए सव्ववाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण राइ दिय तहेव,
तंसि च ण दिवससि एगट्ठिजोयणसहस्साइ तावखेत्ते पण्णत्ते,
तता ण छवि पचवि चत्तारि वि जोयणसहस्साइ सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,
एगे एवमाहसु ।

वय पुण एवं वदामो—

ता सातिरेगाइ पच-पच जोयणसहस्साइ सूरिए एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति ।
तत्थ को हेतूति वदेज्जा ?
ता अयण्ण जबुद्दीवे दीवे—जाव—परिक्खेवेण,
ता जता ण सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण पच-पच जोयणसहस्साइ दोण्णि य एक्कावण्णे जोयणसए एगूणतीस च सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,
तता ण इघगतस्स मणसस्स सीतालीसाए जोयणसहस्सेहिं दोहि य तेवट्ठेहिं जोयणसतेहिं एकवीसाए य सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सूरिए चक्खुप्फास हव्वमागच्छति,[1]
तया ण दिवसे राई तहेव,
से णिक्खममाणे सूरिए णव सवच्छर अयमाणे पढमसि अहोरत्तसि अब्भितराणतर मडल व-उसकमित्ता चार चरति ।
ता जया ण सूरिए अब्भितराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण पच-पच जोयणसहस्साइ दोण्णि य एकावण्णे जोयणसते सीतालीस च सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,
तता ण इहगयस्स मणूसस्स सीतालीसाए जोयणसहस्सेहिं अउणासीते य जोयणसते सत्तावण्णाए सट्ठिभागेहिं
जोयणस्स सट्ठिभाग च एगट्ठिहा छेत्ता अउणावीसाए चुण्णियाभागेहिं सूरिए चक्खुप्फास हव्वमागच्छति,
तता ण दिवस-राई तहेव,
से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि अब्भितरतच्च मडल उवसकमित्ता चारं चरति ।
ता जया ण सूरिए अब्भितरतच्च मडल उवसकमित्ता चारं चरति
तता ण पच-पच जोयणसहस्साइ दोण्णि य बावण्णे जोयणसते पच य सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,
तता ण इहगयस्स मणूसस्स सीतालीसाए जोयणसहस्सेहिं छण्णउतीए य जोयणेहिं तेत्तीसाए य सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सट्ठिभाग च एगसट्ठिधा
छेत्ता दोहिं चुण्णियाभागेहिं सूरिए चक्खुप्फास हव्वमागच्छति,
तता ण दिवस-राई तहेव ।

१– सम० ४७ सूत्र १
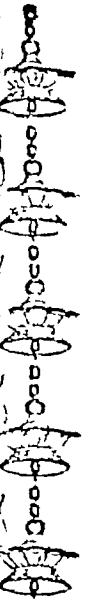
एवं खलु एतेण उवाएण णिक्खममाणे सूरिए तताणंतराओ तदाणंतरं मंडलातो मंडलं संकममाणे २ अट्ठारस २ सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगे मंडले मुहुत्तगतिं वा अभिवुड्ढेमाणे २ चुलसीतिं सीताइ जोयणाइ पुरिसच्छाय णिवुड्ढेमाणे २ सव्वबाहिर मंडल उवसंकमित्ता चार चरति ।

ता जया ण सूरिए सव्वबाहिरमंडल उवसंकमित्ता चार चरति,

तता ण पच-पच जोयणसहस्साइ तिन्नि य पचुत्तरे जोयणसत्ते पण्णरस य सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेणं मुहुत्तेण गच्छति,

तता ण इहगतस्स मणूसस्स एक्कतीसाए जोयणेहिं अट्ठहिं एक्कतीसेहिं जोयणसतेहिं तीसाए य सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सूरिए चक्खुप्फास हव्वमागच्छति,

तता ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति,

एस णं पढमे छम्मासे, एस ण पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।

से पविसमाणे सूरिए दोच्च छम्मास अयमाणे

पढमसि अहोरत्तसि बाहिराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरति

ता जता ण सूरिए बाहिराणतर मडल उवसकमित्ता चारं चरति

तता ण पच-पच जोयणसहस्साइं तिण्णि य चउरुत्तरे जोयणसते सत्तावण्ण च सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,

तता ण इहगतस्स मणूसस्स एक्कतीसाए जोयणसहस्सेहिं नवहि य सोलेहिं जोयणसएहिं एगूणतालीसाए सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सट्ठिभाग च एगसट्ठिहा छेत्ता सट्ठिए चुण्णियाभागे सूरिए चक्खुफास हव्वमागच्छति,

तता ण राइदिय तहेव,

से पविसमाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि बाहिरतच्च मडल उवसकमित्ता चारं चरति ।

ता जया ण सूरिए बाहिरतच्च मडल उवसकमित्ता चारं चरति

तता ण पच-पच जोयणसहस्साइ तिन्नि य चउत्तरे जोयणसते ऊणतालीस च सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति,

तता ण इहगतस्स मणूसस्स एगाधिगेहिं बत्तीसाए जोयणसहस्सेहिं एकावण्णाए य सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सट्ठिभाग च एगसट्ठिधा छेत्ता तेवीसाए चुण्णियाभागेहिं सूरिए चक्खुप्फास हव्वमागच्छइ,[२]
राइदिय तहेव,

एव खलु एतेणुवाएण पविसमाणे सूरिए तताणतरातो तताणतर मडलातो मडल सकममाणे २ अट्ठारस २ सट्ठिभागे जोयणस्स

एगमेगे मडले मुहुत्तगइं णिवुड्ढेमाणे २ सातिरेगाइ पंचासीति२ जोयणाइं पुरिसच्छाय अभिवुड्ढेमाणे २ सव्वब्भंतर मडल उवसकमित्ताचार चरति ।

ता जता णं सूरिए सव्वब्भतर मडलं उवसकमित्ताचार चरति

तता ण पच-पंच जोयणसहस्साइ दोण्णि य एक्कावण्णे जोयणसए अट्ठतीस च सट्ठिभागे जोयणस्स एगमेगेण मुहुत्तेण गच्छति

तता ण इहगयस्स मणूसस्स सीतालीसाए जोयणसहस्सेहिं दोहि य दोवट्ठेहिं जोयणसतेहिं एक्कवीसाए य सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छति,

---

१– सम० ३१

२– जया ण सूरिए बाहिराणतर तच्च मडल उवसकमित्ता चार चरइ तया णं इहगयस्स पुरिसस्स तेतीसाए जोयणसहस्सेहिं किंचिविसेसूणेहिं चक्खुप्फास हव्वमागच्छइ ।

—सम० ३२

तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति, एस ण दोच्चे छम्मासे, एस ण दोच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।
एस ण आदिच्चे सवच्छरे, एस ण आदिच्चसवच्छरस्स पज्जवसाणे ।

—सूर्य० सूत्र २३ पृ० ५१-५२
—चन्द्र० ,, ,,
—जवू० सूत्र १३३ पृ० ४४०-४४१

[३२][१] प्र०—जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त कितना क्षेत्र चलता है ?

उ०—इस विपय मे (अन्ययूथिको की) चार मान्यताएँ हैं—

१–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त छह हजार योजन चलता है ।

२–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त पाँच हजार योजन चलता है ।

३–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त चार हजार योजन चलता है ।

४–एक मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त छह हजार योजन भी चलता है, पाँच हजार योजन भी चलता है, चार हजार योजन भी चलता है ।

१–इनमे से जिनकी मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त छह हजार योजन चलता है, उनका कथन है कि जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर चलता है तव उत्कृष्ट १८ मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य १२ मुहूर्त्त की रात्रि होती है । उस दिन १०८००० योजन का तापक्षेत्र होता है ।
जव सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर चलता है तव उत्कृष्ट १८ मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य १२ मुहूर्त्त का दिन होता है । उस दिन ७२००० योजन का तापक्षेत्र होता है । इस प्रकार सूर्य प्रतिमुहूर्त्त (१०८०००/१८ = ६०००, ७२०००/१२ = ६०००) छह हजार योजन चलता है ।

२–जिनकी मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त ५ हजार योजन चलता है, उनका कथन है कि जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर चलता है तव दिन और रात्रि का प्रमाण उसी प्रकार (पूर्वोक्त) होता है तथा उस दिन ९०००० योजन का तापक्षेत्र होता है । जव सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर चलता है तव रात्रि और दिन का प्रमाण उसी प्रकार होता है तथा उस दिन ६०००० योजन का तापक्षेत्र होता है । इस प्रकार सूर्य प्रतिमुहूर्त्त (९००००/१८ = ५०००, ६००००/१२ = ५०००) पाँच हजार योजन चलता है ।

३–जिनकी मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त ४ हजार योजन चलता है, उनका कथन है कि जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर चलता है तव दिन-रात उसी प्रकार होते हैं । उस दिन ७२००० योजन का तापक्षेत्र होता है । जव सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव रात-दिन उसी प्रकार होते हैं । उस दिन ४८००० योजन का तापक्षेत्र होता है । इस प्रकार सूर्य प्रतिमुहूर्त्त (७२०००/१८ = ४०००, ४८०००/१२ = ४०००) चार हजार योजन चलता है ।

४–जिनकी मान्यता यह है कि सूर्य प्रतिमुहूर्त्त छह हजार योजन भी चलता है, पाँच हजार योजन भी चलता है, और चार हजार योजन भी चलता है, उनका कथन है कि सूर्य उदय-मुहूर्त्त एव अस्त-मुहूर्त्त मे शीघ्र गति वाला होता है । उस समय वह प्रतिमुहूर्त्त छह हजार योजन चलता है । मध्यम ताप-क्षेत्र को प्राप्त होता हुआ सूर्य मध्यम गति वाल होता है । उस समय वह

प्रतिमुहूर्त्त पाँच हजार योजन चलता है। मध्यम ताप-क्षेत्र को सप्राप्त सूर्य मद गति वाला होता है। उस समय वह प्रतिमुहूर्त्त चार हजार योजन चलता है।
इसका क्या कारण है ?

यह जम्वूद्वीप–यावत्–परिधि वाला है। जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव दिन-रात उसी प्रकार होते हैं। उस दिन ९१००० योजन का तापक्षेत्र होता है। जव सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव रात-दिन उसी प्रकार होते हैं। उस दिन ६१००० योजन का ताप-क्षेत्र होता है। इस प्रकार सूर्य प्रतिमुहूर्त्त छह, पाँच और चार हजार योजन चलता है। (९१००० योजन का हिसाब इस प्रकार है—प्रथम मुहूर्त्त ६०००, अन्तिम मुहूर्त्त ६०००, मध्यम मुहूर्त्त ४००० एव शेष १५ मुहूर्त्त ५०००×१५=७५०००, कुल ६०००+६०००+४०००+७५०००=९१०००, तथा ६१००० योजन का हिसाव इस प्रकार है—प्रथम मुहूर्त्त मे ६०००, अन्तिम मुहूर्त्त मे ६०००, मध्यम मुहूर्त्त मे ४००० एव शेष ९ मुहूर्त्त मे ५०००×९=४५०००, कुल ६०००+६०००+४०००+४५०००=६१०००)

हमारा कथन इस प्रकार है—
सूर्य प्रतिमुहूर्त्त पाँच हजार योजन से कुछ अधिक चलता है।
इसमे क्या हेतु है ?

यह जम्वूद्वीप–यावत्–परिधि वाला है। जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त $५२५१\frac{२९}{६०}$ योजन चलता है। उस समय इस क्षेत्र के मनुष्य को $४७२६३\frac{२१}{६०}$ योजन से सूर्य दृष्टिगोचर होता है। उस समय दिन-रात उसी प्रकार होते हैं। वहाँ से निकलता हुआ सूर्य नवीन सवत्सर मे प्रविष्ट होता हुआ प्रथम अहोरात्र मे आभ्यन्त-रानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जव सूर्य आभ्यन्तरानन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त $५२५१\frac{४७}{६०}$ योजन चलता है। उस समय इस क्षेत्र के मनुष्य को $४७१७९\frac{५७}{६०}+(\frac{१}{६०}+\frac{१}{६१}+\frac{१६}{१})$ योजन से सूर्य दृष्टिगोचर होता है। उस समय दिन-रात उसी हिसाव से होते हैं। वहाँ से निकलता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।
जव सूर्य आभ्यन्तर-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त $५२५२\frac{५}{६०}$ योजन चलता है। उस समय इस क्षेत्र के मनुष्य को $४७०९६\frac{३३}{६०}+(\frac{१}{६०}+\frac{१}{६१}+\frac{२}{१})$ योजन से सूर्य दृष्टिगोचर होता है। उस समय दिन-रात उसी हिसाव से होते हैं। इस क्रम से निकलता हुआ सूर्य एक के वाद दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल पर $\frac{१८}{६०}$ योजन की मुहूर्त्तगति मे वृद्धि करता हुआ एव ८४ योजन से कुछ अधिक की दृष्टिगोचरता मे कमी करता हुआ सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जव सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त $५३०५\frac{१५}{६०}$ योजन चलता है। उस समय इस क्षेत्र के मनुष्य को $३१८३१\frac{३०}{६०}$ योजन से सूर्य दृष्टिगोचर होता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य वारह मुहूर्त्त का दिन होता है। यह प्रथम छह मास के विषय मे है एव प्रथम छह मास के पर्यवसान के विषय मे है। वहाँ से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय छह मास मे प्रवेश करता हुआ प्रथम अहो-रात्र मे वाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है। जव सूर्य वाह्यानन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त $५३०४\frac{५७}{६०}$ योजन चलता है। उस समय इस क्षेत्र के मनुष्य को $३१९१६\frac{३९}{६०}+(\frac{१}{६०}+\frac{१}{६१}+\frac{६०}{१})$ योजन से सूर्य दृष्टिगोचर होता है। उस समय रात्रि-दिन उसी हिसाव से होते हैं। वहाँ से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे वाह्यतृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जव सूर्य वाह्य-तृतीय मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त $५३०४\frac{३९}{६१}$ योजन चलता है। उस समय इस क्षेत्र के मनुष्य को $३२००१\frac{५१}{६०}+(\frac{१}{६०}+\frac{१}{६१}+\frac{२३}{१})$ योजन मे सूर्य दृष्टिगोचर होता है। उम समय रात्रि-दिवम उसी हिमाव से होते हैं। इम क्रम से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक के पश्चात् दूसरे मडल पर सक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल पर $\frac{१८}{६०}$ योजन की मुहूर्त्तगति मे कमी करता हुआ एव ८५ योजन से कुछ अधिक की दृष्टिगोचरता मे वृद्धि करता हुआ सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है।

जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त हो गति करता है तव प्रतिमुहूर्त्त $५२५१\frac{२९}{६०}$ योजन चलता है। उस समय इम क्षेत्र के मनुष्य को $४७२६३\frac{२१}{६०}$ योजन से सूर्य दृष्टिगोचर होता है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है और जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह माम के पर्यवसान के विपय मे है।

यह आदित्यसवत्सर एव आदित्यसवत्सर के पर्यवसान के विपय मे है।

नक्षत्रमंडल के भाग में सूर्य की एक मुहूर्त्त मे गति

प्र०—एगमेगेण भते ! मुहुत्तेण सूरिए केवइआइ भागसयाइ गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! ज ज मडल उवसकमित्ता चार चरइ तस्स २ मडलपरिक्खेवस्स अट्ठारसतीसे भागसए गच्छइ मडल सयसहस्सेहिं अट्ठाणउतीए अ सएहिं छेत्ता।

—जम्बू० सूत्र १४६ पृ ४७४

प्र०—भगवन् ! प्रतिमुहूर्त्त सूर्य (मडल का) कितना भाग चलता है ?

उ०—गौतम ! जिस-जिस मडल पर आरूढ होकर गति करता है, उस-उम मडल की परिधि का $\frac{१८३०}{१०९८००}$ भाग चलता है।

दिन-रात्रि का परिमाण

[३४][१] प्र०—जया ण भते ! सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमिता चार चरइ,
तया ण केमहालए दिवसे, केमहालिया राई भवति ?

उ०—गोयमा ! तया ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ,
से णिक्खममाणे सूरिए णव सवच्छर अयमाणे पढमसि अहोरत्तसि अब्भतराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरइ।

[२] प्र०—जया ण भते ! सूरिए अब्भतराणतर मडल उवसकमित्ता चार चरइ,
तया ण केमहालए दिवसे, केमहालिया राई भवइ ?

उ०—गोयमा ! तया ण अट्ठारसमुहुत्ते दिवमे भवइ, दोहिं एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणे,
दुवालसमुहुत्ता राई भवति, दोहि अ एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अहिअत्ति।

[३] प्र०—से णिक्खममाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तसि—जाव—चार चरइ
तया ण केमहालए दिवसे, केमहालिया राई भवइ ?

उ०—गोयमा ! तया ण अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, चर्उहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि ऊणे,
दुवालसमुहुत्ता राई भवइ, चउहि एगट्ठिभागमुहुत्तेहि अहिअत्ति।
एव खलु एएण उवाएण निक्खममाणे सूरिए तयाणतराओ मडलाओ तयाणतर मडल संकममाणे दो-दो एकट्ठिभागमुहुत्तेहिं मडले दिवसखित्तस्स निव्वुड्ढेमाणे २ रयणिखित्तस्स अभिवड्ढेमाणे २ सव्ववाहिर मडल उवसंकमित्ता चार चरइत्ति।

जया णं सूरिए सव्वब्भंतराओ मंडलाओ सव्ववाहिरं मंडलं उवसकमित्ता चारं चरइ
तया णं सव्वब्भंतरमडलं पणिहाय एगेण तेसीएण राइदियसएण तिण्णि छावट्ठे एगसट्ठिभागमुहुत्तसए दिवसखेत्तस्स निव्वुद्धेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिवुद्धेत्ता चार चरइ त्ति ।

[४] प्र०—जया णं भते ! सूरिए सव्ववाहिरं मडल उवसंकमित्ता चार चरइ
तया ण केमहालए दिवसे, केमहालिया राई भवइ ?

उ०—गोयमा ! तया णं उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ त्ति ।
एस ण पढमे छम्मासे, एस ण पढमस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।

से पविसमाणे सूरिए दोच्चं छम्मासअयमाणे पढमसि अहोरत्तसि वाहिराणतरं मडलं उवसंकमित्ता चार चरइ,

[५] प्र०—जया णं भंते ! सूरिए वाहिराणतर मंडलं उवसकमित्ता चारं चरइ
तया ण केमहालए दिवसे भवइ, केमहालिया राई भवइ ?

उ०—गोयमा ! अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ, दोहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा
दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ, दोहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिए,
से पविसमाणे सूरिए दोच्चसि अहोरत्तंसि वाहिरतच्च मडलं उवसकमित्ता चारं चरइ ।

[६] प्र०—जया णं भते ! सूरिए वाहिरतच्च मडल उवसकमित्ता चार चरइ
तया णं केमहालए दिवसे भवइ, केमहालिया राई भवइ ?

उ०—गोयमा ! तया ण अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं ऊणा,

दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ, चउहिं एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं अहिए इति ।
एव खलु एएण उवाएण पविसमाणे सूरिए तयाणतराओ मडलाओ तयाणतरं मडल संकममाणे-सकममाणे दो-दो एगसट्ठिभागमुहुत्तेहिं एगमेगे मडले रयणिखित्तस्स निवुद्धेमाणे २ दिवसखेत्तस्स अभिवुद्धेमाणे २ सव्वब्भतर मडल उवसंकमित्ता चारं चरइति ।

जया ण भते ! सूरिए सव्ववाहिराओ मडलाओ सव्वब्भंतरं मंडल उवसंकमित्ता चारं चरइ
तया ण सव्ववाहिर मंडल पणिहाय एगेण तेसीएण राइदियसएणं तिण्णि छावट्ठे एगसट्ठिभागमुहुत्तसए रयणिखेत्तस्स णिव्वुद्धेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिवद्धेत्ता चारं चरइ,
एस णं दोच्चे छम्मासे, एस ण दुच्चस्स छम्मासस्स पज्जवसाणे ।
एस णं आइच्चे संवच्छरे, एस णं आइच्चस्स संवच्छरस्स पज्जवसाणे पण्णत्ते ।

—जवू० सूत्र १३४ पृ० ४४६–४५०,
—सूर्य० सूत्र ११ पृ० ११–१२
—चन्द्र० सूत्र ११

[३५][१] प्र०—भगवन् ! जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब कितना वडा दिन और कितनी वडी रात्रि होती है ?

उ०—गौतम ! उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एव जघन्य बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। वहा से निकलता हुआ सूर्य नवीन सवत्सर मे प्रविष्ट होता हुआ प्रथम अहोरात्र मे अभ्यन्तरानन्तर मण्डल पर उपसक्रान्त हो गति करता है ।

[२] प्र०—भगवन् ! जब सूर्य आभ्यन्तरानन्तर मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है तब कितना बड़ा दिन और कितनी बड़ी रात्रि होती है ?

उ०—गौतम ! उस समय १८—$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त का दिन और १२+$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त की रात्रि होती है।

[३] प्र०—वहा से निकलता हुआ सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे—यावत्—गति करता है। उस समय कितना बड़ा दिन और कितनी बड़ी रात्रि होती है ?

उ०—गौतम उस समय १८—$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त का दिन होता है। एव १२+$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त की रात्रि होती है। इस क्रम से निकलता हुआ सूर्य एक के बाद दूसरे मण्डल पर संक्रमण करता हुआ $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त की दिवस-क्षेत्र मे कमी एव रजनी-क्षेत्र मे वृद्धि करता हुआ सर्वबाह्य मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है। जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मण्डल से सर्वबाह्य मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है तब सर्वाभ्यन्तर मण्डल से प्रारम्भ कर १८३ रात्रि-दिन मे $\frac{३६६}{६१}$ = ६ मुहूर्त दिवस-क्षेत्र मे कम करके एव रजनी-क्षेत्र मे बढ़ा कर गतिशील होता है।

[४] प्र०—भगवन् ! जब सूर्य सर्वबाह्य मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है तब कितना बड़ा दिन और कितनी बड़ी रात्रि होती है ?

उ०—गौतम ! उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त की रात्रि होती है एव जघन्य बारह मुहूर्त का दिन होता है।

यह प्रथम छह मास एव प्रथम छह मास के पर्यवसान के विषय मे है।
वहा से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य द्वितीय छह मास मे प्रवेश करता हुआ प्रथम अहोरात्र मे बाह्या-नन्तर मण्डल पर उपसंक्रान्त हो गति करता है।

[५] प्र०—भगवन् ! जब सूर्य बाह्यानन्तर मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है तब कितना बड़ा दिन और कितनी बड़ी रात्रि होती है ?

उ०—गौतम ! १८$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त की रात्रि होती है एव १२+$\frac{२}{६१}$ मुहूर्त का दिन होता है।
वहा से प्रविष्ट होकर सूर्य द्वितीय अहोरात्र मे बाह्य तृतीय मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है।

[६] प्र०—भगवन् ! जब सूर्य बाह्य-तृतीय मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है तब कितना बड़ा दिन होता है ? कितनी बड़ी रात्रि होती है ?

उ०—गौतम ! उस समय १८—$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त की रात्रि होती है एव १२+$\frac{४}{६१}$ मुहूर्त का दिन होता है। इस क्रम से प्रविष्ट होता हुआ सूर्य एक के बाद दूसरे मण्डल पर संक्रमण करता हुआ प्रत्येक मडल के रजनी-क्षेत्र मे $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त की कमी एव दिवस-क्षेत्र मे उतनी ही वृद्धि करता हुआ सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है।

भगवन् ! जब सूर्य सर्वबाह्य मण्डल से सर्वाभ्यन्तर मण्डल पर उपसंक्रान्त होकर गति करता है तब सर्वबाह्य मण्डल से प्रारंभ कर १८३ रात्रि-दिन मे $\frac{३६६}{६१}$ = ६ मुहूर्त की रजनी-क्षेत्र मे कमी एव दिवस क्षेत्र मे वृद्धि कर गतिशील होता है।

यह द्वितीय छह मास एव द्वितीय छह मास के पर्यवसान के सम्बन्ध मे है। यह आदित्य संवत्सर एव आदित्यसंवर के पर्यवसान के विषय मे है।

सूर्य का ताप-क्षेत्र

[३६][१] प्र०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिआ केवइय खेत्तं उड्ढं तवयंति, अहे, तिरिअं च ?

उ०—गोयमा ! एगं जोयणसयं उड्ढं तवयंति,
अट्ठारससयजोयणाइं अहे तवयंति,[1]
सीआलीसं जोयणसहस्साइं दोण्णि अ तेवट्ठे जोयणसए एगवीसं च सट्ठिभाए जोअणस्स तिरिअं तवयंतित्ति ।

—जम्बू सूत्र १३६ पृ ४६२
— सूर्य सू २५ पृ. ६८
—चन्द्र ,,
—विवा. भाग ३ श ८ उ. ८ प्र ४५ पृ १००

[३६][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप में सूर्य ऊपर कितना क्षेत्र तपाते है, नीचे कितना क्षेत्र तपाते है और तिर्छा कितना क्षेत्र तपाते हैं ?

उ०—गौतम ! सौ योजन ऊर्ध्व क्षेत्र तपाते है, १८०० योजन अध क्षेत्र तपाते हैं एव ४७२६३$\frac{21}{60}$ योजन तिर्यक् क्षेत्र तपाते हैं ।

चन्द्र-सूर्य का संस्थान

[३७][१] प्र०—ता कहं ते सेआते संठिईया आहिताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमा दुविहा संठिती पण्णत्ता, तंजहा—चंदिम-सूरियसंठिती य, तावक्खेत्तसंठिती य ।

[२] प्र०—ता कहं ते चंदिम-सूरियासंठिती आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमातो सोलस पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–तत्थेगे एवमाहंसु—
ता समचउरससंठिता चंदिम-सूरियासंठिती, एगे एवमाहंसु ।

२–एगे पुण एवमाहंसु—
ता विसमचउरससंठिता चंदिम-सूरियसंठिती पण्णत्ता ।

३–एवं समचउक्कोणसंठिता, ४–ता विसमचउक्कोणसंठिया, ५–समचक्कवालसंठिता, ६–विसमचक्कवालसंठिता पण्णत्ता, ७–चक्कद्धचक्कवालसंठिता पण्णत्ता, एगे एवमाहंसु ।

८–एगे पुण एवमाहंसु—
ता छत्तागारसंठिता चंदिम-सूरियसंठिती पण्णत्ता ।
९–गेहसंठिता, १०–गेहावणसंठिता, ११–पासादसंठिता, १२–गोपुरसंठिया, १३–पेच्छाघरसंठिता, १४–वलभीसंठिता, १५–हम्मियतलसंठिता, १६–वालग्गपोतियासंठिता चंदिम-सूरियसंठिती पण्णत्ता ।

---

१. सम १८ सूत्र २

तत्थ जे ते एवमाहसु —
ता समचउरससठिता चदिम-सूरियसठिती पण्णत्ता,
एतेण णएण णेतव्व, णो चेव ण इतरेहि ।

—सूर्य सूत्र २५ पृ ६७
—चन्द्र „ „

[३७][१] प्र०—श्वेतता का सस्थान (आकार) किस प्रकार का कहा गया है ?

उ०—यह दो प्रकार का कहा गया है, यथा—चन्द्र-सूर्यसस्थान अर्थात् उनके विमानो का आकार और तापक्षेत्रसस्थान अर्थात् उनके तापक्षेत्र का आकार ।

[२] प्र०—इनमे से चन्द्र-सूर्यसस्थान किस प्रकार का है ?

उ०—इस विषय मे निम्नोक्त सोलह मान्यताएँ हैं —
१–एक मान्यता यह है कि चन्द्र-सूर्य का सस्थान समचतुरस्र है ।
२–एक मान्यता यह है कि चन्द्र-सूर्यसस्थान विषमचतुरस्र है ।
३–इसी प्रकार समचतुष्कोण, ४–विषमचतुष्कोण, ५–समचक्राकार, ६–विषमचक्राकार एव ७–अर्धचक्राकार की मान्यताएँ हैं ।
८–एक मान्यता यह है कि चन्द्र-सूर्यसस्थान छत्राकार है ।
९–इसी प्रकार चन्द्र-सूर्यसस्थान के विषय मे गृहाकार, १०–गृहापणाकार, ११–प्रासादाकार, १२–गोपुराकार, १३–प्रेक्षागृहाकार, १४–वल्लभीआकार, १५–हर्म्यतलाकार एव १६–वालाग्रपोतिकाकार की मान्यताएँ हैं ।
इनमे से यह मान्यता कि चन्द्र-सूर्य का सस्थान समचतुरस्र है, ठीक है, अन्य नही ।

तापक्षेत्र का संस्थान

[३८][१] प्र०—ता कह ते तावक्खेत्तसठिती आहिताति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ सोलस पडिवत्तीओ पन्नत्ताओ-

१-८ – तत्थ ण एगे एवमाहसु
ता गेहसठिती तावखित्तसठिती पण्णत्ता,
एव-जाव-वालग्गपोतियासठिता तावक्खेत्तसठिती ।

९ – एगे पुण एवमाहसु
ता जस्सठिते जबुद्दीवे तस्सठिते तावक्खेत्तसठिती पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

१०– एगे पुण एवमाहसु
ता जस्सठिते भारहे वासे तस्सठिती पण्णत्ता,
एव उज्जाणसठिता, निज्जाणसठिता, एगतो णिसधसठिता, दुहतो णिसहसठिता, सेयणगसठिता,
एगे एवमाहसु ।
एगे पुण एवमाहसु
ता सेणगपट्ठसठिता तावखेत्तसठिती पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

—सूर्य० सू० २५ पृ० ६७
—चन्द्र० „ „

[३८][१] प्र०—तापक्षेत्रसस्थान किस प्रकार का है ?

उ०—एतद्विपयक निम्नोक्त सोलह मान्यताए हैं —

१ –एक मान्यता यह है कि तापक्षेत्रसस्थिति गृहाकार है । इस प्रकार-यावत्-(२–८) वालागृपोतिका के आकार की तापक्षेत्रसस्थिति है ।

६ –एक मान्यता यह है कि जिस आकार का जम्बूद्वीप है उसी आकार की तापक्षेत्रसस्थिति है ।

१०–एक मान्यता यह है कि जिस आकार का भारतवर्ष है उसी आकार की (तापक्षेत्रसस्थिति) है । इसी प्रकार ११-उद्यानाकार, १२-निर्याणाकार (निर्गमनाकार), १३-एकत निपधाकार (रथ के एक ओर के बैल के आकार की), १४-द्वित निपधाकार (रथ के दोनो ओर के बैलो के आकार की) एव १५-श्येनकाकार वाली (तापक्षेत्रसस्थिति) है ।

१६–एक मान्यता यह है कि तापक्षेत्रसस्थिति श्येनपृष्ठ के आकार की है ।

वयं पुण एवं वदामो-

ता उद्धीमुहकलवुआपुप्फसठिता तावक्खेत्तसठिती पण्णत्ता—
अंतो सकुडा, बाहिं वित्थडा, अंतो वट्टा, बाहिं पिधुला,
अतो अंकमुहसठिता, बाहिं सत्थिमुहसठिता,
उभतो पासेण तीसे दुवे बाहाओ अवट्ठिताओ भवंति
पणतालीस २ जोयणसहस्साइ आयामेणं,
तीसे दुवे बाहाओ अणवट्ठिताओ भवति, तंजहा—
सव्वब्भतरिआ चेव बाहा, सव्वबाहिरिया चेव बाहा ।
तत्थ को हेतूति वदेज्जा ?
ता अयण्ण जबुद्दीवे २—जाव—परिक्खेवेण,
ता जया णं सूरिए सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण उद्धीमुहकलवुआपुप्फसठिता तावखेत्तसठिती आहितात्ति वदेज्जा—
अतो संकुडा, बाहिं वित्थडा, अतो वट्टा, बाहिं पिधुला ।
अंतो अकमुहसंठिता, बाहिं सत्थिमुहसंठिआ,
दुहओ पासेण तीसे तथेव—जाव—सव्वबाहिरिया चेव बाहा,
तीसे ण सव्वब्भतरिआ बाहा मंदरपव्वयंतेण णव जोयणसहस्साइ चत्तारि य छलसीते जोयणसते णव य दसभागे जोयणस्स परिक्खेवेण आहितेति वदेज्जा ।
ता से ण परिक्खेवविसेसे कतो आहितेति वदेज्जा ?
ता जे ण मदरस्स पव्वयस्स परिक्खेवे त परिक्खेव तिहिं गुणित्ता
दसहिं छित्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस ण परिक्खेवविसेसे आहितात्ति वदेज्जा,
तीसे ण सव्वबाहिरिआ बाहा लवणसमुद्दतेण चउणउतिं जोयणसहस्साइं अट्ठ य अट्ठसट्ठे जोयणसते चत्तारि य दसभागे जोयणस्स परिक्खेवेण आहितात्ति वदेज्जा ।
ता से ण परिक्खेवविसेसे कतो आहितात्ति वदेज्जा ?
ता जे ण जबुद्दीवस्स दीवस्स परिक्खेवे, ण परिक्खेवं तिहिं गुणित्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस ण परिक्खेवविसेसे आहितात्ति वदेज्जा ।

[२] प्र०—तीसे णं तावक्खेत्ते केवतिय आयामेण आहितात्ति वदेज्जा ?

उ०—ता अट्ठत्तरिं जोयणसहस्साइ तिण्णि य तेत्तीसे जोयणसते जोयणतिभागे च आयामेणं आहितेति वदेज्जा ।

[३] प्र०—तया ण किसठिया अधगारसठिई आहितेति वदेज्जा ?

उ०—उद्धीमुहकलबुआपुप्फसठिता तहेव—जाव—वाहिरिया चेव बाहा ।
तीसे ण सव्वब्भतरिया बाहा मदरपव्वततेण छज्जोयणसहस्साइ तिण्णि य चउवीसे जोयणसते छच्च दसभागे जोयणस्स परिक्खेवेण आहितेति वदेज्जा ।

[४] प्र०—तीसे ण परिक्खेवविसेसे कतो आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता जेण मदरस्स पव्वयस्स परिक्खेवे त परिक्खेव दोहिं गुणेत्ता सेस तहेव ।
तीसे ण सव्ववाहिरिया बाहा लवणसमुद्दतेण तेवट्ठि जोयणसहस्साइ दोण्णि य पणयाले जोयणसते छच्च दसभागे जोयणस्स परिक्खेवेण आहितेति वदेज्जा ।

[५] प्र०—ता से ण परिक्खेवविसेसे कतो आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता जे ण जबुद्दीवस्स २ परिक्खेवे, त परिक्खेव दोहिं गुणित्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस ण परिक्खेवविसेसे आहितेति वदेज्जा ।

[६] प्र०—ता से ण अधकारे केवतिय आयामेण आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता अट्ठत्तरि जोयणसहस्साइ तिण्णि य तेत्तीसे जोयणसते जोयणतिभाग च आयामेण आहितेति वदेज्जा।
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते अट्ठारसमुहुते दिवसे भवति,जहण्णिया दुवालसमुहुता राई भवति ।

[७] प्र०— ता जया ण सूरिए सव्ववाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तता ण किसठिती तावक्खेत्तसठिती आहितातिं वदेज्जा ?

उ० — ता उद्धामुहकलबुआपुप्फसठिती तावक्खेत्तसठिती आहितातिं वदेज्जा ।
एव ज अब्भितरमडले अधकारसठितीए पमाण त वाहिरमडले तावक्खेत्तसठितीए,
ज तहिं तावखेत्तसठितीए त वाहिरमडले अधकारसठितीए भाणियव्व—जाव—
तता ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति ।

—सूर्य सूत्र २५ पृ ६७-६८
—चन्द्र " "
—जम्बू सूत्र १३५ पृ ४५३

हमारा कथन इस प्रकार है—
तापक्षेत्र सस्थिति ऊर्ध्वमुख कलबुक (नालिका) के पुष्प के आकार की है। यह अदर (मेरु की ओर) से सकडी और वाहर (लवणसमुद्र की ओर) से चोडी है। अदर से गोल और वाहर से मोटी है। अदर से अकमुखाकार (अर्धवलयाकार) और वाहर स्वस्तिक के अग्रभाग के आकार की है। (मेरु पर्वत के दोनो ओर) इसकी दो वाहुए अवस्थित हैं। ये ४५-४५ हजार योजन लवी हैं। इसकी दो वाहुएँ अनवस्थित हैं, यथा-सर्वाभ्यन्तरा और सर्ववाह्य बाहु। इस (कथन) मे क्या हेतु है ?

यह जम्बूद्वीप-यावत्-परिधि वाला है। इसमे जव सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तव तापक्षेत्र सस्थिति ऊर्ध्वमुख कलवुकपुष्प के आकार की होती है। यह अदर से सकडी एव वाहर से चौडी, अन्दर से गोल एव बाहर से मोटी, अन्दर से अकमुखाकार एव वाहर से स्वस्तिक के अग्रभाग के आकार की होती है। इमकी दो ओर की बाहुएँ उसी प्रकार होती हैं,—यावत्—सर्ववाह्य बाहु तक समझना चाहिए। इमकी सर्वाभ्यन्तरिक बाहु मेरु पर्वत के पास ९३८६ $\frac{६}{१०}$ योजन की परिधि वाली है।

[२] प्र०—यह परिधि किस प्रकार निकाली गई ?

उ०—मेरु पर्वत की जो परिधि है उसे त्रिगुणित कर दस का भाग देने से यह परिधि आती है। इसकी सर्वबाह्य बाहु की परिधि लवणसमुद्र के पास ९४८६८ $\frac{४}{१०}$ योजन की होती है।

[३] प्र०—यह परिधि कैसे निकाली गई ?

उ०—जम्बूद्वीप की जो परिधि है उसे त्रिगुणित कर दस का भाग देने से यह परिधि आती है।

[४] प्र०—इस तापक्षेत्र की लबाई कितनी है ?

उ०—इसकी लबाई ७८३३३ $\frac{१}{३}$ योजन है।

[५] प्र०—उस समय अधकारस्थिति किस आकार की होती है ?

उ०—यह ऊर्ध्वमुख कलबुक-पुष्प के आकार की—यावत्–उसी प्रकार बाह्य बाहु वाली होती है। इसकी सर्वाभ्यन्तरिक बाहु मेरु पर्वत के पास ६३२४ $\frac{६}{१०}$ योजन की परिधि वाली होती है।

[६] प्र०—यह परिधि कैसे निकाली गई ?

उ०—मेरु पर्वत की जो परिधि है उसे द्विगुणित करके उसी प्रकार (दस का भाग देने से) यह परिधि आती है। इसकी सर्ववाह्य बाहु की परिधि लवणसमुद्र के पास ६३२४५ $\frac{६}{१०}$ योजन की होती है।

[७] प्र०—यह परिधि कैसे निकाली गई ?

उ०—जम्बूद्वीप की जो परिधि है उसे द्विगुणित करके दस का भाग देने से यह परिधि आती है।

[८] प्र०—इस अधकार की लबाई कितनी है ?

उ०—इसकी लबाई ७८३३३ $\frac{१}{३}$ योजन है। उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है एवं जघन्य वारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

[९] प्र०—जब सूर्य सर्ववाह्य मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब तापक्षेत्रसस्थिति किस आकार की होती है ?

उ०—तब तापक्षेत्रसस्थिति ऊर्ध्वमुख कलबुक-पुष्प के आकार की होती है। इस प्रकार जो अभ्यन्तर मडल मे अधकारसस्थिति का प्रमाण है वही वाह्य मडल मे तापक्षेत्रसस्थिति का है एव जो उस (अभ्यन्तर मडल) मे तापक्षेत्रसस्थिति (का प्रमाण है) वही वाह्य मडल मे अधकार सस्थिति का समझना चाहिए,—यावत्— उस समय उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है एव जघन्य बारह मुहूर्त्त का दिन होता है।

सर्वाभ्यन्तर मंडल में तापक्षेत्र-संस्थान

[३९][१] प्र०—जया णं भंते ! सूरिए सव्वब्भतरं मडल उवसकमित्ता चारं चरइ
तया णं किंसठिआ तावखित्तसठिई पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! उद्धीमुहकलबुआपुप्फसठाणसंठिआ तावखेत्तसंठिई पण्णत्ता,
अतो मकुआ, बाहिं वित्थडा, अंतो वट्टा, बाहिं विहुला,
अंतो अकमुहसठिआ, बाहिं सगडुद्धीमुहसठिआ,
उभओ पासे ण तीसे दो बाहाओ अवट्ठिआओ हवति पणयालीसं २ जोयणसहस्साइं आयामेणं,
दुवे अ ण तीसे बाहाओ अणवट्ठिआओ हवति,
तजहा—

सव्वब्भतरिआ चेव वाहा, सव्ववाहिरिआ चेव वाहा ।

तीसे ण सव्वब्भतरिआ वाहा मदरपव्वयतेण णव जोयणसहस्साइ चत्तारि छलसीए जोयणसए णव य दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेण ।

[२] प्र०—एस ण भते ! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएत्ति वएज्जा ?

उ०—गोयमा ! जे ण मदरस्स परिक्खेवे त परिक्खेव तिहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस परिक्खेवविसेसे आहिएत्ति वदेज्जा ।

तीसे ण सव्ववाहिरिआ वाहा लवणसमुद्दतेण चउणवई जोयणसहस्साइ अट्ठ य अट्ठसट्ठे जोयणसए चत्तारि य दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेण ।

[३] प्र०—से ण भते ! परिक्खेवविसेसे कओ आहिए त्ति वएज्जा ?

उ०—गोयमा ! जे ण जबुद्दीवस्स परिक्खेवे त परिक्खेव तिहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसभागे हीरमाणे एस ण परिक्खेवविसेसे आहिएत्ति वएज्जा इति ।

[४] प्र०—तया ण भते ! तावखित्ते केवइय आयामेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अट्ठहत्तरिं जोयणसहस्साइ तिण्णि अ तेत्तीसे जोयणसए जोयणस्स तिभाग च आयामेण पण्णत्ते ।

गाहा—मेरुस्स मज्झयारे जाव य लवणस्स रु दछब्भागे ।
तावायामो एसो, सगड्ढुद्धीसठिओ नियमा ॥१॥

[३९][१] प्र०—भगवन् ! जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब तापक्षेत्रसस्थिति किस प्रकार की होती है ?

उ०—गौतम ! तब तापक्षेत्रसस्थिति ऊर्ध्वमुख कलबुकपुष्प के आकार की होती है । यह अदर से सकडी और वाहर से चौडी, अदर से गोल एव वाहर से मोटी, अदर से अकमुखाकार एव वाहर से ऊर्ध्वमुख शकटाकार होती है । (मेरु पर्वत के) दो ओर की इसकी दो वाहुए अवस्थित होती हैं, ये ४५-४५ हजार योजन लवी होती हैं । इसकी दो वाहुए अनवस्थित होती हैं, यथा-सर्वाभ्यन्तरिक वाहु एव सर्ववाह्य वाहु । इसकी सर्वाभ्यन्तरिक वाहु मेरु पर्वत के पास ९४८६$\frac{९}{१०}$ योजन की परिधि वाली है ।

[२] प्र०—भगवन् ! यह परिधि कैसे निकाली गई है ?

उ०—गौतम ! जो मेरु पर्वत की परिधि है उसे त्रिगुणित कर दस का भाग देने से यह परिधि आती है । इसकी सर्ववाह्य वाहु लवणसमुद्र के पास ९४८६८$\frac{४}{१०}$ योजन की परिधि वाली है ।

[३] प्र०—भगवन् ! यह परिधि कैसे निकाली गई ?

उ०—गौतम ! जो जम्बूद्वीप की परिधि है उसे त्रिगुणित कर दस का भाग देने से यह परिधि आती है ।

[४] प्र०—भगवन् ! उस समय तापक्षेत्र की लबाई कितनी होती है ?

उ०—गौतम ! लवाई ७८३३३$\frac{१}{३}$ योजन होती है ।

गाथार्थ—मेरु पर्वत के मध्य मे-यावत्-लवणसमुद्र का छठा भाग ताप की लबाई है । यह नियमत ऊर्ध्वमुख शकट के आकार की है ।

अन्धकार का संस्थान

[४०][१] प्र०—तया ण भते ! किसठिआ अधकारसठिई पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! उद्धीमुहकलबुआपुप्फसठाणसठिआ अधकारसठिई पण्णत्ता,
अतो सकुआ, बाहिं वित्थडा, त चेव—जाव—तीसे ण सव्वब्भतरिआ बाहा मंदरपव्वयंतेणं छज्जोअणसहस्साइ तिण्णि अ चउवीसे जोअणसए छच्च दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेण ।

[२] प्र०—से ण भते ! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएत्ति वएज्जा ?

उ०—गोयमा ! जे ण मदरस्स पव्वस्स परिक्खेवे त परिक्खेव दोहिं गुणेत्ता दसहिं छेत्ता दसहिं भागे हीरमाणे एस ण परिक्खेवविसेसे आहिए त्ति वएज्जा । तीसे ण सव्वबाहिरिआ बाहा लवणसमुद्दंतेण तेसट्ठी जोयणसहस्साइ दोण्णि य पणयाले जोअणसए छच्च दसभाए जोयणस्स परिक्खेवेण ।

[३] प्र०—से ण भते ! परिक्खेवविसेसे कओ आहिएत्ति वएज्जा ?

उ०—गोयमा ! जे ण जबुद्दीवस्स परिक्खेवे त परिक्खेव दोहिं गुणेत्ता—जाव—त चेव ।

[४] प्र०—तया ण भते ! अधयारे केवइय आयामेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अट्ठहत्तरिं जोयणसहस्साइं तिण्णि अ तेत्तीसे जोअणसए तिभाग च आयामेणं पण्णत्ते ।

[५] प्र०—जया ण भते ! सूरिए सव्वबाहिरमडल उवसकमित्ता चार चरइ
तया ण किसठिआ तावक्खित्तसठिई पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! उद्धीमुहकलबुआपुप्फसठाणसठिआ पण्णत्ता ।
त चेव सव्व णेअव्व, णवर णाणत्त ज अधयारसठिइए पुव्ववण्णिअ पमाण तं तावक्खित्तसंठिईए णेअव्व,
ज ताव खित्तसठिईए पुव्ववण्णिअ पमाण त अधयारसठिईए णेअव्वति ।

—जबू० सूत्र १३५ पृ० ४५३
—सूर्य० सूत्र २५ पृ० ६७–६८
—चन्द्र० ,, ,,

[४०][१] प्र०—भगवन् ! (सूर्य जब सर्वाभ्यन्तर मण्डल मे गति करता है) उस समय अन्धकारसस्थिति का आकार कैसा होता है ?

उ०—गौतम ! अधकारसस्थिति का आकार ऊर्ध्वमुख कलम्बुकपुष्प के समान होता है । यह अदर से सकडी एव वाहर से चौडी—यावत्—उसी प्रकार होती है । इसकी सर्वाभ्यन्तर बाहु मेरु पर्वत के पास ६३२४ $\frac{6}{10}$ योजन की परिधि वाली होती है ।

[२] प्र०—भगवन् ! यह परिधि कैसे निकाली गई ?

उ०—गौतम ! जो मेरु पर्वत की परिधि है उसे द्विगुणित कर दस का भाग देने से यह परिधि आती है । इसकी सर्वबाह्य वाहु लवणसमुद्र के पास ६३२४५ $\frac{6}{10}$ योजन परिधि वाली है ।

[३] प्र०—भगवन् ! यह परिधि कैसे निकाली गई ?

उ०—गौतम ! जो जम्बूद्वीप की परिधि है उसे द्विगुणित कर—यावत्—उसी प्रकार दस का भाग देने से यह परिधि आती) है ।

[४] प्र०—भगवन् ! उस समय अधकार की लवाई कितनी होती है ?

उ०—गौतम ! (अधकार की) लम्बाई ७८३३३ $\frac{1}{3}$ योजन होती है ।

[५] प्र०—भगवन् ! जब सूर्य सर्वबाह्य मण्डल पर उपसक्रान्त होकर गति करता है तब तापक्षेत्रसस्थिति का आकार कैसा होता है ?

उ०—गौतम ! ऊर्ध्वमुख कलम्बुकपुष्प के समान होता है—यावत्—सम्पूर्ण वर्णन उसी प्रकार समझना चाहिए। विशेषता इतनी है कि पहले अधकारसस्थिति के जिस प्रमाण का वर्णन किया गया है उसे तापक्षेत्रसस्थिति के विषय मे समझना चाहिए एव पहले तापक्षेत्रसस्थिति के जिस प्रमाण का वर्णन किया गया है उसे अधकारसस्थिति के विषय मे समझना चाहिए।

चन्द्र–सूर्य का स्वरूप

[१] [१] प्र०—ता कह ते अणुभावे आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ दो पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ।

तत्थेगे एवमाहसु—

ता चदिम-सूरिया ण णो जीवा, अजीवा, णो घणा, भुसिरा, णो वादरबोदिधरा, कलेवरा,
नत्थि ण तेसिं उट्ठाणेति वा, कम्मेति वा, बलेति वा विरिएति वा, पुरिसकार-परक्कमेति वा।
ते णो विज्जू लवति, णो असणि लवति, णो थणित लवति,
अहे य ण वादरे वाउकाए समुच्छति, अहे य ण वादरे वाउकाए समुच्छित्ता विज्जु पि लवति,
असणि पि लवति, थणितपि लवति, एगे एवमाहसु।

एगे पुण एवमाहसु—

ता चदिम-सूरिया ण जीवा, णो अजीवा, घणा, नो भुसिरा,
वादरबु दिधरा, नो कलेवरा, अत्थि ण तेसिं उट्ठाणेति वा—जाव—
ते विज्जु पि लवति३, एगे एवमाहसु।

वय पुण एव वदामो—

ता चदिम-सूरिया ण देवा ण महिड्ढिया—जाव—महाणुभागा वरवत्थधरा वरमल्लधरा वराभरणधारी
अवोच्छित्तिणयट्ठताए अन्ने चयंति अण्णे उववज्जति।

—सूर्य० सूत्र १०४ पृ० २८५–२८६
—चन्द्र० सूत्र १०४

[१] [१] प्र०—इन (चन्द्र आदिक) का स्वरूप कैसा है ?

उ०—इनके विषय मे (परतीर्थिको के) दो मत हैं—

एक मत है कि ये चन्द्र-सूर्य जीव नही हैं, अजीव हैं, ठोस नही है, पोले हैं, वादर शरीर धारण करने वाले नही हैं, कलेवरमात्र है, इनमे वल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम आदि कुछ नही है ये विद्युत् उत्पन्न नही करते, अशनि उत्पन्न नही करते, स्तनित (मेघगर्जन) उत्पन्न नही करते। (इनके) नीचे वादर वायुकाय विद्युत् को भी उत्पन्न करता है, अशनि को भी उत्पन्न करता है, स्तनित को भी उत्पन्न करता है। कोई ऐसा कहते हैं।

कोई (दूसरे) कहते हैं—

चद्र और सूर्य जीव हैं, अजीव नही, ठोस हैं, पोले नही, वादर शरीर धारण करने वाले हैं, कलेवर मात्र नही। इनमे उत्थान आदि है। ये विद्युत् अशनि और स्तनित भी उत्पन्न करते हैं।

हम ऐसा कहते हैं—

ये चन्द्र-सूर्य देव हैं, महर्द्धिक-यावत्-महानुभाग हैं, श्रेष्ठ वस्त्र धारण करने वाले हैं, श्रेष्ठ माला धारण करने वाले हैं, श्रेष्ठ आभरण धारण करने वाले हैं, अविच्छिन्न रूप से एक के च्युत होने पर दूसरे उत्पन्न होते रहते हैं।

चन्द्र-सूर्य का व्युत्पत्तिमूलक स्वरूप

[२[[१] प्र०—ता कह ते चदे ससी आहितेति वदेज्जा ?

उ०— ता चदस्स ण जोतिसिंदस्स जोतिसरण्णो
मियके विमाणे, कता देवा, कताओ देवीओ,
कताइं आसण-सयण-खभ भड-मत्तोवयरणाइ,
अप्पणावि ण चदे देवे जोतिसिंदे जोतिसराया
सोमे कते सुभे पियदसणे सुरूवे,
ता एव खलु चंदे ससी चदे ससी आहितेति वदेज्जा।

[२] प्र०—ता कह ते सूरिए आइच्चे सूरे २ आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता सूरादीया समयाति वा, आवलियाति वा, आणापाणूति वा, थोवेति वा-जाव-उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीति वा,
एव खलु सूरे आदिच्चे २ आहितेति वदेज्जा।

—सूर्य० सू० १०६ पृ० २६१
—चन्द्र० सू० १०६
—भग० भा० ३ श० १२ उ० ६ प्र० ३–४ पृ० २८०

[३] तेणं कालेण तेणं समएण भगव गोयमे अचिरुग्गय बालसूरिय जासुमणकुसुमपुंजप्पकास लोहितगं पासइ। पासित्ता जायसड्ढे-जाव-समुप्पन्नकोउहल्ले जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ-जाव नमसित्ता-जाव-एव वयासी—

[१] प्र०—किमिदं भते ! सूरिए ? किमिदं भंते ! सूरियस्स अट्ठे ?

उ०—गोयमा ! सुभे सूरिए, सुभे सूरियस्स अट्ठे।

[२] प्र०—किमिदं भते ! सूरिए, किमिदं भते ! सूरियस्स पभा ?

उ०—एव चेव, एवं छाया, एव लेस्सा।

—विवा० भाग ३ श० १४ उ० ९ प्र० १०–११ पृ० ३६१

[२] [१] प्र०—चन्द्र को 'ससी' क्यो कहते हैं ?

उ०—ज्योतिष्को के इन्द्र एव ज्योतिष्को के राजा चन्द्र के मृगाक विमान मे मनोहर देव, मनोहर देविया तथा मनोज्ञ आसन, शयन, स्तभ, पात्र आदि उपकरण हैं। (इनके अतिरिक्त) ज्योतिष्केन्द्र एव ज्योतिष्कराजा चन्द्रदेव स्वय भी सौम्य, कान्त, सुभग, प्रियदर्शन एव सुरूप है। इस कारण चन्द्र को 'ससी' (शशि या सश्री) कहते हैं।

[२] प्र०—सूर्य को आदित्य क्यो कहते हैं ?

उ०—समय, आवलिका, श्वासोच्छ्वास, स्तोक—यावत्—उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी का आदिभूत कारण सूर्य है। इस कारण सूर्य को 'आदित्य' कहते है।

[३] उस काल और उस समय मे भगवान् गौतम अचिरोद्गत (अभी-अभी उगे हुए) जासुमन के पुष्पो के पुज के समान आभा वाले रक्तवर्ण बालसूर्य को देखते हैं। देख कर श्रद्धावश—यावत्—कौतूहलवश हो जिधर श्रमण भगवान् महावीर हैं, उधर जाते हैं,—यावत्—नमस्कार करके—यावत्—इस प्रकार कहते हैं—

[१] प्र०—भगवन् ! सूर्य क्या है ? सूर्य का अर्थ क्या है ?

उ०—गौतम ! सूर्य शुभ है। सूर्य का अर्थ शुभ है।

[२] प्र०—भगवन् ! सूर्य क्या है ? भगवन् ! सूर्य की प्रभा क्या है ?

उ०—ये भी इसी प्रकार हैं। इसी प्रकार (सूर्य की) छाया एव लेश्या (भी कहना चाहिए।)

चन्द्र-सूर्यो की संख्या

[४] [१] प्र०—ता कति ण चदिम-सूरिया सव्वलोय ओभासति, उज्जोएति, तवेंति, पभासेंति आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ दुवालस पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१—तत्थेगे एवमाहसु
ता एगे चदे एगे सूरे सव्वलोग ओभासति, उज्जोएति, तवेति, पभासति, एगे एवमाहसु।

२—एगे पुण एवमाहसु
ता तिण्णि चदा तिण्णि सूरा सव्वलोअ ओभासेंति, एगे एवमाहसु।

३—एगे पुण एवमाहसु
ता आउट्टिं चदा, आउट्टिं सूरा सव्वलोअ ओभासेंति, उज्जोवेंति, तवेंति, पगासिंति, एगे एवमाहसु।
एगे पुण एवमाहसु,
एतेण अभिलावेण णेतव्व—

४—सत्त चदा, सत्त सूरा, ५ दस चदा, दस सूरा, ६ वारस चदा, वारस सूरा, ७ बातालीस चदा, बातालीस सूरा, ८ बावत्तरिं चदा, बावत्तरिं सूरा, ९ बातालीस चदसत, बातालीस सूरसतं, १० बावत्तरि चदसय, बावत्तरि सूरसय, ११ बायालीस चदसहस्सा, बायालीस सूरसहस्सा, १२ बावत्तर चदसहस्सा, बावत्तर सूरसहस्सा,
सव्वलोय ओभासति, उज्जोवेंति, तवेंति, पगासति,
एगे एवमाहसु।

वयं पुण एवं वदामो

ता अयण्ण जबुद्दीवे २—जाव—परिक्खेवेण।

—सूर्य सू० १०० पृ २६८
—चन्द्र सू० १००

[४] [१] प्र०—कितने चन्द्र और सूर्य समस्त लोक मे अवभास करते हैं, उद्योत करते हैं, तपते हैं, प्रभासित होते हैं ?

उ०—इस विषय मे (अन्यतीर्थिको की) ये बारह प्रतिपत्तिया हैं—

१–एक मत यह है कि एक चन्द्र और एक सूर्य समस्त लोक को अवभासित करता है, उद्योतित करता है, तपाता है, प्रभासित करता है।

२–एक मत यह है कि तीन चन्द्र और तीन सूर्य समस्त लोक को अवभासित करते हैं, इत्यादि।

३–एक मत यह है कि साढे तीन चन्द्र और साढे तीन सूर्य समस्त लोक को अवभासित, उद्योतित, तप्त और प्रकाशित करते हैं।

४-१२-इसी प्रकार कोई-कोई कहते हैं—(४) सात चन्द्र और सात सूर्य (५) दस चन्द्र और दस सूर्य (६) बारह चन्द्र और बारह सूर्य (७) बयालीस चन्द्र और बयालीस सूर्य (८) बहत्तर चन्द्र और बहत्तर सूर्य (९) ४२०० चन्द्र और ४२०० सूर्य (१०) ७२०० चन्द्र और ७२०० सूर्य (११) ४२००० चन्द्र और ४२००० सूर्य (१२) ७२००० चन्द्र और ७२००० सूर्य सर्वलोक को अवभासित करते हैं, उद्योतित करते है, तपाते हैं, प्रकाशित करते हैं।

हम ऐसा कहते हैं—यह जम्बूद्वीप-यावत्-परिधि वाला है।[1]

चन्द्र और सूर्य की गति

[५] [१] प्र०—ता कह ते चारा आहितांति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमा दुविहा चारा पण्णत्ता, तंजहा—
आदिच्चचारा य, चदचारा य।

२] प्र०—ता कह ते चंदचारा आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता पचसंवच्छरिएण जुगे,
अभीइणक्खत्ते सत्तसट्ठिचारे चदेण सद्धि जोय जोएति,
सवणे ण णक्खत्ते सत्तट्ठि चारे चदेण सद्धि जोय जोएति।
एव—जाव—उत्तरासाढाणक्खत्ते सत्तट्ठिचारे चदेण सद्धि जोय जोएति।

[३] प्र०—ता कह ते आइच्चचारा आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता पचसंवच्छरिएण जुगे
अभीयीणक्खत्ते पचचारे सूरेण सद्धि जोयं जोएति,
एव—जाव—उत्तरासाढाणक्खत्ते पचचारे सूरेण सद्धि जोयं जोएति।

—सूर्य सूत्र ५२ पृ १५२

[५] [१] प्र०—(चन्द्र और सूर्य की) गति किस प्रकार की है ?

उ०—गति दो प्रकार की है, यथा—आदित्यगति और चन्द्रगति।

[२] प्र०—चन्द्रगति किस प्रकार की है ?

उ०—पाँच सवत्सर का युग होता है। उसमे अभिजित नक्षत्र ६७ वार चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। श्रवण नक्षत्र ६७ वार चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। इसी प्रकार—यावत्—उत्तराषाढा नक्षत्र ६७ वार चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है।

[३] प्र०—आदित्यगति किस प्रकार की है ?

उ०—पाँच सवत्सर के एक युग मे अभिजित नक्षत्र पाँच बार सूर्य के साथ योगयुक्त होता है। इसी प्रकार—यावत्—उत्तरापाढा नक्षत्र पाँच बार सूर्य के साथ योगयुक्त होता है।

चन्द्र-सूर्य का अवभासनक्षेत्र

[६] [१] प्र०—ता केवतिय खेत्त चदिम-सूरिया ओभासंति उज्जोवेंति तवेंति पभासति आहितांति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ बारस पडिवत्तीओ पन्नत्ताओ—

---

१. स्पष्टीकरण के लिए देखिए पृ० २५२ से २५६

१–तत्थेगे एवमाहसु—
ता एग दीव एग समुद्द चदिम-सूरिया ओभासेंति, उज्जोवेंति, तवेंति, पगासेंति, एगे एवमाहसु ।

२–एगे पुण एवमाहसु—
ता तिण्णि दीवे तिण्णि समुद्दे चदिम-सूरिया ओभासति०, एगे एवमाहसु ।

३–एगे पुण एवमाहसु—
ता अद्धचउत्थे दीव-समुद्दे चदिम-सूरिया ओभास ति उज्जोवेंति तवेंति पगासिति, एगे एवमाहसु ।

४–एगे पुण एवमाहसु—
ता सत्त दीवे सत्त समुद्दे चदिम-सूरिया ओभासिति, एगे एवमाहसु ।

५–एगे पुण एवमाहसु—
ता दस दीवे दस समुद्दे चदिम-सूरिया ओभास ति ४, एगे एवमाहसु ।

६–एगे पुण एवमाहसु—
ता बारस दीवे बारस समुद्दे चदिमसू-रिया ओभास ति ४, एगे एवमाहसु ।

७–एगे पुण एवमाहसु—
बायालीस दीवे बायालीस समुद्दे चदिम-सूरिया ओभास ति ४, एगे एवमाहसु ।

८–एगे पुण एवमाहसु—
बावत्तरि दीवे बावर्त्तारे समुद्दे चदिम-सूरिया ओभासति ४, एगे एवमाहसु ।

९–एगे पुण एवमाहसु—
ता बातालीस दीवसत बातालीस समुद्दसत चदिम-सूरिया ओभासति ४, एगे एवमाहसु ।

१०–एगे पुण एवमाहसु—
ता बावर्त्तारे दीवसत बावर्त्तारे समुद्दसत चदिम-सूरिया ओभासति ४, एगे एवमाहसु ।

११–एगे पुण एवमाहसु—
ता बायालीस दीवसहस्स बायाल समुद्दसहस्स चदिम-सूरिया ओभासति ४, एगे एवमाहसु ।

१२–एगे पुण एवमाहसु—
ता बावर्त्तारे दीवसमुद्द बावत्तर समुद्दसहस्स चदिम-सूरिया ओभासति ४, एगे एवमाहसु ।

वय पुण एवं वदामो–

अयण्ण जबुद्दीवे सव्वदीव-समुद्दाण—जाव—परिक्खेवेण पण्णत्ते ।
से ण एगाए जगतीए सव्वतो समता सपरिक्खित्ते,
सा ण जगती तहेव जहा जबुद्दीवपन्नतीए—जाव—एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे २ चोद्दस
सलिलासयसहस्सा छप्पन्न च सलिलासहस्सा भवतीति मक्खाया ।
जबुद्दीवे ण दीवे पचचक्कभागसठिते आहितात्ति वदेज्जा ।
ता कह जबुद्दीवे २ पचचक्कभागसठिते आहितात्ति वदेज्जा ?
ता जता ण एते दुवे सूरिया सव्वब्भतर मडल उवसकमित्ता चार चरति
तदा ण जबुद्दीवस्स दीवस्स तिण्णि पचचक्कभागे ओभासति उज्जोवेंति तवेंति पभासति ।
तजहा—
एगो वि एग दिवड्ढ पच चक्कभाग ओभासेति ४,
एगो वि एग दिवड्ढ पच चक्कभाग ओभासेति ४,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ते उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति,
जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवति ।
ता जता ण एते दुवे सूरिया सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरति,

तदा णं जंबुद्दीवस्स दीवस्स दोण्णि चक्कभागे ओभासंति उज्जोवेंति तवेंति पगासेंति ।
ता एगेवि एग पचचक्कवालभाग ओभासेति, उज्जोवेइ तवेइ पभासइ ।
एगेवि एक्क पच चक्कवालभाग ओभासइ ४,
तता ण उत्तमकट्ठपत्ता उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवई, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति ।

—सूर्य सूत्र २४ पृ ६३-६४
—चन्द्र सूत्र २४

[६] [१] प्र०—चन्द्र-सूय कितने क्षेत्र मे अवभासित होते हैं, उद्योत करते है, तपते है, प्रकाशित होते है ?

उ०—इस विषय मे (अन्य तीर्थिको की) ये बारह प्रतिपत्तियाँ (मान्यताएँ) हैं—

१–कोई कहते हैं कि चन्द्र और सूर्य एक द्वीप व एक समुद्र मे अवभासित होते हैं, उद्योतित होते है, तपते हैं, प्रकाशित होते हैं।

२–एक मान्यता ऐसी है कि चन्द्र-सूर्य तीन द्वीपो और तीन समुद्रो मे अवभासित होते हैं, आदि।

३–एक मान्यता ऐसी है कि चन्द्र-सूर्य साढे तीन द्वीपो और साढे तीन समुद्रो को अवभासित करते हैं, उद्योतित करते हैं, तपते हैं, प्रकाशित करते है।

४–एक मान्यता ऐसी है कि चन्द्र-सूर्य सात द्वीपो और सात समुद्रो को अवभासित करते है इत्यादि।

५–एक मान्यता यह है कि चन्द्र-सूर्य दस द्वीपो व दस समुद्रो को अवभासित आदि करते हैं।

६–कोई कहते है–चन्द्र–सूर्य बारह द्वीपो और बारह समुद्रो को अवभासित आदि करते हैं।

७–किसी का कहना है कि चन्द्र-सूर्य बयालीस द्वीपो व समुद्रो को प्रकाशित आदि करते हैं।

८–किसी के कथनानुसार चन्द्र-सूर्य बहत्तर द्वीपो और बहत्तर समुद्रो को अवभासित करते है, आदि।

९–किसी का कथन है कि चन्द्र-सूर्य बयालीस सौ द्वीपो और बयालीस सौ समुद्रो को अवभासित करते है।

१०–कोई कोई कहते हैं–चन्द्र–सूर्य बहत्तर सौ द्वीपो और बहत्तर सौ समुद्रो को अवभासित करते है, आदि।

११–कोई कहते हैं कि चन्द्र और सूर्य बयालीस हजार द्वीपो और बयालीस हजार समुद्रो को अवभासित करते हैं, आदि।

१२–किसी का कहना है कि चन्द्र और सूर्य बहत्तर हजार द्वीपो और बहत्तर हजार समुद्रो को अवभासित करते है, आदि।

किन्तु हम ऐसा कहते है—
यह जम्बूद्वीप सर्व द्वीप-समुद्रो के (मध्य मे है)—यावत्—परिधि वाला है। इसके चारो ओर एक जगती (कोट) है। यह जगती उसी प्रकार है जिस प्रकार जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति मे (वर्णन किया गया है)—यावत्—सब मिलाकर इस जम्बूद्वीप मे चौदह लाख छप्पन हजार नदिया हैं।
जम्बूद्वीप को पाच भागो मे विभक्त करना चाहिए। जम्बूद्वीप को पाच भागो मे विभक्त क्यो करना चाहिए ?

जव ये (जम्बूद्वीप के) दोनो सूर्य सर्वाभ्यन्तर मडल मे उपसक्रान्त होकर गति करते हैं तव जम्बूद्वीप के पाच भागो मे से तीन भागो मे अवभास करते है, उद्योत करते हैं, तप्ते हैं, प्रभासित होते हैं—यथा–एक (सूर्य) पाँच भागो मे से डेढ भाग (२/५ = ३/२ + १/५ = ३/१०) को अवभासित करता है। तथा दूसरा भी पाँच भागो मे से डेढ भाग को अवभासित करता है। इस समय उत्कृष्ट सीमा को प्राप्त सवसे वडा अठारह मुहूर्त का दिवस होता है एव जघन्य वारह मुहूर्त की रात्रि होती है।

जव ये दोनो सूर्य सर्ववाह्य मडल मे उपसक्रान्त होकर गति करते हैं तव जम्बूद्वीप के (पाँच भागो मे से) दो भागो (२) मे अवभास करते हैं, उद्योत करते हैं, तपते हैं, प्रकाश करते है। एक सूर्य पाँच भागो मे से एक भाग को अवभासित करता है, उद्योतित करता है, तपता है, प्रभासित करता है और दूसरा भी पाँच भागो मे से एक भाग को अवभासित आदि करता है। इस समय सर्वोत्कृष्ट सीमा को प्राप्त अठारह मुहूर्त की रात्रि और सर्वजघन्य वारह मुहूर्त का दिन होता है।

उद्योत का लक्षण

[७] [१] प्र०—ता कह ते दोसिणालक्खणे आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता चदलेसादी य दोसिणादी य।

[२] प्र०—दोसिणाई य चदलेसादी य के अट्ठे किंलक्खणे ?

उ०—ता एकट्ठे एगलक्खणे।

ता सूरलेस्सादी य आयवेइ य।

[३] प्र०—आतवेति य सूरलेस्सादी य के अट्ठे किंलक्खणे ?

उ०—ता एगट्ठे एगलक्खणे।

ता अधकारेति य छायाइ य।

[४] प्र०—छायाति य अधकारेति य के अट्ठे किंलक्खणे ?

उ०—ता एगट्ठे एगलक्खणे।

—सूर्य सूत्र ८७ पृ० २५६
—चन्द्र सूत्र ८७

[७] [१] प्र०—ज्योत्स्ना—उद्योत का क्या लक्षण कहा गया है ?

उ०—उद्योत चन्द्रलेश्या—चन्द्र के प्रकाश से होता है।

[२] प्र०—उद्योत एव चन्द्रलेश्या का क्या अर्थ है ? क्या लक्षण है ?

उ०—इनका एक ही अर्थ है, एक ही लक्षण है।

सूर्यलेश्या—सूर्य के प्रकाश से आतप होता है।

[३] प्र०—आतप एव सूर्य लेश्या का क्या अर्थ है एव क्या लक्षण है ?

उ०—इनका एक ही अर्थ एव एक ही लक्षण है।

अन्धकार से छाया होती है।

[४] प्र०—छाया एव अधकार का क्या अर्थ हे ? क्या लक्षण है ?

उ०—इनका एक ही अर्थ एव एक ही लक्षण है।

ग्रहनिरूपण

अठासी महाग्रहों के नाम

[१] तत्थ खलु इमे अट्ठासीतो महग्गहा पण्णत्ता, तजहा—
इगालए, वियालए, लोहितके, सणिच्छरे, आहुणिए,
पाहुणिए, कणो, कणए, कणकणए, कणविताणए १०,
कणगसताणे, सोमे, सहिते, अस्सासणे, कज्जोवए,
कव्वरए, अयकरए, दुदुभए, सखे, सखणाभे, २०,
सखवण्णाभे, कसे, कसणाभे, कसवण्णाभे, णीले,
णीलोभासे, रुप्पे, रुप्पोभासे,[१] भासे, भासरासी, ३०,
तिले, तिलपुप्फवण्णे, दगे, दगवण्णे, काये,
वधे, इदग्गी, धूमकेतू, हरी, पिगलए, ४०
बुधे, सुक्के,[२] वहस्सती, राहू, अगत्थी,
माणवए, कामफासे, धुरे, पमुहे, वियडे, ५०,
विसधिकप्पेल्लए, पइल्ले, जडियालए, अरुणे, अग्गिल्लए,
काले, महाकाले, सोत्थिए, सोवत्थिए, वद्धमाणगे,[३] ६०
पलवे, णिच्चालोए, णिच्चुज्जोते, सयपभे, ओभासे,
सेयकरे, खेमकरे, आभकरे, पभकरे, अरए, ७०
विरए, असोगे, वीतसोगे य, विमले, वितते,
विवत्थे, विसाले, साले, सुव्वते, अणियट्टी, ८०
एगजडी, दुजडी, कर, करिए, राय-ग्गले, पुप्फकेतू, भावकेतू, [४]

—सूय० सूत्र १०७ पृ० २९४-९५
—चन्द्र० ,, ,,

[१] ये (निम्नलिखित) अठासी महाग्रह कहे गए है —

१—अगारक, २—विकालक, ३—लोहित्यक, ४—शनैश्चर, ५—आधुनिक, ६—प्राधुनिक, ७—कण, ८—कणक, ९—कणकणक, १०—कणवितानक, ११—कणसन्तानक, १२—सोम, १३—सहित, १४—आश्वासन, १५—कार्योपग, १६—कर्वटक, १७—अजकरक, १८—दुन्दुभक, १९—शख, २०—शखनाभ, २१—शखवर्णाभ, २२—कम, २३—कसनाभ, २४—कसवर्णाभ, २५—नील, २६—नीलावभास, २७—रुप्पी, २८—रुप्यवभास, २९—भस्म, ३०—भस्मराशि, ३१—तिल, ३२—तिलपुष्पवर्णक, ३३—दक, ३४—दकवर्ण, ३५—काय, ३६—वन्ध्य, ३७—इन्द्राग्नि, ३८—धूमकेतु, ३९—हरि, ४०—पिंगल, ४१—बुध, ४२—शुक्र, ४३—बृहस्पति, ४४—राहु, ४५—अगस्ति ४६—माणवक, ४७—कामस्पर्श, ४८—धुर, ४९—प्रमुख, ५०—विकट, ५१—विसधिकल्प,

---

१— स्थानाग सूत्र मे रुक्मी और रुक्माभास पहले तथा नील एव नीलाभास उसके बाद मे उल्लिखित हैं ।
२— सुक्के ण महग्गहे अवरेण उदिए समाणे एगूणवीस णक्खत्ताइ सम चार चरित्ता अवरेण अत्यमणं उवागच्छइ ।
—सम० १९ सूत्र ३
३— 'वद्धमाणग' और 'पलव' के बीच स्थानाग मे 'पूसमानक' और 'अकुश' नामक दो ग्रह अधिक हैं ।
४— ठा० २ उ० सूत्र ९० पृ० ७३

५२–प्रकल्प, ५३–जटाल, ५४–अरुण, ५५–अग्नि, ५६–काल, ५७–महाकाल, ५८–स्वस्तिक, ५९–सौवस्तिक, ६०–वर्द्धमानक, ६१–प्रलम्ब, ६२–नित्यालोक, ६३–नित्योद्योत, ६४–स्वयप्रभ, ६५–अवभास, ६६–श्रेयस्कर, ६७–खेमकर, ६८–आमकर, ६९–प्रभकर, ७०–अरजा, ७१-विरजा, ७२-अशोक, ७३–वीतशोक, ७४–विवर्त्त, ७५–विवस्त्र, ७६–विशाल, ७७–शाल, ७८–सुव्रत, ७९–अनिवृत्ति, ८०–एकजटी, ८१–द्विजटी, ८२–कर, ८३–करिक, ८४–राज, ८५–अर्गल, ८६–पुष्प, ८७–माव, ८८–केतु ।

राहु के भेद

[२] [१] प्र०—कतिविधे ण राहू पण्णत्ते ?

उ०—दुविहे पण्णत्ते, तजहा—
ता धुवराहू य पव्वराहू य ।
तत्थ ण जे से धुवराहू,
से ण बहुलपक्खस्स पाडिवए पण्णरसइभागेण[1] भाग चदस्स लेसं आवरेमाणे० चिट्ठति, तजहा—
पढमाए पढम भाग—जाव—पन्नरसम भाग,
चरमे समए चदे रत्ते भवति, अवसेसे समए चदे रत्ते य विरत्ते य भवइ ।
तमेव सुक्कपक्खे उवदसेमाणे २ चिट्ठति, तजहा—
पढमाए पढम भाग—जाव—चदे विरत्ते य भवइ ।
अवसेसे समए चदे रत्ते विरत्ते य भवति ।
तत्थ ण जे ते पव्वराहू से जहण्णेण छण्ह मासाण,
उक्कोसेण बायालीसाए मासाण चदस्स अडयालीसाए सवच्छराण सूरस्स ।

—सूर्य॰ सूत्र १०५ पृ २८६–२८८
—चन्द्र॰ सूत्र १०५
—विवा भाग ३ श १२ उ ६ प्र १–२ पृ २७९–२८०

[२] [१] प्र०—राहु कितने प्रकार के हैं ?

उ०—(राहु) दो प्रकार के हैं, यथा-ध्रुवराहु और पर्वराहु ।

इनमे जो ध्रुवराहु है वह कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से अपने पन्द्रहवें भाग द्वारा चन्द्र के प्रकाश को आवृत करता हुआ स्थित रहता है । यथा—प्रतिपदा को प्रथम भाग—यावत्—(अमावस्या को) पन्द्रहवें भाग को (आवृत करता) है । इस प्रकार चरम समय मे चन्द्र रक्त (आच्छादित) रहता है । अवशेष समय मे चन्द्र रक्त तथा विरक्त (अनाच्छादित)—दोनो तरह रहता है । शुक्लपक्ष मे उसी को (चन्द्रमा के भाग को) दिखाता हुआ स्थित रहता है । यथा-प्रतिपदा को प्रथम भाग (—यावत् – पूर्णिमा को पन्द्रहवां भाग दिखाई देता है), —यावत्—(चरम समय मे) चन्द्र विरक्त-अनाच्छादित होता है । अवशेप समय मे चन्द्र रक्त-आच्छादित एव विरक्त-अनाच्छादित दोनो तरह होता है ।

इनमे से जो पर्वराहु है वह जघन्य छह मास मे (चन्द्र तथा सूर्य को) एव उत्कृष्ट बयालीस मास मे चन्द्रमा को तथा अडतालीस वर्ष मे सूर्य को (आवृत करता है) ।

१ सम १५ सूत्र ३ पृ ३०

राहु का स्वरूप

[३] [१] प्र०—ता कहं ते राहुकम्मे आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ दो पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–तत्थेगे एवमाहंसु
अत्थि ण से राहू देवे, जे णं चंद वा सूरं वा गिण्हति, एगे एवमाहसु ।

२–एगे पुण एवमाहसु
नत्थि ण से राहू देवे, जे ण चद वा सूर वा गिण्हइ ।

१–तत्थ जे ते एवमाहसु
ता अत्थि ण से राहू देवे, जे ण चद वा सूरं वा गिण्हति,
ता राहू ण देवे चद वा सूर वा गेण्हमाणे
बुद्धतेण गिण्हित्ता बुद्धतेण मुयति,
बुद्धतेण गिण्हित्ता मुद्धतेण मुयइ,
मुद्धतेण गिण्हित्ता मुद्ध तेण मुयति,
वामभुयतेणं गिण्हित्ता वामभुयतेण मुयति,
वामभुयतेण गिण्हित्ता दाहिणभुयतेण मुयति,
दाहिणभुयतेण गिण्हित्ता वामभुयतेण मुयति,
दाहिणभुयतेण गिण्हित्ता दाहिणभुयतेण मुयति ।

२–तत्थ जे ते एवमाहंसु—
ता नत्थि ण से राहू देवे, जे ण चदं वा सूरं वा गेण्हति ते एवमाहसु,
तत्थ ण इमे पण्णरस कसिणपोग्गला पण्णत्ता, तंजहा—सिघाणए, जडिलए, खरए, खतए, अजणे, खजणे, सीतले, हिमसीयले, केलासे अरुणाभे, परिज्जए, णभसूरए, कविलिए, पिंगलए, राहू ।
ता जया ण एते पण्णरस कसिणा २ पोग्गला
सदा चदस्स वा सूरस्स वा लेसाणुवद्धचारिणो भवंति,
तता ण माणुसलोयंमि माणुसा एव वदंति,
एव खलु राहू चद वा सूर वा गेण्हति, एवं० २ ।
जता ण एते पण्णरस्स कसिणा२ पोग्गला णो सदा चदस्स वा सूरस्स वा लेसाणुबद्धचारिणो खलु, तदा माणुसलोयमि मणुस्सा एव वदति, एव णो खलु राहू चद वा सूरं वा गेण्हति, एते एवमाहंसु ।

वयं पुण एवं वदामो—

ता राहू ण देवे महिड्ढीए-जाव-महाणुभावे, वरवत्थधरे-जाव-वराभरणधारी,
राहुस्स ण देवस्स णव णामधेज्जा पण्णत्ता, तजहा—
सिघाडए, जडिलए, खरए, खेतए, ढड्डरे, मगरे, मच्छे, कच्छभे, कण्णसप्पे ।
ता राहुस्स ण देवस्स विमाणा पचवण्णा पण्णत्ता, तजहा—
किण्हा, नीला, लोहिता, हालिद्दा, सुक्किल्ला ।
अत्थि कालए राहुविमाणे खजणवण्णाभे पण्णत्ते,
अत्थि नीलए राहुविमाणे लाउयवण्णाभे पण्णत्ते,
अत्थि लोहिए राहुविमाणे मजिट्ठवण्णाभे पण्णत्ते,
अत्थि हालिद्दए राहुविमाणे हालिद्दवण्णाभे पण्णत्ते,
अत्थि सुक्किल्लए राहुविमाणे भासरासिवण्णाभे पण्णत्ते ।

१–ता जया ण राहुदेवे आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वेमाणे वा परियारेमाणे वा चंदस्स वा
सूरस्स वा लेस्सं पुरच्छिमेण आर्वारत्ता पच्चत्थिमेण वीतीवतति,
तया ण पुरच्छिमेण चदे सूरे वा उवदसेति, पच्चत्थिमेण राहू ।

२–जदा ण राहुदेवे आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वेमाणे वा परियारेमाणे वा
चदस्स वा सूरस्स वा लेसं दाहिणेण आवरित्ता उत्तरेण वीतीवतति,
तदा ण दाहिणेण चदे वा सूरे वा उवदसेति, एव उत्तरेण राहू ।
एतेण अभिलावेण पच्चत्थिमेण आवरित्ता पुरच्छिमेण वीतीवतति,
उत्तरेण आवरित्ता दाहिणेण वीतीवतति ।

३–जया ण राहू देवे आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदस्स वा
सूरस्स वा लेस दाहिणपुरच्छिमेण आवरित्ता उत्तरपच्चत्थिमेण वीईवयइ,
तया ण दाहिण-पुरच्छिमेण चदे वा सूरे वा उवदसेइ, उत्तर-पच्चत्थिमेण राहू ।

४–जया ण राहू देवे आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा
चदस्स वा सूरस्स वा लेस दाहिणपच्चत्थिमेण आवरित्ता उत्तरपुरच्छिमेण वीतीवतति,
तदा ण दाहिणपच्चत्थिमेण चदे वा सूरे वा उवदसेति, उत्तरपुरच्छिमेण राहू ।
एतेण अभिलावेण उत्तरपच्चत्थिमेण आवरेत्ता दाहिणपुरच्छिमेण वीतीवतति,
उत्तरपुरच्छिमेण आवरेत्ता दाहिणपच्चत्थिमेण वीतीवयइ ।

५–ता जया ण राहू देवे आगच्छमाणे वा० चदस्स वा सूरस्स वा लेस आवरेत्ता वीतिवतति,
तदा ण मणुस्सलोए मणुस्सा वदति—राहुणा चदे सूरे वा गहिते ।

६–ता जया ण राहू देवे आगच्छमाणे वा० चदस्स वा सूरस्स वा लेस आवरेत्ता पासेण वीतीवतति,
तता ण मणुस्सलोअमि मणुस्सा वदति—चदेण वा सूरेण वा राहुस्स कुच्छी भिण्णा ।

७–ता जता ण राहू देवे आगच्छमाणे वा० चदस्स वा सूरस्स वा लेस आवरेत्ता पच्चोसक्कति
तता ण मणुस्सलोए मणुस्सा एव वदति—
राहुणा चदे वा सूरे वा वते—राहुणा चदे वा सूरे वा वते ।

८–ता जता ण राहू देवे आगच्छमाणे वा० चदस्स वा सूरस्स वा लेस आवरेत्ता मज्झ मज्झेण
वीतीवतति
तता ण मणुस्सलोयसि मणुस्सा वदति—
राहुणा चदे वा सूरे वा विइयरिए—राहुणा चदे वा सूरे वा विइयरिए ।

९–ता जता ण राहू देवे आगच्छमाणे०
चदस्स वा सूरस्स वा लेस आवरेत्ता ण अधे सपक्खि सपडिदिसिं चिट्ठति,
तता ण मणुस्सलोअमि मणुस्सा वदति – राहुणा चदे वा० घत्थे, राहुणा० २ ।

—सूर्य सूत्र १०५ पृ २८६-८७

[३] [१] प्र०—राहुकर्म किस प्रकार का वतलाया गया है ?

उ०—इस विषय मे दो प्रतिपत्तिया—मत है—

१–एक मान्यता ऐसी है कि जो चन्द्र और सूर्य को ग्रसित—ग्रहण करता है वह राहु देव है।

२–एक मान्यता ऐसी भी है कि जो चन्द्र और सूर्य को ग्रसित करता है वह राहु देव नही है।

इनमे से जो ऐसा कहते हैं कि—जो चन्द्र व सूर्य को ग्रसित करता है वह राहु देव है, उनकी मान्यता इस प्रकार है—

राहुदेव चन्द्र या सूर्य को ग्रसित करते समय अधोभाग से ग्रसित करता हुआ अधोभाग मे छोडता है, अधोभाग से ग्रहण करता हुआ ऊर्ध्वभाग से छोडता है। ऊर्ध्वभाग से ग्रहण करता हुआ ऊर्ध्वभाग से छोडता है, वाम भुजा से ग्रहण करता हुआ वाम भुजा से छोडता हैं, वाम भुजा से ग्रहण करता हुआ दक्षिण भुजा से छोडता है, दक्षिण भुजा से ग्रहण करता हुआ वाम भुजा से छोडता है, दक्षिण भुजा से ग्रहण करता हुआ दक्षिण भुजा से छोडता है।

जो ऐसा कहते है कि—जो चन्द्र व सूर्य को ग्रहण करता है वह राहु देव नही है, उनका कथन इस प्रकार है—

निम्नलिखित पन्द्रह प्रकार के कृष्ण पुद्गल होते हैं—

सिंघाणक, जटिलक, खर, क्षत्रक, अजन, खजन, शीतल, हिमशीतल, कैलाश, अरुणप्रभ, परिज्जय, नभसूरक, कपिलिक, पिंगलक और राहु। जब यह पन्द्रह प्रकार के कृष्ण पुद्गल चन्द्र अथवा सूर्य की लेश्या (प्रकाश) को आवृत कर लेते हैं तब मनुष्यलोक मे मनुष्य यो कहते हैं कि—राहु ने चन्द्र अथवा सूर्य को ग्रसित कर लिया है।

जब ये पन्द्रह प्रकार के कृष्ण पुद्गल चन्द्र अथवा सूर्य की लेश्या को आच्छादित नही करते है तब मनुष्यलोक मे मनुष्य यो कहते है कि राहु ने चन्द्र अथवा सूर्य को ग्रसित नही किया है। वे ऐसा कहते हैं।

हम इस प्रकार कहते हैं—

राहु महर्द्धिक—यावत्—महानुभाव, वरवस्त्रधारी—यावत्—वरभूषणधारी देव है।

राहु के नौ नाम हैं—सिंघाडए, जडिलए, खरए, खेतए, ढड्डर, मगर, मच्छ, कच्छप, और कृष्णसर्प।

राहु देव के विमान पाँच वर्ण वाले है—कृष्ण, नील, लोहित, पीत और शुक्ल। कृष्ण राहु-विमान खजन-कज्जल के समान है। नील राहुविमान अलाबु (लौकी) के समान वर्ण वाला है। लोहित राहुविमान मजीठ के सदृश वर्ण वाला है। पीत राहुविमान हरिद्रा—हल्दी के समान रग वाला है। शुक्ल राहुविमान भस्मराशि के समान वर्ण वाला है।

१–जब राहु देव आते हुए, जाते हुए, विकुर्वण करते हुए अथवा परिचारण करते हुए चन्द्र अथवा सूर्य की लेश्या को पूर्व से आवृत कर पश्चिम की ओर जाता है तब पूर्व मे चन्द्र अथवा सूर्य दिखाई देता है एव पश्चिम मे राहु (दृष्टिगोचर होता है)।

२–जब राहु देव आते हुए, जाते हुए, विकुर्वण करते हुए अथवा परिचारण करते हुए चन्द्र या सूर्य की लेश्या-प्रकाश को दक्षिण से आवृत कर उत्तर की ओर जाता है तब दक्षिण मे चन्द्र अथवा सूर्य एव उत्तर मे राहु दिखाई देता है।

३–इस प्रकार आते हुए, जाते हुए, विकुर्वण करते हुए अथवा परिचारण करते हुए चन्द्र अथवा सूर्य की लेश्या को दक्षिण-पूर्व से आवृत कर उत्तर-पश्चिम की ओर जाता है तब दक्षिण-पूर्व मे चन्द्र अथवा सूर्य एव उत्तर-पश्चिम मे राहु दिखाई देता है।

४–जब राहु देव आते हुए, जाते हुए, विकुर्वण करते हुए अथवा परिचारण करते हुए चन्द्र अथवा सूर्य की लेश्या को दक्षिण-पश्चिम से आवृत कर उत्तर-पूर्व की ओर जाता है तब दक्षिण-पश्चिम मे चन्द्र अथवा सूर्य एव उत्तर-पूर्व मे राहु दिखाई देता है। इसी प्रकार उत्तर-पश्चिम से आवृत कर दक्षिण-पश्चिम की ओर जाता है (इत्यादि कह लेना चाहिए)।

५–जब राहु देव आता हुआ (अथवा जाता हुआ अथवा विकुर्वण करता हुआ अथवा परिचारण करता हुआ) चन्द्र या सूर्य के प्रकाश को आवृत कर स्थित रहता है तब मनुष्यलोक मे मनुष्य कहते है कि राहु ने चन्द्र अथवा सूर्य को ग्रसित किया है।

६–जब राहु देव आते-जाते हुए चन्द्र अथवा सूर्य के प्रकाश को आवृत कर पास से निकलता है तब मनुष्यलोक मे कहते है कि चन्द्र अथवा सूर्य ने राहु की कुक्षि का भेदन किया।

७–जब राहु देव आते-जाते हुए चन्द्र अथवा सूर्य के प्रकाश को आवृत कर वापिस लौटता है तब मनुष्यलोक मे मनुष्य कहते हैं कि राहु ने चन्द्र अथवा सूर्य का वमन किया है।

८–जब राहु देव आते-जाते चन्द्र अथवा सूर्य के प्रकाश को आवृत कर बीचो-बीच स्थित रहता है तब मनुष्यलोक मे मनुष्य कहते है कि राहु ने चन्द्र अथवा सूर्य को बीच से, भेद दिया है।

९–जब राहु देव आते, जाते चन्द्र अथवा सूर्य के प्रकाश को आवृत कर सभी ओर से ढक देता है तब मनुष्यलोक मे मनुष्य कहते हैं कि राहु ने चन्द्र अथवा सूर्य को पूरी तरह ग्रसित कर लिया है।

नक्षत्रों की संख्या एवं नाम

[१] [१] प्र०—कइ ण भते ! णक्खत्ता पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! अट्ठावीस णक्खत्ता पण्णत्ता, तजहा—

अभिई १ सवणो २. धणिट्ठा ३ सयभिसया ४ पुव्वभद्दवया ५ उत्तरभद्दवया ६ रेवई ७ अस्सिणी ८ भरणी ९ कत्तिआ १० रोहिणी ११ मिअसिर १२ अद्दा १३, पुणव्वसू १४ पूसो १५ अस्सेसा १६ मघा १७, पुव्वफग्गुणी १८ उत्तरफग्गुणी १९. हत्थो २०, चित्ता २१ साई २२ विसाहा २३ अणुराहा २४ जिट्ठा २५ मूल २६ पुव्वासाढा २७ उत्तरासाढा २८ इति।

—जबू० सूत्र १५५ पृ० ४९५
—सूर्य० सूत्र ४२ पृ० १३१

[१] [१] प्र०—भगवन् ! नक्षत्र कितने हैं ?

उ०—गौतम ! नक्षत्र २८ हैं, वे इस प्रकार—

१–अभिजित २–श्रवण ३–धनिष्ठा ४–शतभिषा ५–पूर्वभाद्रपदा ६–उत्तरभाद्रपदा ७–रेवती ८–अश्विनी ९–भरणी १०–कृत्तिका ११–रोहिणी १२–मृगशीर्ष १३–आर्द्रा १४–पुनर्वसु १५–पुष्य १६–अश्लेषा १७–मघा १८–पूर्वफाल्गुनी १९–उत्तरफाल्गुनी २०–हस्त २१–चित्रा २२–स्वाति २३–विशाखा २४–अनुराधा २५–ज्येष्ठा २६–मूल २७–पूर्वाषाढा २८–उत्तराषाढा।

१– देखिए- ठा० २ उ० ३ सूत्र ९० पृ० ७३।
यहाँ कृत्तिका मे नक्षत्र प्रारभ होकर भरणी पर समाप्त हुए हैं।

नक्षत्रनिरूपण के दस द्वार

गाहा—

[२] १ जोगा २ देवय ३ तारग्ग ४ गोत ५ संठाण ६ चद-रविजोगा ।
७ कुल ८ पुण्णिम अवमसा य, ९ सण्णिवाए अ १० णेता य ॥

—जबू० सूत्र १५५ पृ० ४९५

[२] (नक्षत्रो का इन दस द्वारो से प्ररूपण किया जाता है—)
१—योग २—देवता ३—ताराग्र ४—गोत्र ५—सस्थान ६—चन्द्र-सूर्ययोग ७—कुल ८—पूर्णिमा-अमावस्या ९—सन्निपात और १०—नेता ।

नक्षत्रों का गणनाक्रम

[३] [१] प्र०—ता जोगेत्ति वत्थुस्स आवलियाणिवाते आहितेति वदेज्जा ?
ता कहं ते जोगेत्ति वत्थुस्स आवलियाणिवाते आहितेति वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ पच पडिवत्तीओ पन्नत्ताओ—

१—तत्थेगे एवमाहसु
ता सव्वेवि ण णक्खत्ता कत्तियादिया भरणिपज्जवसाणा, एगे एवमाहसु ।

२—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वेवि ण णक्खत्ता महादीया अस्सेसपज्जवसाणा पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

३—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वेवि ण णक्खत्ता धणिट्ठादीया सवणपज्जवसाणा पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

४—एगे पुण एवमाहसु—
ता सव्वेवि ण णक्खत्ता अस्सिणीआदीया रेवतिपज्जवसाणा पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

५—एगे पुण एवमाहसु—
सव्वेवि ण णक्खत्ता भरणीआदीया अस्सिणीपज्जवसाणा, एगे एवमाहसु ।

वय पुण एवं वदामो—
सव्वेवि ण णक्खत्ता अभिईआदीया उत्तरासाढापज्जवसाणा पण्णत्ता, तजहा—
अभिई सवणो—जाव—उत्तरासाढा ।[1]

—सूर्य सू. ३२ पृ ९९
—चन्द्र. ,, ,,

[३] [१] प्र०—(चन्द्र-सूर्य के साथ) नक्षत्र अनुक्रम से योग करते हैं । यह योग किस क्रम से होता है ?

उ०—एतद्विषयक निम्नोक्त पाच मान्यताएँ हैं—

१—एक मान्यता यह है कि ये सब नक्षत्र कृत्तिका से प्रारम्भ होते हैं एव भरणी तक समाप्त होते हैं ।

२—एक मान्यता यह है कि ये सब नक्षत्र मघा से प्रारम्भ होकर आश्लेषा पर समाप्त होते है ।

३—एक मान्यता यह है कि ये सब नक्षत्र धनिष्ठा से प्रारम्भ होकर श्रवण पर समाप्त होते है ।

---

१. जम्बू. सूत्र १५५ पृ ४९५

४–एक मान्यता यह है कि ये सब नक्षत्र अश्विनी से प्रारम्भ होकर रेवती पर समाप्त होते हैं।

५–एक मान्यता यह है कि ये सब नक्षत्र भरणी से प्रारम्भ होकर अश्विनी पर समाप्त होते हैं।

हमारा कथन इस प्रकार है—

ये नक्षत्र अभिजित से प्रारम्भ होकर श्रवण आदि क्रम मे उत्तराषाढा पर समाप्त होते हैं।

नक्षत्रों के स्वामी देवता

[४] [१] प्र०—एतेसि ण भते ! अट्ठावीसाए णक्खत्ताण अभिई णक्खत्ते किंदेवयाए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! बम्हदेवया पण्णत्ते, सवणे णक्खत्ते विण्हुदेवताए पण्णत्ते, धणिट्ठा वसुदेवया पण्णत्ता, एएण कमेण णेयव्वा अणुपरिवाडी,

इमाओ देवयाओ—

वम्हा १ विण्हू २ वसू ३ वरुणे ४ अय ५ अभिवद्धी ६ पूसे ७ आसे ८ जमे ९ अग्गी १० पयावई ११ सोमे १२ रुद्दे १३ अदिती १४ वहस्सई १५ सप्पे १६ पिउ १७ भगे १८ अज्जम १९ सविआ २० तट्ठा २१ वाउ २२ इदग्गी २३ मिती २४ इदे २५ निरई २६ आउ २७ विस्साय २८।

एव णक्खत्ताण एआ परिवाडी णेयव्वा—जाव—उत्तरासाढा किंदेवया पण्णत्ता ?

गोयमा ! विस्सदेवया पण्णत्ता।

—जम्बू सू १५७, १७१, पृ ४९८
—सूर्य सू ४६ पृ १४५–१४६
—चन्द्र ,, ,,

[४] [१] प्र०—भगवन् ! इन २८ नक्षत्रो मे से अभिजिन नक्षत्र का देवता कौन है ?

उ०—गौतम ! ब्रह्म देवता है। श्रवण नक्षत्र का विष्णु देवता है। घनिष्ठा का वसु देवता है। इस प्रकार क्रमश निम्नोक्त देवता समझना चाहिए—

१–ब्रह्मा, २–विष्णु, ३–वसु, ४–वरुण, ५–अज, ६–अभिवृद्धि, ७–पूषा, ८–अश्व, ९–यम, १०–अग्नि, ११–प्रजापति, १२–सोम, १३–रुद्र, १४–अदिति, १५–वृहस्पति, १६–सर्प, १७–पितृ, १८–भग, १९–अर्यमा, २०–सविता, २१–त्वष्टा, २२–वायु, २३–इन्द्राग्नि, २४–मित्र, २५–इन्द्र, २६–नैर्ऋत, २७–अप्, २८–विश्व।

इस प्रकार नक्षत्रो की यह परिपाटी समझना चाहिए,

—यावत्—उत्तराषाढा का देवता कौन है ?

गौतम ! विश्व देवता है।

नक्षत्रो का तारा-परिवार

[५] [१] प्र०—एतेसि ण भते ! अट्ठावीसाए णक्खत्ताण अभिई णक्खत्ते कतितारे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! तितारे

—सम ३, ठा सूत्र २२७

[२] प्र०—सवणे णक्खत्ते कतितारे पण्णत्ते ?

उ०—तितारे पण्णत्ते।

—सम ३, ठा सूत्र २२७

[३] प्र०—धनिट्ठाणक्खत्ते कतितारे पण्णत्ते ?

उ०—पणतारे पण्णत्ते।

—सम ५, ठा सूत्र ४७३

[४] प्र०—सतभिया नक्खत्ते कतितारे पण्णत्ते ?

उ०—सततारे पण्णत्ते ।

—सम १००

[५-६] प्र०—पुव्वापोट्ठवता कतितारे पण्णत्ते ?

उ०—दुतारे पण्णत्ते, एवं उत्तरावि ।

—सम २, ठा. सूत्र ११०

[७] प्र०—रेवती णक्खत्ते कतितारे पण्णत्ते ?

उ०—बत्तीसइतारे पण्णत्ते

—सम. ३२

[८] प्र०—अस्सिणी णक्खत्ते कतितारे पण्णत्ते ?

उ०—तितारे पण्णत्ते ।

—सम. ३, ठा सूत्र २२७

एवं सव्वे पुच्छिज्जति,
भरणी तितारे पण्णत्ते ।

—सम ३, ठा सूत्र २२७

कत्तिया छतारे पण्णत्ते ।

—सस ६, ठा सूत्र ५३९

रोहिणी पचतारे पण्णत्ते ।

—सम ५, ठा. सूत्र ४७३

मिगसरसठाणा तितारे पण्णत्ते ।

—सम ३, ठा. सूत्र २२७

अद्दा एगतारे पण्णत्ते ।

—सम १, ठा सूत्र ५५

पुणव्वसू पचतारे पण्णत्ते ।

—सम ५, ठा सूत्र ४७३

पुस्से णक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ।

—सम ३, ठा सूत्र २२७

अस्सेसा छतारे पण्णत्ते ।

—सम ६, ठा सूत्र ५३९

महा नक्खत्ते सततारे पण्णत्ते ।

—सम ७, ठा सूत्र ५८९

पुव्वाफग्गुणी दुतारे पण्णत्ते ।
एवं उत्तरावि ।

—सम २, ठा सूत्र ११०

हत्थे पंचतारे पण्णत्ते ।

—सम ५, ठा सूत्र ४७३

चित्ता एकतारे पण्णत्ते

—सम १, ठा सूत्र ५५

साती एकतारे पण्णत्ते ।

—सम १, ठा सूत्र ५५

विसाहा पंचतारे पण्णत्ते ।

—सम. ५, ठा सूत्र ४७३

अणुराहा पचतारे पण्णत्ते ।

—सम ४, ठा सूत्र ३८६

जेट्ठा तितारे पण्णत्ते ।[1]

—सम ३, ठा सूत्र २२७

(मूले एगतारे पण्णत्ते)

—सूर्य सूत्र ४२

मूले नक्खत्ते एक्कारसतारे पण्णत्ते ।

—सम ११

पुव्वासाढा चउतारे पण्णत्ते ।

[२८] उत्तरासाढा णक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते ।[2]

—सम ४, ठा सूत्र ३८६

गाहाओ—

तिग-तिग-पचग-सय-दुग-दुग-बत्तीस तिग तह तिग च ।
छ-प्पचग-तिग-इक्कग-पचग-तिग-इक्कग चेव ।।१।।
सत्तग-दुग-दुग-पचग-इक्कि-क्कग-पच-चउ-तिग चेव ।
इक्कारसग-चउक्क चउक्कग चेव तारग्ग ।।२।।

—जबू सूत्र १५८ पृ ४९८

[५] [१] प्र०—भगवन् ! इन २८ नक्षत्रो मे से अभिजित नक्षत्र के कितने तारे हैं ?

उ०—गौतम ! तीन तारे हैं ।

[२] प्र०—श्रवण नक्षत्र के कितने तारे हैं ?

उ०—तीन तारे हैं ।

[३] प्र०—धनिष्ठा नक्षत्र के कितने तारे हैं ?

उ०—पांच तारे हैं ।

[४] प्र०—शतभिषा नक्षत्र के कितने तारे हैं ?

उ०—सौ तारे हैं ।

[५-६] प्र०—पूर्वाभाद्रपदा के कितने तारे हैं ?

उ०—दो (तारे) हैं । इसी प्रकार उत्तराभाद्रपदा के भी दो तारे है ।

[७] प्र०—रेवती नक्षत्र के कितने तारे हैं ?

उ०—बत्तीस तारे हैं ।

[८] प्र०—अश्विनी नक्षत्र के कितने तारे हैं ?

उ०—तीन तारे हैं ।

१—रेवईपढम-जेट्ठापज्जवसाणाण एगूणवीसाए नक्खत्ताण अट्ठाणउइ ताराओ तारग्गेण पन्नत्ताओ ।

—सम ९८

रेवती से प्रारभ कर ज्येष्ठा पर्यन्त १९ नक्षत्रो के ९८ तारे होते है ।

२—सूर्यप्रज्ञप्ति सूत्र ४२ पृ १३१

(सम की गणना से ९८, जम्बू. की गणना से ९७ नक्षत्र होते हैं ।)

इसी प्रकार सब के विषय में प्रश्न समझ लेना चाहिए।
भरणी के तीन तारे हैं।
कृत्तिका के छह तारे हैं।
रोहिणी के पाँच तारे हैं।
मृगशीर्ष के तीन तारे है।
आर्द्रा का एक तारा है।
पुनर्वसु के पाँच तारे है।
पुष्य नक्षत्र के तीन तारे हैं।
आश्लेषा के छह तारे है।
मघा के सात तारे हैं।
पूर्वाफाल्गुनी के दो तारे है।
इसी प्रकार उत्तरा (फाल्गुनी) के (दो तारे) हैं।
हस्त के पांच तारे हैं।
चित्रा का एक तारा है।
स्वाति का एक तारा है।
विशाखा के पाँच तारे हैं।
अनुराधा के पाँच तारे हैं।
ज्येष्ठा के तीन तारे है।
(मूल का एक तारा है।)
मूल नक्षत्र के ग्यारह तारे हैं।
पूर्वाषाढा के चार तारे हैं।
उत्तराषाढा नक्षत्र के चार तारे हैं।

[२८] गाथार्थ—ताराओ का परिमाण (अनुक्रम से) इस प्रकार है—

१–तीन, २–तीन, ३–पांच, ४–सौ, ५–दो, ६–दो, ७–बत्तीस, ८–तीन, ९–तीन, १०–छह, ११–पाँच, १२–तीन, १३–एक, १४–पाँच, १५–तीन, १६–छह, १७–सात, १८–दो, १९–दो, २०–पांच, २१–एक, २२–एक, २३–पाँच, २४–चार, २५–तीन, २६–ग्यारह, २७–चार और २८–चार।

नक्षत्रों के गोत्र

[६] [१] प्र०—एतेसि ण भंते ! अट्ठावीसाए णवखत्ताणं अभिई णवखत्ते किंगोत्ते पण्णत्ते ?

उ०—मोग्गलायणसगोत्ते।

गाहाओ—

१ मोग्गल्लायण २ सखायणे ३ अ तह अग्गभाव ४ कण्णिल्ले।
५ तत्तो अ जाउकण्णे ६ धणजए चेव बोद्धव्वे ॥१॥
७ पुस्सायणे अ ८ अस्सायणे अ ९ भग्गवेसे अ १० अग्गिवेसे अ।
११ गोअम १२ भारद्दाए १३ लोहिच्चे १४ चेव वासिट्ठे ॥२॥
१५ ओमज्जायण अ १६ मडव्वायणे अ १७ पिंगायणे अ १८ गोवल्ले।
१९ कासव २० कोसिय २१ दब्भा य २२ चामरच्छाय २३ सुगा य ॥३॥

२४ गोवल्लायण २५ तिगिच्छायणे अ २६ कच्चायणे हवइ मूले ।

२७ तत्तो अ वज्भिआयण २८ वग्घावच्चे अ गोत्ताइ ।।४।।

—जंबू सूत्र १५६ पृ ५००
—सूर्य सूत्र ५० पृ १५०
—चन्द्र ,, ,,

[६] [१] प्र०—भगवन् ! इन अट्ठाईस नक्षत्रो मे से अभिजित नक्षत्र का क्या गोत्र है ?

उ०—गौतम ! मौद्गलायन गोत्र है ।

गाथार्थ—२८ नक्षत्रो के गोत्र क्रमश इस प्रकार हैं—

१–मौद्गलायन, २–सख्यायन, ३–अग्रभाव, ४–कण्णिलायन, ५–जातुकर्ण, ६–धनजय, ७–पुष्यायन, ८–आश्वायन, ९–भार्गवेश, १०–अग्निवेश्य, ११–गौतम, १२–भारद्वाज, १३–लौहित्यायन, १४–वासिष्ठ, १५–अवमज्जायन, १६–माण्डव्यायन, १७–पिंगायन, १८–गोवल्लायन, १९–काश्यप, २०–कौशिक, २१–दार्भायन, २२–चामरच्छायन, २३–शु गायन, २४–गोलव्यायन, २५–चिकित्सायन, २६–कात्यायन, २७–वाभ्रव्यायन और व्याघ्रापत्य ।

नक्षत्रों के सस्थान

[७] [१] प्र०—एतेसि ण भते! अट्ठावीसाए णक्खत्ताण अभिई णक्खत्ते किंसठिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! गोसीसावलिसठिए पण्णत्ते ।

गाहाओ—

१ गोसीसावलि २ काहार ३ सउणि ४ पुप्फोवयार ५-६ वावी य ।

७ णावा ८ आसक्खधग ९ भग १० छुरघरए अ ११ सगडुद्धी ।।१।।

१२ मिगसीसावलि १३ रुहिरबिंदु १४ तुल्ल १५ वद्धमाणग १६ पडागा ।

१७ पागारे १८-१९ पलिअके २० हत्थे २१ मुहफुल्लए चेव ।।२।।

२२ खीलग २३ दामणि २४ एगावली अ २५ गयदत २६ विच्छुअलेय ।

२७ गयविक्कमे अ ततो २८ सीहनिसीही अ सठाणा ।।३।।

—जम्बू, सूत्र १५६ पृ ५००
—सूर्य सूत्र ४१ पृ १३०
—चन्द्र ,, ,,

[७] [१] प्र०—भगवन् ! इन अट्ठाईस नक्षत्रो मे से अभिजित नक्षत्र का कौन-सा सस्थान (आकार) है ?

उ०—गौतम ! गोशीर्षावलि जैसा सस्थान है ।

गाथार्थ—इन २८ नक्षत्रो के सस्थान क्रमश इस प्रकार हैं—

१–गोशीर्षावलि, २–कासार, ३–शकुनिपजर, ४–पुष्पोपचार, ५–६–वापी (दोनो भाद्रपदाओ का आकार अर्धवापी-अर्धवापी मिलकर पूर्ण वापी के समान है), ७–नौका, ८–अश्वस्कन्ध, ९–भग, १०–क्षुराधारा, ११–शकटोद्धि, १२–मृगशीर्षावली, १३–रुधिरबिन्दु, १४–तुला, १५–वर्धमानक, १६–पताका, १७–प्राकार, १८–१९–पर्यंक (आधा-आधा पर्यंक मिल कर दोनो फाल्गुनीनक्षत्रो का आकार पूर्ण पर्यंक के सदृश है), २०–हस्त २१–मुखपुष्प (मुखमडन-स्वर्णपुष्प), २२–कीलक, २३–दामनि (पशु-रज्जु), २४–एकावली, २५–गजदन्त, २६–वृश्चिक लागूल, २७–गजविक्रम, और २८–सिंहनिषीदन ।

नक्षत्रों के चन्द्र-योग की आदि

[८] [१] प्र०—ता कह ते जोगस्स आदी आहितातिं वदेज्जा ?

उ०—ता अभीयी सवणा खलु दुवे णक्खत्ता पच्छाभागा समखित्ता सातिरेगऊतालीसतिमुहुत्ता तप्पढमयाए साय चदेण सद्धि जोय जोएति ।

ततो पच्छा अवर सातिरेग दिवस ।

एव खलु अभिई सवणा दुवे णक्खत्ता एगराइ एग च सातिरेगं दिवस चदेण सद्धि जोग जोएति, जोय जोएत्ता जोय अणुपरियट्ट ति, जोय अणुपरियट्टित्ता साय चंद धणिट्ठाणं समप्पति ।

ता धणिट्ठा खलु णक्खत्ते पच्छभागे समक्खेत्ते तीसतिमुहुत्ते तप्पढमयाए साय चदेण सद्धि जोग जोएति, २ त्ता (चदेण सद्धि जोय जोएत्ता) ततो पच्छा राइं अवर च दिवस ।

एव खलु धणिट्ठाणक्खत्ते एग च राइ, एग च दिवस चदेण सद्धि जोय जोएति,

जोएत्ता जोय अणुपरियट्टति, जोय अणुपरियट्टित्ता साय चद सतभिसयाण समप्पेति ।

ता सतभिसया खलु णक्खत्ते णत्ताभागे अवड्ढ खेत्ते पण्णरसमुहुत्ते पढमताए साग चदेण सद्धि जोएति, णो लभति अवर दिवस ।

एव खलु सयभिसया णक्खत्ते एग च राइ चदेण सद्धि जोय जोएति,

जोय जोएत्ता जोय अणुपरियट्टति, जोय अणुपरियट्टित्ता तो चद पुव्वाण पोट्ठवताणं समप्पेति ।

ता पुव्वापोट्ठवता खलु णक्खत्ते पुव्वभागे समखेत्ते तिसतिमुहुत्ते

तप्पढमताए पातो चदेण सद्धि जोय जोएति,

तओ पच्छा अवरराइ,

एव खलु पुव्वापोट्ठवता णक्खत्ते एग च दिवस एग च राइ चदेण सद्धि जोय जोएति, २ त्ता जोय अणुपरियट्टति २ पातो चद उत्तरापोट्ठवताण समप्पेति ।

ता उत्तरपोट्ठवता खलु णक्खत्ते उभयभागे दिवड्ढखेत्ते पणतालीसमुहुत्ते

तप्पढमयाए पातो चदेण सद्धि जोयं जोएति,

अवरं च रातिं, तओ पच्छा अवर दिवस ।

एव खलु उत्तरापोट्ठवता णक्खत्ते दो दिवसे एगं च राइं चदेण सद्धि जोय जोएति, अवरं च रातिं, ततो पच्छा अवर दिवसं ।

एव खलु उत्तरापोट्ठवता णक्खत्ते दो दिवसे एगं च राइं चंदेण सद्धि जोय जोएति,

जोइत्ता जोय अणुपरियट्टति,

ता साय चदं रेवतीण समप्पेति ।

ता रेवती खलु णक्खत्ते पच्छभागे समक्खेत्ते तीसतिमुहुत्ते

तप्पढमयाए साग चदेण सद्धि जोय जोएति,

ततो पच्छा अवर दिवस,

एव खलु रेवतीणक्खत्ते एग राइ एग च दिवस चदेण सद्धि जोय जोएति २ त्ता जोय अणुपरियट्टति २ त्ता साग चद अस्सिणीण समप्पेति,

ता अस्सिणी खलु णक्खत्ते पच्छिमभागे समक्खेत्ते तीसतिमुहुत्ते

तप्पढमयाए साग चदेण सद्धि जोय जोएति,

तओ पच्छा अवर दिवस,

एव खलु अस्सिणीणक्खत्ते एग च राइ एग च दिवस चदेण सद्धि जोय जोएति २ त्ता जोग अणुपरियट्टइ २ त्ता साग चद भरणीण समप्पेति ।

ता भरणी खलु णक्खत्ते णत्तंभागे अवड्ढखेत्ते पण्णरसमुहुत्ते

तप्पढमयाए साग चदेण सद्धि जोय जोएति, णो लभति अवरं दिवस ।

एव खलु भरणी णक्खत्ते एग राइ चदेण सद्धि जोय जोएति २ त्ता जोय अणुपरियट्टति २ त्ता पादो चद कत्तियाण समप्पेति ।

ता कत्तिया खलु णक्खत्ते पुव्वभागे समक्खित्ते तीसइमुहुत्ते
तप्पढमयाए साग चदेण सद्धि जोग जोएति २ त्ता जोय अणुपरियट्टइ २ त्ता पादो चद रोहिणीण समप्पेति ।

रोहिणी जहा उत्तरभद्दवता, मगसिर जहा धणिट्ठा, अद्दा जहा सतभिसया, पुणव्वसू जहा उत्तराभद्दवता, पुस्सो जहा धणिट्ठा, अस्सेसा जहा सतभिसया, मघा जहा पुव्वाफग्गुणी, पुव्वाफग्गुणी जहा पुव्वाभद्दवया, उत्तरफग्गुणी जहा उत्तरभद्दवता, हत्थो चित्ता य जहा धणिट्ठा, साती जहा सतभिसया, विसाहा जहा उत्तरभद्दवया, अणुराहा जहा धणिट्ठा, सतभिसया मूला पुव्वासाढा य जहा पुव्वभद्दवया, उत्तरासाढा जहा उत्तराभद्दवता ।

—सूर्य० सू० ३६ पृ० १०५–१०६
—चन्द्र० ,, ,,

[८] [१] प्र०—(चन्द्र के साथ नक्षत्रो के) योग की आदि किस प्रकार होती है ?

उ०—अभिजित और श्रवण-ये दोनो नक्षत्र पश्चाद्भाग समक्षेत्र मे साधिक ३९ मुहूर्त्त मे प्रथम दिन सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होते हैं। बाद मे दूसरे दिन अभिजित और श्रवण-दोनो नक्षत्र एक रात्रि एव साधिक एक दिवस पर्यन्त चन्द्र के साथ योगयुक्त अवस्था मे रहते हैं। योगयुक्त अवस्था मे रहकर योग का अनुपरिवर्त्तन करते हैं। योग का अनुपरिवर्तन करके सायकाल चन्द्र को धनिष्ठा को समर्पित कर देते हैं।

धनिष्ठा नक्षत्र पश्चाद्भाग समक्षेत्र ३० मुहूर्त्त मे प्रथम दिन सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। इसके बाद धनिष्ठा नक्षत्र एक रात व एक दिन चन्द्र के साथ योगयुक्त अवस्था मे रहता है। योगयुक्त अवस्था मे रह कर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है। योग का अनुपरिवर्त्तन करके सायकाल चन्द्र को शतभिषा को समर्पित कर देता है।

शतभिषानक्षत्र नक्तभाग अपार्ध क्षेत्र मे १५ मुहूर्त्त मे प्रथम दिन सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है, यह द्वितीय दिवस प्राप्त नही करता, अर्थात् शतभिषा नक्षत्र एक रात ही चन्द्र के साथ योगयुक्त अवस्था मे रहता है। योगयुक्त अवस्था मे रह कर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है। योग का अनुपरिवर्त्तन करके चन्द्र को पूर्वभाद्रपदा को समर्पित कर देता है।

पूर्वभाद्रपदा नक्षत्र पूर्वभाग समक्षेत्र मे ३० मुहूर्त्त मे प्रथम दिन प्रात चन्द्र के साथ योगयुक्त रहता है। योगयुक्त रह कर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है। योग का अनुपरिवर्त्तन कर के प्रातः चन्द्र को उत्तराभाद्रपदा को समर्पित कर देता है।

उत्तरभाद्रपदा नक्षत्र उभयभाग दिवार्ध क्षेत्र मे ४५ मुहूर्त्त मे प्रथम दिन प्रात चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। इसके बाद उत्तरभाद्रपदा नक्षत्र दो दिन व एक रात चन्द्र के साथ योगयुक्त अवस्था मे रहता है। योगयुक्त अवस्था मे रहकर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है। योग का अनुपरिवर्त्तन करके सायकाल चन्द्र को रेवती को समर्पित कर देता है।

रेवती नक्षत्र पश्चाद्भाग समक्षेत्र मे ३० मुहूर्त्त मे प्रथम दिन सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। इसके बाद रेवती नक्षत्र एक रात व एक दिन चन्द्र के साथ योगयुक्त अवस्था मे रहता है। योगयुक्त अवस्था मे रह कर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है। योग का अनुपरिवर्त्तन करके सायकाल चन्द्र को अश्विनी को समर्पित कर देता है।

अश्विनी नक्षत्र पश्चिम भाग समक्षेत्र मे ३० मुहूर्त मे प्रथम दिन सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। इसके बाद अश्विनी नक्षत्र एक रात और एक दिन चन्द्र के साथ योगयुक्त अवस्था मे रहता है। योगयुक्त अवस्था मे रहकर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है।

योग का अनुपरिवर्त्तन करके सायकाल चन्द्र को भरणी को समर्पित कर देता है।

भरणी नक्षत्र नक्तभाग अपार्ध क्षेत्र मे १५ मुहूर्त मे प्रथम दिन सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। यह दूसरा दिवस प्राप्त नही करता, अर्थात् भरणी नक्षत्र एक रात ही चन्द्र के साथ योगयुक्त अवस्था मे रहता है। योगयुक्त अवस्था मे रहकर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है। योग का अनुपरिवर्त्तन करके प्रात काल चन्द्र को कृत्तिका के सिपुर्द कर देता है।

कृत्तिका नक्षत्र पूर्वभाग समक्षेत्र मे ३० मुहूर्त मे प्रथम दिन सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता है। योगयुक्त होकर योग का अनुपरिवर्त्तन करता है। योग का अनुपरिवर्त्तन करके प्रात-काल चन्द्र को रोहिणी को समर्पित कर देता है।

रोहिणी का (प्रस्तुत) वर्णन उत्तरभाद्रपदा के समान, मृगशीर्ष का वर्णन धनिष्ठा के समान, आर्द्रा का वर्णन शतभिषा के समान, पुनर्वसु का वर्णन उत्तरभाद्रपदा के समान, पुष्य का वर्णन धनिष्ठा के समान, आश्लेषा का वर्णन शतभिषा के समान, मघा का वर्णन पूर्वफाल्गुनी के समान, पूर्वफाल्गुनी का वर्णन पूर्वभाद्रपदा के समान, उत्तरफाल्गुनी का वर्णन उत्तरभाद्रपदा के समान, हस्त एव चित्रा का वर्णन धनिष्ठा के समान, स्वाति का वर्णन शतभिषा के समान, विशाखा का वर्णन उत्तरभाद्रपदा के समान, अनुराधा का वर्णन धनिष्ठा के समान, शतभिषा, मूल एव पूर्वाषाढा का वर्णन उत्तरभाद्रपदा के समान है।

नक्षत्रों का चन्द्र के साथ दिशा-योग

[९] [१] प्र०—एतेसि ण भते ! अट्ठावीसाए णक्खत्ताण कयरे णक्खत्ता जे ण सया चदस्स दाहिणेण जोअ जोएति ?

कयरे णक्खत्ता जे ण सया चदस्स उत्तरेण जोअ जोएति ?

कयरे णक्खत्ता जे ण चदस्स दाहिणेणवि उत्तरेणवि पमद्दंपि जोगं जोएति ?

कयरे णक्खत्ता जे ण चदस्स दाहिणेणपि पमद्दंपि जोयं जोएंति ?

कयरे णक्खत्ता जे ण सया चंदस्स पमद्दं जोअं जोएति ?

उ०—गोयमा ! एतेसि णं अट्ठावीसाए णक्खत्ताण तत्थ जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणेणं जोअं जोएति, ते ण छ, तजहा—

गाहा—१ संठाण २ अद्द ३ पुस्सो ४ सिलेस ५ हत्थो तहेव ६ मूलो अ।
वाहिरओ वाहिरमडलस्स छप्पेत णक्खत्ता ॥१॥

तत्थ ण जे ते णक्खत्ता जे ण सया चंदस्स उत्तरेण जोयं जोएति, ते णं वारस, तंजहा—अभिई, सवणा, धणिट्ठा, सयभिसया, पुव्वभद्दवया, उत्तरापोट्ठवता, रेवई, अस्सिणी, भरणी, पुव्वाफग्गुणी, उत्तराफग्गुणी, साई[1]।

तत्थ ण जे ते णक्खत्ता जे णं सया चंदस्स दाहिणओवि उत्तरओ वि पमद्दंपि जोग जोएति ते ण सत्त, तजहा—

कत्तिआ, रोहिणी, पुणव्वसू, मघा, चित्ता, विसाहा, अणुराहा।[2]

---

१. सम० ६ सूत्र ६.
२. सम० ८ सूत्र ९.

तत्थ ण जे ते णक्खत्ता जे ण सया चदस्स दाहिणओवि पमद्दपि जोग जोएति, ताओ ण दुवे आसाढाओ सव्वबाहिरए मडले जोग जोअसु वा ३ ।

तत्थ ण जे ते से णक्खत्ते जे ण सया चदस्स पमद्द जोय जोएइ, सा ण एगा जेट्ठा इति ।

—जम्बू सू १५६ पृ ४९६-९७

—सूर्य सू ४४ पृ १३७

—चन्द्र ,, ,,

[९] [१] प्र०—भगवन् ! इन २८ नक्षत्रो मे से कौन-से नक्षत्र सदा दक्षिण की ओर से चन्द्रमा के साथ योगयुक्त होते है ?

कौन-से नक्षत्र सदा उत्तर की ओर से चन्द्रमा के साथ योगयुक्त होते हैं ?

कौन-से नक्षत्र दक्षिण एव उत्तर (दोनो दिशाओ) से प्रमर्दयोग करते हैं ?

कौन-से नक्षत्र चन्द्र के दक्षिण से प्रमर्द योग करते हैं ?

कौन-से नक्षत्र सदैव चन्द्र के साथ प्रमर्द योग करते हैं ?

उ०—गौतम ! इन २८ नक्षत्रो मे से सदैव चन्द्र के दक्षिण मे योगयुक्त होने वाले नक्षत्र छह हैं, यथा–१–मृगशीर्ष, २–आर्द्रा, ३–पुष्य, ४–आश्लेषा, ५–हस्त और ६–मूल । ये छहो नक्षत्र (चन्द्र के) वाह्य मडल से वाहर हैं ।

इनमे सदैव चन्द्र के उत्तर से योगयुक्त होने वाले नक्षत्र वारह है, यथा–१–अभिजित, २–श्रवण, ३–धनिष्ठा, ४–शतभिषा, ५–पूर्वभाद्रपदा, ६- उत्तरभाद्रपदा, ७–रेवती, ८–अश्विनी, ९–भरणी, १०–पूर्वफाल्गुनी, ११–उत्तरफाल्गुनी और १२–स्वाति ।

इनमे से सदैव चन्द्र के दक्षिण और उत्तर से प्रमर्द योग करने वाले नक्षत्र सात हैं, यथा–१–कृत्तिका, २–रोहिणी, ३-पुनर्वसु, ४- मघा, ५–चित्रा, ६–विशाखा और ७–अनुराधा ।

इनमे से सदैव चन्द्र के दक्षिण से प्रमर्दयोग करने वाले दो आषाढा (पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा) नक्षत्र हैं । ये सर्ववाह्य मडल मे योगयुक्त होते हैं ।

इनमे सदैव चन्द्र के साथ प्रमर्दयोग करने वाला एक ज्येष्ठा नक्षत्र है ।

नक्षत्रों का योग, भोग और परिमाण

[१०][१] प्र०—ता कह ते णक्खत्तविजये आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता अयण्ण जबुद्दीवे २ -जाव-परिक्खेवेण

ता जबुद्दीवे ण दीवे दो चदा पभासेसु वा, पभासति वा, पभासिस्सति वा,
दो सूरिया तविसु वा, तवेंति वा, तविस्सति वा,
छप्पण्ण णक्खत्ता जोय जोएसु वा[1] ३, तजहा—
दो अभीई, दो सवणा, दो धणिट्ठा, दो सतभिसया,
दो पुव्वापोट्ठवता, दो उत्तरापोट्ठवता, दो रेवती,
दो अस्सिणी, दो भरणी, दो कत्तिया दो रोहिणी,
दो सठाणा (मियसिरा), दो अद्दा, दो पुणव्वसू,
दो पुस्सा, दो अस्सेसाओ, दो महा, दो पुव्वाफग्गुणी,
दो उत्तराफग्गुणी, दो हत्था, दो चित्ता, दो साई,
दो विसाहा, दो अणुराधा, दो जेट्ठा, दो मूला,
दो पुव्वासाढा, दो उत्तरासाढा,
ता एएसि ण छप्पण्णाए नक्खत्ताण—

---

१ सम ५६ सूत्र १

१–अत्थि णक्खत्ता जे ण णव मुहुत्ते सत्तावीसं च सत्तट्ठिभागे मुहुत्तस्स चंदेण सद्धि जोय जोएति ।
२–अत्थि नक्खत्ता जे णं पण्णरस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोयं जोएति,
३–अत्थि णक्खत्ता जे ण तीनमुहुत्ते चदेण सद्धि जोय जोएति,
४–अत्थि णक्खत्ता जे ण पणयालीस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोयं जोए ति,
ता एतेसि णं छप्पण्णाए णक्खत्ताण—
१–कतरे णक्खत्ते जे णं णव मुहुत्ते सत्तावीसंच सत्तसट्ठिभागे मुहुत्तस्स चदेण सद्धि जाय जोएति ?
२–कतरे णक्खत्ता जे ण पन्नरसमुहुत्ते चदेण सद्धि जोय जोएति ?
३–कतरे णक्खत्ता जे ण तीस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोय जोएति ?
४–कतरे णक्खत्ता जे ण पणतालीस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोय जोएति ?
ता एतेसि णं छप्पण्णाए णक्खत्ताण—
१–तत्थ जे ते णक्खत्ता जे ण णव मुहुत्ते सत्तावीसं च सत्तट्ठिभागे मुहुत्तस्स चदेण सद्धि जोय जोएति ते ण दो अभीयी[1],
२–तत्थ जे ते णक्खत्ता जे ण पण्णरस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोयं जोएति ते ण वारस, तजहा–दो सतभिसया, दो भरणी, दो अद्दा, दो अस्सेसा, दो साती, दो जेट्ठा[2] ।
३–तत्थ जे ण तीस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोयं जोएति ते ण तीसं, तंजहा—
दो सवणा, दो धणिट्ठा, दो पुव्वभद्दवता, दो रेवती, दो अस्सिणी, दो कत्तिया, दो सठाणा दो पुस्सा, दो महा, दो पुव्वाफग्गुणी, दो हत्था, दो चित्ता, दो अणुराधा, दो मूला, दो पुव्वासाढा ।
४–तत्थ जे ते णक्खत्ता जे ण पणतालीस मुहुत्ते चदेण सद्धि जोएति ते ण वारस, तजहा— दो उत्तरापोट्ठवता, दो रोहिणी, दो पुणव्वसू, दो उत्तराफग्गुणी, दो विसाहा दो, उत्तरासाढा ।[3]

—सूर्य सूत्र ६०, पृ १७५
—चन्द्र ,, ,,

[१०][१] प्र०—नक्षत्रविचय का स्वरूप क्या है ?

उ०—यह जम्बूद्वीप यावत्–परिधि वाला है । इस जम्बूद्वीप मे दो चन्द्र प्रकाशित हुए है, प्रकाशित होते है और प्रकाशित होंगे । दो सूर्य तपे है तपते है और तपेंगे ।
छप्पन नक्षत्र योगयुक्त हुए है, होते है और होंगे । यथा—
दो अभिजित, दो श्रवण, दो धनिष्ठा, दो शतभिषा, दो पूर्वभाद्रपदा, दो उत्तरभाद्रपदा, दो रेवती, दो अश्विनी, दो भरणी, दो कृत्तिका, दो रोहिणी, दो मृगशीर्ष, दो आर्द्रा, दो पुनर्वसु, दो पुष्य, दो आश्लेषा, दो मघा, दो पूर्वफाल्गुनी, दो उत्तरफाल्गुनी, दो हस्त, दो चित्रा, दो स्वाति, दो विशाखा, दो अनुराधा, दो ज्येष्ठा, दो मूल, दो पूर्वाषाढा और दो उत्तराषाढा ।
इन ५६ नक्षत्रो मे ऐसे भी नक्षत्र है जो $9\frac{27}{67}$ मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त होते है । ऐसे भी नक्षत्र है जो १५ मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते हैं । ऐसे भी नक्षत्र हैं जो ३० मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते हैं । ऐसे भी नक्षत्र हैं जो ४५ मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते हैं ।
इन छप्पन नक्षत्रो मे कौन–से नक्षत्र $9\frac{27}{67}$ मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते है ? कौन–से नक्षत्र १५ मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते है ? कौन–से नक्षत्र ३० मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते है ? कौन–से नक्षत्र ४५ मुहूर्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते है ?

१—सम ६ सूत्र ५
२—सम. १५ सूत्र ४
३—सम. ४५ सूत्र ७

इन छप्पन नक्षत्रो मे से ९ २७/६७ मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहने वाले दो अभिजित नक्षत्र हैं। पन्द्रह मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहने वाले नक्षत्र बारह हैं, यथा–दो शतभिषा, दो भरणी, दो आर्द्रा, दो आश्लेषा, दो स्वाति और दो ज्येष्ठा।

तीस मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहने वाले नक्षत्र तीस हैं, यथा–दो श्रवण, दो धनिष्ठा, दो पूर्वभाद्रपदा, दो रेवती, दो अश्विनी, दो कृत्तिका, दो मृगशीर्ष, दो पुष्य, दो मघा, दो पूर्व-फाल्गुनी, दो हस्त, दो चित्रा, दो अनुराधा, दो मूल एव दो पूर्वाषाढा।

पैंतालीस मुहूर्त्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहने वाले नक्षत्र बारह है, यथा—दो उत्तर भाद्रपदा, दो रोहिणी, दो पुनर्वसु, दो उत्तर फाल्गुनी, दो विशाखा और दो उत्तराषाढा।

[११] **ता एएसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण—**

१–अत्थि णक्खत्ते जे ण चत्तारि अहोरत्ते छच्च मुहुत्ते सूरिएण सद्धि जोय जोएति,
२–अत्थि णक्खत्ता जे ण छ अहोरत्ते एकवीस च मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति,
३–अत्थि णक्खत्ता जे ण तेरस अहोरत्ते बारस मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति,
४–अत्थि णक्खत्ता जे ण वीस अहोरत्ते तिन्नि य मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति।

[१] प्र०—एएसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण कयरे णक्खत्ता जे ण त चेव उच्चारेयव्व ?

उ०—ता एतेसि ण छप्पणाए णक्खत्ताण—

१ तत्थ जे ते णक्खत्ता जे ण चत्तारि अहोरत्ते छच्च मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति, ते ण दो अभीयी।

२–तत्थ जे ते णक्खत्ता जे ण छ अहोरत्ते एकवीस च मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति, ते ण बारस, तजहा—
दो सतभिसया, दो अद्दा, दो अस्सेसा, दो साती, दो विसाहा, दो जेट्ठा।

३–तत्थ जे ते णक्खत्ता जे ण तेरस अहोरत्ते बारस मुहुत्ते सूरेण सद्धि जोय जोएति, ते ण तीस, तजहा—
दो सवणा—जाव—दो पुव्वासाढा।

४–तत्थ जे ते णक्खत्ता जे ण वीस अहोरत्ते तिण्णि य मुहुत्ते सूरेण जोय जोएति, ते ण बारस, तजहा—
दो उत्तरापोट्ठवता—जाव—उत्तरासाढा।

—सूर्य सूत्र ६० पृ १७५-१७६
—चन्द्र ,, ,,

[११] इन छप्पन नक्षत्रो मे ऐसे भी नक्षत्र हे जो चार अहोरात्र तथा छह मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहते हैं। ऐसे भी नक्षत्र हैं जो छह अहोरात्र एव २१ मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहते हैं। ऐसे भी नक्षत्र हैं जो तेरह अहोरात्र व १२ मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहते हैं। ऐसे भी नक्षत्र हैं जो वीस अहोरात्र व तीन मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहते हैं।

[१] प्र०—इन ५६ नक्षत्रो मे कौन-से नक्षत्र—यावत्—(२० अहोरात्र व तीन मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ) योगयुक्त रहते है ?

उ०—इन ५६ नक्षत्रो मे से दो अभिजित नक्षत्र चार अहोरात्र तथा छह मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योग-युक्त रहते है। छह अहोरात्र व इक्कीस मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहने वाले नक्षत्र बारह हैं, यथा—दो शतभिषा, दो आर्द्रा, दो आश्लेषा, दो स्वाति, दो विशाखा और दो ज्येष्ठा।

तेरह अहोरात्र तथा बारह मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहने वाले नक्षत्र तीस है, यथा—दो श्रवण—यावत्—दो पूर्वाषाढा। बीस अहोरात्र एव तीन मुहूर्त्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहने वाले नक्षत्र बारह हैं, यथा—दो उतरभाद्रपदा—यावत्—(दो) उत्तराषाढा।

[१२][१] प्र०—ता कह ते सीमाविक्खभे आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता एतेसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण—

१–अत्थि णक्खत्ता जेसि ण छ सया तीसा सत्तट्ठिभागतीसतिभागाण सीमाविक्खभो,

२–अत्थि णक्खत्ता जेसि ण सहस्सं पचोत्तर सतसट्ठिभागतीसतिभागाण सीमाविक्खभो,

३–अत्थि णक्खत्ता जेसि ण दो सहस्सा दसुत्तरा सतसट्ठिभागतीसतितिभागाण सीमाविक्खंभो,

४–अत्थि णक्खत्ता जेसि ण तिसहस्स पचदसुत्तर सतसट्ठिभागतीसतिभागाण सीमाविक्खभो।

[२] प्र०—ता एतेसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताणं कतरे णक्खत्ता जेसि ण छ सया तीसा त चेव उच्चारेतव्व —जाव—ता एतेसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण कयरे णक्खत्ता जेसि ण तिसहस्स पचदसुत्तर सतसट्ठिभागतीसतिभागाण सीमाविक्खभो ?

उ०—ता एतेसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण—

१–तत्थ जे ते णक्खत्ता जेसि ण छसता तीसा सत्तट्ठिभागतीसतिभागाण सीमाविक्खभो,
ते ण दो अभीयी।

२–तत्थ जे ते णक्खत्ता जेसि ण सहस्स पचुत्तर सतसट्ठिभागतीसतिभागाण सीमाविक्खभो,
ते ण बारस, तजहा—
दो सतभिसया—जाव—दो जेट्ठा।

३–तत्थ जे ते णक्खत्ता जेसि ण दो सहस्सा दसुत्तरा सतसट्ठिभागतीसतिभागाण सीमाविक्खंभो,
ते ण तीस, तजहा—
दो सवणा—जाव—दो पुव्वासाढा।

४–तत्थ जे ते णक्खत्ता जेसि ण तिण्णि सहस्सा पण्णरसुत्तरा सतसट्ठिभागतीसतिभागाणं सीमाविक्खभो, ते ण बारस, तजहा—
दो उत्तरा पोट्ठवता—जाव—उत्तरासाढा वा[1]।

—सूर्य सूत्र ६१ पृ १७६
—चन्द्र ,, ,,

[१२][१] प्र०—सीमाविष्कम का स्वरूप क्या है ?

उ०—इन ५६ नक्षत्रो मे ऐसे भी नक्षत्र हैं जिनका सीमाविष्कभ (सीमा की चौडाई) $\frac{६३०}{३० \times ६७}$ (मडल) है। ऐसे भी नक्षत्र है जिनका सीमा विष्कम $\frac{१००५}{३० \times ६७}$ (मडल) है। ऐसे भी नक्षत्र हैं जिनका सीमा विष्कम $\frac{२०१०}{३० \times ६७}$ (मडल) है। ऐसे भी नक्षत्र है जिनका सीमाविष्कम्भ $\frac{३०१५}{३० \times ६७}$ (मडल) है।

[२] प्र०—इन छप्पन नक्षत्रो मे कौन-से नक्षत्र ऐसे हैं जिनका सीमाविष्कम $\frac{६३०}{३० \times ६७}$ (मडल) है ? —यावत्— इन छप्पन नक्षत्रो मे कौन से नक्षत्र ऐसे है जिनका सीमाविष्कम $\frac{३०१५}{३० \times ६७}$ (मडल) है ?

---

१. सम. ६७ सूत्र ४.

उ०—इन छप्पन नक्षत्रो मे से $\frac{६३०}{३०\times६७}$ (मडल) के सीमाविष्कम वाले दो अभिजित नक्षत्र हैं।

$\frac{१००५}{३०\times६७}$ (मडल) सीमाविष्कम वाले वारह नक्षत्र है, यथा—दो शतभिषा-यावत्-दो ज्येष्ठा।

$\frac{२०१०}{३०\times६७}$ (मडल) के सीमाविष्कम वाले तीस नक्षत्र हैं, यथा—दो श्रवण—यावत्—दो पूर्वापाढा।

$\frac{३०१५}{३०\times६७}$ (मडल) के सीमाविष्कम वाले वारह नक्षत्र हैं, यथा-दो उत्तरभाद्रपदा-यावत् (दो) उत्तरापाढा।

[१३][१] प्र०—एतेसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण कि सता पादो चदेण सद्धि जोय जोएति ?
ता एतेसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण कि सया साय चदेण सद्धि जोय जोएति ?
एतेसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण कि सया दुहा पविसिय २ चदेण सद्धि जोय जोएति ?

उ०—ता एएसि ण छप्पण्णाए णक्खत्ताण न किपि
त ज सया पादो चदेण सद्धि जोय जोएति ।
नो सया साग चदेण सद्धि जोय जोएति ।
नो सया दुहओ पविसित्ता २ चदेण सद्धि जोय जोएति, णण्णत्य दोहि अभीयीहि ।
ता एते ण दो अभीयी पायचिय २ चोत्तालीस-चोत्तालीस अमावास जोएति,
णो चेव ण पुण्णिमासिणि ।

—सूर्य० सूत्र ६२ पृ० १७७
—चन्द्र० ,, ,,

[१३][१] प्र०—इन ५६ नक्षत्रो मे से कौन सदैव प्रात काल चन्द्र के साथ योगयुक्त होते हैं ?
इन ५६ नक्षत्रो मे से कौन सदैव सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त रहते हैं ?
इन ५६ नक्षत्रो मे से कौन सदैव दोनो समय प्रविष्ट होकर चन्द्र के साथ योगयुक्त होते है ?

उ०—इन ५६ नक्षत्रो मे कोई भी ऐसा नही है जो सदैव प्रात काल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता हो, सदैव सायकाल चन्द्र के साथ योगयुक्त होता हो अथवा दोनो समय प्रविष्ट हो चन्द्र के साथ योग-युक्त होता हो ।

यहा दो अभिजितो का अपवाद है। ये दो अभिजित (युग मे) ४४ वी अमावस्या को योग करते हैं, पूर्णिमा को नही ।

चन्द्र के साथ नक्षत्रों का योगकाल

[१४][१] प्र०—एतेसि ण भते ! अट्ठावीसाए णक्खत्ताण [१] अभिई णक्खत्ते कतिमुहुत्ते चदेण सद्धि जोगं जोएइ ?

उ०—गोयमा ! णव मुहुत्ते सत्तावीस च सत्तट्ठिभाए चदेण सद्धि जोग जोएइ,
एवं इमाहि गाहाहि अणुगतव्व—
अभिइस्स चदजोगो, सत्तट्ठिखडिओ अहोरत्तो ।
ते हुति णव मुहुत्ता, सत्तावीस कलाओ अ ।।१।।
सयभिसया भरणीओ, अद्दा अस्सेव साइ जेट्ठा य ।
एते छण्णक्खत्ता, पण्णरसमुहुत्तसजोगा ।।२।।

१–सम० ६, ठा० सूत्र ६६६

तिण्णेव उत्तराइं, पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य ।
एए छन्नक्खत्ता, पणयालमुहुत्तसंजोगा ॥३॥
अवसेसा णक्खत्ता, पण्णरसवि हुंति तीसइमुहुत्ता ।
चंदम्मि एस जोगो, णक्खत्ताण मुणेअव्वो ॥४॥

[१४][१] प्र०—भगवन् ! इन २८ नक्षत्रों में से अभिजित नक्षत्र कितने मुहूर्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहता है ?

उ०—गौतम ! ९ २७/६७ मुहूर्त तक चन्द्र के साथ योगयुक्त रहता है। इस विषय में ये गाथाएँ समझनी चाहिए—

अभिजित का चन्द्र के साथ योग ९ २७/६७ मुहूर्त तक होता है। शतभिषा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाति, और ज्येष्ठा, ये छह नक्षत्र १५ मुहूर्त तक (चन्द्र के साथ) योगयुक्त रहते हैं। तीन उत्तरा अर्थात् उत्तरभाद्रपदा, उत्तरफाल्गुनी और उत्तराषाढा तथा पुनर्वसु, रोहिणी और विशाखा—ये छह नक्षत्र ४५ मुहूर्त तक (चन्द्र के साथ) योग करते हैं। शेष १५ नक्षत्र ३० मुहूर्त तक (चन्द्र के साथ योगयुक्त) रहते हैं।

चन्द्र के साथ नक्षत्रों का इस प्रकार योग समझना चाहिए।

नक्षत्रों के साथ सूर्य का योगकाल

[१५][१] प्र०—एतेसि णं भंते ! अट्ठावीसाए णक्खत्ताणं अभिई णक्खत्ते कति अहोरत्ते सूरेण सद्धिं जोगं जोएइ ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि अहोरत्ते छच्च मुहुत्ते सूरेण सद्धिं जोगं जोएइ ।

एवं इमाहिं गाहाहिं णेअव्वं—

अभिई छच्च मुहुत्ते, चत्तारि अ केवले अहोरत्ते ।
सूरेण समं गच्छइ, एत्तो सेसाण वोच्छामि ॥१॥
सयभिसया भरणीओ, अद्दा अस्सेस साइ जेट्ठा य ।
वच्चति मुहुत्ते इक्कवीस छच्चेवऽहोरत्ते ॥२॥
तिण्णेव उत्तराइं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य ।
वच्चति मुहुत्ते तिण्णि चेव वीसं अहोरत्ते ॥३॥
अवसेसा णक्खत्ता, पण्णरसवि सूरसहगया जंति ।
बारस चेव मुहुत्ते, तेरस य समे अहोरत्ते ॥४॥

—जम्बू० सूत्र १६० पृ० ५०१
—सूर्य० सूत्र ३३-३४ पृ० १००-१०३
—चन्द्र० ,, ,,

[१५][१] प्र०—भगवन् ! इन २८ नक्षत्रों में से अभिजित नक्षत्र कितने अहोरात्र तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहता है ?

उ०—गौतम ! ४ अहोरात्र और ६ मुहूर्त तक सूर्य के साथ योगयुक्त रहता है। इस विषय में ये गाथाएँ समझनी चाहिए—

अभिजित केवल ४ अहोरात्र और छह मुहूर्त तक सूर्य के साथ योग करता है। शेष का (योग) इस प्रकार है—

शतभिषा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाति और ज्येष्ठा ६ अहोरात्र तथा २१ मुहूर्त तक (सूर्य के साथ) योग करते हैं। तीन उत्तरा अर्थात् उत्तरभाद्रपदा, उत्तरफाल्गुनी और उत्तराषाढा तथा पुनर्वसु, रोहिणी और विशाखा २० अहोरात्र तथा ३ मुहूर्त तक (सूर्य के साथ) योगयुक्त रहते हैं। शेष १५ नक्षत्र १३ अहोरात्र तथा १२ मुहूर्त तक सूर्य के साथ योग करते हैं।

युग में अमावस्या एवं पूर्णिमा

[१६] तत्थ खलु इमाओ वार्वाट्ठ पुण्णिमासिणीओ, वार्वाट्ठ अमावासाओ पण्णत्ताओ ।
वार्वाट्ठ एते कसिणा रागा, वार्वाट्ठ एते कसिणा विरागा ।
एते चउव्वीसे पव्वसते, एते चउव्वीसे कसिणराग-विरागसते ।
जावतिया ण पचण्ह सवच्छराण समया एगेण चउव्वीसेण समयसतेणूणका एवतिया परित्ता असंखेज्जा देसराग-विरागसता भवतीतिमक्खाया ।
अमावासातो ण पुण्णिमासिणी, चत्तारि बाताले मुहुत्तसते छत्तालीस बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स आहितेति वदेज्जा ।
ता पुण्णिमासिणीओ ण अमावासा,
चत्तारि बायाले मुहुत्तसते छत्तालीस बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स आहितेति वदेज्जा ।
ता अमावासातो ण अमावासा,
अट्ठपचासीते मुहुत्तसते तीस च बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स आहितेति वदेज्जा ।
ता पुण्णिमासिणीतो ण पुण्णिमासिणी
अट्ठपचासीते मुहुत्तसते तीस बावट्ठिभागे मुहुत्तस्स आहितेति वदेज्जा ।
एस ण एवतिए चदे मासे,
एस ण एवतिए जुगे ।

—सूर्य सूत्र ८० पृ २३६
—चन्द्र ,, ,,

[१६] (इस प्रकार एक युग मे) ये ६२ पूर्णिमाए और ६२ अमावस्याए होती हैं। इनमे ६२ कृत्स्न रक्त होती हैं व ६२ कृत्स्न विरक्त होती हैं। इस प्रकार ये १२४ पर्व होते हैं। ये १२४ पर्व कृत्स्न रक्त एव विरक्त होते हैं। इन पाच सवत्सरो के जितने समय हैं (उन मे एक पक्ष के एक समय के हिसाब से) उक्त १२४ समयो को छोडकर शेष असख्य समय देशरक्त एव देश विरक्त होते हैं। अमावस्या से पूर्णिमा तक ४४२$\frac{४६}{६२}$ मुहूर्त होते हैं। पूर्णिमा से अमावस्या तक ४४२$\frac{४६}{६२}$ मुहूर्त होते हैं। अमावस्या से अमावस्या तक ८८५$\frac{३०}{६२}$ मुहूर्त होते हैं। पूर्णिमा से पूर्णिमा तक ८८५$\frac{३०}{६२}$ मुहूर्त होते हैं।

यही (८८५$\frac{३०}{६२}$ मुहूर्त) चन्द्रमास है। यही खण्डरूप युग (चन्द्रमास प्रमित युगखण्ड) है।

पूर्णिमा-अमावस्या में नक्षत्रों का योग

[१७][१] प्र०—कति ण भते ! पुण्णिमाओ, कति अमावासाओ पण्णत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! बारस पुण्णिमाओ, बारस अमावासाओ पण्णत्ताओ, तजहा—

साविट्ठी, पोट्ठवई, आसोई, कत्तिगी, मग्गसिरी, पोसी, माही, फग्गुणी, चेती, वइसाही, जेट्ठामूली, आसाढी ।

[२] प्र०—साविट्ठिण्ण भते ! पुण्णिमासि कति णक्खत्ता जोग जोएति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि णक्खत्ता जोग जोएति, तजहा—अभिई, सवणो, धणिट्ठा ।

[३] प्र०—पोट्ठवइण्ण भते ! पुण्णिम कइ णक्खत्ता जोग जोएति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि णक्खत्ता जोएति, तजहा—
सयभिसया, पुव्वभद्दवया, उत्तरभद्दवया ।

[४] प्र०—अस्सोइण्ण भंते ! पुण्णिम कति णक्खत्ता जोगं जोएंति ?

उ०—गोयमा ! दो जोएंति, तंजहा—रेवई, अस्सिणी य ।

कत्तिइण्णं दो–भरणी, कत्तिआ य,

मग्गसिरिण्ण दो–रोहिणी, मग्गसिरं च,

पोसिं तिण्णि–अद्दा, पुणव्वसू, पुस्सो,

माघिण्ण दो–अस्सेसा, मघा य,

फग्गुणि ण दो–पुव्वाफग्गुणी य, उत्तराफग्गुणी य,

चेतिण्ण दो–हत्थो, चित्ता य,

विसाहिण्ण दो–साई, विसाहा य,

जेट्ठामूलिण्ण तिण्णि–अणुराहा, जेट्ठा, मूलो,

आसाढिण्ण दो–पुव्वासाढा, उत्तरासाढा ।

—जम्बू सू १६१ पृ ५०४
—सूर्य सू ३८ पृ ११२
—चन्द्र „ „

[१७][१] प्र०—भगवन् ! कितनी पूर्णिमाएँ और कितनी अमावस्याएं होती है ?

उ०—गौतम ! बारह पूर्णिमाए और बारह अमावस्याए होती हैं, यथा—श्राविष्ठी, प्रौष्ठपदी, आश्विनी, कार्त्तिकी, मार्गशीर्षिकी, पौषी, माघी, फाल्गुनी, चैत्री, वैशाखी, ज्येष्ठामूली और आसाढी ।

[२[प्र०—भगवन् ! श्राविष्ठी (श्रावण मास सम्बन्धी) पूर्णिमा को कितने नक्षत्रो का योग होता है ?

उ०—गौतम ! तीन नक्षत्रो का योग होता है, यथा—अभिजित, श्रवण और धनिष्ठा ।

[३] प्र०—भगवन् ! प्रौष्ठपदी (भाद्रपद सम्बन्धी) पूर्णिमा को कितने नक्षत्रो का योग होता है ?

उ०—गौतम ! तीन नक्षत्रो का योग होता है, यथा—शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा ।

[४] प्र०—भगवन् ! आश्विन मास की पूर्णिमा को कितने नक्षत्रो का योग होता है ?

उ०—गौतम ! दो (नक्षत्रो) का योग होता है, यथा—रेवती और अश्विनी । कार्त्तिकी पूर्णिमा को भरणी और कृत्तिका, इन दो (नक्षत्रो) का, मार्गशीर्ष-पूर्णिमा को रोहिणी और मृगशीर्ष, इन दो (नक्षत्रो) का, पौषी (पूर्णिमा) को आर्द्रा, पुनवर्सु और पुष्य, इन तीन नक्षत्रो का, माघी (पूर्णिमा) को आश्लेषा और मघा, इन दो (नक्षत्रो) का, फाल्गुनी (पूर्णिमा) को पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी, इन दो (नक्षत्रो) का, चैत्री (पूर्णिमा) को हस्त और चित्रा, इन दो (नक्षत्रो) का, वैशाखी (पूर्णिमा) को स्वाति और विशाखा, इन दो (नक्षत्रो) का, ज्येष्ठामूली (पूर्णिमा) को अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल, इन तीन (नक्षत्रो) का तथा आषाढी (पूर्णिमा) को पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा, इन दो (नक्षत्रो) का (योग होता है) ।

पूर्णिमा-अमावस्याओं का नक्षत्रसम्बन्ध

[१८][१] प्र०—जया ण भंते ! साविट्ठी पुण्णिमा भवइ तया ण माही अमावासा भवइ ?

जया ण भंते ! माही पुण्णिमा भवइ तयाण साविट्ठी अमावासा भवइ ?

उ०—हंता, गोयमा ! जया ण साविट्ठी त चेव वत्तव्वं ।

[२] प्र०—जया ण भंते ! पोट्ठवई पुण्णिमा भवइ तया ण फग्गुणी अमावासा भवइ ?
जया ण फग्गुणी पुण्णिमा भवइ तया ण पोट्ठवई अमावासा भवइ ?

उ०—हंता, गोयमा ! त चेव ।
एव एतेण अभिलावेण इमाओ पुण्णिमाओ अमावासाओ णेअव्वाओ—
अस्सिणी पुण्णिमा चेती अमावासा, कत्तिगी पुण्णिमा वइसाही अमावासा,
मग्गसिरी पुण्णिमा जेट्ठा-मूली अमावासा, पोसी पुण्णिमा आसाढी अमावासा ।

—जम्बू. सूत्र १६१ पृ ५०५
—सूर्य. सूत्र ४० पृ १२८
—चन्द्र ,, ,,

[१८][१] प्र०—भगवन् ! जब श्राविष्ठी (श्रवण नक्षत्र से युक्त) पूर्णिमा होती है तब (उससे पन्द्रह दिन पूर्व की) क्या माघी अर्थात् मघा नक्षत्र से युक्त अमावस्या होती है ?

उ०—हाँ, गौतम ! जब श्राविष्ठी—यावत्—(अमावस्या) होती है ।

[२] प्र०—भगवन् ! जब प्रौष्ठपदी (उत्तर भाद्रपदा से युक्त) पूर्णिमा होती है तब क्या फाल्गुनी (उत्तर-फाल्गुन नक्षत्र से युक्त) अमावस्या होती है ? एव जब फाल्गुनी पूर्णिमा होती है तब क्या प्रौष्ठ-पदी अमावस्या होती है ?

उ०—हाँ, गौतम ! होती है ।
इसी प्रकार निम्नलिखित पूर्णिमाएं एव अमावस्याएं समझनी चाहिए—आश्विनी पूर्णिमा और चैत्री अमावस्या, कार्त्तिकी पूर्णिमा एव वैशाखी अमावस्या, मृगशीर्ष-पूर्णिमा एव ज्येष्ठामूली अमावस्या, पौषी पूर्णिमा एव आषाढी अमावस्या ।

अमावस्याओं मे नक्षत्रयोग

[१९][१] प्र०—साविट्ठिण्ण अमावास कति णक्खत्ता जोएंति ?

उ०—गोयमा ! दो णक्खत्ता जोएंति, तजहा—अस्सेसा य महा य ।

[२] प्र०—पोट्ठवइण्ण भंते ! अमावास कति णक्खत्ता जोएंति ?

उ०—गोअमा ! दो–पुव्वाफग्गुणी उत्तराफग्गुणी अ ।
अस्सोइण्ण भंते ! दो–हत्थे चित्ता य,
कत्तिइण्ण दो–साई विसाहा य,
मग्गसिरिण्ण तिण्णि–अणुराहा जेट्ठा मूलो अ,
पोसिण्ण दो–पुव्वासाढा उत्तरासाढा,
माहिण्ण तिण्णि–अभिई सवणे धणिट्ठा,
फग्गुणि तिण्णि–सयभिया पुव्वभद्दवया उत्तरभद्दवया
चेतिण्ण दो–रेवई अस्सिणी य,
वइसाहिण्ण दो–भरणी कत्तिआ य,
जेट्ठामूलिण्ण दो–रोहिणी मग्गसिर च,
आसाढिण्ण तिण्णि–अद्दा पुणव्वसू पुस्सो इति ।

[१९][१] प्र०—भगवन् ! श्राविष्ठी अमावस्या को कितने नक्षत्रो का योग होता है ?

उ०—गौतम ! दो नक्षत्रो का योग होता है, यथा—आश्लेषा और मघा ।

[२] प्र०—भगवन् ! प्रौष्ठपदी अमावस्या को कितने नक्षत्रो का योग होता है ?

उ०—गौतम ! दो (नक्षत्रो का योग होता है)—पूर्वफाल्गुनी और उत्तरफाल्गुनी ।

आश्विनी (अमावस्या) को हस्त और चित्रा, कार्त्तिकी (अमावस्या) को स्वाति और विशाखा का, मृगशीर्षिकी (अमावस्या) को अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल इन तीन (नक्षत्रो) का, पौषी (अमावस्या) को पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा का, माघी (अमावस्या) को अभिजित, श्रवण और धनिष्ठा का, फाल्गुनी (अमावस्या) को शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा और उत्तरभाद्रपदा–इन तीन का, चैत्री (अमावस्या) को रेवती और अश्विनी का, वैशाखी (अमावस्या) को भरणी और कृत्तिका का, ज्येष्ठामूली (अमावस्या) को रोहिणी और मृगशीर्ष–इन दो नक्षत्रो का तथा आषाढी (अमावस्या) को आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य–इन तीन नक्षत्रो का (योग होता है)।

नक्षत्रों के कुल, उपकुल और कुलोपकुल

[२०][१] प्र०—कति ण भते ! कुला, कति उवकुला, कति कुलोवकुला पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! बारस कुला, बारस उवकुला, चत्तारि कुलोवकुला पण्णत्ता।

बारस कुला, तंजहा—

धणिट्ठाकुल १, उत्तरभद्दवयाकुल २, अस्सिणीकुलं ३, कत्तियाकुलं ४, मिगसिरकुल ५, पुस्सो कुल ६, मघाकुल ७, उत्तरफग्गुणीकुलं ८, चित्ताकुलं ९, विसाहाकुल १०, मूलो कुलं ११, उत्तरासाढाकुलं।

गाहा—मासाण परिणामा होति कुला उवकुला उ हेट्ठिमगा।
होति पुण कुलोवकुला अभीयि सय अद्द अणुराहा ॥१॥

बारस उवकुला, तजहा—

सवणो उवकुल, पुव्वभद्दवया उवकुल, रेवई उवकुल, भरणी उवकुल, रोहिणी उवकुल, पुणव्वसू उवकुल, अस्सेसा उवकुल, पुव्वफग्गुणी उवकुल, हत्थो उवकुल, साई उवकुल, जेट्ठा उवकुल, पुव्वासाढा उवकुल।

चत्तारि कुलोवकुला, तंजहा—

अभिई कुलोवकुला, सयभिसया कुलोवकुला, अद्दा कुलोवकुला, अणुराहा कुलोवकुला।

जबू सूत्र १६१ पृ ५०४
—सूर्य सूत्र ३७ पृ १११
—चन्द्र ,, ,,

[२०][१] प्र०—भगवन् ! (इन नक्षत्रो मे) कितने कुलनक्षत्र (कुल सज्ञा वाले नक्षत्र), कितने उपकुलनक्षत्र और कितने कुलोपकुलनक्षत्र है ?

उ०—गौतम ! बारह कुलनक्षत्र, बारह उपकुलनक्षत्र एव चार कुलोपकुलनक्षत्र हैं।

बारह कुल इस प्रकार है—१–धनिष्ठाकुल, २–उत्तरभाद्रपदाकुल, ३–अश्विनीकुल, ४–कृत्तिकाकुल, ५–मृगशीर्षकुल, ६–पुष्यकुल, ७–मघाकुल, ८–उत्तरफाल्गुनीकुल, ९–चित्राकुल, १०–विशाखाकुल, ११–मूलकुल और १२–उत्तराषाढाकुल।

कुल मासो के परिणाम होते है अर्थात् महीनो के अन्त मे आते है। उपकुल कुल के बाद आते हैं। अभिजित, शतभिषा, आर्द्रा और अनुराधा (उपकुल के भी बाद आते है।)

बारह उपकुलनक्षत्र इस प्रकार है—१–श्रवणोपकुल, २–पूर्वभाद्रपदोपकुल, ३–रेवती-उपकुल, ४–भरणी-उपकुल, ५–रोहिणी-उपकुल, ६–पुनर्वसु-उपकुल, ७–आश्लेषोपकुल, ८–पूर्वफाल्गुनी-उपकुल, ९–हस्तोपकुल, १०–स्वाति-उपकुल, ११–ज्येष्ठोपकुल और १२–पूर्वाषाढोपकुल।

चार कुलोपकुल इस प्रकार है—१–अभिजित-कुलोपकुल, २–शतभिषाकुलोपकुल, ३–आर्द्राकुलोपकुल और ४–अनुराधाकुलोपकुल।

अमावस्याओं में कुलों का योग

[२१][१] प्र०—साविट्ठिण्ण भंते ! अमावास किं कुल जोएइ, उवकुल जोएइ, कुलोवकुल जोएइ ?

उ०—गोयमा ! कुल वा जोएइ, उवकुल वा जोएइ, णो लब्भइ कुलोवकुल ।
कुल जोएमाणे महाणक्खत्ते जोएइ, उवकुल जोएमाणे अस्सेसाणक्खत्ते जोएइ,
साविट्ठिण्ण अमावास कुल वा जोएइ, उवकुल वा जोएइ, कुलेण वा जुत्ता उवकुलेण वा जुत्ता
साविट्ठि-अमावासा जुत्तत्ति वत्तव्व सिआ ।
पोट्ठवइण्ण अमावास त चेव,
दो जोएति-कुल वा जोएइ, उवकुल०,
कुल जोएमाणे उत्तराफग्गुणीणक्खत्ते जोएइ, उव० पुव्वाफग्गुणी,
पोट्ठवइण्ण अमावास जाव वत्तव्व सिया,
मग्गसिरिण्ण त चेव कुल मूले णक्खत्ते जोएइ,
उव० जेट्ठा, कुलोवकु०, अणुराहा—जाव–जुत्तत्ति वत्तव्व सिआ,
एव माहीए फग्गुणीए आसाढीए कुल वा उवकुल वा, कुलोवकुल वा,
अवसेसियाण कुल वा उवकुल वा जोएइ ।

—जबू सूत्र १६१, पृ ५०४–५०५
—सूर्य सूत्र ३९ पृ १२०
—चन्द्र „ „

[२१][१] प्र०—भगवन् ! श्राविष्ठी अमावस्या को कुल (कुलनक्षत्र) का योग होता है, उपकुल–(नक्षत्र) का योग होता है अथवा कुलोपकुल (नक्षत्र) का योग होता है ?

उ०—गौतम ! कुल का योग होता है, उपकुल का योग होता है, किन्तु कुलोपकुल का योग (लाभ) नही होता ।
कुल का योग होने पर मघानक्षत्र का योग होता है । उपकुल का योग होने पर आश्लेपा नक्षत्र का योग होता है । (इस प्रकार) श्राविष्ठी अमावस्या को कुल का योग होता है एव उपकुल का योग होता है । (अर्थात्) कुल मे युक्त होकर अथवा उपकुल से युक्त होकर श्राविष्ठी अमावस्या योगयुक्त होती है ।
प्रौष्ठपदी अमावस्या को इन्ही दो का योग होता है अर्थात् कुल एव उपकुल का योग होता है । कुल का योग होने पर उत्तरफाल्गुनी नक्षत्र योगयुक्त होता है । उपकुल का योग होने पर पूर्व-फाल्गुनी नक्षत्र योगयुक्त होता है । प्रौष्ठपदी अमावस्या को–यावत्–योग होता है ।
मार्गशीर्प–(अमावस्या) को इसी प्रकार कुल का योग होने पर मूल नक्षत्र योगयुक्त होता है, उपकुल का योग होने पर ज्येष्ठा (नक्षत्र) योगयुक्त होता है । कुलोपकुल का योग होने पर अनुराधा (नक्षत्र)–यावत्–योगयुक्त होता है । इसी प्रकार माघी, फाल्गुनी एव आपाढी (अमा-वस्या) को कुल उपकुल अथवा कुलोपकुल का योग होता है । शेप (अमावस्याओ) को कुल अथवा उपकुल का योग होता है ।

पूर्णिमाओं में कुल–उपकुल का योग

[२२][१] प्र०—साविट्ठिण्ण भन्ते ! पुण्णिम किं कुल जोएइ, उवकुल जोएइ, कुलोवकुल जोएइ ?

उ०—गोयमा ! कुल वा जोएइ, उवकुल वा जोएइ, कुलोवकुल वा जोएइ ।
कुल जोएमाणे धणिट्ठा णक्खत्ते जोएइ, उवकुल जोएमाणे सवणे णक्खत्ते जोएइ, कुलोवकुल जोए-माणे अभिई णक्खत्ते जोएइ ।

साविट्ठिण्णं पुण्णिमासि ण कुल वा जोएइ—जाव—कुलोवकुल वा जोएइ,
कुलेण वा जुत्ता, उवकुलेण वा जुत्ता, कुलोवकुलेण वा जुत्ता,
साविट्ठी पुण्णिमा जुत्तत्ति वत्तव्व सिआ ।

[२] प्र०—पोट्ठवदिण्ण भते ! पुण्णिम कि कुल जोएइ ३ पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! कुल वा उपकुलं वा कुलोवकुलं वा जो एइ,
कुल जोएमाणे उत्तरभद्दवया णक्खत्ते जोएइ, उ० पुव्वभद्दवया० कुलोव० सयभिसया णक्खत्ते जोएइ ।
पोट्ठवइण्ण पुण्णिम कुल वा जोएइ—जाव—कुलोवकुल वा जोएइ,
कुलेण वा जुत्ता—जाव—कुलोवकुलेण वा जुत्ता पोट्ठवई पुण्णमासी जुत्तत्ति वत्तव्व सिया ।

[३] प्र०—आसोइण्ण भते ! पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! कुल वा जोएइ, उवकुलं वा जोएइ, णो लब्भई कुलोवकुल ।
कुल जोएमाणे अस्सिणीणक्खत्ते जोएइ,
उवकुल जोएमाणे रेवइणक्खत्ते जोएइ,
अस्सोइण्ण पुण्णिम कुल वा जोएइ, उवकुलं वा जोएइ, कुलेण वा जुत्ता, उवकुलेण वा जुत्ता
अस्सोई पुण्णिमा जुत्तत्ति वत्तव्व सिआ ।

[४] प्र०—कत्तिइण्ण भते ! पुण्णिम कि कुल ३ पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! कुल वा जोएइ, उवकुल वा जोएइ, णो कुलोवकुल जोएइ,
कुल जोएमाणे कत्तिआणक्खत्ते जोएइ, उव० भरणी, कत्तिइण्ण—जाव—वत्तव्वं ।

[५] प्र०—मग्गसिरिण्णं भते ! पुण्णिम कि कुल त चेव ?
उ०—दो जोएइ, णो भवइ कुलोवकुल,
कुलं जोएमाणे मग्गसिरणक्खत्ते जोएइ,
उव० रोहिणी, मग्गसिरिण्ण पुण्णिमं—जाव—वत्तव्व सिआ इति ।
एव सेसिआओ वि—जाव—आसाढि ।
पोसिं जेट्ठामूलिं च कुल वा उव० कुलोवकुल वा,
सेसिआण कुल वा उवकुल वा कुलोवकुल ण भण्णइ ।

—जम्बू० सूत्र १६१ पृ ५०४—५०५
—सूर्य० सूत्र ३९ पृ १२०
—चन्द्र० „ ,

[२२][१] प्र०—भगवन् ! श्राविष्ठी पूर्णिमा को कुल (नक्षत्र) का योग होता है, उपकुल (नक्षत्र) का योग होता है अथवा कुलोपकुल (नक्षत्र) का योग होता है ?
उ०—गौतम ! कुल का योग होता है, उपकुल का योग होता है एव कुलोपकुल का योग होता है ।
कुल का योग होने पर धनिष्ठा नक्षत्र योगयुक्त होता है । उपकुल का योग होने पर श्रवण नक्षत्र योगयुक्त होता है । कुलोपकुल का योग होने पर अभिजित नक्षत्र योगयुक्त होता है ।
(इस प्रकार) श्राविष्ठी पूर्णिमा को कुल का योग होता है—यावत्—कुलोपकुल का योग होता है ।
(अर्थात्) कुल से युक्त होकर, उपकुल से युक्त होकर अथवा कुलोपकुल से युक्त होकर श्राविष्ठी पूर्णिमा योगयुक्त होती है ।

[२] प्र०—भगवन् ! प्रौष्ठपदी पूर्णिमा को कुल का योग होता है, उपकुल का योग होता है अथवा कुलोपकुल का योग होता है ?

उ०—गौतम ! कुल, उपकुल अथवा कुलोपकुल का योग होता है।

कुल का योग होने पर उत्तरभाद्रपदा नक्षत्र योगयुक्त होता है। उपकुल का योग होने पर पूर्व-भाद्रपदा नक्षत्र योगयुक्त होता है। कुलोपकुल का योग होने पर शतभिषा नक्षत्र योगयुक्त होता है।

(इस प्रकार) प्रौष्ठपदी पूर्णिमा को कुल का योग होता है—यावत्—कुलोपकुल का योग होता है।

(अर्थात्) कुल से युक्त होकर—यावत्—कुलोपकुल से युक्त होकर प्रौष्ठपदी पूर्णिमा योगयुक्त होती है।

[३] प्र०—भगवन् ! आश्विनी (पूर्णिमा) को (कुल, उपकुल अथवा कुलोपकुल का योग होता है) ?

उ०—गौतम ! कुल का योग होता है, उपकुल का योग होता है, कुलोपकुल का योग (लाभ) नही होता, कुल का योग होने पर अश्विनी नक्षत्र योग करता है। उपकुल का योग होने पर रेवती नक्षत्र योग करता है।

(इस प्रकार) आश्विनी पूर्णिमा को कुल का योग होता है अथवा उपकुल का योग होता है।

(अर्थात्) कुल से युक्त होकर अथवा उपकुल से युक्त होकर आश्विनी पूर्णिमा योगयुक्त होती है।

[४] प्र०—भगवन् ! कार्त्तिकी पूर्णिमा को कुल, उपकुल अथवा कुलोपकुल का योग होता है ?

उ०—गौतम ! कुल का योग होता है, उपकुल का योग होता है, कुलोपकुल का योग नही होता। कुल का योग होने पर कृत्तिका नक्षत्र योग करता है। उपकुल का योग होने पर भरणी (नक्षत्र योग करता है)।

(इस प्रकार) कार्त्तिकी पूर्णिमा—यावत्—योगयुक्त होती है।

[५] प्र०—भगवन् ! मार्गशीर्षी पूर्णिमा को कुल (अथवा उपकुल) का योग होता है, इत्यादि ?

उ०—(कुल और उपकुल) दो का ही योग होता है, कुलोपकुल का योग नही होता।

कुल का योग होने पर मृगशीर्ष नक्षत्र योगयुक्त होता है। उपकुल का योग होने पर रोहिणी (नक्षत्र योगयुक्त होता है)।

इस प्रकार मार्गशीर्षी पूर्णिमा—यावत्—योगयुक्त होती है।

इसी प्रकार शेष—यावत्—आषाढी पूर्णिमा के विषय मे भी समझना चाहिए। पौषी एव ज्येष्ठामूली (पूर्णिमा) को कुल, उपकुल और कुलोपकुल का योग होता है। शेष (पूर्णिमाओ) को कुल अथवा उपकुल का योग होता है, कुलोपकुल का नही।

रात्रि पूर्ण करने वाले नक्षत्र

[२३][१] प्र०—वासाण पढम मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि णक्खत्ता णति, तजहा—उत्तरासाढा, अभिई, सवणो, धणिट्ठा।

उत्तरासाढा चउद्दस अहोरत्ते णेइ, अभिई सत्त अहोरत्ते णेइ, सवणो अट्ठऽहोरत्ते णेइ, धणिट्ठा एग अहोरत्तं णेइ

तसि च ण माससि चउरगुलपोरसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ,[1]

तस्स ण मासस्स चरिमदिवसे दो पदा चत्तारि अ अगुला पोरिसी भवइ।

[२] प्र०—वासाण भते ! दोच्च मास कइ णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि—धनिट्ठा, सयभिसया पुव्वभद्दवया, उत्तराभद्दवया।

धणिट्ठा ण चउद्दस अहोरत्ते णेइ, सयभिसया सत्त अहोरत्ते णेइ, पुव्वाभद्दवया अट्ठ अहोरत्ते णेइ, उत्तराभद्दवया एग।

---

१. (क) सावणसुद्धसत्तमीसु ण सूरिए सत्तावीसगुलिय पोरिसिच्छाय णिव्वत्तइत्ता ण दिवसखेत्त नियट्टेमाणे रयणिखेत्त अभिणिवट्टमाणे चार चरति। —सम० २७

श्रावण, शुक्ला सप्तमी को सूर्य सत्ताईस अगुल की पौरुषी छाया करता हुआ दिवसक्षेत्र को कम करता हुआ और रजनीक्षेत्र को बढाता हुआ गति करता है।

(ख) उत्तरा० अ २६ गा० १३–१४

तंसि च ण मासंसि अट्ठ गुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ,
तस्स मासस्स चरिमे दिवसे दो पया अट्ठ य अगुला पोरिसी भवइ ।

[३] प्र०—वासाण भते ! तइअ मास कइ णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तजहा—
उत्तरभद्दवया, रेवई, अस्सिणी ।
उत्तरभद्दवया चउद्दस राइदिए णेइ, रेवई पण्णरस, अस्सिणी एग ।
तंसि च ण मासंसि दुवालसगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ,
तस्स ण मासस्स चरिमे दिवसे लेहट्ठाइ तिण्णि पयाइ पोरिसी भवइ ।[1]

[४] प्र०—वासाण भते ! चउत्थ मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि–अस्सिणी, भरणी, कत्तिआ ।
अस्सिणी चउद्दस, भरणी पण्णरस, कत्तिआ एगं ।
तंसि च ण मासंसि सोलसगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ ।
तस्स ण मासस्स चरमे दिवसे तिण्णि पयाइ चत्तारि अगुलाइ पोरिसी भवइ ।[2]

[२३][१] प्र०—वर्षा के प्रथम मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते है ?

उ०—गौतम ! चार नक्षत्र पूर्ण करते है, यथा—उत्तराषाढा, अभिजित, श्रवण और धनिष्ठा।
उत्तराषाढा चौदह अहोरात्र पर्यन्त रहता है। अभिजित सात अहोरात्र पर्यन्त रहता है। श्रवण आठ अहोरात्र पर्यन्त रहता है। धनिष्ठा एक अहोरात्र पर्यन्त रहता है।
इस मास मे सूर्य चतुरगुल पौरुषी से परिभ्रमण करता है। इस मास मे अन्तिम दिन दो पद व चार अगुल की पौरुषी होती है।

[२] प्र०—भगवन् ! वर्षा के द्वितीय मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! चार (नक्षत्र पूर्ण करते हैं), यथा-धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा और उत्तराभाद्रपदा।
धनिष्ठा चौदह अहोरात्र पर्यन्त रहता है। शतभिषा सात अहोरात्र तक रहता है। पूर्वाभाद्रपदा आठ अहोरात्र तक रहता है। उत्तराभाद्रपदा एक (अहोरात्र पर्यन्त रहता है)।
इस मास मे अष्टागुल पौरुषी छाया से सूर्य परिभ्रमण करता है। इस मास मे अन्तिम दिन दो पद और आठ अगुल की पौरुषी होती है।

[३] प्र०—भगवन् ! वर्षा के तृतीय मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन नक्षत्र पूर्ण करते है, यथा-उत्तरा-भाद्रपदा, रेवती और अश्विनी।

उत्तरभाद्रपदा चौदह रात्रि-दिन तक रहता है। रेवती पन्द्रह एव अश्विनी एक (रात्रि-दिन तक रहता है)। इस मास मे द्वादशागुल पौरुषी छाया से सूर्य परिभ्रमण करता है। इम मास मे अन्तिम दिन पुरे तीन पद की पौरुषी होती है।

---

१. चेत्तासोएसु ण मासेसु सइ छत्तीसगुलिय सूरिए पोरिसिच्छाय निव्वत्तेइ। —सम० ३६
चैत्र एव आश्विन मास मे सूर्य छत्तीस अगुल की पौरुषी छाया करता है।

२. (क) कत्तियबहुलसत्तमीए ण सूरिए सत्ततीसगुलिय पोरिसिच्छाय निव्वत्तइत्ता ण चार चरइ। —सम० ३७
कात्तिक कृष्णा सप्तमी को सूर्य सेंतीस अगुल की पौरुषी छाया का निर्माण करता हुआ गति करता है।
(ख) सम० ४० सूत्र ७

[४] प्र०—भगवन् ! वर्षा के चतुर्थ मास (कार्तिक) को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन (नक्षत्र पूर्ण करते हैं)—अश्विनी, भरणी और कृत्तिका। अश्विनी चौदह, भरणी पन्द्रह और कृत्तिका एक (अहोरात्र पर्यन्त रहता है)।
इस मास मे सूर्य षोडशागुल पौरुषी छाया से परिभ्रमण करता है। इस मास मे अन्तिम दिन तीन पद व चार अगुल की पौरुषी होती है।

[२४][१] प्र०—हेमताण भते ! पढम मास कति णक्खत्ता णेंति ?

ऊ०—गोयमा ! तिण्णि–कत्तिआ, रोहिणी, मिगसिर।
कत्तिआ चउद्दस, रोहिणी पण्णरस, मिगसिर एग अहोरत्त णेइ।
तसि च ण मासंसि वीसगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ,
तस्स ण मासस्स जे से चरिमे दिवसे तसि च ण दिवससि तिण्णि पयाइ अट्ठ य अगुलाइ पोरिसी भवइ।

[२] प्र०—हेमताण भते ! दोच्च मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तजहा—
मिअसिर, अद्दा, पुणव्वसू, पुस्सो।
मिअसिर चउद्दस राइदिआइ णेइ, अद्दा अट्ठ णेइ, पुणव्वसू सत्त राइदिआइं- पुस्सो एग राइदिअं, णेइ। तया ण चउव्वीसगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ।
तस्स ण मासस्स जे से चरिमे दिवसे तसि च ण दिवससि लेहट्ठाइ चत्तारि पयाइ पोरिसी भवइ।

[३] प्र०—हेमताण भते ! तच्च मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि–पुस्सो, असिलेसा, महा। पुस्सो चोद्दस राइदियाण णेइ, असिलेसा पण्णरस, महा एक्क।
तया ण वीसगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ,
तस्स ण मासस्स जे से चरिमे दिवसे तसि च ण दिवससि तिण्णि पयाइ अट्ठ गुलाइ पोरिसी भवइ।

[४] प्र०—हेमताण भते ! चउत्थ मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि पण्णत्ता, तजहा—
महा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तरफग्गुणी।
महा चउद्दस राइदिआइ णेइ, पुव्वाफग्गुणी पण्णरस राइदिराइ णेइ, उत्तराफग्गुणी एग राइदिअ णेइ।
तया ण सोलसगुलपोरिसीए सूरिए अणुपरिअट्टइ।
तस्स ण मासस्स जे से चरिमे दिवसे तसि च ण दिवससि तिण्णि पयाइ चत्तारि अगुलाइं पोरिसी भवइ।[1]

[२४][१] प्र०—भगवन् ! हेमन्त के प्रथम मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन (नक्षत्र पूर्ण करते हैं)–कृत्तिका, रोहिणी और मृगशीर्ष। कृत्तिका चौदह, रोहिणी पन्द्रह एव मृगशीर्ष एक अहोरात्र पर्यन्त रहता है। इस मास मे सूर्य वीस अगुल की पौरुषी छाया से परिभ्रमण करता है। इस मास मे अन्तिम दिन तीन पद और आठ अगुल की पौरुषी होती है।

१– सम० ४० सूत्र ६

[२] प्र०—भगवन् ! हेमन्त के द्वितीय मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते है।

उ०—गौतम ! चार नक्षत्र पूर्ण करते हैं, यथा—मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य। मृगशीर्ष चौदह रात्रि–दिन तक रहता है। आर्द्रा आठ (अहोरात्र तक) रहता है। पुनर्वसु मात रात–दिन तक (रहता) है। पुष्य एक रात–दिन रहता है।

इसमे सूर्य चौवीस अगुल की पौरुषी छाया से परिभ्रमण करता है। इम मास मे अन्तिम पूरे दिन चार पद की पौरुषी होती है।

[३] प्र०—भगवन् ! हेमन्त के तृतीय मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन (नक्षत्र पूर्ण करते है)—पुष्य, आश्लेपा और मघा। पुष्य चौदह रात-दिन तक रहता है। आश्लेपा पन्द्रह एव मघा एक रात-दिन तक रहता है।

इसमे सूर्य बीस अगुल की पौरुषी छाया से परिभ्रमण करता है। इस मास मे अन्तिम दिन तीन पद और आठ अगुल की पौरुषी होती है।

[४] प्र०—भगवन् ! हेमन्त के चतुर्थ मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन नक्षत्र पूर्ण करते है, यथा–मघा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तरफाल्गुनी। मघा चौदह रात्रि-दिन तक रहता है। पूर्वाफाल्गुनी पन्द्रह रात्रि-दिवस तक रहता है। उत्तरफाल्गुनी एक रात्रि-दिवस रहता है।

इस समय सूर्य सोलह अगुल पौरुपी छाया से परिभ्रमण करता है। इस माम मे अन्तिम दिन तीन पद व चार अगुल की पौरुषी होती है।

[२५][१] प्र०—गिम्हाण भते ! पढम मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि णक्खत्ता णेंति-उत्तराफग्गुणी, हत्थो, चित्ता।

उत्तराफग्गुणी चउद्दस राइदियाइ णेइ, हत्थो पण्णरस राइदियाइ णेइ, चित्ता एग राइदिअ णेइ।

तया ण दुवालसगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ,

तस्स णं मासस्स जे से चरिमे दिवसे तसि च ण दिवससि लेहट्ठाइ तिण्णि[1] पयाइ पोरिसी भवइ।

[२] प्र०—गिम्हाणं भते ! दोच्च मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तजहा—चित्ता, साई, विसाहा।

चित्ता चउद्दस राइदियाइ णेइ, साई पण्णरस राइदियाइं णेइ, विसाहा एग राइदिअं णेइ।

तया ण अट्ठंगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरियट्टइ,

तस्स ण मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च ण दिवससि दो पयाइं अट्ठंगुलाइं पोरिसी भवइ।

[३] प्र०—गिम्हाणं भंते ! तच्चं मासं कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! चत्तारि णक्खत्ता णेंति, तजहा—विसाहा, अणुराहा, जेट्ठा, मूलो।

विसाहा चउद्दस राइदियाइ णेइ, अणुराहा अट्ठ राइदियाइ णेइ, जेट्ठा सत्त राइंदियाइं णेइ, मूलो एक्कं राइ दिअ।

तया ण चउरगुलपोरिसीए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ,

तस्स ण मासस्स जे से चरिमे दिवसे तंसि च ण दिवससि दो पयाइं चत्तारि अ अगुलाइ पोरिसी भवइ।

---

१. सम० ३६

[४] प्र०—गिम्हाण भते ! चउत्थ मास कति णक्खत्ता णेंति ?

उ०—गोयमा ! तिण्णि णक्खत्ता णेंति, तजहा—मूलो, पुव्वासाढा, उत्तरासाढा ।

मूलो चउद्दस्स राइदियाइ णेइ, पुव्वासाढा पण्णरस राइदियाइ णेइ, उत्तरासाढा एग राइदिअ णेइ । तया ण वट्टाए समचउरससठाणसठिआए णग्गोहपरिमडलाए सकायमणुरगिआए छायाए सूरिए अणुपरिअट्टइ,

तस्स ण मासस्स जे से चरिमे दिवसे तसि च ण दिवससि लेहट्ठाण दो पयाइ पोरिसी भवइ ।

—जबू० सूत्र १६२ पृ ५१५–५१६
—सूर्य० सूत्र ४३ पृ १३१–१३३
—चन्द्र० " "

[२५][१] प्र०—भगवन् ! ग्रीष्म के प्रथम मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन नक्षत्र पूर्ण करते हैं—उत्तरफाल्गुनी, हस्त और चित्रा । उत्तरफाल्गुनी चौदह रात्रि-दिन तक रहता है । हस्त पन्द्रह रात्रि-दिन पर्यन्त रहता है । चित्रा एक दिन रहता है । इस समय सूर्य द्वादशागुल पौरुषी छाया से परिभ्रमण करता है । इस महीने मे अन्तिम दिन तीन पद की पौरुषी होती है ।

[२] प्र०—भगवन् ! ग्रीष्म के द्वितीय मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन नक्षत्र पूर्ण करते हैं, यथा—चित्रा स्वाति और विशाखा । चित्रा चौदह रात्रि–दिन तक रहता है । स्वाति पन्द्रह रात–दिन तक रहता है । विशाखा एक रात्रि–दिन रहता है । इस समय अष्टागुल पौरुषी छाया से सूर्य परिभ्रमण करता है । इस मास मे अन्तिम दिन दो पद तथा आठ अगुल की पौरुषी होती है ।

[३] प्र०—भगवन् ! ग्रीष्म के तृतीय मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते है ?

उ०—गौतम ! चार नक्षत्र पूर्ण करते हैं, यथा—विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल । विशाखा चौदह रात–दिन तक रहता है । अनुराधा आठ रात्रि–दिन रहता है । ज्येष्ठा सात रात्रि–दिन पर्यन्त रहता है । मूल एक रात–दिन रहता है । इस समय चतुरगुल पौरुषी छाया से सूर्य परिभ्रमण करता है ।

[४] प्र०—भगवन् ! ग्रीष्म के चतुर्थ मास को कितने नक्षत्र पूर्ण करते हैं ?

उ०—गौतम ! तीन नक्षत्र पूर्ण करते हैं, यथा—मूल, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा । मूल चौदह रात्रि–दिन पर्यन्त रहता है । पूर्वाषाढा पन्द्रह रात्रि–दिन पर्यन्त रहता है । उत्तराषाढा एक रात्रि–दिन तक रहता है । इस समय सूर्य वृत्ताकार, समचतुरस्र एव न्यग्रोधपरिमडल सस्थान वाली स्वकायानुरजित छाया से परिभ्रमण करता है । इस मास मे अन्तिम दिन पूरे दो पद पौरुषी होती है ।

नक्षत्र-मासों के मुहूर्त्तों की हानि-वृद्धि

[२६][१] प्र०—ता कह ते वड्ढोवड्ढी मुहुत्ताण आहितेति वदेज्जा ?

उ०—ता अट्ठएकूणवीसे मुहुत्तसते सत्तावीस च सट्ठिभागे मुहुत्तस्स आहितेति वदेज्जा ।

—सूर्य सूत्र ८ पृ ६
—चन्द्र " "

[२६][१] प्र०—(नक्षत्रमासो के) मुहूर्त्तों की वृद्धि-हानि कितनी होती है ?

उ०—यह ८१९ २७/६० मुहूर्त्त की होती है ।

नक्षत्रों का चार-प्रकार

[२७][१] प्र०—जंबुद्दीवे ण दीवे अट्ठावीसाए णक्खत्ताण कयरे णक्खत्ते सव्वब्भतरिल्ल चारं चरइ ?
कयरे णक्खत्ते सव्ववाहिर चार चरइ ?
कयरे सव्वहिट्ठिल्ल चार चरइ ?
कयरे सव्वउवरिल्ल चार चरइ ?

उ०—गोयमा ! अभिई णक्खत्ते सव्वब्भतरचार चरइ, मूलो सव्वबाहिर चार चरइ,
भरणी सव्वहिट्ठिल्लं, साई सव्वुवरिल्ल चार चरइ ।

—जम्बू सूत्र १६५ पृ. ५२४
—सूर्य सूत्र ६३ पृ. २५६
—चन्द्र ,, ,,
—जीवा सूत्र १९६ पृ. ३७७

[२७][१] प्र०—जम्बूद्वीप मे २८ नक्षत्रो मे से कौन-सा नक्षत्र सवसे भीतर गति करता है ?
कौन-सा नक्षत्र सब से बाहर गति करता है ?
कौन-सा नक्षत्र सब से नीचे गति करता है ?
कौन-सा नक्षत्र सब से ऊपर गति करता है ?

उ०—गौतम ! अभिजित नक्षत्र सब से भीतर गति करता है । मूल नक्षत्र सब से बाहर गति करता है ।
भरणी सब से नीचे (गति करता है) एव स्वाति सब से ऊपर गति करता है ।

नक्षत्रों का दिशाभाग

[२८][१] प्र०—ता कह ते एवभागा आहिताति वदेज्जा ?

उ०—ता एतेसिण अट्ठावीसाए णक्खत्ताण
१–अत्थि णक्खत्ता पुव्वभागा समखेत्ता तीसमुहुत्ता पण्णत्ता,
२–अत्थि णक्खत्ता पच्छभागा समखेत्ता तीसमुहुत्ता पण्णत्ता,
३–अत्थि णक्खत्ता णत्तंभागा अवड्ढखेत्ता पण्णरसमुहुत्ता पण्णत्ता,
४–अत्थि णक्खत्ता उभयभागा दिवड्ढखेत्ता पणतालीसंमुहुत्ता पण्णत्ता ।

[२] प्र०—ता एतेसि ण अट्ठावीसाए णक्खत्ताण कतरे णक्खत्ता पुव्वभागा समखेत्ता तीसतिमुहुत्ता पण्णत्ता ?
कतरे णक्खत्ता पच्छभागा समखेत्ता तीसमुहुत्ता पण्णत्ता ?
कतरे णक्खत्ता णत्तभागा अवड्ढखेत्ता पण्णरसमुहुत्ता पण्णत्ता ?
कतरे णक्खत्ता उभयभागा दिवड्ढखेत्ता पणतालीसतिमुहुत्ता पण्णत्ता ?

उ०—ता एतेसि ण अट्ठावीसाए णक्खत्ताण
१–तत्थ जे ते णक्खत्ता पुव्वभागा समखेत्ता तीसतिमुहुत्ता पण्णत्ता, ते णं छ, तंजहा—
पुव्वापोट्ठवता, कत्तिया, मघा, पुव्वाफग्गुणी, मूलो, पुव्वासाढा ।

२–तत्थ जे ते णक्खत्ता पच्छंभागा समखेत्ता तीसतिमुहुत्ता पण्णत्ता, ते ण दस, तंजहा-अभिई,
सवणो, घणिट्ठा, रेवती, अस्सिणी, मिगसिर, पूसो, हत्थो, चित्ता, अणुराधा ।

३–तत्थ जे ते णक्खत्ता णत्तंभागा अवड्ढखेत्ता पण्णरसमुहुत्ता पण्णत्ता, ते णं छ, तंजहा-सयभिसया,
भरणी, अद्दा, अस्सेसा, साती, जेट्ठा ।

४–तत्थ जे ते णक्खत्ता उभयभागा दिवड्ढखेत्ता पणतालीस मुहुत्ता पण्णत्ता, ते ण छ, तजहा– उत्तरापोट्ठवता, रोहिणी, पुणव्वसू, उत्तराफग्गुणी, विसाहा, उत्तरासाढा ।

—सूर्य सूत्र ३५ पृ १०४
—चन्द्र „ „
—ठा सूत्र ५१७
—सम १५ सूत्र ४५

[२८][१] प्र०—इन (नक्षत्रो) के भाग किस प्रकार बताए गए है ?

उ०—इन २८ नक्षत्रो मे ऐसे भी नक्षत्र हैं जो पूर्वभाग सम क्षेत्र वाले हैं एव तीस मुहुर्त के हैं। ऐसे भी नक्षत्र हैं जो पश्चाद्भाग समक्षेत्र वाले एव तीस मुहुर्त के हैं। ऐसे भी नक्षत्र हैं जो नक्तभाग (रात्रि मे चन्द्र के साथ योग की आदि करने वाले) अपार्ध क्षेत्र वाले एव पन्द्रह मुहूर्त्त के हैं। तथा ऐसे भी नक्षत्र हैं जो उभयभाग (अहोरात्रि) डेढ क्षेत्र वाले हैं एव पैंतालीस मुहूर्त्त के हैं।

[२] प्र०—इन २८ नक्षत्रो मे से कौन-से नक्षत्र पूर्वभाग समक्षेत्र वाले तीस मुहूर्त्त के हैं ? कौन-से नक्षत्र पश्चाद्भाग समक्षेत्र वाले तीस मुहूर्त्त के हैं ? कौन-से नक्षत्र नक्त (रात्रि) भाग अर्ध क्षेत्र वाले पन्द्रह मुहूर्त्त के हैं ? तथा कौन-से नक्षत्र उभयभाग डेढ क्षेत्र (सार्ध अहोरात्र) पैंतालीस मुहूर्त्त के हैं ?

उ०—इन २८ नक्षत्रो मे से पूर्वभाग समक्षेत्र वाले तीस मुहूर्त्त के छह नक्षत्र हैं, यथा–पूर्वभाद्रपदा, कृत्तिका, मघा, पूर्वफाल्गुनी, मूल और पूर्वाषाढा ।

पश्चाद्भाग समक्षेत्र वाले तीस मुहूर्त्त के दस नक्षत्र हैं, यथा–अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, रेवती, अश्विनी, मृगशीर्ष, पुष्य, हस्त, चित्रा और अनुराधा ।

नक्त भाग अर्ध क्षेत्र वाले पन्द्रह मुहूर्त्त के छह नक्षत्र हैं, यथा–शतभिषा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाति और ज्येष्ठा ।

उभयभाग डेढ क्षेत्र वाले पैंतालीस मुहूर्त्त के छह नक्षत्र हैं, यथा–उत्तरभाद्रपदा, रोहिणी, पुनर्वसु, उत्तरफाल्गुनी, विशाखा और उत्तराषाढा ।

चारों दिशाओं के नक्षत्र

[२९][१] प्र०—ता कह ते जोतिसस्स दारा आहिता वदेज्जा ?

उ०—तत्थ खलु इमाओ पच पडिवत्तीओ पण्णत्ताओ—

१–तत्थेगे एवमाहसु
ता कत्तियादी[1] ण सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु

२–एगे पुण एवमाहंसु
ता महादीया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

३–एगे पुण एवमाहसु
ता धणिट्ठादीया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

४–एगे पुण एवमाहसु
अस्सिणीयादी ण सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, एगे एवमाहसु ।

५–एगे पुण एवमाहसु
ता भरणीयादीया ण सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिआ पण्णत्ता ।

१–सम० ७ ।

१–तत्थ जे ते एवमाहसु

ता कत्तियादी[1] ण सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता ते एवमाहसु तजहा—
कत्तिया, रोहिणी, सठाणा, अद्दा, पुणव्वसू, पुस्सो, असिलेसा ।
महादीया सत्त[2] णक्खत्ता दाहिणदारिया पण्णत्ता, तजहा—
महा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तराफग्गुणी, हत्थो, चित्ता, साई, विसाहा ।
अणुराधादीया[3] सत्त णक्खत्ता पच्छिमदारिया पण्णत्ता, तजहा—
अणुराधा, जेट्ठा, मूलो, पुव्वासाढा, उत्तरासाढा, अभियी, सवणो ।
धणिट्ठादीया[4] सत्त णक्खत्ता उत्तरदारिया पण्णत्ता, तजहा—
धणिट्ठा, सतभिसया, पुव्वापोट्ठवता, उत्तरापोट्ठवता, रेवती, अस्सिणी, भरणी ।

२–तत्थ जे ते एवमाहसु

ता महादीया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, ते एवमाहसु, तजहा—
महा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तराफग्गुणी हत्थो, चित्ता, साती, विसाहा ।
अणुराधादीया सत्त णक्खत्ता दाहिणदारिया पण्णत्ता, तजहा—
अणुराधा, जेट्ठा, मूले, पुव्वासाढा, उत्तरासाढा, अभियी, सवणे ।
धणिट्ठादीया सत्त णक्खत्ता पच्छिमदारिया पण्णत्ता, तजहा—
धणिट्ठा, सतभिसया, पुव्वापोट्ठवता, उत्तरापोट्ठवता, रेवती, अस्सिणी, भरणी ।
कत्तियादीया सत्त णक्खत्ता उत्तरदारिया पण्णत्ता, तजहा—
कत्तिया, रोहिणी, सठाणा, अद्दा, पुणव्वसू, पुस्सो, अस्सेसा ।

३–तत्थ जे ते एवमाहसु

ता धणिट्ठादीया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, ते एवमाहसु, तजहा—
धणिट्ठा, सतभिसया, पुव्वाभद्दवया, उत्तराभद्दवया, रेवती, अस्सिणी, भरणी ।
कत्तियादीया सत्त णक्खत्ता दाहिणदारिया पण्णत्ता, तजहा—
कत्तिया, रोहिणी, सठाणा, अद्दा, पुणव्वसू, पुस्सो, अस्सेसा ।
महादीया सत्त णक्खत्ता पच्छिमदारिया पण्णत्ता, तजहा—
महा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तराफग्गुणी, हत्थो, चित्ता, साती, विसाहा ।
अणुराधादीया सत्त णक्खत्ता उत्तरदारिया पण्णत्ता, तजहा—
अणुराधा, जेट्ठा, मूलो, पुव्वासाढा, उत्तरासाढा, अभीयी, सवणो ।

४–तत्थ जे ते एवमाहसु

ता अस्सिणीआदीया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, ते एवमाहसु, तजहा—
अस्सिणी, भरणी, कत्तिया, रोहिणी, सठाणा, अद्दा, पुणव्वसू ।
पुस्सादीया सत्त णक्खत्ता दाहिणदारिया पण्णत्ता, तजहा—
पुस्सा, अस्सेसा, महा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तराफग्गुणी, हत्थो, चित्ता ।
सादीयादीया सत्त णक्खत्ता पच्छिमदारिया पण्णत्ता, तजहा—
साती, विसाहा, अणुराहा, जेट्ठा, मूलो, पुव्वासाढा, उत्तरासाढा ।
अभीयीआदि सत्त णक्खत्ता उत्तरदारिया पण्णत्ता, तजहा—
अभिई, सवणो, धणिट्ठा, सतभिसया, पुव्वभद्दवया, उत्तरभद्दवया, रेवती ।

१–सम० ७ ।
२–सम० ७ ।
३–सम० ७ ।
४–सम० ७ ।

५-तत्थ जे ते एवमाहसु

ता भरणियादिया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, तजहा—
भरणी, कत्तिया, रोहिणी, सठाणा, अद्दा, पुणव्वसू, पुस्सो ।
अस्सेसादीया सत्त णक्खत्ता दाहिणदारिया पण्णत्ता, तजहा—
अस्सेसा, महा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तराफग्गुणी, हत्थो, चित्ता, साई ।
विसाहादीया सत्त णक्खत्ता पच्छिमदारिया पण्णत्ता, तजहा—
विसाहा, अणुराहा, जेट्ठा, मूलो, पुव्वासाढा, उत्तरापाढा, अभिई ।
सवणादीया सत्त णक्खत्ता उत्तरदारिया पण्णत्ता, तजहा—
सवणो, धणिट्ठा, सतभिसया, पुव्वापोट्ठवया, उत्तरापोट्ठवया, रेवती, अस्सिणी, एते एवमाहसु ।

वय पुण एवं वदामो

ता[1] अभिईयादि सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता, तजहा—
अभियी, सवणो, धणिट्ठा, सतभिसया, पुव्वापोट्ठवता, उत्तरापोट्ठवया, रेवती ।
अस्सिणीआदीया[2] सत्त णक्खत्ता दाहिणदारिया पण्णत्ता, तजहा—
अस्सिणी, भरणी, कत्तिया, रोहिणी, सठाणा, अद्दा, पुणव्वसू ।
पुस्सादीया[3] सत्त णक्खत्ता पच्छिमदारिया पण्णत्ता, तजहा—
पुस्सो, अस्सेसा, महा, पुव्वाफग्गुणी, उत्तरफग्गुणी, हत्थो, चित्ता ।
सातिआदीया[4] सत्त णक्खत्ता उत्तरदारिया पण्णत्ता, तजहा—
साती, विसाहा, अणुराहा, जेट्ठा, मूले, पुव्वासाढा, उत्तरासाढा ।

—सूर्य० सू ५९ पृ० १७३-७४
—चन्द्र० सू ५९

[२९][१] प्र०—ज्योतिष (नक्षत्रो) के द्वार किस प्रकार बताए गए हैं ?

उ०—इस विषय मे पाँच मान्यताएँ हैं—

१-कुछ लोगो की मान्यता है कि कृत्तिका आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं ।
२-किसी की मान्यता है कि मघा आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं ।
३-कुछ मानते हैं कि धनिष्ठा आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले है ।
४-किसी की मान्यता है कि अश्विनी आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं ।
५-कोई कहते हैं कि भरणी आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं ।

१-इनमे से जिनकी मान्यता यह है कि कृत्तिका आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं उनका कथन है कि (निम्नलिखित सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले है) यथा-कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा ।

सात नक्षत्र दक्षिणी द्वार वाले है, यथा—मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा ।

अनुराधा आदि सात नक्षत्र पश्चिमी द्वार वाले हैं, यथा—अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, अभिजित और श्रवण ।

धनिष्ठा आदि सात नक्षत्र उत्तरी द्वार वाले हैं, यथा—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तर-भाद्रपदा, रेवती, अश्विनी और भरणी ।

१-ठा० सूत्र ५८९ पृ० ३९३
२- " " "
३- " " "
४- " " "

२–जिनकी मान्यता यह है कि मघा आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले है, उनका कथन है कि (ये नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं–) यथा-मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा।

अनुराधा आदि सात नक्षत्र दक्षिणी द्वार वाले है, यथा-अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, अभिजित और श्रवण।

धनिष्ठा आदि सात नक्षत्र पश्चिमी द्वार वाले है, यथा-धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी और भरणी।

कृत्तिका आदि सात नक्षत्र उत्तरी द्वार वाले है, यथा-कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा।

३–जिनकी मान्यता यह है कि धनिष्ठा आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले है, उनका कथन है कि (ये नक्षत्र पूर्वीद्वार वाले है) यथा-धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी और भरणी।

कृत्तिका आदि सात नक्षत्र दक्षिणी द्वार वाले हैं, यथा-कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा।

मघा, आदि सात नक्षत्र पश्चिमी द्वार वाले है, यथा-मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा।

अनुराधा आदि सात नक्षत्र उत्तरी द्वार वाले है, यथा-अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, अभिजित और श्रवण।

४–जिनकी मान्यता यह है कि अश्विनी आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले है, उनका कथन है कि (ये नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले है) यथा-अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा और पुनर्वसु।

पुष्यादि सात नक्षत्र दक्षिणी द्वार वाले हैं, यथा-पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्त और चित्रा।

स्वाति आदि सात नक्षत्र पश्चिमी द्वार वाले हैं, यथा-स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा।

अभिजित आदि सात नक्षत्र उत्तरी द्वार वाले है, यथा-अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा और रेवती।

५–जिनकी मान्यता यह है कि भरणी आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले है, उनका कथन है कि (ये नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं) यथा-भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य।

आश्लेषा आदि सात नक्षत्र दक्षिणी द्वार वाले हैं, यथा-आश्लेषा, मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्त, चित्रा और स्वाति।

विशाखादि सात नक्षत्र पश्चिमी द्वार वाले है, यथा-विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा और अभिजित।

श्रवणादि सात नक्षत्र उत्तरी द्वार वाले हैं, यथा-श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा, रेवती और अश्विनी।

हम इस प्रकार कहते हैं—

अभिजित आदि सात नक्षत्र पूर्वी द्वार वाले हैं, यथा—अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा और रेवती। अश्विनी आदि सात नक्षत्र दक्षिणी द्वार वाले हैं, यथा-अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा और पुनर्वसु।

पुष्य आदि सात नक्षत्र पश्चिमी द्वार वाले हैं, यथा—पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्त और चित्रा।

स्वाति आदि सात नक्षत्र उत्तरी द्वार वाले हैं, यथा-स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा।

नक्षत्रमंडलों की संख्या

[३०][१] प्र०—कइ ण भते ! णक्खत्तमडला पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! अट्ठ णक्खत्तमडला पण्णत्ता।

[२] प्र०—जबुद्दीवे केवइय ओगाहित्ता केवइआ णक्खत्तमडला पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे दीवे असीअ जोयणसय ओगाहेत्ता एत्थ ण दो णक्खत्तमडला पण्णत्ता।

[३] प्र०—लवणे ण समुद्दे केवइय ओगाहेत्ता केवइआ णक्खत्तमडला पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! लवणे ण समुद्दे तिण्णि तीसे जोअणसए ओगाहित्ता एत्थ णं छ णक्खत्तमडला पण्णत्ता। एवामेव सपुव्वावरेण जबुद्दीवे दीवे लवणसमुद्दे अट्ठ णक्खत्तमडला भवतीतिमक्खायमिति।

—जबू सूत्र १४६ पृ ४७४

[३०][१] प्र०—भगवन् ! नक्षत्रमडल कितने हैं ?

उ०—गौतम ! नक्षत्रमडल आठ हैं।

[२] प्र०—जबूद्वीप के कितने क्षेत्र को अवगाहन करने पर कितने नक्षत्र मडल हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के १८० योजन के क्षेत्र को अवगाहन करने पर दो नक्षत्रमडल है।

[३] प्र०—लवणसमुद्र के कितने क्षेत्र को अवगाहन करके कितने नक्षत्रमडल है ?

उ०—गौतम ! लवणसमुद्र के ३३० योजन के क्षेत्र को अवगाहन करने पर छह नक्षत्रमडल हैं। इस प्रकार सव मिलाकर जम्बूद्वीप और लवणसमुद्र मे आठ नक्षत्रमडल हैं।

नक्षत्रमंडलों का क्षेत्र

[३१][१] प्र०—सव्वब्भतराओ ण भते ! णक्खत्तमडलाओ केवइआए अवाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पचदसुत्तरे जोअणसए अवाहाए सव्ववाहिरए णक्खत्तमडले पण्णत्ते इति।

—जम्बू सूत्र १४६ पृ ४७४

[३१][१] प्र०—भगवन् ! सव से भीतरी नक्षत्रमडल से सव से वाहर का नक्षत्रमडल कितनी दूरी पर है ?

उ०—गौतम ! (सव से भीतर के नक्षत्रमडल से) ५१० योजन की दूरी पर सव से बाहर का नक्षत्र-मडल है।

नक्षत्रमंडलों की लम्बाई-चौड़ाई

[३२][१] प्र०—णक्खत्तमडले ण भते ! केवइअ आयाम-विक्खभेण, केवइअ परिक्खेवेण, केवइअ वाहल्लेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! गाउय आयाम-विक्खभेण, त तिगुण सविसेस परिक्खेवेण, अद्धगाउय वाहल्लेण पण्णत्ते।

—जम्बू सूत्र १४६ पृ ४७४

[३२][१] प्र०—भगवन् ! नक्षत्रमडल कितना लम्बा-चौडा, कितनी परिधि वाला और कितना मोटा है ?

उ०—गौतम ! एक कोस लम्बा-चौडा, इससे तिगुनी से कुछ अधिक परिधि वाला एव आधा कोस मोटा है।

नक्षत्र मंडलों का अन्तर

[३३][१] प्र०—णक्खत्तमडलस्स ण भंते ! णक्खत्तमंडलस्स य एस ण केवइआए अवाहाए अंतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! दो जोअणाइ णक्खत्तमडलस्स य अबाहाए अतरे पण्णत्ते ।

—जम्बू सूत्र १४९ पृ ४७४

[३३][१] प्र०—भगवन् ! एक नक्षत्रमंडल से दूसरे नक्षत्रमडल मे कितना अन्तर है ?

उ०—गौतम ! एक नक्षत्रमडल से दूसरे नक्षत्रमडल मे दो योजन का अन्तर है ।

मेरु से नक्षत्रमंडलों का अन्तर

[३४][१] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइआए अबाहाए सव्वब्भतरे णक्खत्तमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! चोयालीस जोयणसहस्साइ अट्ठ य वीसे जोयणसए अवाहाए सव्वब्भंतरे णक्खत्तमंडले पण्णत्ते ।

[२] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे मदरस्स पव्वयस्स केवइआए अवाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्तमडले पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पणयालीसं जोयणसहस्साइ तिण्णि य तीसे जोयणसए अवाहाए सव्वबाहिरए णक्खत्त-मडले पण्णत्ते इति ।

[३] प्र०—सव्वब्भतरे णक्खत्तमंडले केवइअ आयामविक्खभेण, केवइअ परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! णवणउतिं जोअणसहस्साइ छच्च चत्ताले जोअणसए आयाम-विक्खभेण, तिण्णि अ जोअणसयसहस्साइ पण्णरस सहस्साइं एगूणणवतिं च जोअणाइ किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेण पण्णत्ते ।

[४] प्र०—सव्वबाहिरए ण भते ! णक्खत्तमडले केवइअ आयाम-विक्खभेण, केवइअ परिक्खेवेण पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! एग जोअणसयसहस्स छच्च सट्ठे जोअणसए आयाम-विक्खभेण, तिण्णि अ जोअणसयसह-स्साइ अट्ठारस य सहस्साइ तिण्णि अ पण्णरसुत्तरे जोअणसए परिक्खेवेण ।

—जम्बू सूत्र १४६ पृ. ४७४

[३४][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के मेरुपर्वत से सर्वाभ्यन्तर नक्षत्रमडल कितनी दूर है ?

उ०—गौतम ! (जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से) सर्वाभ्यन्तर नक्षत्रमडल ४४८२० योजन दूर है ।

[२] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से सर्ववाह्य नक्षत्रमडल कितनी दूर है ?

उ०—गौतम (जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से) सर्ववाह्य नक्षत्रमडल ४५३३० योजन दूर है ।

[३] प्र०—सर्वाभ्यन्तर नक्षत्रमडल कितना लम्वा-चौडा एव कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! ९९६४० योजन लम्वा-चौडा है और ३१५०८९ योजन से किंचित् विशेषाधिक परिधि वाला है ।

[४] प्र०—भगवन् ! सर्ववाह्य नक्षत्रमडल कितना लवा-चौडा एव कितनी परिधि वाला है ?

उ०—गौतम ! १००६६० योजन लवा-चौडा एवं ३१८३१५ योजन की परिधि वाला है ।

एक मुहूर्त में नक्षत्र की गति

[३५][१] प्र०—जया णं भते ! णक्खत्ते सव्वब्भंतरमंडल उवसंकमित्ता चार चरइ
तया ण एगमेगेण मुहुत्तेण केवइअं खेत्तं गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! पंच जोअणसहस्साइ दोण्णि य पण्णट्ठे जोअणसए अट्ठारस य भागसहस्से दोण्णि य तेवट्ठे भागसए गच्छइ, मडल एक्कवीसाए भागसहस्सेहिं णवहि अ सट्ठेहिं सएहिं छेत्ता ।

[२] प्र०—जया ण भते ! णक्खत्ते सव्वबाहिर मडल उवसकमित्ता चार चरइ
तया ण एगमेगेण मुहुत्तेण केवइअ खेत्त गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! पच जोअणसहस्साइ तिण्णि अ एगूणवीसे जोअणसए सोलस य भागसहस्सेहिं तिण्णि य पणट्ठे भागसए गच्छइ,
मडल एगवीसाए भागसहस्सेहिं णवहि अ सट्ठेहिं सएहिं छेत्ता ।

[३] प्र०—एते ण भते ! अट्ठ णक्खत्तमडला कतिहिं चदमडलेहिं समोअरति ?

उ०—गोयमा ! अट्ठहिं चदमडलेहिं समोअरति, तजहा-पढमे चदमडले, ततिए, छट्ठे, सत्तमे, अट्ठमे, दसमे, इक्कारसमे, पण्णरसमे चदमडले ।

[३५][१] प्र०—भगवन् ! जब नक्षत्र सर्वाभ्यन्तर मडल पर आरूढ होकर गति करता है तब प्रत्येक मुहूर्त्त मे कितना क्षेत्र चलता है ?

उ०—गौतम ! $५२६५\frac{१८२६३}{२१९६०}$ योजन चलता है ।

[२] प्र०—भगवन् ! जब नक्षत्र सर्वबाह्य मडल पर आरूढ होकर गति करता है तब प्रतिमुहूर्त्त कितना क्षेत्र चलता है ?

उ०—गौतम ! $५३१९\frac{१६३६५}{२१९६०}$ योजन चलता है ।

[३] प्र०—भगवन् ! ये आठ नक्षत्रमडल कितने चन्द्रमडलो के साथ मिले हुए हैं—अन्तर्गत हैं अर्थात् चन्द्र और नक्षत्रो के साधारण मडल कितने हैं ?

उ०—गौतम ! आठ चन्द्रमडलो मे अन्तर्गत होते हैं, यथा-प्रथम, तृतीय, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, दशम, एकादश और पचदश चन्द्रमडल ।

नक्षत्रों की (मंडलों में) गति

[३६][१] प्र०—एगमेगेण भते ! मुहुत्तेण णक्खत्ते केवइआइ भागसयाइ गच्छइ ?

उ०—गोयमा ! ज ज मडल उवसकमित्ता चार चरइ तस्स २ मडलपरिक्खेवस्स अट्ठारस पणतीसे भागसए गच्छइ मडल सयसहस्सेण अट्ठाणउईए अ सएहिं छेत्ता ।

—जम्बू सूत्र १४९ पृ ४७४

[३६][१] प्र०—भगवन् ! प्रतिमुहूर्त्त नक्षत्र (अपने मडल का) कितना भाग चलता है ?

उ०—गौतम ! जिस-जिस मडल पर आरूढ होकर गति करता है, उस-उस मडल की परिधि का $\frac{१८३५}{१०९८००}$ भाग चलता है ।

चन्द्र-सूर्य के नीचे और ऊपर तारो के स्थान

[३७][१] प्र०—अत्थि ण भते ! चदिम-सूरिआण हिट्ठिं पि ताराख्वा अणु पि तुल्लावि,
समेवि ताराख्वा अणुवि तुल्लावि,
उप्पिपि ताराख्वा अणु पि तुल्लावि ?

उ०—हता गोयमा ! त चेव उच्चारेयव्व ।

[२] प्र०—से केणट्ठे ण भते ! एव वुच्चइ ?

उ०—अत्थि ण जहा जहा ण तेसिं देवाण तव-नियम-बभचेराणि ऊसिआइ भवति
तहा तहा ण तेसि ण देवाण पण्णायए, तजहा अणुते वा तुल्लते वा, जहा जहा ण तेसिं देवाण तव-

नियम-बभचेराणि णो ऊसिआइं भवति तहा तहा ण पण्णायए, तंजहा-अणुते वा तुल्लते वा ।

—जम्बू० सूत्र १६२ पृ० ५३१
—सूर्य० सूत्र ६० पृ० २५६
—चन्द्र० „ „
—जीवा० सूत्र १६३ पृ० ३७५

[३७][१] प्र०—भगवन् ! क्या चन्द्र-सूर्य के नीचे छोटे एव तुल्य तारे हैं ? (चन्द्र-सूर्य के) समकक्ष छोटे एव तुल्य तारे है ? तथा ऊपर छोटे एव तुल्य तारे हैं ?

उ०—हा, गौतम ! ऐसा ही है।

[२] प्र०—भगवन् ! ऐसा क्यो ?

उ०—उन देवो ने (पूर्वभव मे) जिस-जिस प्रकार के उत्कृष्ट तप, नियम और ब्रह्मचर्य आदि का पालन किया है, उस-उस प्रकार की उन देवो को (ऋद्धि आदि) प्राप्त हुई है, यथा—छोटे अथवा तुल्य (विमान)। जिस-जिस प्रकार उन देवो के तप, नियम, ब्रह्मचर्य आदि उत्कृष्ट नही होते, उस-उस प्रकार उन देवो को (ऋद्धि आदि की) प्राप्ति नही होती है, यथा-छोटे अथवा तुल्य (विमान)।

ताराओं का परस्पर अन्तर

[३८][१] प्र०—जबुद्दीवे ण भते ! दीवे ताराए अ ताराए अ केवइए अवाहाए अतरे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! दुविहे—वाघाइए अ निव्वाघाइए अ।
निव्वाघाइए जहण्णेण पचधणुसयाइ उक्कोसेण दो गाउयाइ,
वाघाइए जहण्णेण दोण्णि छावट्ठे जोअणसए,
उक्कोसेण वारस जोअणसहस्साइं, दोण्णि अ बायाले जोअणसए ताराख्वस्स २ अवाहाए अतरे पण्णत्ते ।

—जबू०, सूत्र १६७ पृ० ५३१
—जीवा० सूत्र २०१ पृ० ३८३
—सूर्य० सूत्र ६६ पृ० २६५
—चन्द्र० „

[३८][१] प्र०—भगवन् ! जम्बूद्वीप मे एक तारे का दूसरे तारे से कितना अन्तर है ?

उ०—गौतम ! (यह अन्तर) दो प्रकार का है—व्याघाती और निर्व्याघाती। निर्व्याघाती अन्तर जघन्य पाच सौ धनुप एव उत्कृष्ट दो कोस है। व्याघाती अन्तर जघन्य २६६ योजन एव उत्कृष्ट १२२४२ योजन है। यही तारागण मे परस्पर अन्तर है।

उपरितन तारक-परिभ्रमण

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए वहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ णवजोयणसताइं उद्धं अवहाए उवरिल्ले तारारूवे चार चरति ।

—ठा. ६, सुत्र ६७० पृ. ६७२

इस रत्नप्रभा पृथिवी के अति सम एव रमणीय भूमिभाग से नौ सौ योजन ऊपर अबाध रूप से ऊपर के तारे परिभ्रमण करते हैं।

तारक-ग्रह

छ तारग्गहा पण्णत्ता, तजहा—

सुक्के, बुहे, बहस्सति, अगारए, सनिच्चरे, केतू ।

—ठा ६, सूत्र ४८१ पृ ३३६

छह तारक-ग्रह अर्थात् तारा के आकार के ग्रह कहे गए हैं। वे इस प्रकार हैं—

(१)शुक्र (२)बुध (३)बृहस्पति (४)अगारक (मगल) (५)शनैश्चर और (६)केतु ।

शुक्रमहाग्रह की वीथियां

सुक्कस्स ण महागहस्स णव वीहीओ पण्णत्ताओ, तजहा—

(१)हयवीही (२)गयवीही (३)णागवीही (४) वसहवीही (५) गोवीही (६) उरगवीही (७) अयवीही (८) मियवीही (९) वेसाणरवीही ।

—ठा ९, सूत्र ६९९ पृ ४४४

शुक्र महाग्रह की नौ वीथियाँ (क्षेत्रभाग) हैं, यथा—

१–हयवीथी, २–गजवीथी, ३–नागवीथी, ४–वृषभवीथी, ५–गोवीथी, ६–उरगवीथी, ७–अजवीथी, ८–मृगवीथी, ९–वैश्वानरवीथी ।

शुक्र का उदय-अस्तमन

सुक्के ण महग्गहे अवरेण उदिए समाणे एगूणवीस णक्खत्ताइ सम चार चरित्ता अवरेण अत्थमण उवागच्छइ ।

—सम १९ सूत्र ३

शुक्र महाग्रह पश्चिम मे उदित होकर उन्नीस नक्षत्रो के साथ विचरण करके पश्चिम मे ही अस्त होता है ।

१—(क) सम ९ सूत्र ७

(ख) ,, ११२ सूत्र ५

ऊर्ध्वलोक

ऊर्ध्वलोक : भेद, संस्थान, मध्य

[१] [१] प्र०—उड्ढलोयखेत्तलोए ण भते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! पन्नरसविहे पण्णते तजहा—

सोहम्मकप्प-उड्ढलोयखेत्तलोए—जाव—अच्चुयउड्ढलोए, गेविज्जविमाण-उड्ढलोए, अनुत्तरविमाण-उड्ढलोए, ईसिपब्भारपुढवि-उड्ढलोगखेत्तलोए ।

[१] [१] प्र०—भगवन् ! ऊर्ध्वलोकक्षेत्रलोक कितने प्रकार का है ?

गौतम ! पन्द्रह प्रकार का है, यथा—सौधर्मकल्प-ऊर्ध्वलोकक्षेत्रलोक-यावत्-अच्युत-उर्ध्वलोक, ग्रैवेयक-विमान-ऊर्ध्वलोक, अनुत्तरविमान-ऊर्ध्वलोक, ईषप्राग्भारपृथ्वी-ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक ।

[२] [१] प्र०—उड्ढलोयखेत्तलोए ण भते किंसठिए पण्णत्ते ?

उ०—उड्ढमुइगाकारसठिए पण्णत्ते ।

—विवा भाग ३ श ११ उ १० प्र ५, पृ २२८-२९

[२] [१] प्र०—भगवन् ! ऊर्ध्वलोकक्षेत्रलोक किस आकार का है ?

उ०—गौतम ! खडे मृदग के आकार का है ।

[३] [१] प्र०—कहि ण भते ! उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! उप्पि सणकुमार-माहिंदाणं कप्पाण, हेट्ठिं बभलोए कप्पे रिट्ठविमाणे पत्थडे एत्थ णं उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ।

—विवा० भाग ३ श० १३ उ० ४ प्र० ८ पृ० ३१४

[३] [१] प्र०—भगवन् ! ऊर्ध्वलोक के आयाम का मध्य कहाँ है ?

उ०—गौतम ! सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्पो के ऊपर तथा ब्रह्मलोक नामक कल्प के नीचे रिष्ट नामक तीसरे प्रतर मे ऊर्ध्वलोक के आयाम का मध्य है ।

वैमानिक देवों के स्थान

[४] [१] प्र०—कहि ण भते ! वेमाणियाणं देवाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?

कहि ण भते ! वेमाणिया देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं,

चदिम-सूरिय-गह-नक्खत्त-तारारूवाण बहूइ जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइ, बहूइं जोयणसय-सहस्साइ, बहुगाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढ दूर उप्पइत्ता,

एत्थ ण सोहम्मी-साण-सणकुमार-माहिंद-बभलोय-लंतग-महासुक्क-सहस्सार-आणय-पाणय-आरण-च्चुयगेवेज्ज-णुत्तरेसु एत्थ ण वेमाणियाण देवाण,

चउरासीइ विमाणावाससयसहस्सा, सत्ताणउइ च सहस्सा, तेवीस च विमाणा भवन्तीति मक्खाय ।[१]

ते ण विमाणा सव्वरयणामया, अच्छा, सण्हा, लण्हा, घट्ठा, मट्ठा, नीरया, निम्मला, निप्पका, निक्कडच्छाया, सप्पभा सस्सिरिया, सउज्जोया, पासादीया, दरिसणिज्जा, अभिरूवा, पडिरूवा ।

१—सम० ८४, सूत्र १७

एत्थ ण वेमाणियाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ।
तिसु वि लोयस्स असखेज्जइभागे ।[1]

प्रज्ञा० स्थान २, पृ० ३००

[४] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त वैमानिक देवो के स्थान कहाँ कहे हैं ? भगवन् ! वैमानिक देव कहाँ निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अति सम और रमणीय भूमिभाग के ऊपर, चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और ताराओ सवधी वहुत सैकडो योजन, वहुत हजारो योजन, वहुत लाखो योजन, वहुत करोडो योजन, वहुत कोडाकोडी योजन ऊपर दूर जाकर वहाँ सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्मलोक, लान्तक, महाशुक्र, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत, ग्रैवेयक और अनुत्तर (विमानो) मे वैमानिक देवो के चौरासी लाख सत्तानवे हजार तेईस विमानावास हैं, ऐसा कहा है ।

वे विमान सर्वरत्नमय, स्वच्छ, कोमल, चिकने, घिसे हुए, साफ किए हुए, रजहीन, निर्मल, निष्पक, निरावरण दीप्ति वाले, प्रभायुक्त, शोभायुक्त, उद्योतयुक्त, प्रसादजनक, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप है ।

वहाँ पर्याप्त और अपर्याप्त देवो के स्थान हैं । तीनो (उपपात, समुद्घात और स्वस्थान) की अपेक्षा से वे लोक के असख्यातवें भाग मे हैं ।

सौधर्म देवों के स्थान

[५] [१] प्र०—कहि ण भते ! सोहम्मगदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भते ! सोहम्मगदेवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! जवुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स दाहिणेण,
इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ—जाव—उड्ढ दूर उप्पइत्ता एत्थ णं सोहम्मे णाम कप्पे पन्नत्ते ।
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविस्थिन्ने, अद्धचदसठाणसठिए[2], अच्चिमालिभासरासिवण्णाभे, असखेज्जाओ जोयणकोडीओ, असखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयाम-विक्खभेण,
सव्वरयणामए, अच्छे—जाव—पडिरूवे ।
तत्थ ण सोहम्मगदेवाण बत्तीसविमाणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खाय ।[3]
ते ण विमाणा सव्वरयणामया अच्छा—जाव—पडिरूवा ।
तेसि ण विमाणाण बहुमज्झदेसभाए पच वडिसया पन्नत्ता, तजहा—
असोगवडिसए, सत्तवण्णवडिसए, चपगवडिसए चूयवडिसए, मज्झे इत्थ सोहम्मवडिसए ।[4]
ते ण वडिसया सव्वरयणामया अच्छा—जाव—पडिरूवा ।[5]
एत्थ ण सोहम्मगदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ।
तीसु वि लोगस्स असखिज्जइभागे ।

—प्रज्ञा० स्थान २, पृ० ३०२

१—जीवा० सूत्र २०७ पृ० ३८६

२—ठा. ४ उ ४ सूत्र ३८३ पृ० २७४

३—सम ३२ सूत्र ४

४—सम ६५ सूत्र ३

५—सोहम्मवडिसगे ण विमाणे ण अद्धतेरसजोयणसयसहस्साइ आयाम-विक्खभेण पण्णत्ते एव ईसाणवडिसगे वि ।

—सम १३ सूत्र ३

[५] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त सौधर्म देवो के स्थान कहा हैं ? सौधर्मक देव कहा निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से दक्षिण मे, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अति सम एव रमणीय भूमिभाग से—यावत्—ऊपर दूर जाकर वहा सौधर्म नामक कल्प कहा गया है। वह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा, उत्तर-दक्षिण मे चौडा, अर्धचन्द्र के आकार का तथा किरणो की माला और कान्ति के समूह जैसे वर्ण का है। उसकी लम्बाई और चौडाई असख्यात कोडाकोडी योजन की है। परिधि असख्यात कोडाकोडी योजन की है। वह सर्वरत्नमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप है। वहा सौधर्म देवो के बत्तीस लाख विमान कहे गए हैं। वे विमान सर्वरत्नमय—यावत्—प्रतिरूप है। उन विमानो के बीचोबीच पाच अवतसक (विमान) कहे हैं, यथा—अशोकावतसक, सप्तपर्णावतसक, चम्पकावतसक, चूतावतसक और उनके मध्य मे सौधर्मावतसक है। वे अवतसक सर्वरत्नमय, स्वच्छ—यावत्—प्रतिरूप हैं। वहा पर्याप्त और अपर्याप्त सौधर्मक देवो के स्थान है। उपपात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा से लोक के असख्यातवें भाग मे है।

ईशान देवों के स्थान

[६] [१] प्र०—कहि ण भंते ! ईसाणाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भते ! ईसाणगदेवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! जबुद्दीवे दीवे मदरस्स पव्वयस्स उत्तरेण, इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चदिम-सूरिय-गह-नक्खत्त-तारारूवाण बहूइ जोयणसयाइं, बहूइ जोयणसहस्साइ—जाव—उड्ढ उप्पइत्ता एत्थ ण ईसाणे णाम कप्पे पन्नत्ते। पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणवित्थिण्णे,
एव जहा सोहम्मे—जाव—पडिरूवे।
तत्थ ण ईसाणगदेवाण अट्ठावीस विमाणावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खाय[1]।
ते णं विमाणा सव्वरयणामया—जाव—पडिरूवा।
तेसि ण बहुमज्झदेसभाए पच वडिंसया पण्णत्ता,
तजहा—अकवडिंसए, फलिहवडिंसए, रयणवडिंसए, जातरूववडिंसए, मज्झे इत्थ ईसाणवडिंसए[2]।
ते ण वडिंसया सव्वरयणामया—जाव—पडिरूवा।
एत्थ ण ईसाणगदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता।
तीसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे।

—प्रज्ञा० स्थान २, पृ ३०५-६

[६] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त ईशान देवो के स्थान कहा कहे हैं ? ईशानक देव कहा निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से उत्तर मे, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अत्यन्त सम एव रमणीय भूमिभाग से ऊपर चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र और ताराओ सबधी बहुत सैकडो योजन, बहुत हजारो योजन—यावत्—ऊपर जाकर वहा ईशान नामक कल्प कहा है। वह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा और उत्तर-दक्षिण मे चौडा है। इस प्रकार सौधर्म कल्प के समान—यावत्—प्रतिरूप है। वहा ईशानक देवो के अट्ठाईस लाख विमानावास हैं, ऐसा कहा गया है। वे विमान सर्वरत्नमय—यावत्—

१—(क) सम. २८ सूत्र ४
(ख) सम ६० सूत्र ६

२—देखो टिप्पणी ३ पृ. ४२२

प्रतिरूप है। उनके मध्य मे पाच अवतसक (विमान) हैं, यथा—अंकावतसक, स्फटिकावतसक, रत्नावतसक, जातरूपावतसक और मध्य मे ईशानावतसक।
वे अवतसक सर्वरत्नमय—यावत्—प्रतिरूप हैं। यहा पर्याप्त और अपर्याप्त ईशानक देवो के स्थान है। वे (उपपात आदि) तीनों अपेक्षाओं से लोक के असख्यातवें भाग मे हैं।

सनत्कुमारदेवों के स्थान

[७] [१] प्र०—कहि ण भते ! सणकुमारदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भते ! सणकुमारा देवा परिवमति ?

उ०—गोयमा ! सोहम्मस्स कप्पस्स उप्पि सपक्खि सपडिदिसि वहूइ जोयणाइ, बहूइं जोयणसयाइं, वहूइ जोयणसहस्साइ, वहूइ जोयणसयसहस्साइ, वहुगाओ जोयणकोडीओ, वहुगाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढ दूर उप्पइत्ता, एत्य ण सणकुमारे णाम कप्पे पन्नत्ते।
पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविस्थिण्णे, जहा सोहम्मे—जाव—पडिरूवे।
तत्य ण सणकुमाराण देवाण वारस विमाणावाससयसहस्सा भवन्तीतिमक्खाय। ते ण विमाणा सव्वरयणामया-जाव-पडिरूवा।
तेसि ण विमाणाण वहुमज्झदेसभागे पच वडिसगा पन्नत्ता, तजहा-असोयवडिसए, सत्तवन्नवडिसए, चपगवडिसए, चूयवडिसए, मज्झे एत्य सणकुमारवडिसए। ते ण वडिसया सव्वरयणामया अच्छा-जाव-पडिरूवा।
एत्य ण सणकुमारदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता, तिसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे।

—प्रज्ञा० २, पृ० ३०८-९

[७] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त सनत्कुमार देवों के स्थान कहाँ हैं ?
भगवन् ! सनत्कुमार देव कहाँ निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! सौधर्म कल्प के ऊपर समान दिशा और समान विदिशा मे बहुत योजन, बहुत सौ योजन, बहुत हजार योजन, बहुत लाख योजन, बहुत करोड योजन, बहुत कोडाकोडी योजन ऊपर दूर जाने पर सनत्कुमार नामक कल्प है।
वह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा, तथा उत्तर-दक्षिण मे चौडा है जैसे सौधर्म कल्प, यावत्-प्रतिरूप है।
वहाँ सनत्कुमार देवो के बारह लाख विमान हैं, ऐसा कहा गया है। वे विमान सर्वरत्नमय-यावत्-प्रतिरूप हैं।
उन विमानो के बीचोबीच पाच अवतसक हैं, यथा-अशोकावतसक, सप्तपर्णावतसक, चम्पकावतसक, चूतावतसक और इनके मध्य मे सनत्कुमारावतसक। ये अवतसक सर्वरत्नमय, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप हैं।
यहाँ पर्याप्त और अपर्याप्त सनत्कुमार देवो के स्थान हैं। तीनो (उपपात, समुद्घात और स्वस्थान) की अपेक्षा से लोक के असख्यातवें भाग मे हैं।

महेन्द्र देवो के स्थान

[८] [१] प्र०—कहि ण भते ! माहिंददेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भते ! माहिंदगदेवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! ईसाणस्स कप्पस्स उप्पि सपक्खि सपडिदिसि, वहूइ जोयणाइं-जाव-वहुयाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढ दूर उप्पइत्ता एत्य ण माहिंदे नाम कप्पे पन्नत्ते, पाईण-पडीणायए-जाव-एव जहेव सणकुमारे।

नवरं-अट्ठ विमाणावाससयसहस्सा ।[1]

वडिंसया जहा ईसाणे ।

नवर-मज्झे इत्थ माहिंदवडेंसए ।

—प्रज्ञा० स्थान २, पृ० ३१०

[८] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त माहेन्द्र देवो के स्थान कहाँ हैं ? माहेन्द्रक देव कहाँ रहते है ?

उ०—गौतम ! ईशान कल्प के ऊपर समान दिशा और समान विदिशा मे बहुत योजन-यावत्-बहुत कोटाकोटी योजन दूर जाकर वहाँ माहेन्द्र नामक कल्प है। वह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा-यावत्-सनत्कुमार जैसा है। विशेष यह कि इसमे आठ लाख विमान हैं। अवतसक ईशान के समान हैं किन्तु यहा मध्य मे माहेन्द्राव्तसक है ।

ब्रह्मलोक देवों के स्थान

[९] [१] प्र०—कहि ण भते ! बंभलोगदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ?

कहि ण भते ! बभलोगदेवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! सणकुमार-माहिंदाण कप्पाण उप्पि सपक्खि सपडिदिसि बहूइ जोयणाइं-जाव-उप्पइत्ता एत्थ ण बभलोए नाम कप्पे पण्णत्ते,

पाईण-पडीणायए, उदीण-दाहिणविच्छिण्णे, पडिपुण्णचदसठाणसठिए, अच्चिमालीभासरासिप्पभे, अवसेस जहा सणकुमाराण, नवर-चत्तारि विमाणावाससयसहस्सा,[2]

वडिंसा जहा सोहम्मवडिंसया, नवर-मज्झे इत्थ बंभलोयवडिंसए ।

एत्थ ण बभलोगदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ।

—प्रज्ञा० स्थान २, पृ० ३१०–११

[९] [१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त ब्रह्मलोक देवो के स्थान कहाँ हैं ?

भगवन् ! ब्रह्मलोक देव कहाँ निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्प के ऊपर समान दिशा और समान विदिशा मे बहुत योजन-यावत्-जाने पर यहाँ ब्रह्मलोक नामक कल्प है। वह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा, उत्तर-दक्षिण मे विस्तीर्ण, परिपूर्ण चन्द्रमा के आकार का तथा किरणो की माला के समान कान्तिसमूह से युक्त है। शेष सब सनत्कुमार कल्प के समान जानना चाहिए, विशेषता यह है कि यहाँ चार लाख विमानावास है। अवतसक सौधर्मकल्प के अवतसको के समान हैं किन्तु यहाँ मध्य मे ब्रह्मलोकावतसक है। यहाँ पर्याप्त और अपर्याप्त ब्रह्मलोक देवो के स्थान कहे हैं।

तमस्काय

[१०][१] प्र०—किमिय भते ! तमुक्काएत्ति पव्वुच्चति ?

किं पुढवी तमुक्काए त्ति पव्वुच्चति, आउ तमुक्काए त्ति पव्वुच्चति ?

उ०—गोयमा ! नो पुढवी तमुक्काए त्ति पव्वुच्चति, आउ तमुक्काए त्ति पव्वुच्चइ ।

[२] प्र०—से केणट्ठेण ?

उ०—गोयमा ! पुढविकाए णं अत्थेगइए सुभे देस पकासेइ, अत्थेगइए देस नो पकासेइ—से तेणट्ठे णं।

१—सम १३१ सूत्र १

२—सम ६४ सूत्र ५

[३] प्र०—तमुक्काए ण भते ! कहि समुट्ठिए, कहि सनिविट्ठिए ?

उ०—गोयमा ! जवूदीवस्स दीवस्स वहिया तिरियमसखेज्जे दीवसमुद्दे वीईवइत्ता, अरुणवरस्स दीवस्स वाहिरिल्लाओ वेइयताओ अरुणोदय ।समुद्द वायालीस जोयणसहस्साइ ओगाहित्ता उवरिल्लाओ जलताओ एगपएसियाए सेढीए, एत्थ ण तमुक्काए समुट्ठिए

सत्तरस एक्कवीसे जोयणसए उड्ढ उप्पइत्ता तओ पच्छा तिरिय पवित्थरमाणे २ सोहम्मी-साण-सणकुमार-माहिंदे चत्तारि वि कप्पे आवरित्ता[1] ण उड्ढ पि य ण वभलोगे कप्पे रिट्ठविमाणपत्थड सपत्ते, एत्थ ण तमुक्काए सन्निविट्ठिए ।

[१०][१] प्र०—भगवन् ! यह तमस्काय क्या कहलाता है ? क्या पृथिवी तमस्काय कहलाती है ? क्या अप् (जल) तमस्काय कहलाता है ?

उ०—गौतम ! पृथिवी तमस्काय नही कहलाती, अप् तमस्काय कहलाता है ।

[२] प्र०—(भगवन् !) किस कारण से ?

उ०—कोई पृथ्वीकाय ऐसा शुभ होता है जो देश-भाग को प्रकाशित करता है, कोई देश को प्रकाशित नही करता, इस कारण से ।

[३] प्र०—भगवन् ! तमस्काय कहा से उठा है और कहा उसका अत होता है ?

उ०—गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के वाहर, तिर्छे असख्यात द्वीप-समुद्रो को लाघने पर, अरुणवरद्वीप की वाहरी वेदिका के अन्त से अरुणोदय समुद्र मे वयालीस हजार योजन अवगाहन करके, ऊपरी जलान्त से एक प्रदेश की श्रेणी से यहा तमस्काय समुत्थित होता है—प्रारम्भ होता है । फिर १७२१ योजन ऊपर उठकर तत्पश्चात् विस्तार पाता-पाता सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार और माहेन्द्र, इन चारो कल्पों को आवृत करके ऊँचे ब्रह्मलोक कल्प मे रिष्ट विमान के पाथडे को प्राप्त हुआ है । यहा तमस्काय का अन्त होता है ।

तमस्काय का संस्थान विस्तार आदि

[११][१] प्र०—तमुक्काए ण भते ! किंसठिए पण्णत्ते ?

उ०—गोयमा ! अहे मल्लगमूलसठिए, उप्पि कुक्कुडपजरसठिए पण्णत्ते ।

[२] प्र०—तमुक्काए ण भते ! केवतियं विक्खभेण, केवतिय परिक्खेवेण पन्नत्ते ?

उ०—गोयमा ! दुविहे पन्नत्ते, तजहा—सखेज्जवित्थडे य, असखेज्जवित्थडे य,

तत्थ ण जे से सखेज्जवित्थडे से ण सखेज्जाइ जोयणसहस्साइ विक्खभेण, असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ परिक्खेवेण पन्नत्ते,

तत्थ ण जे से असखेज्जवित्थडे से ण असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ विक्खभेण, असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ परिक्खेवेण पन्नत्ते ।

[३] प्र०—तमुक्काए ण भते ! केमहालए पन्नत्ते ?

उ०—गोयमा ! अय ण जंवुद्दीवे दीवे सव्वदीव-समुद्दाण सव्वब्भतराए,—जाव—परिक्खेवेण पन्नत्ते,

देवे ण महिड्ढिए—जाव—महाणुभावे 'इणमेव इणमेव' त्ति कट्टु केवलकप्प जवूदीव दीव तिहि

1—स्था. ४ उ २ सूत्र २९१ पृ २०५

अच्छरानिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्टित्ता णं हव्वं आगच्छेज्जा,
से णं देवे ताए उक्किट्ठाए तुरियाए—जाव—देवगईए वीईवयमाणे २—जाव—एकाहं वा, दुयाहं वा, तियाहं वा, उक्कोसेण छम्मासे वीईवएज्जा,
अत्थेगतिय तमुक्काय वीईवइज्जा, अत्थेगतियं नो तमुक्काय वीतिवएज्जा,
एमहालए ण गोयमा ! तमुक्काए पन्नत्ते [1] ।

[११][१] प्र०—भगवन् ! तमस्काय किस आकार का है ?

उ०—गौतम ! नीचे मल्लकमूल—सिकोरे के नीचे के भाग के आकार का और ऊपर मुर्गा के पीजरे के आकार का है ।

[२] प्र०—भगवन् ! तमस्काय का विष्कभ—विस्तार और परिक्षेप कितना है ?

उ०—गौतम ! (तमस्काय) दो प्रकार का है, यथा—सख्येयविस्तृत और असख्येयविस्तृत।
इसमे जो सख्येयविस्तृत है उसका विष्कभ सख्यात हजार योजन का है और परिक्षेप असख्यात हजार योजन का है । इसमे जो असख्येयविस्तृत है उसका विष्कभ असख्यात योजन का और परिक्षेप असख्यात योजन का है ।

[३] प्र० —भगवन् ! तमस्काय कितना विशाल है ?

उ०—गौतम ! यह जम्बूद्वीप नामक द्वीप सर्व द्वीप-समुद्रो के बीच मे है—यावत्—परिधि वाला कहा गया है । कोई महर्द्धिक—यावत्—महानुभाव देव 'ये चला २' ऐसा कह कर सम्पूर्ण जम्बूद्वीप नामक द्वीप के तीन चुटकियो मे सत्ताईस बार चक्कर काट कर शीघ्र आ जाय, ऐसा देव उस उत्कृष्ट, त्वरित—यावत्—देवगति से चलता-चलता—यावत्—एक दिन, दो दिन या तीन दिन, उत्कृष्ट छह मास तक चलता रहे तो किसी तमस्काय तक पहुचे, किसी तमस्काय तक न पहुचे । गौतम ! तमस्काय इतना विशाल है ।

तमस्काय संबंधी शेष वक्तव्यता

[१२] [१] प्र०—अत्थि ण भते ! तमुकाए गेहा इ वा, गेहावणा इ वा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[२] प्र०—अत्थि णं भते ! तमुकाए गामा इ वा-जाव-सन्निवेसा इ वा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[३] प्र०—अत्थि णं भते ! तमुकाए उराला वलाहया ससेयति, सम्मुच्छंति, वासं वासंति ?
उ०—हंता, अत्थि ।

[४] प्र०—त भते ! किं देवो पकरेति, असुरो पकरेति, नागो पकरेति ?
उ०—गोयमा ! देवो वि पकरेति, असुरो वि पकरेति, णागो वि पकरेति ।

[५] प्र०—अत्थि णं भते ! तमुक्काए बादरे थणियसद्दे ? बादरे विज्जुए ?
उ०—हता, अत्थि ।

[६] प्र० – त भते ! किं देवो पकरेति० ?
उ०—तिन्नि वि पकरेंति ।

१—भग. भा ३ श १४ उ. २ पृ. ३४४

[७] प्र०—अत्थि ण भंते ! तमुकाए बादरे पुढविकाए, बादरे अगणिकाए ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे, णण्णत्थ विग्गहगतिसमावन्नएण ।

[८] प्र०—अत्थि ण भंते ! तमुकाए चंदिम-सूरिय-गहगण-णक्खत्त तारारूवा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे, पलियस्स ओ पुण (अत्थि) ।

[९] प्र०—अत्थि ण भंते ! तमुकाए चंदाभा ति वा, सूराभा ति वा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे, कादूसणिया पुण सा ।

[१०] प्र०—तमुक्काए ण भंते ! केरिसए वन्नएण पन्नत्ते ?
उ०—गोयमा ! काले कालावभासे, गंभीर-हरिसलोमजणणे, भीमे, उत्तासणए, परमकिण्हे वण्णे पन्नत्ते।
देवे ण अत्थेगतिए जे ण तप्पढमयाए पासित्ता ण खुभाएज्जा, अहे ण अभिसमागच्छेज्जा, तओ पच्छा सीहं-सीहं, तुरियं-तुरियं खिप्पामेव वीतीवएज्जा ।

[११] प्र०—तमुक्कायस्स ण भंते ! कति नामधेज्जा पन्नत्ता ?
उ०—गोयमा ! तेरस नामधेज्जा पन्नत्ता, तंजहा—
तमे ति वा, तमुकाए ति वा, अंधकारे इ वा, महांधकारे इ वा, लोगंधकारे इ वा, लोगतमिसे इ वा, देवंधकारे इ वा, देवतमिसे इ वा, देवरण्णे इ वा, देववूहे इ वा, देवफलिहे इ वा, देवपडिक्खोभे इ वा, अरुणोदए इ वा समुद्दे[1] ।

[१२] प्र०—तमुक्काए ण भंते ! किं पुढविपरिणामे, आउपरिणामे, जीवपरिणामे, पोग्गलपरिणामे ?
उ०—गोयमा ! नो पुढविपरिणामे, आउपरिणामे वि, जीवपरिणामे वि, पोग्गलपरिणामे वि ।

[१३] प्र०—तमुक्काए ण भंते ! सव्वे पाणा भूया जीवा सत्ता पुढवीकाइयत्ताए-जाव-तसकाइयत्ताए उववन्नपुव्वा ?
उ०—हंता, गोयमा ! असतिं, अदुवा अणंतखुत्तो,
णो चेव ण बादरपुढविकाइयत्ताए बादरअगणिकाइयत्ताए वा ।
—भग भा २ श ६ उ ५ पृ ३०१–३०६

[१२] [१] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे गृह या गृहापण हैं ?
उ०—यह अर्थ समर्थ नही अर्थात् नही हैं ।

[२] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे ग्राम–यावत्–सन्निवेश हैं ।
उ०—यह अर्थ समर्थ नही ।

[३] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे उदार मेघ सस्वेद को प्राप्त होते हैं, सम्मूर्छित होते है, वर्षा करते हैं ?
उ०—हाँ ऐसा है ।

[४] प्र०—भगवन् ! उसे क्या देव करता है, असुर करता है या नाग करता है ?
उ०—गौतम ! देव भी करता है, असुर भी करता है, नाग भी करता है ।

१—तमुक्कायस्स ण चत्तारि नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा—(१) तमिति वा (२) तमुक्काएति वा (३) अंधकारेति वा (४) महंधकारेति वा ।
तमुक्कायस्स ण चत्तारि नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–(५-१) लोगंधकारेति वा (६-२) लोकतमसेति वा (७-३) देवंधगारेति वा (८-४) देवतमसेति वा ।
तमुक्कायस्स ण चत्तारि नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–(९-१) वातफलिहेति वा (१०-२) वातफलिहखोभेति वा (११ ३) देवरन्नेति वा (१२-४) देववूढेति वा । —स्था ४ उ २ सूत्र २९१ पृ २०५

[५] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे बादर स्तनित शब्द (मेघध्वनि) है ? बादर विद्युत् है ?

उ०—हाँ, है।

[६] प्र०—भगवन् ! उसे क्या देव करता है ?

उ०—तीनो (देव, असुर, नाग) करते है।

[७] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे बादर पृथ्वीकाय और बादर अग्निकाय है ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही है, विग्रहगतिसमापन्न के सिवाय अर्थात् विग्रहगतिप्राप्त जीव वहाँ हो सकता है।

[८] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे चन्द्र, सूर्य, ग्रहगण, नक्षत्र एव तारारूप हैं ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही, किन्तु चन्द्र आदि उसके पार्श्व मे हैं।

[९] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे चन्द्रमा की आभा और सूर्य की आभा है ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही है, क्योकि (वह प्रभा तमस्काय मे है) किन्तु आत्मा को दूषित करने वाली है ।

[१०] प्र०—भगवन् ! तमस्काय का वर्ण कैसा है ?

उ०—गौतम ! काला, काली कान्ति वाला, गभीर, रोगटे खडा करने वाला, भयानक, त्रासजनक और अत्यन्त कृष्ण है। कोई-कोई देव भी उसे देखकर पहले-पहल क्षुब्ध हो जाता है। कदाचित् कोई देव तमस्काय मे प्रवेश करता है तो उसके पश्चात् शरीर की त्वरा और मन की त्वरा से जल्दी ही उसे पार कर जाता है।

[११] प्र०—भगवन् ! तमस्काय के कितने नाम हैं ?

उ०—गौतम ! तेरह नाम कहे गए है, यथा—(१) तम (२) तमस्काय (३) अन्धकार (४) महान्धकार (५) लोकान्धकार (६) लोकतमिस्र (७) देवान्धकार (८) देवतमिस्र (९) देवारण्य (१०) देवव्यूह (११)देवपरिघ (१२) देवप्रतिक्षोभ और (१३) अरुणोद समुद्र।

[१२] प्र०—भगवन् ! तमस्काय पृथिवी का परिणमन है, जल का परिणमन है, जीव का परिणमन है या पुद्गल का परिणमन है ?

उ०—गौतम ! पृथिवी का परिणमन नही है, जल का परिणमन है, जीव का भी परिणमन है, पुद्गल का भी परिणमन है।

[१३] प्र०—भगवन् ! तमस्काय मे सर्व प्राण, भूत, जीव और सत्व, पृथ्वीकाय के रूप मे—यावत्—त्रसकाय के रूप मे पहले उत्पन्न हुए हैं ?

उ०—हाँ गौतम ! अनेक वार अथवा अनन्त वार उत्पन्न हुए है, किन्तु बादर पृथ्वीकाय अथवा बादर अग्निकाय के रूप मे नही।

[१३][१] प्र०—कइ ण भते ! कण्हराईओ पन्नत्ता ?

उ०—गोयमा ! अट्ठ कण्हराईओ पन्नत्ताओ।

[२] प्र०—कहि ण भते ! एयाओ अट्ठ कण्हराईओ पन्नत्ताओ ?

उ०—गोयमा ! उप्पि सणकुमार-माहिंदाणं कप्पाण,

हिट्ठि बभलोए कप्पे (अ) रिट्ठे विमाणपत्थडे,

एत्य ण अक्खाडगसम चउरस-सठाणसठियाओ अट्ठ कण्हराईओ पन्नत्ताओ, तजहा–
पुरत्यिमेण दो, पच्चत्यिमेण दो, दाहिणेण दो, उत्तरेण दो,
पुरत्यिमऽब्भतरा कण्हराई दाहिण-वाहिर कण्हराइ पुट्ठा,
दाहिणऽब्भतरा कण्हराई पच्चत्यिम-वाहिर कण्हराइ पुट्ठा,
पच्चत्यिमऽब्भतरा कण्हराई उत्तर-वाहिर कण्हराइ पुट्ठा,
उत्तरमब्भतरा कण्हराई पुरत्यिम वाहिर कण्हराइ पुट्ठा,
दो पुरत्यिम-पच्चत्यियाओ वाहिराओ कण्हराईओ छलताओ,
दो उत्तर-दाहिणवाहिराओ कण्हराईओ तसाओ,
दो पुरत्यिम पच्चत्यिमाओ अब्भितराओ कण्हराइओ चउरसाओ,
दो उत्तर-दाहिणाओ अब्भितराओ कण्हराइओ चउरसाओ ।
पुव्वाऽवरा छलसा, तसा पुण दाहिणुत्तरा वज्झा ।
अब्भितर चउरस, सव्वा वि य कण्हरातीओ ॥

[३] प्र०—कण्हराईओ ण भते ! केवतिय आयामेण, केवइय विक्खभेण, केवतिय परिक्खेवेण पन्नत्ता ?
उ०—गोयमा ! असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ आयामेण,
असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ विक्खभेण,
असखेज्जाइ जोयणसहस्साइ परिक्खेवेण पन्नत्ताओ ।

[४] प्र०—कण्हराईओ ण भते ! केमहालियाओ पन्नत्ताओ ?
उ०—गोयमा ! अय ण जबुद्दीवे दीवे-जाव-अद्धमास वीईवएज्जा, अत्येगइय कण्हराइ वीईवएज्जा,
अत्येगइय कण्हराइ णो वीईवएज्जा,
एमहालियाओ ण गोयमा ! कण्हराईओ पन्नत्ताओ ।

[५] प्र०—अत्थि ण भते ! कण्हराईसु गेहा इ वा, गेहावणा इ वा ?
उ०—णो इणट्ठे समट्ठे ।

[६] प्र०—अत्थि ण भते ! कण्हराइसु गामा इ वा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[७] प्र०—अत्थि ण भते ! कण्हराईण उराला बलाहया ससेयति, सम्मुच्छंति, वास वासति ?
उ०—हता, अत्थि ।

[८] प्र०—त भते ! किं देवो पकरेति, असुरो पकरेति, नागो पकरेति ?
उ०—गोयमा ! देवो पकरेति, नो असुरो, नो नागो पकरेइ ।

[९] प्र०—अत्थि ण भते ! कण्हराईसु वादरे यणियसद्दे ?
उ०—जहा उराला तहा ।

[१०] प्र०—अत्थि ण भते ! कण्हराईसु वादरे आउकाए, बादरे अगणिकाए, बादरे वणस्सइकाए ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे, णण्णत्य विग्गहगतिसमावन्नण ।

[११] प्र०—अत्थि ण चदिम-सुरिय-गहगण-णक्खत्त-ताराख्वा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[१२] प्र०—अत्थि ण कण्हराईण चदाभा ति वा, सूराभा ति वा ?
उ०—णो तिणट्ठे समट्ठे ।

[१३] प्र०—कण्हराईओ णं भंते ! केरिसियाओ वन्नेण पन्नत्ताओ ?

उ०—कालाओ-जाव-खिप्पामेव वीतीवएज्जा ।

[१४] प्र०—कण्हराइओ ण भंते ! कतिनामधेज्जा पन्नत्ता ?

उ०—गोयमा ! अट्ठनामधेज्जा पन्नत्ता, तजहा—कण्हराई वा, मेहराई वा, मघा इ वा, माघवई वा, वायफलिहा इ वा, वायपलिक्खोभा इ वा, देवफलिहा इ वा, देवपलिक्खोभा इ वा ।

[१५] प्र०—कण्हराईओ ण भंते ! किं पुढविपरिणामाओ, आउपरिणामाओ, जीवपरिणामाओ, पोग्गल-परिणामाओ ?

उ०—गोयमा ! पुढविपरिणामाओ, नो आउपरिणामाओ वि, जीवपरिणामाओ वि, पुग्गलपरिणामाओ वि ।

[१६] प्र०—कण्हराईसु ण भंते ! सव्वे पाणा भूया जीवा सत्ता उववण्णपुव्वा ?

उ०—हंता, गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, नो चेव ण बादरआउकाइयत्ताए, बादरअगणिकाइयत्ताए वा, बायरवणस्सईकाइयत्ताए वा [1] ।

—भग भा २ श ६ उ ५ पृ ३०७–३१०
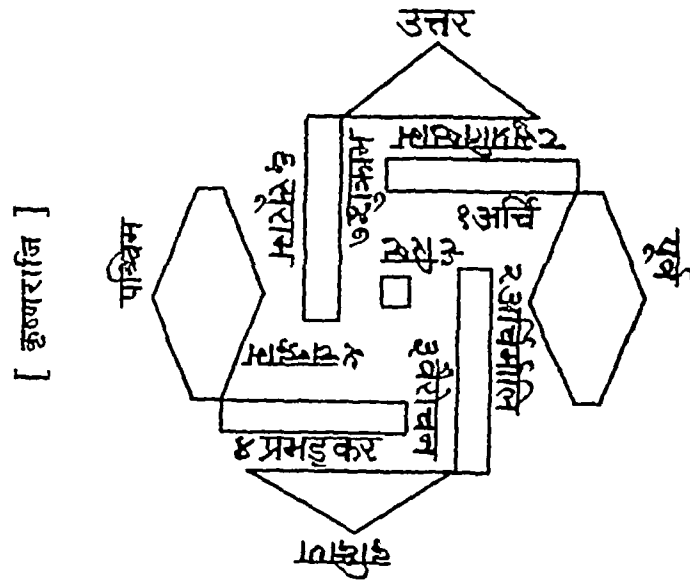
[१३][१] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियाँ कितनी है ?

उ०—गौतम ! कृष्णराजियाँ आठ कही गई है ।

[२] प्र०—भगवन् ! ये आठ कृष्णराजियाँ कहाँ है ?

उ०—गौतम ! ऊपर सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पो मे, नीचे ब्रह्मलोक कल्प मे, (अ) रिष्ट विमान के पाथडे मे, अखाडे के समान समचौरस आकार की आठ कृष्णराजियाँ हैं, वे इस प्रकार हैं—

पूर्व मे दो, पश्चिम मे दो, दक्षिण मे दो, उत्तर मे दो । पूर्व की भीतरी कृष्णराजि दक्षिण की बाह्य कृष्णराजि से स्पृष्ट है, दक्षिण की भीतरी कृष्णराजि पश्चिम की बाह्य कृष्णराजि से स्पृष्ट है, पश्चिम की भीतरी कृष्णराजि उत्तर की बाह्य कृष्णराजि से स्पृष्ट है । उत्तर की भीतरी कृष्णराजि पूर्व की बाह्य कृष्णराजि से स्पृष्ट है ।

पूर्व-पश्चिम की दो बाह्य कृष्णराजियाँ षट्कोण है, उत्तर-दक्षिण की दो बाह्य कृष्णराजियाँ त्रिकोण हैं ।

पूर्व-पश्चिम की दो भीतरी कृष्णराजियाँ चतुष्कोण हैं, उत्तर-दक्षिण की दो भीतरी कृष्णराजियाँ चतुष्कोण है । (गाथार्थ–)पूर्व और पश्चिम की कृष्णराजि छह कोने वाली है और दक्षिण तथा उत्तर की बाह्य कृष्णराजि त्रिकोण है । शेष सभी आभ्यन्तर कृष्णराजियाँ चौकोर है ।

---

१. ठाणा. ८ सूत्र ६२३ पृ. ४०६

[३] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियाँ कितनी लम्बी, कितनी चौडी और कितनी परिधि वाली है ?

उ०—गौतम ! असंख्यात हजार योजन लम्बी, असंख्यात हजार योजन चौडी और असंख्यात हजार योजन परिधि वाली हैं।

[४] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियाँ कितनी विशाल है ?

उ०—गौतम ! इस जम्बूद्वीप के तीन चुटकियों मे इक्कीस बार चक्कर लगा देने वाला कोई देव अर्द्ध मास तक चलता जाय तो किसी कृष्णराजि को पार करे, किसी कृष्णराजि को पार न कर सके। गौतम ! ये कृष्णराजियाँ इतनी विशाल है।

[५] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियो मे गृह अथवा गृहापण है ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही।

[६] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियो मे ग्राम हैं ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही।

[७] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियो मे उदार मेघ संस्वेदित होते है, सम्मूर्छित होते हैं, वर्षा बरसाते हैं ?

उ०—हाँ, है।

[८] प्र०—भगवन् ! वह (वर्षा आदि) क्या देव करता है, असुर करता है या नाग करता है ?

उ०—गौतम ! देव करता है, असुर नही करता, नाग नही करता।

[९] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियो मे बादर स्तनितशब्द (मेघगर्जना) है ?

उ०—उदार मेघो के समान कहना चाहिए।

[१०] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियो मे बादर अप्काय, बादर अग्निकाय, और बादर वनस्पतिकाय है ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही, सिवाय विग्रहगतिसमापन्न के।

[११] प्र०—क्या चन्द्र, सूर्य, ग्रहगण, नक्षत्र और तारारूप है ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही है।

[१२] प्र०—कृष्णराजियो मे चन्द्र की आभा या सूर्य की आभा है ?

उ०—यह अर्थ समर्थ नही है।

[१३] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियाँ कैसे वर्ण की कही गई हैं ?

उ०—काली—यावत्—(देव देख कर घबरा जाते हैं, कोई उनमे प्रवेश करे तो) शीघ्र ही पार करता है।

[१४] उ०—भगवन् ! कृष्णराजियो के कितने नाम हैं ?

उ०—गौतम ! आठ नाम कहे हैं, यथा—

(१) कृष्णराजि (२) मेघराजि (३) मघा (४) माघवती
(५) वातपरिघा (६) वातपरिक्षोभा (७) देवपरिघा (८) देवपरिक्षोभा।

[१५] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियाँ क्या पृथ्वी का परिणमन है, अप् का परिणमन हैं, जीव का परिणमन हैं या पुद्गल का परिणमन है ?

उ०—गौतम ! पृथ्वी का परिणमन हैं, अप् का परिणमन नही, जीव का भी परिणमन हैं, पुद्गल का भी परिणमन हैं।

[१६] प्र०—भगवन् ! कृष्णराजियो मे सब प्राण, भूत, जीव और सत्त्व पहले उत्पन्न हो चुके है ?
उ०—हाँ, गौतम ! अनेको बार अथवा अनन्त बार, किन्तु बादर अप्काय के रूप मे, बादर अग्निकाय के रूप मे और बादर वनस्पति काय के रूप मे उत्पन्न नही हुए ।

लान्तक देवों के स्थान

[१४][१] प्र०—कहि ण भंते ! लतगदेवाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! लतगदेवा परिवसति ?
उ०—गोयमा ! बंभलोगस्स कप्पस्स उप्पि सपक्खि सपडिदिसि बहूइं जोयणाइं-जाव बहुगाओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढ दूर उप्पइत्ता, एत्थ ण लतए नामं कप्पे पन्नत्ते ।
पाईण-पडीणायए जहा बभलोए ।
नवर-पण्णास विमाणावाससहस्सा भवन्तीतिमक्खायं[1] ।
वडिसगा जहा ईसाणवडिसगा, नवरं मज्झे इत्थ लतगवडिसए ।

[१४][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त लान्तक देवो के स्थान कहाँ हैं ?
भगवन् ! लान्तक देव कहाँ निवास करते हैं ?
उ०—गौतम ! ब्रह्मलोक कल्प के ऊपर समान दिशा और समान विदिशा मे बहुत योजन-यावत्-बहुत कोडाकोडी योजन ऊपर दूर जाकर यहाँ लान्तक नामक कल्प है। वह पूर्व-पश्चिम मे लम्बा ब्रह्मलोक के समान है । विशेष यह है कि वहाँ पचास हजार विमानावास हैं, ऐसा कहा है । अवतसक (विमान) ईशान कल्प के समान है किन्तु यहाँ मध्य मे लान्तकावतसक है ।

महाशुक्र देवों के स्थान

[१५][१] प्र०—कहि ण भंते ! महासुक्काण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! महासुक्का देवा परिवसति ?
उ०—गोयमा ! लंतगस्स कप्पस्स उप्पि सपक्खि सपडिदिसि-जाव-उप्पइत्ता, एत्थ ण महासुक्के नामं कप्पे पन्नत्ते, पाईण पडीणायए, उदीण-दाहिणविच्छिण्णे, जहा बभलोए ।
नवर-चत्तालीस विमाणावाससहस्सा भवन्तीति मक्खाय[2] ।
वडिसगा जहा सोहम्मवडिसए ।

[१५][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त महाशुक्र देवो के स्थान कहाँ हैं ?
भगवन् ! महाशुक्र देव कहाँ निवास करते हैं ?
उ०—गौतम ! लान्तक कल्प के ऊपर समान दिशा और समान विदिशा मे—यावत्—ऊपर जाकर यहाँ महाशुक्र नामक कल्प है। वह पूर्व-पश्चिम मे लबा और उत्तर-दक्षिण मे चौड़ा है, जैसे ब्रह्मलोक कल्प ।
विशेष—यहाँ चालीस हजार विमानावास हैं, ऐसा कहा गया है । अवतसक सौधर्मावतसको के समान हैं ।

सहस्रार देवों के स्थान

[१६][१] प्र०—कहि ण भंते ! सहस्सारदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! सहस्सारदेवा परिवसति ?
उ०—गोयमा ! महासुक्कस्स कप्पस्स उप्पि सपक्खि सपडिदिसं-जाव- उप्पइत्ता, एत्थ णं सहस्सारे नामं कप्पे पण्णत्ते ।

---

१. सम॰ ५० सूत्र ५
२. सम. ४० सूत्र ८

पाईण-पडीणायए, जहा बंभलोए।
नवर-छव्विमाणावाससहस्सा भवन्तीतिमक्खायं[1]।
देवा तहेव-जाव-वडिंसगा जहा ईसाणस्स वडिंसगा।
नवरं मज्झे इत्थ सहस्सारवडिंसए।

[१६][२] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त सहस्रार देवों के स्थान कहां है ?
भगवन् ! सहस्रार देव कहां निवास करते है ?

उ०—गौतम ! महाशुक्र कल्प के ऊपर समान दिशा और समान विदिशा में-यावत्-ऊपर जाकर यहां सहस्रार नामक कल्प है। वह पूर्व-पश्चिम में लम्बा ब्रह्मलोक के समान है।
विशेष यह है कि उसमें छह हजार विमानावास है, ऐसा कहा गया है। देव उसी प्रकार हैं-यावत्-अवतंसक ईशानकल्प के अवतंसकों के समान है, किन्तु यहां मध्य में सहस्रारावतंसक है।

आनत-प्राणत देवों के स्थान

[१७][१]·प्र०—कहि णं भंते ! आणय पाणयाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ?
कहि णं भंते ! आणय-पाणया देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! सहस्सारस्स कप्पस्स उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं-जाव-उप्पइत्ता, एत्थ णं आणय-पाणयनामा दुवे कप्पा पन्नत्ता।
पाईण- पडीणायया, उदीण-दाहिणविच्छिण्णा, अद्धचंदसंठाणसंठिया, अच्चिमालीभासरासिप्पभा सेसं जहा सणंकुमारे-जाव पडिरूवा।
तत्थ णं आणय पाणयदेवाणं चत्तारि विमाणावाससया भवन्तीति मक्खायं[2] —जाव पडिरूवा।
वडिंसगा जहा सोहम्मे कप्पे, नवर-मज्झे इत्थ पाणयवडिंसए।
ते णं वडिंसगा सव्वरयणामया अच्छा जाव-पडिरूवा।
एत्थ णं आणय-पाणयदेवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता। तिसु वि लोगस्स असंखेज्जइभागे।

[२७][२] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त आनत-प्राणत देवों के स्थान कहां है ?
भगवन् ! आनत-प्राणत देव कहां निवास करते है ?

उ०—गौतम ! सहस्रार कल्प के ऊपर, समान दिशा और समान विदिशा में—यावत्—ऊपर जाकर यहां आनत और प्राणत नामक दो कल्प है। ये पूर्व-पश्चिम में लम्बे, उत्तर-दक्षिण में विस्तीर्ण, अर्द्ध-चन्द्राकार, किरणों की माला और कान्तिसमूह जैसी प्रभा वाले है। शेष सनत्कुमार कल्प के समान-यावत्-प्रतिरूप है। वहां आनत और प्राणत देवों के चार सौ विमान है, ऐसा कहा है-यावत्-प्रतिरूप है। अवतंसक सौधर्म के समान है, किंतु यहां प्राणतावतंसक है। वे अवतंसक सर्वरत्नमय, स्वच्छ-यावत्-प्रतिरूप है। यहां पर्याप्त और अपर्याप्त आनत-प्राणत देवों के स्थान है। उपपात आदि तीनों में लोक के असंख्यातवें भाग में है।

आरण-अच्युत देवों के स्थान

[१८][१] प्र०—कहि णं भंते ! आरणच्चुयाणं देवाणं पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पन्नत्ता ?
कहि णं भंते ! आरणच्चुया देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! आणयपाणयाणं कप्पाणं उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं एत्थ णं आरणच्चुया नाम दुवे कप्पा पन्नत्ता।
पाईण—पडीणायया, उदीण—दाहिणविच्छिण्णा, अद्धचंदसंठाण-संठिया, अच्चिमालीभासरासिवण्णाभा

---

१. सम ११६ सूत्र १
२ सम० १०६ सूत्र ४

असखिज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयाम-विक्खंभेण, असंखिज्जाओ जोयण-कोडाकोडीओ परिक्खेवेण,

सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा नीरया निम्मला निप्पका निक्ककडच्छाया सप्पभा सस्सिरिया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

एत्थ ण आरणच्चुयाण देवाण तिन्नि विमाणावाससया भवतीतिमक्खायं ।[1]

ते ण विमाणा सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा नीरया निम्मला निप्पका निक्ककडच्छाया सप्पभा सस्सिरिया सउज्जोया पासाईया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

तेसि ण विमाणाण कप्पाण बहुमज्झदेसभाए पच वडिसया पन्नत्ता, तजहा—

अकवडिसए, फलिहवडिसए, रयणवडिसए, जायरूववडिसए, मज्झे इत्थ अच्चुयवडिसए ।

ते ण वडिसया सव्वरयणामया–जाव–पडिरूवा ।

एत्थ ण आरणच्चुयाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता । तिसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे ।

बत्तीस अट्ठवीसा, बारस अट्ठ चउरो (य) सयसहस्सा ।

पन्ना चत्तालीसा, छच्च सहस्सा सहस्सारे ।।१।।

आणय पाणयकप्पे, चत्तारि सयाऽऽरणच्चुए तिन्नि ।

सत्त विमाणसयाइ चउसु वि एएसु कप्पेसु ।।२।।

[१८][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त आरण और अच्युत देवो के स्थान कहाँ हैं ?

भगवन् ! आरण और अच्युत देव कहा निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! आनत और प्राणत कल्पो के ऊपर समान दिशा एव विदिशा मे आरण और अच्युत नामक दो कल्प हैं । वे पूर्व–पश्चिम मे लम्बे, उतर–दक्षिण मे विस्तीर्ण, अर्ध चन्द्राकार और किरणो की माला एव कान्तिसमूह जैसी प्रभा वाले हैं । उनकी लम्बाई-चौडाई असख्यात कोडा-कोडी योजन की और परिधि भी असख्यात कोडाकोडी योजन की है । वे सर्वरत्नमय, स्वच्छ, कोमल, सुकुमार, घिसे हुए, मृष्ट, रजरहित, निष्पक, निरावरण कान्ति वाले, प्रभायुक्त, श्रीयुक्त, उद्योतयुक्त, प्रसादजनक, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप हैं । यहाँ आरण और अच्युत देवो के तीन सौ विमानावास हैं, ऐसा कहा गया है ।

वे विमानावास सर्वरत्नमय, स्वच्छ, कोमल, सुकुमार, घटारे, मठारे, रजोहीन, निर्मल, निष्पक, निरावरण कान्ति वाले, प्रभायुक्त, शोभायुक्त, उद्योतयुक्त, प्रसादजनक, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप हैं । इन कल्पो के विमानो के मध्य मे पाच अवतसक विमान हैं, यथा-अकावतसक स्फटिकावतसक, रत्नावतसक, जातरूपावतसक और मध्यभाग मे अच्युतावतसक है ।

ये अवतसक सर्वरत्नमय-यावत्-प्रतिरूप हैं । यहाँ पर्याप्त और अपर्याप्त आरण एव अच्युत देवो के स्थान हैं । वे उपपात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवें भाग मे हैं । विमानो की सख्या का निरूपण करने वाली गाथाओ का अर्थ इस प्रकार है—

बत्तीस लाख, अट्ठाईस लाख, बारह लाख, आठ लाख, चार लाख, पचास हजार, चालीस हजार और सहस्रारकल्प मे छह हजार (विमान हैं) ।।१।।

आनत और प्राणत कल्प मे चार सौ तथा आरण और अच्युत मे तीन सौ, इस प्रकार इन कल्पो मे सात सौ विमान हैं ।।२।।

१—सम. १०१, सूत्र २–३

अधस्तन ग्रैवेयक देवों के स्थान

[१९][१] प्र०—कहि ण भते ! हिट्ठिमगेविज्जगाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ?

कहि ण भते ! हिट्ठिमगेविज्जगा देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! आरण-च्चुयाण कप्पाण उप्पि-जाव-उड्ढ दूर उप्पइत्ता, एत्थ ण हिट्ठिमगेविज्जगाण देवाण तओ गेविज्जगविमाणपत्थडा पण्णत्ता ।

पाईण-पडीणायता, उदीण-दाहिणवित्थिन्ना, पडिपुण्णचदसठाणसठिया, अच्चिमालीभासरासि-वण्णाभा, सेस जहा बभलोगे-जाव-पडिरूवा ।

तत्थ ण हेट्ठिमगेविज्जगाण देवाण एक्कारसुत्तरे विमाणावाससए भवन्तीति मक्खाय [1]

ते ण विमाणा सव्वरयणामया-जाव-पडिरूवा । एत्थ ण हेट्ठिमगेविज्जगाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता । तिसु वि लोगस्स असखेज्जइभागे ।

[१९][१] प्र०—भगवन् ! अधस्तन-निचले पर्याप्त और अपर्याप्त ग्रैवेयक देवो के स्थान कहाँ हैं ?

भगवन् ! अधस्तन ग्रैवेयक देव कहाँ निवास करते है ?

उ०—गौतम ! आरण अच्युत कल्पो के ऊपर—यावत्—ऊपर दूर जाकर यहाँ अधस्तन ग्रैवेयक देवो के तीन ग्रैवेयक विमानो के प्रस्तट (पायडे) हैं । वे पूर्व-पश्चिम मे लम्बे, उत्तर-दक्षिण मे विस्तीर्ण, परिपूर्ण चन्द्र के आकार वाले, किरणो की माला एव कान्तिसमूह जैसे वर्ण वाले हैं, शेष सब ब्रह्मलोक के समान-यावत्-प्रतिरूप हैं ।

वहाँ निचले ग्रैवेयक देवो के एक सौ ग्यारह विमानावास है, ऐसा कहा है । वे विमान सर्वरत्नमय यावत्-प्रतिरूप हैं । यहाँ पर्याप्त और अपर्याप्त अधस्तन ग्रैवेयक देवो के स्थान हैं । वे उपपात आदि तीनो अपेक्षाओ से लोक के असख्यातवें भाग मे हैं ।

मध्यम ग्रैवेयक देवों के स्थान

[२०][१] प्र०—कहि ण भते ! मज्झिमगाण गेविज्जगाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ?

कहि ण भते ! मज्झिमगेविज्जगा देवा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! हेट्ठिमगेविज्जगाण उप्पि सपक्खि सपडिदिसि-जाव-उप्पइत्ता, एत्थ ण मज्झिमगेविज्ज-गदेवाण तओ गेविज्जविमाणपत्थडा पन्नत्ता ।

पाईण-पडीणायया जहा हेट्ठिमगेविज्जगाण ।

नवर-सत्तुत्तरे विमाणावाससए हवतीति मक्खाय ।

ते ण विमाणा-जाव-पडिरूवा ।

एत्थ ण मज्झिमगेविज्जगाण-जाव—तिसुवि लोगस्स असखेज्जइभागे ।

[२०][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त मध्यम ग्रैवेयक देवो के स्थान कहाँ है ?

भगवन् ! मध्यम ग्रैवेयक देव कहाँ निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! अधस्तन ग्रैवेयको के ऊपर समान दिशा और समान विदिशा मे-यावत्-जाकर मध्यम ग्रैवेयक देवो के तीन ग्रैवेयक विमान प्रस्तट (पायडे) कहे हैं । वे पूर्व-पश्चिम मे लम्बे हैं आदि अधस्तन ग्रैवेयको के समान कह लेना चाहिए । किंतु यहाँ एक सौ सात विमान हैं ऐसा कहा गया है । वे विमान-यावत् प्रतिरूप हैं । यहाँ मध्यम ग्रैवेयक देवो के (स्थान हैं)—यावत्—तीनो अपेक्षाओ से लोक के असख्यातवें भाग मे हैं ।

१—सम ११ सूत्र ६

उपरितन ग्रैवेयक देवों के स्थान

[२१][१] प्र०—कहि ण भंते ! उवरिमगेविज्जगाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पन्नत्ता ?
कहि ण भंते ! उवरिमगेविज्जगा देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! मज्झिमगेविज्जगाण उप्पि—जाव—उप्पइत्ता,
एत्थ ण उवरिमगेविज्जगाण तओ गेविज्जगविमाणपत्थडा पन्नत्ता ।

पाईण-पडीणायया, सेस जहा हेट्ठिमगेविज्जगाण ।
नवर-एगे विमाणावाससए भवतीति मक्खाय ।
एक्कारसुत्तर हेट्ठिमेसु सत्तुत्तर च मज्झिमए ।
सयमेग उवरिमए, पचेव अणुत्तरविमाणा ॥१॥

[२१][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त उपरितन (ऊपरी) ग्रैवेयक देवो के स्थान कहा है ?
भगवन् ! उपरितन ग्रैवेयक देव कहा निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! मध्यम ग्रैवेयको के ऊपर—यावत्—जाने पर उपरितन ग्रैवेयको के तीन ग्रैवेयक-पाथडे हैं। वे पूर्व-पश्चिम मे लम्बे हैं, इत्यादि वक्तव्यता अधस्तन ग्रैवेयक के समान समझना। किन्तु यहा एक सौ विमान हैं, ऐसा कहा गया है।

(गाथार्थ) एक सौ ग्यारह विमान नीचे के ग्रैवेयको मे, एक सौ सात विमान मध्य के ग्रैवेयको मे, एक सौ विमान ऊपर के ग्रैवेयको मे हैं तथा अनुत्तर विमान पाँच है।

अनुत्तरौपपातिक देवों के स्थान

[२२][१] प्र०—कहि ण भंते ! अणुत्तरोववाइयाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताण ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा परिवसंति ?

उ०—गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसम-रमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढ चदिम-सूरिय-गह-नक्खत्त-तारारूवाण बहूइ जोयणसयाइं—जाव—उड्ढ दूर उप्पइत्ता,
सोहम्मीसाणसणकुमार—जाव—आरणच्चुयकप्पा तिन्नि अट्ठारसुत्तरे गेविज्जविमाणावाससए वीइ-वइत्ता, तेण पर दूर गया,
नीरया निम्मला वितिमिरा विसुद्धा पचदिसिं पच अणुत्तरा महइमहालया महाविमाणा पन्नत्ता, तजहा—
विजए, वेजयते, जयते, अपराजिए, सव्वट्ठसिद्धे ।
ते ण विमाणा सव्वरयणामया—जाव—पडिरूवा ।
एत्थ ण अणुत्तरोववाइयाण देवाण पज्जत्तापज्जत्ताणं ठाणा पण्णत्ता ।
तिसु वि लोगस्स असखेज्जइ भागे

[२२][१] प्र०—भगवन् ! पर्याप्त और अपर्याप्त अनुत्तरौपपातिक देवो के स्थान कहा है ?
भगवन् ! अनुत्तरौपपातिक देव कहा निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के बहुत सम एव रमणीय भूमिभाग से ऊपर, चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र और तारारूप से बहुत सैकडो योजन—यावत्—ऊपर जाने पर, सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार—यावत्—आरण और अच्युत कल्पो और तीन सौ अठारह ग्रैवेयक विमानो को उल्लघन करके उससे बहुत दूर जाने पर नीरज, निर्मल, अधकाररहित, विशुद्ध, पाच दिशाओ मे बहुत विशाल पाच महाविमान कहे है। यथा—विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्ध।

वे विमान सर्वरत्नमय—यावत्—प्रतिरूप हैं। यहा पर्याप्त और अपर्याप्त अनुत्तरौपपातिक देवो के स्थान हैं। उपपात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा लोक के असख्यातवे भाग मे है।

वैमानिक इन्द्रों के उत्पातपर्वत

[२३] सक्कस्स ण देविंदस्स देवरण्णो सक्कप्पभे उप्पातपव्वते दस जोयणसहस्साइ उद्ध उच्चत्तेण, दस गाउयसहस्साइ उव्वेहेण,
मूले दस जोयणसहस्साइ विक्खभेण पण्णत्ते ।
सक्कस्स ण देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारन्नो जहा सक्कस्स तहा सव्वेसि लोगपाला ण, सव्वेसि च इदाण—जाव—अच्चुय त्ति । सव्वेसि पमाणमेग ।

—ठा १० सूत्र ७२८ पृ ४५७

[२३] देवेन्द्र देवराज शक्र का उत्पातपर्वत दस हजार योजन ऊँचा, दस गव्यूति गहरा और मूल मे दस हजार योजन विष्कभ वाला है ।
देवेन्द्र देवराज शक्र के सोम नामक महाराज का उत्पातपर्वत शक्रेन्द्र के बराबर है । सभी लोकपालो और अच्युत पर्यन्त सभी इन्द्रो के उत्पातपर्वत भी ऐसे ही हैं । सब का प्रमाण एक बराबर है ।

विमानापृथ्वियों का आधार

[२४][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु विमाणपुढवी किंपइट्ठिया पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! घणोदहिपइट्ठिया ।

[२] प्र०—सणकुमार-माहिंदेसु कप्पेसु विमाणपुढवी किंपइट्ठिया पण्णत्ता ?
उ०—गोयमा ! घणवायपइट्ठि ' पण्णत्ता ।

[३] प्र०—बभलोए ण भते ! कप्पे विमाणपुढवी ण पुच्छा ?
उ०—घणवायपइट्ठिया पण्णत्ता ।

[४] प्र०—लतए ण भते ! पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! तदुभयपइट्ठिया ।
महासुक्क-सहस्सारेसु वि तदुभयपइट्ठिया ।

[५] प्र०—आणय—जाव—अच्चुएसु ण भते ! कप्पेसु पुच्छा ?
उ०—ओवासतरपइट्ठिया ।

[६] प्र०—गेविज्जविमाणपुढवी ण पुच्छा ?
उ०—गोयमा ! ओवासतरपइट्ठिया ।

[७] प्र०—अणुत्तरोववाइय पुच्छा ?
उ०—ओवासतरपइट्ठिया ।[1]

—जीवा प्रति ३ सूत्र २०९ पृ ३९४

[२४][१] प्र०—सौधर्म और ईशान कल्पो मे विमान-पृथ्वी किस पर आश्रित है ?
उ०—गौतम ! घनोदधि पर आश्रित है ।

१—ठा ३ उ. ३ सूत्र १८० पृ १३९

[२] प्र०—सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्पो मे विमान-पृथ्वी किस पर आश्रित है ?
उ०—गौतम ! घनवात पर आश्रित है।

[३] प्र०—भगवन् ! ब्रह्मलोक कल्प मे विमान-पृथ्वी की पृच्छा ?
उ०—घनवात पर आश्रित है।

[४] प्र०—भगवन् ! लान्तक मे पृच्छा ?
उ०—गौतम ! दोनो—घनोदधि एव घनवात पर आश्रित है।
महाशुक्र और सहस्रार कल्पो मे भी दोनो पर आश्रित है।

[५] प्र०—भगवन् ! आनत—यावत्—अच्युत कल्पो मे पृच्छा ?
उ०—अवकाशान्तर-आकाश-पर आश्रित है।

[६] प्र०—ग्रैवेयक विमानो के विषय मे पृच्छा ?
उ०—गौतम ! अवकाशान्तर पर आश्रित है।

[७] प्र०—अनुत्तरौपपातिक विमानो सबधी पृच्छा ?
उ०—(वे) अवकाशान्तर-आकाश-पर आश्रित है।

कल्पविमानों में प्रस्तट

[२५] **सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु तेरस विमाणपत्थडा पण्णत्ता।**

—सम. १३ सूत्र २

[२५] सौधर्म तथा ईशानकल्पो मे तेरह विमानप्रस्तट (पाथडे) कहे है।

[२६] **बम्भलोगे ण कप्पे छ विमाणपत्थडा पण्णत्ता, तजहा-अरए, विरए, णीरए, निम्मले, वितिमिरे, विसुद्धे।**

—स्था. ६ उ. ३ सूत्र ५१६ पृ. ३४८

[२६] ब्रह्मलोक कल्प मे छह विमानप्रस्तट हैं, यथा-अरज, विरज, नीरज, निर्मल, वितिमिर और विशुद्ध।

[२७] **णव गेवेज्जविमाणपत्थडा पण्णत्ता, तजहा[1]—**

हेट्ठिमहेट्ठिमगेविज्जविमाणपत्थडे, हेट्ठिममज्झिमगेविज्जविमाणपत्थडे, हेट्ठिमउवरिमगेविज्जविमाणपत्थडे, मज्झिमहेट्ठिमगेविज्जविमाणपत्थडे, मज्झिममज्झिमगेवेज्जविमाणपत्थडे, मज्झिमउवरिमगेविज्जविमाण-पत्थडे,
उवरिमहेट्ठिमगेवेज्जविमाणपत्थडे, उवरिममज्झिमगेवेज्जविमानपत्थडे, उवरिमउवरिमगेवेज्जविमाणपत्थडे।
एतेसि ण णवण्ह गेविज्जविमाणपत्थडाण णव नामधिज्जा पण्णत्ता, तजहा—

भद्दे सुभद्दे सुजाते, सोमणसे पियदरिसणे।
सुदसणे अमोहे य, सुप्पबुद्धे जसोधरे ॥१॥

—ठाणा ९ सूत्र ६८५

[२७] ग्रैवेयकविमानो के नौ प्रस्तट हैं, यथा—

(१) अधस्तन-अधस्तनग्रैवेयकविमानप्रस्तट (२) अधस्तन-मध्यमग्रैवेयकविमानप्रस्तट (३) अधस्तन-उपरितन ग्रै० (४) मध्यम-अधस्तन ग्रै० (५) मध्यम-मध्यम ग्रै० (६) मध्यम-उपरितन ग्रै० (७) उपरितन-अधस्तन ग्रै० (८) उपरितन-मध्यम ग्रै० (९) उपरितन-उपरितन ग्रैवेयकविमानप्रस्तट।

१–ठा. ३ उ. ४ २३२ पृ. १६८

इन नौ ग्रैवेयक-प्रस्तटो के नौ नाम हैं, यथा—
(१) भद्र (२) सुभद्र (३) सुजात (४) सौमनस (५) प्रियदर्शन (६) सुदर्शन (७) अमोघ (८) सुप्रबुद्ध और (९) यशोधर।

[२८] सव्वे वेमाणियाण वासट्ठि विमाणपत्थडा पत्थडग्गेण पण्णत्ता।

—सम ६२ सूत्र ५

[२८] सब वैमानिको के विमानप्रस्तट प्रस्तट-परिमाण से ६२ कहे गए है।

विमानपृथ्वियो का बाहल्य

[२९][१] प्र०—सोहम्मीसाणकप्पेसु विमाणपुढवी केवइय वाहल्लेण पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! सत्तावीस जोयणसयाइ वाहल्लेण पण्णत्ता।[1]

प्र०—एव पुच्छा ?

सणकुमार-माहिदेसु छव्वीस जोयणसयाइ,
बभ-लतए पचवीस,
महासुक्क-सहस्सारेसु चउवीस,
आणय-पाणया-रणा-च्चुएसु तेवीस सयाइ,
गेविज्जविमाणपुढवी वावीस,
अणुत्तरविमाणपुढवी एक्कवीस जोयणसयाइ वाहल्लेण।

—जीवा० प्रति० ३ सूत्र २१० पृ० ३९४

[२९][१] प्र०—सौधर्म और ईशान कल्पो मे विमानपृथ्वी कितनी मोटी है ?

उ०—गौतम ! सत्ताईस सौ योजन मोटी है।

[२] प्र०—इसी प्रकार (अगले कल्पो के विषय मे) प्रश्न (समझ लेना) ?

उ०—सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्पो मे (विमानपृथ्वी) छब्वीस सौ योजन (मोटी है)। ब्रह्मलोक और लान्तक मे पच्चीस सौ, महाशुक्र और सहस्रार मे चौवीस सौ, आनत प्राणत आरण और अच्युत मे तेईस सौ, ग्रैवेयकविमानो मे पृथ्वी बाईस सौ और अनुत्तर विमानो की पृथ्वी इक्कीस सौ योजन मोटी है।

कल्पविमानों की ऊँचाई

[३०][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु ण भते ! कप्पेसु विमाणा केवइय उड्ढ उच्चत्तेण ?

उ०—गोयमा ! पंच जोयणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण।[2]

सणकुमार-माहिदेसु छ जोयणसयाइ,[3]
वभ-लतएसु सत्त,[4]
महासुक्क-सहस्सारेसु अट्ठ,
आणय-पाणएसु० नव,[6]

---

१ सम २७ सूत्र ४
२. ठा० ५ उ० ३ सूत्र ४६९
३. ठा० ६, सूत्र ५३२ पृ० ३५२
४. „ ७, सूत्र ५७८ पृ० ३८४
५. „ ८, सूत्र ६५० पृ० ४१८
६ „ ९ „ ६९५ पृ० ४४४

[२] प्र०—गोविज्जविमाणा णं भंते ! केवइय उड्ढं उच्चत्तेण पण्णत्ता ?

उ०—दस जोयणसयाइ ।[1]

अणुत्तरविमाणा ण एक्कारस जोयणसयाइ उड्ढ उच्चत्तेण ।[2]

—जीवा० प्रति० ३ सूत्र २११ पृ० २१३

[३०][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म और ईशान कल्पों मे विमान कितने ऊँचे हैं ?

उ०—गौतम ! पाँच सौ योजन ऊँचे हैं ।

सनत्कुमार –माहेन्द्र कल्पो मे छह सौ योजन ऊँचे हैं । ब्रह्मलोक–लान्तक कल्पो मे सात (सौ योजन ऊँचे है) । महाशुक्र–सहस्रार कल्पो मे आठ (सौ योजन ऊँचे है) । आनत, प्राणत, आरण और अच्युत कल्पो मे नौ (सौ योजन ऊँचे हैं) ।

[२] प्र०—भगवन् ! ग्रैवेयक विमान कितने ऊँचे हैं ?

उ०—दस सौ योजन (ऊँचे हैं) ।

अनुत्तर विमान ग्यारह सौ योजन ऊँचे है ।

कल्पविमानों की लम्बाई, चौड़ाई, परिधि

[३०][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु ण भंते ! कप्पेसु विमाणा केवतिय आयाम-विक्खंभेणं, केवतियं परिक्खेवेणं पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तंजहा-संखेज्जवित्थडा य असंखेज्जवित्थडा य ।

जहा णरगा तहा-जाव-अणुत्तरोववातिया संखेज्जवित्थडा य असंखेज्जवित्थडा य ।

तत्थ ण जे से संखेज्जवित्थडे से जंबुद्दीवप्पमाणे,

असंखेज्जवित्थडा असंखेज्जाइ जोयणसयाइ -जाव-परिक्खेवेण पण्णत्ता ।

—जीवा. प्रति. ३ सूत्र २१३ पृ. ३९५

[३०][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म और ईशान कल्पो मे विमान कितने लम्बे-चौडे और कितनी परिधि वाले हैं ?

उ०—गौतम ! दो प्रकार के (विमान) कहे गए हैं, यथा-संख्येयविस्तृत और असंख्येयविस्तृत ।

नरको के समान अनुत्तरौपपातिक विमानो पर्यन्त संख्येयविस्तृत अर्थात् संख्यात योजन विस्तार वाले और असंख्येयविस्तृत अर्थात् असंख्यात योजन विस्तार वाले (विमान) हैं ।

उनमे जो संख्येयविस्तृत हैं वे जम्बूद्वीप के प्रमाण के (एक लाख योजन) हैं । असंख्येयविस्तृत असंख्य सौ योजन-यावत्-परिक्षेप वाले हैं ।

कल्पविमानों के प्राकारों की ऊँचाई

[३१] वेमाणियाणं देवाण विमाणपागारा तिण्णि २ जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

—सम ३०० सूत्र ३

[३१] वैमानिक देवो के विमानो के प्राकारो की ऊंचाई तीन-तीन सौ योजन कही गई है ।

१—ठा. १० सूत्र ७७५ पृ० ४९३;

२—(क) सम० ११४ सूत्र १

(ख) सम० १०९ सूत्र १

(ग) सम० ११० सूत्र १

(घ) सम० १११ सूत्र १

(ङ) सम० ११२ सूत्र १

(च) सम० ११३ सूत्र १

कल्पविमानों का संस्थान

[३२][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु ण भते ! कप्पेसु विमाणा किंसठिया पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तजहा—आवलियापविट्ठा वाहिरा य ।

तत्थ ण जे ते आवलियापविट्ठा ते तिविहा पण्णत्ता, तजहा—वट्टा, तसा, चउरसा[1] ।

तत्थ ण जे ते आवलियावाहिरा ते ण णाणासठिया पण्णत्ता, एव जाव गेविज्जविमाणा ।

अणुत्तरोववाइयविमाणा दुविहा पण्णत्ता, तजहा-वट्टे य तसा य ।

—जीवा प्रति ३ सूत्र २१२ पृ ३७५

[३२][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म और ईशान कल्पो मे विमान किस आकार के हैं ?

उ०—गौतम ! दो प्रकार के हैं, यथा—आवलिकाप्रविष्ट और (आवलिका-) वाह्य ।

उनमे जो आवलिकाप्रविष्ट हैं, वे तीन प्रकार के कहे गए हैं, यथा-वृत्त (गोलाकार), त्र्यस्र (तिकोने) और चतुरस्र (चौकोर) ।

उनमे जो आवलिकावाह्य (विमान) है, वे नाना आकार के हैं। इस प्रकार-यावत्-ग्रैवेयक-विमान (जान लेना चाहिए) ।

अनुत्तरौपपातिक विमान दो प्रकार के कहे गए हैं, यथा-वृत्त और त्र्यस्र ।

कल्पविमानों का वर्ण

[३३][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु ण भते ! विमाणा कतिवण्णा पन्नत्ता ?

उ०—गोयमा ! पचवण्णा पण्णत्ता, तजहा-किण्हा, नीला, लोहिया, हालिद्दा, सुक्किल्ला ।[2]

सणकुमार-माहिंदेसु चउवण्णा-नीला जाव-सुक्किल्ला[3]

बभलोय-लतएसुवि तिवण्णा-लोहिया-जाव-सुक्किल्ला ।[4]

महासुक्क-सहस्सारेसु दुवण्णा-हालिद्दा य सुक्किल्ला य ।[5]

पाणया-रणच्चुएसु सुक्किल्ला ।

गेविज्जविमाणा सुक्किल्ला ।

अणुत्तरोववातियविमाणा परमसुक्किल्ला वण्णेण पण्णत्ता ।

—जीवा प्रनि ३ सूत्र २१३ पृ ३९५

[३३][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म और ईशान कल्पो मे विमान कितने वर्ण के हैं ?

उ०—गौतम ! पाच वर्णो के है, यथा—कृष्ण, नील, लाल, पीत, और शुक्ल ।

सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्पो मे चार वर्णो के है, यथा-नील-यावत्-शुक्ल ।

ब्रह्मलोक और लान्तक कल्पो मे तीन वर्ण के हैं—लोहित—यावत्—शुक्ल ।

महाशुक्र और सहस्रार कल्पो मे दो वर्ण के है—पीत और शुक्ल ।

आनत, प्राणत, आरण और अच्युत कल्पो मे शुक्ल वर्ण के (विमान) हैं ।

ग्रैवेयक विमान शुक्ल हैं ।

अनुत्तरौपपातिक विमान परम शुक्ल वर्ण वाले हैं।

१—ठा. ३ उ ३ सूत्र १८० पृ १३८
२—ठा. ५ उ ३ सूत्र ४६९ पृ ३३३
३—ठा. ४ उ. ४ सूत्र ३७५ पृ २७१
४—ठा ३ उ १ सूत्र १५१ पृ १२०
५—ठा, २ उ ३ सूत्र ९४ पृ ८०

कल्पविमानों की प्रभा

[३४][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु ण भते ! कप्पेसु विमाणा केरिसया पभाए पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! णिच्चालोआ णिच्चुज्जोया सयं पभाए पण्णत्ता-जाव-अणुत्तरोववातियविमाणा णिच्चालोआ णिच्चुज्जोता सय पभाए पण्णत्ता ।

[३४][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म-ईशान कल्पो मे विमान प्रभा से किस प्रकार के हैं ?

उ०—गौतम ! अपनी निज की प्रभा से नित्य आलोक वाले, नित्य उद्योत वाले कहे गए हैं—यावत्-अनुत्तरविमान भी नित्य आलोक एव उद्योत वाले हैं ।

कल्पविमानों की गंध

[३५][१] प्र०—सोधम्मीसाणेसु ण भते ! कप्पेसु केरिसया गधेण पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! से जहानामए कोट्ठपुडाण वा-जाव-गधेण पण्णत्ता । एवं-जाव-एत्तो इट्ठयरागा चेव जाव-अणुत्तरविमाणा ।

[३५][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म और ईशान कल्पो मे (विमान) किस प्रकार की गध वाले हैं ?

उ०—गौतम ! कोष्ठपुट-यावत्-जैसी गंध वाले हैं । इस प्रकार-यावत्-इससे भी अधिक इष्ट गध वाले हैं । अनुत्तर विमानो तक इसी प्रकार समझना ।

कल्पविमानों का स्पर्श

[३६][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु विमाणा केरिसया फासेण पण्णत्ता ?

उ०—से जहाणामए आइणेति वा रूतेति वा सव्वो फासो भाणियव्वो—जाव—अणुत्तरोववातियविमाणा ।

[३६][१] प्र०—सौधर्म और ईशान कल्पो मे विमान कैसे स्पर्श वाले हैं ?

उ०—जैसे आजिनक या रुई हो, ऐसा सर्व स्पर्श कहना चाहिए,—यावत्—अनुत्तरौपपातिक विमानो तक (इसी प्रकार का स्पर्श है) ।

कल्पविमानों की महत्ता

[३७][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु णं भते ! (कप्पेसु) विमाणा केमहालिया पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! अयण्णं जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाण-सो चेव गमो—जाव—छम्मासे वीइवएज्जा—जाव—अत्थेगतिया विमाणावासा नो वीइवएज्जा—जाव—अणुत्तरोववातियविमाणा अत्थेगतियं विमाण वीतिवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा ।

[३७][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म-ईशान कल्पो मे विमान कितने बडे हैं ?

उ०—गौतम ! यह जम्बूद्वीप नामक द्वीप सब द्वीप-समुद्रों के बीच मे है—वही गम समझना,—यावत्—(देव शीघ्र गति से) छह मास तक चलता जाय तो—यावत्—कितनेक विमानों को पार न कर पाए । अनुत्तरौपपातिक विमानो तक इसी प्रकार कहना चाहिए कि (शीघ्रगति देव छह मास तक चलने पर) किसी विमान को पार करे और किसी को पार न कर सके ।

कल्पविमानों का उपादान

[३८][१] प्र०—सोहम्मीसाणेसु ण भते ! विमाणा किमया पण्णत्ता ?

उ०—गोयमा ! सव्वरयणामया पण्णत्ता ।

तत्थ ण बहवे जीवा य पोग्गला य वक्कमति, विउक्कति, चयति, उवचयति ।

सासया ण ते विमाणा दव्वट्ठयाए—जाव—फासपज्जवेहि असासता—जाव—अणुत्तरोववातिया विमाणा ।

—जीवा प्रति ३ सूत्र २१३ पृ ९५

[३८][१] प्र०—भगवन् ! सौधर्म और ईशान कल्पो मे विमान किससे बने हैं ?

उ०—गौतम ! सर्वरत्नमय कहे है ।

वहा बहुत-से जीव और पुद्गल जाते हैं, उत्पन्न होते है, चय एव उपचय को प्राप्त होते हैं ।
वे विमान द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत हैं,—यावत्—स्पर्श-पर्यायो से अशाश्वत हैं ।—यावत्—अनुत्तरोपपातिक विमान इसी प्रकार समझना चाहिए ।

सिद्धस्थान

[३९][१] प्र०—कहि ण भते ! सिद्धाण ठाणा पण्णत्ता ?
कहि ण भते ! सिद्धा परिवसति ?

उ०—गोयमा ! सव्वट्ठसिद्धस्स महाविमाणस्स उवरिल्लाओ थूभियग्गाओ दुवालस जोयणे उड्ढ अबाहाए एत्थ ण ईसीपब्भारा णाम पुढवी पन्नत्ता ।
पणयालीस जोयणसयसहस्साइ आयाम-विक्खमेण,
एगा जोयणकोडी बायालीस च सयसहस्साइ तीस च सहस्साइ दोन्नि य अउणापन्ने जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेण पन्नत्ता ।
ईसिपब्भाराए ण पुढवीए बहुमज्झदेसभाए अट्ठजोयणिए खेत्ते अट्ठ जोयणाइ बाहल्लेण पन्नत्ते ।[1] तओ अणतर च ण मायाए-मायाए पएसपरिहाणीए परिहायमाणी-परिहायमाणी सव्वेसु चरमतेसु मच्छियपत्ताओ तणुययरी, अगुलस्स असखेज्जइभाग बाहल्लेण पन्नत्ता ।

[३९][१] प्र०—भगवन् ! सिद्धो के स्थान कहां हैं ?
भगवन् ! सिद्ध कहा निवास करते हैं ?

उ०—गौतम ! सर्वार्थसिद्ध महाविमान की ऊपरी स्तूपिका के अग्रभाग से बारह योजन दूर ईषत्प्राग्भारा नामक पृथ्वी है । वह पैतालीस लाख योजन लम्बी-चौडी है । एक करोड, बयालीस लाख, तीस हजार, दो सौ उनपचास योजन से कुछ अधिक परिधि वाली है ।

ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के ठीक बीच मे आठ योजन प्रमाण क्षेत्र मोटाई मे आठ योजन है । उसके बाद थोडी-थोडी प्रदेशो की परिहानि होती हुई सबसे अन्तिम (प्रदेशो) मे मक्खी के पख से भी पतली हो गई है और मोटाई मे अगुल के असख्यातवा भाग है ।

ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के पर्यायशब्द

[४०] ईसिपब्भाराए ण पुढवीए णं दुवालस नामधिज्जा पन्नत्ता, तजहा–(१) ईसि इ वा (२) ईसिपब्भारा इ वा (३) तणू इ वा (४) तणु–तणु इ वा (५) सिद्धित्ति वा (६) सिद्धालए वा (७) मुत्तित्ति वा (८) मुत्तालए इ वा (९) लोयग्गेत्ति वा (१०) लोयग्गथूभियत्ति वा (११) लोयग्गपडिवुज्झणा इ वा (१२) सव्वपाण-भूय-जीव-सत्तसुहावहा इ वा ।[2]

१—ठा. ८ सूत्र ६४८ पृ. ४१७
२–(क) ठा. ८ सूत्र ६४८ पृ. ४१७
(ख) उववाई.

[४१] ईसीपब्भारा ण पुढवी सेया संखदलविमलसोत्थिय-मुणाल-दगरय-तुसार-गोक्खीर-हारवण्णा, उत्ताणयछत्त-सठाणसठिया, सव्वज्जुणसुवन्नमई, अच्छा, सण्हा-जाव-पडिरूवा ।
ईसीपब्भाराए ण पुढवीए सीआए जोयणम्मि लोगतो,
तस्स जे उवरिल्ले गाउए तस्स ण गाउयस्स जे से उवरिल्ले छब्भागे, एत्थ ण सिद्धा भगवतो साइया अपज्जवसिया अणेगजाइ-मरण-जोणि-ससार-कलकलीभाव-पुणब्भव-गब्भवासवसहि-पवचसमइक्कता सासयमणागयकाल चिट्ठ ति ।

—प्रज्ञा २ सूत्र ५८ पृ ३२४–२५

[४०] ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के बारह नाम कहे हैं, यथा-(१) ईषत् (२) ईषत्प्राग्भारा (३) तन्वी (४) तनु-तन्वी (५) सिद्धि (६) सिद्धालय (७) मुक्ति (८) मुक्तालय (९) लोकाग्र (१०) लोकाग्रस्तूपिका (११) लोकाग्रप्रतिवाहिनी और (१२) सर्वप्राण-भूत-जीव-सत्वसुखावहा ।

[४१] ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी श्वेत, शखदल के चूर्ण के निर्मल स्वस्तिक, कमलदड, जलकण, बर्फ, गोक्षीर एव हार जैसे वर्ण वाली, स्वच्छ, चिकनी-यावत्-प्रतिरूप है ।
ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी से नसैनी की गति से एक योजन ऊपर लोकान्त है । उस योजन के एक गव्यूति और उस गव्यूति के छठे भाग मे सिद्ध भगवान् आदिसहित, अन्तरहित, सब जन्म, जरा, मरण और योनियो मे परिभ्रमण के क्लेश, पुनर्भव एव गर्भवास मे रहने के प्रपच से रहित, शाश्वत अनागत काल तक विराजमान रहते हैं ।
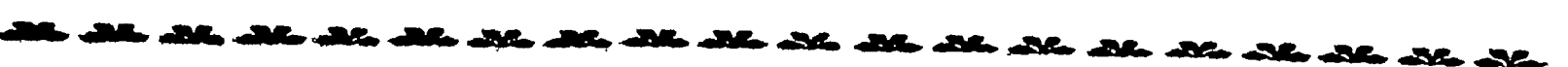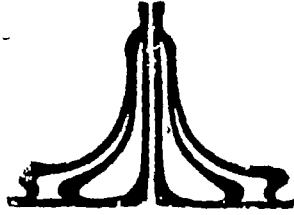
माप-निरूपण

अंगुल के भेद और परिमाण

प्र०—से कि त अगुले ?

उ०—अगुले तिविहे पण्णत्ते, तजहा-आयगुले, उस्सेहगुले, पमाणगुले ।

प्र०—से किं त आयगुले ?

उ०—आयगुले जे ण जया मणुस्सा भवति, तेसि ण तया अप्पणो अगुलेण दुवालस अंगुलाइं मुहं, नवमुहाइ पुरिसे पमाणजुत्ते भवति, दोणिए पुरिसे माणजुत्ते भवति, अद्धभार तुलमाणे पुरिसे उम्माणजुत्ते भवति ।

एतेण अगुलपमाणेण छ अगुलाइ पादो, दो पाया विहत्थी, दो विहत्थीओ रयणी, दो रयणीओ कुच्छी, दो कुच्छीओ दड, धणू, जुगे, नालिया, अक्खमुसले, दो धणुसहस्साइं गाउय, चत्तारि गाउयाइ जोयण ।

प्र०—एएण आयगुलप्पमाणेण कि पओयण ?

उ०—एतेण आयगुलप्पमाणेण जे णं जया मणुस्सा भवति, तेसि णं तया अप्पणो अगुलेणं अगड-दह-नदी-तलाग-वावी पुक्खरिणि-दीहिया-गु जालियाओ, सरा, सरपतियाओ, सरसरपतियाओ, आरामु-ज्जाण-काणण-वण-वणसड-वणराईओ, देवकुल-सभा-पवा-थूभ-खाइय-परिहाओ, पागारऽ-ट्टालग-चरिय-दार-गोपुर-तोरण-पासाद-घर-सरण-लेण-आवण-सिघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-चउमुह-महापह-पहा, सगड-रह-जाण-जुग्ग-गिल्लि-थिल्लि-सीय-सदमाणिय-लोही-लोहकडाह-कडुच्छुय-आसण-सयण-खभ-भड-मत्तो-वगरणमादीणि अज्ज-कालिगाइ च जोयणाइ मविज्जति ।

से समासओ तिविहे पण्णत्ते, तजहा-सूतिअंगुले, पयरगुले, घणगुले ।

अगुलायता एगपदेसिया सेढी सूइअगुले,

सूई सूईए गुणिया पयरगुले,

पयर सूईए गुणित घणगुले ।

प्र०—एतेसि ण भते ! सूतिअगुल-पयरगुल-घणगुलाण य कतरे कतरेहिंतो अप्पे वा बहुए वा तुल्ले वा विसेसाहिए वा ?

उ०—सव्वत्थोवे सूतिअगुले, पतरगुले असखेज्जगुणे, घणगुले असखेज्जगुणे । से त आयगुले ।

प्र०—से किं त उस्सेहगुले ?

उ०—उस्सेहगुले अणेगविहे पण्णत्ते, तजहा—

परमाणू तसरेणू रहरेणू अग्गय च वालस्स ।

लिक्खा जूया य जवो, अट्ठगुणविवड्ढिया कमसो ॥१॥

... अणताण वावहारियपरमाणुपोग्गलाण समुदयसमितिसमागमेणं सा एगा उस्सण्हसण्हिया ति वा, सण्हसण्हिया ति वा, उड्ढरेणू ति वा, तसरेणू ति वा, रहरेणू ति वा ।

अट्ठ उस्सण्हसण्हियाओ सा एगा सण्हसण्हिया,

अट्ठ सण्हसण्हियाओ सा एगा उड्ढरेणू,

अट्ठ उड्ढरेणूओ सा एगा तसरेणू,

अट्ठ तसरेणूओ सा एगा रहरेणू,

अट्ठ रहरेणूओ देवकुरु-उत्तरकुरुयाणं मणुयाण से एगे वालग्गे,
अट्ठ देवकुरु-उत्तरकुरुयाण मणुयाण वालग्गा हरिवासरम्मगवासाण मणुयाण से एगे वालग्गे,
अट्ठ हरिवास-रम्मगवासाण मणुस्साण वालग्गा हेमवय-हेरण्णवयवासाणं मणुस्साण से एगे वालग्गे,
अट्ठ हेमवय-हेरण्णवयवासाणं मणुस्साण वालग्गा पुव्वविदेह-अवरविदेहाण मणुस्साण से एगे वालग्गे,
अट्ठ पुव्वविदेह-अवरविदेहाण मणूसाण वालग्गा भरहेरवयाण मणुस्साण से एगे वालग्गे,
अट्ठ भरहेरवयाणं मणूसाण वालग्गा सा एगा लिक्खा,
अट्ठ लिक्खाओ सा एगा जूया,
अट्ठ जूयाओ से एगे जवमज्झे,
अट्ठ जवमज्झे से एगे उस्सेहंगुले ।
एएण अंगुलपमाणेण छ अंगुलाइं पादो, बारस अंगुलाइं विहत्थी, चउवीस अंगुलाइं रयणी, अडयालीस अंगुलाइ कुच्छी, छन्नउती अंगुलाइं से एगे दडे इ वा, धणू इ वा, जुगे इ वा, नालिया इ वा, अक्खे इ वा, मुसले इ वा,[1] एएण धणुप्पमाणेण दो धणुसहस्साइं गाउय, चत्तारि गाउयाइं जोयण[2] ।

प्र०—एएण उस्सेहंगुलेणं किं पओयण ?

उ०—एएण उस्सेहंगुलेण णेरइय-तिरिक्खजोणिय-मणूस-देवाण सरीरोगाहणाओ मविज्जति ।
से समासओ तिविहे पण्णत्ते, तंजहा—सूईअंगुले, पयरंगुले, घणंगुले ।
अंगुलायता एगपदेसिया सेढी सूईअंगुले, सूई सूईए गुणिया पयरंगुले, पयर सूईए गुणिय घणंगुले ।

प्र०—एएसि ण सूचीअंगुल-पयरंगुल-घणंगुलाणं कतरेहिंतो अप्पे वा बहुए वा तुल्ले वा विसेसाहिए वा ?

उ०—सव्वत्थोवे सूईअंगुले, पयरंगुले असंखेज्जगुणे, घणंगुले असंखेज्जगुणे; से त उस्सेहंगुले ।

प्र०—से किं त पमाणंगुले ?

उ०—पमाणंगुले एगमेगस्स णं रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स अट्ठ सोवण्णिए कागणिरयणे छत्तले दुवालसंसिए अट्ठकण्णिए अहिगरणिसंठाणसंठिए पण्णत्ते, तस्स ण एगमेगा कोडी उस्सेहंगुलविक्खंभा, त समणस्स भगवओ महावीरस्स अद्धंगुलं, त सहस्सगुणं पमाणंगुल भवति ।
एतेण पमाणंगुलेण छ अंगुलाइं पादो, दो पाया दुवालसअंगुलाइं विहत्थी, दो विहत्थीओ रयणी, दो रयणीओ कुच्छी, दो कुच्छीओ धणू, दो धणुसहस्साइं गाउय, चत्तारि गाउयाइं जोयण ।

प्र०—एतेण पमाणंगुलेण किं पओयणं ?

उ०—एएण पमाणंगुलेण पुढवीण कंडाणं पायालाण भवणाणं भवणपत्थडाण निरयाण निरयावलियाण निरयपत्थडाण कप्पाण विमाणाण विमाणावलियाण विमाणपत्थडाण टंकाण कूडाण सेलाण सिहरीण पब्भाराण विजयाणं वक्खाराण वासाण वासहराण वासहरपव्वयाण वेलाण वेइयाण दाराण तोरणाण दीवाण समुद्दाण आयामविक्खंभ-उच्चत्तो-व्वेह-परिक्खेवा मविज्जति ।
से समासओ तिविहे पण्णत्ते, तजहा—सेढीअंगुले, पयरंगुले, घणंगुले ।
असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ सेढीए, सेढी सेढी गुणिया पतर, पतर सेढीए गुणित लोगो, संखेज्जएण लोगो गुणितो संखेज्जा लोगा । असंखेज्जएण लोगो गुणिओ असंखेज्जा लोगा ।

१—सम० ९६ सूत्र ३
२—(क) सम ,, सूत्र ४
(ख) ठा. अ ८, सूत्र-६३४, पृ० ४११,
(ग) जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स कलाओ एगूणवीसं जोअणाओ पण्णत्ता । —सम० १९ सूत्र ४
अर्थात् जम्बूद्वीप के गणित में कला-अर्थात् योजन का १९ वां भाग,

प्र०—एतेसि ण सेढीअगुल-पयरगुल-घणगुलाण कतरे कतरेहितो अप्पे वा बहुए वा तुल्ले वा विसेसाहिए वा ?

उ०—सव्वत्थोवे सेढिअगुले, पयरगुले असखेज्जगुणे, घणगुले असखेज्जगुणे। से त पमाणगुले।

—अनुयोग० सूत्र ३३३-३४२, ३४४-३४६, ३५७-३६२

प्र०—अगुल क्या है ?

उ०—अगुल तीन प्रकार का है, यथा—आत्मागुल, उत्सेवागुल और प्रमाणागुल।

प्र०—आत्मागुल क्या है ?

उ०—आत्मागुल यह है—जिस काल मे जो मनुष्य होते हैं, उस काल मे उनके अपने अगुल से बारह अगुल का मुख होता है। ऐसे नौ मुखो से पुरुष प्रमाणयुक्त होता है। द्रोणिक पुरुष मानयुक्त होता है और तोल मे अर्धभार प्रमाण वाला पुरुष उन्मानयुक्त होता है।

इस अगुल प्रमाण से छह अगुल का पाद होता है, दो पाद की वितस्ति, दो वितस्तियो की रत्नि, दो रत्नियो की कुक्षि, दो कुक्षियो का दड, धनुष, युग, नालिका और अक्षमुसल होता है। दो हजार धनुष का गव्यूति और चार गव्यूति का एक योजन होता है।

प्र०—इस आत्मागुल प्रमाण से क्या प्रयोजन है ?

उ०—जिस काल मे जो मनुष्य होते हैं, उस काल में उनके आत्मागुल से कूप, द्रद, नदी, तालाब, बावडी, पुष्करिणी, दीर्घिका, गुञ्जालिका, सर, सरपक्ति, सर-सरपक्ति, आराम, उद्यान, कानन, वन, वन-खण्ड, वनराजि, देवगृह, सभा, प्रपा, स्तूप, खाई, परिखा, प्राकार, अट्टालक, चरिया, द्वार, गोपुर, तोरण, प्रासाद, घर, शरण, लयन, आपण, शृगाटक, त्रिक, चौक, चत्वर, चतुर्मुख, महापथ, पथ, शकट, रथ, यान, युग्य, गिल्लि, थिल्लि, शिविका, स्यदमानिका, लोही, लोहकडाह, कडुच्छुय, आसन, शयन, स्तभ, भाण्डमात्रोपकरण आज-कल (समय-समय) के योजन आत्मागुल से मापे जाते हैं।

वह आत्मागुल तीन प्रकार का है—सूच्यंगुल, प्रतरागुल और घनागुल।
एक अगुल लम्बी एक प्रदेश की श्रेणी सूच्यगुल कहलाती है। सूची से सूची का गुणाकार करने से प्रतरागुल होता है। प्रतर को सूची से गुणित करने पर घनागुल होता है।

प्र०—भगवन्! इन सूच्यगुल, प्रतरागुल और घनागुल मे कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

उ०—सूच्यगुल सबसे छोटा है, प्रतरागुल उससे असख्यात गुणा है, घनागुल उससे भी असख्यातगुणा है।

प्र०—उत्सेधागुल क्या है ?

उ०—उत्सेधागुल अनेक प्रकार का कहा गया है, यथा—परमाणु, त्रसरेणु, रथरेणु, वालाग्र, लीख, यूका और यव ये सब क्रमश आठ-आठ गुणा होते हैं।
अनन्त व्यावहारिक परमाणुपुद्गलो के मिलकर एकमेक होने। पर एक उस्सण्हसण्हिया होती है। फिर, सण्हसण्हिया, ऊर्ध्वरेणु, त्रसरेणु एव रथरेणु होता है।
आठ उस्सण्हसण्हिया की एक सण्हसण्हिया, आठ सण्हसण्हिया की एक ऊर्ध्वरेणु, आठ ऊर्ध्वरेणु का एक त्रसरेणु, आठ त्रसरेणु का एक रथरेणु, आठ रथरेणु का देवकुरु-उत्तरकुरु के मनुष्यों का एक वालाग्र, देवकुरु-उत्तरकुरु के मनुष्यो के आठ वालाग्र का हरिवर्ष-रम्यकवर्ष के मनुष्यों का एक

वालाग्र, हरिवर्ष-रम्यकवर्ष के मनुष्यो के आठ वालाग्र का हैमवत-हैरण्यवत क्षेत्र के मनुष्यो का एक वालाग्र, हैमवत-हैरण्यवत क्षेत्र के मनुष्यो के आठ वालाग्र का पूर्वविदेह अपरविदेह के मनुष्यो का एक वालाग्र, पूर्वविदेह-अपरविदेह के मनुष्यो के आठ वालाग्र का भरत-ऐरवत क्षेत्र के मनुष्यो का एक वालाग्र, भरत-ऐरवत के मनुष्यो के आठ वालाग्र की एक लिक्षा (लीख), आठ लिक्षा की एक यूका, आठ यूका का एक यवमध्य और आठ यवमध्य का एक उत्सेधागुल होता है।

इस (उत्सेध) अगुलप्रमाण से छह अगुल का पाद, बारह अंगुल की वितस्ति, चौवीस अगुल की रत्नि, अडतालीस अगुल की कुक्षि और छयानवे अगुल का एक दण्ड, धनुष, युग, नालिका, अक्ष या मुसल होता है। इस धनुषप्रमाण से दो हजार धनुष का एक गव्यूति और चार गव्यूति का एक योजन होता है।

प्र०—इस उत्सेधागुल से क्या प्रयोजन है ?

उ०—इस उत्सेधागुल से नारको, तिर्यचो, मनुष्यो और देवो के शरीर की अवगाहना मापी जाती है। उत्सेधागुल सक्षेप से तीन प्रकार का है—सूच्यगुल, प्रतरागुल और घनागुल।

एक अगुल लम्बी एक प्रदेश की श्रेणी सूच्यंगुल है, सूची से सूची को गुणित करने पर प्रतरागुल होता है और प्रतर का सूची से गुणाकार करने से घनागुल होता है।

प्र०—इस सूच्यगुल, प्रतरागुल और घनागुल मे कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है।

उ०—सूच्यगुल सब से छोटा है, प्रतरागुल उससे असख्यात गुणा है और घनांगुल उससे भी असख्यात गुणा है। यह उत्सेधागुल का कथन है।

प्र०—प्रमाणागुल क्या है ?

उ०—प्रत्येक चक्रवर्ती राजा का काकणीरत्न आठ सौवर्णिक (सौनैया भर वजन) का, छह तल वाला, बारह कोनो का, आठ कर्णिका वाला एव (सुनार के) ऐरन के आकार का होता है। उसकी एक-एक कोटि उत्सेधागुल प्रमाण विस्तार वाली होती है। श्रमण भगवान् महावीर का वह आधा अगुल है। उसका हजारगुणा प्रमाणागुल होता है।

इस प्रमाणागुल से छह अगुल का पाद, दो पाद अर्थात् बारह अगुल की वितस्ति, दो वितस्ति की रत्नि, दो रत्नि की कुक्षि, दो कुक्षि का धनुष, दो हजार धनुष का गव्यूति और चार गव्यूति का योजन होता है।

प्र०—इस प्रमाणागुल से क्या प्रयोजन है ?

उ०—इस प्रमाणागुल से पृथ्वी, काण्ड, पाताल, भवन, भवनप्रस्तट, नरक, नरकावली, नरकप्रस्तट, कल्प, विमान, विमानावली, विमानप्रस्तट, टक, कूट, शैल, शिखरी, प्राग्भार, विजय, वक्षस्कार, वर्ष, वर्षधर-वर्षधर पर्वत, वेला, वेदिका, द्वार, तोरण, द्वीप, समुद्र—इनकी लम्बाई, चौडाई, ऊँचाई, गहराई, और परिधि मापी जाती है। वह प्रमाणागुल सक्षेप से तीन प्रकार का है—श्रेण्यगुल, प्रतरागुल और घनागुल।

असख्य कोडाकोडी योजन की एक श्रेणी, श्रेणी से गुणित श्रेणी प्रतर और श्रेणी से गुणित प्रतर 'लोक' कहलाता है। सख्यात मे गुणित लोक 'सख्यात लोक' कहलाता है और असख्यात से गुणित लोक 'असख्यात लोक' कहलाता है।

प्र०—इन श्रेण्यगुल, प्रतरागुल और घनागुल मे कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेपाधिक है ?

उ०—श्रेण्यगुल सब से अल्प (छोटा) है, प्रतरागुल उसमे असख्यात गुणा है और घनागुल उससे भी असख्यात गुणा है। यह प्रमाणागुल की वक्तव्यता है।

विशिष्ट शब्द

पृ० १,	प. १२—	अगुरुलहुए—	जिसमे गुरुता और लघुता दोनो नही, अर्थात् अमूर्त ।
पृ० ८८,	प. १—	अट्ठट्ठमगलगा—	स्वस्तिक, श्रीवत्स ।
पृ० २५,	प २६—	अणाणुपुव्वी—	पूर्वानुपूर्वी और पश्चानुपूर्वी से रहित—अनुक्रम हीन ।
पृ० १,	प. ११—	अद्धासमय—	काल रूप समय ।
पृ० १,	प ३—	अलोए—	वह आकाश खण्ड जो सूना है—जहा अन्य कोई द्रव्य विद्यमान न हो ।
पृ० २,	प १—	असब्भावपट्ठवणा—	असत्कल्पना ।
पृ० ६,	प ३४—	अहम्मत्थिकाए	स्थिति का माध्यम एक अमूर्त द्रव्य ।
पृ० १५,	प ३६—	आसव—	कर्मों के बन्ध का कारण—मिथ्यात्व आदि ।
पृ० २६,	प. १५—	उज्जुसुत्त—	वर्तमान कालिक पर्याय को ही वस्तु मानने वाला दृष्टि-कोण—नयविशेष ।
पृ० १३,	पं. ३८—	उस्सप्पिणी—	उत्सर्पिणी काल-चक्र का एक विभाग, जिसमे जीवो की देह, आयु आदि की निरतर वृद्धि होती रहती है ।
पृ० १३,	पं ३८—	ओसप्पिणी—	उत्सर्पिणी काल से विपरीत, जिसमें देह, आयु आदि का लगातार ह्रास होता है ।
पृ० ७३,	प ११—	जगई—	द्वीप—समुद्र का सीमा विभाजक वज्रमय प्राकार विशेष ।
पृ० ६५,	प. ३१—	जीवा—	प्रत्यचा—धनुषाकार क्षेत्र की प्रत्यचा—स्थानीय सरल प्रदेश—पक्ति ।
पृ० २६,	प. १५—	णेगम—	नैगम—वह दृष्टिकोण जो लोक-रूढि में भी वास्तविकता स्वीकार करता है, सत् और असत् को भी वस्तु मानता है ।
पृ० १५,	प. ४०—	निज्जरा	उदय के अनन्तर कर्म–दलिको का जीव-प्रदेशो से पृथक हो जाना ।
पृ० ६६,	प १—	धणु—	धनुष–चार हाथ लम्बा परिमाण विशेष ।
पृ० ११६,	प. ११—	धणुपट्ठ—	परिधि का वह भाग जो धनुष के-पृष्ठ भाग का स्थानीय हो ।
पृ० १,	प. २०—	धम्मत्थिकाय—	जीवो और पुदगलो की गतिका माध्यम एक द्रव्य ।
पृ० ६,	प. ४—	पोग्गलत्थिकाय—	रूपी—द्रव्य ।
पृ० ६५,	प, २६—	वाहा—	भुजा, भुजाकार क्षेत्र विशेष ।
पृ० २६,	प १५—	सगह—	अभेद-प्रधान दृष्टिकोण ।
पृ० ११५,	प. ११—	सघयण—	अस्थियो की रचना ।
पृ० ११५,	प ११—	सठाण—	आकृति ।
पृ० १५,	प ३६—	सवर—	आस्रव का रुकना ।
पृ० २६,	प. १५—	सद्दनय—	वह दृष्टिकोण जो लिंग, कारक, वचन, पुरुष आदि के भेद से पर्यायवाची समझे जाने वाले शब्दो के भी अर्थ में भेद मानता है ।
पृ० १,	प २४—	समयखेत्त—	जबूद्वीप, लवण–समुद्र, धातकीखड-द्वीप, कालोदधि-समुद्र और अर्धपुष्कर-द्वीप, जहा चद्र-सूर्य की गतिशीलता के कारण दिवस-रात्रि आदि काल का विभाग होता है ।

परिशिष्ट [३]

विशेष-सूचना

इस गणितानुयोग के कतिपय पृष्ठो मे कुछ आगम-पाठ ऐसे भी हैं जिनके नीचे किसी भी आगम का स्थल-निर्देश अकित नही है। ऐसे आगम पाठो को क्रमश देखने पर जिस मूलपाठ के नीचे किसी आगम का स्थल निर्देश अधिक मिले, उस पाठ तक जितने आगम पाठ हैं वे सब स्थल-निर्देश मे अकित आगम के ही पाठ है—ऐसा समझें।

उदाहरण के लिये देखिए पृष्ठ ४६४ का टिप्पण।

अलोक

संकलन में प्रयुक्त आगमों के स्थल-निर्देश

ठाणांग-सूत्र

पृ. १—ठा. १, ६
पृ ३—ठा अ. ४, उ. ३, सूत्र ३३७, पृ २४१

समवायांग-सूत्र

पृ १—सम १, १.

विवाह—प्रज्ञप्ति

पृ १—विवा भा ३,	श. ११,	उ. १०,	प्र १०,	पृ. २२६
पृ. १—विवा. भा १,	श २,	उ. १,		पृ २३५
पृ. १—विवा. भा ३,	श ११,	उ. १०,	प्र. १६,	पृ. २३१
पृ २—विवा. भा ३,	श ११,	उ. १०,	प्र २०,	पृ २३२
पृ २—विवा भा ३,	श ११,	उ. १०,	प्र. १६,	पृ २३१
पृ. २—विवा. भा ३,	श ११,	उ. १०,	प्र. १६,	पृ २३१
पृ ३—विवा भा. ४,	श. १६,	उ ८,	प्र ६,	पृ २५
पृ ३—विवा भा. ३,	श ११,	उ १०,		पृ २३०-३१
पृ ३—विवा भा १,	श. २,	उ. १०,	प्र. ६७,	पृ ३१०
पृ ३—विवा भा १,	श १,	उ १०,		पृ २३५
पृ ३—विवा भा १,	श. १,	उ. १०,		पृ २३५
पृ ३—विवा भा. १,	श २,	उ. १०,	प्र. ६७,	पृ ३१०
पृ. ४—विवा. भा १,	श १,	उ. १०,	प्र ६७,	पृ. ३१०
पृ ४—विवा भा ३,	श. ११,	उ. १०,	प्र १५-१७,	पृ २३०
पृ ४—विवा. भा १,	श १,	उ १०,	प्र ६६,	पृ, ३१०
पृ ४—विवा भा १,	श. १,	उ १०,	प्र ६७,	पृ ३१०

प्रज्ञापना-सूत्र

पृ १—पण्ण १५, इन्द्रियपद, पृ. ६३४
पृ १—पण्ण. १५, इन्द्रियपद, पृ. ६३०
पृ. १—पण्ण. १५, इन्द्रियपद, पृ. ६३०

लोक

संकलन में प्रयुक्त आगमों के स्थल-निर्देश

ठाणांग-सूत्र

पृ ५— ठा १,५,
पृ ५— ठा अ ३, उ २, सू १५३, पृ. १२१
पृ ५— ठा अ ३, उ. २, सू १५३
पृ. ५— ठा. अ ३, उ २, सू १५३, पृ. १२१
पृ ६— ठा अ २, उ. ४, सू १०३, पृ ६०
पृ ६— ठा. अ ३, उ २, सू १६३, पृ १२६
पृ. ६— ठा. अ. ४, उ. २, सू २८६, पृ २०२
पृ ६— ठा. अ. ६, सू. ४६८, पृ ३४०
पृ ६— ठा. अ. ८, सू ६००, पृ. ४००
पृ. ११— ठा. अ १०, सू ७०४, पृ. ४४६
पृ १२— ठा. अ. ४, उ ३, सू. ३३३, पृ. २३६
पृ १५— ठा अ २, उ ४, सू १०३, पृ. ६०
पृ १५— ठा अ. २, सू. ५७, पृ ३५
पृ. १५— ठा. अ. २, सू ५८, पृ ३६
पृ. १५— ठा. अ. २, सू. ५६, पृ ३६
पृ. २०— ठा. अ. ५, उ. ३, सू ४४४, पृ. ३१८
पृ २०— ठा. अ. ५, उ. ३, सू ४५१, पृ. ३२४
पृ २०— ठा. अ ४, उ. ३, सू ३२६, पृ. २३८
पृ. २४— ठा. अ ४, उ. ३, सू. ३२८, पृ २३८
पृ. २४— ठा. अ ३, उ. १, सू. १३४, पृ. ११०
पृ. २४— ठा अ ४, उ. ३, सू. ३२४, पृ. २३३
पृ २४— ठा. अ ३, उ. १, सू १४८, पृ. ११६
पृ. २५— ठा. अ. ३, उ १, सू १३४, पृ ११०
पृ २५— ठा. अ. ४, उ. ३, सू. ३३६, पृ. २५०
पृ. २५— ठा अ. ३, उ. १, सू १३४, पृ ११०
पृ २५— ठा. अ. ४, उ. ३, सू ३२४, पृ २३३
पृ. २५— ठा अ. ३, उ. १, सू. १३४, पृ ११०
पृ. २५— ठा. अ. ४, उ. ३, सू. ३३६, पृ २५०

समवायांग—सूत्र

पृ. ५— सम. १, १,
पृ २४— सम १,

विवाह–प्रज्ञप्ति

पृ. ५— विवा भा ३, श ११, उ ११, प्र २, पृ २३४
पृ ५— विवा. भा. ३, श ११, उ १०, प्र. १–५ पृ. २२८
पृ ६— विवा. भा ३, श १३, उ. ४, प्र १३, पृ ३१५
पृ ६— विवा. भा ३, श. ७, उ १, प्र. ४, पृ २
पृ ६— विवा भा ३, श ११, उ १०, प्र ६, पृ २२६
पृ. ६— विवा भा. ३, श १३, उ ४, प्र. ४७, पृ ३२३
पृ. ७— विवा भा २, श ५, उ. ६, प्र १५–१६, पृ २४६–५०
पृ ७— विवा भा ३, श १२, उ ७, प्र १, पृ २८२
पृ. ७— विवा. भा ४, श. १६, उ ८, प्र. १, पृ २१
पृ ८— विवा. भा ३, श ११, उ १०, प्र. १६, पृ २३१
पृ ६— विवा. भा १, श २, उ १, पृ २३५
पृ ६— विवा भा १, श १, उ ६, प्र. २२४, पृ १६६–७०
पृ १२— विवा भा १, श १, उ. ६, प्र. २०२–३, पृ १६३–६४
पृ १२— विवा भा. १, श २, उ. १०, प्र. ७०–७२, पृ ३१३
पृ १३— विवा भा ३ श ६, उ. ३३, पृ १८१
पृ १४— विवा. भा. ४, श २०, उ. २, प्र ३, पृ १७
पृ १६— विवा भा ३, श २, उ १०, प्र ६६, पृ. ३१०
पृ १७ – विवा भा ३, श ११, उ १०, प्र. ११,१२,१३, पृ २२६
पृ १८— विवा भा ३, श ११, उ १०, प्र १५,१७, पृ २३०
पृ १६— विवा भा ३, श. ११, उ १०, प्र २१, पृ २३२
पृ २१— विवा भा. ३, श १६, उ ८, प्र २,–५, पृ २१–२३
पृ २५— विवा भा १, श १, उ ३, प्र २१६, पृ १६७
पृ. २६— विवा भा १, श १, उ १, प्र २१६–२१, पृ. १६८

अनुत्तरोपपातिक–सूत्र

पृ ५—अनु सूत्र १४५, पृ ५५१

उत्तराध्ययन–सूत्र

पृ ५—उत्तरा अ २८, गाथा ७

आचारांग–सूत्र

पृ १३—आचा श्रु १, अ २, उ ५
पृ १४—आचा श्रु १, अ. ८, उ १

सूत्रकृतांग–सूत्र

पृ १३—सूत्र श्रु २, अ ६, उ २, गाथा ४६–५०
पृ १३—सूत्र श्रु, २, अ ५, उ २, गाथा २–३
पृ १४—सूत्र श्रु, १, अ. १, उ ३, गाथा ५–६

भगवती–सूत्र

पृ २२—भग शतक १०, १ उ, प्र. ७, पृ १८६

प्रज्ञापना–सूत्र

पृ २३—पन्न. पद १०, सूत्र ७७६, पृ २३—पन्न पद १०, सूत्र ७८०,

अधोलोक

नरक-वर्णन

विवाह-प्रज्ञप्ति

पृ. २७— विवा. भा. ३,	श. ११,	उ. १०,	प्र. ३,	पृ. २२८
पृ २७— विवा. भा. ३,	श. १२,	उ ३,	प्र. १,२,	पृ. २६१
पृ. २७— विवा. भा. ३,	श १२,	उ. ३,	प्र. १,२,	पृ. २६१
पृ. २८— विवा. भा. २,	श. ६,	उ. ८,	प्र. १-८,	प्र ३२७-३२८
पृ. २८— विवा. भा. ३,	श. ८,	उ. ३,		पृ ७८
पृ. २८— विवा. भा. ३,	श १३,	उ. १,		पृ. ३०१
पृ. ३७— विवा. भा. ३,	श. १३,	उ. ४,	प्र. ४,	पृ. ३१३
पृ. ३८— विवा. भा. ३,	श. १४,	उ. ८,	प्र १-३,	पृ ३५८
पृ. ४३— विवा. भा २,	श ६,		प्र. १,	पृ. ३१५
पृ. ४४— विवा. भा १,	श १,	उ ५,	प्र. १६४-१६५,	पृ १४१
पृ. ४५— विवा भा. ३,	श. १३,	उ. १,	प्र. ३,	पृ. ३०१
पृ. ४५— विवा. भा. ४,	श. १५,		प्र ६१,	पृ. २१४
पृ. ४५— विवा भा. २,	श. ६,	उ. ६,	प्र १,	पृ. ३१५
पृ. ५०— विवा. भा. ३,	श. १३,	उ. १,	प्र ३,८,१३,	पृ. ३०१-५

जीवाभिगम-सूत्र

पृ. २७— जीवा. सू. ६७,	पृ. ८८
पृ. २९— जीवा सू ७१,	पृ ९०
पृ. ३०— जीवा सू ७२,	पृ. ९२
पृ. ३०— जीवा. सू. ७६,	पृ ९५
पृ. ३१— जीवा सू ७६,	पृ ९५-९६
पृ ३१— जीवा. सू ७४,	पृ ९३
पृ ३२— जीवा. सू. ७६,	पृ. ९५-९६
पृ ३२— जीवा. सू ७६,	पृ. ९५
पृ ३२— जीवा. सू. ७३,	पृ. ९२
पृ. ३२— जीवा. सू. ७३,	पृ. ९२
पृ ३३— जीवा सू. ७६,	पृ. ९५
पृ. ३३— जीवा सू. ६९,	पृ. ८९

पृ ३३— जीवा सू. ७३, पृ ९२
पृ ३४— जीवा. सू. ७२, पृ ९२
पृ. ३६— जीवा सू ७३, पृ ९२-९३
पृ ३७— जीवा. सू ७६, पृ ९६
पृ ३७— जीवा सू ९२, पृ. १२७
पृ ३८— जीवा सू ८०, पृ. १०१
पृ. ३९— जीवा सू ७९, पृ १००
पृ ३९— जीवा सू ७९, पृ १००
पृ ४०— जीवा सू ७५, पृ ८४
पृ ४१— जीवा सू ७९, पृ ९९
पृ ४२— जीवा सू ७५, पृ ९४
पृ. ४३— जीवा सू ७८, पृ ९८
पृ ४३— जीवा सू ८५, पृ १०९
पृ ४४— जीवा सू ८१, प्र ३, पृ. १०२, प्र ३, सू ६८, पृ ८८
पृ ४४— जीवा. सू ८७, पृ ११४
पृ ४४— जीवा सू ८९, पृ ११७
पृ ४५— जीवा सू ८१, प्र. ३, पृ १०२
पृ ४५— जीवा सू ८१, प्र. ३, पृ १०२
पृ ४६— जीवा सू ८१, प्रति ३, पृ १०२
पृ ४६— जीवा सू ८१, प्रति ३,
पृ ४६— जीवा सू ८१, प्रति ३, पृ. १०२
पृ. ४७— जीवा. सू. ८१, प्रति ३, पृ १०२
पृ. ४९— जीवा. सू. ८२, पृ १०४
पृ ५०— जीवा. सू ८२, पृ १०४-५
पृ. ५१— जीवा सू ८४, पृ. १०८
पृ ५२— जीवा सू. ८३, पृ १०६-७
पृ ५२— जीवा सू. ८५, पृ १०९

स्थानांग—सूत्र

पृ. २७— ठा अ ७, सू ५४६ पृ ३६८
पृ. २८— ठा. अ. ८, सू ६४८
पृ. २९— ठा अ. ३, उ. ३, सू. १८६, पृ १४२
पृ ३०— ठा अ. ३, उ. ४, सू २४४, पृ १६६
पृ. ३३— ठा. अ १०, सू ७७८, पृ. ४९७
पृ ५७— ठा. अ १०, सू ७२८, पृ ४५७
पृ. ५८— ठा अ. ५, उ ३, सू ४७२, पृ ३३३
पृ ६०— ठा अ १०, सू ७२८, पृ. ४५७
पृ ६०— ठा अ १०, सू ७२८, पृ. ४५७
पृ ६१— ठा. अ. १०, सू ७२८, पृ ४५७
पृ ६४— ठा अ २, उ २, सू ९४, पृ ८०
पृ ६५— ठा अ २, उ ३, सू ९४, पृ ८०
पृ. ६६— ठा अ. १०, सू ७२८, पृ. ४५७

समवायांग-सूत्र

पृ. २६—सम.	२०,	सू. ३
पृ. ३४—सम	८०,	
पृ ३४—सम. स.	८४,	सू. ६
पृ. ३६—सम.	८३,	सू. ३
पृ. ४१—सम. स	३०००,	सू. ११६
पृ. ४२—सम. स	७०००,	सू. १२०
पृ. ४३—सम.	८४,	
पृ. ४४—सम	१४६,	
पृ. ४४—सम.	३०,	सू. ८
पृ. ४५—सम.	२५,	
पृ. ४५—सम. स.	२५,	सू. ४
पृ. ४६—सम	१८,	सू ७
पृ ४६—सम.	१०,	सू. ११
पृ. ४७—सम.	३४,	
पृ. ४७—सम	३५,	
पृ. ४७—सम.	३६,	
पृ. ४७—सम.	४१,	
पृ. ४७—सम.	४३,	
पृ. ४७—सम.	५५,	
पृ. ४७—सम.	५८,	
पृ. ४७—सम.	७४,	
पृ. ४६—सम.	४५,	सू २
पृ. ५०—सम.	१,	सू. २०

प्रज्ञापना-सूत्र

पृ. ४३—पण्ण. पद १,	सू. १८,	पृ. २३६
पृ. ४४—पण्ण. पद २,		पृ. २३६—२४१
पृ. ४४—पण्ण. पद २,	सू १६,	पृ. २४३-४४
पृ. ४५—पण्ण पद २,	सू २०,	पृ. २४४-४५
पृ. ४५—पण्ण पद २,	सू. २१,	पृ. २४६
पृ. ४६—पण्ण. पद २,	सू. २२,	पृ. २४७
पृ ४६—पण्ण. पद २,	सू २३,	पृ २४८
पृ. ४६—पण्ण. पद २,	सू २४,	पृ. २४६
पृ. ४७—पण्ण. पद २,	सू. २५,	पृ. २५१

भवनावास

प्रज्ञापना-सूत्र

पृ ५३—पण्ण पद २, पृ २५५-२५६
पृ ५३—पण्ण पद २, पृ. २६५-२६८
पृ ५४—पण्ण पद २, पृ २६५-२६८
पृ ५५—पण्ण पद २, पृ २५५,
पृ ६१—पण्ण पद २, पृ. २७१-२७२
पृ ६२—पण्ण पद २, पृ २७३
पृ ६२—पण्ण पद २, पृ २७५
पृ ६३—पण्ण. पद २, पृ २७५-२७६
पृ ६३—पण्ण पद २, पृ. २७७
पृ ६४—पण्ण पद २, पृ २७८
पृ. ६५—पण्ण पद २, पृ २७९
पृ. ६५—पण्ण पद २, पृ २८०
पृ ६६—पण्ण पद २, पृ २८१

विवाह-पन्नत्ति-सूत्र

पृ ५३—विवा	भा २	श ३,	उ. १,	प्र १-३,	पृ ८४
पृ. ५३—विवा.	भा १,	श २,	उ ७,	प्र. ५०,	पृ. २९५
पृ. ५४—विवा.	भा १,	श १,	उ ५,	प्र. १६६,	पृ. १४२
पृ. ५४—विवा	भा ४,	श १९,	उ ७,	प्र १,	पृ. ८९
पृ. ५४—विवा.	भा. ३,	श १३,	उ. २,	प्र. ३,	पृ. १०७
पृ. ५५—विवा	भा. १,	श २,	उ. ८,	प्र. ५१,	पृ. २९७
पृ. ५६—विवा	भा ३,	श. १३,	उ ६,	प्र. २-३,	पृ ३२५
पृ ५६—विवा	भा. १,	श. २,	उ. ८,	प्र. ५१,	पृ २९७
पृ. ५९—विवा	भा १,	श २,	उ ८,	प्र ५१,	पृ २९७-२९९
पृ ६०—विवा	भा ४,	श. १६,	उ ९,	प्र. १,	पृ २६
पृ. ६६—विवा		श १,	उ ५,	प्र १६६,	पृ. १४२
पृ. ६६—विवा.	भा ३,	श. १३,	उ. ४,	प्र. ७,	पृ. ३१३

जीवाभिगम-सूत्र

पृ. ५३—जीवा. सू ११६, पृ १५८
पृ. ५४—जीवा सू ११७, पृ. १५९
पृ. ५५—जीवा सू ११६, पृ. १५८
पृ. ५९—जीवा प्रति, ३,
पृ. ६१—जीवा. सू. ११७, पृ. १५९
पृ. ६२—जीवा सू. ११९, पृ. १६६
पृ ६२—जीवा सू. १२०, पृ १६७
पृ ६३—जीवा. सू १२०, पृ १६७
पृ. ६३—जीवा. सू. १२०, पृ. १६८

समवायांग-सूत्र

पृ. ५३—सम. १५०,
पृ. ५४—सम. ६४,
पृ. ५५—सम. १४६,
पृ. ५७—सम. १७, सू. ७
पृ. ५८—सम. १०३,
पृ. ५८—सम ३३,
पृ. ५८—सम १६, सू. ६
पृ. ५८—सम ३६,
पृ. ५८—सम ५१,
पृ. ६०—सम १७,
पृ. ६१—सम. ३४, सू. ५
पृ. ६२—सम ८४, सू. ११
पृ. ६३—सम. ४०, सू. ४
पृ. ६४—सम. ७२, सू. १

रायप्रसेणी-सूत्र

पृ. ५६—राय. पद ७६, सू. ३२

स्थानांग-सूत्र

पृ. ५७—ठा अ १०,		सू. ७२८,	पृ ४५७
पृ. ५८—ठा. अ ५,	उ. ३,	सू. ४७२,	पृ. ३३३
पृ. ६०—ठा. अ. १०,		सू. ७२८,	पृ. ४५७
पृ. ६०—ठा. अ. १०,		सू. ७२८,	पृ. ४५७
पृ. ६१—ठा. अ १०,		सू. ७२८,	पृ. ४५७
पृ. ६४—ठा. अ. २,	उ २,	सू. ६४,	पृ ८०
पृ. ६५—ठा. अ. २,	उ. ३,	सू ६४,	पृ. ८०
पृ. ६६—ठा अ १०,		सू. ७२८,	पृ ४५७

मध्य-लोक

वानव्यंतर देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ ६७—पण्ण. पद २, पृ. २८४–२८६

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ६७—जीवा. सू १२१

समवायाग-सूत्र—

पृ ६७—सम सू १५०, पृ. १७१

पृ ६७—सम सू १११, सू २

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ६७—विवा. भा. ४, श १६, उ. ८, प्र. ३, पृ. ६०

पृ. ६८—विवा. भा १, श १, उ १, प्र. ६२, पृ ८४—८५

पिशाच-देवों के स्थान

प्रज्ञापना सूत्र—

पृ. ६८—पण्ण पद २, पृ. २८६—२६०

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ६८—जीवा सू. १२१, पृ १७१

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ६८—ठा. अ २, उ ३, सू ६४, पृ ८०

दाक्षिणात्य पिशाच-देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ.६६—पण्ण पद २, पृ २६०—२६१

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ६६—जीवा सू १२१, पृ १७१

उत्तरीय पिशाच-देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ. ६६—पण्ण पद २, पृ. २६१—६२

वाणव्यन्तर देवों की सुधर्मा-सभा

समवायांग-सूत्र—

पृ ७१—सम. ६, सू १०

तिर्यक् लोक: भेद, संस्थान, मध्य

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ७१—विवा भा ३, श ११, उ १०, प्र ४—७, पृ २२८—२२६

पृ. ७१—विवा. भा ३, श १३, उ ४, प्र. ६ पृ. ३१

जंबूद्वीप

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ७२— जवू वक्ष. १, सू. ३, पृ. १४—१५
पृ ७२— जवू सूत्र १७४, पृ. ५३८

स्थानांग-सूत्र—

पृ ७२— ठा. १, सू. ५२

समवायांग-सूत्र—

पृ ७२— सम. १, सू. १६
पृ ७२— सम. १ लाख, सू. १२४, पृ. ११८

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ७२— विवा भा ३, श ६, उ. १, प्र २, पृ १२५

जंबूद्वीप की जगती

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ७३— जवू. वक्ष. १, सू. ४, पृ. २०

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ७३— ठा. ८, सू. ६४२, पृ. ४१३
पृ ७३— ठा २, उ ३, सू ६३, पृ ७६

समवायांग-सूत्र—

पृ ७३— सम. ८, सू. ६, पृ. १५
पृ. ७३— सम. १२, सू. ६, पृ २४
पृ. ७५— सम. सू. १३०

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ७३—जीवा प्र. ३, उ १, सू. १२४
पृ ७५—जीवा. प्रति. ३, सू. १२५, पृ. १७६–१८०
पृ. ७६—जीवा. प्र. ३, उ. १, सू. १२६–२७

जगती-पर वन-खंड

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ७६— जम्वू वक्ष १, सू. ५, पृ. २७
पृ. ७६— जवू, वक्ष. १, सू ६, पृ. ३०—३१

जम्बू द्वीप के द्वार

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ७७— जवू, वक्ष १, सू. ७–८, पृ. ४७
पृ. ७८— जवू, वक्ष. १, सू, ६, पृ. ६५

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ७७— जीवा, प्र ३, उ. १, सू १२८, १४३
पृ ७८— जीवा, प्रति ३, सू १४४–१४५ पृ. २६०

स्थानांग-सूत्र—

पृ ७७—ठा ४, उ २, सू ३०३, पृ २१४
पृ ७७—ठा ८, सू ६५७, पृ ४२०

समवायांग-सूत्र—

पृ ७७—सम ३७, सू ३

'जंबूद्वीप' नाम का हेतु

जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ७९—जंबू. वक्ष ७, सू १७७, पृ ५४०

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ७९—जीवा प्र ३, उ २, सू १५२, पृ २९५
पृ ७९—जीवा. प्र ३, उ २, सू १५२

जंबूद्वीप की नित्यानित्यता

जंबूद्वीप प्रज्ञाप्ति-सूत्र—

पृ ७९—जंबू वक्ष ७, सू १७५, पृ. ५३८

जंबूद्वीप में वर्षधर-पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ८०—ठा ६, उ ३, सू ५२२, पृ ३५०
पृ ८०—ठा. ७, सू ५५५, पृ ३७७
पृ ८०—ठा ३, उ ४, सू १९७, पृ १५०

चुल्लहिमवन्त-पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ८०—ठा अ २, उ ३, सू ८७, पृ ६५
पृ ८०—ठा. अ ३, उ ४, सू. १९७, पृ १५१
पृ ८०—ठा ७, सू ५५५, पृ. ३७७

समवायांग सूत्र—

पृ. ८०—सम. १००, सू ७
पृ ८१—सम २४, सू २

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ८१—जंबू वक्ष ४, सू ७२, पृ २८१

छः द्रह

स्थानांग-सूत्र—

पृ ८१—ठा. ६, उ ३, सू, ५२२, पृ. ३५०

द्रहवर्तिनी–देवियाँ

स्थानांग–सूत्र—

पृ. ८२—ठा. ६, उ. ३, सू ५२२, पृ. ३५०
पृ. ८२—ठा २, उ. ३, सू. ८८, पृ. ६८
पृ. ८२—ठा ३, उ. ४, सू. १९७, पृ. १५०

पद्म—द्रह

स्थानांग–सूत्र—

पृ ८२—ठा. अ. २, उ. ३, सू. ८८, पृ. ६८
पृ. ८२—ठा. अ. ३, उ. ४, सू १९७, पृ. १५०
पृ. ८२—ठा. १०, सू. ७७९, पृ. ४९८

समवायांग–सूत्र—

पृ. ८२—सम. २१३, सू १०

'पद्मद्रह' संज्ञा का कारण

जबूद्वीप प्रज्ञप्ति–सूत्र—

पृ. ८५— जबू वक्ष. ४, सू ७३, पृ. २८३–८४

गंगा का उद्गम और प्रपात

स्थानांग–सूत्र—

पृ ८५—ठा. २, उ ३, सू. ८८, पृ. ६८
पृ. ८५—ठा. २, उ. ३, सू. १९७
पृ. ८५—ठा. ८, सू. ६३९, पृ. ४१३
पृ. ८६—ठा. २, उ. ३, सू. ८८, पृ. ६८
पृ. ८६—ठा. १०, सू ७७९, पृ. ४९८

समवायांग–सूत्र—

पृ. ८६—सम. २५, सू. ७, पृ. ५२

गंगा–द्वीप

स्थानांग–सूत्र—

पृ. ८८—ठा. ८, सू. ६२९, पृ. ४११

गंगा–संगम

स्थानांग–सूत्र—

पृ. ८९—ठा. ५, उ. ३, सू. ४७०, पृ. ३३३
पृ. ८९—ठा. १०, सू. ७१७, पृ. ४५३

समवायांग–सूत्र—

पृ. ८९—सम २४, सू. ५, पृ. ४९

सिन्धु–नदी

स्थानांग-सूत्र—
पृ ९०—ठा ८, सू ६३६, पृ. ४१३
पृ. ९०—ठा ८, सू ६३६, पृ. ४१३
पृ ९०—ठा. ८, सू ६२६, पृ ४११
पृ ९०—ठा. ५, उ ३, सू ४७०, पृ ३३३
पृ ९०—ठा १०, सू ७१७, पृ ४५३

रोहितांसा–महानदी

स्थानांग-सूत्र—
पृ ९०—ठा. ३, उ ४, सू १९७, पृ १५१

रोहितांसा का संगम

स्थानाग-सूत्र—
पृ. ९१—ठा ३, उ ४, सू १९७, पृ १५१
जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ९२—जवू. वक्ष ४, सू ७४[१], पृ. २८९—९०

चुल्लहिमवन्त पर्वत के कूट

स्थानांग-सूत्र—
पृ ९२—ठा २, उ ३, सू. ८७, पृ. ६५

कूट–वर्णन

समवायाग-सूत्र—
पृ ९२—सम. १०८, सू २

चुल्लहिमवन्त–कूट

समवायाग-सूत्र—
पृ ९३—सम ६००, सू २

'चुल्लहिमवन्त वर्षधर–पर्वत' संज्ञा का हेतु

जवूद्वीप–प्रज्ञप्ति—सूत्र—
पृ ९५—जवू वक्ष ४, सू ७५,[२] पृ २९६

---

१ पृ. ८५–"गगा का उद्गम और प्रपात" पृ ८७– "गगा प्रपात कुड के सोपान" "तोरण वर्णन", पृ ८८ गगा द्वीप", पृ ८९– "गगा–सगम", पृ ९०– "सिन्धु-नदी," रोहितासा महानदी," पृ. ९१– "रोहितासा द्वीप," "रोहितासा का सगम" —इन शीर्षकों के नीचे का मूल पाठ इस सूत्र के अतर्गत है।

२ पृ ९२—"चुल्लहिमवन्त पर्वत के कूट," कूटवर्णन," पृ० ९३—"चुल्लहिमवन्त कूट," पृ० ९४—"चुल्ल-हिमवन्ता राजधानी," "अवशेष कूट," पृ० ९५—"चुल्लहिमवन्त वर्ष-धर-पर्वत संज्ञा का हेतु"—इन शीर्षको के नीचे का मूलपाठ—इस सूत्र के अतर्गत है।

महाहिमवन्त वर्षधर-पर्वत

समवायांग सूत्र—

पृ. ६५—सम. १०२, सू. २
पृ. ६५—सम. ५३, सू. २
पृ. ६६—सम. ५७, सू. ५

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ६६—जबू वक्ष. ४, सू. ७६, पृ. ३०१

महापद्म-द्रह

समवायांग-सूत्र—

पृ ६६—सम. ११५

रोहिता-महानदी का उद्गम

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ६७—ठा. अ. २, उ. ३, सू. ८८, पृ. ६८

हरिकान्ता महानदी का उद्गम

स्थानांग-सूत्र—

पृ ६६—ठा. अ. २, उ. ३, सू ८८, पृ. ३८

हरिकांता-नदी का संगम

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १००—जबू वक्ष ४, सू ८०, पृ. ३०२

महाहिमवन्त-पर्वत के कूट

स्थानांग-सूत्र—

पृ १००—ठा ८, उ ३, सू. ६४३, पृ ४१३
पृ १००—ठा २, उ ३, सू. ८७, पृ ६५

समवायांग-सूत्र—

पृ. १००—सम ८७, सू ६
पृ १००—सम. ११०, सू. ५

महाहिमवन्त नाम का हेतु

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १०१—जबू वक्ष ४, सू ८१, पृ. ३०४

निषध-पर्वत

समवायांग-सूत्र—

पृ. १०१—सम. १०६, सू २
पृ. १०१—सम ६४, सू १

स्थानांग-सूत्र—

पृ १०१—ठा ४, उ २, सू ३०२, पृ. २१२

तिगिच्छ-द्रह

जंवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १०२—जम्बू वक्ष ४, सू. ८३, पृ ३०६

स्थानांग-सूत्र—

पृ १०२—ठा. उ ३, सू ८८, पृ ६८

समवायांग-सूत्र—

पृ १०२—सम ४०००, सू. ११७

हरसलिला-महानदी

स्थानाग-सूत्र—

पृ १०३—ठा. २, उ ३, सू ८८, पृ ६८

शीतोदा-महानदी-उद्गम

समवायांग-सूत्र—

पृ १०४—सम ७४, सू २

शीतोदा-संगम

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १०५—ठा. १०, सू ७७६, पृ ४९८

निषध-पर्वत के कूट

स्थानाग-सूत्र—

पृ १०५—ठा २, उ ३, सू. ८७, पृ ६५

पृ १०५—ठा ९, सू. ६८९, पृ ४३०-३१

समयावांग-सूत्र—

पृ १०५—सम ११२, सू ९

जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १०५—जबू वक्ष ४, सू. ८४, पृ ३०८

नीलवन्त-पर्वत

स्थानाग-सूत्र—

पृ. १०६—ठा. २, उ ३, सू ८८, पृ ६८

समयावांग-सूत्र—

पृ १०६—सम ७४, सू ३

नीलवन्त-पर्वत के कूट

स्थानाग-सूत्र—

पृ १०७—ठा ९, सू ६८९, पृ ४३१

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १०७—ठा २, उ. ३, सू. ८७, पृ. ६५

'नीलवंत' का नाम हेतु

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १०७—जबू. वक्ष. ४, सू ११०, पृ. ३७६

समवायांग-सूत्र—

पृ. १०७—सम. ११२, सू ७

रुक्मी-पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ १०८—ठा. २, उ ३, सू. ८८ पृ ६८

रुक्मी-पर्वत के कूट

स्थानांग-सूत्र—

पृ १०८—ठा. ८, उ ३, सू. ६४३, पृ. ४१३

पृ. १०८—ठा. २, उ. ३, सू ८७, पृ. ६५

समवायाग-सूत्र—

पृ १०८—सम. ८७, सू. ७

पृ. १०८—सम. ११०, सू. ६

'रुक्मी'-संज्ञा का हेतु

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १०९—जबू. वक्ष. ४, सू. १११, पृ. ३७८

शिखरी-पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १०९—ठा. ६, सू ५२२, पृ ३५०

पृ १०९—ठा. ३, उ. ३, सू १९७, पृ. १५०

पृ १०९—ठा ५, उ. ३, सू ४७०, पृ. ३३३

पृ १०९—ठा. ५, उ. १०, सू ७१७, पृ. ४५३

समवायांग-सूत्र—

पृ. १०९—सम. २५, सू. ८

शिखरी-पर्वत के कूट

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ११०—ठा २, उ ३, सू. ८७, पृ. ६५

पृ. ११०—ठा. ६, सू ५२२, पृ. ३५०

समवायांग-सूत्र—

पृ ११०—सम १०८, सू. २

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ११०—जबू. वक्ष. सू. १११, पृ. ३७९

जंबू-द्वीप में वर्ष

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १११—जवू वक्ष. ६, सू १२५, पृ ४२६

स्थानांग-सूत्र—

पृ १११—ठा ७, सू ५५५, पृ ३७७

समवायांग-सूत्र—

पृ १११—सम ७, सू ५

कर्म-भूमियां

स्थानांग-सूत्र—

पृ १११—ठा ३, उ ३, सू १८३, पृ १४०

अकर्म-भूमियां

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १११—ठा ६, सू ५२२, पृ. ३५०

उत्तर-दक्षिण के क्षेत्रों की समानता

स्थानांग-सूत्र—

पृ १११—ठा ६, सू. ५२२, पृ. ३५०
पृ. १११—ठा १०, सू. ७२३, पृ ४५३
पृ १११—ठा. ३, उ ४, सू १९७, पृ १५०
पृ १११—ठा ४, उ २, सू ३०२, पृ. २१२
पृ ११२—ठा २, उ ३, सू ८५, पृ ३३

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ११२—जवू वक्ष १, सू १०, पृ. ६५-६६

'भरत' संज्ञा का हेतु

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ११३—जवू. वक्ष ३, सू ४१-४२, पृ. १७९-८०
पृ ११४—जवू वक्ष ३, सू ७१, पृ २८०

स्थानांग-सूत्र—

पृ ११३—ठा १०, सू. ७१८, पृ ४५३

दक्षिणार्ध-भरत की अवस्थिति

समवायांग-सूत्र—

पृ ११४—सम. ९०००, सू. १२२
पृ ११४—सम ९८, सू ४

दक्षिणार्ध-भरत का आकार-भाव

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ११५—जवू वक्ष १, सू ११, पृ. ६८

उत्तरार्ध-भरत का आकार-भाव-स्वरूप

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ११६—जबू वक्ष १, सू. १६, पृ. ८५

समवायांग-सूत्र—
पृ ११६—सम १४, सू ६

ऋषभकूट-पर्वत

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ११७—जबू. वक्ष. १, सू. १७, पृ. ८६

स्थानांग-सूत्र—
पृ ११७—ठा. ८, सू ६३६, पृ. ४१३

वैताढ्य-पर्वत

समवायांग-सूत्र—
पृ. ११८—सम. १००, सू. ६, पृ. १०८
पृ ११८—सम. २५, सू ३, पृ ५१
पृ ११८—सम. ५०, सू ४, पृ. ८२

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ११९—जंबू. वक्ष १, सू. १२, पृ. ७०

तमिस्र-गुफा और खण्ड-प्रपात-गुफा

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ११९—जबू. वक्ष. १, सू. १२, पृ. ७१

समवायांग-सूत्र—
पृ. ११९—सम. ५०, सू. ६

स्थानाग-सूत्र—
पृ. ११९—ठा. ८, सू ६३६, पृ. ४१२
पृ. ११९—ठा. २, उ. ३, सू. ८७, पृ. ६५

विद्याधर-श्रेणियां

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ १२०—जबू. वक्ष १, सू. १२, पृ ७१

स्थानांग-सूत्र—
पृ १२०—ठा. १०, सू. ७७४, पृ. ४९३

अभियोग्य-श्रेणियां

स्थानांग-सूत्र—
पृ. १२१—ठा. १०, सू ७७४, पृ. ४९३

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ १२२—जबू. वक्ष १, सू. १२, पृ. ७१

वैताढय का शिखर

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १२२—जंवू वक्ष. १, सू १२ पृ ७२

वैताढय के कूट

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १२३—जवू वक्ष १, सू. १२, पृ. ७२

सिद्धायतन-कूट

स्थानाग-सूत्र—

पृ १२३—ठा. ६, सू ६८६, पृ ४३०

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १२४—जवू वक्ष १, सू १३, पृ ७७–७८

शेष-कूट

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १२६—जवू वक्ष १, सू १४, पृ, ८३

'वैताढ़य' नाम का हेतु

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र

पृ १२७—जवू. वक्ष १, सू १५, पृ ८४

ऐरावत-वर्ष

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १२७—जवू वक्ष ४, सू १११

महाविदेह-वर्ष

स्थानाग-सूत्र—

पृ १२८—ठा. ४, उ २, सू ३०२, पृ २१२

'महाविदेह' संज्ञा का हेतु

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १२९—जवू वक्ष ४, सू. ८५, पृ. ३११

गंधमादन-पर्वत

स्थानाग-सूत्र—

पृ १३०—ठा २, उ ३, सू ८७, पृ ६५

पृ १३०—ठा ४, उ २, सू. ३०२, पृ. २१२

पृ १३०—ठा ५, उ २, सू. ४३४, पृ. ३१०

समवायाग-सूत्र—

पृ १३०—सम. ५००, सू. १–५, पृ ११२

गंधमादन–पर्वत के कूट

स्थानांग-सूत्र

पृ १३१—ठा. ७, सू ५९०, पृ. ३९३

'गंधमादन' संज्ञा का कारण

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १३२—जबू वक्ष ४, सू. ८६, पृ ३१३

महाविदेह में माल्यवन्त–पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १३२—ठा. ९, सू. ६८९, पृ ४३०

समवायाग सूत्र—

पृ १३२—सम ११३, सू. ५

माल्यवन्त का सागर–कूट

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १३३—जबू. वक्ष ४, सू ९१, पृ. ३३७

'माल्यवन्त' संज्ञा का हेतु

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १३४—जबू. वक्ष ४, सू. ९२, पृ ३६८–३६९

सोमनस–पर्वत के कूट

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १३५—जबू. वक्ष ४, सू ९७, पृ. ३५३

विद्युत्प्रभ–पर्वत के कूट

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १३६—जबू. वक्ष. ४, सू. १०१, पृ ३५५

स्थानांग-सूत्र—

पृ १३६—ठा. ९, सू ६८९, पृ. ४३०

मन्दर–पर्वत

सववायाग-सूत्र—

पृ. १३७ सम ९९, सू. १
पृ. १३७—सम. ८५, सू २
पृ. १३७—सम ८४, सू. ६
पृ १३७—सम. १०, सू. ३
पृ १३७—सम. — सू. १२३
पृ १३७—सम. ११, सू. ७
पृ. १३७—सम. ३१, सू. २
पृ. १३७—नम. ४५, सू. ६
पृ १३७—सम. ५५, सू. २–३

स्थानांग-सूत्र—

पृ १३७—ठा. १०, सू ७२१, पृ ४५३

पृ. १३७—ठा १०, सू ७१९, पृ. ४५३

भद्रशाल-वन

स्थानाग-सूत्र—

पृ १३८—ठा ४, उ २, सू ३०२, पृ २१२

दिशाहस्ति-कूट

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १४१—जवू वक्ष ४, सू १०३, पृ. ३६०

स्थानाग-सूत्र—

पृ १४१—ठा ८, सू ६४२, पृ ४१३

नन्दन-वन

समवायाग-सूत्र—

पृ. १४२—सम. ८५, सू ४

पृ १४२—सम ९८, सू १

पृ १४२—सम ९९, सू २

नन्दन-वन के कूट

स्थानाग-सूत्र—

पृ १४३—ठा. ९, सू. ६८९, पृ ४३०

समवायाग-सूत्र—

पृ. १४३—सम. ११३, सू. ६

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १४४—जवू. वक्ष ४, सू १०४, पृ १६६-१६७

सौमनस-वन

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १४५—जवू. वक्ष ४, सू. १०५, पृ ३६९

पृ १४६—जवू वक्ष ४, सू १०६, पृ ३७०

समवायाग-सूत्र—

पृ. १४६—सम. ४०, सू २

पृ १४६—सम. १२, सू. ६

स्थानांग-सूत्र—

पृ १४६—ठा ८, उ ३, सू ६४०, पृ. ४१३

अभिषेक-शिलाएँ

पाण्डु-शिला

स्थानांग-सूत्र—

पृ १४७—ठा. ४, उ. २, सू ३०२, पृ. २१२

रक्तकंबल-शिला

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १४९—जबू वक्ष ४, सू. १०७, पृ. ३७२

मन्दर-पर्वत के काण्ड

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १५०—जबू. वक्ष. ४, सू. १०८

स्थानांग-सूत्र—

पृ १५०—ठा. १०, सू ७१६, पृ. ४५३

पृ. १५०—ठा १०, सू. ७१६, पृ. ४५३

समवायाग–सूत्र—

पृ. १५०—सम. ६१, सू. २

पृ. १५०—सम. ३८, सू. ३

मन्दर-पर्वत के नाम

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १५१—जबू. वक्ष. ४, सू १०९, पृ. ३७५

समवायांग-सूत्र—

पृ. १५१—सम. १६, सू. ३

कच्छ-विजय

समवायांग-सूत्र—

पृ १५१—सम. ३४, सू २

स्थानांग-सूत्र—

पृ १५१—ठा. ८, सू. ६३७, पृ. ४१३

कच्छ-विजय का वैताढ्य-पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १५३—ठा. ९, सू. ६८९, पृ. ४३०

'कच्छ' संज्ञा का कारण

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १५६—जबू वक्ष. ४, सू ९३, पृ. ३४१

चित्रकूट-वक्षस्कार-पर्वत

स्थानाग-सूत्र—

पृ १५६—ठा ४, उ २, सू. ३०२, पृ २१२

समवायाग-सूत्र—

पृ. १५६—सम. ११३, सू. ३

चित्रकूट के कूट

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १५७—जवू वक्ष, ४, सू ९४, पृ ३४४

उत्तरीय-शीता-मुखवन

स्थानाग सूत्र—

पृ १६३—ठा. ८, उ ३, सू ६३७, पृ ४१३

उत्तर की शेष वक्तव्यता

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १६४—जवू. वक्ष. ४, सू ९५, पृ ३४७

वत्स आदि विजय

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १६६—जवू वक्ष ४, सू ९६, पृ ३५२

शेष विजयादि-वक्तव्यता

जंवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १६७—जवू वक्ष ४, सू १०२, पृ ३५७

हैमवत-वर्ष

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १६९—जवू वक्ष. ४, सू ७६, पृ २९८

समवायाग-सूत्र—

पृ. १६९—सम ६७, सू २

पृ १६९—सम ३७, सू २

पृ १६९—सम. ३८, सू २

शब्दापाती-पर्वत

जवूद्वीप प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १७०—जवू वक्ष. ४, सू ७७, पृ २९९

समवायाग-सूत्र—

पृ १७०—सम ९०, सू ५

पृ १७०—सम ११३

स्थानाग-सूत्र—

पृ १७०—ठा २, उ. ३, सू ८७, पृ ६५

पृ. १७०—ठा १०, सू. ७२२, पृ ४५३

'हैमवत' संज्ञा का हेतु

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १७१—जंबू वक्ष ४, सू ७८, पृ. ३००

हैरण्यवत-वर्ष

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १७१—जंबू वक्ष. ४, सू. १११, पृ. ३७८-७६

हरि-वर्ष

समवायांग-सूत्र—

पृ १७३—सम १२१

पृ. १७३—सम. ७३, सू १

पृ. १७३—सम ८४, सू. ८

'हरि-वर्ष' संज्ञा का हेतु

जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १७४—जम्बू. वक्ष. ४, सू ८२, पृ ३०४

उत्तर-कुरु की अवस्थिति

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १७६—जम्बू. वक्ष. ४, सू ८७, पृ. ३१३

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. १७६—जीवा. सू. १४७, प. २६२

उत्तर-कुरु का स्वरूप

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति—सूत्र—

पृ. १७६—जम्बू. वक्ष. ४, सू. ८७, पृ. ३१३

उत्तर-कुरु में यमक-पर्वत

समवायांग-सूत्र—

पृ १७७—सम. ११३, सू. २

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. १७७—जीवा. सू. १४८, पृ २८६-८७

यमक-देवों की राजधानियां

जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १८१—जम्बू. वक्ष. ४, सू. ८८, पृ. ३१८

उत्तर-कुरु में नीलवन्त-द्रह

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १८३—जम्बू वक्ष ४, सू ८६, पृ. ३२६

समवायांग-सूत्र—

पृ. १८३—सम. १०२, सू. ३
पृ १८३—सम ५०, सू ३
पृ. १८३—सम. १००, सू ८

स्थानाग-सूत्र—

पृ. १८३—ठा ५, उ २, सू. ४३४, पृ ३१०

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ १८३—जीवा. सू १४०-१५०, पृ २८८-६१

जम्बू-पीठ

समवायाग-सूत्र—

पृ १८४—सम ८, सू. ५

अनादृत देव की राजधानी

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १८८—जम्बू वक्ष. ४, सू. ६०, पृ. ३३०-३३२

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ १८८—जीवा सू. १५१-५२, पृ. २६२-६७

देव-कुरु

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १८८—जम्बू वक्ष. ४, सू. ६७

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. १८८—जीवा. प्र ३, सू १४७, पृ २६२

चित्रकूट-विचित्र कूट-पर्वत

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १८६—जम्बू वक्ष. ४, सू ६८

स्थानाग-सूत्र—

पृ. १८६—ठा. अ. १०, सू ७६८, पृ ४६१

निषधादि पांच-द्रह

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १८६—जम्बू वक्ष, ४, सू. ६६

स्थानाग-सूत्र—

पृ. १८६—ठा अ ५, उ. २, सू ४३४, पृ ३१०

कूट-शाल्मली-पीठ

जंवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १९०—जम्बू वक्ष ४, सू १००, पृ. ३५५

स्थानांग-सूत्र—

पृ १९०—ठा. अ १०, सू ७६४, पृ. ४९०

जंबू-द्वीपवर्ती-पदार्थ

समवायांग-सूत्र—

पृ १९१—सम १०२, सू ३
पृ. १ १—सम. ३४, सू ३

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १९१—ठा. २,	उ. ३,	सू. ८७,	पृ ६५
पृ. १९१—ठा ४,	उ. २,	सू. ३०२,	पृ. ३१२
पृ. १९१—ठा ५,	उ. २,	सू. ४३४,	पृ. ३१०
पृ. १९१—ठा. ८,		सू. ६३७,	पृ. ४११-४१२
पृ. १९१—ठा १०,		सू. ७६८,	पृ. ४९१
पृ. १९१—ठा. ४,	उ. २,	सू. ३०२,	पृ. २१२-१३
पृ. १९१—ठा. ३,	उ १,	सू १४२,	पृ. ११६
पृ. १९१—ठा. ६,		सू ५२२,	पृ. ३५०

जंबू-द्वीप में नदियां

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १९३—ठा. ६,		सू. ५२२,	पृ. ३५०
पृ. १९३—ठा. ७,		सू ५५५,	पृ. ३७७
पृ. १९३—ठा २,	उ. ३,	सू. ८८,	पृ. ६५

जंवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. १९४—जबू. वक्ष. ६. सू १२५, पृ. ४२५-४२७

जंबू-द्वीप-लवण-समुद्र के प्रदेशों का स्पर्श

जंवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ १९५—जबू. वक्ष ६, सू. १२४, पृ १२४

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ १९५—जीवा सू. १४६, पृ. २६१

लवण-समुद्र वर्णन

स्थानांग-सूत्र—

पृ. १९६—ठा. २, उ ३, सू. ९१, पृ. ७४
पृ. १९६—ठा. २, उ. ३, सू. ९१, पृ. ७४

समयावांग-सूत्र—

पृ. १९६—सम. सू. १२५, पृ. ११८
पृ. १९६—सम. १२८

लवण-समुद्र की गहराई

समवायांग-सूत्र—

पृ १९७—सम. ९५, सू. ३, (संक्षिप्त)
पृ. १९७—सम. १६, पृ. २, (संक्षिप्त)

लवण-समुद्र के जल की हानि-वृद्धि

समवायांग-सूत्र—

पृ १९७—सम ९५, सू २

स्थानांग-सूत्र—

पृ १९७—ठा ४, उ २, सू. ३०५, पृ २१५
पृ १९८—ठा अ १०, सू ७२०, पृ ४५३

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. १९९—जीवा. सू १५६, पृ ३०४-५

लवण-समुद्र का वेलाधारण

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २०१—जीवा. सू १५६, पृ ३०४-५

समवायांग-सूत्र—

पृ. २०१—सम. ४२, सू. ७
पृ २०१—सम. ७२, सू २
पृ. २०१—सम ६०, सू २

लवण-समुद्र में वेलंधर आदि

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २०१—जीवा सू १६८, पृ ३२०

वेलंधर-नागराज

समवायांग-सूत्र—

पृ २०२—सम. ४२, सू २-३
पृ २०२—सम ४३, सू. ३-४
पृ २०२—सम ५२, सू २-३
पृ २०२—सम ५७, सू २-३
पृ २०२—सम. ५८, सू ३-४
पृ २०२—सम. ८७, सू. १-४
पृ २०२—सम. ९२, सू ३-४
पृ २०२—सम ९७, सू. १-२
पृ. २०२—सम. ९८, सू २-३
पृ. २०२—सम १७, सू ४

स्थानांग-सूत्र—

पृ. २०२—ठा ४, उ २, सू ३०५, पृ. २१५

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २०४—जीवा सू १५९, पृ ३०९-१०

अनुवेलंधर नागराज

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २०६—जीवा. सू. १६०, पृ. ३१३

लवण-समुद्र का विस्तार

समवायांग-सूत्र—

पृ २०७—सम. १६, सू. ७
पृ. २०७—सम. १७, सू. ३

जंबू-द्वीप को जलमग्न न करने के हेतु

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २०८—जीवा. सू. १५४-१७३, पृ. ३००-३२५

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २०८—विवा. भा. २, श. ३, उ. ३, प्र. १८ पृ. ८२,
पृ. २०८—विवा. भा. २, श ५, उ. २, प्र. १६ पृ. १६३,

गोतीर्थ

स्थानांग-सूत्र—

पृ. २०६—ठा. १०, उ. १, सू ७२०, पृ. ४५३

छप्पन अन्तर-द्वीप

स्थानांग-सूत्र—

पृ. २१०—ठा. ४, उ. २, सू. ३०४, पृ. २१४-१५
पृ. २१०—ठा. ८, सू ६३०, पृ. ४११
पृ. २१०—ठा. ६, सू. ६६८, पृ. ४४४

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २१०—जीवा. प्रति. २, सू. १०६-११२, पृ १४४-१५६

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २१०—विवा. भा. ३, श. ६, उ ३-३०, पृ. १२७
पृ २१०—विवा. भा. ३, श. १०, उ. ७-३४, पृ २०५

गौतम-द्वीप

समवायाग-सूत्र—

पृ. २११—सम. ६७, सू ३
पृ. २११—सम ६६, सू. ३

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २१२—जीवा सू १६१, पृ. ११४

लवण-समुद्र के द्वार

स्थानांग-सूत्र—

पृ २१३—ठा ४, उ २, सू ३०५, पृ २१५

लवणादि समुद्रों के जल की विशेषता

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २१५—विवा श ६, उ ८, प्र. १६, पृ ३३३-३४

धातकी-खण्ड-द्वीप

समवायाग-सूत्र—

पृ. २१६—सम ४, सू १२७, पृ ११८
पृ. २१७—सम ६८, सू ४
पृ २१७—सम ३७, सू ३

स्थानांग-सूत्र—

पृ. २१६—ठा अ. ४, उ २, सू. ३०६, पृ २१५
पृ २१६—ठा अ २, उ. ३, सू ९२, पृ. ७५
पृ. २१७—ठा अ. २, उ. ३, सू ९२, पृ. ७५
पृ २१७—ठा. अ ३, उ १, सू १४२, पृ ११६
पृ. २१७—ठा अ. ३, उ ३, सू. १८३, पृ १४०
पृ २१७—ठा. अ. ३, उ ४, सू. १९७, पृ १५०
पृ २१७—ठा अ. ४, उ २, सू. ३०२, पृ २१३
पृ २१७—ठा अ. ५, उ. २, सू ४३४, पृ ३०९
पृ २१७—ठा अ. ७, सू ५५५, पृ. ३३७
पृ २१७—ठा अ ८, सू ६४१, पृ. ४१३
पृ २१७—ठा. अ १०, सू. ७६८, पृ ४६१

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २१७—जीवा प्रति ३, उ. २, सू १७४

कालोद-समुद्र

स्थानांग-सूत्र—

पृ २१८—ठा अ ८, सू ६३१, पृ ४११
पृ २१८—ठा. अ. २, उ. ३, सू. ९३, पृ ७५

समवायांग-सूत्र—

पृ. २१८—सम ९१, सू. २, पृ १०३

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २१९—जीवा. प्रति ३, उ २, सू १७५

पुष्करवर-द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २२१—जीवा प्रति ३, उ. २, सू १७६

स्थानांग-सूत्र—

पृ. २२१—ठा. अ. ८, सू. ६३२, पृ. ४११
पृ २२१—ठा. अ. २, उ. ३, सू. ९३, पृ. ७५
पृ, २२१—ठा. अ. ३, उ १, सू १४२-१४३, पृ. ११६
पृ. २२१—ठा. अ. ३, उ. ३, सू १८३, पृ. १४०
पृ. २२१—ठा अ. ३, उ. ४, सू. १९७, पृ. १५०
पृ. २२१—ठा. अ. ५, उ. २, सू. ४३४, पृ ३०९
पृ. २२१—ठा. अ. ६, सू. ५२२, पृ. ३५०
पृ. २२१—ठा. अ. ७, सू. ५५५, पृ. ३७७
पृ. २२१—ठा. अ. ८, सू. ६४१, पृ. ४१३
पृ. २२१—ठा. अ. १०, सू. ७६८, पृ ४९१
पृ. २२१—ठा अ. १०, सू. ७२१, पृ ४५३

समवायांग-सूत्र—

पृ. २२१—सम. ६८, सू. १, पृ. ९०
पृ. २२१—सम. ३७, सू ३, पृ. ७५

समय-क्षेत्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २२२—जीवा. प्रति. ३, उ. २, सू. १७६

समवायांग-सूत्र—

पृ २२२—सम. ४५, सू १, पृ ८०
पृ. २२२—सम. ३९, सू. २,
पृ. २२२—सम ६९, सू. १

स्थानांग-सूत्र—

पृ. २२२—ठा. ३, उ. २, सू १४८, पृ. ११९
पृ. २२२—ठा. ४, उ. ३, सू. ३२८, पृ. २३८

'मनुष्य-क्षेत्र' संज्ञा का हेतु

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २२३—जीवा. प्रति. ३, उ २, सू. १७६

मानुषोत्तर-पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ २२३—ठा. २, उ. ४, सू १११, पृ. ९३
पृ. २२३—ठा ५, उ. २, सू. ४३४, पृ ३१०
पृ २२३—ठा १०, सू. ७६४, पृ. ४९०
पृ. २२३—ठा १०, सू ७२४, पृ. ४५३
पृ २२४—ठा. ३, उ. ४, सू. २०४, पृ. १५६

समवायांग-सूत्र—

पृ २२३—सम. १७, सू ३, पृ ३४

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २२४—जीवा प्रति. ३, उ २, सू १७८
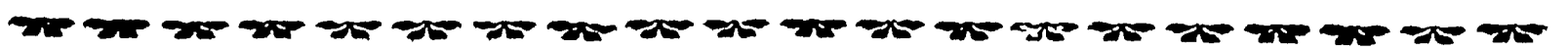
पुष्करोद-समुद्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २२५—जीवा प्रति ३, उ २, सू. १८०

वरुणवर-द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २२६—जीवा प्रति ३, उ २, सू १८०

वरुणोद-समुद्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २२७—जीवा प्रति ३, उ २, सू १८०

क्षीरवर-द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २२७—जीवा प्रति ३, उ. २, सू १८१

क्षीरोद-समुद्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २२८—जीवा प्रति ३, उ २, सू १८१

घृतवर-द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २२८—जीवा. प्रति ३, उ २, सू १८२

घृतोद-समुद्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २२९—जीवा प्रति ३, उ २, सू. १८२

क्षोदवर-द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २२९—जीवा प्रति ३, उ. २, सू १८२

क्षोदोद-समुद्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २३०—जीवा प्रति. ३, उ. २, सू १८२

नंदीश्वरवर-द्वीप

स्थानाग-सूत्र—

पृ. २३०—ठा. ७, सू. ५८०, पृ. ३८५
पृ २३१—ठा अ. १०, सू. ७२५, पृ. ४५४
पृ २३३—ठा. ४, उ २, सू. ३०७

समवायांग सूत्र—

पृ. २३०—सम ८४, सू ७, पृ. ६६
पृ २३२—सम. ६४, सू ४, पृ ८६

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २३३—जीवा. प्रति. ३, उ २, सू· १८३

नन्दीश्वरोद-समुद्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २३५—जीवा प्रति. ३, उ. २, सू. १८४

शेष द्वीप और समुद्र

स्थानांग सूत्र—

पृ. २३६—ठा अ १०, सू ७२६, पृ. ४५२
पृ २३७—ठा १०, सू. ७२६, पृ. ४५२

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २३७—जीवा प्रति ३, उ. २, सू. १८५
पृ. २३७—जीवा सू. १२३, पृ. १७६

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २३७—सूर्य. सू १०३

समुद्रों के जल का स्वाद

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४०—जीवा. प्रति. ३, उ. २, सू. १८७

द्वीप-समुद्रों की संख्या

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४०—जीवा. प्रति. ३, उ. २, सू १८९

एक नाम के अनेक द्वीप-समुद्र

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४१—जीवा. प्रति. ३, उ २, सू. १८६

द्वीप-समुद्रों का उपादान

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४२—जीवा. प्रति. ३, उ. २ सू १९०

जंबूद्वीपवर्ती सूर्यों के सूर्य-द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४३—जीवा. सू. १६२, पृ. ३१६

लवण-समुद्रवर्ती चन्द्र-सूर्यों के द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४५—जीवा प्रति. ३, उ २, सू. १६३, पृ ३१६

धातकी-खण्डवर्ती चन्द्र-सूर्यों के द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४५—जीवा प्रति. ३, उ २, सू १६४, पृ ३१७

कालोदवर्ती आदि चन्द्र-सूर्यों के द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४६—जीवा प्रति ३, उ २, सू १६५-६६, पृ ३१७

देव, द्वीप-समुद्र आदि के चन्द्र-सूर्य देवों के द्वीप

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २४८—जीवा. प्रति ३, उ २, सू १६७, पृ. ३२०

भूकम्प के कारण

स्थानाग-सूत्र—

पृ २४८—ठा ३, उ ४, सू १६८, पृ. १५१

ज्योतिष्क-निरूपण

ज्योतिष्कों के भेद

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ २५०—पण्ण पद १, पृ २१२

स्थानाग-सूत्र—

पृ. २५०—ठा. ५, उ १ सू ४०१ पृ. २८७

भगवती-सूत्र—

पृ. २५०—भग शत ५, उ ६, प्र १७, पृ २५२

ज्योतिष्क देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ २५०—पण्ण पद २, पृ २६४

समवायांग-सूत्र—

पृ २५०—सम सू १५०

स्थानांग-सूत्र—

पृ २५०—ठा २, उ ३, सू ६४, पृ ८०

जीवाभिगम-सूत्र—
पृ. २५०—जीवा सू. १२२, पृ. १७४
पृ २५०—जीवा सू. १६६, पृ. ३६८

भगवती-सूत्र—
पृ. २५०—भग. भा. ४, शत १६, उ. ८, प्र. ५, पृ ६०

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. २५०—सूर्य सू. ६४, पृ. २६२

ज्योतिष्क-विमानों का संस्थान

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ २५१—सूर्य. सू. १६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ २५१—चद्र सू १६,

जंबूद्वीप में ज्योतिष्क

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ २५२—सूर्य सू. १००, पृ. २६८
पृ २५२—सूर्य सू ६१, पृ. २५६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ २५२—चन्द्र. सू १००

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. २५२—जबू सू १२६, पृ. ४३३
पृ. २५२—जबू. सू. १६३, पृ. ५२१

जीवाभिगम-सूत्र—
पृ. २५२—जीवा सू १५३, पृ. ३००
पृ २५२—जीवा सू १६४, पृ. ३७५

भगवती-सूत्र—
पृ. २५२—भग भा ३, श ६, उ. १, पृ. १२६

लवण-समुद्र में ज्योतिष्क

जीवाभिगम-सूत्र—
पृ २५३—जीवा. सू १५५, पृ. ३०३

स्थानांग-सूत्र—
पृ. २५३—ठा ४, उ २, सू ३०५, पृ. २२५

धातकी-खण्ड में ज्योतिष्क

जीवाभिगम-सूत्र—
पृ २५४—जीवा. सू. १७४, पृ ३२७

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. २५४—सूर्य. सू १००, पृ २६६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ २५४—चद्र सू. १००

भगवती-सूत्र—
पृ २५४—भग. भा. ३, श. ६, उ. २, प्र. २, पृ. १२६

कालोद-समुद्र में ज्योतिष्क

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २५४—जीवा सू १७५, पृ ३३०

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २५४—सूर्य सू. १००, पृ २६९

चन्द्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २५४—चन्द्र सू १००

भगवती-सूत्र—

पृ २५४—भग. भा ३, श ९, उ. २, प्र. २, पृ १२६

समवायागसूत्र—

पृ २५४—सम ४२, सू ४

पुष्करवर-द्वीप में ज्योतिष्क

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २५५—जीवा सू १७६, पृ ३३२

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २५५—सूर्य सू १००, पृ २६९

चन्द्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २५५—चन्द्र सू. १००

भगवती-सूत्र—

पृ २५५—भग भा ३, श ९, उ २, प्र २, पृ. १२६

समवायाग-सूत्र—

पृ २५५—सम ७२, सू. ५, पृ. ९२

आभ्यंतर-पुष्करार्ध में ज्योतिष्क

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २५६—जीवा सू. १७६, पृ ३३२

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २५६—सूर्य सू १००, पृ २६९

भगवती-सूत्र—

पृ. २५६—भग भा. ३, श ९, उ २, प्र २, पृ. १२६

समवायांग-सूत्र—

पृ २५६—सम ७२, सू. ४, पृ. ९२

मनुष्य-क्षेत्र में ज्योतिष्क

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २५६—जीवा सू १७७, पृ. ३३४

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २५६—सूर्य. सू १००, पृ २७०

चन्द्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २५६—चन्द्र सू. १००

भगवती-सूत्र—

पृ २५६—भग. भा ३, शत ९, उ. २, प्र. २, पृ १२६

ज्योतिष्कों की ऊँचाई

समवायांग-सूत्र—

पृ २५७—सम ६६, सू १-४, पृ. ८६-६०
पृ २५६—सम. सू. १११-११२

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २५६—सूर्य सू ८६, पृ. २५८-२५६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ, २५६—चद्र. सू. ८६

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २५६—जीवा. सू. १६५ पृ. ३७६-३७७

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २५६—जबू. सू. १६४, पृ. ५२१

भगवती-सूत्र—

पृ २५६—भग भा ३, श. १४, उ. ८, प्र. ४, पृ ३५८

स्थानांग-सूत्र—

पृ. २५६—ठा अ. ६, सू ६७०, पृ. ४२४

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ. २५६—पण्ण. पद. २, सू. ४२, पृ २६४

मेरु और लोकान्त से ज्योतिष्कों की दूरी

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २६०—जबू सू १६४, पृ. ५२१

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २६०—सूर्य. सू ६२, पृ २५६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २६०—चंद्र. सू ६२

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २६०—जीवा. सू १६६, पृ. ३७६

समवायांग-सूत्र—

पृ २६०—सम ११, सू २

चंद्र-विमान का परिवहन

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २६१—जीवा सू. १६८, पृ. ३८०
पृ. २६२—जीवा. सू १६८, पृ. ३८०
पृ. २६३—जीवा. सू १६८, पृ ३८०-३८१
पृ. २६४—जीवा सू १६८, पृ ३८१
पृ. २६५—जीवा सू. १६८, पृ ३८१-३८२

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २६१—सूर्य सू ६४, पृ २६२–२६३

पृ २६५—सूर्य. सू ६४, पृ. २६२–२६३

पृ. २६५—सूर्य. सू. ६४, पृ २६३

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २६१—चन्द्र सू ६४

पृ २६५—चन्द्र सू ६४

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २६५—जवू सू १६६, पृ ५२५–५२६

ज्योतिष्क–विमानों का परिमाण

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २६६—जीवा सू १६७, पृ ३७८

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २६६—जवू सू १६५, पृ ५२४

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २६६—सूर्य. सू. ६४, पृ २६२

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २६६—चद्र सू ६४

समवायांग-सूत्र—

पृ २६६—सम. ६१, सू ३

पृ २६६—सम. ६१, सू ४

पृ २६६—सम १३, सू ८

एक युग में ज्योतिष्क चार

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७२—सूर्य सू ८३–८६, पृ २४५–२५४

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७२—चद्र सू ८३–८६

ज्योतिष्क–गति का तारतम्य

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७३—जवू. सू १६७, पृ ५३१

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ २७३—जीवा सू १९९, पृ ३८२

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७३—सूर्य सू ८३, पृ २४५

पृ २७४—सूर्य सू ६४–७० पृ १८१–१९७

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७३—चद्र सू ८३

पृ- २७४—चद्र सू ६४–७०

ज्योतिष्कों का अल्प-बहुत्व

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७४—सूर्य सू ६६, पृ २६६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७४—चद्र. सू ६६

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७४—जवू. सू १७२, पृ ५३६

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २७४—जीवा सू. २०६, पृ ३८५

ज्योतिष्कों की ऋद्धि का अल्प-बहुत्व

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७५—जंवू सू. १६८, पृ. ५३१

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. २७५—जीवा. सू २००, पृ. ३८२

स्थानांग-सूत्र—

पृ २७५—ठा. अ ३, उ ४, सू २१४, पृ. १६१

सूर्य-प्रज्ञप्तिसूत्र—

पृ २७५—सूर्यं सू. ६५, पृ. २६३

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २७५—चद्र. सू. ६५

चंद्र—वर्णन

चंद्रमा का उदय-अस्तमन

जवूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७६—जवू. सू १५०, पृ. ४८०

भगवती-सूत्र—

पृ. २७६—भग. मा २, श ५, उ. १०, प्र. १, पृ २५३

चंद्रमा की वृद्धि-हानि

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २७६—सूर्य. सू ७६, पृ २३४

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २७६—चद्र. सू. ७६

समवायांग-सूत्र—

पृ २७६—सम. ६२

अहोरात्र आदि में चन्द्रादि की मण्डलचार

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २९०—सूर्य सू ८६, पृ. २५४

चंद्रादि की गति की विशेषता

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २९२—सूर्य सू. ८४, पृ २४८

चंद्र का नक्षत्रों से योग

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २९३—सूर्य. सू ७८, पृ. २३३
पृ २९४—सूर्य सू ७९, पृ. २१९-२२०
पृ. २९६—सूर्य. सू ७७, पृ २२९-२२९

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २९३—चद्र. सू. ७८,
पृ. २९४—चद्र. सू ७९,
पृ २९६—चद्र सू. ७७,

पूर्णिमा में चंद्र का नक्षत्रों के साथ योग

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २९८—सूर्य सू. ६७, पृ. १८५-८६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २९८—चद्र. सू. ६७,

अमावस्या में चन्द्र का नक्षत्रों के साथ योग

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २९९—सूर्य सू ६८, पृ. १९०—९१
पृ ३०१—सूर्य. सू. ६९, पृ १९४

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ २९९—चद्र सू ६८,
पृ. ३०१—चद्र. सू. ६९, पृ. १९४

पूर्णिमा में चन्द्र-योग

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३०२—चद्र. सू ६३,

पूर्णिमा में सूर्य-योग

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३०३—सूर्य. सू ६४, पृ १८२

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३०३—चद्र सू ६४,

अमावस्या में सूर्य-योग

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३०५—सूर्य सू. ६६, पृ १८२

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३०५—चद्र सू ६६,

सूर्य-वर्णन

सूर्य-दर्शन

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३०६—जबू सू १३६, पृ ४५८

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३०६—विवा भा १, श. १, उ. ६, प्र. १६७-१६८, पृ १६१

समवायांग-सूत्र—

पृ ३०७—सम ३१, सू ३

पृ ३०७—सम. ३३, सू ४

पृ ३०७—सम. ४७, सू. १

सूर्य-बिम्ब की लम्बाई-चौड़ाई

समवायाग-सूत्र—

पृ ३०७—सम ४८, सू ३, पृ ८१

सूर्य का उदय और अस्तमन

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३०९—सूर्य सू २९, पृ ८४-८५

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३०९—चद्र सू २९,

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३१२—विवा. भा २, श ५, उ. १, प्र १-९, पृ १४५-१४८

धातकी-खण्ड आदि में उदयास्त-वर्णन

भगवती-सूत्र—

पृ ३१६—भग भा २, श ५, उ १, प्र १०-२१, पृ १५१-१५६

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३१६—जबू सू १५० पृ ४८०

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३१६—सूर्य सू २९ पृ ८५-८६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३१६—चद्र. सू २९

सूर्य के प्रकाश का वर्णन

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३१६—सूर्य. सू. २७, पृ ७६–८०

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३१६—चद्र सू २७,

समवायांग-सूत्र—

पृ. ३१६—सम. ६२, सू ३

सूर्य का वरण

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३२१—सूर्य सू २८, पृ ८३

पृ. ३२१—सूर्य सू. २६, पृ. ७७

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३२१—चद्र सू २८,

सूर्य–प्रकाश का प्रतिरोध

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३२२—सूर्य सू २६, पृ ७६–७७

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३२२—चद्र सू २६,

सूर्य–गति का क्षेत्र

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३२३—जबू. सू. १३७–३८, पृ. ४५८–४५६

सूर्यों का परस्पर–अन्तर

समवायाग-सूत्र—

पृ ३२५—सम. ७१, सू. १

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३२६—सूर्य. सू. १५, पृ. २४–२५

पृ ३२८—सूर्य. सू ३०, पृ. ६२–६३

चद्र-प्रज्ञप्ति सूत्र—

पृ ३२६—चद्र सू. १५

पृ ३२८—चद्र सू ३०,

पुरुष की छाया का परिमाण

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३१—सूर्य. सू. ३१, पृ ६४–६५

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३१—चद्र सू ३१,

अर्धमण्डल-भ्रमण-व्यवस्था

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३५—सूर्य. सू १२-१३, पृ. १६-१७

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३५—चद्र सू. १२-१३

लवण-समुद्र में सूर्य-मण्डलों की संख्या

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३६—जबू सू १२७, पृ ४३४

समवायांग-सूत्र—

पृ ३३६—सम ६५, सू. १

निषध और नीलवंत-पर्वत पर सूर्य-मण्डलों की संख्या

समवायाग-सूत्र—

पृ ३३७—सम ६३, सू ३-४

सूर्य-मण्डलों का क्षेत्र

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३७—जबू. सू १२८, पृ ४३४

मण्डलों का क्षेत्र

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३८—सूर्य सू १४, पृ २१-२२

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३३८—चद्र सू १४,

मंडलों का परिमाण

समवायाग-सूत्र—

पृ. ३३९—सम ४८, सू. ३

पृ ३३९—सम ९९, सू ४-५-६

पृ ३४१—सम ४८, सू ३

सूर्य-प्रज्ञप्ति सूत्र—

पृ ३४१—सूर्य. सू. २०, पृ ३७-३९

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३४१—चद्र सू २०,

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३४१—जबू सू. १३२, पृ ४३८

सूर्य-मण्डलों की लंबाई-चौडाई, हानि-वृद्धि

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३४४—जबू सू १३२, पृ ४३८

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३४४—सूर्य. सू. २०, पृ ३७-३६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३४४—चद्र. सू. २०,

सूर्य-मंडलों का अंतर

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३४४—जबू सू. १२६, पृ. ४३४

मेरु-पर्वत से सूर्य-मंडलों का अंतर

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३४५—जबू. सू. १३१, पृ ४३६

मंडलों में सूर्य-गति

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३४६—सूर्य. सू. ६-१०, पृ. ११

चंद्र-प्रज्ञप्ति--सूत्र—

पृ ३४६—चद्र. सू. ६-१०,

समवायांग-सूत्र—

पृ ३४६—सम. ८२, सू. १

सूर्य का मण्डल-संक्रमण

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३४७—सूर्य. सू. २२, पृ. ४८-४६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३४७—चद्र सू. २२,

अहोरात्र में सूर्य द्वारा मंडलों का स्पर्श

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३४६—सूर्य सू. १८, पृ. ३१-३३

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३४६—चद्र. सू १८,

द्वीप आदि में सूर्य-गति का अंतर

सूर्य प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३५२—सूर्य. सू १६-१७, पृ २६-३१

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३५२—चद्र. सू १६-१७,

समवायाग-सूत्र—

पृ ३५२—सम. ८०, सू. ७,

सूर्य की तिर्छी-गति का परिणाम

सूर्य-प्रज्ञप्ति सूत्र—

पृ ३५५—सूर्य. सू २१, पृ ४५-४६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३५५—चद्र सू. २१

सूर्य की प्रति मुहूर्त-गति

समवायाग-सूत्र—

पृ. ३५८—मम ४७, सू. १

पृ ३५९—मम. ३१,

पृ ३५९—सम ३३,

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६०—सूर्य २३, पृ ५१-५२

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६०—चद्र सू २३

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६०—जबू. सू १३३, पृ. ४४०-४४१

नक्षत्र-मडल के भाग में सूर्य की एक मुहूर्त में गति

जबूद्वीप प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६२—जबू सू १८९, पृ ४७४

दिन-रात्रि का परिमाण

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६३—जबू सू १३४, पृ ४४९-४५०

सूर्य-प्रज्ञप्ति सूत्र—

पृ ३६३—सूर्य सू ११, पृ ११-१२

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६३—चद्र सू. ११

सूर्य का ताप-क्षेत्र

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६५—जबू सू. १३६, पृ ४६२

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६५—सूर्य सू. २५, पृ ६८

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६५—चंद्र. सू. २५,

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६५—विवा मा ३, श. ८, उ ८, प्र ४५, पृ १००

समवायाग-सूत्र—

पृ ३६५—मम. १६, सू २

चंद्र–सूर्यों का संस्थान

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३६६—सूर्य. सू. २५, पृ ६७

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३६६—चद्र सू २५,

ताप–क्षेत्र का संस्थान

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सत्र —

पृ ३६६—सूर्य मू २५, पृ. ६७

पृ ३६८—सूर्य सू २५, पृ ६७–६८

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३६६—चद्र सू २५,

पृ. ३६८—चद्र सू २५,

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

प. ३६८—जबू. सू १३५, पृ ४५३

अंधकार का संस्थान

जबूद्वी-पप्रज्ञप्ति-सूत्र—

प ३७१—जबू सू. १३५, पृ ४५३

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३७१—सूर्य. सू २५, पृ. ६७–६८

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३७१—चद्र. सू २५,

चंद्र–सर्य का स्वरूप

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३७२- सूर्य सू १०४, पृ. २८५–२८६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. २७२—चद्र. सू १०४,

चंद्र–सूर्य का व्युत्पत्ति-मूलक स्वरूप

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

प. ३७३—सूर्य सू १०६, पृ. २९१

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३७३—चद्र सू. १०६,

भगवती-सूत्र—

पृ ३७३—भग. भा ३, श. १२, उ ६, प्र ३–४, पृ २८०

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३७३—विवा भा. ३, श. १४, उ ६, प्र १०–११, पृ. ३६३

चंद्र–सूर्यों की संख्या

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३७४—सूर्य. सू. १००, पृ. २६८

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३७४—चद्र. सू १००,

नक्षत्रों की संख्या एवं नाम

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ३८४—जबू सू १५५, पृ ४६५

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ३८४—सूर्य सू ४२, पृ. १३१

स्थानांग-सूत्र—
पृ ३८४—ठा. २, उ ३, सू ६०, पृ. ७३

नक्षत्रों का गणना-क्रम

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३८५—सूर्य सू ३२, पृ ६६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ३८५—चद्र सू. ३२,

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३८५—जवू सू १५५, पृ. ४६५

नक्षत्रों के स्वामी-देवता

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ३८६—जवू सू. १५७-१७१, पृ ४६८

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३८६—सूर्य. सू. ४६, पृ. १४५-१४६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ३८६—चद्र. सू ४६,

नक्षत्रों का तारा-परिवार

समवायांग-सूत्र—
पृ. ३८६—सम. ३
पृ. ३८६—सम ३
पृ. ३८६—सम ५
पृ. ३८७—सम १००
पृ. ३८७—सम २
पृ. ३८७—सम. ३२
पृ. ३८७—सम. ३
पृ. ३८७—सम ३
पृ ३८७—सम. ६
पृ. ३८७—सम. ५
पृ ३८७—सम. ३
पृ ३८७—सम १
पृ. ३८७—सम. ५

स्थानांग-सूत्र—
पृ. ३८६—ठा सू २२७
पृ. ३८६—ठा. सू. २२७

समवायांग-सूत्र—
पृ. ३८७—सम. ३
पृ ३८७—सम ६
पृ ३८७—सम ७
पृ ३८७—सम. २
पृ ३८७—सम ५
पृ ३८७—सम १
पृ ३८७—सम. १
पृ ३८७—सम ५
पृ. ३८८—सम. ४
पृ. ३८८—सम. ३
पृ. ३८८—सम. ११
पृ ३८८—सम ४
पृ. ३८८—सम. ६८

स्थानांग-सूत्र—
पृ ३८६—ठा सू. ४७३
पृ. ३८६—ठा. सू. ११०

स्थानांग-सूत्र—

पृ ३८६—ठा. सू २२७
पृ. ३८६—ठा सू २२७
पृ ३८७—ठा. सू. ५३९
पृ ३८७—ठा. सू ४७३
पृ. ३८७—ठा सू २२७
पृ ३८७—ठा सू ५५
पृ ३८७—ठा. सू ४७३
पृ ३८७—ठा. सू २२७
पृ ३८७—ठा. सू ५३९

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ३८७—ठा सू ५८९
पृ ३८७—ठा. सू ११०
पृ ३८७—ठा सू ४७३
पृ ३८७—ठा सू ५५
पृ ३८७—ठा सू. ५५
पृ. ३८७—ठा सू ४७३
पृ ३८८—ठा सू. ३८९
पृ ३८८—ठा सू. २२७
पृ ३८८—ठा सू ३८६

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३८८—सूर्य सू ४२
पृ ३८८—सूर्य. सू. ४२, पृ. १३१

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३८८—जंबू सू १५८, पृ ४९८

नक्षत्रों के गौत्र

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३९०—जंबू सू. १५९, पृ ५००

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ३९०—सूर्य. सू ५०, पृ. १५०

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३९०—चंद्र सू ५०,

नक्षत्रों के संस्थान

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३९०—जंबू सू १५९, पृ. ५००

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३९०—सूर्य सू ४१, पृ १३०

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३९०—चंद्र. सू. ४१,

नक्षत्रों के चन्द्र-योग की आदि

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३९२—सूर्य. सू ३६, पृ १०५-१०६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ३९२—चंद्र. सू. ३६,

नक्षत्रों का चन्द्र के साथ दिशा-योग

समवायांग-सूत्र—

पृ ३९३—सम ९, सू ६
पृ ३९३—सम ८. सू ९

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३९४—जबू सू १५६, पृ. ४९६-४९७

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३९४—सूर्य सू ४४, पृ. १३७

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ३९४—चद्र. सू ४४,

नक्षत्रों का योग, भोग और परिमाण

समवायाग-सूत्र
पृ ३९४—सम. ५६, सू. १
पृ. ३९५—सम. ९, सू. ५,
पृ. ३९५—सम. १५, सू ४,
पृ ३९५—सम. ४५, सू ७,
पृ ३९७—सम. ६७, सू. ४

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र
पृ. ३९५—सूर्य सू ६०, पृ १७५
पृ ३९६—सूर्य. सू ६०, पृ १७५-१७६
पृ. ३९७—सूर्य. सू ६१, पृ. १७६
पृ. ३९८—सूर्य. सू. ६२, पृ १७७

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३९५—चद्र. सू. ६०,
पृ. ३९६—चद्र. सू ६०,
पृ ३९७—चद्र. सू. ६१,
पृ ३९८—चद्र सू. ६२,

चन्द्र के साथ नक्षत्रों का योग-काल

समवायांग-सूत्र—
पृ ३९८—सम. ९,

स्थानांग-सूत्र—
पृ ३९८—ठा सू. ६६९,

नक्षत्रों के साथ सूर्य का योग-काल

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३९९—जंबू. सू. १६०, पृ. ५०१

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ३९९—सूर्य सू ३३-३४, पृ. १०० १०३

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ. ३९९—चद्र सू ३३-३४,

युग में अमावस्या एवं पूर्णिमा

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ४००—सूर्य. सू ८०, पृ २३६

चंद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—
पृ ४००—चद्र सू ८०,

पूर्णिमा-अमावस्या में नक्षत्रों का योग

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०१—जबू सू १६१, पृ ५०४

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४०१—सूर्य सू. ३८, पृ. ११२

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०१—चद्र. सू ३८,

पूर्णिमा-अमावस्याओं का नक्षत्र-सम्बन्ध

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४०२—जबू. सू. १६१, पृ. ५०५

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०२—सूर्य सू ३७, पृ.१११

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४०२— चद्र सू. ४०,

नक्षत्रों के कुल, उपकुल और कुलोपकुल

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०३—जबू सू १६१, पृ ५०४

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०३—सूर्य. सू. ३७, पृ १११

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०३—चद्र सू ३७,

अमावस्यों में कुलों का योग

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०४—जबू सू. १६१, पृ ५०४-५०५

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०४—सूर्य. सू. ३६, पृ १२०

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०४— चद्र सू ३६,

पूर्णिमाओं में कुल-उपकुल का योग

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४०५—जबू. सू १६१, पृ ५०४-५०५

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०५— सूर्य. सू ३६, पृ १२०

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४०५—चद्र सू ३६,

रात्रि पूर्ण करने वाले नक्षत्र

समवायाग-सूत्र—

पृ ४०६—सम २७, पृ ४०७—सम. ४०, सू ७,

पृ ४०७—सम ३६, पृ. ४०८—सम ४०, सू. ६,

पृ. ४०७—सम ३७, पृ. ४०६—सम ३६,

उत्तराध्ययन-सूत्र—

पृ. ४०६—उत्तरा. अ. २६, गा १३–१४

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१०—जंबू सू. १६२, पृ. ५१५–५१६

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४१०—सूर्य. सू ४३, पृ. १३१–१३३

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१०—चद्र सू ४३,

नक्षत्र-मासों के मुहूर्तों की हानि-वृद्धि

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१०—सूर्य. सू. ८, पृ. ९

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१०—चद्र. सू. ८,

नक्षत्रों के चार-प्रकार

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४११—जम्बू. सू १६५, पृ. ५२४

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४११—सूर्य सू ६३, पृ. २५९

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

प. ४११—चद्र सू ६३,

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ४११—जीवा सू १९६, पृ ३७७

नक्षत्रों का दिशा-भाग

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१२—सूर्य. सू ३५, पृ १०४

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

प. ४१२—चन्द्र सू ३५,

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४१२—ठा सू ५१७,

समवायांग-सूत्र—

पृ ४१२—सम. १५, सू. ४५,

चार-दिशाओं के नक्षत्र

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४१२—सम ७,

सूर्य-प्रज्ञप्तिसूत्र—

प ४१४—सूर्य. सू ५९, पृ १७३–७४

चंद्र-प्रज्ञप्ति—सूत्र

पृ ४१४—चन्द्र. सू ५९,

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४१४—ठा. सू. ५८९, पृ. ३९३

नक्षत्र—मंडलों की संख्या

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४१४—जम्बू सू १४९, पृ ४७४

नक्षत्र-मंडलों का क्षेत्र

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति सूत्र—

पृ ४१६—जम्बू सू १४६, पृ. ४७४

नक्षत्र-मंडलों की लम्बाई-चौडाई

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१६—जम्बू सू. १४६, पृ. ४७४

नक्षत्र-मंडलों का अन्तर

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१७—जम्बू सू १४६, पृ. ४७४

मेरु से नक्षत्र-मंडलों का अन्तर

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१७—जम्बू सू १४६, पृ ४७४

नक्षत्रों की (मंडलों में) गति

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४१८—जम्बू सू १४६, पृ ४७४

चंद्र-सूर्य के नीचे और ऊपर तारों के स्थान

जबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र —

पृ ४१६—जम्बू सू. १६२, पृ ५२१

सूर्य-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१६—सूर्य सू ६०, पृ २५६

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ. ४१६—चन्द्र सू ६०,

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ४१६—जीवा सू. १६३, पृ ३७५

ताराओं का परस्पर अन्तर

जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१६—जबू सू १६७, पृ ५३१

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ४१६—जीवा. सू २०१, पृ ३८३

सूर्य-प्रज्ञप्ति सूत्र—

पृ ४१६—सूर्य. सू. ६६, पृ. २६५

चद्र-प्रज्ञप्ति-सूत्र—

पृ ४१६—चद्र सू ६६,

उपरितन तारक-परिभ्रमण

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४१६—ठा ६, सू. ६७०, पृ ६७२

तारक-ग्रह

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४२०—ठा. ६, सू ४८१, पृ. ३३६

शुक्र-महाग्रह की वीथियां

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ४२०—ठा ९, सू ६९८ पृ ४५५

शुक्र का उदय-अस्तमन

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४२०—सम १९, सू. ३, पृ ४२०—सम ९, सू. ७,
पृ. ४२०—सम. ११२, सू ५,

ऊर्ध्व—लोक

ऊर्ध्वलोक : भेद, संस्थान, मध्य

विवाह-प्रज्ञप्ति-सूत्र

पृ. ४२१—विवा भा. ३, श ११, उ १०, प्र. ५, पृ २२८-२२९
पृ. ४२१—विवा. भा. ३, श. १३, उ ४, प्र ८, पृ. ३१४

वैमानिक-देवों के स्थान

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४२१—सम ८४, सू १७

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ ४२२—प्रज्ञा स्थान २, पृ ३०० .

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ४२२—जीवा. सू २०७, पृ ३८६

सौधर्म-देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ. ४२२—प्रज्ञा. स्थान २, पृ. ३०२

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ४२२—ठा. ४, उ. ४, सू. ३८३, पृ. २७४

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४२२—सम ३२, सू. ४, पृ ४२२—सम. ६५, सू ३
पृ ४२२—सम १३, सू. ३,

ईशान-देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ ४२३—प्रज्ञा स्थान. २, पृ. ३०५-३०६

समवायांग-सूत्र—

पृ ४२३—सम २८. सू. ४,
पृ ४२३—सम. ६०, सू. ६,

सनत्कुमार-देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ ४२४—प्रज्ञा. स्थान २, पृ ३०८-९

महेन्द्र-देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ ४२५—प्रज्ञा स्थान २, पृ ३१०

समवायांग-सूत्र—

पृ ४२५—सम १३१, सू १

ब्रह्मलोक-देवों के स्थान

प्रज्ञापना-सूत्र—

पृ ४२५—प्रज्ञा स्थान २, पृ ३१०-३११

समवायाग-सूत्र—

पृ ४२५—सम ६४, सू. ५

तमस्काय

स्थानाग-सूत्र—

पृ ४२६—ठा ४, उ. २, सू. २९१ पृ २०५

तमस्काय का संस्थान, विस्तार आदि

भगवती-सूत्र—

पृ ४२७—मग मा ३, श १४, उ २, पृ. ३४४

तमस्काय सबंधी शेष-वक्तव्यता

भगवती-सूत्र—

पृ ४२८—मग मा २, श. ६, उ ५, पृ. ३०१-३०६

पृ ४३१—मग मा. २, श. ६, उ ५, पृ, ३०७-३१०

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४२८—ठा ४ उ. २, सू २९१, पृ २०५

पृ ४३१—ठा ८, सू. ६२३, पृ ४०९

लान्तक-देवों के स्थान

समवायांग-सूत्र—

पृ ४३३—सम ५०, सू ५

महाशुक्र-देवों के स्थान

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४३३—सम. ४०, सू ८

सहस्रार देवों के स्थान

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४३४—सम, ११९ सू १

आनत, प्राणत-देवों के स्थान

समवायाग-सूत्र—

पृ ४३४—सम १०६, सू ४,

आरण, अच्युत-देवों के स्थान

समवायाग-सूत्र—

पृ ४३५—सम. १०१, सू २-३,

अधस्तन ग्रैवेयक-देवों के स्थान

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४३६—सम. ११, सू. ६

वैमानिक इन्द्रों के उत्पात-पर्वत

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ४३८—ठा. १०, सू. ७२८, पृ ४५७

विमान-पृथ्वियों का आधार

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ४३८—जीवा. प्रति. ३, सू. २०६, पृ. ३६४

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ४३८—ठा. ३, उ. ३, सू. १८०, पृ. १३६

कल्प-विमानों में प्रस्तट

समवायांग-सूत्र—

पृ ४३६—सम. १३, सू. २,

स्थानांग-सूत्र—

पृ. ४३६—ठा. ६, उ. ३, सू ५१६, पृ ३४८

पृ ४३६—ठा. ६, सू. ६८५

पृ. ४३६—ठा ३, उ ४, सू २३२, पृ १६८

समवायांगसूत्र—

पृ ४४०—सम ६२, सू. ५,

विमान-पृथ्वियों का बाहल्य

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ४४०—जीवा. प्रति ३, सू. २१०, पृ ३६४

समवायाग सूत्र—

पृ ४४०—सम. २७, सू. ४,

कल्प-विमानों की ऊँचाई

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४४०—ठा ५, उ. ३, सू. ४६६

पृ ४४०—ठा ६, सू. ५३२, पृ ३५२

पृ ४४०—ठा ७, सू ५७८, पृ. ३८४

पृ ४४०—ठा ८, सू ६५०, पृ. ४१८

पृ. ४४०—ठा. ६, सू ६६५, पृ. ४४४

पृ ४४१—ठा. १०, सू. ७७५, पृ. ४६३

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ४४१—जीवा प्रति. ३, सू २११, पृ २१३

समवायांग-सूत्र—

पृ. ४४१—सम ११४, सू. १

पृ. ४४१—सम. १०६, सू. १

पृ ११४—सम. ११०, सू. १

समवायांगसूत्र—

पृ. ४४१—सम. १११, सू. १

पृ. ४४१—सम. ११२, सू. १

पृ. ४४१—सम. ११३, सू १

कल्प-विमानों की लम्बाई, चौडाई, परिधि

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ४४१—जीवा प्रति. ३, सू २१३, पृ ३६५

कल्प-विमानों के प्राकारों की ऊँचाई

समवायांग-सूत्र—

पृ ४४१—सम ३००, सू. ३

कल्प-विमानों का संस्थान

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ. ४४२—जीवा. प्रति ३, सू २१२, पृ ३७५

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४४२—ठा ३, उ ३, सू १८०, पृ. १३८

कल्प-विमानों का वर्ण

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ४४२—जीवा प्रति ३, सू २१३, पृ ३९५

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४४२—ठा ५, उ ३, सू ४६९, पृ ३३३

पृ ४४२—ठा. ४, उ ४, सू ३७५, पृ. २७१

पृ ४४२—ठा. ३, उ १, सू १५१, पृ. १२०

पृ ४४२—ठा. २, उ ३, सू. ६४, पृ ८०

कल्प-विमानों का उपादान

जीवाभिगम-सूत्र—

पृ ४४४—जीवा प्रति ३, सू २१३, पृ ६५

सिद्धस्थान

स्थानांग सूत्र—

पृ ४४४—ठा. ८, सू ६४८, पृ ४१७

ईषत्प्रारभारा-पृथ्वी के पर्याय-शब्द

स्थानांग-सूत्र—

पृ, ४४४—ठा ८, सू ६४८, पृ. ४१७

प्रज्ञापना सूत्र—

पृ ४४५—प्रज्ञा २, सू ५८, पृ. ३२४—३२५

माप-निरूपण

अंगुल के भेद और परिमाण

समवायांग-सूत्र—

पृ ४४७—सम. ९६, सू ३

पृ ४४७—सम ९६, सू ४

पृ ४४७—सम. १६, सू ४

स्थानांग-सूत्र—

पृ ४४७—ठा अ. ८, सू ६३४, पृ ४११

अनुयोग-सूत्र—

पृ ४४८—अनु सू ३३३—३४२, ३४४—३४६, ३५७—३६२

शुद्धि-पत्र

गणितानुयोग-विषयानुक्रम

अशुद्ध	शुद्ध
अलोक मे गति का अभाव	संख्या, सस्थान, संस्पर्श
अलोक मे अन्य दव्यो का अभाव	अलोक की विशालता
सख्या, सस्थान, सस्पर्श	अलोक मे गति का अभाव
अलोक की विशालता	अलोक मे अन्य द्रव्यो का अभाव

प्राकृत

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३	१७	अयोणित्तिहं	अयाणित्तहिं	२८५	२५	अद्धमास	अद्धमासे
१८	३७	हृता सनिपडियाओ	हृता सनिपडियाओ	२९०	२४	सतेहिं	सतेहिं
२४	३०	चउहिं हणेहिं	चउहिं ठाणेहिं	२९४	१	पूस्स	पूसस्स
२५	३३	विवा० भा० १, श० १ उ० ३	विवा० भा० १' श० १ उ० ६	२९७	१४	बावट्ठिमाग	बावट्ठिमाग
३७	१७	समाबाहल्लेण	सभा बाहल्लेण	३०५	१३	पुण्णमासिण	पुण्णमासिणि
४६	२६	बाहल्लाए	वाहल्लाए	३१७	२६	ता अणुपक्खमे	ता अणुपक्खमेव
५२	३२	सव्वइरामया	सव्व वइरामया	३१८	२३	चार	चार चरित
१४०	१६	अजणप्पमा	अजणप्पभा	३१९	१५	ण	तया ण
१५५	२५	सिघ	सिंघु	३१९	१९	खलु	एव खलु
१६५	२३	ह चेव	तह चेव	३१९	२०	गमेगेण	एगमेगेण
१६६	३२	पक्खारपव्वए	वक्खारपव्वए	३३०	४	उग्गमणमुहुतसि	उग्गमणमुत्तसि
१६६	३६	सामोआमुखवणसडे	सीओआमुखवणसडे	३३१	६	क	किं
१६७	८	रायहाणी	रायहाणी [८]	३३५	३	सव्व बाहिण	सव्व बाहिर
१७२	२८	णिच्च हिरण्ण हिरण दलइ	णिच्च हिरण दलइ	३४५	७	पव्वयस्य	पव्वयस्स
१७३	५	पुरत्थिमेण	पच्चत्थिमेण	३४५	१२	अभिदद्धोमणे	अभिवद्धेमाणे
१७७	१३	एकासोए	एकासीए	३५४	२६	ऐगे	एगे
१८०	१८	सास्हसीओ	साहस्सीओ	३५५	२२	ए थ ण	एत्थण
१९६	६	तो	नो	३५७	३६	सूरिए	सूरिए ण
२३६	१८	कडुए	कडुए	३५७	२६	तता	तता ण
२६७	३५	सिद्धि	सद्धि	३५८	२२	व-उ	उव-
२७१	२६	अद्धमड वर त	अद्धमडल चरत्ति	३६८	१८	उद्धामु ह	उद्धीमुह
२८२	११	मुहुत्तगइ	मुहुत्तगइ	३७६	१२	चदिमसू-रिया	चदिम-सूरिया
२८२	१५	उणए	णउए	३९५	६	जाय	जोय
२८३	२४	एगावण्ण	एगावण्ण	३९७	६	सोमाविक्खभो	सीमाविक्खभो
२८४	१२	एगट्ठिमाए	एगसट्ठिमाए	३९७	७	सत्तसट्ठि	सत्तसट्ठि
२८४	१३	एगट्ठिमाग	एदसट्ठिमाग	४०६	२६	अहोरत	एग अहोरत
२८४	१५	"	"	४१६	३३	अस्सिणीयादी	अस्सिणीयादीया
				४१६	३१	अवहाए	अबाहाए

शुद्धि-पत्र

हिन्दी

	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	२४	एक वर्ष	एक लाख वर्ष
२	२८	फर	फिर
३	२४	निमित	निमित्त
५	३६	उत्तर	उत्तरा
९	२१	अथ	अर्थ
१०	१९	मसक	मशक
१३	८	अघमाग	अर्धमाग
१४	२३	आघे	आघे
१५	८	लोक	लोग
१७	४	१३, ११, १२	११, १२, १३
१७	१४	जानना	जाननी
१९	१५	निर्निमेप	अनिमेष
२७	२३	पृथिविया	पृथ्विया
३४	२	अरिप्ट	अरिष्ट
३७	९	वीस	बीस
४५	१०	वेदनाएँ	वेदनाएँ
४८	४	छव्वीस	छब्बीस
६८	१३	देवलोग	देवलोक
८६	२९	आघा	आघा
९१	५	उतर	उत्तर
१०२	३२	सूत्र ८३ ३०६	सूत्र ८३, पृ ३०६
११०	१७	ठा ६, उ. ३, सू ५२२	ठा ६. सूत्र ५२२
१२८	४०	घवल	घवल
१४२	१५	महानदी के . मे	महानदी के पश्चिम मे
१५४	३०	जम्दूद्वोप	जम्वूद्वीप
१५९	४०	के	मे
१६३	८	यहा	यहा
१६७	३९	प्रका	प्रकार
१८२	४	चोढे	चौढे
१८७	२	उनक	उनका
१९१	३३	सू ७६८ ४९१	सू ७६८ पृ. ४९१
१९३	३८	ठा २, उ सूत्र	ठा २, उ ३, सूत्र
२०८	२२	देवता	देविया
२२८	३४	धास्क	धारक
२५४	१५	सूय	सूर्य
२५६	३३	कितनी	कितने
२६३	१५	पृ ३८०-२८१	पृ. ३८०-३८१

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६५	३६	सूर्य पृ ९४	सूर्य. सू. ९४
२९०	११	का	के
२९१	१९	मुहुर्त	मुहूर्त
३०२	२९	जिस	किस
३०३	२९	सूत्र ६४, पृ.	सूत्र ६४, पृ १८२
३०७	२९	सूर्यविम्व	सूर्यविम्व
३२८	३१	लेश्यए	लेश्याएँ
३३२	७	दो पौरुषी	द्वि पौरुपी
३३३	३७	छस	छव्वीस
३३३	३८	कई व्यावीषिन को स्पष्ट नही किया ।	कई पदों को स्पष्ट नही किया है ।
३४१	३३	सूत्र	सूत्र ३
३४६	२१	सर्व वाहृय	सर्व वाह्य
३६०	३८	गति वाला—उस	गति वाला होता है, उस
३६७	३	वालागृ पोतिका	वालाग्र पोतिका
३६८	२८	चोडी	चौडी
३७९	३४	ठा २, उ सूत्र ९०	ठा २, उ ३, सूत्र ९०
३८७	१७	सस	सम
४०१	२३	अश्विनी	आश्विनी
४०३	२९	अश्विनीकुल	आश्विनी कुल
४११	१	नक्षत्रो का	नक्षत्रो के
४२४	३२	महेन्द्र देवो	माहेन्द्र देवो
४२७	१६	ये चला	यह चला
४३९	१३	विमानापृथ्वियो	विमान पृथ्वियो
४३८	३४	उ ४, २३२	उ ४, सूत्र २३२
४४०	३२	सम २७ सूक्ष ४	सम २७, 'सूत्र ४
४४१	५	ओर	और
४४१	२६	प्राकरो	प्राकारो
४४२	२४	सूत्र २१३ पृ ३९५	सूत्र २१३ पृ ३९५
४४८	४	२४४-३४६	३४४-३४६
४४८	१५	द्रद	द्रह
४४९	८	मुसल	मूसल
४४९	२४	गव्यूति	गव्यूति
४५८	१६	पज्ञप्ति	प्रज्ञप्ति
४९७	२२	सर्य	सूर्य

=❀=